भद्रबाहु-संहिता

सम्पादन-अनुवाद

डॉ नेमिचन्द्र शास्त्री, ज्योतिषाचार्य

भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन

मूर्तिदेवी ग्रन्थमाला ग्रन्थांक 25

प्रथम संस्करण 1959

द्वितीय संस्करण 1991

भद्रबाहुसंहिता

(ज्योतिष)

सम्पादन अनुवाद

डॉ नेमिचन्द्र शास्त्री, ज्योतिषाचार्य

मूल्य 80/-

प्रकाशक

भारतीय ज्ञानपीठ

18, इस्टीट्यूशनल एरिया, लोधी रोड,

नई दिल्ली-110003

मुद्रक

सविता प्रिण्टर्स,

नवीन शाहदरा, दिल्ली-110032

© भारतीय ज्ञानपीठ

BHADRABAHU SAMHITA (Jyotish) Sanskrit Text with Hindi translation Edited and translated by Dr Nemichandra Shastri, Jyotishacharya Published by Bharatiya Jnanpith, 18, Institutional Area, Lodhi Road, New Delhi-110003 and printed at Savita Printers, Naveen Shahdara, Delhi-110032.

Second Edition, 1991 Price Rs. 80 00

प्रकाशकीय

भद्रबाहुसंहिता' फलित ज्योतिष के अन्तर्गत अष्टाग-निमित्त का प्रतिपादन करने वाला एक महत्त्वपूर्ण ग्रन्थ है। निमित्तशास्त्रविदों की मान्यता है कि प्रत्येक घटना के घटित होने से पहले प्रकृति मे कुछ विकार उत्पन्न होते देखे जाते हैं जिनकी सही-सही पहचान से व्यक्ति भावी शुभ-अशुभ घटनाओ का सरलतापूर्वक परिज्ञान कर सकता है। प्रस्तुत ग्रन्थ मे उल्कापात, परिवेष, विद्युत्, अभ्र, सन्ध्या, मेघ, वात, प्रवर्षण, गन्धर्वनगर, मेघगर्भलक्षण, उत्पात, ग्रहचार, ग्रहयुद्ध, स्वप्न, मुहूर्त, तिथि, करण, शकुन आदि निमित्तो के आधार पर व्यक्ति, समाज, शासन, राज्य या राष्ट्र की भावी घटनाओ—वर्षण-अवर्षण, सुभिक्ष-दुर्भिक्ष, सुख-दुःख, लाभ-अलाभ, जय-पराजय आदि इष्ट-अनिष्ट की सूचक बातो का प्रतिपादन किया गया है। इस प्रकार के ज्ञान से व्यक्ति घटनाओ के घटित होने से पूर्व ही सचेत होकर, परिस्थितियो के अनुकूल चलकर अपने लौकिक जीवन को सफल बना सकता है।

निमित्तशास्त्र ग्रह-नक्षत्र आदि गतिविधियो का वर्तमान एव भावी क्रियाओ के साथ कारण-कार्य सम्बन्ध स्थापित करता है। लेकिन यह ध्यान रहे कि ये प्राकृतिक कारण किसी व्यक्ति, समाज या राष्ट्र के इष्ट-अनिष्ट का स्वय सम्पादन नही करते है, अपितु इष्टानिष्ट के रूप मे घटित होने वाली भावी घटनाओ की मात्र सूचना देते है। ऐसे ही सूचक निमित्तो का प्रतिपादन करता है यह ग्रन्थ—'भद्रबाहुसंहिता'।

'भद्रबाहुसंहिता' दिगम्बर जैन परम्परा के प्रसिद्ध आचार्य श्रुतकेवली भद्रबाहु की रचना न होकर निमित्तशास्त्र सम्बन्धी पारम्परीण कृतियो मे प्रतिपादित विषय के आधार पर ग्यारहवी-बारहवी शती के भद्रबाहु नामक किसी विद्वान् द्वारा रचित या सकलित कृति मानी गई है। विषय का विवेचन और भाषा-शैली के आधार पर कुछेक विद्वानो ने तो इसे उत्तर-मध्यकाल का मात्र एक सग्रह-ग्रन्थ कहा है।

इस ग्रन्थ की मूल भाषा सस्कृत मे कतिपय अशुद्धियाँ है जिनके कारण उनकी पूर्वापर असगति के साथ हिन्दी अनुवाद भी सदोष हो गया लगता है। नये

सस्करण मे भी इन अशुद्धियो को दूर करने का विचार त्याग दिया गया, क्योकि उससे पुस्तक की मौलिकता पर प्रश्नचिह्न लग सकता था। तथापि यत्र-तत्र सस्कृत मूल तथा हिन्दी अनुवाद मे सशोधन भी किया गया है।

ग्रन्थ-सम्पादक (स्व) डॉ नेमिचन्द्र ज्योतिषाचार्य को इस ग्रन्थ के मात्र 27 अध्याय ही हस्तलिखित पाण्डुलिपियो मे प्राप्त हुए। एक रजिस्टरनुमा पाण्डुलिपि मे तीसवाँ अध्याय भी मिला जिसे उन्होने 'परिशिष्ट' के रूप मे दिया है। 27 से आगे का कोई अध्याय प्रयास करने पर भी किसी पाण्डुलिपि मे उपलब्ध नही हुआ। नये सस्करण के अवसर पर भी हमारा यह प्रयास विफल ही रहा। भारतीय ज्ञानपीठ से प्रथम सस्करण के रूप मे इस कृति का सानुवाद प्रकाशन 1959 मे हुआ था। विगत कई वर्षों से यह ग्रन्थ अनुपलब्ध था। फलित ज्योतिष मे रुचि रखने वाले पाठको के आग्रह पर इसका प्रस्तुत सस्करण नये रूपाकार मे उन्हें समर्पित है।

क्षमावणी पर्व, 1991

—गोकुल प्रसाद जैन
उपनिदेशक

प्राथमिक

[प्रथम संस्करण से]

मनुष्य मे जो सोचने-समझने की योग्यता है उसके फलस्वरूप उसे अपने विषय की चिन्ता ने अनादिकाल से सताया है । वर्तमान की चिन्ताओ के अतिरिक्त उसे इस बात की भी बडी जिज्ञासा रही है कि भविष्य मे उसका क्या होने वाला है ? कल की बात आज जान लेने के लिए वह इतना आतुर हुआ है कि उसने नाना प्रकार के आधारो से भविष्य का अनुमान करने का प्रयत्न किया है। मनुष्य के रूप, रग, शरीर व अग-प्रत्यग के गठन आदि पर से तो उसके भविष्य का अनुमान करना स्वाभाविक ही है । किन्तु उसकी बाहरी परिस्थितियो, यहाँ तक कि तारो और नक्षत्रो की स्थिति पर से एक-एक प्राणी के भविष्य का अनुमान लगाना भी बहुत प्राचीनकाल से प्रचलित पाया जाता है। फलित ज्योतिष मे लोगो का विश्वास सभी देशो मे रहा है । इसी कारण इस विषय का साहित्य बहुत विपुल पाया जाता है । ज्योतिष शास्त्र के ज्ञान के आधार से अपनी जीविका अर्जन करने वाले लोगो की कभी किसी देश मे कमी नही हुई।

भारतवर्ष का ज्योतिष शास्त्र भी बहुत प्राचीन है । सस्कृत और प्राकृत मे इस विषय के अनेक ग्रन्थ पाये जाते है। ज्योतिष शास्त्र के मुख्य भेद हैं गणित और फलित । गणित ज्योतिष विज्ञानात्मक है जिसके द्वारा ग्रहो की गति और स्थिति का ज्ञान प्राप्त कर काल-गणना मे उसका उपयोग किया जाता है । ग्रहो की स्थिति व गति पर से जो शुभ-अशुभ फल का निरूपण किया जाता है उसे फलित ज्योतिष कहते है। इसका आधार लोक-श्रद्धा के सिवाय और कुछ प्रतीत नही होता। तथापि उसकी लोकप्रियता मे कोई सन्देह नही। यति, मुनि, साधु-सन्त व विद्वानो से बहुधा लोग आशा करते है कि वे उनके व उनके बाल-बच्चो के भावी जीवन व सुख-दु.ख की बात बतला दे । किन्तु यह तो स्पष्ट ही है कि ये भविष्यवाणियाँ सदैव सत्य नही निकलती। यो 'हाँ' और 'ना' के बीच प्रत्येक पक्ष की पचास प्रतिशत सम्भावना अवश्यम्भावी है। इस प्रसग मे यूनान के इतिहास की एक बात याद आती है । उस देश मे 'डेल्फी' नामक देवता के मन्दिर के

पुजारी का काम था कि वह लोगो को बतलावे कि वे अमुक कार्य में सफल होंगे या नही। एक वैज्ञानिक ने उसकी भविष्यवाणी की प्रामाणिकता मे सन्देह प्रकट किया। भविष्यवक्ता ने उनका ध्यान मन्दिर की उस विपुल धनराशि की ओर आकर्षित किया जो वहाँ की सफल भविष्यवाणी के पुरस्कारो द्वारा सचित हुई थी। "यदि समुद्र-यात्रा को जाने वाले व्यापारियो को बतलाया गया शुभमुहूर्त सच न निकला होता, तो वे क्यो यह सब भेट वहाँ लौटकर अर्पित करते !" भविष्य-वक्ता के इस प्रश्न के उत्तर मे वैज्ञानिक ने कहा—"यह एक पक्ष का इतिहास तो आपका ठीक है। किन्तु क्या आपके पास उन व्यापारियो का भी कोई लेखा-जोखा है, जो आपके बतलाये शुभमुहूर्त्त मे यात्रा को निकले, किन्तु फिर लौटकर घर न आ सके ?"

फलित ज्योतिष के मर्मस्थल पर यह वज्राघात सहस्रो वर्ष पूर्व हो चुका है। हिन्दू, बौद्ध व जैन-शास्त्रो मे भी साधुओ को ज्योतिष-फल कहने का निषेध किया गया है, जो उसकी सन्देहात्मकता का ही परिचायक है। तथापि यह कला आज भी जीवित है और कुछ वर्गों मे लोकप्रिय भी है।

फलित ज्योतिष का एक अग है—'अष्टागनिमित्त'। इसमे शरीर के तिल, मसा आदि व्यजनो, हाथ-पैर आदि अगो, ध्वनियो व स्वरो, भूमि के रग रूप, वस्त्र-शस्त्रादि के छिद्रो, ग्रह नक्षत्रो के उदय-अस्त, शख, चक्र, कलश आदि लक्षणो तथा स्वप्न मे देखी गयी वस्तुओ व घटनाओ का विचार कर शुभाशुभ रूप भविष्य फल कहा जाता है। एक जैनश्रुति के अनुसार, इस निमित्त शास्त्र के महान् ज्ञाता भद्रबाहु थे। कोई इन्हे श्रुतकेवली भद्रबाहु ही मानता है जिन्होने इसी ज्ञान के बल से उत्तर भारत मे आने वाले द्वादशवर्षीय दुर्भिक्ष की बात जानकर अपने सघ सहित दक्षिण की ओर गमन किया था। कोई इन्हे प्रसिद्ध ज्योतिषाचार्य वराहमिहिर का समकालीन व उनका भ्राता ही कहते हैं। प्रस्तुत भद्रबाहु-सहिता का विषय निमित्तशास्त्र का प्रतिपादन करना है। यह ग्रन्थ पहले भी छप चुका है, तथा इसके कर्तृत्व के सम्बन्ध मे बहुत कुछ विचार भी किया जा चुका है। प जुगलकिशोर जी मुख्तार के मतानुसार यह ग्रन्थ भद्रबाहु श्रुतकेवली की रचना न होकर कुछ 'इधर-उधर के प्रकरणो का बेढगा सग्रह' है और उसका रचनाकाल वि. स 1657 के पश्चात् का है। किन्तु मुनि जिनविजय जी को इस ग्रन्थ की एक प्रति वि स 1480 के आसपास की मिली थी, जिसके आधार से उन्होने इस ग्रन्थ को वि स की 11वी-12वी शताब्दी से भी प्राचीन अनुमान किया है। प्रस्तुत सस्करण के सम्पादक का मत है कि इस रचना का सकलन वि. की आठवी, नौवी शताब्दी मे हुआ होगा।

प नेमिचन्द्र शास्त्री ने अपने इस प्रस्तुत सस्करण मे पूर्व मुद्रित ग्रन्थ के अतिरिक्त 'जैन सिद्धान्त भवन आरा' की दो प्राचीन हस्तलिखित प्रतियो का भी उपयोग किया है। उन्होने मूल के सस्कृत पद्यो का पूरा अनुवाद भी किया है व

प्रत्येक अध्याय के अन्त मे 'बृहत्संहिता' आदि कोई बीस-बाईस अन्य ग्रन्थो के आधार से विषय-विवेचना भी किया है। उन्होंने अपनी बृहत् प्रस्तावना में विषय एव ग्रन्थ की रचना आदि विषयो पर भी महत्त्वपूर्ण प्रकाश डाला है। इस सफल प्रयास के लिए हम विद्वान् सम्पादक का अभिनन्दन करते हैं और उसके उत्तम रीति से प्रकाशन के लिए 'भारतीय ज्ञानपीठ' के संचालको को बधाई देते हैं।

—ही. ला. जैन
—आ. ने उपाध्ये
ग्रन्थमाला सम्पादक
(प्रथम संस्करण)

प्रस्तावना

[प्रथम संस्करण से]

अत्यन्त प्राचीन काल से ही आकाशमण्डल मानव के लिए कौतूहल का विषय बना हुआ है। सूर्य और चन्द्रमा से परिचित हो जाने के पश्चात् ताराओं के सम्बन्ध मे मानव को जिज्ञासा उत्पन्न हुई और उसने ग्रह एव उपग्रहो के वास्तविक स्वरूप को अवगत किया। जैन परम्परा बतलाती है कि आज से लाखों वर्ष पूर्व कर्मभूमि के प्रारम्भ मे प्रथम कुलकर प्रतिश्रुति के समय मे, जब मनुष्यो को सर्व-प्रथम सूर्य और चन्द्रमा दिखलाई पडे तो वे इनसे सशकित हुए और अपनी उत्कण्ठा शान्त करने के लिए उक्त प्रतिश्रुति नामक कुलकर मनु के पास गये। उक्त मनु ने ही सौर-जगत् सम्बन्धी सारी जानकारी बतलायी और ये ही सौर-जगत् की ज्ञातव्य बातें ज्योतिष शास्त्र के नाम से प्रसिद्ध हुई। आगमिक परम्परा अनवच्छिन्न रूप से अनादि होने पर भी इस युग मे ज्योतिषशास्त्र की नींव का इतिहास यही से आरम्भ होता है। मूलभूत सौर-जगत् के सिद्धान्तो के आधार पर गणित और फलित ज्योतिष का विकास प्रतिश्रुति मनु के सहस्रो वर्ष के बाद हुआ तथा ग्रह-नक्षत्रो की स्थिति के आधार पर भावी फलाफलो का निरूपण भी उसी समय से होने लगा। कतिपय भारतीय पुरातत्त्वविदो की यह मान्यता है कि गणित ज्योतिष की अपेक्षा फलित ज्योतिष का विकास पहले हुआ है, क्योकि आदि मानव को अपने कार्यों की सफलता के लिए समय शुद्धि की आवश्यकता होती थी। इसका सबसे बड़ा प्रभाव यही है कि ऋक्, यजुष् और साम ज्योतिष मे नक्षत्र और तिथि-शुद्धि का ही निरूपण मिलता है। ग्रह-गणित की चर्चा सर्वप्रथम सूर्य सिद्धान्त और पञ्चसिद्धान्तिका मे मिलती है। वेदाग ज्योतिष प्रमुख रूप से समय-शुद्धि का ही विधान करता है।

ज्योतिष के तीन भेद हैं—सिद्धान्त, सहिता और होरा। सिद्धान्त के भी तीन भेद किये गये हैं सिद्धान्त, तन्त्र और करण। जिन ग्रन्थो मे सृष्ट्यादि से इष्ट दिन पर्यन्त अहर्गण बनाकर ग्रह-गणित की प्रक्रिया निरूपति की गयी है, वे तन्त्र ग्रन्थ और जिनमें कल्पित इष्ट वर्ष का युग मानकर उस युग के भीतर ही किसी अभीष्ट दिन का अहर्गण लाकर ग्रहानयन की प्रक्रिया निरूपित की जाय,

उन्हे करण ग्रन्थ कहते है।

सहिता ग्रन्थो मे भूशोधन, दिक्शोधन, शल्योद्धार, मेलापक, आयाद्यानयन, गृहोपकरण, इष्टिकाद्वार, गेहारम्भ, गृहप्रवेश, जलाशयनिर्माण, मागलिक कार्यों के मुहूर्त्त, उल्कापात, वृष्टि, ग्रहो के उदयास्त का फल, ग्रह चार का फल, शकुन-विचार, कृषि सम्बन्धी विभिन्न समस्याएँ, निमित्त एव ग्रहण फल आदि बातो का विचार किया जाता है।

होरा का दूसरा नाम जातक भी है। इसकी उत्पत्ति अहोरात्र शब्द मे है। आदि शब्द 'अ' और अन्तिम शब्द 'त्र' का लोप कर देने से होरा शब्द बनता है। जन्मकालीन ग्रहो की स्थिति के अनुसार व्यक्ति के लिए फलाफल का निरूपण किया जाता है। इसमे जातक की उत्पत्ति के समय के नक्षत्र, तिथि, योग, करण आदि का फल विस्तार के साथ बताया गया है। ग्रह एव राशियो के वर्ण, स्वभाव, गुण, आकार, प्रकार आदि बातो का प्रतिपादन बडी सफलतापूर्वक किया गया है। जन्मकुण्डली का फलादेश कहना तो इस शास्त्र का मुख्य उद्देश्य है तथा इस शास्त्र मे यह भी बताया गया है कि आकाशस्थ राशि और ग्रहो के बिम्बो मे स्वाभाविक शुभ और अशुभपना विद्यमान हे, किन्तु उनमे परस्पर साहचर्यादि तात्कालिक सम्बन्ध से फल विशेष शुभाशुभ रूप मे परिणत हो जाता है, जिसका प्रभाव पृथ्वी स्थित प्राणियो पर भी पूर्ण रूप से पडता है। इस शास्त्र मे देह, द्रव्य, पराक्रम, सुख, सुत, शत्रु, कलत्र, मृत्यु, भाग्य, राज्यपद, लाभ और व्यय इन बारह भावो का वर्णन रहता है। जन्म-नक्षत्र और जन्म-लग्न पर से फलादेश का वर्णन होरा शास्त्र में पाया जाता है।

सहिता-ग्रन्थों का विकास

सहिता-ग्रन्थो का विकास जीवन के व्यावहारिक क्षेत्र मे ज्योतिष विषयक तत्त्वो को स्थान प्रदान करने के लिए ही हुआ है। कृषि की उन्नति एव प्रगति ही सहिता-ग्रन्थो का प्रधान प्रतिपाद्य विषय है। वेदो मे भी फलित ज्योतिष के अनेक सिद्धान्त आये है। कृषि के सम्बन्ध मे नाना प्रकार की जानकारी और विभिन्न प्रकार के निमित्तो का वर्णन अथर्ववेद मे आया है। जय-पराजय विषयक निमित्त तथा विभिन्न प्रकार के शकुन भी इस ग्रन्थ मे वर्णित हैं। ऋग्वेद के ऋतु, अयन, वर्ष, दिन, सवत्सर आदि भी सहिताओ के मूलभूत सिद्धान्तो मे परिगणित हैं। सस्कृत साहित्य के उत्पत्तिकालीन साहित्य मे भी सहिताओ के तत्त्व उपलब्ध होते हैं। यद्यपि यह सत्य है कि वराहमिहिर के पूर्ववर्ती सहिता-ग्रन्थो का अभाव है, पर इनके द्वारा उल्लिखित मय, शक्ति, जीवशर्मा, मणित्थ, विष्णुगुप्त, देवस्वामी, सिद्धसेन और सत्याचार्य जैसे अनेक ज्योतिर्विदो के ग्रन्थ वर्तमान थे, यह सहज मे जाना जा सकता है। सहिता-ग्रन्थो मे निमित्त, वास्तुशास्त्र, मुहूर्त्त-

शास्त्र, अरिष्ट एव शकुन आदि का वर्णन रहता है। जीवनोपयोगी प्राय· सभी व्यावहारिक विषय सहिता के अन्तर्गत आ जाते हैं।

व्यापक रूप से सहिताशास्त्र के बीजसूत्र अथर्ववेद के अतिरिक्त आश्वलायन गृह्यसूत्र, पारस्कर गृह्यसूत्र, हिरण्यकेशीसूत्र, आपस्तम्ब गृह्यसूत्र, साख्यायन गृह्यसूत्र, पाणिनीय व्याकरण, मनुस्मृति, याज्ञवल्क्य स्मृति, महाभारत, कौटिल्य अर्थशास्त्र, स्वप्नवासवदत्त नाटक एव हर्षचरित प्रभृति ग्रन्थो मे विद्यमान है। आश्वलायन गृह्यसूत्र मे —"**श्रावण्यां पौर्णमास्यां श्रावणकर्मणि**" "**सीमन्तोन्नयनं यदा पुष्यनक्षत्रेण चन्द्रमा युक्त स्यात्**।" इन वाक्यो मे मुहूर्त्त के साथ विभिन्न सस्कारो की समय-शुद्धि एव विविध विधानो का विवेचन किया गया है। इस ग्रन्थ मे 3,7-8 मे जगली कबूतरो का घर मे घोसला बनाना अशुभ कहा गया है। यह शकुन प्रक्रिया सहिता ग्रन्थो का प्राण है। पारस्कर गृह्यसूत्र मे—"**त्रिषु त्रिषु उत्तरादिषु स्वातौ मृगशिरसि रोहिण्यां**"—इत्यादि सूत्र मे उत्तराफाल्गुनी, हस्त, चित्रा, उत्तराषाढा, श्रवण, धनिष्ठा, उत्तराभाद्रपद, रेवती और अश्विनी नक्षत्र को विवाह नक्षत्र कहा है। इतना ही नही इस सूत्रग्रन्थ मे आकाश का वर्ण एव कई ताराओ की विभिन्न आकृतियाँ और उनके फल भी लिखे गये हैं। यह प्रकार सहिता विषय से अति सम्बद्ध है। 'साख्यायन गृह्यसूत्र' (5-10) के अनुसार, मधुमक्खी का घर मे छत्ता लगाना तथा कौओ का आधी रात मे बोलना अशुभ कहा है। बौधायन सूत्र मे—"**मीन मेषयोर्मेषवृषभयोर्वसन्त**." इस प्रकार का उल्लेख मिलता है। सूर्य सक्रान्ति के आधार पर ऋतुओ की कल्पनाएँ हो चुकी थी तथा कृषि पर इन ऋतुओ का कैसा प्रभाव पडता है, इसका भी विचार आरम्भ हो गया था।

निरुक्त मे दिन, रात, शुक्लपक्ष, कृष्णपक्ष, उत्तरायण, दक्षिणायन आदि की व्युत्पत्ति मात्र शाब्दिक ही नही है, बल्कि परिभाषात्मक है। ये परिभाषाएँ ही आगे सहिता-ग्रन्थो मे स्पष्ट हुई है। पाणिनि ने अपनी अष्टाध्यायी मे सवत्सर, हायन, चैत्रादिमास, दिवस, विभागात्मक मुहूर्त्त शब्द, पुष्य, श्रवण, विशाखा आदि की व्युत्पत्तियाँ दी है। '**वाताय कपिला विद्युत्**' उदाहरण द्वारा निमित्तशास्त्र के प्रधान विषय 'विद्युत् निमित्त' पर प्रकाश डाला है तथा कपिला विद्युत् को वायु चलने का सूचक कहा है। पाणिन ने '**विभाषा ग्रह**' (3,1,143) मे ग्रह शब्द का भी उल्लेख किया है। उत्तरकालीन पाणिनि-तन्त्र के विवेचको ने उक्त सूत्र के ग्रह शब्द को नवग्रह का द्योतक अनुमान किया है। अष्टाध्यायी मे पतिघ्नी रेखा का भी जिक्र आया है, अत इस ग्रन्थ मे सहिता-शास्त्र के अनेक बीजसूत्र विद्यमान है।

मनुस्मृति मे सिद्धान्तग्रन्थो के समान युग और कल्पमान का वर्णन मिलता है। तीसरे अध्याय के आठवे श्लोक मे आया है कि कपिल भूरे वर्णवाली, अधिक

या कम अंगो वाली, अधिक रोम वाली या सर्वथा निर्लोम कन्या के साथ विवाह नही करना चाहिए। इस कथन से लक्षण और व्यजन दोनो ही निमित्तो का स्पष्ट संकेत मिलता है। इसी अध्याय के 9-10 श्लोक भी लक्षणशास्त्र पर प्रकाश डालते हैं। **'लोष्ठमर्दी तृणच्छेदी'** (4,71) मे शकुनो की ओर सकेत किया गया है। आकालिक अनध्यायो का विवेचन करते हुए **'विद्युत्-स्तनितवर्षेषु महोल्कानां च सम्प्लवे'** (4,103), **"निर्घाते भूमिचलने ज्योतिषां चोपसर्जने"** (4,105), **"नीहारे बाणशब्दे"** (4,113) एव **"पांसुवर्षे दिशां दाहे"** (4,115) का उल्लेख किया है। ये सभी श्लोक शकुनो से सम्बन्ध रखते है। अत अनध्याय प्रकरण सहिता का विकसित रूप है। **"न चोत्पातनिमित्ताभ्यां न नक्षत्रांगविद्यया"** (6,50) मे उत्पात, निमित्त, नक्षत्र और अगविद्या का वर्णन आया है। इस प्रकार मनुस्मृति मे सहिताशास्त्र के बीजसूत्र प्रचुर परिमाण मे विद्यमान है।

याज्ञवल्क्य स्मृति मे नवग्रहो का स्पष्ट उल्लेख वर्तमान है। क्रान्तिवृत्त के द्वादश भागो का भी निरूपण किया गया है, इस कथन से मेषादि द्वादश राशियो की सिद्धि होती है। श्राद्धकाल अध्याय मे वृद्धियोग का भी कथन है, इससे सहिता-शास्त्र के 27 योगो का समर्थन होता है। याज्ञवल्क्य स्मृति के प्रायश्चित्त अध्याय मे—**"ग्रहसयोगजैः फलै"** इत्यादि वाक्यो द्वारा ग्रहो के सयोगजन्य फलो का भी कथन किया गया है। किस नक्षत्र मे किस कार्य को करना चाहिए, इसका वर्णन भी इस ग्रन्थ मे विद्यमान है। आचाराध्याय का निम्न श्लोक, जिस पर से सातो वारो का अनुमान विद्वानो ने किया है, बहुत प्रसिद्ध है—

सूर्य सोमो महीपुत्र सोमपुत्रो बृहस्पति ।
शुक्र शनैश्चरो राहु केतुश्चैते ग्रहा स्मृता ॥

महाभारत मे सहिता-शास्त्र की अनेक बातो का वर्णन मिलता है। इसमे युग-पद्धति मनुस्मृति जैसी ही है। सत् युगादि के नाम, उनमे विधेय कृत्य कई जगह आये हैं। कल्पकाल का निरूपण शान्तिपर्व के 183वें अध्याय मे विस्तार से किया गया है। पंचवर्षात्मक युग का कथन भी उपलब्ध है। सवत्सर, परिवत्सर इदावत्सर, अनुवत्सर एव इद्वत्सर—इन पाँच युग सम्बन्धी पाँच वर्षों मे क्रमश पाँचो पाण्डवो की उत्पत्ति का वर्णन किया गया है—

अनुसंवत्सरं जाता अपि ते कुरुसत्तमाः ।
पाण्डुपुत्रा व्यराजन्त पञ्चसंवत्सरा इव ॥

—अ० प०, अ० 124-24

पाण्डवो को वनवास जाने के उपरान्त कितना समय हुआ, इसके सम्बन्ध मे भीष्म दुर्योधन से कहते हैं—

तेषां कालातिरेकेण ज्योतिषां च व्यतिक्रमात् ।
पञ्चमे पञ्चमे वर्षे द्वौ मासावुपजायत ।।
एषामभ्यधिका मासाः पञ्च च द्वादश क्षपाः ।
त्रयोदशानां वर्षाणामिति मे वर्तते मति. ।।

—वि० प० अ० 52/3-4

इन श्लोको मे पाँच वर्षों मे दो अधिमास का जिक्र किया गया है। सिद्धान्त ज्योतिष के ग्रन्थो के प्रणयन के पूर्व सहिता-ग्रन्थो मे अधिमास का निरूपण होने लगा था। गणितागत अधिमास अधिशेष और अधिशुद्धि का विचार होने के पूर्व पाँच वर्षों मे दो अधिमासो की कल्पना सहिता के विषय के अन्तर्गत है।

महाभारत के अनुशासन पर्व के 64वें अध्याय मे समस्त नक्षत्रो की सूची देकर बतलाया गया है कि किस नक्षत्र मे दान देने से किस प्रकार का पुण्य होता है। महाभारत काल मे प्रत्येक मुहूर्त्त का नामकरण भी व्यवहृत होता था तथा प्रत्येक मुहूर्त्त का सम्बन्ध भिन्न-भिन्न धार्मिक कार्यों से शुभाशुभ के रूप में माना जाता था। इस ग्रन्थ मे 27 नक्षत्रो के देवताओ के स्वभावानुसार विधेय नक्षत्र के भावी शुभ एव अशुभ का निर्णय किया गया है। शुभ नक्षत्रो मे ही विवाह, युद्ध एव यात्रा करने की प्रथा थी। युधिष्ठिर के जन्म-समय का वर्णन करते हुए कहा गया है—

ऐन्द्रे चन्द्रसमारोहे मुहूर्त्तेऽभिजिदष्टमे ।
दिवो मध्यगते सूर्ये तिथौ पूर्णेति पूजिते ।।

अर्थात् आश्विन शुक्ला पचमी के दोपहर को अष्टम अभिजित् मुहूर्त्त मे, सोमवार के दिन ज्येष्ठा नक्षत्र मे जन्म हुआ। महाभारत मे कुछ ग्रह अधिक अरिष्टकारक बतलाये गये हैं, विशेषत. शनि और मगल को अधिक दुष्ट कहा है। मगल लाल रग का, समस्त प्राणियो को अशान्ति देने वाला और रक्तपात करने वाला समझा जाता था। केवल गुरु ही शुभ और समस्त प्राणियो को सुख-शान्ति देने वाला बताया गया है। ग्रहो का शुभ नक्षत्रो के साथ योग होना प्राणियो के लिए कल्याणदायक माना गया है। उद्योग पर्व के 14वे अध्याय के अन्त मे ग्रह और नक्षत्रो के अशुभ योगो का विस्तार से वर्णन किया गया है। श्रीकृष्ण ने जब कर्ण से भेंट की, तब कर्ण ने इस प्रकार ग्रह-स्थिति का वर्णन किया—"**शनैश्चर रोहिणी नक्षत्र मे मंगल को पीड़ा दे रहा है। ज्येष्ठा नक्षत्र मे मगल वक्री होकर अनुराधा नामक नक्षत्र से योग कर रहा है। महापात संज्ञक ग्रह चित्रा नक्षत्र को पीड़ा दे रहा है। चन्द्रमा के चिह्न विपरीत दिखाई पड़ते हैं और राहु सूर्य को ग्रसित करना चाहता है।**"

शल्यवध के समय प्रातःकाल का वर्णन इस प्रकार किया गया है—

"भृगुसूनुधरापुत्रौ शशिजेन समन्वितौ ।।" —श० प० अ० 11-18

अर्थात्—शुक्र, मगल और बुध इनका योग शनि के साथ अत्यन्त अशुभ कारक है। वर्तमान सहिता-ग्रन्थो मे भी बुध और शनि का योग अत्यन्त अशुभ माना जाता है। महाभारत मे 13 दिन का पक्ष अशुभ कारक कहा गया है—

चतुर्दशीं पञ्चदशीं भूतपूर्वां तु षोडशीम् ।
इमां तु नाभिजानेऽहममावस्यां त्रयोदशीम् ।।
चन्द्रसूर्यावुभौ ग्रस्तावेकमासीं त्रयोदशीम् ।

अर्थात्—व्यासजी अनिष्टकारी ग्रहो की स्थिति का वर्णन करते हुए कहते है कि 14, 15 एव 16 दिनो के पक्ष होते थे, पर 13 दिनो का पक्ष इसी समय आया है तथा सबसे अधिक अनिष्टकारी तो एक ही मास मे सूर्यग्रहण और चन्द्र-ग्रहण का होना है और यह ग्रहणयोग भी त्रयोदशी के दिन पड रहा है, अत समस्त प्राणियो के लिए भयोत्पादक है। महाभारत से यह भी ज्ञात होता है कि उस समय व्यक्ति के सुख-दुख, जीवन-मरण आदि सभी ग्रह-नक्षत्रो की गति से सम्बद्ध माने जाते थे।

कौटिल्य के अर्थशास्त्र के दशवे प्रकरण मे युद्धविषयक शकुन, जय-पराजय द्योतक निमित्तो का वर्णन है। यात्रा सम्बन्धी शकुनो का सविस्तार विवेचन भी मिलता है।

हर्षचरित मे बाण ने काव्यशैली का आश्रय लेकर हर्ष के प्रयाण के फलस्वरूप शत्रुओ मे होने वाले दुर्निमित्तो की एक लम्बी सूची दी है। इस सूची मे स्पष्ट है कि बाण के समय मे सहिता-शास्त्र का पूर्णतया विकास हो गया था। बताया गया है—

1 यमराज के दूतो की दृष्टि की तरह काले हिरण इधर-उधर दौडने लगे।
2 आँगन मे मधु-मक्खियो के छत्तो से उडकर मधु-मक्खियाँ भर गयी।
3 दिन मे शृगाली मुँह उठाकर रोने लगी।
4. जगली कबूतर घरो मे आने लगे।
5 उपवन वृक्षो मे असमय मे पुष्प-फल दिखलाई पडने लगे।
6. सभास्थान के खम्भो पर बनी हुई शालभजिकाओ के आँसू बहने लगे।
7. योद्धाओ को दर्पण मे अपने ही सिर धड से अलग होते हुए दिखलाई पडे।
8. राजमहिषियो की चूडामणि मे पैरो के निशान प्रकट हो गये।
9. चेटियो के हाथ के चमर छूटकर गिर गये।
10 हाथियो के गण्डस्थल भौरो से शून्य हो गये।
11 घोड़ो ने मानो यमराज की गन्ध से हरे धान का खाना छोड़ दिया।

12. झन-झन कंकण पहने हुए बालिकाओ के ताल देकर नचाने पर भी मन्दिर-मयूरो ने नाचना छोड दिया।
13 रात मे कुत्ते मुंह उठाकर रोने लगे।
14 रास्तो मे कोटवी—मुक्तकेशी नग्न स्त्रियाँ घूमती हुई दिखलाई पडी।
15 महलो के फर्शों मे घास निकल आयी।
16 योद्धाओ की स्त्रियो के मुख का जो प्रतिबिम्ब मधुपात्र मे पडता था उसमे विधवाओ जैसी एक वेणी दिखाई पडने लगी।
17 भूमि काँपने लगी।
18 शूरो के शरीर पर रक्त की बूँदें दिखाई पडी, जैसे वधदण्ड प्राप्त व्यक्ति का शरीर लाल चन्दन से सजाया जाता है।
19 दिशाओ मे चारो ओर उल्कापात होने लगा।
20 भयकर झझावात ने प्रत्येक घर को झकझोर डाला।

बाण ने 16 महोत्पात, 3 दुर्निमित्त और 20 उपलिगो का वर्णन किया है। यह वर्णन सहिता-शास्त्र का विकसित विषय है।

उपर्युक्त विवेचन से यह स्पष्ट है कि सहिता शास्त्र के विषयो का विकास अथर्ववेद से आरम्भ होकर सूत्रकाल मे विशेष रूप से हुआ। ऐतिहासिक महा-काव्य-ग्रन्थो तथा अन्य सस्कृत साहित्य मे भी इस विषय के अनेक उदाहरण उपलब्ध है। इस शास्त्र मे सूर्यादि ग्रहो की चाल, उनका स्वभाव, विकार, प्रमाण, वर्ण, किरण, ज्योति, सस्थान, उदय, अस्त, मार्ग, वक्र, अतिवक्र, अनवक्र, नक्षत्र-विभाग और कूर्म का सब देशो मे फल, अगस्त्य की चाल, सप्तर्षियो की चाल, नक्षत्रव्यूह, ग्रहशृ गाटक, ग्रहयुद्ध, ग्रहसमागम, परिवेष, परिघ, उल्का, दिग्दाह, भूकम्प, गन्धर्वनगर, इन्द्रधनुष, वास्तुविद्या, अगविद्या, वायसविद्या, अन्तरचक्र, मृगचक्र, अश्वचक्र, प्रासादलक्षण, प्रतिमालक्षण, प्रतिमाप्रतिष्ठा, घृतलक्षण, कम्बल-लक्षण, खग-लक्षण, पट्टलक्षण, कुक्कुटलक्षण; कूर्मलक्षण, गोलक्षण, अजालक्षण, अश्वलक्षण, स्त्री-पुरुष लक्षण, यात्रा शकुन, रणयात्रा शकुन एव साधारण, असाधारण सभी प्रकार के शुभाशुभो का विवेचन अन्तर्भूत होता था। स्वप्न और विभिन्न प्रकार के शकुनो को भी सहिता-शास्त्र मे स्थान दिया गया था। फलित ज्योतिष का यह अग केवल पचाग ज्ञान तक ही सीमित नही था, किन्तु समस्त सास्कृतिक विषयो की आलोचना और निरूपण काल भी इसमे शामिल हो गया था। सहिता-शास्त्र का सबसे पहला ग्रन्थ सन् 505 ई० के वराहमिहिर का बृहत् सहितानामक ग्रन्थ मिलता है। इसके पश्चात् नारद-सहिता, रावण-संहिता, वसिष्ठ-सहिता, वसन्तराज-शाकुन, अद्भुतसागर आदि ग्रन्थो की रचना हुई।

जैन ज्योतिष का विकास

जैनागम की दृष्टि से ज्योतिष शास्त्र का विकास विद्यानुवादांग और परिकर्मों से हुआ है। समस्त गणित-सिद्धान्त ज्योतिष परिकर्मों मे अंकित है और अष्टांग निमित्त का विवेचन विद्यानुवादांग मे किया गया है। षट्खण्डागम धवला टीका[1] मे रौद्र, श्वेत, मैत्र, सारभट, दैत्य, वैरोचन, वैश्वदेव, अभिजित्, रोहण, बल, विजय, नैर्ऋत्य, वरुण, अर्यमन् और भाग्य ये पन्द्रह मुहूर्त्त आए हैं। मुहूर्तों की नामावली वीरसेन स्वामी की अपनी नहीं है, किन्तु पूर्व परम्परा से श्लोकों को उन्होंने उद्धृत किया है। अतः मुहूर्त चर्चा पर्याप्त प्राचीन है। प्रश्नव्याकरण मे नक्षत्रों के फलों का विशेष ढंग से निरूपण करने के लिए इनका कुल, उपकुल और कुलोपकुलों मे विभाजन कर वर्णन किया है। यह वर्णन-प्रणाली संहिता शास्त्र के विकास मे अपना महत्त्वपूर्ण स्थान रखती है। बताया गया है कि[2]—"धनिष्ठा, उत्तराभाद्र पद, अश्विनी, कृत्तिका, मृगशिरा, पुष्य, मघा, उत्तरा फाल्गुनी, चित्रा, विशाखा, मूल एवं उत्तराषाढ़ा ये नक्षत्र कुलसंज्ञक, श्रवण, पूर्वाभाद्रपद, रेवती, भरणी, रोहिणी, पुनर्वसु, आश्लेषा, पूर्वाफाल्गुनी, हस्त, स्वाति, ज्येष्ठा एवं पूर्वाषाढ़ा ये नक्षत्र उपकुल-संज्ञक और अभिजित् शतभिषा, आर्द्रा एवं अनुराधा कुलोपकुल संज्ञक है।" यह कुलोपकुल का विभाजन पूर्णमासी को होने वाले नक्षत्रों के आधार पर किया गया है। अभिप्राय यह है कि श्रावण मास के धनिष्ठा, श्रवण और अभिजित्, भाद्रपद मास के उत्तराभाद्रपद, पूर्वाभाद्रपद और शतभिषा, अश्विन मास के अश्विनी और रेवती, कार्तिक मास के कृत्तिका और भरणी, अगहन या मार्गशीर्ष मास के मृगशिरा और रोहिणी; पौष माघ के पुष्य, पुनर्वसु और आर्द्रा, माघ मास के मघा और आश्लेषा, फाल्गुनी मास के उत्तराफाल्गुनी और पूर्वाफाल्गुनी, चैत्र मास के चित्रा और हस्त, वैशाख मास के विशाखा और स्वाति; ज्येष्ठ मास के ज्येष्ठा, मूल और अनुराधा एवं आषाढ़ मास के उत्तराषाढा और पूर्वाषाढा नक्षत्र बताये गये है। प्रत्येक मास

---

1 देखें—धवला टीका, जिल्द 4, पृ० 318।

2 ता कहँते कुला उवकुला कुलावकुला अहिनेति वदेज्जा। तत्थ खलु इमा बारस कुला बारस उपकुला चत्तारि कुलावकुला पण्णत्ता। बारसकुला त जहा—धणिट्ठा कुल, उत्तराभद्दवयाकुल, अस्सिणी कुल, कत्तियाकुल, मिगसिरकुल, पुस्सोकुल, महाकुल, उत्तराफग्गुणीकुल, चित्ताकुल, विसाहाकुल, मूलोकुल, उत्तरासाणकुल॥ बारस उवकुला पण्णत्ता त जहा सवणो उवकुल, पुव्वभद्दवया उवकुल, रेवती उवकुल, भरणि उवकुल, रोहिणी उवकुल, पुणव्वसु उवकुल, असलेसा उवकुल, पुव्वफग्गुणी उवकुल, हत्थो उवकुल, साति उवकुल, जेट्ठा उवकुल, पुव्वासाढा उवकुल॥ चत्तारि कुलावकुल पण्णत्ता त जहा—अभिजिति कुलावसनभिसया कुलावकुल, कुल, अद्दाकुलावकुल अणुराहा कुलावकुल॥—पृ० का० 10, 5

की पूर्णमासी को उस मास का प्रथम नक्षत्र कुल संज्ञक, दूसरा उपकुल संज्ञक और तीसरा कुलोपकुल संज्ञक होता है। इस वर्णन का प्रयोजन उस महीने के फलादेश से सम्बन्ध रखता है। इस ग्रन्थ मे ऋतु, अयन, मास, पक्ष, नक्षत्र और तिथि सम्बन्धी चर्चाएँ भी उपलब्ध हैं।

समवायांग में नक्षत्रों की ताराएँ, उनके दिशाद्वार आदि का वर्णन है। कहा गया है—"**कत्तिआइया सत्त नक्खत्ता पुव्वदारिआ। महाइया सत्तणक्खत्ता दाहिण दारिआ। अणुराहाइआ सत नक्खत्ता अवदारिया। धणिट्ठाइआ सत्तणक्खत्ता उत्तरदारिआ।**"—सं० अं० सं० 7 सू० 5

अर्थात् कृत्तिका, रोहिणी, मृगशिरा, आर्द्रा, पुनर्वसु, पुष्य और आश्लेषा ये सात नक्षत्र पूर्वद्वार, मघा, पूर्वाफाल्गुनी, उत्तराफाल्गुनी, हस्त, चित्रा, स्वाति और विशाखा दक्षिणद्वार, अनुराधा, ज्येष्ठा, मूल, पूर्वाषाढ़ा, उत्तराषाढ़ा, अभिजित् और श्रवण ये सात नक्षत्र पश्चिमद्वार एवं धनिष्ठा, शतभिषा, पूर्वाभाद्रपद, उत्तराभाद्रपद, रेवती, अश्विनी और भरणी ये सात नक्षत्र, उत्तरद्वार वाले हैं। समवायाग 1/6, 2/4, 3/2, 4/3, 5/9 और 6/7 मे आयी हुई ज्योतिष चर्चा भी महत्त्वपूर्ण है।

ठाणाग मे चन्द्रमा के साथ स्पर्शयोग करने वाले नक्षत्रो का कथन किया है। बताया गया है[1]—"कृत्तिका, रोहिणी, पुनर्वसु, मघा, चित्रा, विशाखा, अनुराधा और ज्येष्ठा ये आठ नक्षत्र स्पर्श योग करने वाले हैं।" इस योग का फल तिथि के अनुसार बतलाया गया है। इसी प्रकार नक्षत्रो की अन्य सज्ञाएँ तथा उत्तर, पश्चिम, दक्षिण और पूर्व दिशा की ओर मे चन्द्रमा के साथ योग करने वाले नक्षत्रो के नाम और उनके फल विस्तारपूर्वक बतलाये गये है। अष्टाग निमित्त-ज्ञान की चर्चाएँ भी आगम ग्रन्थो मे मिलती हैं। गणित और फलित ज्योतिष की अनेक मौलिक बातो का सग्रह आगम ग्रन्थो मे है।

फुटकर ज्योतिष चर्चा के अलावा सूर्यप्रज्ञप्ति, चन्द्रप्रज्ञप्ति, ज्योतिषकरण्डक, अगविज्जा, गणिविज्जा, मण्डलप्रवेश, गणितसारसग्रह, गणितसूत्र, गणितशास्त्र, जोइसार, पंचागनयन विधि, इष्टतिथि सारणी, लोकविजय यन्त्र, पचागतत्त्व केवलज्ञानहोरा, आयज्ञानतिलक, आयसद्भाव, रिष्टसमुच्चय, अर्घकाण्ड, ज्योतिष प्रकाश, जातकतिलक, केवलज्ञानप्रश्नचूड़ामणि, नक्षत्रचूडामणि, चन्द्रोन्मीलन और मानसागरी आदि सैकड़ो ग्रन्थ उपलब्ध हैं।

विषय-विचार दृष्टि से जैनाचार्यों के ज्योतिष को प्रधानत. दो भागो मे विभक्त किया है। एक गणित-सिद्धान्त और दूसरा फलित-सिद्धान्त। गणित

---

1 अट्ठ नक्खत्ताण चंदेण सद्धि पमद्द जोग जोएइ त० कत्तिया, रोहिणी, पुणवस्सु, महा, चित्ति, विसाहा, अणुराहा जिट्ठा—ठा० 8, सू 100

सिद्धान्त द्वारा ग्रहो की गति, स्थिति, वक्री-मार्गी, मध्यफल, मन्दफल, सूक्ष्मफल, कुज्या, त्रिज्या, वाण, चाप, व्यास, परिधि फल एव केन्द्रफल आदि का प्रतिपादन किया गया है। आकाशमण्डल मे विकीर्णित तारिकाओ का ग्रहो के साथ कब कैसा सम्बन्ध होता है, इसका ज्ञान भी गणित प्रक्रिया से ही सभव है। जैनाचार्यों ने भौगोलिक ग्रन्थो मे 'ज्योतिर्लोकाधिकार' नामक एक पृथक् अधिकार देकर ज्योतिषी देवो के रूप, रग, आकृति, भ्रमणमार्ग आदि का विवेचन किया है। यो तो पाटीगणित, बीजगणित, रेखागणित, त्रिकोणमिति, गोलीय रेखागणित, चापीय एव वक्रीय त्रिकोणमिति, प्रतिभागणित, शृ गोन्नति गणित, पचागनिर्माण गणित, जन्मपत्रनिर्माण गणित, ग्रहयुति, उदयास्त सम्बन्धी गणित का निरूपण इस विषय के अन्तर्गत किया गया है।

फलित सिद्धान्त मे तिथि, नक्षत्र, योग, करण, वार, ग्रहस्वरूप, ग्रहयोग जातक के जन्मकालीन ग्रहो का फल, मुहूर्त्त, समयशुद्धि, दिक्शुद्धि, देशशुद्धि आदि विषयो का परिज्ञान करने के लिए फुटकर चर्चाओ के अतिरिक्त वर्षप्रबोध, ग्रहभाव प्रकाश, बेडाजातक, प्रश्नशतक, प्रश्न चतुर्विशतिका, लग्नविचार, ज्योतिष रत्नाकर प्रभृति ग्रन्थो की रचना जैनाचार्यो ने की है। फलित विषय के विस्तार मे अष्टागनिमित्तज्ञान भी शामिल है और प्रधानत यही निमित्त ज्ञान सहिता विषय के अन्तर्गत आता है। जैन दृष्टि मे सहिता ग्रन्थो मे अष्टाग निमित्त के साथ आयुर्वेद और क्रियाकाण्ड को भी स्थान दिया है। ऋषिपुत्र, माघनन्दी, अकलक, भट्टवोसरि आदि के नाम सहिता-ग्रन्थो के प्रणेता के रूप से प्रसिद्ध हैं। प्रश्नशास्त्र और सामुद्रिक शास्त्र का समावेश भी सहिता शास्त्र मे किया है।

अष्टांग निमित्त

जिन लक्षणो को देखकर भूत और भविष्यत् मे घटित हुई और होने वाली घटनाओ का निरूपण किया जाता है, उन्हे निमित्त कहते है। न्यायशास्त्र मे दो प्रकार के निमित्त माने गये है- -कारक और सूचक। कारक निमित्त वे कहलाते है, जो किसी वस्तु को सम्पन्न करने मे सहायक होते है, जैसे घडे के लिए कुम्हार निमित्त है और पट के लिए जुलाहा। जुलाहे और कुम्हार की सहायता के बिना घट और पट रूप कार्यो का बनना सभव नही। दूसरे प्रकार के निमित्त सूचक हैं, इनसे किसी वस्तु या कार्य की सूचना मिलती है, जैसे सिगनल के झुक जाने से रेलगाडी के आने की सूचना मिलती है। ज्योतिष शास्त्र मे सूचक निमित्तो की विशेषताओ पर विचार किया गया है तथा सहिता ग्रन्थो का प्रधान प्रतिपाद्य विषय सूचक निमित्त ही है। सहिता शास्त्र मानता है कि प्रत्येक घटना के घटित होने के पहले प्रकृति मे विकार उत्पन्न होता है, इन प्राकृतिक विकारो की पहचान से व्यक्ति भावी शुभ-अशुभ घटनाओ को सरलतापूर्वक जान सकता है।

ग्रह नक्षत्रादि की गतिविधि का भूत, भविष्यत् और वर्तमान कालीन क्रियाओ के साथ कार्यकारण भाव सम्बन्ध स्थापित किया गया है । इस अव्यभिचरित कार्य-कारण भाव से भूत, भविष्यत् की घटनाओ का अनुमान किया है और इस अनुमान ज्ञान को अव्यभिचारी माना है । न्यायशास्त्र भी मानता है कि सुपरीक्षित अव्यभिचारी कार्य-कारण भाव से ज्ञात घटनाएँ निर्दोष होती है । उत्पादक सामग्री के सदोष होने से ही अनुमान सदोष होता है। अनुमान की अव्यभिचारिता सुपरीक्षित निर्दोष उत्पादक सामग्री पर निर्भर है। अत ग्रह या अन्य प्राकृतिक कारण किसी व्यक्ति का इष्ट अनिष्ट सम्पादन नही करते, बल्कि इष्ट या अनिष्ट रूप मे घटित होने वाली भावी घटनाओ की सूचना देते है । सक्षेप मे ग्रह कर्मफल के अभिव्यजक है । ज्ञानावरणीय, दर्शनावरणीय आदि आठ कर्म तथा मोहनीय के दर्शन और चरित्रमोह के भेदो के कारण कर्मों के प्रधान नौ भेद जैनागम मे बताये गये हैं। प्रधान नौ ग्रह इन्ही कर्मों के फलो की सूचना देते हैं । ग्रहो के आधार पर व्यक्ति के बन्ध, उदय और सत्त्व की कर्मप्रवृत्तियो का विवेचन भी किया जा सकता है। किसी भी जातक की जन्मकुण्डली की ग्रहस्थिति के साथ गोचर ग्रह की स्थिति का समन्वय कर उक्त बाते सहज मे कही जा सकती है । अत ज्योतिष शास्त्र मे अव्यभिचारी सूचक निमित्तो का विवेचन किया गया है । इन्ही सूचक निमित्तो के संहिताग्रन्थो मे आठ भेद किये गये है—व्यजन, अंग, स्वर, भौम, छिन्न, अन्तरिक्ष, लक्षण एव स्वप्न ।

व्यंजन— तिल, मस्सा, चट्टा आदि को देखकर शुभाशुभ का निरूपण करना व्यजन निमित्तज्ञान है । साधारणत पुरुष के शरीर मे दाहिनी ओर तिल, मस्सा, चट्टा शुभ समझा जाता है और नारी के शरीर मे इन्ही व्यजनो का बायीओर होना शुभ है। पुरुष की हथेली मे तिल होने से उसके भाग्य की वृद्धि होती है।पद तल मे होने से राजा होता है, पितृरेखा पर तिल के होने से विष द्वारा कष्ट पाता है। कपाल के दक्षिण पार्श्व मे तिल होने से धनवान् और सम्भ्रान्त होता है । वामपार्श्व या भौह मे तिल के होने से कार्यनाश और आशा भग होती है। दाहिनी ओर की भौह मे तिल होने से प्रथम उम्र मे विवाह होता है और गुणवती पत्नी प्राप्त होती है । नेत्र के कोने मे तिल होने से व्यक्ति शान्त, विनीत और अध्यव-सायी होता है। गण्डस्थल या कपोल पर तिल होने से व्यक्ति मध्यम वित्त वाला होता है। परिश्रम करने पर ही जीवन मे सफलता मिलती है। इस प्रकार के व्यक्ति प्राय. स्वनिर्मित ही होते हैं। गले मे तिल का रहना दुख सूचक है । कण्ठ मे तिल के होने से विवाह द्वारा भाग्योदय होता है, ससुराल से हर प्रकार की सहायता प्राप्त होती है । वक्षस्थल के दक्षिण भाग मे तिल होने से कन्याएँ अधिक उत्पन्न होती है और व्यक्ति प्राय यशस्वी होता है। दक्षिण पजर मे तिल के होने से व्यक्ति कायर होता है। समय पड़ने पर मित्र और हितैषियो को धोखा

देता है। उदर मे तिल होने से व्यक्ति दीर्घसूत्री और स्वार्थी होता है। नासिका के वामपार्श्व मे तिल रहने से पुरुष धनहीन, मद्यपायी और मूर्ख होता है। बायी ओर के कपोल पर तिल हो तो अटूट दाम्पत्य प्रेम होता है और सौभाग्य की वृद्धि होती है। कान मे तिल होने से भाग्य और यश की वृद्धि होती है। नितम्ब मे तिल होने से अधिक सन्तान प्राप्त होती है, किन्तु सभी जीवित नही रहती। दाहिनी जाँघ का तिल धनी होने का सूचक है। बायी जाँघ का तिल दरिद्र और रोगी होने की सूचना देता है। दाहिने पैर मे तिल होने से व्यक्ति ज्ञानी होता है, आधी अवस्था के पश्चात् सन्यासी का जीवन व्यतीत करता है। दाहिनी बाहु मे तिल होने से दृढ शरीर, धैर्यशाली एव बायी बाहु मे तिल होने से व्यक्ति कठोर प्रकृति, क्रोधी और विश्वासघातक होता है। इस प्रकार के तिल वाले व्यक्ति प्राय. डाकू या हत्यारे होते है।

यदि नारियो के बायें कान, बाये कपोल, बाये कण्ठ अथवा बायें हाथ मे तिल हो तो वे प्रथम प्रसव मे पुत्र प्रसव करती है। दाहिनी भौह मे तिल रहने से गुणवान् पति-लाभ करती हैं। बायी छाती के स्तन के नीचे तिल रहने से बुद्धिमती, प्रेमवती और सुखप्रसविनी होती है। हृदय मे तिल होने से नारी सौभाग्यवती होती है। दक्षिण स्तन मे लोहितवर्ण का तिल हो तो चार कन्याएँ और तीन पुत्र उत्पन्न होते है। बायें स्तन मे तिल या लाल कोई चिह्न हो तो वह स्त्री एक पुत्र प्रसव कर विधवा हो जाती है। बगल मे सुदीर्घ तिल होने से नारी पतिप्रिया और पौत्रवती होती है। नख मे श्वेत बिन्दु हो, तो उसके स्वेच्छाचारिणी तथा कुलटा होने की सभावना है। जिस स्त्री की नाक की नोक पर तिल या मस्सा हो, दन्त और जिह्वा काली हो तो वह स्त्री विवाह के दशवे दिन विधवा होती है। दक्षिण घुटने पर तिल होने से मनोहर पति-लाभ होता है। दाहिनी बाहु मे हो तो पति को सौभाग्यदायिनी तथा पीठ मे तिल होने से सुलक्षण और पतिपरायण होती है। बायी भुजा मे तिल या मस्सा होने से स्त्री मुखरा, कलहकारिणी और कटुभाषिणी होती है। बाये कधे पर तिल रहने से चचला, व्यभिचारिणी और असत्यभाषिणी होती है। नाभि के बाये भाग मे तिल रहने से चचला और नाभि के दाहिने भाग मे तिल होने से सुलक्षणा होती है। मस्सो और चट्टो—लहसुनो का शुभाशुभ फल भी तिलो के समान ही समझना चाहिए। निमित्त शास्त्र मे व्यजनो का विचार विस्तारपूर्वक किया है।

अगनिमित्तज्ञान—हाथ, पाँव, ललाट, मस्तक और वक्षस्थल आदि शरीर के अगो को देखकर शुभाशुभ फल का निरूपण करना अगनिमित्त है। नासिका, नेत्र, दन्त, ललाट, मस्तक और वक्ष.स्थल ये छः अवयव उन्नत होने से मनुष्य सुलक्षण युक्त होता है। करतल, पदतल, नयनप्रान्त, नख, तालु, अधर और जिह्वा ये सात अग लाल हो तो शुभप्रद है। जिसकी कमर विशाल हो, वह बहुत पुत्रवान्

होता है। जिसकी भुजाएँ लम्बी होती हैं, वह व्यक्ति श्रेष्ठ होता है। जिसका हृदय विस्तीर्ण है, वह धन-धान्यशाली और जिसका मस्तक विशाल है वह मनुष्यो मे पूजनीय होता है। जिस व्यक्ति का नयनप्रान्त लाल है, लक्ष्मी कभी उसका परित्याग नही कर सकती। जिसका शरीर तप्तकाचन के समान गौरवर्ण है, वह कभी भी निर्धन नही होता। जिसके दाँत बडे होते हैं, वह कदाचित् मूर्ख होता है तथा अधिक लोम वाला व्यक्ति ससार मे सुखी नही हो सकता। जिसकी हथेली चिकनी और मुलायम हो वह ऐश्वर्य भोग करता है। जिसके पैर का तलवा लाल होता है, वह सवारी का उपयोग सदा करता है। पैर के तलवो का चिकना और अरुणवर्ण का होना शुभ माना गया है।

जिस व्यक्ति के केश ताम्रवर्ण और लम्बे तथा घने हो वह पच्चीस वर्ष की अवस्था मे पागल या उन्मत्त हो जाता है। इस प्रकार के व्यक्ति को चालीस वर्ष की अवस्था तक अनेक कष्ट भोगने पडते है। जिस व्यक्ति की जिह्वा इतनी लम्बी हो, जो नाक का अग्रभाग स्पर्श कर ले, तो वह योगी या मुमुक्षु होता है। जिसके दाँत विरल अर्थात् अलग-अलग हो और हँसने पर गर्तचिह्न दिखाई दे, उस व्यक्ति को अन्य किसी का धन प्राप्त होता है और यह व्यक्ति व्यभिचारी भी होता है। जिस व्यक्ति के चिबुक—ठोडी पर बाल न हो अर्थात् जिसे दाढी नही हो तथा जिसकी छाती पर भी बाल न हो, ऐसा व्यक्ति धूर्त, कपटी और मायाचारी होता है। यह व्यक्ति अपने स्वार्थ-साधन मे बडा प्रवीण होता है। हाँ, बुद्धि और लक्ष्मी दोनो ही उसके पास रहती हैं।

मस्तक पर विचार करते समय बताया गया है कि मस्तक के सम्बन्ध मे चार बातें विचारणीय है—बनावट, नसजाल, विस्तार और आभा। बनावट से विचार, विद्या और धार्मिकता के माप का पता चलता है। मस्तक की हड्डियाँ यदि दृढ, स्निग्ध और सुडौल हैं तो उपर्युक्त गुणो की मात्रा और प्रकार मे विशेषता रहती है। बेढगी बनावट होने पर उत्तम गुणो का अभाव और दुर्गुणो की प्रधानता होती है।

नस-जाल—मस्तक के नसजाल से विद्या, विचार और प्रतिभा का परिज्ञान होता है। विचारशील व्यक्तियो के माथे पर सिकुडन और ग्रन्थियाँ देखी जाती हैं। रेखाविहीन चिकना मस्तक प्रमाद, अज्ञान और लापरवाही का सूचक है।

विस्तार मे मस्तक की लम्बाई, चौडाई, ऊँचाई और गहराई सम्मिलित हैं। मस्तक नीचे की ओर चौडा हो और ऊपर की ओर छोटा हो तो व्यक्ति झक्की होता है। नीचे चपटे और चौडे माथे में विचार, कार्यशक्ति और कल्पना की कमी तथा उदारता का अभाव रहता है। ऐसा व्यक्ति उत्साही होता है, परन्तु उसके कार्य बे-सिर-पैर के होते हैं। चौड़ा और ढालू मस्तक होने पर व्यक्ति चालाक, चतुर और पेट के प्रायः मलिन होते हैं। उन्नत और चौड़े ललाट वाले व्यक्ति

विद्वान् होते हैं। यदि सीधे और चौकोर मस्तक के ऊपरी भाग मे कोण (Angles) बन रहे हो और गोलाई लिये हो तो व्यक्ति हठीला और दृढ होता है। यदि गोलाई न हो और सीधा हो तो विचार और कर्म मे अकर्मण्य होता है। ऊँचा, सीधा और आभापूर्ण ललाट लेखको और कवियो और अर्थशास्त्रियो का होता है। चौडा मस्तक होने से व्यक्ति जीवन मे दु खी नही होता।

आभा—मस्तक की आभा का वही महत्त्व है, जो किसी सुन्दर बने मकान मे रँगाई और पुताई का होता है। आभा रहने से व्यक्ति के व्यक्तित्व का विकास दृष्टिगोचर होता है। जिस व्यक्ति का मस्तक आभा-रहित होता है, वह दरिद्र, दु खी और अनेक प्रकार के रोगो से पीडित रहता है।

ओठो पर विचार करते समय कहा गया है कि मोटे ओठो वाला व्यक्ति मूर्ख, दुराग्रही और दुराचारी होता है। आर्थिक दृष्टि मे भी यह व्यक्ति कष्ट उठाता है। छोटे मुँह मे अधिक पतले ओठ कजूसी, दरिद्रता और चिन्ता के सूचक है। सरस, सुन्दर और आभायुक्त पतले ओठ होने पर व्यक्ति विद्वान्, धनी, सुखी और प्रिय होता है। गोलमुख मे गर्दन गोल और दृष्टि निक्षेप चुभता हुआ होने पर व्यक्ति को अविचारी और स्वेच्छाचारी समझना चाहिए। ओठो मे ढिलाव, लटकाव और मुडाव अनाचार और अविचार के द्योतक है। ढीले और लटके ओठ होने से व्यक्ति का शिथिलाचारी, निर्धन और चचल प्रकृति का होना व्यक्त होता है। सरस ओठ होने मे दयालुता, परोपकार वृत्ति, सहृदयता एव स्निग्धता व्यक्त होती है। रूक्ष ओठ अजीर्ण, ज्वर, रोग एव दारिद्र्य को प्रकट करते है।

दाँतो के सम्बन्ध मे विचार करते हुए बताया गया है कि चमकीले दाँत वाला व्यक्ति कार्यशील और उत्साही होता है। छोटे होने पर भी पक्तिबद्ध और स्वच्छ दाँत व्यक्ति के विचारवान और उत्साही होने की सूचना देते हैं। ऊपर के दाँतो मे बीच के दो दाँत जो अपेक्षाकृत बडे होते है—अपेक्षाकृत अधिक महत्त्वपूर्ण है। जिस मुख मे ये दाँत स्वभावत खुले रहते हो, स्वच्छ और आभायुक्त हो एव मुखाभा मनोज्ञ हो तो उस व्यक्ति मे शील, सौजन्य और नम्रता का गुण अवश्य होता है। उक्त प्रकार के दाँत वाला व्यक्ति व्यापार मे प्रभूत धनार्जन करता है।

गर्दन के पिछले भाग को पिछला मस्तक और अगले भाग को कण्ठ कहते है। पिछले मस्तक मे सुन्दर भराव और गठाव हो तो व्यक्ति का स्वावलम्बन और स्वाभिमान प्रकट होता है। इस प्रकार का व्यक्ति अन्तिम जीवन मे अधिक धनी बनता है और गार्हस्थिक सुख का आनन्द लेता है। यदि सिर का पिछला भाग चिकना और शिखा भाग के सम स्तर पर हो, बीच मे गहराई न हो तो ऐसा व्यक्ति विषयी, गार्हस्थिक कार्यो मे अनुरक्त एव निर्धन होकर वृद्धावस्था मे कष्ट प्राप्त करता है। गर्दन सीधी, गठी, दृढ और भरी होने से व्यक्ति विचारशील,

श्रेष्ठ राजकर्मचारी एव श्रेष्ठ न्यायाधीश होता है । इस प्रकार के व्यक्ति जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में अधिक सफल होते है ।

स्त्रियों के अगो का शुभाशुभत्व बतलाते हुए कहा है कि जिस स्त्री की मध्यमागुली दूसरी अँगुलियो से मिली हो, वह सदा उत्तम भोग भोगती है, उसका एक भी दिन दु ख से नही बीतता । जिसका अगुष्ठ गोल और मासल हो तथा अग्रभाग उन्नत हो, वह अतुल सुख और सौभाग्य का सम्भोग करती है । जिसकी अँगुलियाँ लम्बी होती है, वह प्राय कुलटा और जिसकी अंगुलियाँ पतली होती है, वह प्राय निर्धन होती है ।

जिस स्त्री के पैर के नख स्निग्ध, समुन्नत, ताम्रवर्ण, गोलाकार और सुन्दर होते है तथा जिसके पैर के तलवे उन्नत होते है, वह राजमहिषी या राजमहिषी के तुल्य सुख भोगने वाली होती है । जिसके घुटने मासल तथा गोल हैं, वह सौभाग्यशालिनी होती है । जिसके जानु या घुटने मे मास नही, वह दुश्चरित्रा और दरिद्रा होती है । जिसके हृदय मे लोम नही, जिसका वक्ष स्थल नीचा नही, किन्तु समतल है, वह स्त्री ऐश्वर्यशालिनी और सौभाग्यवती होती है । जिस स्त्री के स्तन द्वय का मूल भाग मोटा है और उपरिभाग क्रमश पतला होता है, वह बाल्यकाल मे सुख भोगती है, पर अन्त मे दु खी होती है । जिस स्त्री के नीचे की पक्ति मे अधिक दाँत हो उसकी माता की मृत्यु असमय मे ही हो जाती है । किसी भी स्त्री की नासिका के अग्रभाग का स्थूल होना, मध्य भाग का नीचा होना या उन्नत होना अशुभ कहा गया है । ऐसी स्त्री असमय मे विधवा होती है ।

जिस स्त्री की आँखे गाय की आँखो की तरह पिगलवर्ण की हो, वह स्त्री गर्विता होती है । जिसकी आँखे कबूतर की तरह है, वह दुश्शीला होती है और जिसकी आँखें रक्तवर्ण की है, वह पतिघातिनी होती है । जिस स्त्री की बायी आँख कानी हो, वह दुश्चरित्रा और जिसकी दाहिनी आँख कानी, वह बन्ध्या होती है । सुन्दर और सुडौल आँख वाली नारी सुखी रहती है ।

जिस स्त्री का शरीर लम्बा हो तथा उसमे लोम और शिरा—नसें दिखलाई दें, वह रोगिणी होती है । जिसके भौह या ललाट मे तिल हो, वह पूर्ण सुखी जीवन व्यतीत करती है । श्याम वर्ण की नारी के पिगल केश अत्यन्त अशुभ माने गये हैं । ऐसी नारी पति और सन्तान दोनो के लिए कष्टदायक होती है । चौडे वक्षस्थल वाली नारी प्राय विधवा होती है । जिसके पैर की तर्जनी, मध्यमा अथवा अनामिका भूमि का स्पर्श नही करती, वह सुखी और सौभाग्यशालिनी होती है ।

जिस नारी की ठोडी मोटी, लम्बी या छोटी होती है, वह नारी निर्लज्ज, तुच्छ विचार वाली, भावुक और संकीर्ण हृदय की होती है । गहरी ठोडी वाली नारियो मे अधिक कामुकता रहती है, घर मे नारियाँ मिलनसार, यशस्विनी और परिवार मे सभी की प्रिय होती है । गठी ठोड़ी वाली नारियाँ कार्यकुशल, सुखी

और सन्तान से युक्त होती है। इस प्रकार की नारियाँ जीवन मे सुख का ही अनुभव करती हैं, इन्हे किसी भी प्रकार की कठिनाई प्राप्त नही होती। ठोड़ी की आकृति सीधी, टेढी, उठी, नुकीली, चौकोर, लम्बी, छोटी, चपटी, गहरी, गठी, फूली और मोटी इस प्रकार बारह तरह की बतलायी गयी है। मस्तक, नाक और आँख आदि के सुन्दर होने पर भी ठोडी की भद्दी आकृति होने से नर या नारी दोनो को जीवन मे कष्ट उठाने पडते हैं। भद्दी आकृतिवाला व्यक्ति शूरवीर होता है। नारी भयंकर आकृति की कोई भी हो तो वह भी पुरुष के कार्यों को बडी तत्परता से करती है।

अगनिमित्त शास्त्र मे शरीर के समस्त अगो की बनावट, रूप-रग तथा उनके स्पर्श का भी विवेचन किया गया है। बताया गया है कि जिस पुरुष या नारी के पैर भद्दे और मोटे होते है, उसे मजदूरी सदा करनी पडती है। इस प्रकार के पैर वाला व्यक्ति सदा शासित रहता है। जिसका ललाट विस्तृत हो, पैर पतले और सुन्दर हो, हाथ की हथेली लाल हो, चेहरा गोल हो, वक्षस्थल चौडा हो और नेत्र गोल हो, वह व्यक्ति स्त्री या पुरुष हो, शासक का काम करता है। आर्थिक अभाव उसे जीवन मे कभी भी कष्ट नही दे सकता है।

स्वरनिमित्त—चेतन प्राणियो के और अचेतन वस्तुओ के शब्द सुनकर शुभाशुभ का निरूपण करना स्वरनिमित्त कहलाता है। पोदकी का 'चिलिचिलि' इस प्रकार का शब्द सुनाई पडे तो लाभ की सूचना समझनी चाहिए। 'चिकुचिकु' इस प्रकार का शब्द सुनाई पडे तो बुलाने के लिए सूचना समझनी चाहिए। पोदकी का 'कीतुकीतु' शब्द कामनासिद्धि का सूचक, 'चिरिचिरि' शब्द कष्टसूचक और 'चच' शब्द विनाश का सूचक होता है।

इस निमित्त मे काक, उल्लू, बिल्ली, कुत्ता आदि के शब्दो का विशेष रूप से विचार किया जाता है। कौवे का कठोर शब्द कष्टदायक और मधुर शब्द शुभ देने वाला होता है। दीप्त दिशा मे स्थित होकर कठोर शब्द करे तो कार्य का विनाश होता है। रात्रि मे दीप्त दिशा मे मुख कर शान्त शब्द करे तो कार्य-सिद्धि का सूचक, सूर्योदय के समय पूर्व दिशा में सुन्दर स्थान मे बैठकर काक मधुर शब्द करे तो वैरी का नाश, चिन्तित कार्यसिद्धि एव स्त्री-रत्नलाभ होता है। प्रभात-काल मे काक अग्निकोण मे सुन्दर देश मे स्थित हो शब्द करता है, तो विजय, धनलाभ, स्त्री-रत्न की प्राप्ति; दक्षिण मे शब्द करे तो अत्यन्त कष्ट, इसी दिशा में स्थित काक कठोर शब्द करे तो रोगी की मृत्यु; मधुर शब्द करे तो इष्ट जन समागम, धन-प्राप्ति, अनेक के सम्मान; प्रभातकाल मे पश्चिम दिशा मे शब्द करे तो निश्चय वर्षा, सुन्दर वस्तुओ की प्राप्ति, किसी उत्तम राजकर्मचारी का समागम, वायव्य कोण मे काक बोले तो अन्न-वस्त्र की प्राप्ति, प्रियव्यक्ति का आगमन, उत्तर दिशा मे शब्द करे तो अतिकष्ट, सर्पभय, दरिद्रता; ईशान दिशा

मे काक बोले तो व्याधि, रोगी का मरण एव आकाश मे स्थित होकर काक मधुर शब्द करे तो अभीष्ट फल की प्राप्ति होती है। पूर्व दिशा मे स्थित काक प्रथम प्रहर मे सुन्दर शब्द बोले तो चिन्तित कार्य की सिद्धि, प्रचुर धन-लाभ, अग्नि कोण मे स्थित होकर काक बोले तो स्त्री-लाभ, मित्रता की प्राप्ति एवं दक्षिण दिशा में बोले तो स्त्री-लाभ, सौख्य-प्राप्ति, नैऋत्य कोण मे बोले तो मिष्टान्न प्राप्ति एव पश्चिम दिशा मे बोले तो जल की वर्षा, अतिथि आगमन एव कार्य-सिद्धि की सूचना मिलती है।

दूसरे प्रहर मे काक पूर्व दिशा मे बोले तो पथिक-आगमन, चौरभय और आकुलता, अग्नि कोण मे बोले तो निश्चय कलह, प्रिय आगमन का श्रवण, स्त्री प्राप्ति और सम्मान लाभ, नैऋत्य कोण मे बोले तो प्राणभय, स्त्री-भोजन लाभ, सर्वरोग विनाश और जन-समागम, पश्चिम मे बोले तो अभ्युदय का सूचक, वायव्य कोण मे बोले तो चोरी का भय, उत्तर दिशा मे बोले तो धन-लाभ और इष्ट-जन-समागम, ईशान दिशा मे बोले तो त्रास एव आकाश मे बोले तो मिष्टान्न-लाभ, राजानुग्रह-लाभ और कार्य सिद्धि होती है।

उल्लू का दिन मे बोलना अत्यन्त अशुभ माना जाता है। रात्रि मे कठोर शब्द उल्लू करे तो भय-प्राप्ति, अनिष्ट सूचक, आधि-व्याधि सूचक तथा मधुर शब्द करे तो कार्य-सिद्धि, सम्मान-लाभ और एक वर्ष के भीतर धन-प्राप्ति की सूचना समझनी चाहिए।

मुर्गा, हाथी, मोर और शृगाल क्रूर शब्द करें तो अनेक प्रकार के भय, मधुर शब्द करने से इष्ट-लाभ तथा अति मधुर शब्द करने से धनादि का शीघ्र लाभ होता है। शृगाल का दिन मे बोलना अशुभ माना गया है। दिन मे शृगाल कर्कश ध्वनि करे तो आधि-व्याधि की सूचना समझनी चाहिए। कबूतर और तोते का रुदन शब्द सर्वदा अशुभ कारक माना गया है। बिल्ली का पश्चिम दिशा मे स्थित होकर रुदन करना अत्यन्त अशुभ समझा जाता है। पूर्व दिशा मे बिल्ली का बोलना साधारणतया शुभ समझा जाता है। वास्तविक फलादेश कर्कश, मधुर और मध्यम ध्वनि के अनुसार शुभाशुभ फल के रूप मे समझना चाहिए। बिल्ली का तीन बार जोर से बोलना या रोना और चौथी बार धीरे से बोलकर या रोकर चुप हो जाना श्रोता के अत्यधिक अनिष्ट-सूचक है। गाय, बैल, भैंस, बकरी इनकी मधुर, कोमल, कर्कश एव मध्यम ध्वनियो के अनुसार फलादेशो का निरूपण किया गया है। रोने की ध्वनि तथा हँसने की ध्वनि सभी पशु-पक्षियो की अशुभ मानी गयी है। मधुर और सह्य ध्वनि, जो कर्ण कटु न हो, शुभ होती है। फलो से युक्त हरे-भरे वृक्ष पर स्थित होकर पक्षियो का बोलना शुभ और सूखे वृक्ष या काठ के ढेर पर स्थित होकर बोलना अशुभ होता है।

भौम निमित्त --भूमि के रग, चिकनाहट, रूखेपन आदि के द्वारा शुभाशुभत्व

अवगत करना भौम निमित्त कहलाता है। इस निमित्त से गृह-निर्माण योग्य भूमि, देवालय-निर्माण योग्य भूमि, जलाशय-निर्माण योग्य भूमि आदि बातों की जानकारी प्राप्त की जाती है। भूमि के रूप, रस, गन्ध और स्पर्श द्वारा उसके शुभाशुभत्व को जाना जाता है।

भूमि के नीचे के जल का विचार करते समय बताया गया है कि जिस स्थान की मिट्टी पाण्डु और पीत वर्ण की हो तथा उसमे से शहद जैसी गन्ध निकलती हो तो वहाँ जल निकलता है अर्थात् सवा तीन पुरुष प्रमाण नीचे खोदने मे जल का स्रोत मिल जाता है। नीलकमल के रंग की मिट्टी हो तो उसके नीचे खारा जल समझना चाहिए। कपोत वर्ण के समान मृत्तिका होने से भी खारे जल का स्रोत मिलता है। पीत वर्ण की मृत्तिका से दूध के समान गन्ध निकले तो निश्चयत मीठे जल का स्रोत समझना चाहिए। परन्तु यहाँ इस बात का भी ध्यान रखना आवश्यक है कि मिट्टी चिकनी होनी चाहिए, रूक्ष वर्ण की मिट्टी होने से जल का अभाव या अल्प जल निकलता है। धूम्र वर्ण की मिट्टी रहने से भी उसके नीचे जल का स्रोत रहता है।

घर बनाने के लिए श्वेत, रक्त, पीत और कृष्ण वर्ण की भूमि, जिसमे से घी, रक्त, अन्न और मद्य के समान गन्ध निकलती हो, शुभ होती है। मधुर, कषायली, आम्ल और कटु रसवाली भूमि घर बनाने के लिए शुभ होती है। दुर्गन्ध युक्त भूमि मे घर बनाने से अनिष्ट होता है, शत्रुभय, धन विनाश एव नाना प्रकार के सक्लेश होते है। मजीठे के समान रक्त वर्ण की भूमि अशुभ है। मूँग के समान हरित वर्ण की भूमि मे भी घर बनाना अशुभ होता है। जिस स्थान की मृत्तिका से पुष्प के समान गन्ध निकले या धूप के समान गन्ध आती हो और श्वेत या पीत वर्ण की मृत्तिका हो, उस स्थान पर घर बनवाना शुभ होता है। अग्नि के समान लालवर्ण की भूमि मे घर बनवाना निषिद्ध है। यदि इस भूमि का स्पर्श छत के समान चिकना हो और महुवे के समान गन्ध निकलती हो तो यह भूमि भी घर बनाने के लिए शुभ होती है। मटमैले वर्ण की भूमि से यदि मुर्दे जैसी गन्ध आये तो कभी भी उस भूमि मे घर नही बनवाना चाहिए। वर्ण की दृष्टि से श्वेत और पीत वर्ण की भूमि तथा गन्ध की दृष्टि से मधु, घृत, दुग्ध और भात की गन्ध वाली भूमि तथा घृत, दही और शहद के समान स्पर्श वाली भूमि घर बनाने के लिए शुभ मानी जाती है। किस प्रकार की भूमि के नीचे कौन-कौन पदार्थ हैं यह भी भूमि के गणित से निकाला जाता है।

किसी भी मकान मे कहाँ अस्थि है और कहाँ पर धन-धान्यादि हैं, इसकी जानकारी भी भूमि गणित के अनुसार की जाती है। ज्योतिष शास्त्र के विषयो मे ऐसे कई प्रकार के गणित हैं जो भूमि के नीचे की वस्तुओ पर प्रकाश डालते है। बताया गया है कि जिस स्थान की मिट्टी हाथी के मद के समान गन्ध वाली हो, या

कमल के समान गन्ध वाली हो और जहाँ प्राय कोयल आया-जाया करती हो और गोहद ने अपना निवास बनाया हो, इस प्रकार की भूमि मे नीचे स्वर्णादि द्रव्य रहते हैं। दूध के समान गन्ध वाली भूमि के नीचे रजत, मधु और पृथ्वी के समान गन्ध वाली भूमि के नीचे रजत और ताम्र, कबूतर की बीट के समान गन्ध वाली भूमि के नीचे पत्थर और जल के समान गन्धवाली भूमि के नीचे अस्थियाँ निकलती हैं। जिस भूमि का वर्ण सदा एक तरह का नही रहे, निरन्तर बदलता रहे और मट्ठा के समान गन्ध निकले उस भूमि के नीचे सोना या रत्न अवश्य रहते हैं। कदली वृक्ष के क्षार के समान जहाँ से गन्ध निकलती हो तथा मधुर रस हो, उस भूमि के नीचे रजत -चाँदी या चाँदी के सिक्के निकलते है।

छिन्न निमित्त --वस्त्र, शस्त्र, आसन और छत्रादि को छिदा हुआ देखकर शुभाशुभ फल कहना छिन्न निमित्त ज्ञान के अन्तर्गत है। बताया गया है कि नये वस्त्र, आसन, शय्या, शस्त्र, जूता आदि के नौ भाग करके विचार करना चाहिए। वस्त्र के कोणो के चार भागो मे देवता, पाशान्त— मूल भाग के दो भागो मे मनुष्य और मध्य के तीन भागो मे राक्षस बसते है। नया वस्त्र या उपर्युक्त नयी वस्तुओ मे स्याही, गोबर, कीचड आदि लग जाय, उपर्युक्त वस्तुएँ जल जायँ, फट जायँ, कट जायँ तो अशुभ फल समझना चाहिए। कुछ पुराना वस्त्र पहनने पर जल या कट जाय तो सामान्यतया अशुभ होता है। राक्षस के भागो मे वस्त्र मे छेद हो जाय तो वस्त्र के स्वामी को रोग या मृत्यु होती है, मनुष्य भागो मे छेद हो जाने पर पुत्र-जन्म होता है तथा वैभवशाली पदार्थों की प्राप्ति होती है। देवताओ के भागो मे छेद होने पर धन, ऐश्वर्य, वैभव, सम्मान एव भोगो की प्राप्ति होती है। देवता, मनुष्य और राक्षस इन तीनो के भागो मे छेद हो जाने पर अत्यन्त अनिष्ट होता है।

ककपक्षी, मेढक, उल्लू, कपोत, काक, मासभक्षी गृध्रादि, जम्बुक, गधा, ऊँट और सर्प के आकार का छेद देवता भाग मे होने पर भी वस्त्र-भोक्ता को मृत्यु तुल्य कष्ट भोगना पडता है। इस प्रकार के छेद होने से धन का विनाश भी होता है। देवता भाग के अतिरिक्त अन्य भागो मे छेद होने पर तो वस्त्र-भोक्ता को नाना प्रकार की आधि-व्याधियाँ होने की सूचना मिलती है। अपमान और तिरस्कार भी अनेक प्रकार के सहन करने पडते है। छत्र, ध्वज, स्वस्तिक, बिल्वफल—बेल, कलश, कमल और तोरणादि के आकार का छेद राक्षस भाग में होने मे लक्ष्मी की प्राप्ति, पद-वृद्धि, सम्मान और अन्य सभी प्रकार के अभीष्ट फल प्राप्त होते हैं।

वस्त्र धारण करतेसमय उसका दाहिना भाग जल जाय या फट जाय तो वस्त्र-भोक्ता को एक महीने के भीतर अनेक प्रकार की बीमारियो का सामना करना पडता है। बायें कोने के जलने या कटने से बीस दिन मे घर मे कोई न कोई आत्मीय

व्यक्ति रोग से पीड़ित होता है तथा वस्त्र-भोक्ता को अत्यधिक मानसिक ताप उठाना पड़ता है। ठीक मध्य में वस्त्र के जलने या कटने से व्यक्ति को शारीरिक कष्ट, धननाश और पद-पद पर अपमानित होना पड़ता है। वस्त्र के मूल भाग में जलना या कटना साधारणत शुभ माना गया है। अग्रभाग में वस्त्र का छिन्न-भिन्न होना साधारणत ठीक समझना चाहिए। वस्त्र को धारण करने के दिन से लेकर दो दिनों तक छिन्न-भिन्न होने के शुभाशुभत्व का विचार करना आवश्यक माना गया है। धारण करने के तत्क्षण ही वस्त्र जल या कट जाय तो उसका फल तत्काल और अवश्य प्राप्त होता है। धारण करने के एकाध दिन बाद यदि वस्त्र जले, कटे या फटे तो उसका फल अत्यल्प होता है। गर्ग आदि आचार्यों का मत है कि वस्त्र के शुभाशुभत्व का विचार वस्त्र धारण करने के एक प्रहर तक ही करना ज्यादा अच्छा होता है। एक प्रहर के पश्चात वस्त्र पुरातन हो जाता है, अतः उसके शुभाशुभत्व का कुछ भी प्रभाव नहीं पड़ता। वस्त्र में किसी पदार्थ का दाग लगना भी अशुभ माना गया है। गोदुग्ध या मधु के दाग को शुभ बताया है।

नये वस्त्रों में कुर्ता, टोपी, कमीज, कोट आदि ऊपर पहने जाने वाले वस्त्रों का विचार प्रमुख रूप से करना चाहिए तथा शुभाशुभ फल ऊपरी वस्त्रों के जलने-कटने का विशेष रूप से होता है। धोती, मोजा, पायजामा, पैण्ट आदि के जलने-कटने का फल अत्यल्प होता है। सबसे अधिक निकृष्ट टोपी का जलना या फटना कहा गया है। जिस व्यक्ति की टोपी धारण करते ही फट जाय या जल जाय तो वह व्यक्ति मृत्यु तुल्य कष्ट उठाता है। टोपी के ऊपरी हिस्सा का जलना जितना अशुभ होता है, उतना नीचे के हिस्सा का जलना नहीं। रविवार, मंगल और शनिवार को नवीन वस्त्र धारण करते ही जल या कट जाय तो विशेष कष्ट होता है। सोमवार और शुक्रवार को नये वस्त्र के जलने या कटने से सामान्य कष्ट तथा गुरुवार और बुधवार को वस्त्र का जलना भी अशुभ है।

अन्तरिक्ष—ग्रह नक्षत्रों के उदायस्त द्वारा शुभाशुभ का निरूपण करना अन्तरिक्ष निमित्त है। शुक्र बुध, मंगल, गुरु और शनि इन पाँच ग्रहों के उदयास्त द्वारा ही शुभाशुभ फल का निरूपण किया जाता है। यत. सूर्य और चन्द्रमा का उदायस्त प्रतिदिन होता है, अतएव शुभाशुभ फल के लिए इन ग्रहों के उदयास्त विचार की आवश्यकता नहीं पड़ती है। यद्यपि सूर्य और चन्द्रमा के उदयास्त के समय दिशाओं के रंग-रूप तथा इन दोनों ग्रहों के बिम्ब की आकृति आदि के विचार द्वारा शुभाशुभत्व का कथन किया गया है, तो भी गणित क्रिया में इनके उदयास्त को विशेष महत्ता नहीं दी गयी है। निमित्त ज्ञानी उक्त पाँचों ग्रहों के उदयास्त से ही फलादेश का कथन करते हैं। वास्तव में इन ग्रहों का उदायस्त विचार है भी महत्त्वपूर्ण।

शुक्र अश्विनी, मृगशिरा, रेवती, हस्त, पुष्य, पुनर्वसु, अनुराधा, श्रवण और

स्वाति नक्षत्र मे उदय को प्राप्त हो तो सिन्धु, गुर्जर, आसाम, महाराष्ट्र और बगाल मे अशान्ति, महामारी एव आपसी सघर्ष होते है। पूर्वाफाल्गुनी, पूर्वाषाढ़ा, पूर्वाभाद्रपद, उत्तराफाल्गुनी, उत्तराषाढा, उत्तराभाद्रपद, रोहिणी और भरणी इन नक्षत्रो मे शुक्र का उदय होने से गुजरात, पजाब मे दुर्भिक्ष तथा बिहार, बंगाल, असम आदि पूर्वी राज्यो मे दुर्भिक्ष होता है। घी और धान्य का भाव समस्त देशो मे कुछ महँगा होता है। कृत्तिका, मघा, आश्लेषा, विशाखा, शतभिषा, चित्रा, ज्येष्ठा, धनिष्ठा और मूल नक्षत्रो मे शुक्र का उदय हो तो दक्षिण भारत मे सुभिक्ष, पूर्णतया वर्षा तथा उत्तर भारत मे वर्षा की कमी रहती है। फसल भी उत्तर भारत मे बहुत अच्छी नही होती। आश्लेषा, भरणी, विशाखा, पूर्वाभाद्रपद और उत्तरा भाद्रपद इन नक्षत्रो मे शुक्र का उदय होना समस्त भारत के लिए अशुभ कहा गया है। चीन, अमेरिका, जापान और रूस मे भी अशान्ति रहती है।

मेष राशि मे शनि का उदय हो तो जलवृष्टि, सुख, शान्ति, धार्मिक विचार, उत्तम फसल और परस्पर सहानुभूति की उत्पत्ति होती है। वृष राशि मे शनि का उदय होने से तृणकाष्ठ का अभाव, घोडो में रोग, साधारण वर्षा और सामान्यत पशु-रोगो की वृद्धि होती है। मिथुन राशि मे शनि का उदय हो तो प्रचुर परिमाण मे वर्षा, उत्तम फसल और सभी पदार्थ सस्ते होते है। कर्क राशि मे शनि का उदय होने से वर्षा का अभाव, रसो की उत्पत्ति मे कमी, वनो का अभाव और खाद्य वस्तुओ के भाव महँगे होते है। सिंह राशि मे शनि का उदय होना अशुभ-कारक होता है। कन्या मे शनि का उदय होने से धान्यनाश, अल्पवर्षा, व्यापार मे लाभ और आभिजात्य वर्ग के व्यक्तियो को कष्ट होता है। तुला और वृश्चिक राशि मे शनि का उदय हो तो महावृष्टि, धन का विनाश, बाढ का भय और गेहूँ की फसल कम होती है। धनु राशि मे शनि का उदय हो तो नाना प्रकार की बीमारियाँ देश मे फैलती है। मकर मे शनि का उदय हो तो प्रशासको मे सघर्ष, राजनीतिक उलट-फेर एव लोहा महँगा होता है। कुम्भ राशि मे शनि का उदय हो तो अच्छी वर्षा, अच्छी फसल और व्यापारियो को लाभ होता है। मीन राशि मे शनि का उदय होना अल्प वर्षाकारक, नाना प्रकार के उपद्रवो का सूचक तथा फसल की कमी का सूचक है।

मेष राशि मे गुरु का उदय होने से दुर्भिक्ष, मरण, सकट और आकस्मिक दुघटनाएँ उत्पन्न होती हैं। वृष मे उदय होने से सुभिक्ष होता है। मिथुन में उदय होने से वेश्याओ को कष्ट, कलाकार और व्यापारियो को भी कष्ट होता है। कर्क मे गुरु के उदय होने से यथेष्ट वर्षा, कन्या मे उदय होने से साधारण वर्षा, तुला मे गुरु के उदय होने से विलास के पदार्थ महँगे; वृश्चिक मे उदय होने से दुर्भिक्ष, धनु-मकर मे उदय होने से उत्तम वर्षा, व्याधियो का बाहुल्य, कुम्भ मे उदय होने से अतिवृष्टि, अन्न का भाव महँगा और मीन मे गुरु का उदय होने से अशान्ति

और संघर्ष होता है।

पौष, आषाढ, श्रावण, वैशाख और माघ मास मे बुध का उदय होना अशुभ एव आश्विन, कार्तिक और ज्येष्ठ मे बुध का उदय होने से शुभ होता है। पूर्व दिशा मे बुध का उदय होना अशुभ और पश्चिम दिशा मे शुभ माना जाता है। मंगल का शनि की राशि मे उदय होना अशुभ माना जाता है और शुक्र, गुरु तथा अपनी राशियो मे उदय होना शुभ कहा गया है। कन्या और मिथुन राशि मे उदय होना साधारण है।

ग्रहो के अस्त का विचार करते हुए कहा गया है कि अश्विनी, मृगशिरा, हस्त, रेवती, पुष्य, पुनर्वसु, अनुराधा, श्रवण और स्वाति नक्षत्र मे शुक्र का अस्त होना इटली, रोम, जापान मे भूकम्प का द्योतक, वर्मा, श्याम, चीन और अमेरिका के लिए सुख-शान्ति सूचक तथा रूस और भारत के लिए साधारण शान्तिप्रद होता है। इन नक्षत्रो मे शुक्रास्त होने के उपरान्त एक महीने तक अन्न महँगा बिकता है, पश्चात् कुछ सस्ता होता है। घी, तेल, जूट, आदि पदार्थ सस्ते होते है। कृतिका, मघा, आश्लेषा, विशाखा, शतभिषा, चित्रा, ज्येष्ठा, धनिष्ठा और मूल नक्षत्र मे शुक्र अस्त हो तो भारत मे विग्रह, मुसलिम राष्ट्रो मे शान्ति, इग्लैण्ड और अमेरिका मे समता, चीन मे सुभिक्ष, वर्मा मे उत्तम फसल और भारत मे साधारण फसल होती हे। पूर्वाभाद्रपद, पूर्वाफाल्गुनी, पूर्वाषाढा, उत्तराफाल्गुनी, उत्तराभाद्रपद, उत्तराषाढा, रोहिणी और भरणी नक्षत्रो मे शुक्र का अस्त होना पजाब, दिल्ली, राजस्थान, विन्ध्यप्रदेश के लिए सुभिक्षदायक और बगाल, आसाम तथा बिहार के लिए साधारण सुभिक्षदायक होता ह। शुक्र का मध्य रात्रि मे अस्त होना तथा आश्लेषा विद्ध मघा नक्षत्र मे उदय होना अत्यन्त अशुभकारक माना गया है।

मेष मे शनि अस्त हो तो धान्य भाव तेज, वर्षा साधारण, जनता मे असन्तोष और आपसी झगडे होते हैं। वृष राशि मे शनि अस्त हो तो पशुओ को कष्ट, देश के पशुधन का विनाश और मनुष्यो मे सक्रामक रोग उत्पन्न होते है। मिथुन राशि मे शनि अस्त हो तो जनता को कष्ट, आपसी द्वेष और अशान्ति होती है। कर्क राशि मे शनि अस्त हो तो कपास, सूत, गुड, चाँदी, घी अत्यन्त महँगे होते है। कन्या राशि मे शनि के अस्त होने से अच्छी वर्षा, तुला राशि मे शनि अस्त हो तो अच्छी वर्षा, वृश्चिक राशि मे शनि अस्त हो तो उत्तम फसल, धनु राशि मे शनि के अस्त होने से स्त्री-बच्चो को कष्ट, उत्तम वर्षा और उत्तम फसल, मकर राशि मे शनि के अस्त होने से सुख, प्रचण्ड पवन, अच्छी फसल, राजनीतिक स्थिति मे परिवर्तन और पशु-धन की वृद्धि, कुम्भ राशि मे शनि के अस्त होने से शीत-प्रकोप और पशुओ की हानि एव मीन राशि मे शनि के अस्त होने से अधर्म का प्रचार होता है। सन्ध्याकाल मे भरणी नक्षत्र पर शनि का अस्त होना अत्यन्त अशुभ सूचक माना गया है।

मेष मे गुरु अस्त हो तो थोडी वर्षा, बिहार, बंगाल और आसाम मे सुभिक्ष, राजस्थान और पजाब मे दुष्काल, वृप मे अस्त हो तो दुर्भिक्ष, दक्षिण भारत मे अच्छी फसल और उत्तर भारत मे खण्डवृष्टि, मिथुन मे अस्त हो तो घृत, तैल, लवण आदि पदार्थ महँगे महामारी का प्रकोप, कर्क मे अस्त हो तो सुभिक्ष, कुशल, कल्याण और समृद्धि, सिंह मे अस्त हो तो युद्ध, सघर्ष, राजनीतिक उलट-फेर और धन का नाश, कन्या मे अस्त हो तो क्षेम, सुभिक्ष, आरोग्य और उत्तम फसल; तुला मे अस्त हो तो पीडा, द्विजो को विशेष कष्ट, धान्य महँगा, वृश्चिक मे अस्त हो तो धनहानि और शस्त्रभय, धनु राशि मे अस्त हो तो भय, आतक, नाना प्रकार के रोग और साधारण फसल, मकर मे अस्त हो तो उडद, तिल, मूँग आदि धान्य महँगे, कुम्भ मे अस्त हो तो प्रजा को कष्ट एव मीन राशि मे गुरु अस्त हो तो सुभिक्ष, अच्छी वर्षा, धान्य भाव सस्ता और अनेक प्रकार की समृद्धि होती है। गुरु का क्रूर ग्रहो के साथ अस्त या उदय होना अशुभ है। शुभ ग्रहो के साथ अस्त या उदय होने से शुभ-फल प्राप्त होता है।

बुध का क्रूर नक्षत्रो मे अस्त होना तथा क्रूर ग्रहो के साथ अस्त होना अशुभ कहा गया है। मगल का शनि क्षेत्र की राशियो मे अस्त होना अशुभसूचक है। जब मगल अपनी राशि के दीप्तांश मे अस्त या उदय को प्राप्त करता है तो शुभ-फल प्राप्त होता है।

ग्रहो के अस्तोदय के समय समान मार्गी और वक्री का भी विचार करना चाहिए। इस निमित्तज्ञान मे समस्त ग्रहो के चार प्रकरण गर्भित है। ग्रहो की विभिन्न जातियो के अनुसार शुभाशुभ फल का निरूपण भी इसी निमित्तज्ञान के अन्तर्गत किया गया है। शनि का क्रूर नक्षत्र पर वक्री होना और मृदुल नक्षत्र पर उदय हो जाना अशुभ है। कोई भी ग्रह अपनी स्वाभाविक गति से चलते समय यकायक वक्री हो जाय तो अशुभ फल होता है।

लक्षणनिमित्त—स्वस्तिक, कलश, शख, चक्र आदि चिह्नो के द्वारा एव हस्त, मस्तक और पदतल की रेखाओ द्वारा शुभाशुभ का निरूपण करना लक्षण-निमित्त है। करलक्षण मे बताया गया है कि मनुष्य लाभ-हानि, सुख-दु:ख, जीवन-मरण, जय-पराजय एव स्वास्थ्य-अस्वास्थ्य रेखाओ के बल से प्राप्त करता है। पुरुषो के लक्षण दाहिने हाथ से और स्त्रियो के बायें हाथ की रेखाओ से अवगत करने चाहिए। यदि प्रदेशिनी और मध्यमा अगुलियो का अन्तर सघन हो—वे एक-दूसरे से मिली हो और मिलने से उनके बीच मे कोई अन्तर न रहे, तो बचपन मे सुख होता है। यदि मध्यमा और अनामिका के बीच सघन अन्तर हो तो जवानी मे सुख होता है। लम्बी अँगुलियाँ दीर्घजीवियो की, सीधी अँगुलियाँ सुन्दरो की, पतली बुद्धिमानो की और चपटी दूसरो की सेवा करने वालो की होती है। मोटी अँगुलियो वाले निर्धन और बाहर की ओर झुकी अँगुलियो वाले आत्मघाती होते

हैं। कनिष्ठा और अनामिका मे सघन अन्तर हो तो बुढापे मे सुख प्राप्त होता है। सभी अँगुलियाँ जिसकी सघन होती हैं वह धन-धान्य युक्त, सुखी और कर्त्तव्य-शील होता है। जिनकी अँगुलियो के पर्व लम्बे होते है, वे सौभाग्यवान् और दीर्घ-जीवी होते हैं।

स्पर्श करने मे उष्ण, अरुणवर्ण, पसीनारहित, सघन (छिद्र रहित) अँगुलियो वाला, चिकना, चमकदार, मासल, छोटा, लम्बी अंगुलियो वाला, चौडा एव ताम्र नखवाला हाथ प्रशसनीय माना गया है। इस प्रकार के हाथ वाला व्यक्ति जीवन मे धनी, सुखी, ज्ञानी और नाना प्रकार के सम्मानो से युक्त होता है। जिनके हाथ की आकृति बन्दर के हाथ की आकृति के समान कोमल, लम्बी, पतली, नुकीली हथेली वाली होती है वे धनिक होते है। व्याघ्र के पजे की आकृति के समान हाथ वाले मनुष्य पापी होते है। जिसके हाथ कुछ भी काम नही करते हुए भी कठोर प्रतीत हो और जिसके पाँव बहुत चलने-फिरने पर भी कोमल दीख पडे, वह मनुष्य सुखी होता है तथा जीवन मे सर्वदा सुख का अनुभव करता है।

हाथ तीन प्रकार के बताये है—नुकीला, समकोण अर्थात् चौकोर और गोल-पतली चपटी अंगुलियो के अग्र की आकृति वाला। जो देखने मे नुकीला—लम्बी-लम्बी नुकीली अँगुलियाँ, करतल भाग उन्नत, मासलयुक्त, ताम्रवर्ण का हो, वह व्यक्ति के धनी, सुखी और ज्ञानी होने की सूचना देता है। नुकीला हाथ उत्तम मनुष्यो का होता है। यह सत्य है कि हस्तरेखा के विचार के पहले हाथ की आकृति का विचार अवश्य करना चाहिए। सबसे पहले हाथ की आकृति का विचार कर लेना आवश्यक है। समकोण हाथ की अंगुलियाँ साधारण लम्बी होती है। कर-तलस्थ रेखाएँ पीले रग की चौडी दीख पडती है। अँगुलियो के अग्रभाग चौडे-चौकोर होते है। अँगुलियाँ लम्बी करके एक-दूसरी मे मिलाकर देखने से उनके बीच की सन्धि मे प्रकाश दीख पडता है। अँगुलियों के नीचे के उच्चप्रदेश साधारण ऊँचे उठे हुए और देखने मे स्पष्ट दीख पडते है। हाथ का स्पर्श करने से हाथ कठिन प्रतीत होता है। अंगुलियाँ मोटी होती है, हाथ का रग पीला दिखलाई पडता है। उत्तम रेखाएं उठी हुई रहती है। इस प्रकार के लक्षणो से युक्त हाथ वाला व्यक्ति परिश्रमी, दृढ अध्यवसायी, कर्मठ, निष्कपट, लोकप्रिय, परोपकारी, तर्कणाप्रधान, और शोधकार्य मे भाग लेने वाला होता है। यह हाथ मध्यम दर्जे का माना जाता है। इस प्रकार के हाथ वाला व्यक्ति बहुत बडा धनिक नही हो सकता है।

गोल, पतले और चपटे ढंग का हाथ निकृष्ट माना जाता हे। इस प्रकार के हाथ मे करतल का मध्य भाग गहरा, रेखाएं चौडी और फैली हुई अँगुलियाँ छोटी या टेढ़ी, अँगूठा छोटा होता है। जिस हाथ की अंगुलियाँ मोटी, हथेली का रग काला और अल्प रेखाएँ हो, वह हाथ साधारण कोटि का होता है। इस

प्रकार के हाथ वाले व्यक्ति परिश्रमी, अल्प सन्तोषी, मन्दबुद्धि और विशेष भोजन करने वाले होते है। जिस हाथ मे टेढी-मेढी रेखाएँ रहती है, देखने मे बदसूरत होता है और अँगुलियाँ भद्दी होती है, वह हाथ अशुभ माना जाता है। इस हाथ वाला व्यक्ति सर्वदा जीवन मे कष्ट उठाता है।

जिस व्यक्ति के हाथ का पिछला भाग मासल, पुष्ट, कछुए की पीठ के समान उन्नत, नसो से रहित और रोम रहित होता है, वह व्यक्ति ससार मे पर्याप्त यश, विद्या, धन और भोग को प्राप्त करता है। रूक्ष, सिकुडा, कडा पृष्ठ भाग अशुभ समझा जाता है। जिस पृष्ठ भाग की नसे दिखलाई दे, केश हो वह जीवन मे कष्टो की सूचना देता है। हाथ के पृष्ठ भाग मे छ बातें विचारणीय मानी गयी हैं— उन्नत होना, अवनत होना, नसो का दिखलाई पडना, नसो का नही दिखलाई पडना, विस्तीर्ण होना और सकुचित या सकीर्ण होना।

हथेली का विचार करते समय कहा गया है कि जिसकी हथेली स्निग्ध, उन्नत, मासल हो, उभरी हुई नसो से युक्त न हो, वह शुभ मानी जाती है। इस प्रकार की हथेली वाला व्यक्ति जीवन मे नाना प्रकार की उन्नतियो को प्राप्त करता है। जिनके हाथ का या पाव का तलवा मृदु होता है, वे लोग स्थिर कार्य करने वाले होत है। कमल के गर्भ के समान सुन्दर वर्ण और अत्यन्त सुकोमल दोनो हाथो का होना उत्तम माना गया है। इस प्रकार के हाथ वाला मनुष्य कठोर से कठोर कार्य करने मे समर्थ होता है। जिस मनुष्य के हाथ मे प्राकृतिक रूप से विकृति मालूम पडे तो वह व्यक्ति अपने पदो का अभ्युदय करता है। ऐसे लोगो को वाहन सौख्य भी मिलता है। जिसकी हथेली पीतवर्ण की हो, वह आगमाभ्यासी, श्वेतवर्ण की हथेली वाला दरिद्री तथा काले और नीले वर्ण की हथेली वाला व्यक्ति दुराचारी होता है। जिस व्यक्ति की हथेली सिकुडी, पतली और सल पडी हुई हो तो वह व्यक्ति मानसिक दुर्बलता वाला, डरपोक, बुद्धिहीन, अन्यायाचरण करने वाला और चचल स्वभाव वाला होता है। बडा और लम्बा करतल भाग महत्त्वाकाक्षी, असफल और नीरस व्यक्ति का होता है। दृढ करतल भाग हो तो चचल तथा योग्य प्रकृति वाला होता है। हथेली का गहरा होना असफलताओ का सूचक है।

जिसके नखो का वर्ण तुष—भूसे के समान हो, वे पुरुषार्थहीन, विवर्णनख वाले परमुखापेक्षी, चपटे और फटे नखवाले धनहीन, नीले रग के नख वाले पाप कार्य मे प्रवृत्त, दुराचारी, जिसके नख शिथिल हो वे दरिद्री होते है। छोटी अँगुलियो वाले मनुष्य चालाक, साहसी, सकुचित स्वभाव के और मनमाने कार्य करने वाले होते है। इस प्रकार के व्यक्ति कवि, लेखक और प्रशासक भी होते है। लम्बी अँगुलियो वाले मनुष्य दीर्घसूत्री, प्रमादी और अस्थिर विचार के होते है। लम्बी अँगुलियाँ यदि नुकीली हो तो व्यक्ति महत्त्वाकाँक्षी, परिश्रमी, यशस्वी

और धनी होता है। लट्ठ के समान पुष्ट अँगुलियो वाले व्यक्ति ऐश-आराम भोगने वाले, दृढ परिश्रमी, मिलनसार और सुख प्राप्त करने की चेष्टा करने वाले होते है। लचीली अँगुलियो वाले समझदार, अधिक खर्च करने वाले, ऋण-ग्रस्त और सम्मान प्राप्त करने वाले होते है।

जिसका अंगूठा हथेली की ओर झुका हुआ हो, अन्य अँगुलियाँ पशु के पंजे के समान हो, हथेली सकुचित और चपटी हो ऐसा मनुष्य अधिक तृष्णा वाला होता है। जिसका अँगूठा पीछे की ओर झुका हुआ हो, वह व्यक्ति कार्यकुशल होता है। अँगूठे को इच्छाशक्ति, निग्रहशक्ति, कीत्ति, सुख और समृद्धि का द्योतक माना गया है। अँगूठे के निमित्त द्वारा जीवन के भावी शुभाशुभ का विचार किया जाता है।

हस्तरेखाओ का विचार करते हुए कहा गया है कि आयु या भोगरेखा, मातृरेखा, पितृरेखा, ऊर्ध्वरेखा, मणिबन्धरेखा, शुक्रबन्धिनीरेखा आदि रेखाएँ प्रधान है। जो रेखा कनिष्ठा अँगुली से आरम्भ कर तर्जनी के मूलाभिमुख गमन करती है, उसका नाम आयुरेखा है। कुछ आचार्य इसे भोगरेखा भी कहते है। आयुरेखा यदि छिन्न-भिन्न न हो, तो वह व्यक्ति 120 वर्ष तक जीवित रहता है। यदि यह रेखा कनिष्ठा अँगुली के मूल से अनामिका के मूल तक विस्तृत हो तो 50-60 वर्ष की आयु होती है। इस आयुरेखा को जितनी क्षुद्र रेखाएँ छिन्न-भिन्न करती हैं, उतनी ही आयु कम हो जाती है। इस रेखा के छोटी और मोटी होने पर भी व्यक्ति अल्पायु होता है। इस रेखा के शृ खलाकार होने से व्यक्ति लम्पट और उत्साह-हीन होता है। यह रेखा जब छोटी-छोटी रेखाओ से कटी हुई हो, तो व्यक्ति प्रेम मे असफल रहता है। इस रेखा के मूल मे बुध स्थान म शाखा न रहने से सन्तान नही होती। शनि स्थान के निम्न देश मे मातृरेखा के साथ इस रेखा के मिल जाने पर हठात् मृत्यु होती है। यदि यह रेखा शृ खलाकार होकर शनि के स्थान मे जाय तो व्यक्ति स्त्री-प्रेमी होता है।

आयु रेखा की बगल मे जो दूसरी रेखा तर्जनी के निम्न देश मे गई है, उसका नाम मातृरेखा है। यदि रेखा शनि स्थान या शनि स्थान के नीचे तक लम्बी हो तो अकाल मृत्यु होती है। जिस व्यक्ति की मातृ और पितृ रेखा मिलती नही, वह विशेष विचार नही करता और कार्य मे शीघ्र ही प्रवृत्त हो जाता है। इस प्रकार की रेखा वाला व्यक्ति आत्माभिमानी, अभिनेता और व्याख्यान झाडने मे पटु होता है। दो मातृरेखा रहने से सौभाग्यशाली, सत्परामर्शदाता और धनिक होता है तथा इस प्रकार के व्यक्ति को पैतृक सम्पत्ति भी प्राप्त होती है। यदि यह रेखा टूट जाय तो मस्तक मे चोट लगती है तथा व्यक्ति अगहीन होता है। यह रेखा लम्बी हो और हाथ मे अन्य बहुत-सी रेखाएँ हो तो यह व्यक्ति विपत्ति काल मे आत्मदमन करने वाला होता है। इस रेखा के मूल मे कुछ अन्तर पर यदि

पितृरेखा हो तो वह मनुष्य परमुखापेक्षी और डरपोक होता है। मातृरेखा हाथ मे सरल भाव से न जाकर बुध के स्थानाभिमुखी हो तो वाणिज्य व्यवसाय मे लाभ होता है। यदि यह रेखा कनिष्ठा और अनामिका के बीच की ओर आये तो शिल्प द्वारा उन्नति लाभ होता है। यह रेखा रवि के स्थान मे जाय, तो शिल्प-विद्यानुरागी और यश प्रिय व्यक्ति होता है। यह रेखा भाग्यरेखा को छेदकर शनि स्थान मे जाय तो मस्तक मे चोट लगने से मृत्यु होती है। आयु रेखा के समीप इसके होने से श्वास रोग होता है। इस रेखा मे सादे बिन्दु होने से व्यक्ति वैज्ञानिक आविष्कर्ता होता है। मातृरेखा के ऊपर यवचिह्न होने से व्यक्ति वायुरोग ग्रस्त होता है। मातृ और पितृ दोनो रेखाओ के अत्यन्त छोटे होने से शीघ्र मृत्यु होती है।

जो रेखा करतल मूल के मध्यस्थल से उठकर साधारणत मातृरेखा का ऊर्ध्व-देश स्पर्श करती है, अथवा उसके निकट पहुँचती है, उसका नाम पितृरेखा है। कुछ लोग इसे आयुरेखा भी कहते है। यह रेखा चौडी और विवर्ण हो, तो मनुष्य रुग्ण, नीच स्वभाव, दुर्बल और ईर्ष्यान्वित होता है। दोनो हाथ मे पितृरेखा के छोटी होने से व्यक्ति अल्पायु होता है। पितृरेखा के शृ खलाकृति होने से व्यक्ति रुग्ण और दुर्बल होता है। दो पितृरेखा होने से व्यक्ति दीर्घायु, विलासी, सुखी और किसी स्त्री के धन का उत्तराधिकारी होता है। यह रेखा शाखा विशिष्ट हो तो नसे कमजोर होती है। पितृरेखा से कोई शाखा चन्द्र के स्थान मे जाने से मूर्खतावश अपव्यय कर व्यक्ति कष्ट मे पडता है। यह रेखा टेढी होकर चन्द्र स्थान मे जाये, तो दीर्घजीवी और इस रेखा की कोई शाखा बुध के क्षेत्र मे प्रविष्ट हो तो व्यवसाय मे उन्नति एव शास्त्रानुशीलन मे सुख्यातिलाभ होता है। पितृरेखा मे दो रेखाएँ निकलकर एक चन्द्र और दूसरी शुक्र के स्थान मे जाये, तो वह मनुष्य स्वदेश का त्याग कर विदेश जाता है। चन्द्रस्थान से कोई रेखा आकर पितृरेखा को काटे, तो वह वातरोगी होता है। जिस व्यक्ति के दोनो हाथो मे मातृ, पितृ और आयु रेखाएँ मिल गई हो, वह व्यक्ति अकस्मात् दुरवस्था को प्राप्त करता है और उसकी मृत्यु भी किसी दुर्घटना से होती है। पितृरेखा बद्धागुलि के निकट जाये तो व्यक्ति को सन्तान नही होती। पितृरेखा मे छोटी-छोटी रेखाएँ आकर चतुष्कोण उत्पन्न करे तो स्वजनो से विरोध होता है तथा जीवन मे अनेक स्थानो पर असफलताएँ मिलती हैं।

जो सीधी रेखा पितृरेखा के मूल के समीप आरम्भ होकर मध्यमागुलि की ओर गमन करती है, उसे ऊर्ध्वरेखा कहते हैं। जिसकी ऊर्ध्वरेखा पितृरेखा मे उठे, वह अपनी चेष्टा से सुख और सौभाग्य लाभ करता है। ऊर्ध्वरेखा हस्ततल के बीच से उठकर बुधस्थान तक जाय तो वाणिज्य व्यवसाय मे, वक्तृता मे या विज्ञान-शास्त्र मे उन्नति होती है। यह रेखा मणिबन्ध का भेदन करे तो दु ख और शोक

उपस्थित होता है। इस रेखा के हाथ के बीच से निकलकर रवि के स्थान मे जाने से साहित्य और शिल्प विद्या मे उन्नति होती है। यह रेखा मध्यमा अंगुली से जितनी ऊपर उठेगी, उतना ही शुभ फल होगा। ऊर्ध्वरेखा जिस स्थान मे टेढी होकर जायगी, उस व्यक्ति को उसी उम्र मे कष्ट होगा। इस रेखा के भग्न या छिन्न-भिन्न होने से नाना प्रकार की घटनाएं घटित होती है। इस रेखा के सरल और सुन्दर होने से व्यक्ति सुखी और दीर्घजीवी जीवन व्यतीत करता है। शुक्र स्थान से कई एक छोटी रेखा निकलकर पितृरेखा और ऊर्ध्वरेखा के काटने से स्त्री वियोग होता है।

जिसके हाथ मे ऊर्ध्व रेखा न रहे, वह व्यक्ति दुर्भाग्यशाली, उद्यम रहित और शिथिलाचारी होता है। इस रेखा के अस्पष्ट होने से उद्यम व्यर्थ होता है। इस रेखा के स्पष्ट और सरल भाव से शनि के स्थान मे जाने से व्यक्ति दीर्घजीवी होता है। स्त्रियो के करतल मे और पादतल मे ऊर्ध्वरेखा होने से वे चिर-सधवा सौभाग्यवती और पुत्र-पौत्रवती होती है। जिस व्यक्ति के हाथ मे यह रेखा होती है। वह ऐश्वर्यशाली और सुखी होता है। जिसकी तर्जनी से लेकर मूल तक ऊर्ध्व-रेखा स्पष्ट हो, वह राजदूत होता है। मध्यमा अंगुली के मूल तक जिसकी ऊर्ध्व रेखा दिखाई दे, वह सुखी, विभवशाली और पुत्र-पौत्रादि समन्वित होता है।

जिस व्यक्ति के मणिबन्ध मे तीन सुस्पष्ट सरल रेखाएं हो वह दीर्घजीवी, सुस्थ शरीरी और सौभाग्यशाली होता है। रेखात्रय जितनी ही साफ और स्वच्छ होगी, स्वास्थ्य उतना ही उत्तम होगा। मणिबन्ध रेखात्रय के बीच मे क्रुश चिह्न रहने से व्यक्ति कठिन परिश्रमी और सौभाग्यशाली होता है। मणिबन्ध मे यदि एक तारिका चिह्न हो तो उत्तराधिकारी के रूप मे धन लाभ होता है, किन्तु यदि चिह्न अस्पष्ट हो तो व्यक्ति परदाराभिलाषी होता है। मणिबन्ध से चन्द्रस्थान के ऊपर की ओर जाने वाली रेखा हो तो समुद्र-यात्रा का योग अधिक होता है। मणिबन्ध से कोई रेखा गुरुस्थान की ओर जाय तो धन-लाभ होता है। इस रेखा के सरल होने से आयुवृद्धि होती है। पर यह रेखा इस बात की भी सूचना देती है कि व्यक्ति की मृत्यु जल में डूबने से न हो जाय। करलक्खण मे मणिबन्ध रेखा के सम्बन्ध मे बताया गया है कि जिसके मणिबन्ध-कलाई पर तीन रेखाएँ हो, उमे धान्य, सुवर्ण और रत्नो की प्राप्ति होती है। उसे नाना प्रकार के आभूषणो का उपभोग करने का अवसर प्राप्त होता है। जिस व्यक्ति की मणिबन्ध रेखाएँ मधु के समान पिंगल लालवर्ण की हो, तो वह पुरुष सुखी होता है। जिनका मणिबन्ध गठा हुआ और दृढ हो वे राजा होते हैं, ढीला होने से हाथ काटा जाता है। जिसके मणिबन्ध मे जवमाला की तीन धाराएँ हो वह व्यक्ति एम० एल० ए० या मिनिस्टर होता है। प्रशासक के कार्यों मे उसे पर्याप्त सफलता प्राप्त होती है। जिसके मणि-बन्ध मे यवमाला की दो धाराएँ प्राप्त होती है, वह व्यक्ति अत्यन्त धर्मात्मा, चतुर

कार्यपटु और सुखी होता है । जज या मजिस्ट्रेट का पद उसे मिलता है । जिसके मणिबन्ध मे यवमाला की एक ही धारा दिखाई पडे वह पुरुष धनी होता है । सभी लोग उसकी प्रशसा करते है । जिस व्यक्ति के हाथ की तीनो मणिबन्ध रेखाएँ स्पष्ट और सरल हो, वह व्यक्ति जगन्मान्य, पूज्य और प्रतिष्ठित होता है ।

तर्जनी और मध्यमागुली के बीच से निकलकर अनामिका और कनिष्ठा के मध्यस्थल तक जाने वाली रेखा शुक्रबन्धिनी कहलाती है । इस रेखा के भग्न या बहुशाखा विशिष्ट होने पर मूर्च्छा रोग होता है । इस रेखा के स्थान-स्थान मे भग्न होने से मनुष्य लम्पट होता है । शुक्रबन्धिनी रेखा के होने मे मनुष्य कभी विषाद मे मग्न रहता है और कभी आनन्द मे । इस रेखा के बृहस्पति स्थान से अर्द्ध-चन्द्राकार हो सीधी तरह से बुध के स्थान तक जाने से व्यक्ति ऐन्द्रजालिक होता है और साहित्यिक भी होता है ।

रेखाओ के रक्तवर्ण होने मे मनुष्य आमोदप्रिय, उग्रस्वभाव, रक्तवर्ण मे कुछ कालिमा हो अर्थात् रक्तवर्ण रक्ताभ हो तो प्रतिहिंसापरायण, शठ, क्रोधी होता है । जिसकी रेखा पीली होती है, वह उच्चाभिलाषी, प्रतिहिंसापरायण तथा कर्मठ होता है । पाण्डुवर्ण की रेखाएँ होने से स्त्री स्वभाव का व्यक्ति होता है ।

ग्रहो के स्थानो का वर्णन करते हुए बतलाया गया है कि तर्जनी मूल मे गुरु का स्थान, मध्यमा अँगुली के मूल मे शनि का स्थान, अनामिका के मूल देश मे रवि स्थान, कनिष्ठा के मूल मे बुध स्थान तथा अँगूठे के मूल देश मे शुक्र स्थान है। मगल के दो स्थान हैं—एक तर्जनी और अँगूठे के बीच मे पितृरेखा के समाप्ति स्थान के नीचे और दूसरा बुध स्थान के नीचे और चन्द्रस्थान के ऊपर ऊर्ध्व रेखा और मातृ रेखा के नीचे वाले स्थान मे । मगल स्थान के नीचे से मणिबन्ध के ऊपर तक करतल के पार्श्व भाग के स्थान को चन्द्रस्थान कहते हैं ।

सूर्य के स्थान के ऊँचा होने से व्यक्ति चचल होता है, सगीत तथा अन्यान्य कलाविशारद और नये विषयो का आविष्कारक होता है। रवि और बुध का स्थान उच्च होने से व्यक्ति विज्ञ, शास्त्र विशारद और सुवक्ता होता है । अत्युच्च होने मे वह अपव्ययी, विलासी, अर्थलोभी और तार्किक होता है । रवि का स्थान ऊँचा होने से व्यक्ति मध्यमाकृति, लम्बे केश, बडे-बडे नेत्र, किञ्चित् लम्बा मुख-मण्डल, सुन्दर शरीर और अंगुलियाँ लम्बी होती है । रवि के स्थान मे कोई रेखा न होने पर व्यक्ति को नाना दुर्घटनाओ का सामना करना पडता है । जिसके हाथ का उच्च सूर्य क्षेत्र बुध क्षेत्र की ओर झुक रहा हो, तो उसका स्वभाव नम्र होता है । व्यापार मे उन्नति करने वाला, अर्थशास्त्र का अपूर्व विद्वान् एव कलाप्रिय होता है । जिसके हाथ का उच्च सूर्यक्षेत्र शनिक्षेत्र की ओर झुका हुआ हो, वह धनाढ्य और अनेक प्रकार के भोग-विलासो मे रत रहता है । सूर्यक्षेत्र यदि गुरुक्षेत्र की ओर झुका हुआ हो तो व्यक्ति दयालु, गुणी, न्यायप्रिय, सत्यवादी,

परोपकारी, गुरुजनों का भक्त, सुन्दर आकृति वाला, बुद्धिमान्, मधुरभाषी, कला-कौशल मे अभिरुचि रखने वाला, धार्मिक और सन्तान वाला होता है। मगल क्षेत्र की ओर झुके रहने से व्यक्ति सदाचारी, ज्ञानी, साहित्यकार, शिल्पकला विशारद, वैज्ञानिक और कुशल डॉक्टर होता है।

चन्द्रस्थान उच्च होने से मनुष्य सगीतप्रिय, भगवद्भक्त, विषण्ण और चिन्ता-युक्त होता है। इस प्रकार का व्यक्ति प्राय ससार से विरक्त होता है और सन्यासी का जीवन व्यतीत करता है।

पितृरेखा के सन्निकटस्थ मगल का स्थान उच्च हो तो वह व्यक्ति असीम साहसी, विवादप्रिय और विशिष्ट बुद्धिमान् होता है। हस्त पार्श्वस्थ मगल स्थान उच्च होने से वह व्यक्ति अन्याय कार्य मे प्रवृत्त नही होता तथा धीर, नम्र, धार्मिक साहसी और दृढप्रतिज्ञ होता है। दोनो स्थान समान उच्च होने से वह व्यक्ति उग्र स्वभाव सम्पन्न, कामातुर, निष्ठुर और अत्याचारी होता है। मगलस्थान के नीचे होने से व्यक्ति भीरु, मन्दबुद्धि और पुरुषार्थहीन होता है। मगल का स्थान कठिन होने से स्थावर सम्पत्ति की वृद्धि होती है। मगल उच्च का सर्वांग सुन्दर रूप मे हो तो व्यक्ति मिल या अन्य बडे-बडे उद्योग धन्धो को करता है। मगल मनुष्य की कार्य-क्षमता की सूचना देता है।

बुध का स्थान उच्च होने से शास्त्रज्ञान मे परायण, भाषण मे पटु, साहसी, परिश्रमी, पर्यटनशील और कम अवस्था मे ही विवाह करने वाला होता है। बुध जिसका उच्च का हो और साथ ही चन्द्रमा भी उच्च का हो तो व्यक्ति लेखक, कवि या साहित्यकार बनता है। सफल नेता भी इस प्रकार की रेखा वाला व्यक्ति होता है। कन्या सन्तान इस प्रकार के व्यक्ति को अधिक उत्पन्न होती है। कुछ आचार्यों का अभिमत है कि जिसके हाथ मे बुध उच्च का हो, वह व्यक्ति डॉक्टर या अन्य प्रकार का वैज्ञानिक होता है। ऐसे व्यक्तियो को नयी-नयी वस्तुओं के गुण-दोष आविष्कार मे अधिक सफलता मिलती है। बुध का पर्वत नीचे की ओर झुका हो और मगल का पर्वत उन्नत हो तो व्यक्ति नेता होता है।

गुरु का स्थान अत्युच्च होने मे व्यक्ति अधार्मिक और अहकारी होता है। इस व्यक्ति मे शासन करने की अपूर्व क्षमता होती है। न्याय और व्याकरण शास्त्र का ज्ञाता उच्च स्थानीय व्यक्ति होता है। गुरु के पर्वत के निम्न होने से व्यक्ति दुराचारी, दु खी और लम्पट होता है।

शुक्र का स्थान अत्युच्च होने से व्यक्ति लम्पट, लज्जाहीन और व्यभिचारी होता है। उच्च होने से सौन्दर्यप्रिय, नृत्यगीतानुरक्त, कलाविज्ञ, धनी और शिल्प-विद्या मे पटु होता है। शुक्र के स्थान के निम्न होने से व्यक्ति स्वार्थी, आलसी और रिपुदमनकारी होता है। एक मोटी रेखा शुक्र के स्थान से निकलकर पितृरेखा के ऊपर होती हुई मगल स्थान मे जाये तो व्यक्ति को दमा और खाँसी का रोग होता

है। शुक्रस्थान से शनिस्थान तक यदि रेखा जाय तथा यह रेखा शृंखलायुक्त हो तो व्यक्ति का विवाह बडी कठिनाई से होगा। शुक्र और गुरु दोनों के स्थानो के उन्नत होने से ससार मे प्रसिद्धि प्राप्त करता है।

शनि के स्थान के उच्च होने से व्यक्ति अल्पभाषी, कलाप्रिय, एकान्तप्रिय, विचारक, दार्शनिक और भाग्यशाली होता है। शनि स्थान के नीचे होने से व्यक्ति भावुक, कमजोर और दुर्भाग्यशाली होता है। शनि और बुध दोनो स्थानो के उच्च होने से व्यक्ति क्रोधी, चोर और अधार्मिक होता है।

इस निमित्त मे योगो का विचार करते हुए बताया गया है कि जिस पुरुष की नाभि गहरी हो, नासिका का अग्र भाग सीधा हो, वक्ष स्थल रक्त वर्ण और पैर के तलवे कोमल तथा रक्तवर्ण के हो, वह सम्राट के तुल्य प्रभावशाली होता है। ऐसा व्यक्ति अनेक प्रकार के सुख भोगता है तथा मन्त्री, नेता या किसी सस्था का निर्देशक होता है। जिसकी हथेली के मध्य कडा, अश्व, मृदग, वृक्ष, स्तम्भ या दण्ड का चिह्न हो तो वह व्यक्ति समृद्धिशाली, धनी, सुखी और अद्भुत प्रभावशाली होता है। जिसका ललाट चौडा और विशाल, नेत्र कमलदल के समान, मस्तक गोल, और भुजाएँ जानुपर्यन्त हो, वह व्यक्ति नेता, राजमान्य, पूज्य, शक्तिशाली और सुखीहोता है। जिसके हाथ मे फूल की माला, घोडा, कमलपुष्प, धनुष, चक्र, ध्वजा, रथ और आसन का चिह्न हो वह जीवन मे सदा आनन्द भोगता है, उसके घर मे लक्ष्मी का निवास सदा रहता है।

जिसके हाथ की सूर्य रेखा, मस्तक रेखा से मिली हो और मस्तक रेखा से स्पष्ट, सीधी होकर ऊपर गुरु की ओर झुकने से वहाँ चतुष्कोण बन जाय वह प्रधान मन्त्री या मुख्य नेता होता है। जिसके हाथ के सूर्य गुरु पर्वत उच्च हो और शनि एव बुध रेखा पुष्ट, स्पष्ट और सीधी हो वह राज्यपाल या गवर्नर होता है। जिसके हाथ के शनि पर्वत पर त्रिशूल चिह्न हो, चन्द्ररेखा का भाग्यरेखा से शुद्ध सम्बन्ध हो या भाग्यरेखा हथेली के मध्य से प्रारम्भ होकर उसकी एक शाखा गुरु-पर्वत पर और दूसरी सूर्य पर्वत पर जाय वह उच्च राज्याधिकारी और गुण ग्राही होता है। जिसके हाथ के गुरु और मगल पर्वत उच्च हो तथा मस्तक रेखा मे सर्प का चिह्न हो या बुधागुली नुकीली और लम्बी हो एव नख चमकदार हो, वह राजदूत बनता है। जिसके बायें हाथ की तर्जनी और कनिष्ठिका की अपेक्षा दाहिने हाथ की वे ही अँगुलियाँ मोटी और बडी हो, मगल पर्वत अधिक ऊँचा उठा हो और सूर्य रेखा प्रबल हो वह जिलाधीश या कमिश्नर होता है। जिसके हाथ के गुरु, शनि, सूर्य और बुध पर्वत उच्च हों, अँगुलियाँ लम्बी होकर उनके ऊपरी भाग मोटे हो, सूर्यरेखा प्रबल हो और मध्यमागुली का दूसरा पर्व लम्बा हो, वह शिक्षा विभाग का उच्च पदाधिकारी होता है।

जिसके हाथ की हृदय रेखा और मस्तक रेखा के बीच एक चौडा चतुष्कोण

हो, मस्तक रेखा सीधी और स्वच्छ हो, बुधागुली का प्रथम पर्व लम्बा हो, गुरु की अंगुली सीधी हो तथा सूर्य पर्वत उठा हो वह दयालु न्यायाधीश होता है। जिसकी अगुलियाँ लम्बी और आस-पास सटी हो, अँगूठा लम्बा और सीधा हो, मस्तक रेखा सीधी और सर्पाकृति की हो तथा हथेली चपटी हो तो व्यक्ति बैरिस्टर या वकील होता है।

जिसके हाथ का गुरुपर्वत और तर्जनी लम्बी हो, चन्द्रपर्वत उच्च हो तथा बुधागुली नुकीली हो, साथ ही मस्तकरेखा लम्बी और नीचे झुकी हो तो वह व्यक्ति दर्शनशास्त्र का विद्वान् होता है। जिसके शनि और गुरुक्षेत्र उच्च हो, शनिपर्वत पर त्रिकोण चिह्न हो और सूर्यरेखा शुद्ध हो वह व्यक्ति योगी या साधु होकर पूर्ण गौरव पाता है। जिसका अँगूठा मोटा और टेढा हो, उसकी इच्छा-शक्ति प्रबल होती है। जिसके हाथ मे बडा चतुष्कोण या पुष्करणी रेखा हो, वह सब मनुष्यो मे श्रेष्ठ और सब का स्वामी होता है। हथेली के मध्य मे कलश, स्वस्तिक, मृग, गज, मत्स्य आदि के चिह्न शुभ माने जाते है।

अँगूठे के मूल मे जितनी स्थूल रेखाएँ हो उतने भाई और जितनी सूक्ष्म रेखाएँ हो उतनी बहिन होती है। अँगूठे के अधोभाग मे जिसके जितनी रेखाएँ हो, उसके उतने ही पुत्र होते है। जितनी रेखाएँ सूक्ष्म होती है उतनी ही कन्याएँ होती है। जितनी रेखाएँ छिन्न-भिन्न होती हैं, उतनी सन्ताने मृत और जितनी रेखाएँ अखण्ड और सम्पूर्ण होती हैं उतने बालक जीवित रहते है।

स्वप्न निमित्त—स्वप्न द्वारा शुभाशुभ का वर्णन करना इस निमित्तज्ञान का विषय है। दृष्ट, श्रुत, अनुभूत, प्रार्थित, कल्पित, भाविक और दोषज इन सात प्रकार के स्वप्नो में से भाविक स्वप्न का फल यथार्थ निकलता है। स्वप्न भी कर्मफल का सूचक है, आगामी शुभाशुभ कर्मफल की सूचना देता है। सूचक निमित्तो मे स्वप्न का भी महत्त्वपूर्ण स्थान है। स्वप्नो का फलादेश इस ग्रन्थ के 26 वे अध्याय में तथा परिशिष्ट रूप मे अंकित 30 वे अध्याय मे विस्तार के साथ लिखा गया है। अत यहाँ स्वप्नो का फलादेश नही लिखा जा रहा है।

निमित्तज्ञान का अगभूत प्रश्नशास्त्र—प्रश्नशास्त्र निमित्तज्ञान का एक प्रधान अग रहा है। इसमे धातु, मूल, जीव, नष्ट, मुष्टि, लाभ, हानि, रोग, मृत्यु, भोजन, शयन, जन्म, कर्म, शल्यानयन, सेना गमन, नदियो की बाढ, अवृष्टि, अतिवृष्टि, अनावृष्टि, फसल, जय-पराजय, लाभालाभ, विद्यासिद्धि, विवाह, सन्तान लाभ, यश प्राप्ति एव जीवन के विभिन्न आवश्यक प्रश्नो का उत्तर दिया गया है। जैनाचार्यों ने अष्टागनिमित्त पर अनेक ग्रन्थ लिखे है। प्रस्तुत प्रश्नशास्त्र निमित्तज्ञान का वह अग है जिसमे बिना किसी गणित क्रिया के त्रिकाल की बातें बतलायी जाती है। ज्ञानदीपिका के प्रारम्भ मे कहा है—

भूतं भव्यं वर्तमानं शुभाशुभनिरीक्षणम् ।
पंचप्रकारमार्गं च चतुष्केन्द्रबलाबलम् ॥
आरूढछत्रवर्गं चाभ्युदयादि - बलाबलम् ।
क्षेत्रं दृष्टिं नरं नारीं युग्मरूपं च वर्णकम् ॥
मृगादि नररूपाणि किरणान्योजनानि च ।
आयूरसोदयाद्यञ्च परीक्ष्य कथयेद् बुधः ॥

अर्थ—भूत, भविष्य, वर्तमान, शुभाशुभ दृष्टि, पाँच मार्ग, चार केन्द्र, बलाबल, आरूढ, छत्र, वर्ण, उदयबल, अस्तबल, क्षेत्रदृष्टि, नर, नारी, नपुसक, वर्ण, मृग तथा मनुष्यादिक के रूप, किरण, योजन, आयु, रस एव उदय आदि की परीक्षा करके फल का निरूपण करना चाहिए।

प्रश्ननिमित्त का विचार तीन प्रकार से किया गया है —प्रश्नाक्षर-सिद्धान्त, प्रश्नलग्न-सिद्धान्त और स्वरविज्ञान-सिद्धान्त । प्रश्नाक्षर-सिद्धान्त का आधार मनोविज्ञान है, यत· बाह्य और आभ्यन्तरिक दोनो प्रकार की विभिन्न परिस्थितियो के अधीन मानव-मन की भीतरी तह मे जैसी भावनाएँ छिपी रहती हैं, वैसे ही प्रश्नाक्षर निकलते है । अत प्रश्नाक्षरो के निमित्त को लेकर फलादेश का विचार किया गया है ।

प्रश्न करने वाला आते ही जिस वाक्य का उच्चारण करे, उसके अक्षरो का विश्लेषण कर प्रथम, द्वितीय, तृतीय, चतुर्थ और पंचम वर्ग के अक्षरो मे विभक्त कर लेना चाहिए । पश्चात् संयुक्त, असयुक्त, अभिहित, अनभिहित, अभिघातित, आलिंगित, अभिधूमित और दग्ध प्रश्नाक्षरो के अनुसार उनका फलादेश समझना चाहिए । प्रश्न प्रणाली के वर्गों का विवेचन करते हुए कहा है कि अ क च ट त प य श अथवा आ ए क च ट त प य श इन अक्षरो का प्रमथ वर्ग, आ ऐ ख छ ठ थ फ र ष इन अक्षरो का द्वितीय वर्ग, इ ओ ग ज ड द ब ल स इन अक्षरो का तृतीय वर्ग; ई औ घ झ ढ घ भ व ह इन अक्षरो का चतुर्थ वर्ग और उ ऊ ङ ञ ण न म अं अ इन अक्षरो का पचम वर्ग बताया गया ।

प्रथम और तृतीय वर्ग के सयुक्त अक्षर प्रश्नवाक्य मे हो तो वह प्रश्नवाक्य सयुक्त कहलाता है । प्रश्नवर्णों मे अ इ ए ओ ये स्वर हो तथा क च ट त प य श ग ज ड द ब ल स ये व्यंजन हो तो प्रश्न सयुक्त सज्ञक होता है । सयुक्त प्रश्न होने पर पृच्छक का कार्य सिद्ध होता है । यदि पृच्छक लाभ, जय, स्वास्थ्य, सुख और शान्ति के सम्बन्ध मे प्रश्न पूछने आया है तो सयुक्त प्रश्न होने पर उसके सभी कार्य सिद्ध होते हैं । यदि प्रश्न वर्णों मे कई वर्गों के अक्षर हैं अथवा प्रथम, तृतीय वर्ग के अक्षरो की बहुलता होने पर भी सयुक्त ही प्रश्न माना जाता है । जैसे पृच्छक के मुख से प्रथम वाक्य कार्य निकला, इस प्रश्नवाक्य का विश्लेषणक्रिया से क+आ+र्+य+अ यह स्वरूप हुआ । इस विश्लेषण मे क्+य्+अ ये अक्षर

प्रथम वर्ग के है तथा आ और र् द्वितीय वर्ग के हैं। यहाँ प्रथम वर्ग के तीन वर्ण और द्वितीय वर्ग के दो वर्ण हैं, अत प्रथम और द्वितीय वर्ग का सयोग होने से यह प्रश्न सयुक्त नही कहलायेगा।

यदि प्रश्नवाक्य मे सयुक्त वर्णों की अधिकता हो—प्रथम और तृतीय वर्ग के वर्ण अधिक हो अथवा प्रश्न वाक्य का आरम्भ कि चि टि ति पि यि शि को चो टो तो यो शो ग ज ड द ब ल स गे जे डे दे से अथवा क्+ग्, क्+ज्, क्+ड्, क्+द्, क्+ब्, क्+ल्, क्+स्, च्+ज्, च्+ड्, च्+द्, च्+ब्, च्+ल्, च्+स्, ट्+ग्, ट्+ज्, ट्+ड्, ट्+द्, ट्+ब्, ट्+ल्, ट्+स्, त्+ग, त्+ज्, त्+ड्, त्+द्, त्+ब्, त्+ल्, त्+स्, द्+ग्, द्+ज्, द्+ड्, द्+ब्, द+ल्, द्+स, य्+ग्, य्+ज्, य्+ड्, य्+द्, य्+ब्, य्+ल्, य्+स्, श्+ग्, श्+ज्, श्+ड्, श्+द्, श्+ब्, श्+ल्, श्+स्, ग्+क्, ग्+च्, ग्+ट्, ग्+त्, ग्+प्, ग्+य्, ग्+श्, ज्+क्, ज्+च्, ज्+ट्, ज्+प्, ज्+य्, ज्+श्, ड्+क, ड्+च्, ड्+ट्, ड्+त्, ड्+प्, ड्+य्, ड्+श्, द्+क्, द्+च्, द्+ट्, द्+प्, द्+य्, द+श्, ब्+क्, ब्+च्, ब्+ट्, ब्+त्, ब्+प्, ब्+य्, ब्+श्, ल्+क्, ल्+च्, ल्+ट्, ल्+त्, ल्+प्, ल्+य्, ल्+श्, म्+क्, म्+च्, स्+ट्, स्+त्, स्+प्, स्+य्, स्+श् से होता हो तो सयुक्त प्रश्न का फल शुभ होता है।

प्रथम और द्वितीय वर्ग, द्वितीय और चतुर्थ वर्ग, तृतीय और चतुर्थ वर्ग एव पंचम वर्ग के वर्णो के मिलने से असयुक्त प्रश्न कहलाता है। प्रथम और द्वितीय वर्गाक्षरो के सयोग मे—क ख, च छ, ट ठ, त थ, प फ, य र इत्यादि, तृतीय और चतुर्थ वर्गाक्षरो के सयोग से—ख घ, छ झ, टढ, थ ध, फ भ, और र व इत्यादि, तृतीय और चतुर्थ वर्गाक्षरो के सयोग मे—गघ, जझ, डढ, दध बभ, इत्यादि एव चतुर्थ और पचम वर्गाक्षरो के सयोग से—घड, झञ, ढण, धन, भम इत्यादि विकल्प बनते है। असयुक्त प्रश्न होने से फल की प्राप्ति बहुत दिनो के बाद होती है। यदि प्रथम और द्वितीय वर्गों के अक्षरो के मिलने से असयुक्त प्रश्न हो तो धन लाभ, कार्य सफलता और राजसम्मान अथवा जिस सम्बन्ध मे प्रश्न पूछा गया हो, उस फल की प्राप्ति तीन महीनो के पश्चात् होती है। द्वितीय, चतुर्थ वर्गाक्षरो के सयोग से असंयुक्त प्रश्न हो, तो मित्र प्राप्ति, उत्सव वृद्धि, कार्य साफल्य की प्राप्ति छ महीने मे होती है। तृतीय और चतुर्थ वर्गाक्षरो के सयोग से असयुक्त प्रश्न हो, तो अल्प लाभ, पुत्र प्राप्ति, मागल्यवृद्धि और प्रियजनो से झगडा एक महीने के अन्दर होता है। चतुर्थ और पचम वर्गाक्षरो के सयोग से असयुक्त प्रश्न हो, तो घर मे विवाह आदि मागलिक उत्सवो की वृद्धि, स्वजन प्रेम, यश प्राप्ति, महान् कार्यों मे लाभ और वैभव की वृद्धि इत्यादि फलो की प्राप्ति शीघ्र होती है।

यदि पृच्छक रास्ते मे हो, शयनागार मे हो, पालकीपर सवार हो, मोटर, साइकिल, घोडे, हाथी आदि किसी भी सवारी पर सवार हो तथा हाथ मे कुछ भी चीज न लिये हो, तो असंयुक्त प्रश्न होता है। यदि पृच्छक पश्चिम दिशा की ओर मुँह कर प्रश्न करे तथा प्रश्न करते समय कुर्सी, टेबुल, बेंच अथवा अन्य लकडी की वस्तुओ को छूता हुआ या नोचता हुआ प्रश्न करे तो उस प्रश्न को भी असंयुक्त समझना चाहिए। असयुक्त प्रश्न का फल प्राय अनिष्टकर ही होता है।

यदि प्रश्न वाक्य का आद्याक्षर गा, जा, ढा, दा, बा, ला, सा, गै, जै, बैं, डै, लैं, सैं, घि, झि, पि, धि, भि, वि, हि, को, झो, ढो, वो, हो मे से कोई हो तो असयुक्त प्रश्न होता है। इस प्रकार के असयुक्त प्रश्न का फल अशुभ होता है।

प्रश्नकर्त्ता के प्रश्नाक्षरो मे कख, खग, गघ, घङ, चछ, जझ, झञ, टठ, डढ, ढण, तथ, थद, दध, धन, पफ, फब, बभ, भम, यर, रल, लव, वश, शष, और सह इन वर्णों के क्रमश विपर्यय होने पर परस्पर मे पूर्व और उत्तरवर्ती हो जाने पर अर्थात् खक, गख, घग, ङघ, छच, झज, ञझ, ठट, डट, णढ, थत, दथ, धद, नध, फप, बफ, भब, मभ, रय, लर, वल, पश, सष, और हस होने पर अभिहित प्रश्न होता है। इस प्रकार के प्रश्नाक्षरो के होने से कार्य सिद्धि नही होती। प्रश्न वाक्य के विश्लेषण करने पर पचम वर्ग के वर्णों की सख्या अधिक हो तो भी अभिहित प्रश्न होता है। प्रश्न वाक्य का आरम्भ उपर्युक्त अक्षरो के सयोग से निष्पन्न वर्गों से हो तो अभिहित प्रश्न होता है। इस प्रकार के प्रश्न का फल भी अशुभ है।

अकार स्वर सहित और अन्य स्वरो से रहित अ क च त प य श ङ ञ ण न म ये प्रश्नाक्षर या प्रश्नवाक्य के आद्याक्षर हो तो अनभिहित प्रश्न होता है। अनभिहित प्रश्नाक्षर स्ववर्गक्षारो मे हो, तो व्याधि-पीडा और अन्य वर्गाक्षरो मे हो तो शोक, सन्ताप, दुख भय और पीडा फल होता है। जैसे किसी व्यक्ति का प्रश्न वाक्य 'चमेली' है। इस वाक्य मे आद्याक्षर मे अ स्वर और च व्यंजन का सयोग है, द्वितीय वर्ण 'मे' मे ए स्वर और म व्यजन का सयोग है तथा तृतीय वर्ण ली मे ई स्वर और ल् व्यजन का सयोग है। अत च्+अ+म्+ए+ल्+ई इस विश्लेषण मे अ + च् + म् ये तीन वर्ण अनभिहित, ई अभिधूमित, ए आलिंगित और ल अभिहत सज्ञक है। "परस्पर शोधयित्वा योऽधिक स एव प्रश्न" इस नियम के अनुसार यह प्रश्न अनभिहत हुआ, क्योकि सबसे अधिक वर्ण अनभिहत प्रश्न के है। अथवा सुविधा के लिए प्रथम वर्ण जिस प्रश्न का जिस सज्ञक हो उस प्रश्न को उसी सज्ञक मान लेना चाहिए, किन्तु वास्तविक फल जानने के लिए प्रश्न वाक्य मे सबसे अधिक प्रश्नाक्षर जिस सज्ञक प्रश्न के हो, उसे उसी संज्ञक प्रश्न समझना चाहिए।

प्रश्नश्रेणी के सभी वर्ण चतुर्थ वर्ग और प्रथम वर्ग के हो अथवा पञ्चम वर्ग और द्वितीत वर्ग के हो तो अभिघातित प्रश्न होता है। इस प्रश्न का फल अत्यन्त

अनिष्ट कर बताया गया है। यदि पृच्छक कमर, हाथ, पैर और छाती खुजलाता हुआ प्रश्न करे तो भी अभिघातित प्रश्न होता है।

प्रश्न वाक्य के प्रारम्भ मे या समस्त प्रश्नवाक्य मे अधिकाश स्वर अ इ ए ओ ये चार हो तो आलिंगित प्रश्न, आ ई ऐ औ ये चार हो तो अभिधूमित प्रश्न और उ ऊ अं अ. ये चार हो तो दग्ध प्रश्न होता है। आलिंगित प्रश्न होने पर कार्यसिद्धि, अभिधूमित होने पर धनलाभ, कार्यसिद्धि, मित्रागमन एव यशलाभ और दग्ध प्रश्न होने पर दु ख, शोक, चिन्ता, पीड़ा एव धनहानि होती है। जब पृच्छक दाहिने हाथ से दाहिने अग को खुजलाते हुए प्रश्न करे तो आलिंगित, दाहिने या बायें हाथ से समस्त शरीर को खुजलाते हुए प्रश्न करे तो अभिधूमित प्रश्न एव रोते हुए नीचे की ओर दृष्टि किये हुए प्रश्न करे तो दग्ध प्रश्न होता है। प्रश्नाक्षरो के साथ-साथ उपयुक्त चर्या-चेष्टा का भी विचार करना अत्यावश्यक है। यदि प्रश्नाक्षर आलिंगित हो और पृच्छक की चेष्टा दग्ध प्रश्न की हो ऐसी अवस्था मे फल मिश्रित कहना चाहिए। प्रश्नवाक्य या प्रश्नवाक्य के आद्यवर्ण का स्वर आलिंगित हो और चर्या-चेष्टा अभिधूमित या दग्ध प्रश्न की हो तो मिश्रित फल समझना चाहिए।

उपर्युक्त आठ नियमो द्वारा प्रश्नो का विचार करते समय उत्तरोत्तर, उत्तराधर, अधरोत्तर, अधराधर, वर्गोत्तर, वर्णाधर, अक्षरोत्तर, स्वरोत्तर, गुणोत्तर और आदेशोत्तर इन भेदो का विचार करना चाहिए। अ और क वर्ग उत्तरोत्तर, च वर्ग और ट वर्ग उत्तराधर, त वर्ग और प वर्ग अधरोत्तर एवं य वर्ग और श वर्ग अधराधर होते है। प्रथम और तृतीय वर्ग वाले अक्षर वर्गोत्तर, द्वितीय और चतुर्थ वर्ग वाले अक्षर अधरोत्तर एव पञ्चम वर्ग वाले अक्षर दोनो— प्रथम और तृतीय मिला देने से क्रमश वर्गोत्तर और वर्णाधर होते है। क ग ङ च ज ञ ट ड ण त द न प ब म य ल श स ये उन्नीस वर्ण उत्तर सज्ञक, ख घ छ झ ठ ढ थ ध फ भ र व ष ये वर्ण अधर सज्ञक, अ इ उ ए ओ अ ये वर्ण स्वरोत्तर सज्ञक, अ च त य उ ज द ल ये आठ वर्ण गुणोत्तर सज्ञक और क ट प श ग ड ब ह ये आठ वर्ण गुणाधर सज्ञक है।

प्रश्नकर्त्ता के प्रथम, तृतीय और पंचम स्थान के वाक्याक्षर उत्तर एवं द्वितीय और चतुर्थ स्थान के वाक्याक्षर अधर कह सकते है। यदि प्रश्न मे दीर्घाक्षर प्रथम, तृतीय और पचम स्थान मे हो तो लाभ करने वाले होते है। शेष स्थान मे रहने वाले ह्रस्व और प्लुताक्षर दर्शन करने वाले होते हैं। साधक इन प्रश्नाक्षरो पर से जीवन, मरण, लाभ, अलाभ, जय, पराजय आदि को अवगत करता है।

प्रश्नशास्त्र मे प्रश्न दो प्रकार के बताये जाते हैं—मानसिक और वाचिक। वाचिक प्रश्न मे प्रश्नकर्त्ता जिस बात को पूछना चाहता है, उसे ज्योतिषी के सामने प्रकट कर उसका फल ज्ञात करता है। परन्तु

मानसिक प्रश्न मे पृच्छक अपने मन की बात नही बतलाता है, केवल प्रतीको—फल, पुष्प, नदी पहाड, देव आदि के नाम द्वारा ही पृच्छक के मन की बात ज्ञात करनी पडती है।

साधारणत तीन प्रकार के पदार्थ होते हैं—जीव, धातु और मूल। मानसिक प्रश्न भी उक्त तीन ही प्रकार के हो सकते हैं। प्रश्नशास्त्र के चिन्तकों ने इनका नाम जीवयोनि, धातुयोनि और मूलयोनि रखा है। अ आ इ ए ओ अ: ये छ: स्वर तथा क ख ग घ च छ ज झ ट ठ ड ढ य श ह ये पन्द्रह व्यजन इस प्रकार कुल 21 वर्ण जीव सज्ञक, उ ऊ अ ये तीन स्वर तथा त थ द ध प फ ब भ व स ये दस व्यजन इस प्रकार कुल 13 वर्ण धातु सज्ञक और ई ऐ औ ये तीन स्वर तथा ङ ञ ण न म ल र ष ये आठ व्यजन इस प्रकार कुल 11 वर्ण मूलसज्ञक है।

जीवयोनि मे अ ए क च ट त प य श ये अक्षर द्विपद सज्ञक, आ ऐ ख छ ठ थ फ र ष ये अक्षर चतुष्पद सज्ञक, इ ओ ग ज ड द ब ल स ये अक्षर अपद सज्ञक और ई और घ झ ढ ध फ व ह ये अक्षर पादसकुल सज्ञक होते हैं। द्विपद योनि के देव, मनुष्य, पक्षी और राक्षस ये चार भेद हैं। अ क ख ग घ ङ प्रश्नवर्णों के होने पर देवयोनि, च छ ज झ ञ ट ठ ड ढ ण प्रश्नवर्णों के होने पर मनुष्य योनि, त थ द ध न प फ ब भ म के होने पर पशु योनि या पक्षियोनि और य र ल व श ष स ह प्रश्नवर्णों के होने पर राक्षस योनि होती है। देवयोनि के चार भेद होते है—कल्पवासी, भवनवासी, व्यन्तर और ज्योतिषी। देवयोनि के वर्णों मे आकार की मात्रा होने पर कल्पवासी, इकार मात्रा होने पर भवनवासी, एकार मात्रा होने पर व्यन्तर और ओकार मात्रा होने पर ज्योतिष्क देवयोनि होती है।

मनुष्ययोनि के ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र और अन्त्यज ये पाँच भेद हैं। अ ए क च ट त प य श ये वर्ण ब्राह्मणयोनि सज्ञक, आ ऐ ख छ ठ थ फ र ष ये वर्ण क्षत्रिय योनि सज्ञक, इ ओ ग ज ड द ब ल स ये वर्ण वैश्ययोनि सज्ञक, ई औ घ झ ढ ध भ व ह ये वर्ण शूद्रयोनि सज्ञक एव उ ऊ ङ ञ ण न म अ अ. ये वर्ण अन्त्यजयोनि सज्ञक होते है। इन पाँचो योनियो के वर्णों मे यदि अ इ ए ओ ये मात्राएँ हो तो पुरुष और आ ई ऐ मात्राएँ हो तो स्त्री एवं उ ऊ अ अ. ये मात्राएँ हों तो नपुसक सज्ञक होते हैं। पुरुष, स्त्री और नपुसक मे भी आलिंगित होने पर गौर वर्ण, अभिधूमित होने पर श्याम और दग्ध होने पर कृष्ण वर्ण होता है। आलिंगित प्रश्न होने पर बाल्यावस्था, अभिधूमित होने पर युवावस्था और दग्ध प्रश्न होने पर वृद्धावस्था होती है। आलिंगित प्रश्न होने पर सम—न कद अधिक बडा और न अधिक छोटा, अभिधूमित होने पर लम्बा और दग्धप्रश्न होने पर कुब्जा या बौना होता है।

त थ द ध न प्रश्नाक्षरो के होने पर जलचर पक्षी और प फ ब भ म प्रश्नाक्षरो के होने पर थलचर पक्षियो की चिन्ता समझनी चाहिए। राक्षस योनि के

दो भेद हैं—**कर्मज और योनिज** । भूत, प्रेतादि राक्षस कर्मज कहलाते है और असुरादि को योनिज कहते हैं । त थ द ध न प्रश्नाक्षरों के होने पर कर्मज और श ष स ह प्रश्नाक्षरों के होने पर योनिज राक्षसो की चिन्ता समझनी चाहिए ।

चतुष्पद योनि के खुरी, नखी, दन्ती और शृंगी ये चार भेद हैं । यदि प्रश्नाक्षरो मे आ और ऐ स्वर हो तो खुरी, छ और ढ प्रश्नाक्षरो मे हों तो नखी, थ और फ प्रश्नाक्षरो मे हो तो दन्ती एव र और ष प्रश्नाक्षरों मे हों तो शृंगीयोनि होती है । खुरी योनि के ग्रामचर और अरण्यचर ये दो भेद हैं । आ ऐ प्रश्नाक्षरो मे हो तो ग्रामचर—घोडा, गधा, ऊँट आदि मवेशी की चिन्ता और ख प्रश्नाक्षरो मे हो तो वनचारी पशु—हिरण, खरगोश आदि पशुओ की चिन्ता समझनी चाहिए ।

अपदयोनि के जलचर और थलचर ये दो भेद है—प्रश्नवाक्यो मे इ ओ ग ज ड अक्षर हो तो जलचर-मछली, शख, मकर आदि की चिन्ता और द ब ल स ये अक्षर हो तो साँप, मेढक आदि थलचर अपदो की चिन्ता समझनी चाहिए ।

पादसकुल योनि के दो भेद है—अण्डज और स्वेदज । ङ औ घ झ ढ ये प्रश्नाक्षर अण्डज सज्ञक भ्रमर, पतग इत्यादि एव ध भ व ह ये प्रश्नाक्षर स्वेदज सज्ञक—जूँ, खटमल आदि है ।

धातु योनि के भी दो भेद है—धाम्य और अधाम्य । त द प ब अ स इन प्रश्नाक्षरो के होने पर अधाम्य धातु योनि होती है । धाम्ययोनि के आठ भेद है—सुवर्ण, चाँदी, ताँबा, राँगा, काँसा, लोहा, सीसा, पित्तल । धाम्ययोनि के प्रकारान्तर से दो भेद है—घटित और अघटित । उत्तराक्षर प्रश्नवर्णों मे रहने पर घटित और अधराक्षर रहने पर अघटित धातुयोनि होती है । घटित धातुयोनि के तीन भेद है—जीवाभरण-आभूषण, गृहाभरण-बर्तन और नाणक—सिक्के, नोट आदि । अ ए क च ट त प य श प्रश्नाक्षर हो तो द्विपदाभरण—दो पैर वाले जीवो के आभूषण होते है । इसके तीन भेद हैं—देवताभूषण, पक्षि आभूषण और मनुष्याभूषण । मनुष्याभरण के शिरषाभरण, कर्णाभरण, नासिकाभरण, ग्रीवाभरण, हस्ताभरण, जंघाभरण और पादाभरण ये आठ भेद हैं । इन आभूषणो मे मुकुट, खौर, सीसफूल आदि शिरषाभरण, कानो मे पहने जाने वाले कुण्डल, एरिंग आदि कर्णाभरण, नाक मे पहनी जाने वाली लौंग, बाली, नथ आदि नासिकाभरण, कण्ठ मे पहनी जाने वाली हँसुली, हार, कण्ठी आदि ग्रीवाभरण, हाथों मे पहने जाने वाले ककण, अँगूठी, मुँदरी, छल्ला, छाप आदि हस्ताभरण, जाँघो मे बाँधे जाने वाले घुँघरू, छुद्रघण्टिका आदि जघाभरण और पैरो मे पहने जाने वाले बिछुए, छल्ला, पाजेब आदि पादाभरण होते है । क ग ङ च ज ञ ट ड ण त द न प ब म य ल श स प्रश्नाक्षरो के होने पर मनुष्याभरण की चिन्ता एव ख घ छ झ ठ ढ थ ध फ भ र व ष ह प्रश्नाक्षरो के होने पर स्त्रियो के

आभूषणों की चिन्ता समझनी चाहिए ।

उत्तराक्षर वर्णों के प्रश्नाक्षर होने पर दक्षिण अग का आभूषण और अधराक्षर प्रश्नवर्णों के होने पर वाम अग का आभूषण समझना चाहिए। अ क ख ग घ ङ प्रश्नाक्षरो के होने पर या प्रश्नवर्णों मे उक्त प्रश्नाक्षरो की बहुलता होने पर देवो के उपकरण छत्र, चमर आदि आभूषण और त थ द ध न प फ ब भ म इन प्रश्नवर्णों के होने पर पक्षियो के आभूषणो की चिन्ता समझनी चाहिए ।

यदि प्रश्नवाक्य का आद्यवर्ण क ग ङ च ज ञ ट ड ण त द न प ब म य ल श स इन अक्षरो मे से कोई हो तो हीरा, माणिक्य, मरकत, पद्मराग और मूंगा की चिन्ता, ख घ छ झ ठ ढ थ ध फ भ र व ष ह इन अक्षरो मे से कोई हो तो हरिताल, शिला, पत्थर, आदि की चिन्ता एव उ ऊ अ अ. स्वरो से युक्त व्यजन प्रश्न के आदि मे हो तो शर्करा, लवण, बालू आदि की चिन्ता समझनी चाहिए। यदि प्रश्नवाक्य के आदि मे अ इ ए ओ इन चार मात्राओ मे से कोई हो तो हीरा, मोती, माणिक्य आदि जवाहरात की चिन्ता, आ ई ऐ औ इन मात्राओ मे से कोई हो तो शिला, पत्थर, सीमेण्ट, चूना, सगमरमर आदि की चिन्ता एव उ ऊ अ अ इन मात्राओ मे से कोई मात्रा हो तो चीनी, बालू आदि की चिन्ता कहनी चाहिए । मुष्टिका प्रश्न मे मुट्ठी के अन्दर भी इन्ही प्रश्नविचारो के अनुसार योनि का निर्णय कर वस्तु बतलानी चाहिए ।

मूलयोनि के चार भेद हैं—वृक्ष, गुल्म, लता और वल्ली । यदि प्रश्नवाक्य के आद्यवर्ण की मात्रा आ हो तो वृक्ष, ई हो तो गुल्म, ऐ हो तो लता और औ हो तो वल्ली समझनी चाहिए । पुन. मूलयोनि के चार भेद है—वल्कल, पत्ते, पुष्प और फल । प्रश्न वाक्य के आदि मे क च ट त वर्णों के होने पर फल की चिन्ता करनी चाहिए ।

जीव योनि से मानसिक चिन्ता और मुष्टिगत प्रश्नो के उत्तरो के साथ चोर की जाति, अवस्था, आकृति, रूप, कद, स्त्री, पुरुष एव बालक आदि का पता लगाया जा सकता है । धातु योनि मे चोरी गयी वस्तु का स्वरूप और नाम बताया जा सकता है । धातु योनि के विश्लेषण से कहा जा सकता है कि अमुक प्रकार की वस्तु चोरी गयी है या नष्ट हुई है । इन योनियो के विचार द्वारा किसी भी व्यक्ति की मन.स्थिति का सहज मे पता लगाया जा सकता है। प्रश्नशास्त्र का विवेचन करने वाले व्यक्ति को उपर्युक्त सभी प्रश्न सज्ञाओ का परिज्ञान रहना चाहिए ।

लाभालाभ सम्बन्धी प्रश्नो का विचार करते हुए कहा है कि प्रश्नाक्षरो मे आलिंगित अ इ ए ओ मात्राओ के होने पर शीघ्र अधिक लाभ, अभिधूमित आ ई ऐ औ मात्राओ के होने पर अल्प लाभ एव दग्ध उ ऊ अ अ मात्राओ के होने पर अलाभ एव हानि होती है। उ ऊ अ अ· इन चार मात्राओ से सयुक्त क ग ङ च ज ञ ट ड ण त द न प ब म य ल श स ये प्रश्नाक्षर हो तो बहुत लाभ होता

है। आ ई ऐ औ मात्राओ मे सयुक्त क ग ङ च ज ञ ट ड ण त द न प ब म य ल श स इन प्रश्नाक्षरो के होने पर अल्प लाभ होता है। अ आ इ ए ओ मात्राओ से सयुक्त उपर्युक्त प्रश्नाक्षरो के होने पर जीव लाभ और रुपया, पैसा, सोना, चाँदी, मोती, माणिक्य आदि का लाभ होता है। ई ऐ औ ङ ञ ण न म ल र ष प्रश्नाक्षर हो तो लकडी, वृक्ष, कुर्सी, टेबुल, पलग आदि वस्तुओ का लाभ होता है।

शुभाशुभ प्रकरण मे प्रधानतया रोगी के स्वास्थ्य लाभ एव उसकी आयु का विचार किया जाता है। प्रश्नवाक्य मे आद्य वर्ण आलिंगित मात्रा से युक्त हो तो रोगी का रोग यत्नसाध्य, अभिधूमित मात्रा से युक्त हो तो कष्टसाध्य और दग्ध मात्रा से सयुक्त सयुक्ताक्षर हो तो मृत्यु फल समझना चाहिए। पृच्छक के प्रश्नाक्षरो मे आद्य वर्ण आ ई ऐ औ मात्राओ से युक्त सयुक्ताक्षर हो तो पृच्छक जिसके सम्बन्ध मे पूछता है उसकी दीर्घायु होती है। आ ई ऐ औ इन मात्राओ से युक्त क ग ङ च ज ञ ट ड ण त द न प ब म य ल श स वर्णों मे से कोई भी वर्ण प्रश्न वाक्य का आद्यक्षर हो तो लम्बी बीमारी भोगने के बाद रोगी स्वास्थ्य लाभ करता है।

पृच्छक से किसी फल का नाम पूछना तथा कोई एक अक सख्या पूछने के पश्चात् अक सख्या को द्विगुणा कर फल और नाम के अक्षरो की सख्या जोड देनी चाहिए। जोडने के पश्चात् जो योग आये, उसमे 13 जोडकर 9 का भाग देना चाहिए। 1 शेष मे धनवृद्धि, 2 मे धनक्षय, 3 मे आरोग्य, 4 मे व्याधि, 5 मे स्त्री लाभ, 6 मे बन्धु नाश, 7 मे कार्यसिद्धि, 8 मे मरण और 0 शेष मे राज्य प्राप्ति होती है।

कार्य सिद्धि-असिद्धि का प्रश्न होने पर पृच्छक का मुख जिस दिशा मे हो उस दिशा की अक सख्या (पूर्व 1, पश्चिम 2, उत्तर 3, दक्षिण 4), प्रहर सख्या (जिस प्रहर मे प्रश्न किया गया है, उसकी सख्या प्रात काल सूर्योदय से तीन घटे तक प्रथम प्रहर, आगे तीन-तीन घण्टे पर एक-एक प्रहर की गणना करनी चाहिए), वार सख्या (रविवार 1, सोम 2, मगल 3, बुध 4, बृहस्पति 5, शुक्र 6, शनि 7) और नक्षत्र सख्या (अश्विनी 1, भरणी 2, कृत्तिका 3 इत्यादि गणना) को जोड कर योगफल मे आठ का भाग देना चाहिए। एक अथवा पाँच शेष रहे तो शीघ्र कार्यसिद्धि, छः अथवा चार शेष मे तीन दिन मे कार्य सिद्धि, तीन अथवा सात शेष मे विलम्ब से कार्यसिद्धि एव अवशिष्ट शेष मे कार्य असिद्धि होती है।

हँसते हुए प्रश्न करने से कार्य सिद्ध होता है और उदासीन रूप से प्रश्न करने पर कार्य असिद्ध रहता है।

पृच्छक से एक से लेकर एक सौ आठ अक के बीच की एक अक सख्या पूछनी चाहिए। इस अक सख्या मे 12 का भाग देने पर 1।7।9।3 शेष मे विलम्ब से कार्य सिद्धि; 8।4।10।5 शेष मे कार्य नाश एव 2।6।11।0 शेष मे शीघ्र कार्य

सिद्धि होती है।

पृच्छक से किसी फूल का नाम पूछकर उसकी स्वर सख्या को व्यंजन सख्या से गुणा कर दें, गुणनफल में पृच्छक के नाम के अक्षरो की सख्या जोडकर योगफल मे 9 का भाग दें। एक शेष में शीघ्र कार्यसिद्धि; 2।5।0 मे विलम्ब से कार्यसिद्धि और 4।6।8 शेष मे कार्य नाश तथा अवशिष्ट शेष मे कार्य मन्द गति से होता है। पृच्छक के नाम के अक्षरो को दो से गुणा कर गुणनफल मे 7 जोड दे। उस योग मे 3 का भाग देने पर सम शेष में कार्य नाश और विषम शेष मे कार्यसिद्धि फल कहना चाहिए।

पृच्छक के तिथि, वार, नक्षत्र सख्या मे गर्भिणी के नाम अक्षरो को जोडकर सात का भाग देने मे एकाधिक शेष मे रविवार आदि होते है। रवि, भौम और गुरुवार मे पुत्र तथा सोम, बुध और शुक्रवार मे कन्या उत्पन्न होती है। शनिवार उपद्रव कारक है।

इस प्रकार अष्टाग निमित्त का विचार हमारे देश मे प्राचीन काल से होता आ रहा है। इस निमित्त ज्ञान द्वारा वर्षण-अवर्षण, सुभिक्ष-दुर्भिक्ष, सुख-दुःख, लाभ, अलाभ, जय, पराजय आदि बातो का पहले से ही पता लगाकर व्यक्ति अपने लौकिक और पारलौकिक जीवन मे सफलता प्राप्त कर लेता है।

अष्टांग निमित्त और ग्रीस तथा रोम के सिद्धान्त

जैनाचार्यों ने अष्टाग निमित्त का विकास स्वतन्त्र रूप से किया है। इनकी विचारधारा पर ग्रीस या रोम का प्रभाव नही है। ज्योतिषकरण्डक (ई० पू० 300-350) मे लग्न का जो निरूपण किया गया है, उससे इस बात पर प्रकाश पडता है कि जैनाचार्यों के ग्रीक सम्पर्क के पहले ही अष्टाग निमित्त का प्रतिपादन हुआ था। बताया गया है—

लग्गं च दक्खिणायविसुवेसु वि अस्स उत्तरं अयणे।
लग्ग साई विसुवेसु पंचसु वि दक्खिणे अयणे॥

इस पद्य मे अस्स यानी अश्विनी और साई अर्थात् स्वाति ये विषुव के लग्न बताये गये है। ज्योतिषकरण्डक मे विशेष अवस्था के नक्षत्रो को भी लग्न कहा है। यवनो के आगमन के पूर्व भारत मे यही जैन लग्न प्रणाली प्रचलित थी। प्राचीन भारत मे विशिष्ट अवस्था की राशि के समान विशिष्ट अवस्था के नक्षत्रो को भी लग्न कहा जाता था। ज्योतिषकरण्डक में व्यतीपात आनयन की जिस प्रक्रिया का वर्णन है वह इस बात की साक्षी है कि ग्रीक सम्पर्क से पूर्व ज्योतिष का प्रचार राशि ग्रह, लग्न आदि के रूप मे भारत मे वर्तमान था। कहा गया है—

अयणाण सबधे रविसोमाण तु वे हि य जुगम्मि ।
ज हवइ भागलद्ध वइहया तत्तिया होन्ति ॥
बावत्तपरीयमाणे फलरासी इच्छित्तेउ जुगभे ए ।
इच्छियवइवायपि य इव आऊण आणे हि ॥[1]

इन गाथाओ की व्याख्या करते हुए मलयगिरि ने लिखा है—"इह सूर्यचन्द्रमसौ स्वकीयेऽयने वर्तमानो यत्र परस्पर व्यतिपतत स कालो व्यतिपात , तत्र रविसमयो युगे युगमध्ये यानि अयनानि तेषा परस्पर सम्बन्धे एकत्र मेलने कृते द्वाभ्या भागो ह्रियते । हृते च भागे यद् भवति भागलब्ध तावन्त तावत्प्रमाणा युगे व्यतिपाता भवन्ति ।"

डब्ल्यू० डब्ल्यू० हण्टर ने लिखा है—"आठवी शती मे अरब विद्वानो ने भारत से ज्योतिषविद्या सीखी और भारतीय ज्योतिष सिद्धान्तो का 'सिद हिद' के नाम से अरबी मे अनुवाद किया।"[2] अरबी भाषा मे लिखी गयी "आइन-उल अबा फितल कालुली अत्बा" नामक पुस्तक मे लिखा है कि "भारतीय विद्वानो ने अरब के अन्तर्गत बगदाद की राजसभा मे आकर ज्योतिष, चिकित्सा आदि शास्त्रो की शिक्षा दी थी। कर्क नाम के एक विद्वान् शक सवत् 694 मे बादशाह अलमसूर के दरबार मे ज्योतिष और चिकित्सा के ज्ञानदान के निमित्त गये थे।"[3]

मैक्समूलर ने लिखा है कि "भारतीयो को आकाश का रहस्य जानने की भावना विदेशीय प्रभाववश उद्भूत नही हुई, बल्कि स्वतन्त्र रूप से उत्पन्न हुई है।[4] अतएव स्पष्ट है कि अष्टाग निमित्त ज्ञान मे फलित ज्योतिष की प्राय सभी बातें परिगणित है। अष्टाग निमित्त ने फलित सिद्धान्तो को विकसित और पल्लवित किया है। भारत मे इसका प्रचार ई० सन् से पूर्व की शताब्दियो मे ही हो चुका था। फ्रान्सीसी पर्यटक फ्रान्क्वीस बर्नियर भी इस बात का समर्थन करता है कि भारत मे इस विद्या का विकास स्वतन्त्र रूप से हुआ है।

यह सत्य है कि अष्टागनिमित्त विद्या भारत मे जन्मी, विकसित हुई और समृद्धिशाली हुई, पर ज्ञान की धारा सभी देशो मे प्रवाहित होती है। अत. ईस्वी सन् की आरम्भिक शताब्दियो मे ग्रीस और रोम मे भी निमित्त का विचार किया जाता था। यहाँ ग्रीस और रोम का निमित्त विचार तुलना के लिए उद्धृत किया जायेगा।

ग्रीस-इतिहास मे ऐसे अनेक उदाहरण है, जिनमे बताया गया है कि भूकम्प और ग्रहण पेलोपोनेसियन लडाई के पहले हुए थे। इसके सिवा एक्सरसेस ग्रीस से

1. देखें—ज्योतिषकरण्डक पृ० 200 205। 2 हण्टर इण्डियन-गैजेटियर-इण्डिया पृ० 217। 3 ज्योतिष रत्नाकर, प्रथम भाग, भूमिका, 4 Vol XIII Lecture in objections p 130

होकर अपनी सेना ले जा रहा था, तब उसे हार का अनागत कथन पहले से ही ज्ञात हो गया था। ग्रीक लोगो मे विचित्र बातो को यथा—घोडी से खरगोश का जन्म होना, स्त्री को साँप के बच्चे का जन्म देना, मुरझाये फूलो का मम्मुख आना, विभिन्न प्रकार के पक्षियो के शब्दो का सुनना तथा उनका दिशा-परिवर्तन कर दायें या बाये आना प्रभृति बातें युद्ध मे पराजय की सूचक मानी जाती थी। इस साहित्य मे शकुन और अपशकुन के सम्बन्ध मे सुन्दर रचनाएँ हैं। फलित ज्योतिष के अग, राशि और ग्रहो के बारे मे ग्रीको ने आज से कम-से-कम दो हजार वर्ष पहले पर्याप्त विचार किया था। भारतवर्ष मे जब अष्टाग निमित्त का विचार आरम्भ हुआ, ग्रीस मे भी स्वप्न, प्रश्न, दिक्शुद्धि, कालशुद्धि और देश-शुद्धि पर विचार किया जाता था। इनके साहित्य मे सन्ध्या, उषा तथा आकाश-मण्डल के विभिन्न परिवर्तन से घटित होने वाली घटनाओ का जिक्र किया गया है।

ग्रीको का प्रभाव रोमन सभ्यता पर भी पूरा पडा। इन्होने भी अपने शकुन शास्त्र मे ग्रीको की तरह प्रकृति परिवर्तन, विशिष्ट-विशिष्ट ताराओ का उदय, ताराओ का टूटना, चन्द्रमा का परिवर्तित अस्वाभाविक रूप का दिखलाई पडना, ताराओ का लालवर्ण का होकर सूर्य के चारो ओर एकत्र हो जाना, आग की बडी-बडी चिनगारियो का आकाश मे फैल जाना, इत्यादि विचित्र बातो को देश के लिए हानिकारक बतलाया है। रोम के लोगो ने जितना ग्रीस से सीखा, उससे कही अधिक भारतवर्ष से।

वराहमिहिर की पचसिद्धान्तिका मे रोम और पौलस्त्य नाम के सिद्धान्त आये है, जिनसे पता चलता है कि भारतवर्ष मे भी रोम सिद्धान्त का प्रचार था। रोम के कई छात्र भारतवर्ष मे आये और वर्षों यहाँ के आचार्यों के पास रहकर निमित्त और ज्योतिष का अध्ययन करते रहे। वराहमिहिर के समय मे भारत मे अष्टागनिमित्त का अधिक प्रचार था। ज्योतिष का उद्देश्य जीवन के समस्त आवश्यक विषयो का विवेचन करना था। अत अध्ययनार्थ आये हुए विदेशी विद्वान् छात्र अष्टागनिमित्त और सहिताशास्त्र का अध्ययन करते थे। उस युग मे सहिता मे आयुर्वेद का भी अन्तर्भाव होता था, राजनीति के युद्धसम्बन्धी दाव-पेंच भी इसी शास्त्र के अन्तर्गत थे। अत. रोम मे निमित्तो का प्रचार विशेष रूप से हुआ। गणित प्रक्रिया के बिना केवल प्रकृति परिवर्तन या आकाश की स्थिति के अवलोकन से ही फल निरूपण रोम मे हुआ है। शकुन और अपशकुन का विषय भी इसी के अन्तर्गत आता है। रोम के इतिहास मे ऐसी अनेक घटनाओ का निरूपण है जिनसे सिद्ध होता है कि वहाँ शकुन और अपशकुन का फल राष्ट्र को भोगना पडा था।

इस प्रकार ग्रीस, रोम आदि देशो मे भारत के समान ही निमित्तो का विचार

होता था। इन दोनो देशो के ज्योतिष सिद्धान्त निमित्तो पर आश्रित थे। सुभिक्ष-दुर्भिक्ष, जय-पराजय एव यात्रा के शकुनो के सम्बन्ध मे वैसा ही लिखा मिलता है, जैसा हमारे यहाँ है। प्राकृतिक और शारीरिक दोनो प्रकार के अरिष्टो का विवेचन ग्रीस और रोम सिद्धान्तो मे मिलता है। पचसिद्धान्तिका मे जो रोमक सिद्धान्त उपलब्ध है, उससे ग्रहगणित की मान्यताओ पर भी प्रकाश पडता है।

भद्रबाहु संहिता का वर्ण्य विषय

अष्टाग निमित्तो का इस एक ही ग्रन्थ मे वर्णन किया गया है। यह ग्रन्थ द्वादशाग वाणी के वेत्ता श्रुतकेवली भद्रबाहु के नाम पर रचित है। इस ग्रन्थ के प्रारम्भ मे बतलाया गया है कि प्राचीन काल मे मगध देश मे नाना प्रकार के वैभव से युक्त राजगृह नाम का सुन्दर नगर था। इस नगर मे राजगुणो से परिपूर्ण नानागुणसम्पन्न सेनजित (प्रसेनजित सभवत: बिम्बसार का पिता) नाम का राजा राज्य करता था। इस नगर के बाहरी भाग मे नाना प्रकार के वृक्षो से युक्त पाण्डुगिरि नाम का पर्वत था। इस पर्वत के वृक्ष फल-फूलो से युक्त समृद्धिशाली थे तथा इन पर पक्षिगण सर्वदा मनोरम कलरव किया करते थे। एक समय श्रीभद्रबाहु आचार्य इसी पाण्डुगिरि पर एक वृक्ष के नीचे अनेक शिष्य-प्रशिष्यो से युक्त स्थित थे, राजा सेनजित ने नम्रीभूत होकर आचार्य से प्रश्न किया—

पार्थिवाना हितार्थाय भिक्षूणां हितकाम्यया।
श्रावकाणां हितार्थाय दिव्य ज्ञानं ब्रवीहि न:॥
शुभाशुभं समुद्भूतं श्रुत्वा राजा निमित्तत.।
विजिगीषु. स्थिरमति सुखं याति महीं सदा॥
राजभि पूजिता सर्वे भिक्षवो धर्मचारिण:।
विहरन्ति निरुद्विग्नास्तेन राजाभियोजिता:॥
सुखग्राह्यं लघुग्रंथ स्पष्टं शिष्यहितावहम्।
सर्वज्ञभाषितं तथ्यं निमित्तं तु ब्रवीहि न॥

इस ग्रन्थ मे उल्का, परिवेष, विद्युत्, अभ्र, सन्ध्या, मेघ, वात, प्रवर्षण, गन्धर्वनगर, गर्भलक्षण, यात्रा, उत्पात, ग्रहचार, ग्रहयुद्ध, स्वप्न, मुहूर्त्त, तिथि, करण, शकुन, पाक, ज्योतिष, वास्तु, इन्द्रसम्पदा, लक्षण, व्यंजन, चिह्न, लग्न, विद्या, औषध प्रभृति सभी निमित्तो के बलाबल, विरोध और पराजय आदि विषयो के निरूपण करने की प्रतिज्ञा की है। परन्तु प्रस्तुत ग्रन्थ मे जितने अध्याय प्राप्त हैं, उनमे मुहूर्त्त तक ही वर्णन मिलता है। अवशेष विषयों का प्रतिपादन 27वे अध्याय से आगे आने वाले अध्यायो मे हुआ होगा।

श्रद्धेय पं० जुगलकिशोर जी मुख्तार द्वारा लिखित ग्रथपरीक्षा द्वितीय भाग

से ज्ञात होता है कि इस ग्रंथ में पाँच खण्ड और बारह हजार श्लोक हैं। बताया गया है—

> प्रथमो व्यवहाराख्यो ज्योतिराख्यो द्वितीयकः।
> तृतीयोऽपि निमित्ताख्यश्चतुर्थोऽपि शरीरजः ॥1॥
> पंचमोऽपि स्वराख्यश्च पंचखण्डेरियं मता।
> द्वादशसहस्रं प्रमिता संहितेयं जिनोदिता ॥2॥

व्यवहार, ज्योतिष, निमित्त, शरीर एवं स्वर ये पाँच खण्ड भद्रबाहु संहिता मे हैं। इस ग्रंथ मे एक विलक्षण बात यह है कि पाँच खण्डो के होने पर दूसरे खण्ड को मध्यम और तीसरे खण्ड को उत्तर खण्ड कहा गया है।

इस सस्मरण में हम केवल 27 अध्याय ही दे रहे हैं। 30वाँ अध्याय परिशिष्ट रूप से दिया जा रहा है। अत 27 अध्यायो के वर्ण्य विषय पर विचार करना आवश्यक है।

प्रथम अध्याय मे ग्रन्थ के वर्ण्य विषयो की तालिका प्रस्तुत की गयी है। आरम्भ मे बताया गया है कि यह देश कृषिप्रधान है, अत कृषि की जानकारी—किस वर्ष किस प्रकार की फसल होगी प्राप्त करना श्रावक और मुनि दोनो के लिए आवश्यक था। यद्यपि मुनि का कार्य ज्ञान-ध्यान मे रत रहना है, पर आहार आदि-क्रियाओ को सम्पन्न करने के लिए उन्हे श्रावको के अधीन रहना पडता था, अतः सुभिक्ष-दुर्भिक्ष की जानकारी प्राप्त करना उनके लिए आवश्यक है। निमित्तशास्त्र का ज्ञान ऐहिक जीवन के व्यवहार को चलाने के लिए आवश्यक है। अत इस अध्याय मे निमित्तो के वर्णन करने की प्रतिज्ञा की गयी है और वर्ण्य विषयो की तालिका दी गयी है।

द्वितीय अध्याय मे उल्का-निमित्त का वर्णन किया गया है। बताया गया है कि प्रकृति का अन्यथाभाव विकार कहा जाता है, इस विकार को देखकर शुभाशुभ के सम्बन्ध मे जान लेना चाहिए। रात को जो तारे टूटकर गिरते हुए जान पडते है, वे उल्काएँ है। इस ग्रन्थ में उल्का के धिष्ण्या, उल्का, अशनि, विद्युत् और तारा ये पाँच भेद हैं। उल्का फल 15 दिनो मे, धिष्ण्या और अशनि का 45 दिनो में एव तारा और विद्युत् का छ दिनों मे प्राप्त होता है। तारा का जितना प्रमाण है उससे लम्बाई मे दूना धिष्ण्या का है। विद्युत् नाम वाली उल्का बडी कुटिल— टेढ़ी-मेढ़ी और शीघ्रगामिनी होती है। अशनि नाम की उल्का चक्राकार होती है, पौरुषी नाम की उल्का स्वभावत लम्बी होती है तथा गिरते समय बढ़ती जाती है। ध्वज, मत्स्य, हाथी, पर्वत, कमल, चन्द्रमा, अश्व, तप्तरज और हंस के समान दिखाई पडने वाली उल्का शुभ मानी जाती है। श्रीवत्स, वज्र, शख और स्वस्तिकरूप प्रकाशित होने वाली उल्का कल्याणकारी और सुभिक्षदायक है। जिन उल्काओ के सिर का भाग मकर के समान और पूँछ गाय के समान हो, वे उल्काएँ

अनिष्टसूचक तथा ससार के लिए भयप्रद होती है। इस अध्याय मे सक्षेप मे उल्काओ की बनावट, रूप-रग आदि के आधार पर फलादेश का वर्णन किया गया है।

तृतीय अध्याय मे 69 श्लोक है। इसमे विस्तारपूर्वक उल्कापात का फलादेश बताया गया है। 7 से 11 श्लोको मे उल्काओ के आकार-प्रकार का विवेचन है। 16वे श्लोक से 18वे श्लोक तक वर्ण के अनुसार उल्का का फलादेश वर्णित है। बताया गया है कि अग्नि की प्रभावाली उल्का अग्निभय, मजिष्ठ के समान रग वाली उल्का व्याधि और कृष्णवर्ण की उल्का दुर्भिक्ष की सूचना देती है। 19वे श्लोक से 29वे तक दिशा के अनुसार उल्का का फलादेश बतलाया गया है। अवशेष श्लोको मे विभिन्न दृष्टिकोणो से उल्का का फलादेश वर्णित है। सुभिक्ष-दुर्भिक्ष, जय-पराजय, हानि-लाभ, जीवन-मरण, सुख-दुख आदि बातो की जानकारी उल्का निमित्त से की जा सकती है। पाप रूप उल्काएँ और पुण्यरूप उल्काएँ अपने-अपने स्वभाव-गुणानुसार इष्टानिष्ट की सूचना देती है। उल्काओ की विशेष पहचान भी इस अध्याय मे बतलायी गयी है।

चौथे अध्याय मे परिवेष का वर्णन किया गया है। परिवेष दो प्रकार के होते है—प्रशस्त और अप्रशस्त। इस अध्याय मे 39 श्लोक है। आरम्भिक श्लोको मे परिवेष होने के कारण, परिवेष का स्वरूप और आकृति का वर्णन है। वर्षा ऋतु मे सूर्य या चन्द्रमा के चारो ओर एक गोलाकार अथवा अन्य किसी आकार मे एक मण्डल-सा बनता है, यही परिवेष कहलाता है। चाँदी या कबूतर के रग के समान आभा वाला चन्द्रमा का परिवेष हो तो जल-वृष्टि, इन्द्रधनुष के समान वर्णवाला परिवेष हो तो सग्राम या विग्रह की सूचना, काले और नीले वर्ण का चक्र परिवेष हो तो वर्षा की सूचना, पीत वर्ण का परिवेष हो तो व्याधि की सूचना एव भस्म के समान आकृति और रग का चन्द्र परिवेष हो तो किसी महाभय की सूचना समझनी चाहिए। उदयकालीन चन्द्रमा के चारो ओर सुन्दर परिवेष हो तो वर्षा तथा उदयकाल मे चन्द्रमा के चारो ओर रूक्ष और श्वेत वर्ण का परिवेष हो तो चोरो के उपद्रव की सूचना देता है। सूर्य का परिवेष साधारणत अशुभ होता है और आधि-व्याधि को सूचित करता है। जो परिवेष नीलकठ, मोर, रजत, दुग्ध और जल की आभा वाला हो, स्वकालसम्भूत हो, जिसका वृत्त खण्डित न हो और स्निग्ध हो, वह सुभिक्ष और मगल करने वाला होता है। जो परिवेष समस्त आकाश मे गमन करे, अनेक प्रकार की आभा वाला हो, रुधिर के समान लाल हो, रूखा और खण्डित हो तथा धनुष और शृगाटक के समान हो तो वह पापकारी, भयप्रद और रोगसूचक होता है। चन्द्रमा के परिवेष से प्राय: वर्षा, आतप का विचार किया जाता है और सूर्य के परिवेष से महत्त्वपूर्ण घटित

होने वाली घटनाएँ सूचित होती है ।

पाँचवें अध्याय में विद्युत् का वर्णन किया है । इस अध्याय मे 25 श्लोक हैं। आरम्भ मे सौदामिनी और बिजली के स्वरूपों का कथन किया गया है। बिजली-निमित्तो का प्रधान उद्देश्य वर्षा के सम्बन्ध मे जानकारी प्राप्त करना है। यह निमित्त फसल के भविष्य को अवगत करने के लिए भी उपयोगी है । बताया गया है कि जब आकाश मे घने बादल छाये हो, उस समय पूर्व दिशा मे बिजली कडके और इसका रग श्वेत या पीत हो तो निश्चयत वर्षा होती है और यह फल दूसरे ही दिन प्राप्त होता है । ऋतु, दिशा, मास और दिन या रात मे बिजली के चमकने का फलादेश इस अध्याय मे बताया गया है । विद्युत् के रूप, और मार्ग का विवेचन भी इस अध्याय मे है तथा इसी विवेचन के आधार पर फलादेश का वर्णन किया गया है ।

छठे अध्याय मे अभ्रलक्षण का निरूपण है । इसमे 31 श्लोक हे, आरम्भ मे मेघो के स्वरूप का कथन है । इस अध्याय का प्रधान उद्देश्य भी वर्षा के सम्बन्ध मे जानकारी उपस्थित करना है । आकाश मे विभिन्न आकृति और विभिन्न वर्णों के मेघ छाये रहते है। तिथि, मास, ऋतु के अनुसार विभिन्न आकृति के मेघो का फलादेश बतलाया गया है। वर्षा की सूचना के अलावा मेघ अपनी आकृति और वर्ण के अनुसार राजा के जय, पराजय, युद्ध, सन्धि, विग्रह आदि की भी सूचना देते है । इस अध्याय मे मेघो की चाल-ढाल का वर्णन है, इससे भविष्यत्काल की अनेक बातो की जानकारी प्राप्त की जा सकती है। मेघो की गर्जन-तर्जन ध्वनि के परिज्ञान से अनेक प्रकार की बातो की जानकारी प्राप्त की जा सकती है ।

सातवाँ अध्याय सन्ध्या लक्षण है । इसमे 26 श्लोक है। इस अध्याय मे प्रात और साय सन्ध्या का लक्षण विशेष रूप मे बतलाया गया है तथा इन सन्ध्याओ के रूप, आकृति और समय के अनुसार फलादेश बतलाया गया है। प्रतिदिन सूर्य के अर्धास्त हो जाने के समय से जब तक आकाश मे नक्षत्र भली-भाँति दिखलाई न दे तब तक सन्ध्याकाल रहता है, इसी प्रकार अर्धोदित सूर्य से पहले तारा दर्शन तक उदय सन्ध्याकाल माना जाता है । सूर्योदय के समय की सन्ध्या यदि श्वेत वर्ण की हो और वह उत्तर दिशा मे स्थित हो तो ब्राह्मणो को भय देने वाली होती है। सूर्योदय के समय लालवर्ण की सन्ध्या क्षत्रियो को, पीत वर्ण की सन्ध्या वैश्यो को और कृष्ण वर्ण की सन्ध्या शूद्रो को जय देती है। सन्ध्या का फल दिशाओ के अनुसार भी कहा गया है। अस्तकाल की सन्ध्या की अपेक्षा उदयकाल की सन्ध्या अधिक महत्त्व रखती है। उदयकाल नाना प्रकार की भावी घटनाओ की सूचना देता है। प्रस्तुत अध्याय मे उदयकालीन सन्ध्या का विस्तृत फलादेश बतलाया गया है। सन्ध्या के स्पर्श और रग को पहचानने के लिए कुछ

दिन अभ्यास आवश्यक है।

आठवें अध्याय में मेघो का लक्षण बतलाया गया है। इसमे 27 श्लोक है। इस अध्याय मे मेघो की आकृति, उनका काल, वर्ण, दिशा एव गर्जन-ध्वनि के अनुसार फलादेश का वर्णन है। बताया गया है कि शरदऋतु के मेघों से अनेक प्रकार के शुभाशुभ फल की सूचना, ग्रीष्मऋतु के मेघो से वर्षा की सूचना एव वर्षा ऋतु के मेघो से केवल वर्षा की सूचना मिलती है। मेघो की गर्जना को मेघो की भाषा कहा गया है। मेघो की भाषा से वैयक्तिक, सामाजिक और राष्ट्रीय जीवन की अनेक महत्त्वपूर्ण बातें ज्ञात की जा सकती हैं। पशु, पक्षी और मनुष्यो की बोली के समान मेघो की भाषा—गर्जना भी अनेक प्रकार की होती है। जब मेघ सिंह के समान गर्जना करे तो राष्ट्र मे विप्लव, मृग के समान गर्जना करे तो शस्त्रवृद्धि एव हाथी के समान गर्जना करे तो राष्ट्र के सम्मान की वृद्धि होती है। जनता मे भय का सचार, राष्ट्र की आर्थिक क्षति एवं राष्ट्र मे नाना प्रकार की व्याधियाँ उस समय उत्पन्न होती हैं, जब मेघ बिल्ली के समान गर्जना करते हो। खरगोश, सियार और बिल्ली के समान मेघो की गर्जना अशुभ मानी गयी है। नारियो के समान कोमल और मधुर गर्जना कला की उन्नति एव देश की समृद्धि मे विशेष सहायक होती है। रोते हुए मनुष्य की ध्वनि के समान जब मेघ गर्जना करे तो निश्चयत महामारी की सूचना समझनी चाहिए। मधुर और कोमल गर्जना शुभ-फलदायक मानी जाती है।

नौवें अध्याय मे वायु का वर्णन है। इस अध्याय मे 65 श्लोक हैं। इस अध्याय के आरम्भ मे वायु की विशेषता, उपयोगिता एव स्वरूप का कथन किया गया है। वायु के परिज्ञान द्वारा भावी शुभाशुभ फल का विचार किया गया है। इसके लिए तीन तिथियाँ विशेष महत्त्व की मानी गयी है। ज्येष्ठ पूर्णिमा, आषाढी प्रतिपदा और अषाढी पूर्णिमा। इन तीन तिथियो मे वायु के परीक्षण द्वारा वर्षा, कृषि, वाणिज्य, रोग आदि की जानकारी प्राप्त की जाती है। आषाढी प्रतिपदा के दिन सूर्यास्त के समय मे पूर्व दिशा मे वायु चले तो आश्विन महीने में अच्छी वर्षा होती है तथा इस प्रकार की वायु से श्रावण मास मे भी अच्छी वर्षा होने की सूचना समझनी चाहिए। रात्रि के समय जब आकाश मे मेघ छाये हो और धीमी वर्षा हो रही हो, उस समय पूर्व दिशा मे वायु चले तो भाद्रपद मास मे अच्छी वर्षा की सूचना समझनी चाहिए। श्रावण मास मे पश्चिमीय हवा, भाद्रपद मास मे पूर्वीय और आश्विन मे ईशान कोण की हवा चले तो अच्छी वर्षा का योग समझना चाहिए तथा फसल भी उत्तम होती है। ज्येष्ठ पूर्णिमा को निरभ्र आकाश रहे और दक्षिण वायु चले तो उस वर्ष अच्छी वर्षा नही होती। ज्येष्ठ पूर्णिमा को प्रात काल सूर्योदय के समय मे पूर्वीय वायु के चलने से फसल खराब होती है, पश्चिमीय के चलने से अच्छी, दक्षिणीय से दुष्काल और उत्तरीय वायु से

सामान्य फसल की सूचना समझनी चाहिए।

दसवें अध्याय मे प्रवर्षण का वर्णन है इस अध्याय मे 55 श्लोक हैं। इस अध्याय मे विभिन्न निमित्तो द्वारा वर्षा का परिमाण निश्चित किया गया है। वर्षा ऋतु मे प्रथम दिन वर्षा जिस दिन होती है, उसी के फलादेशानुसार समस्त वर्ष की वर्षा का परिमाण ज्ञात किया जा सकता है। अश्विनी, भरणी आदि 27 नक्षत्रो मे प्रथम वर्षा होने से समस्त वर्ष मे कुल कितनी वर्षा होगी, इसकी जानकारी भी इस अध्याय में बतलायी गयी है। प्रथम वर्षा अश्विनी नक्षत्र मे हो तो 49 आढ़क जल, भरणी में हो तो 19 आढक जल, कृत्तिका में हो तो 51 आढक, रोहिणी में हो तो 91 आढक, मृगशिर नक्षत्र में हो तो 91 आढ़क, आर्द्रा में हो तो 32 आढक, पुनर्वसु मे हो तो 91 आढक, पुष्य मे हो तो 42 आढक, आश्लेषा मे हो तो 64 आढक, मघा मे हो तो 16 द्रोण, पूर्वा फाल्गुनी मे हो तो 16 द्रोण, उत्तरा फाल्गुनी में हो तो 67 आढक, हस्त मे हो तो 25 आढक, चित्रा मे हो तो 22 आढक, स्वाति मे हो हो 32 आढक, विशाखा मे हो तो 16 द्रोण, अनुराधा मे हो तो 16 द्रोण, ज्येष्ठा मे हो तो 18 आढक और मूल मे हो तो 16 द्रोण जल की वर्षा होती है। इस अध्याय मे पूर्वाषाढा, उत्तराषाढा, श्रवण, धनिष्ठा शतभिषा, पूर्वाभाद्रपद, उत्तराभाद्रप्रद और रेवती नक्षत्र मे वर्षा होने का फलादेश पहले कहा गया है। अत ऐसा प्रतीत होता है कि यहाँ पूर्वाषाढा से नक्षत्र की गणना की गयी है।

ग्यारहवें अध्याय में गन्धर्व नगर का वर्णन किया गया है। इस अध्याय में 31 श्लोक है। इस अध्याय मे बताया गया है कि सूर्योदयकाल मे पूर्व दिशा मे गन्धर्वनगर दिखलाई पडे तो नागरिको का वध होता है। सूर्य के अस्तकाल मे गन्धर्वनगर दिखलाई दे तो आक्रमणकारियो के लिए घोर भय की सूचना समझनी चाहिए। रक्त वर्ण का गन्धर्वनगर पूर्व दिशा मे दिखलाई पडे तो शस्त्रोत्पात, पीतवर्ण का दिखलाई पड़े तो मृत्यु तुल्य कष्ट, कृष्णवर्ण का दिखलाई पडे तो मारकाट, श्वेतवर्ण का दिखलाई पडे तो विजय, कपिलवर्ण का दिखलाई पडे तो क्षोभ, मंजिष्ठ वर्ण का दिखलाई पडे तो सेना मे क्षोभ एव इन्द्रधनुष के वर्ण के समान वर्ण वाला दिखलाई पडे तो अग्निभय होता है। गन्धर्वनगर अपनी आकृति, वर्ण, रचनासन्निवेश एवं दिशाओ के अनुसार व्यक्ति, समाज और राष्ट्र के शुभाशुभ भविष्य की सूचना देते है। शुभ्रवर्ण और सौम्य आकृति के गन्धर्वनगर प्राय शुभ होते हैं। विकृत आकृति वाले, कृष्ण और नील वर्ण के गन्धर्वनगर व्यक्ति, राष्ट्र और समाज के लिए अशुभसूचक है। शान्ति, अशान्ति, आन्तरिक उपद्रव एवं राष्ट्रो के सन्धि-विग्रह के सम्बन्ध मे भी गन्धर्व नगरो से सूचना मिलती है।

बारहवें अध्याय मे 38 श्लोकों मे गर्भधारण का वर्णन किया गया है। मेघ गर्भ की परीक्षा द्वारा वर्षा का निश्चय किया जाता है। पूर्व दिशा के मेघ जब

पश्चिम दिशा की ओर दौडते हैं और पश्चिम दिशा के मेघ पूर्व दिशा मे जाते है, इसी प्रकार चारो दिशाओ मे मेघ पवन के कारण अदला-बदली करते रहते हैं, तो मेघ का गर्भ काल जानना चाहिए। जब उत्तर ईशानकोण और पूर्व दिशा की वायु द्वारा आकाश विमल, स्वच्छ और आनन्दयुक्त होता है तथा चन्द्रमा और सूर्य स्निग्ध, श्वेत और बहु घेरेदार होता है, उस समय भी मेघो के गर्भधारण का समय रहता है। मेघो के गर्भधारण का समय मार्गशीर्ष—अगहन, पौष, माघ और फाल्गुन है। इन्ही महीनो मे मेघ गर्भधारण करते है। जो व्यक्ति मेघो के गर्भधारण को पहचान लेता है, वह सरलतापूर्वक वर्षा का समय जान सकता है। यह गणित का मिद्धान्त है कि गर्भधारण के 195 दिन के उपरान्त वर्षा होती है। अगहन के महीने मे जिस तिथि को मेघ गर्भ धारण करते हैं, उस तिथि से ठीक 195वे दिन मे अवश्य वर्षा होती है। इस अध्याय मे गर्भधारण की तिथि का परिज्ञान कराया गया है। जिस समय मेघ गर्भधारण करते हैं, उस समय दिशाएँ शान्त हो जाती है, पक्षियो का कलरव सुनाई पडने लगता है। अगहन के महीने मे जिस तिथि को मेघ सन्ध्या की अरुणिमा से अनुरक्त और मण्डलाकार होते है। उसी तिथि को उनकी गर्भधारण क्रिया समझनी चाहिए। इस अध्याय मे गर्भ धारण की परिस्थिति और उस परिस्थिति के अनुसार घटित होने वाले फलादेश का निरूपण किया गया है।

तेरहवें अध्याय में यात्रा के शकुनो का वर्णन है। इस अध्याय मे 186 श्लोक है। इसमे प्रधान रूप मे राजा की विजय यात्रा का वर्णन है, पर यह विजय यात्रा सर्वसाधारण की यात्रा के रूप मे भी वर्णित है। यात्रा के शकुनो का विचार सर्व साधारण को भी करना चाहिए। सर्वप्रथम यात्रा के लिए शुभमुहूर्त का विचार करना चाहिए। ग्रह, नक्षत्र, करण, तिथि, मुहूर्त, स्वर, लक्षण, व्यजन, उत्पात, साधुमगल आदि निमित्तो का विचार यात्रा काल मे अवश्य करना चाहिए। यात्रा मे तीन प्रकार के निमित्तो—आकाश मे पतित, भूमि पर दिखाई देने वाले और शरीर से उत्पन्न चेष्टाओ का विचार करना होता है। सर्वप्रथम पुरोहित तथा हवन क्रिया द्वारा शकुनो का विचार करना चाहिए। कौआ, मूषक और शूकर आदि पीछे की ओर आते हुए दिखाई पड़ें अथवा बायी ओर चिडिया उडती हुई दिखलाई पडे तो यात्रा मे कष्ट की सूचना समझनी चाहिए। ब्राह्मण, घोड़ा, हाथी, फल, अन्न, दही, आम, सरसो, कमल, वस्त्र, वेश्या, बाजा, मोर, पपैया, नौला, बँधा हुआ पशु, ऊख, जलपूर्ण कलश, बैल, कन्या, रत्न, मछली, मन्दिर एव पुत्रवती नारी का दर्शन यात्रारम्भ मे हो तो यात्रा सफल होती है। सीसा, काजल, धुला वस्त्र, धोने के लिए वस्त्र ले जाते हुए धोबी, घृत, मछली, सिंहासन, मुर्गा, ध्वजा, शहद, मेवा, धनुष, गोरोचन, भरद्वाज पक्षी, पालकी, वेदध्वनि, मागलिक गायन ये पदार्थ सम्मुख आयें तथा बिना जल—खाली घड़ा लिये कोई व्यक्ति

पीछे की ओर जाता दिखाई पडे तो यह शकुन अत्युत्तम है। बाँझ स्त्री, चमड़ा, धान का भूसा, पुआल, सूखी लकडी, अगार, हिजडा, विष्ठा के लिए पुरुष या स्त्री, तेल, पागल व्यक्ति, जटा वाला सन्यासी व्यक्ति, तृण, संन्यासी, तेल मालिश किये बिना स्नान के व्यक्ति, नाक या कान कटा व्यक्ति, रुधिर, रजस्वला स्त्री, गिरगिट, बिल्ली का लडना या रास्ता काटकर निकल जाना, कीचड, कोयला, राख, दुर्भग व्यक्ति आदि शकुन यात्रा के आरम्भ मे अशुभ समझे जाते है। इन शकुनो से यात्रा मे नाना प्रकार के कष्ट होते है और कार्य भी सफल नही होता है। यात्रा के समय मे दधि, मछली और जलपूर्ण कलश आना अत्यन्त शुभ माना गया है। इस अध्याय मे यात्रा के विभिन्न शकुनो का विस्तारपूर्वक विचार किया गया है। यात्रा करने के पूर्व शुभ शकुन और मुहूर्त का विचार अवश्य करना चाहिए। शुभ समय का प्रभाव यात्रा पर अवश्य पडता है। अत दिशाशूल का ध्यान कर शुभ समय मे यात्रा करनी चाहिए।

चौदहवें अध्याय में उत्पातो का वर्णन किया गया है। इस अध्याय मे 182 श्लोक हैं। आरम्भ मे बताया गया है कि प्रत्येक जनपद को शुभाशुभ की सूचना उत्पातो से मिलती है। प्रकृति के विपर्यय कार्य होने को उत्पात कहते हैं। यदि शीत ऋतु मे गर्मी पडे और ग्रीष्म ऋतु मे कडाके की सर्दी पडे तो उक्त घटना के नौ या दस महीने के उपरान्त महान् भय होता है। पशु, पक्षी और मनुष्यो का स्वभाव विपरीत आचरण दिखलाई पडे अर्थात् पशुओ के पक्षी या मानव सन्तान हो और स्त्रियो के पशु-पक्षी सन्तान हो तो भय और विपत्ति की सूचना समझनी चाहिए। देव प्रतिमाओ द्वारा जिन उत्पातो की सूचना मिलती है वे दिव्य उत्पात, नक्षत्र, उल्का, निर्घात, पवन, विद्युत्पात, इन्द्रधनुष आदि के द्वारा जो उत्पात दिखलायी पडते है वे अन्तरिक्ष, पार्थिव विकारो द्वारा जो विशेषताएँ दिखलाई पडती हैं वे भौमोत्पात कहलाते है। तीर्थंकर प्रतिमा से पसीना निकलना, प्रतिमा का हँसना, रोना, अपने स्थान से हटकर दूसरी जगह पहुँच जाना, छत्रभग होना, छत्र का स्वयमेव हिलना, चलना, काँपना आदि उत्पातो को अत्यधिक अशुभ समझना चाहिए। ये उत्पात व्यक्ति, समाज और राष्ट्र इन तीनो के लिए अशुभ है। इन उत्पातो से राष्ट्र मे अनेक प्रकार के उपद्रव होते हैं। घरेलू संघर्ष भी इन उत्पातो के कारण होते हैं। इस अध्याय मे दिव्य, अन्तरिक्ष और भौम तीनो प्रकार के उत्पातों का विस्तृत वर्णन किया गया है।

पन्द्रहवें अध्याय में शुक्राचार्य का वर्णन है। इसमे 230 श्लोक हैं। इसमे शुक्र के गमन, उदय, अस्त, वक्री, मार्गी आदि के द्वारा भूत-भविष्यत् का फल, वृष्टि, अवृष्टि, भय, अग्निप्रकोप, जय, पराजय, रोग, धन, सम्पत्ति आदि फलो का विवेचन किया गया है। शुक्र के छहो मण्डलो मे भ्रमण करने के फल का कथन किया है। शुक्र का नागवीथि, गजवीथि, ऐरावतवीथि, वृषवीथि, गोवीथि,

जरद्गवबीथि, अजवीथि, मृगवीथि और वैश्वानरवीथि मे भ्रमण करने का फलादेश बताया गया है। दक्षिण, उत्तर, पश्चिम और पूर्व दिशा की ओर मे शुक्र के उदय होने का तथा अस्त होने का फलादेश कहा गया है। अश्विनी, भरणी आदि नक्षत्रो मे शुक्र के अस्तोदय का फल भी विस्तारपूर्वक बताया गया है। शुक्र की आरूढ़, दीप्त, अस्तगत आदि अवस्थाओ का विवेचन भी किया गया है। शुक्र के प्रतिलोम, अनुलोम, उदयास्त, प्रवास आदि का प्रतिपादन भी किया गया है। इस अध्याय मे गणित क्रिया के बिना केवल शुक्र के उदयास्त को देखने से ही राष्ट्र का शुभाशुभ ज्ञान किया जा सकता है।

सोलहवें अध्याय मे शनिचार का कथन है। इसमे ३२ श्लोक है। शनि के उदय, अस्त, आरूढ, छत्र, दीप्त आदि अवस्थाओ का कथन किया गया है। कहा गया है कि श्रवण, स्वाति, हस्त, आर्द्रा, भरणी और पूर्वाफाल्गुनी नक्षत्र मे शनि स्थित हो, तो पृथ्वी पर जल की वर्षा होती है, सुभिक्ष, समर्घता—वस्तुओ के भावो मे ममता और और प्रजा का विकास होता है। अश्विनी नक्षत्र मे शनि के विचरण करने से अश्व, अश्वारोही, कवि, वैद्य और मन्त्रियो को हानि उठानी पडती है। शनि और चन्द्रमा के परस्पर वेध, परिवेष आदि का वर्णन भी इस अध्याय मे है। शनि के वक्री और मार्गी होने का फलादेश भी इस अध्याय मे कहा गया है।

सत्रहवे अध्याय में गुरु के वर्ण, गति, आधार, मार्गी, अस्त, उदय, वक्र आदि का फलादेश वर्णित है। इस अध्याय मे ४६ श्लोक है। बृहस्पति का, कृत्तिका, रोहिणी, मृगशिर, आर्द्रा, पुनर्वसु, पुष्य, आश्लेषा, मघा और पूर्वाफाल्गुनी इन नौ नक्षत्रो मे उत्तर मार्ग, उत्तराफाल्गुनी, हस्त, चित्रा, स्वाति, विशाखा, अनुराधा, ज्येष्ठा, मूल और पूर्वाषाढा इन नौ नक्षत्रो मे मध्यम मार्ग एव उत्तराषाढा, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा, पूर्वाभाद्रपद, उत्तराभाद्रपद, रेवती, अश्विनी और भरणी इन नौ नक्षत्रो मे दक्षिण मार्ग होता है। इन मार्गों का फलादेश इस अध्याय मे विस्तारपूर्वक निरूपित है। सवत्सर, परिवत्सर, इरावत्सर, अनुवत्सर और इद्वत्सर इन पाँचों सवत्सरो के नक्षत्रो का वर्णन फलादेश के साथ किया गया है। गुरु की विभिन्न दशाओ का फलादेश भी बतलाया गया है।

अठारहवें अध्याय मे बुध के अस्त, उदय, वर्ण, ग्रहयोग आदि का विस्तारपूर्वक वर्णन किया है। इस अध्याय मे 37 श्लोक हैं। बुध की सौम्या, विमिश्रा, सक्षिप्ता, तीव्रा, घोरा, दुर्गा और पापा इन सात प्रकार की गतियो का वर्णन किया गया है। बुध की सौम्या, विमिश्रा और सक्षिप्ता गतियाँ हितकारी है। शेष सभी गतियाँ पाप गतियाँ है। यदि बुध समान रूप से गमन करता हुआ शकटवाहक के द्वारा स्वाभाविक गति से नक्षत्र का लाभ करे तो यह बुध का नियतचार कहलाता है, इसके विपरीत गमन करने से भय होता है। बुध की

चारो दिशाओ की वीथियो का भी वर्णन किया गया है। विभिन्न ग्रहों के साथ बुध का फलादेश बताया गया है।

उन्नीसवें अध्याय में 39 श्लोक हैं। इसमे मगल के चार, प्रवास, वर्ण, दीप्ति, काष्ठ, गति, फल, वक्र और अनुवक्र का विवेचन किया गया है। मगल का चार बीस महीने, वक्र आठ महीने और प्रवास चार महीने का होता है। वक्र, कठोर, श्याम, ज्वलित, धूमवान, विवर्ण, क्रुद्ध और बायीं ओर गमन करने वाला मंगल सदा अशुभ होता है। मगल के पाँच प्रकार के वक्र बताये गये हैं—उष्ण, शोष-मुख, व्याल, लोहित और लोहमुद्गर। ये पाँच प्रधान वक्र हैं। मगल का उदय सातवे, आठवे या नवें नक्षत्र पर हुआ हो और वह लौटकर गमन करने लगे तो उसे उष्ण वक्र कहते हैं। इस उष्ण वक्र मे मगल के रहने से वर्षा अच्छी होती है विष, कीट और अग्नि की वृद्धि होती है। जनता को साधारणतया कष्ट होता है। जब मगल दसवे, ग्यारहवें और बारहवे नक्षत्र से लौटता है तो शोषमुख वक्र कहलाता है। इस वक्र मे आकाश से जल की वर्षा होती है। जब मगल राशि परिवर्तन करता है, उस समय वर्षा होती है। यदि मगल चौदहवे अथवा तेरहवे नक्षत्र से लौट आये तो यह उसका व्याल चक्र होता है। इसका फलादेश अच्छा नही होता। जब मंगल पन्द्रहवें या सोलहवे नक्षत्र से लौटता है तब लोहित वक्र कहलाता है। इसका फलादेश जल का अभाव होता है। जब मगल सत्रहवे या अठारहवे नक्षत्र से लौटता है, तब लोहमुद्गर कहलाता है। इस वक्र का फला-देश भी राष्ट्र और समाज को अहितकर होता है। इसी प्रकार मगल के नक्षत्र-भोग का भी वर्णन किया गया है।

बीसवे अध्याय में 63 श्लोक है। इस अध्याय मे राहु के गमन, रग आदि का वर्णन किया गया है। इस अध्याय में राहु की दिशा, वर्णन, गमन और नक्षत्रो के सयोग आदि का फलादेश वर्णित है। चन्द्रग्रहण तथा ग्रहण की दिशा, नक्षत्र आदि का फल भी बतलाया गया है। नक्षत्रो के अनुसार ग्रहणो का फलादेश भी इस अध्याय मे आया है।

इक्कीसवें अध्याय में 58 श्लोक हैं। इसमे केतु के नाना भेद, प्रभेद, उनके स्वरूप, फल आदि का विस्तार सहित वर्णन किया गया है। बताया गया है कि 120 वर्ष मे पाप के उदय से विषम केतु उत्पन्न होता है। इस केतु का फल ससार को उथल-पुथल करनेवाला होता है। जब विषम केतु का उदय होता है, तब विश्व मे युद्ध, रक्तपात, महामारी आदि उपद्रव अवश्य होते हैं। केतु के विभिन्न स्वरूपो का वर्णन भी इस अध्याय मे फल सहित किया है। अश्विनी आदि नक्षत्रो मे उत्पन्न होने पर केतु का फल विभिन्न प्रकार का होता है। क्रूर नक्षत्रो मे उत्पन्न होने पर केतु भय और पीडा का सूचक होता है और सौम्य नक्षत्रो मे केतु के उदय होने से राष्ट्र मे शान्ति और सुख रहता है। देश मे धन-धान्य की

वृद्धि होती है।

बाईसवें अध्याय में 21 श्लोक है। इस अध्याय मे सूर्य की विशेष अवस्थाओ का फलादेश वर्णित है। सूर्य के प्रवास, उदय और चार का फलादेश बतलाया गया है। लाल वर्ण का सूर्य अस्त्र प्रकोप करनेवाला, पीत और लोहित वर्ण का सूर्य व्याधि-मृत्यु देनेवाला और धूम्र वर्ण का सूर्य भुखमरी तथा अनेक प्रकार के रोग उत्पन्न करनेवाला होता है। सूर्य की उदयकालीन आकृति के अनुसार भारत के विभिन्न प्रदेशो के सुभिक्ष और दुर्भिक्ष का वर्णन किया गया है। स्वर्ण के समान सूर्य का रग सुखदायी होता है तथा इस प्रकार के सूर्य के दर्शन करने से व्यक्ति को सुख और आनन्द प्राप्त होता है।

तेईसवें अध्याय में 58 श्लोक है। इसमे चन्द्रमा के वर्ण, सस्थान, प्रमाण आदि का प्रतिपादन किया गया है। स्निग्ध, श्वेतवर्ण, विशालाकार और पवित्र चन्द्रमा शुभ समझा जाता है। चन्द्रमा का शृ ग—किनारा कुछ उत्तर की ओर उठा हुआ रहे तो दस्युओ का घात होता है। उत्तर शृ ग वाला चन्द्रमा अश्मक, कलिग, मालव, दक्षिण द्वीप आदि के लिए अशुभ तथा दक्षिण शृ गोन्नति वाला चन्द्र यवन देश, हिमाचल, पाचाल आदि देशो के लिए अशुभ होता है। चन्द्रमा की विभिन्न आकृति का फलादेश भी इस अध्याय मे बतलाया गया है। चन्द्रमा की गति, मार्ग, आकृति, वर्ण, मण्डल, वीथि, चार, नक्षत्र आदि के अनुसार चन्द्रमा का विशेष फलादेश भी इस अध्याय मे वर्णित है।

चौबीसवें अध्याय म 43 श्लोक है। इसमे ग्रहयुद्ध का वर्णन है। ग्रहयुद्ध के चार भेद है—भेद, उल्लेख, अशुमर्दन और अपसव्य। ग्रहभेद मे वर्षा का नाश, सुहृद और कुलीनो मे भेद होता है। उल्लेख युद्ध मे शस्त्रभय, मन्त्रि विरोध और दुर्भिक्ष होता है। अशुमर्दन युद्ध मे राष्ट्रो मे सघर्ष, अन्नाभाव एव अनेक प्रकार के कष्ट होते है। अपसव्य युद्ध मे पूर्वीय राष्ट्रो मे आन्तरिक सघर्ष होता है तथा राष्ट्रो मे वैमनस्य भी बढता है। इस अध्याय मे ग्रहो के नक्षत्रो का कथन तथा ग्रहो के वर्णों के अनुसार उनके फलादेशो का निरूपण किया गया है। ग्रहो का आपस मे टकराना धन-जन के लिए अशुभ सूचक होता है।

पच्चीसवें अध्याय मे 50 श्लोक है। इसमे ग्रह, नक्षत्रो के दर्शन द्वारा शुभा-शुभ फल का कथन किया गया है। इस अध्याय मे ग्रहो के पदार्थों का निरूपण किया गया है। ग्रहो के वर्ण और आकृति के अनुसार पदार्थों के तेज, मन्द और समत्व का परिज्ञान किया गया है। यह अध्याय व्यापारियो के लिए अधिक उपयोगी है।

छब्बीसवें अध्याय मे स्वप्न का फलादेश बतलाया गया है। इस अध्याय मे 86 श्लोक है। स्वप्न निमित्त का वर्णन विस्तार के साथ किया गया है। धनागम, विवाह, मगल, कार्यसिद्धि, जय, पराजय, हानि, लाभ आदि विभिन्न फलादेशो

की सूचना देनेवाले स्वप्नो का वर्णन किया गया है। इस अध्याय मे दृष्ट, श्रुत, अनुभूत, प्रार्थित, कल्पित, भाविक और दोषज इन सात प्रकार के स्वप्नो मे से केवल भाविक स्वप्नो का विस्तारपूर्वक वर्णन किया गया है।

सत्ताईसवें अध्याय मे कुल 13 श्लोक हैं। इस अध्याय मे वस्त्र, आसन, पादुका आदि के छिन्न होने का फलादेश कहा गया है। यह छिन्न निमित्त का विषय है। नवीन वस्त्र धारण करने मे नक्षत्रो का फलादेश भी बताया गया है। शुभ मुहूर्त मे नवीन वस्त्र धारण करने से उपभोक्ता का कल्याण होता है। मुहूर्त का उपयोग तो सभी कार्यों मे करना चाहिए।

परिशिष्ट में दिये गये 30वें अध्याय में अरिष्टो का वर्णन किया गया है। मृत्यु के पूर्व प्रकट होने वाले अरिष्टो का कथन विस्तारपूर्वक किया गया है। पिण्डस्थ, पदस्थ और रूपस्थ तीनो प्रकार के अरिष्टो का कथन इस अध्याय मे किया गया है। शरीर मे जितने प्रकार के विकार उत्पन्न होते हैं उन्हे पिण्डस्थ अरिष्ट कहा गया है। यदि कोई अशुभ लक्षण के रूप मे चन्द्रमा, सूर्य, दीपक या अन्य किसी वस्तु को देखता है तो ये सब अरिष्ट मुनियो के द्वारा पदस्थ—बाह्य वस्तुओ से सम्बन्धित कहलाते हैं। आकाशीय दिव्य पदार्थों का शुभाशुभ रूप मे दर्शन करना, कुत्ते, बिल्ली, कौआ आदि प्राणियो की दृष्टानिष्ट सूचक आवाज का सुनना या उनकी अन्य किसी प्रकार की चेष्टाओ को देखना पदस्थ अरिष्ट कहा गया है। पदस्थ अरिष्ट मे मृत्यु की सूचना दो-तीन वर्ष पूर्व भी मिल जाती है। जहाँ रूप दिखलाया जाय वहाँ रूपस्थ अरिष्ट कहा जाता है। यह रूपस्थ अरिष्ट छाया पुरुष, स्वप्नदर्शन, प्रत्यक्ष, अनुमानजन्य और प्रश्न के द्वारा अवगत किया जाता है। छायादर्शन द्वारा आयु का ज्ञान करना चाहिए। उक्त तीनो प्रकार के अरिष्ट व्यक्ति की आयु की सूचना देते है।

भद्रबाहुसंहिता की बृहत्सहिता से तुलना तथा ज्योतिष शास्त्र में उसका स्थान

भद्रबाहु सहिता के कई अध्याय विषय की दृष्टि से बृहत्सहिता से मिलते है। भद्रबाहु सहिता के दूसरे और तीसरे अध्याय बृहत्सहिता के 33वे अध्याय से मिलते है। दूसरे अध्याय मे उल्काओ का स्वरूप और तीसरे अध्याय मे उल्काओ का फल वर्णित है। उल्का की परिभाषा का वर्णन कहते हुए कहा है—

भौतिकानां शरीराणां स्वर्गात् प्रच्यवतामिह।
सम्भवश्चान्तरिक्षे तु तज्ज्ञैरुल्केति संज्ञिता॥
तत्र तारा तथा धिष्ण्यं विद्युच्चाशनिभि सह।
उल्काविकारा बोद्धव्या ते पतन्ति निमित्तत.॥

—अ० 2, श्लो० 5-6

इसी आशय को वराहमिहिर ने निम्न श्लोको मे प्रकट किया है—

दिवि भुक्तशुभफलाना पतता रूपाणि यानि तान्युल्का: ।
धिष्ण्योल्काशनिविद्युत्ताए इति पंचधा भिन्ना ॥
—अ० 30, श्लो० 1

भद्रबाहुसहिता के दूसरे अध्याय के 8, 9वाँ श्लोक वाराहीसहिता के 33वे अध्याय के 3, 4 और 8वे श्लोक के समान हैं । भाव साम्य के साथ अक्षर साम्य भी प्रायः मिलता है । भद्रबाहुसहिता के तीसरे अध्याय का 5, 9, 16, 18, 19वाँ श्लोक वाराही सहिता के 33वे अध्याय के 9, 10, 12, 15, 16, 18 और 19वें श्लोक से प्राय. मिलते है । भाव की दृष्टि से दोनो ग्रन्थो मे आश्चर्यजनक समता है ।

अन्तर इतना है कि वाराही सहिता मे जहाँ विषय वर्णन मे सक्षेप किया है, वहाँ भद्रबाहुसहिता मे विषय का विस्तार है । प्रत्येक विषय को विस्तार के साथ समझाने की चेष्टा की है । फलादेशो मे भी कही-कही अन्तर है, एक बात या परिस्थिति का फलादेश वाराही सहिता से भद्रबाहुसहिता मे पृथक् है । कही-कही तो यह पृथकता इतनी बढ गयी है कि फल विपरीत दिशा ही दिखलाता है ।

परिवेष का वर्णन भद्रबाहुसहिता के चौथे अध्याय मे और वाराही सहिता के 34वे अध्याय मे है । भद्रबाहुसहिता के इस अध्याय के तीसरे और सोलहवे श्लोक मे खण्डित परिवेषो को अनिष्टकारी कहा गया है । चाँदी और तेल के समान वर्ण वाले परिवेष सुभिक्ष करनेवाले कहे गये है । यह कथन वाराही संहिता के 34वे अध्याय क 4 और 5वे श्लोक से मिलता-जुलता है । परिवेश प्रकरण के 8, 14, 20, 28, 29, 37, 38वाँ श्लोक वाराही सहिता के 34वे अध्याय के 6, 9, 10, 11, 12, 13, 14, 15, एव 37वे श्लोक से मिलते है । भाव मे पर्याप्त साम्य है । दोनो ग्रन्थो का फलादेश तुल्य है । परिवेष के नक्षत्र तिथियो एव वर्णों का फलकथन भद्रबाहुसहिता मे नही है, किन्तु वाराही सहिता मे ये विषय कुछ विस्तृत और व्यवस्थित रूप मे वर्णित है । प्रकरणो मे केवल विस्तार ही नही है, विषय का गाम्भीर्य भी है । भद्रबाहुसंहिता के परिवेश अध्याय मे विस्तार के साथ पुनरुक्ति भी विद्यमान है ।

भद्रबाहुसहिता का 12वाँ अध्याय मेघ-गर्भलक्षणाध्याय है । इसके चौथे और सातवे श्लोक मे बताया है कि सात-सात महीने और सात-सात दिन मे गर्भ पूर्ण परिपक्व अवस्था को प्राप्त होता है । वाराही सहिता मे (अ० 22 श्लो० 7) मे 195 दिन कहा गया है । अत. स्थूल रूप से दोनो कथनो मे अन्तर मालूम पडता है, पर वास्तविक मे दोनो कथन एक है । भद्रबाहुसहिता मे नाक्षत्र मास ग्रहीत है, जो 27 दिन का होता है, अत' यहाँ 196 दिन आते है । वाराहमिहिर

गत 195 दिन तथा वर्तमान 196वाँ दिन ही माना है, जो भद्रबाहुसंहिता के नाक्षत्र मास के तुल्य है। गर्भ का धारण और वर्षण प्रभाव सामान्यतया एक हैं, परन्तु भद्रबाहु सहिता के कथन मे विशेषता है। भद्रबाहुसहिता मे गर्भधारण का वर्णन महीनो के अनुसार किया है। वाराहीसहिता मे यह कथन नही है।

उत्पात प्रकरण दोनो ही सहिताओ मे है। भद्रबाहुसंहिता के चौदहवे अध्याय मे और वाराही सहिता के छियालीसवे अध्याय मे यह प्रकरण है। भद्रबाहु संहिता मे उत्पातो के दिव्य, अन्तरिक्ष और भौम ये तीन भेद किये है तथा इनका वर्णन बिना किसी क्रम के मनमाने ढग से किया है। इस ग्रन्थ के वर्णन मे किसी भी प्रकार का क्रम नही है। दिव्य उत्पातो के साथ भौम उत्पातो का वर्णन भी किया गया है। पर वाराही सहिता मे अशुभ, अनिष्टकारी, भयकारी, राजभयोत्पादक, नगरभयोत्पादक, सुभिक्षदायक आदि का वर्णन सुव्यवस्थित ढग मे किया है। लिगवैकृत, अग्निवैकृत वृक्षवैकृत, सस्यवैकृत, जलवैकृत, प्रसववैकृत, चतुष्पादवैकृत, वायव्यवैकृत, मृगपक्षी विकार एव शक्रध्वजेन्द्रकीलवैकृत इत्यादि विभागो का वर्णन किया है। वाराहमिहिर का यह उत्पात प्रकरण भद्रबाहुसहिता के उत्पात प्रकरण की अपेक्षा अधिक विस्तृत और व्यवस्थित है। वैसे वाराहमिहिर ने केवल 99 श्लोको मे उत्पात का वर्णन किया है, जबकि भद्रबाहुसहिता मे 182 श्लोको मे उत्पातो का कथन किया गया है। उत्पात का लक्षण प्राय दोनो का समान है। 'प्रकृतेर्यो विपर्यास स उत्पात प्रकीर्तित' (भ० स० 14, 2) तथा वाराह ने 'प्रकृतेरन्यत्वमुत्पात' (वा० स० 46, 1)। इन दोनो लक्षणो का तात्पर्य एक ही है। राजमन्त्री, राष्ट्रसम्बन्धी फलादेश प्राय दोनो ग्रन्थो मे समान है।

शुक्रचार दोनो ही ग्रन्थो मे है। भद्रबाहुसहिता के पन्द्रहवे अध्याय मे और वाराही सहिता के नौवे अध्याय मे यह प्रकरण आया है। उल्का, सन्ध्या, वात, गन्धर्वनगर आदि तो आकस्मिक घटनाएँ है, अत दैनन्दिन शुभाशुभ को अवगत करने के लिए ग्रहचार का निरूपण करना अत्यावश्यक है। यही कारण है कि सहिताकारो ने ग्रहो के वर्णनो को भी अपने ग्रन्थो मे स्थान दिया है। राष्ट्रविप्लव, राजभय, नगरभय, सग्राम, महामारी, अतिवृष्टि, अनावृष्टि, सुभिक्ष, दुर्भिक्ष आदि का विवेचन ग्रहो की गति के अनुसार करना ही अधिक युक्तिसगत है। अतएव संहिताकारो ने ग्रहो के चार को स्थान दिया है। शुक्रचार को अन्य ग्रहो की अपेक्षा अधिक उपयोगी और बलवान कहा गया है।

शुक्र के गमन-मार्ग को, जो कि 27 नक्षत्रात्मक है, वीथियो मे विभक्त किया गया है। नाग, गज, ऐरावण, वृषभ, गो, जरद्गव, अज, मृग और वैश्वानर ये वीथियाँ भद्रबाहुसहिता मे आयी है (15 अ० 44-48 श्लो०) और नाग, गज, ऐरावत, वृषभ, गो, जरद्गव, मृग और दहन ये वीथियाँ वाराही सहिता

(9 अ० 1 श्लो०) मे आयी है। इन वीथियो मे भद्रबाहु संहिता मे अज नाम की वीथि एक नयी है तथा ऐरावत के स्थान पर ऐरावण और दहन के स्थान पर वैश्वानर वीथियाँ आयी है। इस निरूपण मे केवल शब्दो का अन्तर है, भाव मे कोई अन्तर नही है। भद्रबाहुसंहिता मे भरणी से लेकर चार-चार नक्षत्रो का एक-एक मण्डल बताया गया है। कहा है—

भरण्यादीनि चत्वारि चतुर्नक्षत्रकाणि हि।
षडेव मण्डलानि स्युस्तेषा नामानि लक्षयेत्॥
चतुष्कं च चतुष्कञ्च पंचकं त्रिकमेव च।
पंचकं षट्क विज्ञेयो भरण्यादौ तु भार्गव॥

—भ० सं०, 15 अ० 7,9 श्लो०

वाराही संहिता के 9वे अध्याय के 10, 11, 12, 13, 14, 15, 16, 17, 18, 19, 20वे श्लोक मे उपर्युक्त बात का कथन है। भद्रबाहुसंहिता के अगले श्लोको मे फलादेश का भी वर्णन किया गया है, जबकि वाराही संहिता मे मण्डल के नक्षत्र और फलादेश साथ-साथ वर्णित है। शुक्र के नक्षत्र-भेदन का फल दोनो ग्रन्थो मे रूपान्तर है। भद्रबाहुसंहिता मे कहा गया है कि शुक्र यदि रोहिणी नक्षत्र मे आरोहण करे तो भय होता है। पाण्डय, केरल, चोल, कर्नाटक, चेदि, चेर और विदर्भ आदि देशो मे पीडा और उपद्रव होता है। वाराही संहिता मे भी मृगशिर नक्षत्र का भेदन या आरोहण अशुभ माना गया है। वाराही संहिता के शुक्रचार मे केवल 45 श्लोक है, जबकि भद्रबाहुसंहिता मे 231 श्लोक है। इसमे विस्तारपूर्वक शुक्र के गमन, उदय एव अस्त आदि का वर्णन किया गया है। वाराही संहिता की अपेक्षा इसमे कई नयी बाते है।

भद्रबाहुसंहिता और वाराही संहिता मे शनैश्चर चार नामक अध्याय आया है। यह भद्रबाहुसंहिता का 16वाँ अध्याय और वाराही संहिता का दसवाँ अध्याय है। वाराही संहिता का यह वर्णन भद्रबाहुसंहिता के वर्णन की अपेक्षा अधिक विस्तृत और ज्ञानवर्धक है। वाराही संहिता मे प्रत्येक नक्षत्र के भोगानुसार फलादेश कहा गया है, इस प्रकार के वर्णन का भद्रबाहु संहिता मे अभाव है। भद्रबाहुसंहिता मे कहा गया है कि कृत्तिका मे शनि और विशाखा मे गुरु हो तो चारो ओर दारुणता व्याप्त हो जाती है तथा वर्षा खूब होती है। शनि के रग का फलादेश लगभग समान है। भद्रबाहु संहिता मे बताया गया है—

श्वेते सुभिक्ष जानीयात् पाण्डु-लोहितके भयम्।
पीतो जनयते व्याधिं शस्त्रकोपं च दारुणम्॥
कृष्णे शुष्यन्ति सरितो वासवश्च न वर्षति।
स्नेहवानथ गृह्णाति रूक्ष शोषयते प्रजा॥

—भ० सं०, अ० 16, श्लो० 26-27

वाराही सहिता में शनि के वर्ण का फलादेश निम्न प्रकार बताया है—

अण्डजहा रविजो यदि चित्रः क्षुद्भयकृद्यदि पीतमयूख. ।
शस्त्रभयाय च रक्तवर्णो भस्मनिभो बहुवैरकरश्च ।।
वैदूर्यकान्तिरमल शुभदः प्रजानां बाणातसीकुसुमवर्णनिभश्च शस्तः ।
यंचापि वर्णमुपगच्छति तत्सवर्णान् सूर्यात्मज क्षपयतीति मुनिप्रवाद ।।
—वा० सं०, अ० 10, श्लो० 20-21

भ० स० मे कहा है कि श्वेत शनि का रग हो तो सुभिक्ष, पाण्डु और लोहित रग का होने पर भय एव पीतवर्ण होने पर व्याधि और भयकर शस्त्रकोप होता है। शनि के कृष्ण वर्ण होने पर नदियाँ सूख जाती है और वर्षा नही होती है। स्निग्ध होने पर प्रजा मे सहयोग और रूक्ष होने पर प्रजा का शोषण होता है।

वाराही—सहिता मे यदि शनि अनेक रग वाला दिखाई दे तो अंडज प्राणियो का नाश होता है। पीतवर्ण होने से क्षुधा और भय होता है। समवर्ण होने से शस्त्रभय और भस्म के समान रग होने से अत्यन्त अशुभ होता है। यदि शनि वैदूर्यमणि के समान कान्तिमान् और निर्मल हो तो प्रजा का अत्यन्त अशुभ होता है। तुलनात्मक दृष्टि से विचार करने पर दोनो ग्रन्थो के शनिवर्ण फल मे पर्याप्त अन्तर है।

भद्रबाहुसहिता मे (18, 20, 21, श्लो० मे) चन्द्र और शनि के योग का फलादेश बतलाया गया है, जो वाराही सहिता मे नही है। सयोग फल भ० स० का महत्त्वपूर्ण है और यह एक नवीन प्रकरण है।

वृहस्पति चार का कथन भ० स० के 17वे अध्याय और वा० स० के 8वें अध्याय मे आया है। निस्सन्देह भद्रबाहुसहिता का यह प्रकरण फलादेश की दृष्टि से वाराही सहिता की अपेक्षा महत्त्वपूर्ण है। यद्यपि विस्तार की दृष्टि से वाराही सहिता का प्रकरण भ० स० की अपेक्षा बडा है। एक से निमित्तो का भी फलादेश समान नही है। उदाहरण के लिए कतिपय बार्हस्पति-सवत्सरो का फलादेश दोनो ग्रन्थो से उद्धृत किया जाता है—

माघमल्पोदकं विद्यात् फाल्गुने दुर्भगा. स्त्रियः।
चैत्रं चित्रं विजानीयात् सस्यं तोय सरीसृपाः ।।
विशाखा नृपभेदश्च पूर्णतोयं विनिर्दिशेत्।
ज्येष्ठा-मूले जलं पश्चाद् मित्र-भेदश्च जायते ।।
आषाढे तोयसंकीर्णं सरीसृपसमाकुलम्।
श्रावणे दंष्ट्रिणश्चौरा व्यालाश्च प्रबला: स्मृता. ।।
—भ० सं०, 17 अ० 29-31

अर्थ—माघ नाम का वर्ष हो तो अल्प वर्षा होती है, फाल्गुन नाम का वर्ष

हो तो स्त्रियो का कुभाग्य बढता है। चैत्र नाम के वर्ष मे धान्य और जल-वृष्टि विचित्र रूप मे होती है तथा सरीसृपो की वृद्धि होती है। वैशाख नामक सवत्सर मे राजाओ मे मतभेद होता है और जल की अच्छी वर्षा होती है। ज्येष्ठ नामक वर्ष मे अच्छी वर्षा होती है और मित्रो मे मतभेद बढता है। आषाढ नामक वर्ष मे जल की कमी होती है, पर कही-कही अच्छी वर्षा भी होती है। श्रावण नामक वर्ष मे दाँत वाले जन्तु प्रबल होते है। भाद्र नामक सवत्सर मे शस्त्रकोप, अग्नि-भय, मूर्च्छा आदि फल होते है और आश्विन नामक सवत्सर मे सरीसृपो का अधिक भय रहता है।

वाराही सहिता मे यही प्रकरण निम्न प्रकार मिलता है—

शुभकृज्जगत पौषो निवृत्तवैरा. परस्परं क्षितिपा ।
द्वित्रिगुणो धान्यार्घ. पौष्टिककर्मप्रसिद्धिश्च ।।
पितृपूजापरिवृद्धिर्माघे हार्दं च सर्वभूतानाम ।
आरोग्यवृष्टिधान्यार्घसम्पदो मित्रलाभश्च ।।
फाल्गुने वर्षे विद्यात् क्वचित् क्वचित् क्षेमवृद्धिसस्यानि ।
दौर्भाग्य प्रमदाना प्रबलाश्चौरा नृपाश्चोग्रा ।।
चैत्रे मन्दा वृष्टि प्रियमन्नक्षेममवनिपा मृदव ।
वृद्धिस्तु कोशधान्यस्य भवति पीडा च रूपवताम् ।।
वैशाखे धर्मपरा विगतभया प्रमुदिता प्रजा सनृपा ।
यज्ञक्रियाप्रवृत्तिर्निष्पत्तिः सर्वसस्यानाम् ।।
—वा० स० 8 अ० 5-9 श्लो०

अर्थ—पौष नामक वर्ष मे जगत् का शुभ होता है, राजा आपम मे वैरभाव का त्याग कर देते है। अनाज की कीमत दूनी या तिगुनी हो जाती है और पौष्टिक कार्य की वृद्धि होती है। माघ नाम के वर्ष मे पितृ लोगो की पूजा बढती है, सर्व प्राणियो का हार्द होता है, आरोग्य, सुवृष्टि और धान्य का मोल सम रहता है, मित्रलाभ होता है। फल्गुन नाम वाले वर्ष मे कही-कही क्षेम और अन्न की वृद्धि होती है, स्त्रियो का कुभाग्य, चोरो की प्रबलता और राजाओ मे उग्रता होती है। चैत्र नाम के वर्ष मे साधारण वृष्टि होती है, राजाओ मे सन्धि, कोष और धान्य की वृद्धि और रूपवान् व्यक्तियो को पीडा होती है। वैशाख नामक वर्ष मे राजा-प्रजा दोनो ही धर्म मे तत्पर रहते है, भय शून्य और हर्षित होते है, यज्ञ करते है और समस्त धान्य भलीभाँति उत्पन्न होते है। (ज्येष्ठ नामक वर्ष मे राजा लोग धर्मज्ञ और मेल-मिलाप से रहते हैं। आषाढ नामक वर्ष मे समस्त धान्य पैदा होते है, कही-कही अनावृष्टि भी रहती है। श्रावण नामक वर्ष मे अच्छी फसल पैदा होती है। भाद्रपद नामक वर्ष मे लता जातीय समस्त पूर्व धान्य अच्छी तरह पैदा होते हैं

और आश्विन नामक वर्ष मे अत्यन्त वर्षा होती है।)

तुलनात्मक दृष्टि मे विचार करने पर दोनो वर्णनो मे बहुत अन्तर है। विषय एक होने पर भी फल-कथन करने की शैली भिन्न है। इसी अध्याय मे गुरु की विभिन्न गतियो का फलादेश भी कहा गया है।

बुधचार भ० स० के 18वें अध्याय और वा० स० के 7वे अध्याय मे आया है। भ० स० के 18वें अध्याय के द्वितीय श्लोक मे बुध की सौम्या, विमिश्रा, सक्षिप्ता, तीव्रा, घोरा, दुर्गा और पापा ये सात प्रकार की गतियाँ बतलायी गयी है। वा० स० के 7वे श्लोक मे बुध की प्रकृता, विमिश्रा, सक्षिप्ता, तीक्ष्णा, योगान्ता, घोरा और पापा इन गतियो का उल्लेख किया है। तुलना करने से ज्ञात होता है कि भ० स० मे जिसे सौम्या कहा है, उसी को वा० स० मे प्रकृता; जिसे भ० स० मे तीव्रा कहा है, उसे वा० स० मे तीक्ष्णा, भ० स० मे जिसे दुर्गा कहा है, उसे वा० स० मे योगान्ता कहा है। इन गतियो के फलादेशो मे भी अन्तर है। वाराहमिहिर ने सभी प्रकार की गतियो की दिन सख्या भी बतलायी है, जब कि भ० स० इस विषय पर मौन है। अस्तु, उदय और वक्री आदि का कथन भ० स० मे कुछ अधिक है, जब कि वा० स० मे नाम मात्र को है।

अगारकचार, राहुचार, केतुचार, सूर्यचार और चन्द्रचार विषयक वर्णनो की दोनो ग्रन्थो मे बहुत कुछ समता है। कतिपय श्लोको के भाव ज्यो-के-त्यो मिलते है।

भद्रबाहुसहिता का अगारकचार विस्तृत है, वाराहीसहिता का सक्षिप्त। वर्णन प्रक्रिया मे भी दोनो मे अन्तर है। भद्रबाहुसहिता (अ० 19, श्लोक 11) मे मगल के वक्री का कथन करते हुए कहा है कि मगल के उष्ण, शोषमुख, व्याल, लोहित और लोहमुद्गर ये पाँच प्रधान वक्र है। ये वक्र मगल के उदय नक्षत्रों की अपेक्षा से बताये गये है। वाराही सहिता मे (अ० 6 श्लो० 1-5) उष्ण, अश्रुमुख, व्याल, रुधिरानन और असिमुसल इन वक्रो का उल्लेख किया है। इन वक्रो मे पहले और तीसरे वक्र के नाम दोनो मे एक है, शेष नाम भिन्न हैं। दूसरी बात यह है कि भ० स० मे सभी वक्र उदय नक्षत्र के अनुसार वर्णित हैं, किन्तु वाराही सहिता मे व्याल, रुधिरानन और असिमुसल को अस्त नक्षत्रो के अनुसार बताया गया है। भ० स० (19, 25-34) मे कहा गया है कि कृत्तिकादि सात नक्षत्रो मे मगल गमन करे तो कष्ट, माघादि सात नक्षत्रो मे विचरण करे तो भय, अनुराधादि सात नक्षत्रो मे विचरण करे तो अनीति, धनिष्ठादि सात नक्षत्रो मे विचरण करे तो निन्दित फल होता है। वा० स० (6, 11-12) मे बताया गया है कि रोहिणी, श्रवण, मूल, उत्तराफाल्गुनी, उत्तराषाढा, उत्तराभाद्रपद या ज्येष्ठा नक्षत्र मे मंगल का विचरण हो तो मेघो का नाश एव श्रवण, मघा, पुनर्वसु, मूल, हस्त, पूर्वाभाद्रपद, अश्विनी, विशाखा और रोहिणी नक्षत्र मे विचरण करता है

तो शुभ होता है। इस प्रकार वाराही संहिता में समस्त नक्षत्रों पर मंगल के विचरण का फल नहीं, जबकि भद्रबाहु संहिता में है। भ० सं० (19;1) में प्रतिज्ञानुसार मंगल के चार, प्रवास, वर्ण, दीप्ति, काष्ठा, गति, फल, वक्र और अनुवक्र का फलादेश बताया गया है।

राहुचार का निरूपण भद्रबाहु संहिता के 20वें अध्याय में और वाराही संहिता के पाँचवें अध्याय में आया है। वाराही संहिता में यह प्रकरण खूब विस्तार के साथ दिया गया है, पर भद्रबाहु संहिता में संक्षिप्त रूप से आया है। भद्रबाहु संहिता (20, 2, 57) में राहु का श्वेत, सम, पीत और कृष्ण वर्ण क्रमश: ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्रों के लिए शुभाशुभ निमित्तक माना गया है, पर वाराही संहिता (5, 53-57) में हरे रंग का राहु रोगसूचक, कपिल वर्ण का राहु म्लेच्छों का नाश एवं दुर्भिक्षसूचक, अरुण वर्ण का राहु दुर्भिक्षसूचक, कपोत, अरुण, कपिल वर्ण का राहु भयसूचक, पीत वर्ण का वैश्यों का नाशसूचक, दूर्वादल या हल्दी के समान वर्ण वाला राहु मरीसूचक एवं धूलि या लाल वर्ण का राहु क्षत्रियनाशक होता है। इस विवेचन से स्पष्ट है कि राहु के वर्ण का फल वाराही संहिता में अधिक व्यापक वर्णित है। वाराही संहिता के आरम्भिक 26-27 श्लोकों में जहाँ ग्रहण का ही कथन है, वहाँ भद्रबाहुसंहिता में आरम्भ से ही राहुनिमित्तों पर विचार किया गया है। वाराही संहिता (5, 42-52) में ग्रहण के ग्रास के सव्य, अपसव्य, लेह, ग्रसन, निरोध, अवमर्द, आरोह, अघ्रात, मध्यतम और तमोनय ये दस भेद बताये हैं तथा इनका लक्षण और फलादेश भी कहा गया है। भद्रबाहु संहिता में ग्रहण का फल साधारण रूप से कहा गया है, विशेष रूप से तो राहु और चन्द्रमा की आकृति, रूप-रंग, चक्र-भंग आदि निमित्तों का ही वर्णन किया है। निमित्तों की दृष्टि में यह अध्याय वाराही संहिता के पाँचवें अध्याय की अपेक्षा अधिक उपयोगी है।

भद्रबाहु संहिता के 21वें अध्याय में और वाराही संहिता के 11वें अध्याय में केतुचार का वर्णन आया है। वाराही संहिता में केतुओं का वर्णन दिव्य, अन्तरिक्ष और भौम इन तीन स्थूल भेदों के अनुसार किया गया है। केतुओं की विभिन्न संख्यायें इसमें आयी है। भद्रबाहुसंहिता में इस प्रकार का विस्तृत वर्णन नहीं आया है। भ० सं० (21, 6-7-18) में केतु की आकृति और वर्ण के अनुसार फलादेश बताया गया है। केतु का गमन कृत्तिका से लेकर भरणी तक दक्षिण, पश्चिम और उत्तर इन तीन दिशाओं में जानना चाहिए। नौ-नौ नक्षत्र तक केतु एक दिशा में गमन करता है। वाराही संहिता (11, 53-59) में बताया है कि केतु अश्विनी नक्षत्र का स्पर्श करे तो अश्मक देश का विनाश, भरणी में किरातपति, कृत्तिका में कलिंगराज, रोहिणी में शूरसेन, मृगशिरा में उशीनरराज, आर्द्रा में मत्स्यराज, पुनर्वसु में अश्मकनाथ, पुष्य में मगधाधिपति, आश्लेषा में असिकेश्वर,

मघा नक्षत्र मे अगराज, पूर्वाफाल्गुनी मे पाण्ड्यनरपति, उत्तराफाल्गुनी मे उज्जयिनी स्वामी, हस्त मे दण्डाधिपति, चित्रा मे कुरुक्षेत्रराज, स्वाति मे काश्मीर, विशाखा मे इक्ष्वाकु, अनुराधा मे पुण्ड्रदेश, ज्येष्ठा मे चक्रवर्ती का विनाश, मूल मे मद्रराज, एव पूर्वाषाढा मे काशीपति का विनाश होता है। इस प्रकार प्रत्येक नक्षत्र का फलादेश पृथक्-पृथक् रूप से बताया गया है। केतुओ मे श्वेतकेतु और धूम केतु का फल प्राय दोनो ग्रन्थो मे समान है।

भद्रबाहु सहिता के 22वे अध्याय मे सूर्यचार का कथन है तथा यह प्रकरण वाराही सहिता के तीसरे अध्याय मे आया है। भद्रबाहुसहिता (22, 2) मे बताया गया है कि अच्छी किरणो वाला, रजत के समान कान्तिवाला, स्फटिक के समान निर्मल, महान् कान्ति वाला सूर्य राजकल्याण और सुभिक्ष प्रदान करता है। वाराही सहिता (3, 40) मे आया है कि निर्मल, गोलमण्डलाकार, दीर्घ निर्मल किरण वाला, विकाररहित शरीर वाला, चिह्न रहित मण्डलवाला जगत् का कल्याण करता है। दोनो की तुलना करने मे दोनो मे बहुत साम्य प्रतीत होता है। सूर्य के वर्ण का कथन करते समय कहा गया है कि अमुक वर्ण का सूर्य इष्ट या अनिष्ट करता है। इस प्रकरण मे भद्रबाहुसहिता (22, 3-4, 16-17) और वाराहीसहिता (3, 25, 29, 30) मे बहुत कुछ साम्य है। अन्तर इतना ही है कि वाराहीसहिता मे इस प्रकरण का विस्तार किया गया है, पर भद्रबाहु सहिता मे सक्षेप रूप से ही कथन किया गया है।

चन्द्रचार का कथन भद्रबाहुसहिता के 23वे अध्याय मे और वाराहीसहिता के चौथे अध्याय मे आया है। भ० स० (23, 3, 4) मे चन्द्र शृ गोन्नति का जैसा विवेचन किया गया है, लगभग वैसा ही विवेचन वाराही सहिता (4, 16) मे भी मिलता है। भद्रबाहुसहिता (23, 15-16) मे ह्रस्व, रूक्ष और काला चन्द्रमा भयोत्पादक तथा स्निग्ध, शुक्ल और सुन्दर चन्द्र सुखोत्पादक तथा समृद्धिकारक माना गया है। श्वेत, पीत, सम और कृष्ण वर्ण का चन्द्रमा क्रमश: ब्राह्मणादि चारो वर्णो के लिए सुखद माना गया है। सुन्दर चन्द्र सभी के लिए सुखदायक होता है। वाराही सहिता (4; 29-30) में बताया गया है कि भस्म-तुल्य रूखा, अरुण वर्ण, किरणहीन, श्यामवर्ण चन्द्रमा भयकारक एव सग्राम-सूचक होता है। हिमकण, कुन्दपुष्प, स्फटिकमणि के समान चन्द्रमा जगत् का कल्याण करने वाला होता है। उपर्युक्त दोनो वर्णन तुल्य हैं। भद्रबाहुसंहिता में चन्द्र शृंगोन्नति का उतना विस्तार नही है, जितना विस्तार वाराही सहिता मे है। तिथियो के अनुसार विकृत वर्ण के चन्द्रमा का जितना विस्तृत फलादेश भद्रबाहु सहिता (23, 9-14) मे आया है, उतना वाराही सहिता मे नही। इसी प्रकार चन्द्रमा मे अन्य ग्रहो के प्रवेश का कथन भद्रबाहु सहिता (23, 17-19) मे अपने ढग का है। चन्द्रमा की वीथियो का कथन भ० स० (22; 25-30) मे है, यह

कथन वाराह के कथन से भिन्न है।

गृहयुद्ध की चर्चा भ० सं० के 24वे अध्याय मे और वाराही संहिता के 17वे अध्याय मे आयी है। इस विषय का निरूपण जितना विस्तार के साथ वाराही संहिता मे आया है, उतना भद्रबाहु संहिता मे नही। यद्यपि भद्रबाहु संहिता के इस प्रकरण मे 43 श्लोक है और वाराही संहिता मे 27 श्लोक, पर विषय का प्रतिपादन जितना जमकर वाराही संहिता मे हुआ है, उतना भद्रबाहु संहिता मे नही।

उपर्युक्त विवेचन से यह स्पष्ट है कि भद्रबाहु संहिता विषय एव भाषाशैली की दृष्टि उतनी व्यवस्थित नही है, जितनी वाराही संहिता। भद्रबाहु संहिता के दो-चार स्थल विस्तृत अवश्य है, पर एकाध स्थल ऐसे भी हैं, जो स्पष्ट नही हुए हैं, जहाँ कुछ और कहने की आवश्यकता रह गयी है। एक बात यह भी है कि भद्रबाहु संहिता मे कथन की पुनरुक्ति भी पायी जाती है। छन्दोभग, व्याकरणदोष, शिथिलता एवं विषय विवेचन मे अक्रमता आदि दोष प्रचुर मात्रा मे वर्तमान है। फिर भी इतना सत्य है कि निमित्तो का यह सकलन किन्ही दृष्टियो से वाराही संहिता की अपेक्षा उत्कृष्ट है। स्वप्न निमित्त एव यात्रा निमित्तो का वर्णन वाराही संहिता की अपेक्षा अच्छा है। इन निमित्तो मे विषय सामग्री भी प्रचुर परिणाम मे दी गयी है।

भद्रबाहु संहिता का ज्योतिष शास्त्र मे महत्त्वपूर्ण स्थान माना जायगा। 'वसन्तराज शाकुन' और 'अद्भुत सागर' जैसे सकलित ग्रन्थ विषय विवेचन की दृष्टि से आज महत्त्वपूर्ण माने जाते है। इन ग्रन्थो मे निमित्तो का सागोपाग विवेचन विद्यमान है। प्रस्तुत भद्रबाहु संहिता भी जितने अधिक विषयो का एक साथ परिचय प्रस्तुतत करती है, उतने अधिक विषयों से परिचित कराने वाले ग्रन्थ ज्योतिष शास्त्र मे भरे पड़े है। फिर भी वाराही संहिता के अतिरिक्त ऐसा एक भी ग्रन्थ नही है, जिसे हम भद्रबाहुसंहिता की तुलना के लिए ले सके। जैन-ज्योतिष के ग्रन्थ तो अभी बहुत ही कम उपलब्ध है और जो उपलब्ध भी हैं उनका भी प्रकाशन अभी शेष है। अत जैन-ज्योतिष-साहित्य मे इस ग्रन्थ की समता करने वाला कोई ग्रन्थ नही है। प्रश्नाग पर जैनाचार्यों ने बहुत कुछ लिखा है, पर अष्टाग निमित्त के सम्बन्ध मे इस एक ही ग्रन्थ मे बहुत लिखा गया है।

अष्टाग निमित्त का सागोपाग वर्णन इसी अकेले ग्रन्थ मे है। अभी इस ग्रन्थ का जितना भाग प्रकाशित किया जा रहा है, उतने मे सभी निमित्त नही आते है। लक्षण और व्यजन बिल्कुल छूटे हुए है। परन्तु इस ग्रन्थ के आद्योपान्त अवलोकन से ऐसा लगता है कि इसके अन्तर्गत ये दो निमित्त भी अवश्य रहे होगे तथा वास्तु—प्रासाद, मूर्ति आदि के सम्बन्ध मे भी प्रकाश डाला गया होगा। संक्षेप मे हम इतना ही कह सकते है कि जैनेतर ज्योतिष मे वाराही संहिता का जो स्थान

है, वही स्थान जैन-ज्योतिष में भद्रबाहुसंहिता का है। निमित्त ज्ञान के विषय को इतने विस्तार के साथ उपस्थित करना इसी ग्रन्थ का कार्य है।

भद्रबाहु संहिता के रचयिता और उनका समय

इस ग्रन्थ का रचयिता कौन है और इसकी रचना कब हुई है, यह अत्यन्त विचारणीय है। यह ग्रन्थ भद्रबाहु के नाम पर लिखा गया है, क्या सचमुच मे द्वादशांगवाणी के ज्ञाता श्रुतकेवली भद्रबाहु इसके रचयिता हैं या उनके नाम पर यह रचना किसी दूसरे के द्वारा लिखी गयी है। परम्परा से यह बात प्रसिद्ध चली आ रही है कि भगवान् वीतरागी, सर्वज्ञ भाषित निमित्तानुसार श्रुतकेवली भद्रबाहु ने किसी निमित्त शास्त्र की रचना की थी, किन्तु आज वह निमित्त शास्त्र उपलब्ध नही है। श्रुतकेवली भद्रबाहु वी० नि० स० 155 में स्वर्गस्थ हुए, इनके ही शिष्य सम्राट् गुप्त थे। मगध मे बारह वर्ष के पडने वाले दुष्काल को अपने निमित्त ज्ञान से जानकर ये सघ को दक्षिण भारत की ओर ले गये थे और वही इन्होने समाधि ग्रहण की थी। अत दिगम्बर जैन साधुओ की स्थिति बहुत समय तक दक्षिण भारत मे रही। कुछ साधु उत्तर भारत मे ही रह गये, समय दोष के कारण जब उनकी चर्या मे बाधा आने लगी तो उन्होने वस्त्र धारण कर लिये तथा अपने अनुकूल नियमो का भी निर्माण किया। दुष्काल के समाप्त होने पर जब मुनिसंघ दक्षिण से वापस लौटा, तो उसने यहाँ रहने वाले मुनियो की चर्या की भर्त्सना की तथा उन लोगो ने अपने आचरण के अनुकूल जिन ग्रन्थो की रचना की थी उन्हे अमान्य घोषित किया। इसी समय से श्वेताम्बर सम्प्रदाय का विकास हुआ। वे शिथिलाचारी मुनि ही वस्त्र धारण करने के कारण श्वेताम्बर सम्प्रदाय के प्रवर्तक हुए। भगवान् महावीर के समय मे जैन सम्प्रदाय एक था, किन्तु भद्रबाहु के अनन्तर यह सम्प्रदाय दो टुकडो मे विभक्त हो गया। उक्त भद्रबाहु श्रुतकेवली को ही निमित्तशास्त्र का ज्ञाता माना जाता है, क्या यही श्रुतकेवली इस ग्रन्थ के रचयिता हैं ? इस ग्रन्थ को देखने से यह स्पष्ट प्रतीत होता है कि भद्रबाहु स्वामी इसके रचयिता नही हैं।

यद्यपि इस ग्रन्थ के आरम्भ में कहा गया है कि पाण्डुगिरि पर स्थित महात्मा, ज्ञान-विज्ञान के समुद्र, तपस्वी, कल्याणमूर्त्ति, रोगरहित, द्वादशांग श्रुत के वेत्ता, निर्ग्रन्थ, महाकान्ति से विभूषित, शिष्य-प्रशिष्यो से युक्त और तत्त्ववेदियो में निपुण आचार्य भद्रबाहु को सिर से नमस्कार कर उनसे निमित्तशास्त्र के उपदेश देने की प्रार्थना की।

तत्रासीनं महात्मानं ज्ञानविज्ञानसागरम् ।
तपोयुक्तं च श्रेयांसं भद्रबाहुं निराश्रयम् ॥
द्वादशांगस्य वेत्तारं नैर्ग्रन्थं च महाद्युतिम् ।
वृत्तं शिष्यैः प्रशिष्यैश्च निपुणं तत्त्ववेदिनाम् ॥
प्रणम्य शिरसाऽऽचर्यमूचुः शिष्यास्तदा गिरम् ।
सर्वेषु प्रीतमनसो दिव्यज्ञानं बभुत्सव ॥
(भ० सं० अ० 1 श्लोक 5-7)

द्वितीय अध्याय के आरम्भ मे बताया गया है कि शिष्यो के प्रश्न के पश्चात् भगवान् भद्रबाहु कहने लगे—

ततः प्रोवाच भगवान् दिग्वासा श्रमणोत्तम ।
यथावस्थास् विन्यास द्वादशागविशारद ॥
भवद्भिर्यदह पृष्टो निमित्त जिनभाषितम् ।
समासव्यासत सर्व तन्निबोध यथाविधि ॥

इस कथन से यह अनुमान लगाया जा सकता है कि इसकी रचना श्रुतकेवली भद्रबाहु ने की होगी । परन्तु ग्रन्थ के आगे के हिस्से को देखने से निराशा होती है। इस ग्रन्थ के अनेक स्थानो पर 'भद्रबाहुवचो यथा' (अ० 3 श्लो० 64, अ० 6 श्लो० 17, अ० 7 श्लो० 19, अ० 9 श्लो० 26, अ० 10 श्लो० 16, 45, 53, अ० 11 श्लो० 26, 30, अ० 12 श्लो० 37, अ० 13 श्लो० 74, 100, 178, अ० 14 श्लो० 54, 136, अ० 15 श्लो० 37, 73, 128) लिखा मिलता है। इससे सहज मे अनुमान किया जा सकता है कि यह रचना भद्रबाहु के वचनो के आधार पर किसी अन्य विद्वान् ने लिखी है। इस ग्रन्थ के पुष्पिका वाक्यो मे 'भद्रबाहुके निमित्ते', 'भद्रबाहुसहितायां', 'भद्रबाहु निमित्तशास्त्रे' लिखा मिलता है। ग्रन्थ की उत्थानिका मे जो श्लोक आये है, उनसे निम्न प्रकाश पड़ता है—

1 इस ग्रन्थ की रचना मगध देश के राजगृह नामक नगर के निकटवर्ती पाण्डुगिरि पर राजा सेनजित् के राज्यकाल मे हुई होगी।

2 यह ग्रन्थ सर्वज्ञ कथित वचनो के आधार पर भद्रबाहु स्वामी ने अपने दिव्य ज्ञान के बल से लिखा।

3. राजा, भिक्षु, श्रावक एव जन-साधारण के लिए इस ग्रन्थ की रचना की गयी।

4 इस ग्रन्थ के रचयिता भद्रबाहु स्वामी दिगम्बर आम्नाय के अनुयायी थे।

जिस प्रकार मनुस्मृति की रचना स्वय मनु ने नही की है, बल्कि मनु के वचनो के आधार पर की गयी है; फिर भी वह मनु के नाम से प्रसिद्ध है तथा मनु के ही विचारो का प्रतिनिधित्व करती है। उस रचना मे भी मनु के वचनों का

कथन मिलता है। इसी प्रकार भद्रबाहुसंहिता स्वयं भद्रबाहु की न होकर, भद्रबाहु के वचनो का प्रतिनिधित्व करती है।

ग्रन्थ की उत्थानिका मे आये हुए सिद्धान्तो पर विचार करने से ज्ञात होता है कि उत्थानिका के कथन मे ऐतिहासिक दृष्टि से विरोध आता है। भद्रबाहु स्वामी चन्द्रगुप्त मौर्य के समय मे हुए, जब कि मगध की राजधानी पाटलिपुत्र मे थी। सेनजित् या प्रसेनजित् महाराज श्रेणिक या बिम्बसार के पिता थे। इनके समय मे और चन्द्रगुप्त के समय मे लगभग 140 वर्षों का अन्तराल है, अत. श्रुतकेवली भद्रबाहु तो इस ग्रन्थ के रचियता नही हो सकते हैं। हाँ, उनके वचनो के अनुसार किसी अन्य विद्वान् ने इस ग्रन्थ की रचना की होगी।

'जैन साहित्य का सक्षिप्त इतिहास' मे देसाई ने इस ग्रन्थ का रचयिता वराहमिहिर के भाई भद्रबाहु को माना है। जिस प्रकार वराहमिहिर ने बृहत्सहिता या वाराही सहिता की रचना की, उसी प्रकार भद्रबाहु ने भद्रबाहुसहिता की रचना की होगी। वराहमिहिर और भद्रबाहु का सम्बन्ध राजशेखरकृत प्रबन्धकोष (चतुर्विंशतिप्रबन्ध) से भी सिद्ध होता है। यह अनुमान स्वाभाविक रूप से सभव है कि प्रसिद्ध ज्योतिषी वराहमिहिर के भाई भद्रबाहु भी ज्योतिर्ज्ञानी रहे होगे। कहा जाता है कि वराहमिहिर के पिता भी अच्छे ज्योतिषी थे। बृहज्जातक मे स्वय वराहमिहिर ने बताया है कि कालपी नगर मे सूर्य से वर प्राप्त कर अपने पिता आदित्यदास से ज्योतिषशास्त्र की शिक्षा प्राप्त की। इससे सिद्ध है कि इनके वश मे ज्योतिषशास्त्र के पठन-पाठन का प्रचार था और यह इनकी विद्या वशगत थी। अत इनके भाई भद्रबाहु द्वारा रचित कोई ज्योतिष ग्रन्थ हो सकता है। पर यह सत्य है कि यह भद्रबाहु श्रुतकेवली भद्रबाहु से भिन्न है। इनका समय भी श्रुतकेवली भद्रबाहु से सैकडो वर्ष बाद का है।

श्री प० जुगलकिशोर मुख्तार ने ग्रन्थपरीक्षा द्वितीय भाग मे इस ग्रन्थ के अनेक उद्धरण देकर तथा उन उद्धरणो की पारस्परिक असम्बद्धता दिखलाकर यह सिद्ध किया है कि यह ग्रन्थ भद्रबाहु श्रुतकेवली का बनाया हुआ न होकर इधर-उधर के प्रकरणो का बेढगा सग्रह है। उन्होने अपने वक्तव्य का निष्कर्ष निकालते हुए लिखा है—"**यह खण्डत्रयात्मक ग्रन्थ (भद्रबाहुसंहिता) भद्रबाहु श्रुतकेवली का बनाया हुआ नहीं है, न उनके किसी शिष्य-प्रशिष्य का बनाया हुआ है और न विक्रम सं० 1657 के पहले का बनाया हुआ है, बल्कि उक्त सवत् के पीछे का बनाया हुआ है।**" मुख्तार साहब का अनुमान है कि ग्वालियर के भट्टारक धर्मभूषणजी की कृपा का यह एकमात्र फल है। उनका अभिमत है, "**वही उस समय इस ग्रन्थ के सर्व सत्त्वाधिकारी थे। उन्होंने वामदेव सरीखे अपने किसी कृपापात्र या आत्मीयजन के द्वारा इसे तैयार कराया है अथवा उसकी सहायता से स्वयं तैयार किया है। तैयार हो जाने पर जब इसके दो-चार अध्याय किसी को पढ़ने**

के लिए दिये गये और वे किसी कारण से वापस न मिल सके तब वामदेवजी को दुबारा उनके लिए परिश्रम करना पड़ा। जिसके लिए प्रशस्ति का यह वाक्य 'यदि वामदेवजी फेर शुद्ध करि लिखी तैयार करी' खासतौर से ध्यान देने योग्य है और इस बात को सूचित करता है कि उक्त अध्यायों को पहले भी वामदेव जी ने ही तैयार किया था। मालूम होता है कि लेखक ज्ञानभूषणजी धर्मभूषण भट्टारक के परिचित व्यक्तियों में से थे और आश्चर्य नहीं कि वे उनके शिष्यों में भी थे। उनके द्वारा खास तौर से यह प्रति लिखवायी गयी है।"

श्रद्धेय मुख्तार साहब के उपर्युक्त कथन से यह स्पष्ट है कि उनकी दृष्टि मे यह ग्रन्थ 17वी शताब्दी का है तथा इसके लेखक ग्वालियर के भट्टारक धर्मभूषण या उनके कोई शिष्य हैं। मुख्तार साहब ने अपने कथन की पुष्टि के लिए इस ग्रन्थ के जितने भी उद्धरण लिये है, वे सभी उद्धरण इस ग्रन्थ के प्रस्तुत 27 अध्यायो के बाहर के हैं। 30वाँ अध्याय जो परिशिष्ट मे दिया गया है, इसमे उस अध्याय की रचना-तिथि पर प्रकाश पडता है। इस अध्याय के आरम्भ मे 10वे श्लोक मे बताया गया है—

पूर्वाचार्यैर्यथा प्रोक्तं दुर्गाद्यैलादिभिर्यथा ।
गृहीत्वा तदभिप्राय तथारिष्टं ब्रवाम्यहम् ।।

इस श्लोक मे दुर्गाचार्य और एलाचार्य के कथन के अनुसार अरिष्टो के वर्णन की बात कही गयी है। दुर्गाचार्य का 'रिष्टसमुच्चय' नामक एक ग्रन्थ उपलब्ध है। इस ग्रन्थ की रचना लक्ष्मीनिवास राजा के राज्य मे कुम्भनगर नामक पहाड़ी नगर के शान्तिनाथ चैत्यालय मे की गई है। इसका रचनाकाल 21 जुलाई शुक्रवार ईस्वी सन् 1032 मे माना गया है। इस ग्रन्थ मे 261 गाथाएँ है, जिनका भाव इस तीसवें अध्याय मे ज्यो-का-त्यो दिया गया है। अन्तर इतना ही है कि रिष्टसमुच्चय का कथन व्यवस्थित, क्रमबद्ध और प्रभावक है, किन्तु इस अध्याय की निरूपण शैली शिथिल, अक्रमिक और अव्यवस्थित है। विषय दोनो का समान है। इस अध्याय के अन्त मे कतिपय श्लोक वाराही संहिता के वस्त्रच्छेद नामक 71वे अध्याय से ज्यों-के-त्यों उद्धृत हैं। केवल श्लोको के क्रम मे व्यतिक्रम कर दिया गया है। अत. यह सत्य है कि भद्रबाहुसंहिता के सभी प्रकरण एक साथ नही लिखे गये।

समग्र भद्रबाहुसंहिता मे तीन खण्ड है। प्रथम खण्ड मे दस अध्याय हैं, जिनके नाम हैं चतुर्वर्ण नित्यक्रिया, क्षत्रिय नित्यकर्म, क्षत्रियधर्म, कृतिसग्रह, सीमा-निर्णय, दण्डपारुष्य, स्तैन्यकर्म, स्त्रीसग्रहण, दायभाग और प्रायश्चित्त। इन दशो अध्याय के विषय मनुस्मृति आदि ग्रन्थो के आधार से लिखे गये हैं। कतिपय पद्य तो ज्यो-के-त्यो मिल जाते हैं और कतिपय कुछ परिवर्तन करके ले लिये गये

हैं। यह समस्त खण्ड नकल किया गया-सा मालूम होता है।

दूसरे खण्ड को ज्योतिष और तीसरे को निमित्त कहा गया है। परन्तु इन दोनों अध्यायों के विषय आपस में इतने अधिक सम्बद्ध हैं कि उनका यह भेद उचित प्रतीत नहीं होता है। दूसरे खण्ड के 25 अध्याय, जिनमें उल्का, विद्युत्, गन्धर्वनगर आदि निमित्तों का वर्णन किया गया है, निश्चयतः प्राचीन है। छब्बीसवें अध्याय में स्वप्नो का निरूपण किया गया है। इस अध्याय के आरम्भ में मँगलाचरण भी किया गया है।

नमस्कृत्य महावीरं सुरासुरजनैर्नतम्।
स्वप्नाध्यायं प्रवक्ष्यामि शुभाशुभसमीरितम्॥

देव और दानवों के द्वारा नमस्कार किये गये भगवान् महावीर को नमस्कार कर शुभाशुभ से युक्त स्वप्नाध्याय का वर्णन करता हूँ।

इससे ज्ञात होता है कि यह अध्याय पूर्व के 24 अध्यायों की रचना के बाद लिखा गया है और इसका रचनाकाल पूर्व अध्याय के रचनाकाल के बाद का होगा।

मुख्तार साहब ने तृतीय खण्ड के श्लोकों की समता मुहूर्त चिन्तामणि, पाराशरी, नीलकण्ठी आदि ग्रन्थों से दिखलायी है और सिद्ध किया है कि इस खण्ड का विषय नया नहीं है, संग्रहकर्त्ता ने उक्त ग्रन्थों से श्लोक लेकर तथा उन श्लोकों में जहाँ-तहाँ शुद्ध या अशुद्ध रूप में परिवर्तन करके अव्यवस्थित रूप में संकलन किया है। अतः मुख्तार साहब ने इस ग्रन्थ का रचना काल 17वीं शताब्दी माना है।

इस ग्रन्थ के रचना-काल के सम्बन्ध मे मुनि जिनविजयजी ने सिन्धी जैन ग्रन्थ माला से प्रकाशित भद्रबाहुसंहिता के किञ्चित् प्रास्ताविक में लिखा है—
"ते विषे म्हारो अभिप्राय जरा जुदो छे हुं एने पंदरमी सदीनी पछीनी रचना नथी समजतो ओछामां ओछी 12मी सदी जेटली जूनी तो ए कृति छेज, एवो म्हारो साधार अभिमत थाय छे, म्हारा अनुमाननो आधार ए प्रमाणे छे—पाटणना वाडी पार्श्वनाथ भण्डार माँथी जे प्रति म्हने मली छे ते जिनभद्र सूरिना समयमां— एटले के वि० सं० 1475-85 ना अरसामां लखाएली छे, एम हुं मानुं छुं कारण के ए प्रतिना आकार-प्रकार, लखाण, पत्रांक आदि बधा संकेतो जिनभद्रसूरिए लखावेला सैंकडो ग्रन्थ तो सहज मलता अनेतेज स्वरूपता छे, जेम म्हें 'विज्ञप्ति त्रिवेणि, नी म्हारी प्रस्तावनामां जणाव्यु छे तेम जिनभद्र सूरिए खंभात, पाटण, जैसलमेर आदि स्थानोमां म्होटा ग्रन्थ-भण्डारो स्थापन कर्यां हतां अने तेनां, तेमणे नष्ट थतां जूनां एवां सैंकडो ताडपत्रीय पुस्तकोनी प्रतिलिपिओ कागल उपर उतरावी-उतरावी ने नूतन पुस्तकोनो संग्रह कर्यो हतो, ए भंडारमांथी मलेली

भद्रबाहु संहितानी उक्त प्रति पण एज रीते कोई प्राचीन ताडपत्रनी प्रतिलिपि रूपे उतारेली छे, कारण के, ए प्रतिमां ठेकठेकाणे एवी केटलीय पंक्तिओ दृष्टिगोचर थाय छे, जेमां लहियाए पोताने मलली आदर्श प्रतिमां उपलब्ध थता खंडित के त्रुटित शब्दो अने वाक्यो माटे, पाछलथी कोई तेनी पूर्ति करी शके ते सारु ... आ जातनी अक्षरविहीन मात्र शिरोरेखाओ दोरी मुकेली छे, एनो अर्थ ए छे के ए प्रतिना लहियाने जे ताडपत्रीय प्रति मलीहती ते विशेष जीर्ण थएली होवी जोईए अने तेमां ते ते स्थलना लखाणना अक्षरो, ताडपत्रोनो किनारो खरी पडवाथी जता रहेला के भुंसाई गएला होवा जोईए-ए उपरथी एवं अनुमान सहेजे करी शकाय के ते जूनी ताडपत्रीय प्रति पण ठीक-ठीक अवस्थाए पहोंची गएली होवी जोईए, आ रीते जिनभद्र सूरिना समयमां जो ए प्रति 300-400 वर्षो जेटली जूनी होय —अने ते होवानो विशेष संभव छेज—तो सहेजे ते मूलं प्रति विक्रमना 11मा 12मा सैका जेटली जूनी होई शके। पाटण अने जेसलमेरना जूना भंडारोमां आवी जातनी जीर्ण-शीर्ण थएली ताडपत्रीय प्रतियो तेमज तेमना उपरथी उतारवामां आवेली कागलनी सेंकडो प्रतियो म्हारा जोवामां आवीछे।"

इस लम्बे कथन से आप ने यह निष्कर्ष निकाला है कि भद्रबाहुसहिता का रचनाकाल 11-12 शताब्दी से अर्वाचीन नही है। यह ग्रन्थ इससे प्राचीन ही होगा। मुनिजी का अनुमान है कि इस ग्रन्थ का प्रचार जैन साधुओ और गृहस्थो मे अधिक रहा है, इसी कारण इसके पाठान्तर अधिक मिलते हैं। इसके रचयिता कोई प्राचीन जैनाचार्य है, जो भद्रबाहु से भिन्न हैं। मूल ग्रन्थ प्राकृत भाषा मे लिखा गया था, पर किसी कारण वश आज यह ग्रन्थ उपलब्ध नही है। यत्र-तत्र प्राप्त मौखिक या लिपिबद्ध रूप मे प्राचीन गाथाओ को लेकर उनका सस्कृत रूपान्तर कर दिया है। जिन विषयो के प्राचीन उद्धरण नही मिल सके, उन्हे वाराही सहिता, मुहूर्त चिन्तामणि आदि ग्रन्थो से लेकर किसी भट्टारक या यति ने सकलित कर दिया।

श्री मुख्तार साहब, मुनिश्री जिनविजय जी तथा प्रो० अमृतलाल सावचद गोपाणी आदि महानुभावो के कथनो पर विचार करने तथा उपलब्ध ग्रथ के अवलोकन से हमारा अपना मत यह है कि इस ग्रन्थ का विषय, रचना शैली और वर्णनक्रम वाराही सहिता से प्राचीन है। उल्का प्रकरण मे वाराहीसहिता की अपेक्षा नवीनता है और यह नवीनता ही प्राचीनता का सकेत करती है। अतः इसका सकलन, कम से कम आरम्भ के 25 अध्यायो का, किसी व्यक्ति ने प्राचीन गाथाओ के आधार पर किया होगा। बहुत सभव है कि भद्रबाहु स्वामी की कोई रचना इस प्रकार की रही होगी, जिसका प्रतिपाद्य विषय निमित्तशास्त्र है। अतएव मनुस्मृति के समान भद्रबाहु सहिता का सकलन भी किसी भाषा तथा विषय की दृष्टि से अव्युत्पन्न व्यक्ति ने किया है। निमित्तशास्त्र के महाविद्वान् भद्रबाहु

की मूल कृति आज उपलब्ध नही है, पर उनके वचनो का कुछ सार अवश्य विद्यमान है। इस रचना का संकलन 8-9वी शती में अवश्य हुआ होगा।

हाँ, यह सत्य है कि इस ग्रन्थ मे प्रक्षिप्त अंश अधिक बढते गये हैं। इनका प्रथम खण्ड भी पीछे मे जोडा गया है तथा इसमे उत्तरोत्तर परिवर्द्धन और सवर्द्धन किया जाता रहा है। द्वितीय खण्ड का स्वप्नाध्याय भी अर्वाचीन है तथा इसमें 28, 29 और 30 वें अध्याय तो और भी अर्वाचीन हैं। अतएव यह स्वीकार करने मे किसी भी प्रकार का सकोच नही है कि इस ग्रन्थ का प्रणयन एक समय पर नही हुआ है, विभिन्न समय पर विभिन्न विद्वानो ने इस ग्रन्थ के कलेवर को बढाने की चेष्टा की है। "भद्रबाहुवचो यथा" का प्रयोग प्रमुख रूप से 15वें अध्याय तक ही मिलता है। इसके आगे इस वाक्य का प्रयोग बहुत कम हुआ है, इससे भी पता चलता है कि सभवत· 15 अध्याय प्राचीन भद्रबाहु सहिता के आधार पर लिखे गये होगे। और सहिता ग्रन्थो की परम्परा मे रखने के लिए या इसे वाराही संहिता के समान उपयोगी और ग्राह्य बनाने के लिए, आगे वाले अध्यायों का कलेवर बढाया जाता रहा है। श्री मुख्तार साहब ने जो अनुमान लगाया है कि ग्वालियर के भट्टारक धर्मभूषण जी की कृपा का यह फल है तथा वामदेव ने या उनके अन्य किसी शिष्य ने यह ग्रन्थ बनाया है, वह पूर्णतया सही तो नही है। इस अनुमान मे इतना अश तथ्य है कि कुछ अध्याय उन लोगो की कृपा मे जोडे गये होगे या परिवर्द्धित हुए होगे। इस ग्रन्थ के 15 अध्याय तो निश्चयत प्राचीन है और ये भद्रबाहु के वचनो के आधार पर ही लिखे गये हैं। शैली और क्रम 25 अध्यायो तक एक-सा है, अत 25 अध्यायों को प्राचीन माना जा सकता है।

भद्रबाहुसंहिता का प्रचार जैन सम्प्रदाय मे इतना अधिक था, जिससे यह श्वेताम्बर और दिगम्बर दोनो ही सम्प्रदायो मे समान रूप से समादृत थी। इसकी प्रतियाँ पूना, पाटण, बम्बई, हेमचन्द्राचार्य जैन ज्ञान मन्दिर पाटण, जैन सिद्धान्त भवन आरा आदि विभिन्न स्थानो पर पायी जाती हैं। पूना की प्रति मे 26वे अध्याय के अन्त में वि० स० 1504 लिखा हुआ है और समस्त उपलब्ध प्रतियों मे यही प्रति प्राचीन है। अत. इस सत्य से कोई इनकार नही कर सकता है कि इसकी रचना वि० सं० 1504 से पहले हो चुकी थी। श्री मुख्तार साहब का अनुमान इस लिपिकाल से खंडित हो जाता है और इन 26 अध्यायो की रचना ईस्वी सन् की पन्द्रहवीं शती के पहले हो चुकी थी। इस ग्रन्थ के अत्यधिक प्रचार का एक सबल प्रमाण यह भी है कि इसके पाठान्तर इतने अधिक मिलते हैं, जिससे इसके निश्चित स्वरूप के सम्बन्ध में कुछ भी नहीं कहा जा सकता। जैन सिद्धान्त भवन आरा की दोनों प्रतियों में भी पर्याप्त पाठ-भेद मिलता है। अत: इस ग्रन्थ को सर्वथा भ्रष्ट या कल्पित मानना अनुचित होगा। इसका प्रचार इतना अधिक रहा है, जिससे रामायण और महाभारत के समान इसमें प्रक्षिप्त अशों की भी

बहुलता है। इन्हीं प्रक्षिप्त अशो ने इस ग्रन्थ की मौलिकता को तिरोहित कर दिया है। अत यह भद्रबाहु के वचनो के अनुसार उनके किसी शिष्य या प्रशिष्य अथवा परम्परा के किसी अन्य दिगम्बर विद्वान् द्वारा लिखा गया ग्रन्थ है। इसके आरम्भ के 25 अध्याय और विशेषत 15 अध्याय पर्याप्त प्राचीन हैं। यह भी सम्भव है कि इनकी रचना वराह-मिहिर के पहले भी हुई हो।

भाषा की दृष्टि से यह ग्रन्थ अत्यन्त सरल है। व्याकरण सम्मत भाषा के प्रयोगों की अवहेलना की गई है। छन्दोभग तो लगभग 300 श्लोको मे है। प्रत्येक अध्याय मे कुछ पद्य ऐसे अवश्य है जिनमे छन्दोभंग दोष है। व्याकरण दोष लगभग 125 पद्यो मे विद्यमान है। इन दोषो का प्रधान कारण यह है कि ज्योतिष और वैद्यक विषय के ग्रन्थो मे प्राय भाषा सम्बन्धी शिथिलता रह जाती है। वाराही सहिता जैसे श्रेष्ठ ग्रन्थ मे व्याकरण और छन्द दोष है, पर भद्रबाहु सहिता की अपेक्षा कम।

सम्पादन और अनुवाद

इस ग्रन्थ का सम्पादन 'सिन्धी जैन ग्रन्थ माला' मे मुद्रित प्रति तथा जैन सिद्धान्त भवन आरा की दो हस्तलिखित प्रतियो के आधार पर हुआ है। एक प्रति पूज्य आचार्य महावीरकीर्त्ति जी से भी प्राप्त हुई थी। मुद्रित प्रति मे और जैन सिद्धान्त भवन की प्रतियो मे बहुत अन्तर था। कई श्लोक भवन की प्रतियों मे मुद्रित प्रति की अपेक्षा अधिक निकले। भवन की दोनो प्रतियाँ भी आपस मे भिन्न थी तथा आचार्य महावीरकीर्त्ति जी की हस्तलिखित प्रति भवन की प्रतियो की अपेक्षा कुछ भिन्न तथा मुद्रित प्रति मे उल्लिखित बम्बई की प्रति से बहुत कुछ अशो मे समान थी। प्रस्तुत सस्करण मे भवन की ख/174 प्रति का पाठ ही रखा गया है। अवशेष प्रतियो के पाठान्तरो को पाद टिप्पणी मे रखा गया है। प्रस्तुत प्रति मे मुद्रित प्रति की अपेक्षा अनेक विशेषताएँ है। कुछ पाठान्तर तो इतने अच्छे हैं, जिससे प्रकरणगत अर्थ स्पष्ट होता है और विषय का विवेचन भी स्पष्ट हो जाता है। हमने मु० के द्वारा मुद्रित प्रति के पाठ को सूचित किया है। मु० A से हमारा सकेत यह है कि आचार्य महावीरकीर्त्ति जी की प्रति मे वह पाठ मिलता है। आचार्य महावीरकीर्त्ति की प्रति उनके हाथ से स्वय कहीं से प्रतिलिपि की गयी थी और उसमे अनेक स्थलो पर बगल मे पाठान्तर भी दिये गये थे। यह प्रति हमे, 15 अध्याय तक मिली तथा इसके आगे एक दूसरे रजिस्टर मे 30वाँ अध्याय और एक पृथक् रजिस्टर मे कुछ फुटकर शकुन और निमित्त सम्बन्धी श्लोक लिखे थे। फुटकर श्लोको मे अध्याय का सकेत नही किया गया था, अतः हमने उन श्लोको को उस ग्रन्थ मे स्थान नहीं दिया। 30वें अध्याय को परिशिष्ट के रूप में दिया गया है। उपयोगी विषय होने के कारण इस अध्याय को भी अनुवाद सहित दिया

जा रहा है।

जिस प्रति का पाठ इस ग्रन्थ मे रखा गया है, उसके मात्र 27 अध्याय ही हमे उपलब्ध हुए है। भवन की दूसरी प्रति मे 26 अध्याय हैं। दोनो ही प्रतियो के देखने से ऐसा लगता है कि इनकी प्रतिलिपि विभिन्न प्रतियो से की गयी है। ग्रन्थ समाप्ति सूचक कोई चिह्न या पुष्पिका नही दी गयी है, अत· प्रतिलिपि-काल की जानकारी नही हो सकी।

अनुवाद के पश्चात् प्रत्येक अध्याय के अन्त मे विवेचन लिखा गया है। विवेचन मे वाराही सहिता, अद्भुतसागर, वसन्तराज शाकुन, मुहूर्त्तगणपति, वर्षप्रबोध, बृहत्पाराशरी, रिष्टसमुच्चय, केवलज्ञानप्रश्नचूडामणि, नरपतिजयचर्या, भविष्यज्ञान ज्योतिष, एवरोडे एस्ट्रोलाजी, केवलज्ञानहोरा, आयज्ञानतिलक, ज्योतिषसिद्धान्तसार सग्रह, जातक क्रोडपत्र, चन्द्रोन्मीलनप्रश्न, ज्ञानप्रदीपिका, दैवज्ञकामधेनु, ऋषिपुत्रनिमित्तशास्त्र, बृहद्ज्योतिषार्णव, भुवनदीपक एव विद्यामाधवीय का आधार लिया गया है। विवेचन मे उद्धरण कही से भी उद्धृत नही किये है। अध्ययन के बल से विषय को पचाकर तत्-तत् प्रकरण से विषय से सम्बद्ध विवेचन लिखा गया है। विषय के स्पष्टीकरण की दृष्टि से ही यह विवेचन उपयोगी नही होगा, बल्कि विषय का सागोपाग अध्ययन करने के लिए उपयोगी होगा। प्रत्येक प्रकरण पर उपलब्ध ज्योतिष ग्रन्थो के आधार पर निचोड रूप मे विवेचन लिखा गया है। यद्यपि इस विवेचन को ग्रन्थ बढ जाने के भय से सक्षिप्त करने की पूरी चेष्टा की गयी है, फिर भी सैकडो ग्रन्थो का सार एक ही जगह प्रत्येक प्रकरण के अन्त मे मिल जायगा। अन्य ज्योतिर्वेत्ताओ का उस प्रकरण के सम्बन्ध मे जो नया विचार मिला है उसे भी विवेचन मे रख दिया गया है। पाठक एक ही ग्रन्थ मे उपलब्ध समस्त सहिताशास्त्र का सार भाव प्राप्त कर सकेगा, ऐसा हमारा पूर्ण विश्वास है।

अनुवाद तथा विवेचन मे समस्त पारिभाषिक शब्दों को स्पष्ट कर दिया गया है। पारिभाषिक शब्दों पर विवेचन भी लिखा गया है। अत. पृथक् पारिभाषिक शब्दसूची नहीं दी जा रही है। यत. शब्दसूची पुनरावृत्ति ही होगी।

अनुवाद मे शब्दार्थ की अपेक्षा भाव को स्पष्ट करने की अधिक चेष्टा की गयी है। सम्बद्ध श्लोकों का अर्थ एक साथ लिखा गया है। इस ग्रन्थ का हिन्दी अनुवाद अभी तक नहीं हुआ तथा विषय की दृष्टि से इसका अनुवाद करना आवश्यक था। ज्योतिष विषयक निमित्तो की जानकारी के लिए इसका हिन्दी अनुवाद अधिक उपयोगी होगा। सहिताशास्त्र के समग्र विषयो की जानकारी इस एक ग्रन्थ से हो सकती है।

आत्म-निवेदन

भद्रबाहुसहिता का अनुवाद करने की बलवती इच्छा केवलज्ञान प्रश्नचूडामणि के अनुवाद के अनन्तर ही उत्पन्न हुई। सन् 1956 मे इस कार्य को हाथ मे लिया। जैन सिद्धान्त भवन, आरा की दोनो हस्तलिखित प्रतियो का मिलान मुद्रित प्रति से करने के पश्चात् यह निश्चय किया कि ख / 174 प्रति का पाठ अधिक उपयोगी है, अत इसे ही मूल पाठ मानकर अनुवाद कार्य किया जाय। इधर-उधर के अनेक व्यासगो के कारण कार्य मन्थर गति से चलता रहा। हाँ, सदा की प्रवृत्ति के अनुसार ग्रन्थ का कार्य समाप्त करके भारतीय ज्ञानपीठ के मन्त्री श्री अयोध्या प्रसाद गोयलीय की सेवा मे इसे अवलोकनार्थ भेज दिया। उन्होने अपनी कार्य प्रणाली के अनुसार ग्रन्थमाला के सम्पादक डॉ० हीरालाल जी जैन, निर्देशक प्राकृतिक जैन विद्यापीठ, मुजफ्फरपुर तथा डॉ० ए० एन० उपाध्ये कोल्हापुर के यहाँ इस ग्रन्थ की पाण्डुलिपि को भेज दिया। कुछ समय के पश्चात् डॉ० हीरालाल जी साहब का एक सूचना पत्र मिला और उनकी सूचनाओ के अनुसार सशोधन, परिवर्तन कर पुन ग्रन्थ को ज्ञानपीठ भेज दिया।

मैं ग्रन्थमाला के सम्पादक उपर्युक्त डॉ० द्वय का अत्यन्त आभारी हूँ, जिन्होने इस ग्रन्थ के प्रकाशन का अवसर तथा अपने बहुमूल्य सुझाव दिये। श्री अयोध्या प्रसाद जी गोयलीय, मन्त्री भारतीय ज्ञानपीठ, काशी का भी कृतज्ञ हूँ, जिनकी उत्साहवर्धक प्रेरणाएँ सर्वदा साहित्य-सेवा के लिए मिलती रहती है। परामर्श रूप मे सहायता देने वाले विद्वानो मे आचार्य श्री राममोहनदास जी एम० ए० सस्कृत और प्राकृत विभागाध्यक्ष हरप्रसाद जैन कालेज, आरा, प० लक्ष्मणजी त्रिपाठी व्याकरणाचार्य, राजकीय सस्कृत विद्यालय आरा, श्री प्रेमचन्द्र जैन साहित्याचार्य बी० ए० ह० दा० जैन स्कूल, आरा एव श्री अमरचन्द तिवारी, आगरा प्रभृति विद्वानो का आभारी हूँ। प्रूफ-सशोधन श्री पं० महादेवी चतुर्वेदी व्याकरणाचार्य ने किया है। मैं आपका भी अत्यन्त आभारी हूँ।

श्री जैन सिद्धान्त भवन आरा के विशाल ग्रन्थागार से विवेचन लिखने के लिए सैकडो ग्रन्थो का उपयोग किया, अत भवन का आभार स्वीकार करना परमावश्यक है।

प्रूफ मे कई गल्तियाँ छूट गयी हैं, विज्ञ पाठक सशोधन कर लाभ उठायेंगे। इसमे प्रूफ सशोधन का दोष नही है, दोष मेरा है, यत. मेरी लिपि कुछ अस्पष्ट और अवाच्य होती है, जिससे प्रूफ सम्बन्धी त्रुटियाँ रह जाना आवश्यक है। सम्पादन, अनुवाद और विवेचन मे प्रमाद एव अज्ञानतावश अनेक त्रुटियाँ रह गयी होंगी, कृपालु पाठक उनके लिए क्षमा करेंगे। यह भद्रबाहु सहिता का प्रथम भाग ही है। अवशेष मिल जाने पर इसका द्वितीय भाग सानुवाद और सविवेचन प्रकाशित

किया जायगा। क्योंकि ज्योतिष और निमित्त शास्त्र की दृष्टि से यह ग्रन्थ उपयोगी है। जिन कृपालु पाठकों के पास या उनकी जानकारी में इसके अवशेष अध्याय हों, वे सूचित करने का कष्ट करेंगे।

हरप्रसाद दास जैन कालेज, आरा
संस्कृत एवं प्राकृत विभाग
11-10-1958

नेमिचन्द्र शास्त्री

विषयानुक्रम

पहला अध्याय

मंगलाचरण	1
रचना का उद्देश्य	1
प्रतिपाद्य विषयो की तालिका	3
विवेचन	4

दूसरा अध्याय

विकार का स्वरूप	16
उत्पात का स्वरूप	16
उल्काओ की उत्पत्ति, रूप, प्रमाण, फल और आकृति के वर्णन का निश्चय	16
उल्का का स्वरूप	17
उल्का के विकार	17
शुभ और अशुभ उल्काएँ	17
विवेचन	18

तीसरा अध्याय

उल्काओ द्वारा नक्षत्र-ताडन का फल	21
नील वर्ण, बिखरी हुई, सिंह-व्याघ्र आदि विभिन्न आकार की उल्काएँ	21
अग्रभाग आदि के अनुसार उल्काओ के गिरने का फल	22
स्नेहयुक्त एव विचित्र वर्ण की उल्काओ का फल	23
विविध वर्ण और आकृति वाली उल्काओं का फल	25
विद्युत् सज्ञक उल्का और उसका फल	26
उल्का के गिरने का स्थानानुसार फल	27
राजभयसूचक उल्काएँ	27
स्थायी नागरिको की भयसूचक उल्काएँ	27
अस्तकालीन उल्काओं का फल	28
प्रतिलोम मार्ग से जानेवाली उल्काओ का फल	28
विभिन्न मार्गों से गिरने वाली उल्काओ का सेना के लिए फल	29

जन्मनक्षत्र मे बाणसदृश गिरने वाली उल्काओ का फल	30
अन्य शुभ-अशुभ उल्काएँ	31
विवेचन	32
चौथा अध्याय	
परिवेष और उनके भेद	44
चन्द्र-परिवेष, विविध रूप एव फल	45
सूर्य-परिवेष का फल	46
नक्षत्रो के अनुसार परिवेषो का फल	48
वर्षा और कृषि सम्बन्धी परिवेषो का फलादेश	48
परिवेषो का राष्ट्र सम्बन्धी फलादेश	50
विवेचन	51
पाँचवाँ अध्याय	
विद्युत्-स्वरूप और प्रकार	63
विद्युत्-वर्णों का निरूपण एव फलादेश	64
विद्युत्-मार्गो का कथन	65
विद्युत् के रूप-रग, आकार तथा शब्द द्वारा वर्षा का निर्देश	65
विवेचन	68
छठा अध्याय	
बादलो के प्रकार और वर्षा-फल	73
शुभ चिह्नो वाले बादल	74
सग्राम-सूचक बादल	76
राजा, युवराज, मत्री के मरणसूचक बादल	76
सेना के युद्धस्थल से पराङ्मुख होने की सूचना देने वाले बादल	77
गर्जना सहित और गर्जना रहित बादलो का फल	77
मलिन तथा वर्ण रहित बादलो का दीप्ति दिशा मे फल	77
नक्षत्र, ग्रह आदि के निमित्त से बादलो का फल	77
शीघ्रगामी बादलो का फल	78
विरागी, प्रतिलोम, अनुलोम गतिवाले बादलो का फल	78
नागरिक एव शासन के अनुकूल, प्रतिकूल द्युति वाले बादल	78
विवेचन	79
सातवाँ अध्याय	
सन्ध्याओ के लक्षण और निमित्तशास्त्र के तत्त्वो के अनुसार उनका फल	85
सन्ध्या की परिभाषा	86

स्निग्ध वर्ण की सन्ध्या का फल 87
तत्काल वर्षा-सूचक सन्ध्या 87
सन्ध्या मे सूर्य-परिवेष का फल 87
सन्ध्या मे सूर्य के मण्डलो का फल 87
सरोवर, तालाब, प्रतिमा, कूप, कुम्भ आदि सदृश स्निग्ध सन्ध्या का फल 88
राजभय-उत्पादक सन्ध्या 88
सन्ध्याकाल मे बादलो की आकृति का फल 88
सन्ध्या-काल मे विद्युत्-दर्शन का फल 89
विवेचन 89

आठवाँ अध्याय

मेघो के भेद 94
वर्षा के कारक मेघ 94
अच्छी वर्षा के सूचक मेघ 95
युद्ध और सन्धि के सूचक मेघ 96
युद्ध की सफलता और असफलता की सूचना देनेवाले मेघ 96
विभिन्न आकृतिवाले मेघो का फलादेश 97
तिथि-नक्षत्र, मुहूर्त आदि के अनुसार मेघ-फल 97
कुवर्ण, कटुकरस और दुर्गन्ध वाले मेघो का फल 98
अन्य प्रकार से शुभ-अशुभ सूचक मेघ 98
विवेचन 99

नौवा अध्याय

वायु के भेद 104
वायु द्वारा वर्षण, भय, क्षेम आदि 104
बलवती वायु 105
दिशा के अनुसार वायु का कथन 105
आषाढी पूर्णिमा के दिन विभिन्न दिशाओ की वायु के फलादेश 106
दिशाओ एव विदिशाओ की वायु का सक्षिप्त फल 110
परस्पर घात कर बहने वाली वायुओ का फल 110
सव्य-अपसव्य वायुओ का फल 112
प्रदक्षिणा करती हुई बहने वाली वायु का फल 112
मध्याह्न और अर्धरात्रि के वायु प्रवाह का फल 112
राजा के प्रयाण के समय प्रतिलोम और अनुलोम वायुओ का फल 112
अशुभ वायु का फल 113

ऊर्ध्वगामी एव क्रूर वायु का फल	113
शीघ्रगामी वायु का फल	113
दुर्गन्धित प्रतिलोम वायु का फल	113
सैन्य-बध एव सैन्य-पराजय सूचक वायु	114
दिशा एव विदिशा के अनुसार वायुफल	115
विवेचन	116
दसवाँ अध्याय	
मूल नक्षत्र को बिताकर होने वाली वर्षा	122
पूर्वाषाढा एव उत्तराषाढा नक्षत्र की प्रथम वर्षा	122
नक्षत्र-क्रम मे प्रथम वर्षा का फल	122
श्रावण मास की प्रथम वर्षा का फल	129
विवेचन	130
ग्यारहवाँ अध्याय	
गन्धर्वनगर के फलादेश कथन की प्रतिज्ञा	141
सूर्योदय कालीन गन्धर्वनगर का फल	142
वर्णों के अनुसार पूर्व दिशा के गन्धर्वनगर का फल	142
सभी दिशाओ के गन्धर्वनगर का फल	143
कपिलवर्ण के गन्धर्वनगर का फल	143
राज-विजयसूचक गन्धर्वनगर	143
विविध भयसूचक गन्धर्वनगर	143
पर-शासन के आक्रमण की सूचना देने वाले गन्धर्वनगर	144
दक्षिण की ओर गमन करने वाले गन्धर्वनगर का फल	144
प्रज्वलित गन्धर्वनगर की सूचना	144
राष्ट्र-विप्लव के सूचक गन्धर्वनगर	144
राजवृद्धि के सूचक गन्धर्वनगर	144
वर्षासूचक गन्धर्वनगर	145
अनेक वर्ण एव आकार के गन्धर्वनगर	145
विवेचन	146
बारहवाँ अध्याय	
मेघगर्भ कथन की प्रतिज्ञा	162
मेघो के गर्भधारण करने का समय	163
रात्रि और दिन के गर्भ का फल	163
पूर्व सन्ध्या और पश्चिम सन्ध्या के गर्भ का फल	163

मेघो के गर्भधारण के चिह्नो का कथन 163
मेघगर्भ के भेद और उनके द्वारा सूचना 164
मेघ के मास-गर्भ का फल 165
सौम्यगर्भ के मास और उनका फल 166
नक्षत्रो के अनुसार गर्भ का फल 167
विविध वर्ण एव आकार के मेघगर्भ 167
विवेचन 169

तेरहवाँ अध्याय

राजयात्रा के वर्णन की प्रतिज्ञा 175
सफल एवं असफल यात्रिक के लक्षण 175
यात्रा करने की विधि 175
यात्रा मे विचारणीय निमित्त 175
चतुरग सेना मे यात्राकालीन निमित्त 176
शनिश्चर की यात्रा का फल 176
सेनापति के वधसूचक यात्रा-शकुन 176
नैमित्तिक, राजा, वैद्य और पुरोहित रूप विष्कम्भ और उसके बिम्ब 177
नैमित्तिक, राजा, वैद्य और पुरोहित के लक्षण 177
योग्य नैमित्तिक आदि के होने से राजकार्य मे सिद्धि 179
प्रयाण-काल मे निमित्तो द्वारा शुभ-अशुभ योग का परिज्ञान 182
प्रयाणकालीन शुभ एव अशुभ निमित्त 184
निन्दित यात्रा-सूचक निमित्त 186
सूर्य-नक्षत्रो एव चन्द्र-नक्षत्रो के अनुसार यात्रा-फल 191
प्रयाण-काल मे वायु-परिमाण का विचार 191
प्रयाण-काल मे अनेक वस्तुओ के दर्शन के आधार पर शुभ-अशुभ विचार 193
द्विपदादि की विकृत ध्वनि का फल 193
प्रयाण के समय सेना मे कलह या मतभेद से अशुभ फल 193
प्रयाण के समय मनुष्य, पशु-पक्षियो की आवाज़ पर विचार 195
युद्ध के उपकरण तथा सन्ध्याकालीन बादलो के विवर्ण होने का फल 196
मासप्रिय पक्षियो के अवलोकन का फलादेश 196
विजातियो के मैथुन मे विपरीत क्रिया का फलादेश 197
गमनकाल मे घोड़ो के रग, आकृति, स्वर एव अन्य क्रियाओ मे विकृति का विचार 198
गमनकाल मे हाथी-घोड़ो के विभिन्न प्रकार के दर्शनो का फलादेश 201
विशेष स्थान के अनुसार फलादेश 203

प्रयाण के समय अन्य विचारणीय बातें 204
राज्य, धर्मोत्सव, कार्यसिद्धि के निमित्तो का निरूपण 205
विवेचन 206

चौदहवाँ अध्याय

उत्पातो के निरूपण की प्रतिज्ञा 222
उत्पात का लक्षण और भेद 222
ऋतुओ के उत्पातो का फलादेश 223
पशु-पक्षियो के विपरीत आचरण का फल 223
विकृत सन्तानोत्पत्ति का फल 224
मद्य, रुधिर आदि बरसने का फल 224
सरीसृप, मेढक आदि बरसने का फल 225
बिना ईंधन अग्नि के प्रज्वलित होने का फल 225
वृक्षो से रस चूने, गिरने, वस्त्रवेष्टित होने तथा अन्य प्रकार की विकृतियो का विचार 225
देवो के हँसने, रोने, नृत्य करने आदि का फल 2.9
नदियो के हँसने-रोने आदि प्रकृति का विचार 229
अस्त्र-शस्त्रो के शब्दो का फल 230
बिना बजाये वादित्रो का फल 230
आकाश से अकारण घोर शब्द सुनने का फल 231
भूमि के अकारण निर्घातित होने तथा वृक्षो के अकारण हरे हो जाने का फल 231
चीटियो की क्रिया अनुसार फल-विचार 231
राजा के छत्र, चँवर, मुकुट आदि उपकरण तथा हाथी, घोडा आदि वाहनो के भग होने का फल 232
असमय मे पीपल के वृक्ष के पुष्पित होने का फल 232
इन्द्रधनुष के भग्न आदि होने का फल 233
चन्द्रोत्पातो का फलादेश 233
शिव, वरुण आदि प्रतिमाओ एव उपकरणो के उत्पातो का फल 234
सन्ध्याकाल मे कबन्ध-दर्शन का फल 236
सूर्य के वर्ण के अनुसार फलादेश 237
चन्द्रोपात का विचार 238
ग्रहो के परस्पर भेदन का विचार 238
ग्रह-युद्ध और ग्रहोत्पात का कथन 238
देवो की हँसन, नर्तन आदि क्रियाओ का विचार 240

पृथ्वी के धंसने का फलादेश 241
धूलि, राख, अग्नि आदि बरसने का फलादेश 241
विभिन्न ग्रहो के प्रताडित मार्ग मे विभिन्न ग्रहो के गमन का फल 242
निर्जीव पदार्थों के विकृत होने का फलादेश 243
पूजा आदि के स्वयमेव बन्द हो जाने आदि का विचार 243
वृक्षो की छाया आदि विकृतियो का विचार 244
चन्द्रग्रहण एव चन्द्रोत्पातो का फलादेश 244
शिवलिगो के विवाद आदि का फलादेश 245
मगलकलश के अकारण विध्वश का फल 246
नवीन वस्त्रो के अकारण जलने का फल 246
पक्षियो एव सवारियो की विकृति का फल 246
घोडो के उत्पातो का फल 247
नक्षत्रो के उत्पात का फलादेश 250
उत्पात-शान्ति विचार 252
विवेचन 252

पन्द्रहवाँ अध्याय

ग्रहाचार के निरूपण की प्रतिज्ञा 263
शुक्र ग्रह का महत्त्व 264
शुक्र के उदय और अस्त का सामान्य कथन 264
शुक्र की किरणो के घातित होने का फलादेश 264
शुक्र के मण्डलो और नक्षत्रो के नाम और लक्षण एव उनमे शुक्र के गमन का फल 265
शुक्र की नाग आदि वीथियो के नक्षत्र 270
शुक्र के वीथि-गमन का फल 271
कृत्तिका आदि नक्षत्रो के उत्तर एव दक्षिण की ओर से शुक्र के गमन का फलादेश 271
वीथि-मार्ग 274
वार और नक्षत्रो के सहयोग से शुक्र-गमन का फल 274
सूर्य मे शुक्र के विचरण का फल 275
तृतीयादि मण्डलो मे शुक्र के विचरण का फल 275
कृत्तिकादि नक्षत्र तथा दक्षिण आदि दिशाओ मे शुक्र के गमन का फलादेश 276
मघा आदि नक्षत्रो मे मध्यम गति के शुक्र का फलादेश 276
वर्षासूचक शुक्र का गमन 277
प्रात.काल पूर्व में शुक्र और अनुगामी बृहस्पति का फल 277

विभिन्न आकार के शुक्र का कृत्तिका आदि नक्षत्रो मे गमन करने का फल 278
शुक्र के घात का फल 279
नक्षत्रो के आरोहण और भेदन करनेवाले शुक्र का फल 279
शुक्र के अस्तदिनो की सख्या 288
शुक्र के मार्गों का फलादेश 288
नाग, ऐरावण आदि वीथिकाओ का फलादेश 289
शुक्र के विभिन्न वर्णों का फल 290
शुक्र के प्रवास और वक्र होने का फल 291
शुक्र के अतिचार 295
विवेचन 299

सोलहवाँ अध्याय
शनि-चार के वर्णन की प्रतिज्ञा 306
दक्षिण मार्ग मे शनि के अस्त होने का काल-प्रमाण 306
शनि के दो, तीन, चार नक्षत्र-प्रमाण गमन करने का फल 307
उत्तरमार्ग मे वर्ण के अनुसार शनि का फल 307
मध्यमार्ग मे शनि के उदयास्त का फल 307
शनि के दक्षिणमार्ग मे गमन का फल 307
शनि की नक्षत्र-प्रदक्षिणा के आधार पर जन्म-फल 308
शनि के अपसव्य मार्ग मे गमन करने का फल 308
शनि पर चन्द्रपरिवेष का फल 308
चन्द्र और शनि के एक साथ होने का फल 309
शनि के वेध का फल 309
शनि के कृत्तिका पर होने का फल 309
शनि के विविध वर्णों का फल 309
शनि के युद्ध का फल 310
शनि के अस्तोदय का फल 310
विवेचन 310

सत्रहवाँ अध्याय
बृहस्पति (गुरु) के वर्ण, गति, आकार, मार्गी, उदयास्त के फलादेश वर्णन की प्रतिज्ञा 317
बृहस्पति के अशुभ मण्डल 317
बृहस्पति द्वारा कृत्तिका आदि के घात का फल 319
बृहस्पति द्वारा बायी और दायी ओर नक्षत्रो के अभिघातित होने का फल 323
बृहस्पति द्वारा चन्द्रमा की प्रदक्षिणा का फल 324

चन्द्रमा द्वारा बृहस्पति के आच्छादन का फल 324
विवेचन 325

अठारहवाँ अध्याय
बुध के प्रवास—अस्त, उदय, वर्ण और ग्रहयोग के वर्णन की प्रतिज्ञा 331
बुध की सात प्रकार की गतियाँ और उनका स्वभाव 331
बुध का नियतचार 332
वर्णानुसार बुध का फल 332
बुध की वीथियाँ और फलादेश 333
बुध की कान्ति का फल 333
अन्य ग्रह द्वारा बुध की दक्षिण-वीथि का भेदन 333
बुध की उत्तर-वीथि का भेदन 334
कृत्तिका, विशाखा आदि नक्षत्रों मे बुध के गमन का फल 335
विवेचन 336

उन्नीसवाँ अध्याय
मगल के चार, प्रवास, वर्ण, दीप्ति आदि के कथन की प्रतिज्ञा 339
मगल के चार और प्रवास की काल-गणना 340
मंगल के शुभ और अशुभ का विचार 340
प्रजापति मगल 340
ताम्रवर्ण के मगल का फल 340
रोहिणी नक्षत्र पर मंगल की चेष्टा का फल 340
दक्षिण मंगल के सभी द्वारों का अवलोकन 341
मगल के पाँच प्रमुख वक्र और उनका फल 341
वक्रगति से मंगल के गमन और नक्षत्रघात का फल 341
अपगति के गमन का फल 342
मगल के वर्ण, कान्ति और स्पर्श का फल 345
विवेचन 345

बीसवाँ अध्याय
राहु-चार के कथन की प्रतिज्ञा 349
राहु की प्रकृति, विकृति आदि के अनुसार शुभाशुभ निमित्त 349
चन्द्रग्रहण का वर्णन 349
राशि तथा समय के अनुसार ग्रहण-फल 351
चन्द्रग्रहण का विभिन्न दृष्टियो से फल 351
चन्द्रग्रहण सम्बन्धी अन्य शकुन 356

विवेचन 358

इक्कीसवाँ अध्याय

केतु-वर्णन की प्रतिज्ञा 364
केतुओ के चिह्न 365
केतु का वर्ण के अनुसार फलादेश 365
विकृत केतु का फल 366
केतु की शिखा के अनुसार फलादेश 366
गुल्म, विकान्त, कबन्ध, मण्डली, मयूर, धूमकेतु 366
धूमकेतु का विशेष फल 367
केतूदय का फल 369
विपथ केतु का फल 370
स्वाति नक्षत्र मे उदित केतु का फल 370
भय उत्पन्न करने वाले केतुओ के नाम 371
उत्पात नही करनेवाले केतु 372
केतु-शान्ति के पूजा-विधान की आवश्यकता 372
विवेचन 373

बाईसवाँ अध्याय

सूर्य-चार के कथन की प्रतिज्ञा 380
उदय-काल मे सूर्य की कान्ति के अनुरूप फल 381
दिशाओ के अनुसार सूर्योदय काल की आकृति का फलादेश 381
शृ गी वर्ण के सूर्य का फलादेश 383
अस्तकालीन सूर्य का फल 383
चन्द्र और सूर्य के पर्वकाल का फल 383
विवेचन 384

तेईसवाँ अध्याय

चन्द्र-विचार और उसके शुभाशुभ निरूपण की प्रतिज्ञा 387
चन्द्रमा की शृ गोन्नति का विचार 387
चन्द्रमा की आभा और वर्ण विचार 387
चतुर्थी, पचमी आदि तिथियो मे चन्द्रमा की विकृति का फल 388
प्रतिपदा आदि तिथियो मे चन्द्रमा मे अन्य ग्रहो के प्रविष्ट होने का फल 389
चन्द्र-विपर्यय का फल 389
विभिन्न वीथियो और नक्षत्रो मे विवर्ण चन्द्र के गमन करने का फल 391
वैश्वानर आदि मार्गों मे चन्द्रमा के विभिन्न प्रकार का फल 392

चन्द्र द्वारा शनि, रवि आदि ग्रहों के घात का फल 393
क्षीण चन्द्रमा का फल 395
विवेचन 395

चौबीसवाँ अध्याय

ग्रहयुद्ध के वर्णन की प्रतिज्ञा 399
यायी संज्ञक ग्रह 399
जय-पराजय सूचक ग्रह 400
चन्द्रघात और ग्रहघात 400
शुक्रघात 401
ग्रहयुद्ध के समय होने वाले ग्रहवर्णों के अनुसार फलादेश 401
रोहिणी नक्षत्र के घातित होने का फल 403
ग्रहों की वात-पित्तादि प्रकृतियों का विचार 404
विवेचन 405

पच्चीसवाँ अध्याय

नक्षत्र और ग्रहों के निमित्तज्ञान की आवश्यकता 408
ग्रहों की आकृति, वर्ण और चिह्नों द्वारा तेजी-मन्दी का विचार 408
ग्रहों के प्रतिपुद्गल 409
नक्षत्रों के सम्बन्ध के अनुसार विभिन्न ग्रहों द्वारा तेजी-मन्दी एवं हीनाधिकता का विचार 415
विवेचन 416

छब्बीसवाँ अध्याय

मंगलाचरण 430
स्वप्नदर्शन के कारण वात, पित्त और कफ प्रकृतिवालों द्वारा दृष्ट स्वप्नों का फल 431
राज्यप्राप्तिसूचक स्वप्न 431
जयसूचक स्वप्न 433
विपत्तिमोचन-सूचक स्वप्न 433
धन-धान्यवृद्धि-सूचक स्वप्न 434
शस्त्रघात, पीडा तथा कष्टसूचक स्वप्न 435
स्त्रीप्राप्ति सूचक स्वप्न 435
मृत्युसूचक स्वप्न 436
कल्याण-अकल्याण सूचक स्वप्न 438
धन-प्राप्ति एवं धनवृद्धि सूचक स्वप्न 439

निश्चयमृत्यु सूचक स्वप्न 440
भयसूचक स्वप्न 441
लाभसूचक स्वप्न 441
विवेचन 444

सत्ताईसवाँ अध्याय
तूफान के सूचक उत्पात 455
नक्षत्रो मे चन्द्रमा की स्थिति का विचार 455
नक्षत्रो के अनुसार नवीन वस्त्र धारण करने का फल 455
विवेचन 457

परिशिष्ट अध्याय
निमित्त कथन की प्रतिज्ञा 461
भौम, अन्तरिक्ष आदि आठ प्रकार के निमित्त 461
रोगो की सख्या का कथन 461
द्विधा सल्लेखना का वर्णन 461
अरिष्टो का कथन 462
मन्त्रपाठ के साथ अरिष्ट-निरीक्षण 465
अभिमन्त्रित होकर छायादर्शन 468
छायापुरुष के दर्शन द्वारा अरिष्ट-कथन 473
स्वप्न-फल का निरूपण 474
दोषज, इष्ट आदि आठ प्रकार के स्वप्न 483
सफल तथा निष्फल प्रश्न 483
गुरु के अतिरिक्त अन्य व्यक्ति के समक्ष स्वप्न को प्रकाशित न करने का विधान 484
अभिमन्त्रित तैल मे मुख की छाया द्वारा अरिष्ट का विचार 486
शब्दश्रवण द्वारा शुभाशुभ फल का विचार 486
शकुनविचार 487
भूमि पर सूर्य-बिम्ब का दर्शन कर अरिष्ट के कथन का निरूपण 487
रोगी के हाथ द्वारा रोगी के अरिष्ट का सकेत 490
षोडशदल कमलचक्र द्वारा आयुपरीक्षा 490
अश्विनी आदि 27 नक्षत्रो मे वस्त्र धारण का क्रमश फल-कथन 491
नूतन वस्त्र के कटने-फटने, छिद्र आदि होने के फल का निरूपण 493
विवाह, राज्योत्सव आदि काल मे वस्त्र धारण का शुभ फल 494
श्लोकानुक्रमणिका 495

भद्रबाहुसंहिता

प्रथमोऽध्यायः

नमस्कृत्य जिनं वीरं सुरासुरनतक्रमम् ।
यस्य ज्ञानाम्बुधे· प्राप्य किञ्चिद् वक्ष्ये निमित्तकम्[1] ॥ 1 ॥

जिनके चरणो मे सुर और असुर नम्रित हुए है, ऐसे श्री महावीर स्वामी को नमस्कार कर, उनके ज्ञानरूपी समुद्र के आश्रय मे मैं निमित्तो का किञ्चित् वर्णन करता हूँ ॥ 1 ॥

मागधेषु पुरं ख्यातं नाम्ना राजगृहं शुभम् ।
नानाजनसमाकीर्णं[2] नानागुणविभूषितम् ॥ 2 ॥

मगध देश के नगरो मे प्रसिद्ध राजगृह नाम का श्रेष्ठ नगर है, जो नाना प्रकार के मनुष्यो से व्याप्त और अनेक गुणो से युक्त है ॥ 2 ॥

तत्रास्ति सेनजिद् राजा युक्तो राजगुणै: शुभै: ।
तस्मिन् शैले सुविख्यातो नाम्ना पाण्डुगिरि. शुभ.[3] ॥ 3 ॥

राजगृह नगरी मे राजाओ के उपयुक्त शुभ गुणो से सम्पन्न सेनजित् नाम का राजा है। तथा उस नगरी मे (पाँच) पर्वतो मे विख्यात पाण्डुगिरि नाम का श्रेष्ठ पर्वत है ॥ 3 ॥

नानावृक्षसमाकीर्णो नानाविहगसेवित· ।
चतुष्पदै: सरोभिश्च साधुभिश्चोपसेवित.[4] ॥ 4 ॥

यह पर्वत अनेक प्रकार के वृक्षो से व्याप्त है। अनेक पक्षियो का क्रीडास्थल है।

---

1 यह श्लोक मुद्रित प्रति मे नही है। 2 पदाकीर्णं मु०। 3 शुभम् ब०। 4 शोभित: आ०।

नाना प्रकार के पशुओ की विहारभूमि है, तालाबो से युक्त है और साधुओ से उपसेवित है ।। 4 ।।

तत्रासीनं महात्मानं[1] ज्ञानविज्ञानसागरम्[2] ।
तपोयुक्त च श्रेयांसं भद्रबाहुं निराश्रयम् ।। 5 ।।
द्वादशांगस्य वेत्तारं निर्ग्रन्थं च महाद्युतिम् ।
वृत्तं शिष्यै. प्रशिष्यैश्च निपुणं तत्त्ववेदिनाम्[3] ।। 6 ।।
प्रणम्य [4]शिरसाऽऽचार्यमूचु शिष्यास्तदा गिरम्[5] ।
सर्वेषु प्रीतमनसो दिव्यं ज्ञानं बुभुत्सव ।। 7 ।।

उस पाण्डुगिरि (पर्वत) पर स्थित महात्मा, ज्ञान-विज्ञान के समुद्र, तपस्वी, कल्याणमूर्ति, अपराधीन, द्वादशाग श्रुत के वेत्ता, निर्ग्रन्थ, महाकान्ति से विभूषित, शिष्य-प्रशिष्यो से युक्त और तत्त्ववेदियो मे निपुण आचार्य भद्रबाहु को सिर से नमस्कार कर सब जीवो पर प्रीति करने वाले और दिव्य ज्ञान के इच्छुक शिष्यो ने उनसे प्रार्थना की ।। 5-7 ।।

पार्थिवानां हितार्थाय शिष्याणां[6] हितकाम्यया ।
श्रावकाणां हितार्थाय दिव्यं ज्ञानं ब्रवीहि न ।।8।।

राजाओ, भिक्षुओ और श्रावको के हित के लिए आप हमे दिव्यज्ञान—निमित्त ज्ञान का उपदेश दीजिए ।। 8 ।।

शुभाऽशुभ समुद्‌भूतं श्रुत्वा राजा निमित्तत ।
विजिगीषु स्थिरमति सुखं पाति महीं सदा ।।9।।

यत शत्रुओ को जीतने का इच्छुक राजा निमित्त के बल से अपने शुभाशुभ को सुनकर स्थिरमति हो सुखपूर्वक सदा पृथ्वी का पालन करता है ।। 9 ।।

राजाभि पूजिता. सर्वे भिक्षवो धर्मचारिण ।
विहरन्ति निरुद्विग्नास्तेन राजभियोजिता[7] ।।10।।

धर्मपालक सभी भिक्षु राजाओ द्वारा पूजित होते हुए और उनकी सेवादि को प्राप्त करते हुए निराकुलतापूर्वक लोक मे विचरण करते हैं । ।। 10 ।।

पापमुत्पातिकं दृष्ट्वा ययुर्देशाश्च भिक्षव ।
स्फीतान् जनपदांश्चैव संश्रयेयु प्रचोदिता.[8] ।।11।।

---

1 महाज्ञान आ० । 2 निरामयम् मु० । 3 वादिनम् मु० A । 4 आचार्यम् मु० । 5 वाचस्पतिम् मु० । 6 भिक्षूणाम् मु० । 7 राज्ञाभिरभिपूरिता. ब० । 8 अनोदिता मु० ।

भिक्षु आश्रित देश को भविष्यत्काल मे पापयुक्त अथवा उपद्रवयुक्त अवगत कर वहाँ से देशान्तर को चले जाते है तथा स्वतन्त्रतापूर्वक धन-धान्यादि सम्पन्न देशो मे निवास करते है ॥ 11 ॥

श्रावका स्थिरसंकल्पा दिव्यज्ञानेन हेतुना ।
नाश्रयेयु:[1] परं तीर्थं यथा[2] सर्वज्ञभाषितम् ॥12॥

श्रावक इस दिव्य निमित्त ज्ञान को पाकर दृढसकल्पी होते है और सर्वज्ञकथित तीर्थ-धर्म को छोडकर अन्य तीर्थ का आश्रय नही लेते ॥ 12 ॥

सर्वेषामेव सत्त्वानां[3] दिव्यज्ञान[4] सुखावहम् ।
भिक्षुकाणां विशेषेण परपिण्डोपजीविनाम् ॥13॥

यह दिव्यज्ञान—अष्टागनिमित्त ज्ञान सब जीवो को सुख देने वाला है और परपिण्डोपजीवी साधुओ को विशेष रूप मे सुख देने वाला है ॥ 13 ॥

विस्तीर्णं द्वादशागं तु [5]भिक्षुवश्चाल्पमेधस ।
भवितारो हि वहवस्तेषां चैवेदमुच्यताम् ॥14॥

द्वादशाग श्रुत तो बहुत विश्रुत है और आगामी काल मे भिक्षु अल्पबुद्धि के धारक होगे, अत उनके लिए निमित्त शास्त्र का उपदेश कीजिए ॥ 14 ॥

सुखग्राह्यं[6] लघुग्रन्थं स्पष्टं शिष्यहितावहम् ।
सर्वज्ञभाषितं तथ्यं निमित्तं तु ब्रवीहि न. ॥15॥

जो सरलता से ग्रहण किया जा सके, सक्षिप्त हो, स्पष्ट हो, शिष्यो का हित करने वाला हो, सर्वज्ञ द्वारा भाषित हो और यथार्थ हो, उस निमित्त शास्त्र का हम लोगो के लिए उपदेश कीजिए ॥ 15 ॥

उल्का समासतो व्यासात् परिवेषांस्तथैव च ।
विद्युतोऽभ्राणि सन्ध्याश्च मेघान् वातान् प्रवणर्षम् ॥16॥
गन्धर्वनगरं गर्भान् यात्रोत्पा[7]तास्तथैव च ।
ग्रहचार पृथक्त्वेन ग्रहयुद्धं च कृत्स्नत: ॥17॥
वातिकं चाथ स्वप्नांश्च[8] मुहूर्तांश्च तिथीस्तथा ।
करणानि निमित्त[9] च शकुन[10] पाकमेव च ॥18॥

---

1 माश्रयेयु मु० A । 2 सदा आ० । 3 जन्तूनाम् मु० । 4. दिव्य ज्ञान मु० । 5 भिक्षव स्वल्पमेधस. मु० । A । 6 ग्राह्य ब० । 7 यात्रामुत्पातकाम् मु० A । 8. स्वप्नश्च मु० A । 9 निमित्तानि मु० A. । 10 शाकुन पाकमेव च मु० A ।

ज्यौतिषं केवलं कालं वास्तुदिव्येन्द्र[1]सम्पदा।
लक्षणं व्यञ्जनं चिह्नं तथा[2] दिव्यौषधानि[3] च ॥19॥

बलाऽबलं च सर्वेषां विरोध च पराजयम्।
तत्सर्वमानुपूर्वेण प्रब्रवीहि महामते[4] ! ॥20॥

सर्वानेतान् यथोद्दिष्टान् भगवन् वक्तुमर्हसि।
प्रश्नान् शुश्रूषवः सर्वे वयमन्ये च साधव ॥21॥

हे महामते ! सक्षेप और विस्तार से उल्का, परिवेष, विद्युत्, अभ्र, सन्ध्या, मेघ, वात, प्रवर्षण, गन्धर्वनगर, गर्भ, यात्रा, उत्पात, पृथक्-पृथक् ग्रहचार, गृहयुद्ध, वातिक—तेजी-मन्दी, स्वप्न, मुहूर्त्त, तिथि, करण, निमित्त, शकुन, पाक, ज्योतिष, वास्तु, दिव्येन्द्रसपदा, लक्षण, व्यञ्जन, चिह्न, दिव्यौषध, बलाबल, विरोध और जय-पराजय इन समस्त विषयो का क्रमश वर्णन कीजिए। हे भगवन् ! जिस क्रम मे इनका निर्देश किया है, उसी क्रम से इनका उत्तर दीजिए। हम सभी तथा अन्य साधुजन इन प्रश्नो का उत्तर सुनने के लिए उत्कण्ठित हैं ॥ 16-21 ॥

इति श्रीमहामुनिनिर्ग्रन्थ[5]भद्रबाहुसहिताया ग्रन्थागमचयो[6] नाम प्रथमोऽध्याय ।

विवेचन—इस ग्रन्थ मे श्रावक और मुनि दोनो के लिए उपयोगी निमित्त का विवेचन आचार्य भद्रबाहु स्वामी ने किया है। इसके प्रथम अध्याय मे ग्रन्थ मे विवेच्य विषय का निर्देश किया गया है। इस ग्रन्थ मे उन निमित्तो का निरूपण किया है, जिनके अवलोकन मात्र से कोई भी व्यक्ति अपने शुभाशुभ को अवगत कर सकता है। अष्टाग निमित्त ज्ञान को आचार्यों ने विज्ञान के अन्तर्गत रखा है, यत "मोक्षे धीर्ज्ञानमन्यत्र विज्ञान शिल्पशास्त्रयो" अर्थात्—निर्वाण-प्राप्ति सम्बन्धी ज्ञान को ज्ञान और शिल्प तथा अन्य शास्त्र सबधी जानकारी को विज्ञान कहते है। यह उभय लोक की सिद्धि मे प्रयोजक है, इसलिए गृहस्थो के समान मुनियो के लिए भी उपयोगी माना गया है। किसी एक निमित्त से यथार्थ का निर्णय नही हो सकता। निर्णय करना निमित्तो के स्वभाव, परिमाण, गुण एव प्रकारो पर भी बहुत अशो मे निर्भर है। यहाँ प्रथम अध्याय मे निरूपित वर्ण्य

1. वसु दिव्येन्द्रसम्पच्च मु० A, वासुदेवेन्द्र आ० । 2 लग्न मु० । 3. दिव्यौषधानि च म० । 4 निबोधय आ० । 5. भद्रबाहुके निमित्ते । 6. ग्रन्थसञ्चयो आ० ।

विषयों का संक्षिप्त परिभाषात्मक परिचय दे देना भी अप्रासगिक न होगा।

उल्का—"ओषति, उष षकारस्य लत्व क ततः टाप्"—अर्थात् उष् धातु के षकार का 'ल' हो जाने से क प्रत्यय कर देने पर स्त्रीलिंग मे उल्का शब्द बनता है। इसका शाब्दिक अर्थ है तेज पुञ्ज, ज्वाला या लपट। तात्पर्यार्थ लिया जाता है, आकाश से पतित अग्नि। कुछ मनीषी आकाश से पतित होने वाले उल्का-काण्डो को टूटा तारा के नाम से कहते हैं। ज्योतिष शास्त्र मे बताया गया है कि उल्का एक उपग्रह है। इसके आनयन का प्रकार यह है कि सूर्याक्रान्त नक्षत्र से पचम विद्युन्मुख, अष्टम शून्य, चतुर्दश सन्निपात, अष्टादश केतु, एकविंश उल्का, द्वाविंशति कल्प, त्रयोविंशति वज्र और चतुर्विंशति निघात सज्ञक होता है। विद्युन्मुख, शून्य, सन्निपात, केतु, उल्का, कल्प, वज्र, और निघात ये आठ उपग्रह माने जाते है। इनका आनयन पूर्ववत् सूर्य नक्षत्र से किया जाता है।

मान ले कि सूर्य कृत्तिका नक्षत्र पर है। यहाँ कृत्तिका से गणना की तो पचम पुनर्वसु नक्षत्र विद्युन्मुख-सज्ञक, अष्टम मघा शून्यसज्ञक, चतुर्दश विशाखा नक्षत्र सन्निपात-सज्ञक, अष्टादश पूर्वाषाढ केतु-सज्ञक, एकविंशति धनिष्ठा उल्का सज्ञक, द्वाविंशति शतभिषा कल्प-सज्ञक, त्रयोविंशति पूर्वभाद्रपद वज्र-संज्ञक और चतुर्विंशति उत्तराभाद्रपद निघातसज्ञक माना जायगा। इन उपग्रहो का फलादेश नामानुसार है तथा विशेष आगे बतलाया जायगा।

निमित्तज्ञान मे उपग्रह सम्बन्धी उल्का का विचार नही होता है। इसमे आकाश से पतित होनेवाले तारो का विचार किया जाता है। आधुनिक वैज्ञानिको ने उल्का के रहस्य को पूर्णतया अवगत करने की चेष्टा की है। कुछ लोग इसे Shooting stars टूटनेवाला नक्षत्र, कुछ Fire-bells अग्नि-गोलक और कुछ इसे Asteroids उपनक्षत्र मानते है। प्राचीन ज्योतिर्विदो का मत है कि वायुमण्डल के ऊर्ध्व भाग मे नक्षत्र जैसे कितने ही दीप्तिमान पदार्थ समय-समय पर दीख पडते हे और गगनमार्ग मे द्रुतवेग से चलते है तथा अन्धकार मे लुप्त हो जाते हैं। कभी-कभी कतिपय बृहदाकार दीप्तिमान पदार्थ दृष्टिगोचर होते है, पर वायु की गति से विपर्यय हो जाने के कारण उनके कई खण्ड हो जाते हैं और गम्भीर गर्जन के साथ भूमितल पर पतित हो जाते है। उल्काएँ पृथ्वी पर नाना प्रकार के आकार मे गिरती हुई दिखलाई पडती है। कभी-कभी निरभ्र आकाश मे गम्भीर गर्जन के साथ उल्कापात होता है। कभी निर्मल आकाश मे झटिति मेघो के एकत्रित होते ही अन्धकार मे भीषण शब्द के साथ उल्कापात होते देखा जाता है। योरोपीय विद्वानो की उल्कापात के सम्बन्ध मे निम्न सम्मति है —

(1) तरल पदार्थ से जैसे धूम उठता है, वैसे ही उल्का सम्बन्धी द्रव्य भी अतिशय सूक्ष्म आकार में पृथ्वी से वायुमण्डल के उच्चस्थ मेघ पर जा जुटता है

और रासायनिक क्रिया से मिलकर अपने गुरुत्व के अनुसार नीचे गिरता है।

(2) उल्का के समस्त प्रस्तर पहले आग्नेय गिरि से निकल अपनी गति के अनुसार आकाश मण्डल पर बहुत दूर पर्यन्त चढते है और अवशेष मे पुन प्रबल वेग से पृथ्वी पर गिर पडते है।

(3) किसी-किसी समय चन्द्रमण्डल के आग्नेय गिरि से इतने वेग मे धातु निकलता है कि पृथ्वी के निकट आ लगता है और पृथ्वी की शक्ति से खिचकर नीचे गिर पडता है।

(4) समस्त उल्काएँ उपग्रह है। ये सूर्य के चारो ओर अपने-अपने कक्ष मे घूमती है। इनमे सूर्य जैसा आलोक रहता है। पवन स अभिभूत होकर उल्काएँ पृथ्वी पर पतित होती हे। उल्काएँ अनेक आकार-प्रकार की होती हैं।

आचार्य न यहाँ पर देदीप्यमान नक्षत्र-पुञ्जो की उल्का सज्ञा दी हे, ये नक्षत्र-पुञ्ज निमित्तसूचक ह। इनके पतन क आकार-प्रकार, दीप्ति, दिशा आदि स शुभाशुभ का विचार किया जाता ह। द्वितीय अध्याय म इसक फलादेश का निरूपण किया जायगा।

परिवेष—"परितो विष्यत व्याप्यतेऽनेन" अर्थात् चारो ओर मे व्याप्त होकर मण्डलाकार हो जाना परिवेष हे। यह शब्द विष् धातु स घञ् प्रत्यय कर दने पर निष्पन्न होता हे। इस शब्द का तात्पर्यार्थ यह ह कि सूर्य या चन्द्र की किरणे जब वायु द्वारा मण्डलीभूत हो जाती हे तब आकाश मे नानावर्ण आकृति विशिष्ट मण्डल बन जाता है, इसी को परिवेष कहते ह। यह परिवेष रक्त, नील, पीत, कृष्ण, हरित आदि विभिन्न रगो का होता है और इसका फलादेश भी इन्ही रगो के अनुसार होता हे।

विद्युत्—"विशेषेण द्योतते इति विद्युत्"। द्युत् धातु से क्विप् प्रत्यय करने पर विद्युत् शब्द बनता है। इसका अर्थ हे बिजली, तडित्, शम्पा, सौदामिनी आदि। विद्युत् के वर्ण की अपेक्षा स चार भद माने गये है—कपिला, अतिलोहिता, सिता और पीता। कपिल वर्ण की विद्युत् होने से वायु, लोहित वर्ण की होन से आतप, पीत वर्ण की होने से वर्षण और सित वर्ण की होने से दुर्भिक्ष होता है। विद्युदुत्पत्ति का एक मात्र कारण मेघ है। समुद्र और स्थल भाग की ऊपरवाली वायु तडित् उत्पन्न करने मे असमर्थ है, किन्तु जल के वाष्पीभूत होते ही उसमे विद्युत् उत्पन्न हो जाती है। आचार्य ने इस ग्रन्थ मे मे विद्युत् द्वारा विशेष फलादेश का निरूपण किया है।

अभ्र—आकाश के रूप-रग, आकृति आदि के द्वारा फलाफल का निरूपण करना अभ्र के अन्तर्गत है। अभ्र शब्द का अर्थ गगन है। दिग्दाह-दिशाओ की

आकृति भी अभ्र के अन्तर्गत आ जाती है।

सन्ध्या—दिवा और रात्रि का जो सन्धिकाल है उसी को सन्ध्या कहते है। अर्द्ध अस्तमित और अर्द्ध उदित सूर्य जिस समय होता है, वही प्रकृत सन्ध्याकाल है। यह काल प्रकृत सन्ध्या होने पर भी दिवा और रात्रि एक-एक दण्ड सन्ध्याकाल माना गया है। प्रात और साय को छोडकर और भी एक सन्ध्या है, जिसे मध्याह्न कहते है। जिस समय सूर्य आकाश मण्डल के मध्य मे पहुँचता है, उस समय मध्याह्न सन्ध्या होती है। यह सन्ध्याकाल सप्तम मुहूर्त के बाद अष्टम मुहूर्त मे होता है। प्रत्येक सन्ध्या का काल २४ मिनट या १ घटी प्रमाण है। सध्या के रूप-रग, आकृति आदि के अनुसार शुभाशुभ फल का निरूपण इस ग्रथ मे किया जायगा।

मेघ—मिह धातु मे अच् प्रत्यय कर देने मे मेघ शब्द बनता है। इसका अर्थ है बादल। आकाश मे हमे कृष्ण, श्वेत आदि वर्ण की वायवीय जलराशि की रेखा वाष्पाकार मे चलती हुई दिखलाई पडती है, उसी को मेघ (Cloud) कहते है। पर्वत के ऊपर कुहासे की तरह गहरा अन्धकार दिखाई देता हे, वह मेघ का रूपान्तर मात्र हे। वह आकाश मे सचित घनीभूत जल-वाष्प से बहुत कुछ तरल होता हे। यही तरल कुहरे की जैसी वाष्पराशि पीछे घनीभूत होकर स्थानीय शीतलता के कारण अपने गर्भस्थ उत्ताप को नष्ट कर शिशिर बिन्दु की तरह वर्षा करती है। मेघ और कुहासे की उत्पत्ति एक ही है, अन्तर इतना ही है कि मेघ आकाश मे चलता है और कुहासा पृथ्वी पर। मेघ अनेक वर्ण और अनेक आकार के होते है। फलादेश इनके आकार और वर्ण के अनुसार वर्णित किया जाता है। मेघो के अनेक भेद हे, इनमे चार प्रधान है -आवर्त, सवर्त्त, पुष्कर और द्रोण। आवर्त मेघ निर्मल, सवर्त्त मेघ बहुजल विशिष्ट, पुष्कर दुष्कर-जल और द्रोण शस्यपूरक होते है।

वात—वायु के गमन, दिशा और चक्र द्वारा शुभाशुभ फल वात अध्याय मे निरूपित किया गया है। वायु का सचार अनेक प्रकार के निमित्तो को प्रकट करने वाला है।

प्रवर्षण—वर्षा-विचार प्रकरण को प्रवर्षण मे रखा गया है। ज्येष्ठ पूर्णिमा के बाद यदि पूर्वाषाढा नक्षत्र मे वृष्टि हो तो जल के परिमाण और शुभाशुभ सम्बन्ध मे विद्वानो का मत है कि एक हाथ गहरा, एक हाथ लम्बा और एक हाथ चौडा गड्ढा खोदकर रखे। यदि यह गड्ढा वर्षा के जल से भर जावे तो एक आढक जल होता है। किसी-किसी का मत है कि जहाँ तक दृष्टि जाय, वहाँ तक जल दिखलाई दे तो अतिवृष्टि समझनी चाहिए। वर्षा का विचार ज्येष्ठ की

पूर्णिमा के अनन्तर आषाढ की प्रतिपदा और द्वितीया तिथि की वर्षा से ही किया जाता है।

गन्धर्वनगर—गगन-मण्डल मे उदित अनिष्टसूचक पुरविशेष को गन्धर्वनगर कहा जाता है। पुद्गल के आकार विशेष नगर के रूप मे आकाश मे निर्मित हो जाते हैं। इन्ही नगरो द्वारा फलादेश का निरूपण करना गन्धर्वनगर सम्बन्धी निमित्त कहलाता है।

गर्भ—बताया जाता है कि ज्येष्ठ महीने की शुक्ला अष्टमी से चार दिन तक मेघ वायु से गर्भ धारण करता हे। उन दिनो यदि मन्द वायु चले तथा आकाश मे सरस मेघ दीख पडे तो शुभ जानना चाहिए और उन दिनो मे यदि स्वाति आदि चार नक्षत्रो मे क्रमानुसार वृष्टि हो तो श्रावण आदि महीनो मे वैसा ही वृष्टियोग समझना चाहिए। किसी-किसी का मत है कि कार्तिक मास के शुक्ल पक्ष के उपरान्त गर्भदिवस आता हे। गर्गादि के मत से अगहन के शुक्ल पक्ष की प्रतिपदा के उपरान्त जिस दिन चन्द्रमा और पूर्वाषाढा का सयोग होता है, उसी दिन गर्भलक्षण समझना चाहिए। चन्द्रमा के जिस नक्षत्र को प्राप्त होने पर मेघ के गर्भ रहता है, चन्द्रविचार से 195 दिनों मे उस गर्भ का प्रसवकाल आता हे। शुक्लपक्ष का गर्भ कृष्णपक्ष मे, कृष्णपक्ष का शुक्लपक्ष मे, दिवसजात गर्भ रात मे, रात का गर्भ दिन मे एव सन्ध्या का गर्भ प्रात. और प्रात का गर्भ सध्या को प्रसव--वर्षा करता है। मृगशिरा और पौष शुक्लपक्ष का गर्भ मन्द फल देनेवाला होता है। पौष कृष्णपक्ष के गर्भ का प्रसवकाल श्रावण शुक्लपक्ष, माघ शुक्लपक्ष के मेघ का श्रावण कृष्णपक्ष, माघ कृष्णपक्ष के मेघ का श्रावण शुक्लपक्ष, फाल्गुन शुक्लपक्ष के मेघ का भाद्रपद कृष्णपक्ष, फाल्गुन कृष्णपक्ष के मेघ का आश्विन शुक्लपक्ष, चैत्र शुक्लपक्ष के मेघ का आश्विन कृष्णपक्ष एव चैत्र कृष्णपक्ष के मेघ का कार्तिक शुक्लपक्ष वर्षाकाल है। पूर्व का मेघ पश्चिम और पश्चिम का मेघ पूर्व मे बरसता है। गर्भ से वृष्टि का परिज्ञान तथा खेती का विचार किया जाता है। मेघ गर्भ के समय वायु के योग का विचार कर लेना भी आवश्यक है।

यात्रा--इस प्रकरण मे मुख्य रूप से राजा की यात्रा का निरूपण किया है। यात्रा के समय मे होने वाले शकुन-अशकुनो द्वारा शुभाशुभ फल निरूपित है। यात्रा के लिए शुभ तिथि, शुभ नक्षत्र, शुभ वार, शुभ योग और शुभ करण का होना परमावश्यक है। शुभ समय मे यात्रा करने से शीघ्र और अनायास ही कार्यसिद्धि होती है।

उत्पात—स्वभाव के विपरीत घटित होना ही उत्पात है। उत्पात तीन प्रकार के होते है दिव्य, अन्तरिक्ष और भौम। नक्षत्रो का विकार, उल्का,

निर्घात, पवन और घेरा दिव्य उत्पात हैं, गन्धर्वनगर, इन्द्रधनुष आदि अन्तरिक्ष उत्पात हैं और चर एव स्थिर आदि पदार्थों से उत्पन्न हुए उत्पात भौम कहे जाते हैं।

ग्रहचार—सूर्य, चन्द्र, भौम, बुध, गुरु, शुक्र, शनि, राहु और केतु इन ग्रहो के गमन द्वारा शुभाशुभ फल अवगत करना ग्रहचार कहलाता है। समस्त नक्षत्रो और राशियो मे ग्रहो की उदय, अस्त, बक्री, मार्गी इत्यादि अवस्थाओ द्वारा फल का निरूपण करना ग्रहचार है।

ग्रहयुद्ध—मगल, बुध, गुरु, शुक्र और शनि इन ग्रहो मे से किन्ही दो ग्रहो की अधोपरि स्थिति होने से किरणे परस्पर मे स्पर्श करें तो उसे ग्रहयुद्ध कहते है। बृहत्सहिता के अनुसार अधोपरि अपनी-अपनी कक्षा मे अवस्थित ग्रहों मे अतिदूरत्वनिबन्धन देखने के विषय मे जो समता होती है, उसे ही ग्रहयुद्ध कहते है। ग्रहयुति और ग्रहयुद्ध मे पर्याप्त अन्तर है। ग्रहयुति मे मगल, बुध, गुरु, शुक्र और शनि इन पाँच ग्रहो मे मे कोई भी ग्रह जब सूर्य या चन्द्र के साथ समरूप मे स्थित होते है, तो ग्रहयुति कहलाती है और जब मगलादि पाँचो ग्रह आपस मे ही समसूत्र मे स्थित होते है तो ग्रहयुद्ध कहा जाता है। स्थिति के अनुसार ग्रहयुद्ध के चार भेद है—उल्लेख, भेद, अशुविमर्द और अपसव्य। छायामात्र से ग्रहो के स्पर्श हो जाने को उल्लेख, दोनो ग्रहो का परिमाण यदि योगफल के आधे से ग्रह-द्वय का अन्तर अधिक हो तो उस युद्ध को भेद, दो ग्रहो की किरणो का सघट्ट होना अशविमर्द एव दोनो ग्रहो का अन्तर साठ कला से न्यून हो तो उसे अपसव्य कहते है।

वार्तिक या अर्घकाण्ड—ग्रहो के स्वरूप, गमन, अवस्था एव विभिन्न प्रकार के बाह्य निमित्तो द्वारा वस्तुओ की तेजी-मन्दी अवगत करना अर्घकाण्ड है।

स्वप्न—चिन्ताधारा दिन और रात दोनो मे समान रूप से चलती है। जाग्रतावस्था की चिन्ताधारा पर हमारा नियन्त्रण रहता है, पर सुषुप्तावस्था की चिन्ताधारा पर हमारा नियन्त्रण नही रहता है, इसीलिए स्वप्न भी नाना अलकार-मयी प्रतिरूपो मे दिखलाई पडते है। स्वप्न मे दर्शन और प्रत्यभिज्ञानुभूति के अतिरिक्त शेषानुभूतियो का अभाव होने पर भी सुख, दुख, क्रोध, आनन्द, भय, ईर्ष्या आदि सभी प्रकार के मनोभाव पाये जाते है। इन भावो के पाये जाने का प्रधान कारण हमारी अज्ञात इच्छा है। स्वप्न द्वारा भविष्य मे घटित होने वाली शुभाशुभ घटनाओ की सूचना अलकृत भाषा मे मिलती है, अत उस अलकृत भाषा का विश्लेषण करना ही स्वप्न-विज्ञान का कार्य है। अरस्तू (Aristotle) ने स्वप्न के कारणो का विश्लेषण करते हुए लिखा है कि जागृत अवस्था मे जिन प्रवृत्तियो की ओर व्यक्ति का ध्यान नही जाता, वे ही प्रवृत्तियाँ अर्द्धनिद्रित

अवस्था मे उत्तेजित होकर मानसिक जगत् मे जागरूक हो जाती है। अत स्वप्न मे भावी घटनाओ की सूचना के साथ हमारी छिपी हुई प्रवृत्तियो का ही दर्शन होता है। एक दूसरे पश्चिमीय दार्शनिक ने मनोवैज्ञानिक कारणो की खोज करते हुए बतलाया है कि स्वप्न मे मानसिक जगत् के साथ बाह्य जगत् का सम्बन्ध रहता है, इसलिए हमे भविष्य मे घटने वाली घटनाओ की सूचना स्वप्न की प्रवृत्तियो से मिलती है। डाक्टर सी० जे० ह्विटबे (Dr C J Whitbey) ने मनोवैज्ञानिक ढग से स्वप्न के कारणो की खोज करते हुए लिखा है कि गर्मी के कारण हृदय की जो क्रियाएँ जागृत अवस्था मे सुषुप्त रहती है, वे ही स्वप्नावस्था मे उत्तेजित होकर सामने आ जाती है। जागृत अवस्था मे कार्य-सलग्नता के कारण जिन विचारो की ओर हमारा ध्यान नही जाता है, निद्रित अवस्था मे वे ही विचार स्वप्नरूप से सामने आते है। पृथग्गोरियन सिद्धान्त मे माना गया है कि शरीर आत्मा की कब्र है। निद्रित अवस्था मे आत्मा स्वतन्त्र रूप से असल जीवन की ओर प्रवृत्त होता है और अनन्त जीवन की घटनाओ को ला उपस्थित करता है। अत स्वप्न का सम्बन्ध भविष्यकाल के साथ भी है। बबीलोनियन (Babylonian) कहते है कि स्वप्न मे देव और देवियाँ आती है तथा स्वप्न मे हमे उनके द्वारा भावी जीवन की सूचनाएँ मिलती है, अत स्वप्न की बाता द्वारा भविष्यत् कालीन घटनाएँ सूचित की जाती है। गिलजेम्स (Giljames) नामक महाकाव्य मे लिखा है कि वीरो को रात मे स्वप्न द्वारा उनके भविष्य की सूचना दी जाती थी। स्वप्न का सम्बन्ध देवी-देवताओ से है, मनुष्यो से नही। देवी-देवता स्वभावत व्यक्ति से प्रसन्न होकर उसके शुभाशुभ की सूचना देते है।

उपर्युक्त विचारधाराओ का समन्वय करने मे यह स्पष्ट है कि स्वप्न केवल अवदमित इच्छाओ का प्रकाशन नही, बल्कि भावी शुभाशुभ का सूचक है। फ्राइड ने स्वप्न का सम्बन्ध भविष्यत् मे घटने वाली घटनाओ मे कुछ भी नही स्थापित किया है, पर वास्तविकता इससे दूर है। स्वप्न भविष्य का सूचक है। क्योकि सुषुप्तावस्था मे भी आत्मा तो जागृत ही रहती है, केवल इन्द्रियाँ और मन की शक्तियाँ विश्राम करने के लिए सुषुप्त-सी हो जाती है। अत ज्ञान की मात्रा की उज्ज्वलता से निद्रित अवस्था मे जो कुछ देखते है, उसका सम्बन्ध हमारे भूत, वर्तमान और भावी जीवन से है। इसी कारण आचार्यो ने स्वप्न को भूत, भविष्य और वर्तमान का सूचक बताया है।

मुहूर्त—मागलिक कार्यों के लिए शुभ समय का विचार करना मुहूर्त है। यत समय का प्रभाव प्रत्यक जड एव चेतन सभी प्रकार के पदार्थों पर पडता है। अत गर्भाधानादि षोडश सस्कार एव प्रतिष्ठा, गृहारम्भ, गृहप्रवेश, यात्रा प्रभृति शुभ कार्यो के लिए मुहूर्त का आश्रय लेना परम आवश्यक है।

तिथि—चन्द्र और सूर्य के अन्तरांशो पर से तिथि का मान निकाला जाता है। प्रतिदिन 12 अंशो का अन्तर सूर्य और चन्द्रमा के भ्रमण में होता है, यही अन्तरांश का मध्यम मान है। अमावास्या के बाद प्रतिपदा से लेकर पूर्णिमा तक की तिथियाँ शुक्लपक्ष की और पूर्णिमा के बाद प्रतिपदा से लेकर अमावास्या तक की तिथियाँ कृष्णपक्ष की होती है। ज्योतिष शास्त्र मे तिथियो की गणना शुक्ल-पक्ष की प्रतिपदा से आरम्भ होती है।

तिथियों की संज्ञाएँ—1।6।11 नन्दा, 2।7।12 भद्रा, 3।8।13 जया, 4।9।14 रिक्ता और 5।10।15 पूर्णा सज्ञक है।

पक्षरन्ध्र—4।6।8।9।12।14 तिथियाँ पक्षरन्ध्र है। ये विशिष्ट कार्यों मे त्याज्य है।

मासशून्य तिथियाँ—चैत्र मे दोनो पक्षो की अष्टमी और नवमी, वैशाख के दोनो पक्षो की द्वादशी, ज्येष्ठ मे कृष्णपक्ष की चतुर्दशी और शुक्लपक्ष की त्रयोदशी, आषाढ मे कृष्णपक्ष की षष्ठी और शुक्लपक्ष की सप्तमी, श्रावण मे दोनो पक्षो की द्वितीया और तृतीया, भाद्रपद मे दोनो पक्षो की प्रतिपदा और द्वितीया, आश्विन मे दोनो पक्षो की दशमी और एकादशी, कार्तिक मे कृष्णपक्ष की पञ्चमी और शुक्लपक्ष की चतुर्दशी, मार्गशीर्ष मे दोनो पक्षो की सप्तमी और अष्टमी, पौष मे दोनो पक्षो की चतुर्थी और पचमी, माघ मे कृष्णपक्ष की पचमी और शुक्लपक्ष की षष्ठी एव फाल्गुन मे कृष्णपक्ष की चतुर्थी और शुक्लपक्ष की तृतीया मासशून्य सज्ञक है।

सिद्धा तिथियाँ—मगलवार को 3।8।13, बुधवार को 2।7।12, गुरुवार को 5।10।15, शुक्रवार को 1।6।11 एव शनिवार को 4।8।14 तिथियाँ सिद्धि देने वाली सिद्धा सज्ञक है।

दग्ध, विष और हुताशन सज्ञक तिथियाँ—रविवार को द्वादशी, सोमवार को एकादशी, मगलवार को पचमी, बुधवार को तृतीया, गुरुवार को षष्ठी, शुक्र को अष्टमी, शनिवार को नवमी दग्धा सज्ञक, रविवार को चतुर्थी, सोमवार को षष्ठी, मगलवार को सप्तमी, बुधवार को द्वितीया, गुरुवार को अष्टमी, शुक्रवार को नवमी और शनिवार को सप्तमी विषसज्ञक एव रविवार को द्वादशी, सोमवार को षष्ठी, मगलवार को सप्तमी, बुधवार को अष्टमी, बृहस्पतिवार को नवमी, शुक्रवार को दशमी और शनिवार को एकादशी हुताशनसज्ञक है। ये तिथियाँ नाम के अनुसार फल देती है।

करण—तिथि के आधे भाग को करण कहते है अर्थात् एक तिथि मे दो करण होते है। करण 11 होते है—(1) बव (2) बालव (3) कौलव (4) तैतिल (5) गर (6) वणिज (7) विष्टि (8) शकुनि (9) चतुष्पाद (10) नाग और

(11) किंस्तुघ्न। इन करणो मे पहले के 7 करण चरसंज्ञक और अन्तिम 4 करण स्थिर संज्ञक हैं।

करणों के स्वामी—बव का इन्द्र, बालव का ब्रह्मा, कौलव का सूर्य, तैतिल का सूर्य, गर की पृथ्वी, वणिज की लक्ष्मी, विष्टि का यम, शकुनि का कलि, चतुष्पाद का रुद्र, नाग का सर्प एवं किंस्तुघ्न का वायु है। विष्टि करण का नाम भद्रा है, प्रत्येक पञ्चाग मे भद्रा के आरम्भ और अन्त का समय दिया रहता है।

निमित्त—जिन लक्षणो को देखकर भूत और भविष्य मे घटित हुई और होने वाली घटनाओ का निरूपण किया जाता है, उन्हे निमित्त कहते हैं। निमित्त के आठ भेद है—(1) व्यजन—तिल, मस्सा, चट्टा आदि को देखकर शुभाशुभ का निरूपण करना व्यजन निमित्तज्ञान है। (2) मस्तक, हाथ, पाँव आदि अगो को देखकर शुभाशुभ कहना अग निमित्तज्ञान है। (3) चेतन और अचेतन के शब्द सुनकर शुभाशुभ का वर्णन करना स्वर निमित्तज्ञान है। (4) पृथ्वी की चिकनाई और रूखेपन को देखकर फलादेश निरूपण करना भौम निमित्तज्ञान है। (5) वस्त्र, शस्त्र, आसन, छत्रादि को छिदा हुआ देखकर शुभाशुभ फल कहना छिन्न निमित्तज्ञान है। (6) ग्रह, नक्षत्रो के उदयास्त द्वारा फल निरूपण करना अन्तरिक्ष निमित्तज्ञान है। (7) स्वस्तिक, कलश, शख, चक्र आदि चिह्नो द्वारा एव हस्तरेखा की परीक्षा कर फलादेश बतलाना लक्षण निमित्तज्ञान है। (8) स्वप्न द्वारा शुभाशुभ फल कहना स्वप्न निमित्तज्ञान है। ऋषिपुत्र निमित्तशास्त्र मे निमित्तो के तीन ही भेद किये गये है—

जो दिट्ठ भुविरसण्ण जे दिट्ठा कुहमेण कत्ताण।
सदसकुलेन दिट्ठा वउसट्ठिय ऐण णाणधिया॥

अर्थात्—पृथ्वी पर दिखलाई देने वाले निमित्त, आकाश मे दिखलाई देने वाले निमित्त और शब्दश्रवण द्वारा सूचित होने वाले निमित्त, इस प्रकार निमित्त के तीन भेद है।

शकुन—जिससे शुभाशुभ का ज्ञान किया जाय, वह शकुन है। वसन्तराज शाकुन मे बताया गया है कि जिन चिह्नो के देखने से शुभाशुभ जाना जाय, उन्हे शकुन कहते है। जिस निमित्त द्वारा शुभ विषय जाना जाय उसे शुभ शकुन और जिसके द्वारा अशुभ जाना जाय उसे अशुभ शकुन कहते है। दधि, घृत, दूर्वा, आतप, तण्डुल, पूर्णकुम्भ, सिद्धान्त, श्वेत सर्षप, चन्दन, शख, मृत्तिका, गोरोचन, देवमूर्ति, वीणा, फल, पुष्प, अलकार, अस्त्र, ताम्बूल, मान, आसन, ध्वज, छत्र, व्यञ्जन, वस्त्र, रत्न, सुवर्ण, पद्म, भृगार, प्रज्वलित वह्नि, हस्ती, छाग, कुश, रूप्य, ताम्र, वग, औषध, पल्लव इन वस्तुओ की गणना शुभ शकुनो मे की गई है। यात्रा के समय इनका दर्शन और स्पर्शन शुभ माना गया है। यात्राकाल

मे सगीत सुनना, वाद्य सुनना भी शुभ माना गया है। गमनकाल मे यदि कोई खाली घडा लेकर पथिक के साथ जाय और घडा भर कर लौट आवे तो पथिक भी कृतकार्य होकर निर्विघ्न लौटता है। यात्रा-काल मे चुल्लू भर जल से कुल्ली करने पर यदि अकस्मात् कुछ जल गले के भीतर चला जाय तो अभीष्ट कार्य की सिद्धि होती है।

अगार, भस्म, काष्ठ, रज्जु, कर्दम-कीचड, कपास, तुष, अस्थि, विष्ठा, मलिन व्यक्ति, लौह, कृष्णधान्य, प्रस्तर, केश, सर्प, तेल, गुड, चमडा, खाली घड़ा, लवण, तिनका, तक्र, शृखला आदि का दर्शन और स्पर्शन यात्रा काल मे अशुभ माना जाता है। यदि यात्रा करते समय गाडी पर चढते हुए पैर फिसल जाय अथवा गाडी छूट जाय तो यात्रा मे विघ्न होता है। मार्जारयुद्ध, मार्जारशब्द, कुटुम्ब का परस्पर विवाद दिखलायी पडे तो यात्राकाल मे अनिष्ट होता है। अत यात्रा करना वर्जित है। नये घर मे प्रवेश करते समय शव-दर्शन होने से मृत्यु अथवा बडा रोग होता है।

जाते अथवा आते समय यदि अत्यन्त सुन्दर शुक्लवस्त्र और शुक्ल माला-धारी पुरुष या स्त्री के दर्शन हो तो कार्य सिद्ध होता है। राजा, प्रसन्न व्यक्ति, कुमारी कन्या, गजारूढ या अश्वारूढ व्यक्ति दिखलाई पडे तो यात्रा मे शुभ होता है। श्वेत वस्त्रधारिणी, श्वेतचन्दनलिप्ता और सिर पर श्वेत माला धारण किये हुए गौराग नारी मिल जाय तो सभी कार्य सिद्ध होते है।

यात्राकाल मे अपमानित, अगहीन, नग्न, तैललिप्त, रजस्वला, गर्भवती, रोदनकारिणी, मलिनवेशधारिणी, उन्मत्त, मुक्तकेशी नारी दिखलाई पडे तो महान् अनिष्ट होता है। जाते समय पीछे से या सामने खड़ा हो दूसरा व्यक्ति कहे—'जाओ, मगल होगा' तो पथिक को सब प्रकार से विजय मिलती है। यात्रा-काल मे शब्दहीन शृगाल दिखलाई पडे तो अनिष्ट होता है। यदि शृगाल पहले 'हुआ-हुआ' शब्द करके पीछे 'टटा' ऐसा शब्द करे तो शुभ और अन्य प्रकार का शब्द करने से अशुभ होता है। रात्रि मे जिस घर के पश्चिम ओर शृगाल शब्द करे, उसके मालिक का उच्चाटन, पूर्व की ओर शब्द होने से भय, उत्तर और दक्षिण की ओर शब्द करने से शुभ होता है।

यदि भ्रमर बाईं ओर गुन-गुन शब्द कर किसी स्थान मे ठहर जाएँ अथवा भ्रमण करते रहे तो यात्रा मे लाभ, हर्ष होता है। यात्राकाल मे पैर मे काँटा लगने से विघ्न होता है।

अग का दक्षिण भाग फडकने से शुभ तथा पृष्ठ और हृदय के वामभाग का स्फुरण होने से अशुभ होता है। मस्तक स्पन्दन होने से स्थानवृद्धि तथा भ्रू और नासा स्पन्दन से प्रियसगम होता है। चक्षु स्पन्दन से भृत्यलाभ, चक्षु के उपान्त

देश का स्पन्दन होने से अर्थलाभ और मध्य देश के फड़कने से उद्वेग और मृत्यु होती है। अपांग देश के फड़कने से स्त्रीलाभ, कर्ण के फड़कने से प्रियसंवाद, नासिका के फड़कने से प्रणय, अधर ओष्ठ के फड़कने से अभीष्ट विषयलाभ, कण्ठ देश के फड़कने से सुख, बाहु के फड़कने से मित्रस्नेह, स्कन्धप्रदेश के फड़कने से सुख, हाथ के फड़कने से धनलाभ, पीठ के फड़कने से पराजय, और वक्षस्थल के फड़कने से जयलाभ होता है। स्त्रियों की कुक्षि और स्तन फड़कने से सन्तान-लाभ, नाभि फड़कने से कष्ट और स्थान-च्युति फल होता है। स्त्री का वामांग और पुरुष का दक्षिणांग ही फल निरूपण के लिए ग्रहण किया जाता है।

पाक—सूर्यादि ग्रहों का फल कितने समय में मिलता है इसका निरूपण करना ही इस अध्याय का विषय है।

ज्योतिष—सूर्यादि ग्रहों के गमन, संचार आदि के द्वारा फल का निरूपण किया जाता है। इसमें प्रधानतः ग्रह, नक्षत्र धूमकेतु आदि ज्योति पदार्थों का स्वरूप, संचार, परिभ्रमणकाल, ग्रहण और स्थिति प्रभृति समस्त घटनाओं का निरूपण एवं ग्रह, नक्षत्रों की गति, स्थिति और संचारानुसार शुभाशुभ फलों का कथन किया जाता है। कतिपय मनीषियों का अभिमत है कि नभोमंडल में स्थित ज्योति सम्बन्धी विविध विषयक विद्या को ज्योतिर्विद्या कहते हैं, जिस शास्त्र में इस विद्या का सांगोपांग वर्णन रहता है, वह ज्योतिषशास्त्र कहलाता है।

वास्तु—वास स्थान को वास्तु कहा जाता है। वास करने के पहले वास्तु का शुभाशुभ स्थिर करके वास करना होता है। लक्षणादि द्वारा इस बात का निर्णय करना होता है कि कौन वास्तु शुभकारक है और कौन अशुभकारक। इस प्रकरण में गृहों की लम्बाई, चौड़ाई तथा प्रकार आदि का निरूपण किया जाता है।

दिव्येन्द्र संपदा—आकाश की दिव्य विभूति द्वारा फलादेश का वर्णन करना ही इस अध्याय के अन्तर्गत है।

लक्षण—इस विषय में दीपक, दन्त, काष्ठ, श्वान, गो, कुक्कुट, कूर्म, छाग, अश्व, गज, पुरुष, स्त्री, चमर, छत्र, प्रतिमा, शय्यासन, प्रासाद प्रभृति के स्वरूप गुण आदि का विवेचन किया जाता है। स्त्री और पुरुष के लक्षणों के अन्तर्गत सामुद्रिक शास्त्र भी आ जाता है। अंगोपांगों की बनावट एवं आकृति द्वारा भी शुभाशुभ लक्षणों का निरूपण इस अध्याय में किया जाता है।

चिह्न—विभिन्न प्रकार के शरीर-बाह्य एवं शरीरान्तर्गत चिह्नों द्वारा शुभाशुभ फल का निर्णय करना चिह्न के अन्तर्गत आता है। इसमें तिल, मस्सा आदि चिह्नों का विचार विशेष रूप से होता है।

लग्न—जिस समय में क्रान्तिवृत्त का जो प्रदेश स्थान क्षितिज वृत्त में लगता है, वही लग्न कहलाता है। दूसरे शब्दों में यह भी कहा जा सकता है कि दिन का

उतना अश जितने मे किसी एक राशि का उदय होता है, लग्न कहलाता है । अहोरात्र मे बारह राशियो का उदय होता है, इसलिए एक दिन-रात मे बारह लग्न मानी जाती है। लग्न निकालने की क्रिया गणित द्वारा की जाती है। मेष, वृष, मिथुन, कर्क, सिह, कन्या, तुला, वृश्चिक, धनु, मकर, कुम्भ और मीन ये लग्न राशियाँ है।

मेष—पुरुषजाति, चर सज्ञक, अग्नितत्त्व, रक्तपीतवर्ण, पित्तप्रकृति, पूर्व-दिशा की स्वामिनी और पृष्ठोदयी है।

वृष -स्त्रीराशि, स्थिरसज्ञक, भूमितत्त्व, शीतल स्वभाव, वातप्रकृति, श्वेत-वर्ण, विषमोदयी और दक्षिण की स्वामिनी है।

मिथुन—पश्चिम की स्वामिनी, वायुतत्त्व, हरितवर्ण, पुरुषराशि, द्विस्वभाव, उष्ण और दिनबली है।

कर्क - चर, स्त्रीजाति, सौम्य, कफ प्रकृति, जलचारी, समोदयी, रात्रिबली और उत्तर दिशा की स्वामिनी है।

सिह—पुरुषजाति, स्थिरसज्ञक, अग्नितत्त्व, दिनबली, पित्तप्रकृति, पुष्ट-शरीर, भ्रमणप्रिय और पूर्व की स्वामिनी है।

कन्या—पिगलवर्ण, स्त्री जाति, द्विस्वभाव, दक्षिण की स्वामिनी, रात्रिबली, वायु-पित्त प्रकृति और पृथ्वीतत्त्व है।

तुला—पुरुष, चर, वायुतत्त्व, पश्चिम की स्वामिनी, श्यामवर्ण, शीर्षोदयी, दिनबली और क्रूरस्वभाव है।

वृश्चिक—स्थिर, शुभ्रवर्ण, स्त्रीजाति, जलतत्त्व, उत्तर दिशा की स्वामिनी, कफप्रकृति, रात्रिबली और हठी है।

धनु –पुरुष, काचनवर्ण, द्विस्वभाव, क्रूर, पित्तप्रकृति, दिनबली, अग्नितत्त्व और पूर्व की स्वामिनी है।

मकर—चर, स्त्री, पृथ्वीतत्त्व, वातप्रकृति, पिंगलवर्ण, रात्रिबली, उच्चाभि-लाषी और दक्षिण की स्वामिनी है।

कुम्भ—पुरुष, स्थिर, वायुतत्त्व, विचित्रवर्ण, शीर्षोदय, अर्द्धजल, त्रिदोष प्रकृति और दिनबली है।

मीन —द्विस्वभाव, स्त्रीजाति, कफप्रकृति, जलतत्त्व, रात्रिबली, पिंगलवर्ण और उत्तर की स्वामिनी है।

इन लग्नो का जैसा स्वरूप बतलाया गया है, उन लग्नो मे उत्पन्न हुए व्यक्तियो का वैसा ही स्वभाव होता है।

द्वितीयोऽध्याय:

तत. प्रोवाच भगवान् दिग्वासा· श्रमणोत्तम ।
यथावस्थासु[1] विन्यासं द्वादशांगविशारद ॥1॥

शिष्यो के उक्त प्रश्नो के किये जाने पर द्वादशाग के पारगामी दिगम्बर श्रमणोत्तम भगवान् भद्रबाहु आगम मे जिस प्रकार से उक्त प्रश्नो का वर्णन निहित है उसी प्रकार से अथवा प्रश्नक्रम मे उत्तर देने के लिए उद्यत हुए ॥ 1 ॥

भवद्भिर्यदहं पृष्टो निमित्त जिनभाषितम् ।
समासव्यासत· सर्वं तन्निबोध यथाविधि ॥2॥

आप सबने मुझसे यह पूछा कि "शुभाशुभ जानने के लिए जिनेन्द्र भगवान् ने जिन निमित्तो का वर्णन किया है, उन्हे बतलाओ।" अत मै सक्षेप और विस्तार से उन सबका यथाविधि वर्णन करता हूँ, अवगत करो ॥ 2 ॥

प्रकृतेर्योऽन्यथाभावो विकार सर्व उच्यते ।
एव विकारे[2] विज्ञेयं भय तत्प्रकृते[3] सदा ॥3॥

प्रकृति का अन्यथाभाव विकार कहा जाता है । जब कभी तुमको प्रकृति का विकार दिखलाई पडे तो उस पर से ज्ञात करना कि यहाँ पर भय होने वाला है ॥ 3 ॥

य.[4] प्रकृतेर्विपर्यास प्राय सक्षेपत उत्पात ।
क्षिति-गगन-दिव्यजातो यथोत्तर गुरुतर भवति ॥4॥

प्रकृति के विपरीत घटना घटित होना उत्पात है । ये उत्पात तीन प्रकार के होते है—भौमिक, अन्तरिक्ष और दिव्य । क्रमश उत्तरोत्तर ये दु खदायक तथा कठिन होते है ॥ 4 ॥

उल्कानां प्रभव रूप प्रमाण फलमाकृति. ।
यथावत्[5] सप्रवक्ष्यामि तन्निबोधय[6] तत्त्वत ॥5॥

उल्काओ की उत्पत्ति, रूप, प्रमाण, फल और आकृति का यथार्थ वर्णन करता हूँ । आप लोग यथार्थ रूप से इसे अवगत करे ॥ 5 ॥

---

1 शास्त्रविन्यास मु० । 2 विकारो विज्ञेय मु० A । 3 स प्रकृतेरन्यथागम मु० A. । 4. यह श्लोक मुद्रित प्रति मे नही है । 5. यथावस्थ ब० । 6 तन्निबोधत मु० ।

भौतिकानां शरीराणां स्वर्गात् प्रच्यवतामिह ।
सम्भवश्चान्तरिक्षे तु तज्ज्ञैरुल्केति संज्ञिता ॥6॥

भौतिक—पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु और आकाश इन पाँच भूतो से निष्पन्न शरीरो को धारण किये हुए देव जब स्वर्ग से इस लोक मे आते है, तब उनके शरीर आकाश मे विचित्र ज्योति-रूप को धारण करते है, इसी ज्योति का नाम विद्वानो ने उल्का कहा है ॥ 6 ॥

तत्र तारा तथा धिष्ण्य विद्युच्चाशनिभि सह ।
उल्का विकारा बोद्धव्या [1]निपतन्ति निमित्तत ॥7॥

तारा, धिष्ण्य, विद्युत् और अशनि ये सब उल्का के विकार हैं और ये निमित्त पाकर गिरते है ॥ 7 ॥

ताराणां[2] च प्रमाण च[3] धिष्ण्य तद्द्विगुणं भवेत् ।
विद्युद्विशालकुटिला रूपत क्षिप्रकारिणी[4] ॥8॥

तारा का जो प्रमाण है उससे लम्बाई मे दूना धिष्ण्य होता है। विद्युत् नाम वाली उल्का बडी, कुटिल—टेढी-मेढी और शीघ्रगामिनी होती है ॥ 8 ॥

अशनिश्चक्रसस्थाना दीर्घा भवति रूपत ।
पौरुषी तु भवेदुल्का प्रपतन्ती विवर्द्धते ॥9॥

अशनि नाम की उल्का चक्राकार होती है। पौरुषी नाम की उल्का स्वभाव से लम्बी होती है तथा गिरते समय बढती जाती है ॥ 9 ॥

चतुर्भागफला तारा धिष्ण्यमर्धफल भवेत् ।
पूजिता [5] पद्मसस्थाना मांगल्या ताश्च पूजिता: ॥10॥

तारा नाम की उल्का का फल चतुर्थांश होता है, धिष्ण्य सज्ञक उल्का का फल आधा होता है और जो उल्का कमलाकार होती है वह पूजने योग्य तथा मगलकारी होती है ॥ 10 ॥

पापा [6]घोरफल दद्यु शिवाश्चापि शिव फलम् ।
व्यामिश्राश्चापि व्यामिश्र येषां तै. प्रतिपुद्गला. ॥11॥

---

1 ते पतन्ति मु० । 2 तारातारा मु० । 3 तु मु० । 4. क्षिप्रचारिणि मु० । 5. रक्ता पीतास्तु मध्यास्तु श्वेता स्निग्धास्तु पूजिता मु० । 6 पापफल मु० ।

पापरूप उल्काएँ घोर अशुभ फल देती हैं तथा शुभ रूप उल्काएँ शुभ फल देती हैं। शुभ और अशुभ मिश्रित उल्काएँ मिश्रित उभय रूप फल प्रदान करती हैं। इन पुद्गलो का ऐसा ही स्वभाव है ॥ 11 ॥

इत्येतावत् समासेन प्रोक्तुमुल्कासुलक्षणम् ।
पृथक्त्वेन प्रवक्ष्यामि लक्षणं व्यासत पुन ॥ 2॥

यहाँ तक उल्काओं के सक्षेप मे लक्षण कहे, अब पृथक्-पृथक् पुन विस्तार से वर्णन करता हूँ ॥ 12 ॥

इति श्रीभद्रबाहुसंहितायामुल्कालक्षणो द्वितीयोऽध्यायः ।

विवेचन—प्रकृति का विपरीत परिणमन होते ही अनिष्ट घटनाओ के घटने की सभावना समझ लेनी चाहिए। जब तक प्रकृति अपने स्वभावरूप मे परिणमन करती है, तब तक अनिष्ट होने की आशका नही। सहिता ग्रथो मे प्रकृति को इष्टानिष्ट सूचक निमित्त माना गया है। दिशाएँ, आकाश, आतप, वर्षा, चाँदनी, पेड-पौधे, पशु-पक्षी, उषा, सन्ध्या आदि सभी निमित्तसूचक है। ज्योतिष शास्त्र मे इन सभी निमित्तो द्वारा भावी इष्टानिष्टो की विवेचना की गई है। इस द्वितीय अध्याय मे उल्काओ के स्वरूप का विवेचन किया गया है और इनका फलादेश तृतीय अध्याय मे वर्णित है। यद्यपि प्रथम अध्याय के विवेचन मे उल्काओ के स्वरूप का सक्षिप्त और सामान्य परिचय दिया गया है, तो भी यहाँ सक्षिप्त विवेचन करना अभीष्ट है।

रात को प्राय जो तारे टूटकर गिरते हुए जान पडते है, ये ही उल्काएँ है। अधिकाश उल्काएँ हमारे वायुमण्डल मे ही भस्म हो जाती है और उनका कोई अश पृथ्वी तक नही आ पाता, परन्तु कुछ उल्काएँ बडी होती है। जब वे भूमि पर गिरती है, तो उनमे प्रचण्ड ज्वाला सी निकलती है और सारी भूमि उस ज्वाला से प्रकाशित हो जाती है। वायु को चीरते हुए भयानक वेग से उनके चलने का शब्द कोसो तक सुनाई पडता है और पृथ्वी पर गिरने की धमक भूकम्प-सी जान पडती है। कहा जाता है कि आरम्भ मे उल्कापिण्ड एक सामान्य ठण्डे प्रस्तर-पिण्ड के रूप मे रहता है। यदि यह वायुमण्डल मे प्रविष्ट हो जाता है तो घर्षण के कारण उसमे भयकर ताप और प्रकाश उत्पन्न होता है, जिसमे वह जल उठता है और भीषण गति मे दौडता हुआ अन्त मे राख हो जाता है और जब यह वायुमण्डल मे राख नही होता, तब पृथ्वी पर गिरकर भयानक दृश्य उत्पन्न कर देता है।

उल्काओं के गमन का मार्ग नक्षत्र कक्षा के आधार पर निश्चित किया जाय

तो प्रतीत होगा कि बहुतेरी उल्काएँ एक ही बिन्दु से चलती हैं, पर आरम्भ मे अदृश्य रहने के कारण वे हमे एक बिन्दु से आती हुई नही जान पडती। केवल उल्का-झडियो के समान ही उनके एक बिन्दु से चलने का आभास हमे मिलता है। उस बिन्दु को जहाँ से उल्काएँ चलती हुई मालूम पडती है, सपात मूल कहते हैं। आधुनिक ज्योतिष उल्काओ को केतुओ के रोडे, टुकडे या अग मानता है। अनुमान किया जाता है कि केतुओ के मार्ग मे असख्य रोडे और ढोके बिखर जाते है। सूर्य गमन करते-करते जब इन रोडो के निकट से जाता है तो ये रोडे टकरा जाते है और उल्का के रूप मे भूमि मे पतित हो जाते हैं। उल्काओ की ऊँचाई पृथ्वी मे 50-70 मील के लगभग होती है। ज्योतिषशास्त्र मे इन उल्काओ का बडा महत्त्वपूर्ण स्थान है। इनके पतन द्वारा शुभाशुभ का परिज्ञान किया जाता है।

उल्का के ज्योतिष मे पाँच भेद है—धिष्ण्या, उल्का, अशनि, विद्युत् और तारा। उल्का का 15 दिनो मे, धिष्ण्या और अशनि का 45 दिनो मे एव तारा और विद्युत् का छ दिनो मे फल प्राप्त होता है। अशनि का आकार चक्र के समान है, यह बडे शब्द के साथ पृथ्वी फाडती हुई मनुष्य, गज, अश्व, मृग, पत्थर, गृह, वृक्ष और पशुओ के ऊपर गिरती है। तड-तड शब्द करती हुई विद्युत् अचानक प्राणियो को त्रास उत्पन्न करती हुई कुटिल और विशाल रूप मे जीवो और ईधन के ढेर पर गिरती है। । पतली छोटी पूँछवाली धिष्ण्या जलते हुए अंगारे के समान चालीस हाथ तक दिखलाई देती है। इसकी लम्बाई दो हाथ की होती है। तारा ताँबा, कमल, ताररूप और शुक्ल होती है, इसकी चौडाई एक हाथ और खिचती हुई-सी आकाश मे तिरछी या आधी उठी हुई गमन करती है। प्रतनुपुच्छा विशाला उल्का गिरते-गिरते बढती है, परन्तु इसकी पूँछ छोटी होती जाती है, इसकी दीर्घता पुरुष के समान होती है, इसके अनेक भेद है। कभी यह प्रेत, शास्त्र, खर, करभ, नाका, बन्दर, तीक्ष्ण दतवाले जीव और मृग के समान आकारवाली हो जाती है। कभी गोह, साँप और धूमरूप वाली हो जाती है। कभी यह दो सिरवाली दिखलाई पडती है। यह उल्का पापमय मानी गई है।

कभी ध्वज, मत्स्य, हाथी, पर्वत, कमल, चन्द्रमा, अश्व, तप्तरज और हंस के समान दिखलायी पडती है, यह उल्का शुभकारक पुण्यमयी है। श्रीवत्स, वज्र, शख और स्वस्तिक रूप मे प्रकाशित होनेवाली उल्का कल्याणकारी और सुभिक्षदायक है। अनेक वर्णवाली उल्काएँ आकाश मे निरन्तर भ्रमण करती रहती हैं।

जिन उल्काओ के सिर का भाग मकर के समान और पूँछ गाय के समान

हो, वे उल्काएँ अनिष्ट सूचक तथा मनुष्य जाति के लिए भयप्रद होती है। चमक या प्रकाशवाली छोटी-छोटी उल्काएँ—जिनका स्वरूप धिष्ण्या के समान है, किसी महत्त्वपूर्ण घटना की सूचना देती है। तार के समान लम्बी उल्काएँ, जिनका गमन सम्पात बिन्दु से भूमण्डल तक एक-सा हो रहा है, बीच मे किसी भी प्रकार का विराम नहीं है, वे व्यक्ति के जीवन की गुप्त और महत्त्वपूर्ण बातो को प्रकट करती है। तार या लडी रूप मे रहना उसका व्यक्ति और समाज के जीवन की शृंखला की सूचक है। सूची रूप मे पडने वाली उल्का देश और राष्ट्र के उत्थान की सूचिका है।

इधर-उधर उठी हुई और विशृंखलित उल्काएँ आन्तरिक उपद्रव की सूचिका हैं। जब देश मे महान् अशान्ति उत्पन्न होती है, उस समय इस प्रकार की छिट-फुट गिरती पडती उल्काएँ दिखलायी पडती है। उल्काओ का पतन प्राय प्रतिदिन होता है। पर उनसे इष्टानिष्ट की सूचना अवसर विशेषो पर ही मिलती है।

उल्काओ का फलादेश उनकी बनावट और रूप-रग पर निर्भर करता है। यदि उल्का फीकी, केवल तारे की तरह जान पडती है तो उसे छोटी उल्का या टूटता तारा कहते हैं। यदि उल्का इतनी बडी हुई कि उसका अश पृथ्वी तक पहुँच जाय तो उसे उल्का प्रस्तर कहते हैं और यदि उल्का बडी होने पर भी आकाश ही मे फटकर चूर-चूर हो जाए तो उसे साधारणत अग्निपिण्ड कहते है। छोटी उल्काएँ महत्त्वपूर्ण नही होती है, इनके द्वारा किसी खास घटना की सूचना नही मिलती है। ये केवल दर्शक व्यक्ति के जीवन के लिए ही उपयोगी सूचना देती है। बडी-बडी उल्काओ का सम्बन्ध राष्ट्र से है, ये राष्ट्र और देश के लिए उपयोगी सूचनाएँ देती है। यद्यपि आधुनिक विज्ञान उल्का-पतन को मात्र प्रकृतिलीला मानता है, किन्तु प्राचीन ज्योतिषियो ने इनका सम्बन्ध वैयक्तिक, सामाजिक और राष्ट्रीय जीवन के उत्थान-पतन के साथ जोडा है।

तृतीयोऽध्यायः

नक्षत्रं यस्य यत्पुंस पूर्णमुल्का प्रताडयेत् ।
भयं तस्य भवेद् घोरं यतस्तत् कम्पते हतम् ॥1॥

जिस पुरुष के जन्म-नक्षत्र को अथवा नाम-नक्षत्र को उल्का शीघ्रता से ताडित करे उस पुरुष को घोर भय होता है । यदि जन्म-नक्षत्र को कम्पायमान करे तो उसका घात होता है ॥ 1 ॥

अनेकवर्णं नक्षत्रमुल्का हन्युर्यदा समा ।
तस्य देशस्य तावन्ति भयान्युग्राणि निर्दिशेत् ॥2॥

जिस वर्ष जिस देश के नक्षत्र को अनेक वर्ण की उल्का आघात करे तो उस देश या ग्राम को उग्र भय होता है ॥ 2 ॥

येषां वर्णेन संयुक्ता सूर्याद्‌दुल्का प्रवर्तते ।
तेभ्यःसंजायते तेषां भयं येषां दिशं पतेत् ॥3॥

सूर्य से मिलती हुई उल्का जिस वर्ण से युक्त होकर जिस दिशा मे गिरे, उस दिशा मे उस वर्ण वाले को बहुघोर भय करने वाली होती है ॥ 3 ॥

नीला पतन्ति या उल्काः सस्यं सर्वं विनाशयेत् ।
त्रिवर्णा त्रीणि घोराणि भयान्युल्का निवेदयेत् ॥4॥

यदि नीलवर्ण की उल्का गिरे तो वह सर्व प्रकार के धान्यो को नाश करती है अर्थात् उनके नाश की सूचना देती है और यदि तीन वर्ण की उल्का गिरे तो तीन प्रकार के घोर भयो को प्रकट करती है ॥ 4 ॥

विकीर्यमाणा कपिला विशेष वामसंस्थिता ।[1]
खण्डा भ्रमन्त्यो[2] विकृता[3] सर्वा उल्का भयावहा ॥5॥

बिखरी हुई कपिल वर्ण की विशेषकर वामभाग मे गमन करने वाली, घूमती हुई, खण्डरूप एव विकृत उल्काएँ दिखाई दे तो ये सब भय होने की सूचना करती हैं ॥ 5 ॥

उल्काऽशनिश्च धिष्ण्यं च प्रपतन्ति यतो मुखाः ।
तस्या दिशि विजानीयात् ततो भयमुपस्थितम् ॥6॥

उल्का, अशनि और धिष्ण्या जिस दिशा मे मुख मे गिरे तो उस दिशा में भय की उपस्थिति अवगत करनी चाहिए ॥ 6 ॥

---

1 वामकसंस्थिता मु० B. C । 2 भ्रमन्त.मु० C । 3 विक्रिता. मु० C ।

सिंह-व्याघ्र-वराहोष्ट्र-श्वानद्वीपि[1]-खरोपमा ।
शूलपट्टिशसंस्थाना धनुर्बाण-गदा[2] मया ॥7॥

पाशवज्रासिसदृशा परश्वर्धेन्दुसंन्निभा ।
गो[3]धा-सर्प-शृगालाना सदृशा शल्यकस्य च ॥8॥

मेषाजमहिषाकाराः काकाऽकृतिवृकोपमा ।
शश[4]मार्जार-सदृशाः पक्ष्यकोदग्रसन्निभा ॥9॥

ऋक्ष-वानरसंस्थाना कबन्धसदृशाश्च या ।
अला[5]तचक्रसदृशा [6]वक्राक्षप्रतिमाश्च[7] या.[8] ॥10॥

शक्तिलाङ्गूलसंस्थाना[9] यस्याश्चोभयत शिर ।
स्रास्तन्यमाना नागाभा. प्रपतन्ति[10] स्वभावत. ॥11॥

सिंह, व्याघ्र, चीता, शूकर, ऊँट, कुत्ता, तेंदुआ, गदहा, त्रिशूल, पट्टिश—एक प्रकार का आयुध, धनुष, बाण, गदा, फरसा, वज्र, तलवार, फरसा-अर्द्धचन्द्राकार कुल्हाडी, गोह, सर्प, शृगाल, भाला, मेढ़ा, बकरा, भैसा, कौआ, भेडिया, खरगोश, बिल्ली, अत्यन्त ऊँचे उडनेवाले पक्षी—गृद्ध आदि, रीछ, बन्दर, सिर कटे हुए धड, कुम्हार का चाक, टेढी आँखवाला, शक्तिआयुध विशेष, हल इन सबके आकार वाली और दो सिरवाली तथा हाथी के आकारवाली उल्काएं स्वभाव से गिरती हैं ॥7-11॥

उल्काऽशनिश्च विद्युच्च सम्पूर्ण कुरुते फलम् ।
पतन्ती जनपदान् त्रीणि उल्का तीव्र[11] प्रबाधते ॥12॥

उल्का, अशनि और विद्युत् ये तीनो पूर्ण फल देती हे और इन तीनो के गिरने से देशवासियो को पूर्ण बाधा होती है ॥12॥

यथावदनुपूर्वेण तत् प्रवक्ष्यामि तत्त्वत. ।
अग्रतो देशमार्गेण मध्येनानन्तरं तत. ॥13॥

पुच्छेन पृष्ठतो देशं पतन्त्युल्का विनाशयेत् ।
मध्यमा न प्रशस्यन्ते नभस्युल्काः पतन्ति या. ॥14॥

---

1 द्वीपिश्वान मु० । 2 गदानिभा मु० । 3 शशमार्जारसदृशा पक्षकोदग्रसन्निभा, मु० ।
4 गाधासर्प-शृगालाभ्याम् मु० । 5 आलान मु० A । 6 कव्यादा मु० C D ।
7 सदृशा. मु० C । 8 भ्रू या मु० C । 9 सकाषा आ० । 10 प्रयन्ति मु० ।
11 प्रबोधते मु० A B ।

पूर्व परम्परा के अनुसार फलादेश का निरूपण करता हूँ। यदि उल्का अग्रभाग से गिरे तो देश के मार्ग का नाश करती है। यदि मध्यभाग से गिरे तो देश के मध्यभाग के और पूंछ भाग से गिरे तो देश के पृष्ठ भाग के विनाश की सूचना देती है। मध्यम-समान साधारण अवस्थावाली उल्का का पतन भी प्रशस्त नही होता है ॥13-14॥

[1]स्नेहवत्योऽन्यगामिन्यो प्रशस्ताः स्यु. प्रदक्षिणाः।
उल्का यदि पतेच्चित्रा [2]पक्षिणामहिताय[3] सा ॥15॥

मध्यम उल्का स्नेहयुक्त होती हुई दक्षिण मार्ग से गमन करे तो वह प्रशस्त है और चित्र-विचित्र रग की मध्यम उल्काएँ वाम मार्ग से गमन करे तो पक्षियो के लिए अहित कारक होती हे ॥15॥

श्याम-लोहितवर्णा च सद्य कुर्याद् महद् भयम्।
उल्काया भस्मवर्णायां परचक्राऽऽगमो भवेत् ॥16॥

काली और लालवर्ण की उल्का गिरे तो वह शीघ्र ही महाभय की सूचना देती हे तथा भस्मवर्ण की उल्का परचक्र का आना सूचित करती हे ॥16॥

अग्निमग्निप्रभा कुर्याद् व्याधिमञ्जिष्ठसन्निभा।
नीला कृष्णा च धूम्रा च शुक्ला वाऽसिसमद्युतिः[4] ॥17॥
उल्का नीचं. समा स्निग्धा पतन्ति भयमादिशेत् ॥17½॥

शुक्ला रक्ता च पीता च कृष्णा चापि यथाक्रमम्।
चतुर्वर्णा विभक्तव्या साधुनाक्ता यथाक्रमम् ॥18॥

अग्नि की प्रभावशाली उल्का अग्नि का भय करती है। मजिष्ठ के समान रगवाली उल्का व्याधि की सूचना देती है। नील, कृष्ण, धूम्र तलवार के समान द्युतिवाली उल्का नीच प्रकृति-अधम होती है। स्निग्ध उल्का सम प्रकृतिवाली होती हे। शुक्ल, रक्त, पीत ओर कृष्ण इन वर्णोवाली उल्का क्रमश. ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र वर्ण मे विभाजित समझनी चाहिए। ये चारो वर्णवाली उल्काएं क्रमशः ब्राह्मणादि चारो वर्णो को भय की सूचना देती है, ऐसा पूर्वाचार्यों ने कहा है। अभिप्राय यह है कि श्वेतवर्ण की उल्का ब्राह्मण सज्ञक हे, इसका फलादेश ब्राह्मण वर्ण के लिए विशेष रूप से और सामान्यतः अन्य वर्णवालो को भी प्राप्त होता है। इसी प्रकार रक्त से क्षत्रिय, पीत से वैश्य और कृष्ण से शूद्रवर्ण के लिए प्रधानत फल और गौण रूप से अन्य वर्णवालो को भी फलादेश प्राप्त होता है ॥17-18॥

1 स्नेहवन्तो आ०। 2 दक्षिणा मु० A. D। 3 महाताय मु० C। 4. एतद्वर्ण तदादिशेत् मु०, B पतेत् वर्षं तदा ऽऽदिशेत्, मु० D.।

उदीच्यां ब्राह्मणान् हन्ति प्राच्यामपि च क्षत्रियान् ।
वैश्यान् निहन्ति याम्यायां प्रतीच्यां शूद्रघातिनी ॥19॥

यदि उल्का उत्तर दिशा मे गिरे तो ब्राह्मणो का घात करती है, पूर्व दिशा मे गिरे तो क्षत्रियो का, दक्षिण दिशा मे गिरे तो वैश्यो का और पश्चिम दिशा में गिरे तो शूद्रो का घात करती है ॥19॥

उल्का [1]रूक्षेण वर्णेन स्वं स्वं वर्णं प्रबाधते ।
स्निग्धा चैवानुलामा च प्रसन्ना च न बाधते ॥20॥

उल्का रूक्ष वर्ण से अपने-अपने वर्ण को बाधा देती है—श्वेतवर्ण की होकर रूक्ष हो तो ब्राह्मणो के लिए बाधासूचक, रक्तवर्ण की होकर रूक्ष हो तो क्षत्रियो को बाधासूचक, पीतवर्ण की होकर रूक्ष हो तो वैश्यो को बाधासूचक और कृष्णवर्ण की होकर रूक्ष हो तो शूद्रो को बाधासूचक होती है। स्निग्ध और अनुलोम—सव्यमार्ग तथा प्रसन्न उल्का हो तो शुभ होने से अपने-अपने वर्ण को बाधा नही देती है ॥20॥

या चादित्यात्[2] पतेदुल्का वर्णतो वा दिशोऽपि वा ।
त त वर्णं निहन्त्याशु वैश्वानर इवार्चिभिः ॥21॥

जो उल्का सूर्य से निकलकर जिस वर्ण की होकर जिस दिशा मे गिरे उस वर्ण और दिशा पर से उसी-उसी वर्णवाले को अग्नि की ज्वाला के समान शीघ्र नाश करती है ॥21॥

अनन्तरां दिश दीप्ता येषामुल्काऽग्रतः पतेत् ।
तेषां स्त्रियश्च गर्भाश्च भयमिच्छन्ति दारुणम् ॥22॥

यदि उल्का अव्यवहित दिशा को दीप्त करती हुई अग्रभाग से गिरे तो स्त्रियो और गर्भो को भयानक भय करती है अर्थात् गर्भपात की सूचिका है ॥22॥

कृष्णा नीला च रूक्षाश्च प्रतिलोमाश्च[3] गर्हिताः[4] ।
पशुपक्षिसुसस्थाना भैरवाश्च भयावहाः ॥23॥

कृष्ण अथवा नील वर्ण की रूक्ष उल्का प्रतिलोम—उलटे मार्ग से अर्थात् अपसव्यमार्ग—बाये से गिरे तो निन्दित है। यदि पशु-पक्षी की आकारवाली हो तो भयोत्पादक होती है ॥23॥

अनुगच्छन्ति याश्चोल्का बाह्यास्तूल्का समन्ततः ।
[5]वत्सानुसारिणी नाम सा तु राष्ट्रं विनाशयेत् ॥24॥

1. रूपेण वर्णेन मु० । 2 या स्वादित्यात् आ० । 3-4 सुगर्भिता मु० C ।
5. वर्णानुसारिणी मु० ।

जो उल्का मार्ग मे गमन करती हुई आस-पास मे दूसरी उल्काओ से भिड़ जाय, वह वत्सानुसारिणी (बच्चे की आकारवाली) उल्का कही जाती है और ऐसी उल्का राष्ट्र का नाश सूचित करती है ॥24॥

रक्ता पीता नभस्युल्काश्चेभ-नक्रेण[1] सन्निभा. ।
अन्येषां गर्हितानां च सत्त्वाना सदृशास्तु[2] या:[3] ॥25॥

उल्कास्ता न प्रशस्यन्ते निपतन्त्य: सुदारुणा: ।
यासु प्रपतमानासु[4] मृगा विविधमानुषा: ॥26॥

आकाश मे उत्पन्त होती हुई जो उल्का हाथी और नक्र (मगर) के आकार तथा निन्दित प्राणियो के आकारवाली होती है, वह जहाँ गिरे वहाँ दारुण अशुभ फल की सूचना करती है और मृगो तथा विविध मनुष्यो को घोर कष्ट देती है ॥25-26॥

शब्द मुञ्चन्ति दीप्तासु दिक्षु चासन्न[5] काम्यया ।
क्रव्यादाश्चाऽशु दृश्यन्ते[6] या खरा विकृताश्च या: ॥27॥

सधूम्रा या सनिर्घाता उल्कायाभ्रमवाप्नुयु.[7] ।
सभूमिकम्पा परुषा रजस्विन्योऽपसव्यगा:[8] ॥28॥

ग्रहानादित्यचन्द्रो च या. स्पृशन्ति दहन्ति वा ।
परचक्रभयं[9] घोर क्षुधाव्याधिजनक्षयम् ॥29॥

जो उल्का अपने द्वारा प्रदीप्त दिशाओ मे निकट कामना से शब्द करती—गडगडाती हुई मासभक्षी जीवो के समान शीघ्रता से दिखाई पडे अथवा जो उल्का रूक्ष विकृतरूप धारण करती हुई धूमवाली, शब्दसहित, अश्व के समान वेगवाली, भूमि को कँपाती हुई, कठोर, धूल उडाती हुई, बाये मार्ग से गति करती हुई, ग्रहो तथा सूर्य और चन्द्रमा को स्पर्श करती हुई या जलाती हुई दीख पडे— गिरे तो वह पर चक्र का घोर भय उपस्थित करती है तथा क्षुधा-रोग—अकाल, महामारी और मनुष्यो के नाश होने की सूचना देती है ॥27-29॥

एवं लक्षणसंयुक्ता: कुर्वन्त्युल्का महाभयम् ।
अष्टापदवदुल्काभिर्दिशं[10] पश्येद् [11]यदाऽवृतम् ॥30॥

युगान्त इति विख्यात.[12] षड्मासेनोपलभ्यते[13] ।
पद्मश्रीवृक्षचन्द्रार्कनद्यावर्तघटोपमा: ॥31॥

1. श्येनपातेन मु० । 2-3 स्वय मु० A । 4 पतत् आ० । 5. दिक्षुमासन मु० । 6 भाषन्ते आ० । 7 उल्काश्चावाप्नुयु मु० । 8 ससव्यगा. मु० C । 9 नृपभय आ० । 10 दिन आ० । 11. यदावृताम् मु० । 12 विन्यात् मु० । 13. भद्रबाहुवचो यथा मु० ।

वर्द्धमानध्वजाकारा पताकामत्स्यकूर्मवत् ।
वाजिवारणरूपाश्च शंखवादित्रछत्रवत् ॥32॥
[1]सिंहासनरथाकारा रूपपिण्डव्यवस्थिता ।
रूपैरेतै प्रशस्यन्ते[2] सुखमुल्का[3] समाहिता ॥33॥

उपर्युक्त लक्षणयुक्त उल्का महान् भय उत्पन्न करती है। यदि अष्टापद के समान उल्का दृष्टिगोचर हो तो छह मास मे युगान्त की सूचिका समझनी चाहिए। यदि पद्म, श्रीवृक्ष, चन्द्र, सूर्य, नन्द्यावर्त, कलश, वृद्धिगत होनेवाले ध्वज, पताका, मछली, कच्छप, अश्व, हस्ती, शख, वादित्र, छत्र, सिंहासन, रथ और चाँदी के पिण्ड गोलाकार रूप और आकारो मे उल्का गिरे तो उसे उत्तम अवगत करना चाहिए। यह उल्का सभी को सुख देनेवाली है ॥30-33॥

नक्षत्राणि [4]विमुञ्चन्त्य स्निग्धा [5]प्रत्युत्तमा: शुभा ।
सुवृष्टि क्षेममारोग्य शस्यसम्पत्तिरुत्तमा ॥34॥

यदि उल्का नक्षत्रों को छोडकर गमन करनेवाली स्निग्ध और उत्तम शुभ लक्षणवाली दिखलाई दे तो सुवृष्टि, क्षेम, आरोग्य और धान्य की उत्पत्ति वाली होती है ॥34॥

सोमो राहुश्च शुक्रश्च केतुर्भौमश्च [6]यायिन ।
बृहस्पतिर्बुध सूर्य [7]सौरिश्चाऽपीह[8] नागरा[9] ॥35॥

यायी -युद्ध के लिए अन्य देश या नृपति पर आक्रमण करनेवाले व्यक्ति के लिए चन्द्र, राहु, शुक्र, केतु और मगल का बल आवश्यक होता है और स्थायी—आक्रमण किया गया देश, नृपति या अन्य व्यक्ति आक्रमित के लिए बृहस्पति, बुध, सूर्य और शनि का बल आवश्यक होता है। इन ग्रहों के बलाबल पर से यायी और स्थायी के बल का विचार करना चाहिए ॥35॥

हन्युर्मध्येन या[10] उल्का ग्रहाणां नाम विद्युता ।
सनिर्घाता सधूम्रा वा तत्र विन्द्याविद फलम् ॥36॥

जो उल्का मध्य भाग से ग्रह को हने—प्रताडित करे, वह विद्युत् सज्ञक है। यह उल्का निर्घात सहित और धूम सहित हो तो उसका फल निम्न प्रकार होता है ॥36॥

1. स्वस्थासन० मु० A स्वस्स्थासन् मु० B D । 2 प्रकाश्यन्ते मु० । 3 स्व स्व मु० A सम्यक् मु० C । 4 विमुच्यन्ते आ० । 5 प्रत्युन्नता मु० D । 6 योऽपि न मु० A, यागिन मु० C । 7 शौरि मु० । A, सौर मु० D । 8-9 श्चाचलयाग्वरा मु० A । 10 सा० मु० ।

नगरेषूपसृष्टेषु नागराणां महद्भयम् ।
यायिषु [1]चोपसृष्टेषु यायिनां तदभय भवेत् ।।37।।

स्थायी के नगर की व्यूह रचना पर पूर्वोक्त प्रकार की उल्का गिरे तो उस स्थायी के नगरवासियो को महान् भय होता है । यदि यायी के सैन्य-शिविर पर गिरे तो यायी पक्ष वालो को महान् भय होता है ।।36।।

सन्ध्यानां रोहिणीं पौष्ण्य चित्रां त्रीण्युत्तराणि च ।
मैत्र चोल्का[2] यदा हन्यात् तदा स्यात् पार्थिव[3] भयम् ।।38।।

यदि सन्ध्या कालीन उल्का रोहिणी, रेवती, चित्रा, उत्तराफाल्गुनी, उत्तराषाढा, उत्तराभाद्रपदा और अनुराधा नक्षत्रो को हने – प्रताडित करे तो राजा को भय होता है अर्थात् सन्ध्याकालीन उल्का इन नक्षत्रो से टकराकर गिरे तो देश और नृपति पर विपत्ति आती है ।।38।।

वायव्यं वैष्णव पुष्य यद्युल्काभि. प्रताडयेत् ।
ब्रह्मक्षत्रभय विन्द्याद् राज्ञश्च भयमादिशेत् ।।39।।

स्वाती, श्रवण और पुष्य नक्षत्रो को यदि उल्का प्रताडित करे तो ब्राह्मण, क्षत्रिय और राजा को भय की सूचना देती है ।।39।।

यथा गृह तथा ऋक्ष चातुर्वर्ण्यं विभावयेत् ।
अत· परं प्रवक्ष्यामि सेनासूल्का यथाविधि ।।40।।

जैसे ग्रह अथवा नक्षत्र हो, उन्ही के अनुसार चारो वर्णों के लिए शुभाशुभ अवगत करना चाहिए। अब इससे आगे सेना के सम्बन्ध मे उल्का का शुभाशुभ फल निरूपित करते है ।।40।।

सेनायास्तु समुद्योगे राज्ञो[4] विविध[5] - मानवा. ।
उल्का यदा पतन्तीति तदा वक्ष्यामि लक्षणम् ।।41।।

युद्ध के उद्योग के समय सेना के समक्ष जो उल्का गिरती है, उसका लक्षण, फलादि राजाओ और विविध मनुष्यो के लिए वर्णित किया जाता है ।।41।।

[6]उदगच्छत् सोममर्कं वा यद्युल्का सविदारयेत् ।
स्थावराणां विपर्यास तस्मिन्नुत्पातदर्शने[7] ।।42।।

---

1. याम्येष्वनुपसृष्टेषु मु० । 2 वोल्का मु० । 3 पार्थिवाद् मु० । 4 राज्ञा मु० ।
5. विवदमानया मु० । 6 उद्गच्छेत मु० । 7 अस्मिन्नपादे दर्शने मु० ।

यदि ऊपर को गमन करती हुई उल्का चन्द्र और सूर्य को विदारण करे तो स्थावर—स्थायी नगरवासियो के लिए विपरीत उत्पातो की सूचना देती है ॥42॥

अस्त यातमथादित्य सोममुल्का लिखेद् यदा ।
आगन्तुबध्यते सेना यथा चोश[1] यथागमम् ॥43॥

सूर्य और चन्द्रमा के अस्त होने पर यदि उल्का दिखलाई दे तो वह आनेवाले यायी की दिशा मे आगन्तुक सेना के वध का निर्देश करती है ॥43॥

उदगच्छेत् सोममर्क वा यद्युल्का प्रतिलोमत: ।
प्रविशेन्नागराणां स्याद् विपर्यास[2] स्तथागते ॥44॥

प्रतिलोम मार्ग से गमन करती हुई उल्का उदय होते हुए सूर्य और चक्र-मण्डल मे प्रवेश करे तो स्थायी और यायी दोनो के लिए विपरीत फलदायक अर्थात् अशुभ होती है ॥44॥

एवंवास्तगते[3] उल्का आगन्तूनां भय भवेत् ।
प्रतिलोमा भय कुर्याद् यथास्त चन्द्रसूर्ययो ॥45॥

उपर्युक्त योग मे सूर्य-चन्द्र के अस्त समय प्रतिलोम मार्ग से गमन करती हुई सूर्य-चन्द्र के मण्डल मे आकर उल्का अस्त हो जाय तो स्थायी और यायी दोनो के लिए भयोत्पादक है ॥45॥

उदये भास्करस्योल्का यातोऽग्रतोऽभिसर्पति[4] ।
सोमास्यापि जय कुर्याद्विषां [5]पुरस्सरावृति: ॥46॥

यदि उल्का सूर्योदय होते हुए सूर्य के आगे और चन्द्र के उदय होते हुए चन्द्रमा के आगे गमन करे तथा बाणो की आवृति रूप हो तो उसे जयसूचक समझना चाहिए ॥46॥

सेनामभिमुखी भूत्वा यद्युल्का प्रतिग्रस्यते[6] ।
प्रतिसेनावध विन्द्यात् तस्मिन्नुत्पातदर्शने ॥47॥

यदि उल्का सेना के सामने होकर गिरती हुई दिखलाई पड़े तो प्रतिसेना (प्रतिद्वन्द्वी सेना) के वध की सूचिका समझनी चाहिए ॥47॥

---

1 यथादेश मु०, निर्ग्रन्थवचन यथा, मु० C. । 2 तदागते मु० । 3 यथैवास्तमने मु० A, एषैवास्तमन मु० C. । 4. यो ऽग्रतो ऽभिसर्पति मु० । 5 पुरस्सरावृत्ति आ० । 6. प्रतिदृश्यते मु० ।

अथ यद्युभया[1] सेनामेकैकं प्रतिलोमतः ।
उल्का तूर्णं प्रपद्येत उभयत्र भयं भवेत् ॥48॥

यदि दोनो सेनाओं की ओर एक-एक सेना मे प्रतिलोम-अपसव्य मार्ग से उल्का शीघ्रता से गिरे तो दोनो सेनाओ को भय होता है ॥48॥

येषां सेनासु निपतेदुल्का नीलमहाप्रभा[2] ।
सेनापतिवधस्तेषामचिरात् सम्प्रजायते ॥49॥

नीले रग की महाप्रभावशाली उल्का जिस सेना मे गिरे उस सेना का सेनापति शीघ्र ही मरण को प्राप्त होता है ॥49॥

उल्कास्तु लोहिताः सूक्ष्मा. पतन्त्यः पृतनां प्रति ।
यस्य राज्ञः प्रपद्यन्तं कुमारो हन्ति तं नृपम् ॥50॥

लोहित वर्ण की सूक्ष्म उल्का जिस राजा की सेना के प्रति गिरे, उस सेना के राजा को राजकुमार मारता है ॥50॥

उल्कास्तु बहवः पीता. पतन्त्यः पृतनां प्रति ।
पृतनां व्याधितां प्राहुस्तस्मिन्नुत्पातदर्शने ॥51॥

पीतवर्ण की बहुत उल्काएँ सेना के समक्ष या सेना मे गिरें तो इस उत्पात का फल सेना मे रोग फैलना है ॥51॥

संघशास्त्राऽनुपद्येत् (?) उल्का. श्वेता. समन्ततः ।
ब्राह्मणेभ्यो भयं घोर तस्य सैन्यस्य निर्दिशेत् ॥52॥

यदि श्वेत रंग की उल्का सेना मे चारो तरफ गिरे तो वह उस सेना को और ब्राह्मणो को घोर भय की सूचना देती है ॥52॥

उल्का व्यूहेष्वनीकेषु या 'पतेत्तिर्यगागता[5] ।
न तदा जायते युद्धं परिघा नाम सा भवेत् ॥53॥

बाण या खड्गरूप तिरछी उल्का सेना की व्यूह रचना मे गिरे तो कुटिल युद्ध नही होता है, इसको परिघा नाम से स्मरण करते हैं – कहते हैं ॥53॥

उल्का व्यूहेष्वनीकेषु पृष्ठतोऽपि[6] पतन्ति[7] याः ।
क्षयव्ययेन पीडयेरन्नुभयोः सेनयोर्नृपान्[8] ॥54॥

---

1 उभय आ० । 2 महत्प्रभा मु० । 3. बहुमास्त प्रपद्येरन् मु० । 4 पतन्ति आ० । 5 च सायका आ० । 6 पृष्ठतः आ० । 7 निपतन्ति आ० । 8 नृपाः आ० ।

सेना की व्यूह रचना के पीछे भाग मे उल्का गिरे तो दोनो सेनाओ के राजाओ को वह नाश और हानि द्वारा कष्ट की सूचना करती है ॥54॥

उल्का व्यूहेष्वनीकेषु प्रतिलोमा: पतन्ति या ।
सग्रामेषु निपतन्ति[1] जायन्ते किंशुका वना ॥55॥

सेना की व्यूह रचना मे अपसव्य मार्ग मे उल्का गिरे तो संग्राम मे योद्धा गिर पडते है—मारे जाते है, जिसमे रणभूमि रक्तरंजित हो जाती है ॥55॥

उल्का यत्र समायान्ति यथाभावे [2]तथासु च ।
येषां मध्यान्तिकं यान्ति तेषां स्याद्विजयो ध्रुवम् ॥56॥

जहाँ उल्का जिस रूप मे और जब गिरती है तथा जिनके बीच से या निकट से निकलती है, उनकी निश्चय ही विजय होती है ॥56॥

चर्तुर्विक्षु यदा पृतना उल्का गच्छन्ति सन्ततम् ।
चर्तुर्दिशं तदा यान्ति भयातुरमसंघश [3] ॥57॥

यदि उल्का गिरती हुई निरन्तर चारो दिशाओ मे गमन करे तो लोग या सेना का समूह भयातुर होकर चारो दिशाओ मे तितर-बितर हो जाता है ॥57॥

अग्रतो या पतेदुल्का सा सेना[4] तु प्रशस्यते ।
तिर्यगाचरते[5] मार्ग प्रतिलोमा भयावहा ॥58॥

सेना के आगे भाग मे यदि उल्का गिरे तो अच्छी है । यदि तिरछी होकर प्रतिलोम गति से गिरे तो सेना को भय देनेवाली अवगत करनी चाहिए ॥58॥

यत सेनामभिपतेत् तस्य सेनां प्रबाधयेत् ।
[6]त विजयं कुर्यात् येषां पतेत्सोल्का यदा पुरा ॥59॥

जिस राजा की सेना मे उल्का बीचो-बीच गिरे उस सेना को कष्ट होता है और आगे गिरे तो उसकी विजय होती है ॥59॥

डिम्भरूपा नृपतये बन्धमुल्का प्रताडयेत्[7] ।
प्रतिलोमा विलोमा च[8] प्रतिराजं भयं सृजेत् ॥60॥

डिम्भ रूप उल्का गिरने से राजा के बन्दी होने की सूचना मिलती है और प्रतिलोम तथा अनुलोम उल्का शत्रुराजाओ को भयोत्पादिका है ॥60॥

---

1 निपतता आ० । 2 अनुकूला मधुर्वसा, मु० । 3 भयान्युग्राणि सघश मु० । 4 सेना मु० । 5 तिर्यक् सचरते मु० । 6. विजय तु समाख्याति, येषा सोल्का पुरस्सरा. मु० । 7. प्रदापयेत् मु० 8 यह पाठ मु० प्रति मे नही है ।

यस्यापि जन्मनक्षत्र उल्का गच्छेच्छरोपमा ।
विदारणा तस्य वाच्या व्याधिना वर्णसकरं. ॥61॥

जिसके जन्म-नक्षत्र मे बाणसदृश उल्का गिरे तो उस व्यक्ति के लिए विदारण— घाव लगने, चीरे जाने का फल मिलता है और नाना वर्णरूप हो तो व्याधि प्राप्त होने की सूचना समझनी चाहिए ॥61॥

उल्का येषां यथारूपा दृश्यते प्रतिलोमत ।
तेषां ततो भय विन्द्यादनुलोमा शुभागमम् ॥62॥

विलोम मार्ग से जैसे रूप की उल्का जिसे दिखाई दे तो उसको भय होगा, ऐसा जानना चाहिए और अनुलोम गति से दिखलाई दे तो शुभरूप जानना चाहिए ॥62॥

उल्का यत्र प्रसर्पन्ति भ्राजमाना दिशो दश ।
सप्तरात्रान्तर[1] वर्षं दशाहादुत्तरं भयम ॥63॥

जिस स्थान पर उल्का फैलती हुई दिखाई दे तो वहाँ भी जनता को दसो दिशाओ मे भागना पडता है—उपद्रव के कारण दु खी हो इधर-उधर जाना पडता है । यदि सात रात्रि के मध्य मे वर्षा हो जाय तो इस दोष का उपशम हो जाता है, अन्यथा दस दिन के पश्चात् उपर्युक्त भयरूप फलादेश घटित होता है ॥63॥

पापासूल्कासु यद्यस्तु यदा देव प्रवर्षति ।
प्रशान्तं तद्भयं विन्द्याद् भद्रबाहुवचो यथा ॥64॥

पापरूप उल्कापात के पश्चात् मेघ वर्षा जाये — वर्षा हो जाय तो भय को शान्त हुआ समझना चाहिए, इस प्रकार भद्रबाहु स्वामी का कथन है ॥64॥

[2]यथाभिवृष्या: स्निग्धा यदि शान्ता निपतन्ति या: ।
उल्कास्वाशु भवेत् क्षेम सुभिक्ष मन्दरोगवान् ॥65॥

अभिवृष्य, स्निग्ध और शान्त उल्का जिस दिशा मे गिरती है, उस दिशा मे वह शीघ्र क्षेम-कुशल सुभिक्ष करती है, परन्तु थोडा-सा रोग अवश्य होता है ॥65॥

यथामार्गं यथावृद्धि यथाद्वार यथाऽऽगमम् ।
यथाविकारं विज्ञेयं ततो ब्रूयाच्छुभाऽशुभम् ॥66॥

---

1 सप्ताहाभ्यन्तरे मु० C । 2 यथातिवृष्टि स्निग्धा च दिशि शान्ता पतन्ति या मु० ।

जिस मार्ग, वृद्धि, द्वार, आगमन प्रकार और विकार के अनुसार शुभाशुभ रूप उल्कापात हो उसी के समान शुभाशुभ फल अवगत करना चाहिए ॥66॥

तिथिश्च करणं चैव नक्षत्राश्च मुहूर्तत ।
ग्रहाश्च [1]शकुनं चैव दिशो वर्णा. प्रमाणत ॥67॥

उल्तापात का शुभाशुभ फल तिथि, करण, नक्षत्र, मुहूर्त्त, ग्रह, शकुन, दिशा, वर्ण, प्रमाण—लम्बाई-चौडाई पर से बतलाना चाहिए ॥67॥

[2]निमित्तादनुपूर्वाच्च पुरुष कालतो बलात् ।
[3]प्रभावाच्च गतेश्चैवमुल्काया फलमादिशेत् ॥68॥

निमित्तानुसार क्रमपूर्वक उपर्युक्त प्रकार से निरूपित काल, बल, प्रभाव और गति पर से उल्का के फल को अवगत करना चाहिए ॥68॥

एतावदुक्तमुल्कानां लक्षण जिनभाषितम् ।
परिवेषान् प्रवक्ष्यामि तान्निबोधत तत्त्वत ॥69॥

जिस प्रकार जिनेन्द्र भगवान् ने उल्काओ का लक्षण और फल निरूपित किया है, उसी प्रकार यहाँ वर्णित किया गया है। अब परिवेष के सम्बन्ध मे वर्णन किया जाता है, उसे यथार्थ रूप से अवगत करना चाहिए ॥69॥

इति भद्रबाहुसंहितायां (भद्रबाहुनिमित्तशास्त्रे) तृतीयोऽध्याय ।

विवेचन—उल्कापात का फलादेश सहिता ग्रन्थो मे विस्तारपूर्वक वर्णित है। यहाँ सर्वसाधारण की जानकारी के लिए थोडा-सा फलादेश निरूपित किया जाता है। उल्कापात से व्यक्ति, समाज, देश, राष्ट्र आदि का फलादेश ज्ञात किया जाता है। सर्वप्रथम व्यक्ति के लिए हानि, लाभ, जीवन, मरण, सन्तान-सुख, हर्ष-विषाद एव विशेष अवसरो पर घटित होने वाली विभिन्न घटनाओ का निरूपण किया जाता है। आकाश का निरीक्षण कर टूटते हुए ताराओ को देखने से व्यक्ति अपने सम्बन्ध मे अनेक प्रकार की जानकारी प्राप्त कर सकता है।

रक्त वर्ण की टेढी, टूटी हुई उल्काओ को पतित होते देखने से व्यक्ति को भय, पाँच महीने मे परिवार के व्यक्ति की मृत्यु, धन-हानि और दो महीने के बाद किये गये व्यापार मे हानि, राज्य से झगडा, मुकद्दमा एव अनेक प्रकार की चिन्ताओं के कारण परेशानी होती है। कृष्ण वर्ण की टूटी हुई, छिन्न-भिन्न

1 शकुनाश्चैव मु० । 2 निमित्तादनुपूर्वाश्च, पुरुषो कालतो बलात् मु० । 3 प्रभावाश्च गतिश्चैवमुल्काना मु० ।

उल्काओ का पतन होते देखने से व्यक्ति के आत्मीय की सात महीने में मृत्यु, हानि, झगडा, अशान्ति और परेशानी उठानी पडती है। कृष्ण वर्ण की उल्का का पात सन्ध्या समय देखने से भय, विद्रोह और अशान्ति, सन्ध्या के तीन घटी उपरान्त देखने से विवाद, कलह, परिवार मे झगडा एव किसी आत्मीय व्यक्ति को कष्ट, मध्यरात्रि के समय उक्त प्रकार की उल्का का पतन देखने से स्वयं को महाकष्ट, अपनी या किसी आत्मीय की मृत्यु, आर्थिक कष्ट एव नाना प्रकार की अशान्ति प्राप्त होने की सूचना होती है।

श्वेत वर्ण की उल्का का पतन सन्ध्या समय मे दिखलायी पडे तो धन लाभ, आत्मसन्तोष, सुख और मित्रो से मिलाप होता है। यह उल्का दण्डकार हो तो सामान्य लाभ, मुसलाकार हो तो अत्यल्प लाभ और शकटाकार—गाडी के आकार या हाथी के आकार हो तो पुष्कल लाभ एव अश्व के आकार प्रकाशमान हो तो विशेष लाभ होता है। मध्यरात्रि मे उक्त प्रकार की उल्का दिखलायी पड़े तो पुत्र लाभ, स्त्री लाभ, धन लाभ एवं अभीष्ट कार्य की सिद्धि होती है। उपर्युक्त प्रकार की उल्का रोहिणी, पुनर्वसु, धनिष्ठा और तीनो उत्तराओ मे पतित होती हुई दिखलायी पडे तो व्यक्ति को पूर्णफलादेश मिलता है तथा सभी प्रकार से धन-धान्यादि की प्राप्ति के साथ, पुत्र-स्त्रीलाभ भी होता है। आश्लेषा, भरणी, तीनो पूर्वा—पूर्वाषाढा, पूर्वाफाल्गुनी और पूर्वाभाद्रपद— और रेवती इन नक्षत्रो मे उपर्युक्त प्रकार का उल्कापतन दिखलाई पडे तो सामान्य लाभ ही होता है। इन नक्षत्रो में उल्कापतन देखने पर विशेष लाभ या पुष्कल लाभ की आशा नहीं करनी चाहिए, लाभ होते-होते क्षीण हो जाता है। आर्द्रा, पुष्य, मघा, धनिष्ठा, श्रवण और हस्त इन नक्षत्रो मे उपर्युक्त प्रकार - श्वेतवर्ण की प्रकाशमान उल्का पतित होती हुई दिखलाई पडे तो प्राय. पुष्कल लाभ होता है। मघा, रोहिणी, तीनों उत्तरा—उत्तरा फाल्गुनी, उत्तराषाढा और उत्तराभाद्रपद, मूल, मृगशिर और अनुराधा इन नक्षत्रो मे उक्त प्रकार का उल्कापात दिखलाई पडे तो स्त्रीलाभ और सन्तानलाभ समझना चाहिए। कार्यसिद्धि के लिए चिकनी, प्रकाशमान, श्वेतवर्ण की उल्का का रात्रि के मध्यभाग मे पुनर्वसु और रोहिणी नक्षत्र मे पतन होना आवश्यक माना गया है। इस प्रकार के उल्कापतन को देखने से अभीष्ट कार्यों की सिद्धि होती है। अल्प आभास से भी कार्य सफल हो जाते हैं। पीतवर्ण की उल्का सामान्यतया शुभप्रद है। सन्ध्या होने के तीन घटी पीछे कृत्तिका नक्षत्र मे पीत-वर्ण का उल्कापात दिखलाई पड़े तो मुकद्दमे मे विजय, बडी-बड़ी परीक्षाओ मे उत्तीर्णता एवं राज्यकर्मचारियो से मैत्री बढ़ती है। आर्द्रा, पुनर्वसु, पुष्य और श्रवण में पीतवर्ण की उल्का पतित होती हुई दिखलाई पडे तो स्वजाति और स्वदेश मे सम्मान बढ़ता है। मध्यरात्रि के समय उक्त प्रकार की उल्का दिखलाई पड़े तो

हर्ष, मध्यरात्रि के पश्चात् एक बजे रात मे उक्त प्रकार का उल्कापात दिखलाई पडे तो सामान्य पीडा, आर्थिक लाभ और प्रतिष्ठित व्यक्तियो से प्रशसा प्राप्त होती है। प्राय सभी प्रकार की उल्काओ का फल सन्ध्याकाल मे चतुर्थांश, दस बजे षष्ठाश, ग्यारह बजे तृतीयाश, बारह बजे अर्ध, एक बजे अर्धाधिक और दो बजे मे चार बजे रात तक किंचित् न्यून उपलब्ध होता है। सम्पूर्ण फलादेश बारह बजे के उपरान्त और एक बजे के पहले के समय मे ही घटित होता है। उल्कापात भद्रा— विष्टि काल मे हो तो विपरीत फलादेश मिलता है।

प्रतनुपुच्छा उल्का सिर भाग से गिरने पर व्यक्ति के लिए अरिष्टसूचक, मध्यभाग मे गिरने पर विपत्तिसूचक और पूछ भाग मे गिरने पर रोगसूचक मानी गई है। साँप के आकार का उल्कापात व्यक्ति के जीवन मे भय, आतक, रोग, शोक आदि उत्पन्न करता है। इस प्रकार का उल्कापात भरणी और आश्लेषा नक्षत्रो का घात करता हुआ दिखलाई पडे तो महान् विपत्ति और अशान्ति मिलती है। पूर्वाफाल्गुनी, पुनर्वसु, धनिष्ठा और मूल नक्षत्र के योग तारे को उल्का हनन करे तो युवतियो को कष्ट होता है। नारी जाति के लिए इस प्रकार का उल्कापात अनिष्ट का सूचक है। शूकर और चमगीदड के समान आकार की उल्का कृत्तिका, विशाखा, अभिजित्, भरणी और आश्लेषा नक्षत्र को प्रताडित करती हुई पतित हो तो युवक-युवतियो के लिए रोग की सूचना देती है। इन्द्रध्वज के आकार की उल्का आकाश मे प्रकाशमान होकर पतित हो तथा पृथ्वी पर आते-आते चिन-गारियाँ उडने लगे तो इस प्रकार की उल्काएँ कारागार जाने की सूचना सम्बन्धित व्यक्ति को देती है। सिर के ऊपर पतित हुई उल्का चन्द्रमा या नक्षत्रो का घात करती हुई दिखलायी पडे तो आगामी एक महीने मे किसी आत्मीय की मृत्यु या परदेशगमन होता है। सामने कृष्णवर्ण की उल्का गिरने मे महान कष्ट, धनक्षय, विवाद, कलह और झगडे होने की सूचना मिलती है। अश्विनी, कृत्तिका, आर्द्रा, आश्लेषा, मघा, विशाखा, अनुराधा, मूल, पूर्वाफाल्गुनी, पूर्वाषाढा और पूर्वाभाद्रपद इन नक्षत्रों मे पूर्वोक्त प्रकार की उल्का का अभिघात हो तो व्यक्ति के भावी जीवन के लिए महान कष्ट होता है। पीछे की ओर कृष्णवर्ण की उल्का व्यक्ति को असाध्य रोग की सूचना देती है। विचित्र वर्ण उल्का मध्यरात्रि मे च्युत होती हुई दिखलाई पडे तो निश्चयत अर्थहानि होती है। धूम्रवर्ण की उल्काओ का पतन व्यक्तिगत जीवन मे हानि का सूचक है। अग्नि के समान प्रभावशाली, वृषभाकार उल्कापात व्यक्ति की उन्नति का सूचक है। तलवार की द्युति समान उल्काएँ व्यक्ति की अवनति सूचित करती है। सूक्ष्म आकार वाली उल्काएँ अच्छा फल देती है और स्थूल आकार वाली उल्काओ का फलादेश अशुभ होता है। हाथी, घोड़ा, बैल आदि पशुओ के आकार वाली उल्काएँ शान्ति और

सुख की सूचिकाएँ है। ग्रहो का स्पर्श कर पतित होनेवाली उल्काएँ भयप्रद है और स्वतन्त्र रूप से पतित होनेवाली उल्काएँ सामान्य फलवाली होती हैं। उत्तर और पूर्व दिशा की ओर पतित होनेवाली उल्काएँ सभी प्रकार का सुख देती हैं, किन्तु इस फल की प्राप्ति रात के मध्य समय मे दर्शन करने से ही होती है।

कमल, वृक्ष, चन्द्र, सूर्य, स्वस्तिक, कलश, ध्वजा, शख, वाद्य—ढोल, मजीरा, तानपूरा और गोलाकार रूप मे उल्काएँ रविवार, भौमवार और गुरुवार को पतित होती हुई दिखलाई पडें तो व्यक्ति को अपार लाभ, अकल्पित धन की प्राप्ति, घर मे सन्तान लाभ एव आगामी मागलिको की सूचना समझनी चाहिए। इस प्रकार का उल्कापतन उक्त उक्त दिनो की सन्ध्या मे हो तो अर्धफल, नौ-दस बजे रात मे हो तो तृतीयाश फल और ठीक मध्यरात्रि मे हो तो पूर्ण फल प्राप्त होता है। मध्यरात्रि के पश्चात् पतन दिखलाई पडे तो षष्ठाश फल और ब्राह्म-मुहूर्त मे दिखलाई पडे तो चतुर्थांश फल प्राप्त होता है। दिन मे उल्काओ का पतन देखनेवाले को असाधारण लाभ या असाधारण हानि होती है। उक्त प्रकार की उल्काएँ सूर्य, चन्द्रमा नक्षत्रो का भेदन करे तो साधारण लाभ और भविष्य मे घटित होनेवाली असाधारण घटनाओ की सूचना समझनी चाहिए। रोहिणी, मृगशिरा और श्रवण नक्षत्र के साथ योग करानेवाली उल्काएँ उत्तम भविष्य की सूचिका है। कच्छप और मछली के आकार की उल्काएँ व्यक्ति के जीवन मे शुभ फलो की सूचना देती है। उक्त प्रकार की उल्काओ का पतन मध्यरात्रि के उपरान्त और एक बजे के भीतर दिखलाई पडे तो व्यक्ति को धरती के नीचे रखी हुई निधि मिलती है। इस निधि के लिए प्रयास नही करना पडता, कोई भी व्यक्ति उक्त प्रकार की उल्काओ का पतन देखकर चिन्तामणि पार्श्वनाथ स्वामी की पूजाकर तीन महीने मे स्वय ही निधि प्राप्त करता है। व्यन्तर देव उसे स्वप्न मे निधि के स्थान की सूचना देते है और वह अनायास इस स्वप्न के अनुसार निधि प्राप्त करता है। उक्त प्रकार की उल्काओ का पतन सन्ध्याकाल अथवा रात मे आठ या नौ बजे हो तो व्यक्ति के जीवन मे विषम प्रकार की स्थिति होती है। सफलता मिल जाने पर भी असफलता ही दिखलाई पडती है। नौ-दस बजे का उल्कापात सभी के लिए अनिष्टकर होता है।

सन्ध्याकाल मे गोलाकार उल्का दिखलाई पडे और यह उल्का पतन समय मे छिन्न-भिन्न होती हुई दृष्टिगोचर हो तो व्यक्ति के लिए रोग-शोक की सूचक है। आपस मे टकराती हुई उल्काएँ व्यक्ति के लिए गुप्त रोगो की सूचना देती है। जिन उल्काओ को शुभ बतलाया गया है, उनका पतन भी शनि, बुध और शुक्र को दिखलाई पडे तो जीवन मे आनेवाले अनेक कष्टो की सूचना समझनी चाहिए। शनि, राहु और केतु से टकराकर उल्काओं का पतन दिखलाई पडे तो महान्

अनिष्टकर है, इससे जीवन मे अनेक प्रकार की विपत्तियों की सूचना समझनी चाहिए। खोई हुए, भूली हुई या चोरी गई वस्तु के समय में गुरुवार की मध्यरात्रि में दण्डाकार उल्का पतित होती हुई दिखलाई पडे तो उस वस्तु की प्राप्ति की तीन मास के भीतर की सूचना समझनी चाहिए। मगलवार, सोमवार और शनिवार उल्कापात दर्शन के लिए अशुभ है, इन दिनो की सन्ध्या का उल्कापात दर्शन अधिक अनिष्टकर समझा जाता है। मगलवार और आश्लेषा नक्षत्र मे शुभ उल्कापात भी अशुभ होता है, इससे आगामी छ मासो मे कष्टो की सूचना समझनी चाहिए। अनिष्ट उल्कपात के दर्शन के पश्चात् चिन्तामणि पार्श्वनाथ का पूजन करने से आगामी अशुभ की शान्ति होती है।

राष्ट्रघातक उल्कापात—जब उल्काएँ चन्द्र और सूर्य का स्पर्श कर भ्रमण करती हुई पतित हो और उस समय पृथ्वी कम्पायमान हो तो राष्ट्र दूसरे देश के अधीन होता है। सूर्य और चन्द्रमा के दाहिनी ओर उल्कापात हो तो राष्ट्र मे रोग फैलते हैं तथा राष्ट्र की वनसम्पत्ति विशेषरूप से नष्ट होती है। चन्द्रमा से मिलकर उल्का सामने आवे तो राष्ट्र के लिए विजय और लाभ की सूचना देती है। श्याम, अरुण, नील, रक्त, दहन, असित, और भस्म के समान रूक्ष उल्का देश के शत्रुओ के लिए बाधक होती है। रोहिणी, उत्तराफाल्गुनी, उत्तराषाढा, उत्तरा भाद्रपद, मृगशिरा, चित्रा और अनुराधा नक्षत्र की उल्का घातित करे तो राष्ट्र को पीडा होती है। मंगल और रविवार को अनेक व्यक्ति मध्यरात्रि मे उल्कापात देखें तो राष्ट्र के लिए भयसूचक समझना चाहिए। पूर्वाफाल्गुनी, पूर्वाषाढ़ और पूर्वाभाद्रपद, मघा, आर्द्रा, आश्लेषा, ज्येष्ठा और मूल नक्षत्र को उल्का ताडित करे तो देश के व्यापारी वर्ग को कष्ट होता है तथा अश्विनी, पुष्य, अभिजित्, कृत्तिका और विशाखा नक्षत्र को उल्का ताडित करे तो कलाविदो को कष्ट होता है। देवमन्दिर या देवमूर्ति को उल्कापात हो तो राष्ट्र मे बडे-बड़े परिवर्तन होते हैं, आन्तरिक संघर्षों के साथ विदेशीय शक्ति का भी मुकाबला करना पडता है। इस प्रकार उल्कापतन देश के लिए महान् अनिष्टकारक है। श्मशान भूमि मे पतित उल्का प्रशासको में भय का संचार करती है तथा देश या राज्य मे नवीन परिवर्तन उत्पन्न करती है। न्यायालयो पर उल्कापात हो तो किसी बडे नेता की मृत्यु की सूचना अवगत करनी चाहिए। वृक्ष, धर्मशाला, तालाब और अन्य पवित्र भूमियो पर उल्कापात हो तो राज्य में आन्तरिक विद्रोह, वस्तुओ की मँहगाई एवं देश के नेताओ मे फूट होती है। सगठन के अभाव होने से देश या राष्ट्र को महान् क्षति होती है। श्वेत और पीत वर्ण की सूच्याकार अनेक उल्काएँ किसी रिक्त स्थान पर पतित हो तो देश या राष्ट्र के लिए शुभकारक समझना चाहिए। राष्ट्र के नेताओ के बीच मेल-मिलाप की सूचना भी उक्त प्रकार के उल्कापात से ही सम-

ह्ननी चाहिए। मन्दिर के निकटवर्ती वृक्षो पर उल्कापात हो तो प्रशासको के बीच मतभेद होता है, जिससे देश या राष्ट्र मे अनेक प्रकार की अशान्ति फैलती है। पुष्य नक्षत्र मे श्वेतवर्ण की चमकती हुई उल्का राजप्रासाद या देवप्रासाद के किनारे पर गिरती हुई दिखलाई पड़े तो देश या राष्ट्र की शक्ति का विकास होता है, अन्य देशो से व्यापारिक सम्बन्ध स्थापित होता है तथा देश की आर्थिक स्थिति सुदृढ़ होती है। इस प्रकार का उल्कापात राष्ट्र या देश के लिए शुभकारक है। मघा और श्रवण नक्षत्र मे पूर्वोक्त प्रकार का उल्कापात हो तो भी देश या राष्ट्र की उन्नति होती है। खलिहान और बगीचे में मध्यरात्रि के समय उक्त प्रकार उल्का पतित हो तो निश्चय ही देश मे अन्न का भाव द्विगुणित हो जाता है।

शनिवार और मगलवार को कृष्णवर्ण की मन्द प्रकाशवाली उल्काएँ श्मशान भूमि या निर्जन वन-भूमि मे पतित होती हुई देखी जाएँ तो देश मे कलह होता है। पारस्परिक अशान्ति के कारण देश की आर्थिक और सामाजिक व्यवस्था बिगड जाती है। राष्ट्र के लिए इस प्रकार की उल्काएँ भयोत्पादक एव घातक होती है। आश्लेषा नक्षत्र मे कृष्णवर्ण की उल्का पतित हो तो निश्चय ही देश के किसी उच्चकोटि के नेता की मृत्यु होती है। राष्ट्र की शक्ति और बल को बढ़ाने-वाली श्वेत, पीत और रक्तवर्ण की उल्काएँ शुक्रवार और गुरुवार को पतित होती है।

कृषिफलादेश सम्बन्धी उल्कापात—प्रकाशित होकर चमक उत्पन्न करती हुई उल्का यदि पतन के पहले ही आकाश मे विलीन हो जाय तो कृषि के लिए हानि-कारक है। मोर पूँछ के समान आकारवाली उल्का मगलवार की मध्यरात्रि मे पतित हो तो कृषि मे एक प्रकार का रोग उत्पन्न होता है, जिससे फसल नष्ट हो जाती है। मण्डलाकार होती हुई उल्का शुक्रवार की सन्ध्या को गर्जन के साथ पतित हो तो कृषि मे बृद्धि होती है। फसल ठीक उत्पन्न होती है और कृषि मे कीड़े नही लगते। इन्द्रध्वज के रूप मे आश्लेषा, विशाखा, भरणी और रेवती नक्षत्र मे तथा रवि, गुरु, सोम और शनि इन वारों मे उल्कापात हो तो कृषि मे फसल पकने के समय रोग लगता है। इस प्रकार के उल्कापात मे गेहूँ, जौ, धान और चने की फसल अच्छी होती है तथा अवशेष धान्य की फसल बिगडती है। वृष्टि का भी अभाव रहता है। शनिवार को दक्षिण की ओर बिजली चमके तथा तत्काल ही पश्चिम दिशा की ओर उल्का पतित हो तो देश के पूर्वीय भाग मे बाढ़, तूफान, अतिवृष्टि आदि के कारण फसल को हानि पहुंचती है तथा इसी दिन पश्चिम की ओर बिजली चमके और दक्षिण दिशा की ओर उल्कापात हो तो देश के पश्चिमीय भाग मे सुभिक्ष होता है। इस प्रकार का उल्कापात कृषि के लिए अनिष्टकर ही होता है। सहिताकारो ने कृषि के सम्बन्ध मे विचार करते समय

समय-समय पर पतित होनेवाली उल्काओ के शुभाशुभत्व का विचार किया है। वराहमिहिर के मतानुसार पुष्य, मघा, तीनो उत्तरा इन नक्षत्रो मे गुरुवार की सन्ध्या या इस दिन की मध्यरात्रि मे चने के खेत पर उल्कापात हो तो आगामी वर्ष की कृषि के लिए शुभदायक है। ज्येष्ठ महीने की पूर्णमासी के दिन रात को होनेवाले उल्कापात से आगामी वर्ष के शुभाशुभ फल को ज्ञात करना चाहिए। इस दिन अश्विनी, कृत्तिका, रोहिणी, मृगशिरा, पुनर्वसु, आश्लेषा, पूर्वाफाल्गुनी और ज्येष्ठा नक्षत्र को प्रताडित करता हुआ उल्कापात हो तो वह फसल के लिए खराब होता है। यह उल्कापात कृषि के लिए अनिष्ट का सूचक है। शुक्रवार को अनुराधा नक्षत्र मे मध्यरात्रि मे प्रकाशमान उल्कापात हो तो कृषि के लिए उत्तम होता है। इस प्रकार के उल्कापात द्वारा श्रेष्ठ फसल की सूचना समझनी चाहिए। श्रवण नक्षत्र का स्पर्श करता हुआ उल्कापात सोमवार की मध्यरात्रि मे हो तो गेहूँ और धान की फसल उत्तम होती है। श्रवण नक्षत्र मे मगलवार को उल्कापात हो तो गन्ना अच्छा उत्पन्न होता है किन्तु चने की फसल मे रोग लगता है। सोमवार, गुरुवार और शुक्रवार को मध्यरात्रि मे कडक के साथ उल्कापात हो तथा इस उल्का का आकार ध्वजा के समान चौकोर हो तो आगामी वर्ष मे कृषि अच्छी होती है, विशेषत चावल और गेहूँ की फसल उत्तम होती है। ज्येष्ठ मास की शुक्लपक्ष की एकादशी, द्वादशी और त्रयोदशी को पश्चिम दिशा की ओर उल्कापात हो तो फसल के लिए अशुभ समझना चाहिए। यहाँ इतनी विशेषता है कि उल्का का आकार त्रिकोण होने से यह फल यथार्थ घटित होता है। यदि इन दिनो का उल्कापात दण्डे के समान हो तो आरम्भ मे सूखा पश्चात् समयानुकूल वर्षा होती है। दक्षिण दिशा मे अनिष्ट फल घटता है। शुक्लपक्ष की चतुर्दशी की समाप्ति और पूर्णिमा के आरम्भ काल मे उल्कापात हो तो आगामी वर्ष के लिए साधारणत अनिष्ट होता है। पूर्णिमाविद्ध प्रतिपदा मे उल्कापात हो तो फसल कई गुनी अधिक होती है। किन्तु पशुओ मे एक प्रकार का रोग फैलता है जिससे पशुओ की हानि होती है।

आषाढ महीने के आरम्भ मे निरभ्र आकाश मे काली और लाल रग की उल्काएँ पतित होती हुई दिखलाई पडे तो आगामी तथा वर्तमान दोनो वर्ष मे कृषि अच्छी नही होती। वर्षा भी समय पर नही होती है। अतिवृष्टि और अनावृष्टि का योग रहता है। आषाढ कृष्ण प्रतिपदा शनिवार और मगलवार को हो और इस दिन गोलाकार काले रग की उल्काएँ टूटती हुई दिखलाई पडे तो महान् भय होता है और कृषि अच्छी नही होती। इन दिनो मे मध्यरात्रि के बाद श्वेत रग की उल्काएँ पतित होती हुई दिखलाई पडे तो फसल बहुत अच्छी होती है। यदि इन पतित होनेवाली उल्काओ का आकार मगर और सिंह के समान हो तथा

पतित होते समय शब्द हो रहा हो तो फसल मे रोग लगता है और अच्छी होने पर भी कम ही अनाज उत्पन्न होता है। आषाढ कृष्ण तृतीया, पचमी, षष्ठी, एकादशी, द्वादशी और चतुर्दशी को मध्यरात्रि के बाद उल्कापात हो तो निश्चय से फसल खराब होती है। इस वर्ष मे ओले गिरते है तथा पाला पडने का भी भय रहता है। कृष्णपक्ष की दशमी और अष्टमी को मध्यरात्रि के पूर्व ही उल्कापात दिखलाई पडे तो उस प्रदेश मे कृषि अच्छी होती है। इन्ही दिनो मे मध्यरात्रि के बाद उल्कापात दिखलाई पडे तो गुड, गेहूँ की फसल अच्छी और अन्य वस्तुओ की फसल मे कमी आती है। सन्ध्या समय चन्द्रोदय के पूर्व या चन्द्रास्त के उपरान्त उल्कापात दिखलाई पडे तो फसल अच्छी नही होती। अन्य समय मे सुन्दर और शुभ आकार का उल्कापात दिखलाई पडे तो फसल अच्छी होती है। शुक्लपक्ष मे तृतीया, दशमी और त्रयोदशी को आकाश गर्जन के साथ पश्चिम दिशा की ओर उल्कापात दिखलाई पडे तो फसल मे कुछ कमी रहती है। तिल, तिलहन और दालवाले अनाज की फसल अच्छी होती है। केवल चावल और गेहूँ की फसल मे कुछ त्रुटि रहती है।

फसल की अच्छाई और बुराई के लिए कार्त्तिक, पौष और माघ इन तीन महीनो के उल्कापात का विचार करना चाहिए। चैत्र और वैशाख का उल्कापात केवल वृष्टि की सूचना देता है। कार्तिक मास के कृष्णपक्ष की प्रतिपदा, चतुर्थी, षष्ठी, अष्टमी, द्वादशी और चतुर्दशी को धूम्रवर्ण का उल्कापात दक्षिण और पश्चिम दिशा की ओर दिखलाई पडे तो आगामी फसल के लिए अत्यन्त अनिष्ट-कारक और पशुओ की महँगी का सूचक है। चौपायो मे मरी के रोग की सूचना भी इसी उल्कापात से समझनी चाहिए। यदि उक्त तिथियाँ शनिवार, मगलवार और रविवार को पडे तो समस्त फल और सोमवार, बुधवार, गुरुवार और शुक्रवार को पड़े तो अनिष्ट चतुर्थांश ही मिलता है। कार्तिक की पूर्णमा को उल्का-पात का विशेष निरीक्षण करना चाहिए। इस दिन सूर्यास्त के उपरान्त ही उल्का-पात हो तो आगामी वर्ष की बरबादी प्रकट करता है। मध्यरात्रि के पहले उल्का-पात हो तो श्रेष्ठ फसल का सूचक है, मध्यरात्रि के उपरान्त उल्कापात हो तो फसल मे साधारण गडबडी रहने पर भी अच्छी होती है। मोटा धान्य खूब उत्पन्न होता है। पौष मास मे पूर्णिमा को उल्कापात हो तो फसल अच्छी, अमावस्या को हो तो खराब, शुक्ल या कृष्णपक्ष की त्रयोदशी को हो तो श्रेष्ठ, द्वादशी को हो तो धान्य की फसल बहुत अच्छी और गेहूँ की साधारण, दशमी को हो तो साधारण एव तृतीया, चतुर्थी और सप्तमी को हो तो फसलो मे रोग लगने पर भी अच्छी ही होती है। पौष मास मे कृष्णपक्ष की प्रतिपदा को यदि मगलवार हो और उस दिन उल्कापात हो तो निश्चय ही फसल चौपट हो जाती है। वराहमिहिर ने इस

योग को अत्यन्त अनिष्टकारक माना है।

द्वितीया विद्ध माघ मास की कृष्ण प्रतिपदा को उल्कापात हो तो आगामी वर्ष फसल बहुत अच्छी उत्पन्न होती है और अनाज का भाव भी सस्ता हो जाता है। तृतीया विद्ध द्वितीया को रात्रि के पूर्वभाग मे उल्कापात हो तो सुभिक्ष और अन्न की उत्पत्ति प्रचुर मात्रा मे होती है। चतुर्थी विद्ध तृतीया को कभी भी उल्कापात हो तो कृषि मे अनेक रोग, अवृष्टि और अनावर्षण से भी फसल को क्षति पहुँचती है। पचमी विद्ध चतुर्थी को उल्कापात हो तो साधारणतया फसल अच्छी होती है। दालो की उपज कम होती है, अवशेष अनाज अधिक उत्पन्न होते हैं। तिलहन, गुड़ का भाव भी कुछ महँगा रहता है। इन वस्तुओ की फसल भी कमजोर ही रहती है। षष्ठी विद्ध पचमी को उल्कापात हो तो फसल अच्छी उत्पन्न होती है। सप्तमी विद्ध षष्ठी को मध्यरात्रि के कुछ ही बाद उल्कापात हो तो फसल हल्की होती है। दाल, गेहूँ, बाजरा और ज्वार की उपज कम ही होती है। अप्टमी विद्ध सप्तमी को रात्रि के प्रथम प्रहर मे उल्कापात हो तो अतिवृष्टि से फसल को हानि, द्वितीय प्रहर मे उल्कापात हो तो साधारणतया अच्छी वर्षा, तृतीय प्रहर में उल्कापात हो तो फसल मे कमी और चतुर्थ प्रहर मे उल्कापात हो तो गेहूँ, गुड, तिलहन की खूब उत्पत्ति होती है। नवमी विद्ध अष्टमी को शनिवार या रविवार हो और इस दिन उल्कापात दिखलाई पडे तो निश्चयत चने की फसल मे क्षति होती है। दशमी, एकादशी और द्वादशी तिथियाँ शुक्रवार या गुरुवार को हो और इनमे उल्कापात दिखलाई पडे तो अच्छी फसल उत्पन्न होती है। पूर्णमासी को लाल रग या काले रग का उल्कापात दिखलाई पडे तो फसल की हानि, पीत और श्वेत का उल्कापात दिखलाई पडे तो श्रेष्ठ फसल एव चित्र-विचित्र वर्ण का उल्कापात दिखलाई पडे तो सामान्य रूप से अच्छी फसल उत्पन्न होती है। होली के दिन होलिकादाह से पूर्व उल्कापात दिखलाई पडे तो आगामी वर्ष फसल की कमी और होलिकादाह के पश्चात् उल्कापात नीले रग का विचित्र वर्ण का दिखलाई पड़े तो अनेक प्रकार से फसल को हानि पहुँचती है।

वैयक्तिक फलादेश—सर्प और शूकर के समान आकारयुक्त शब्द सहित उल्कापात दिखलाई पड़े तो दर्शक को तीन महीने के भीतर मृत्यु या मृत्युतुल्य कष्ट प्राप्त होता है। इस प्रकार का उल्कापात आर्थिक हानि भी सूचित करता है। इन्द्रधनुष के आकार समान उल्कापात किसी भी व्यक्ति को सोमवार की रात्रि मे दिखलाई पडे तो धन हानि, रोग वृद्धि तथा मित्रो द्वारा किसी प्रकार की सहायता की सूचक, बुधवार की रात्रि मे उल्कापात दिखलाई पडे तो वस्त्राभूषणो का लाभ, व्यापार मे लाभ और मन प्रसन्न होता है। गुरुवार की रात्रि मे उल्कापात इन्द्रधनुष के आकार का दिखलाई पडे तो व्यक्ति को तीन मास मे आर्थिक

लाभ, किसी स्वजन को कष्ट, सन्तान की वृद्धि एवं कुटुम्बियो द्वारा यश की प्राप्ति होती है, शुक्रवार को उल्कापात उस आकार का दिखलाई पड़े तो राज-सम्मान, यश, धन एव मधुर पदार्थ भोजन के लिए प्राप्त होते हैं तथा शनि की रात्रि में उस प्रकार के आकार का उल्कापात दिखलाई पडे तो आर्थिक संकट, धन की क्षति तथा आत्मीयो में भी सघर्ष होता है। रविवार की रात्रि मे इन्द्रधनुष के आकार की उल्का का पतन देखना अनिष्टकारक बताया गया है। रोहिणी, तीनों उत्तरा --उत्तरापाढा, उत्तराफाल्गुनी और उत्तराभाद्रपदा, चित्रा, अनुराधा और रेवती नक्षत्र मे इन्हीं नक्षत्रो मे उत्पन्न हुए व्यक्तियो को उल्कापात दिखलाई पड़े तो वैयक्तिक दृष्टि से अभ्युदय सूचक और इन नक्षत्रो से भिन्न नक्षत्रो में जन्मे व्यक्तियो को उल्कापात दिखलाई पडे तो कष्ट सूचक होता है। तीनों पूर्वा— पूर्वाफाल्गुनी, पूर्वाषाढा और पूर्वाभाद्रपदा, आश्लेषा, मघा, ज्येष्ठा और मूलनक्षत्र मे जन्मे व्यक्तियो को इन्ही नक्षत्रो मे शब्द करता हुआ उल्कापात दिखलाई पडे तो मृत्यु सूचक और भिन्न नक्षत्रों मे जन्मे व्यक्तियो को इन्ही नक्षत्रो मे उल्कापात सशब्द दिखलाई पडे तो किसी आत्मीय की मृत्यु और शब्द रहित दिखलाई पडे तो आरोग्यलाभ प्राप्त होता है। विपरीत आकारवाली उल्का दिखलाई पडे— जहाँ से निकली हो, पुन उसी स्थान की ओर गमन करती हुई दिखलाई पड़े तो भयकारक, विपत्तिसूचक तथा किसी भयकर रोग की सूचक अवगत करना चाहिए। पवन की प्रतिकूल दिशा मे उल्का कुटिल भाव से गमन करती हुई दिखलाई पड़े तो दर्शक की पत्नी को भय, रोग और विपत्ति की सूचक समझना चाहिए।

व्यापारिक फल-- श्याम और असितवर्ण की उल्का रविवार की रात्रि के पूर्वार्ध मे दिखलाई पडे तो काले रग की वस्तुओ की महँगाई, पीतवर्ण की उल्का इसी रात्रि मे दिखलाई पडे तो गेहूँ और चन के व्यापार मे अधिक घटा-बढ़ी, श्वेतवर्ण की उल्का इसी रात्रि मे दिखलाई पडे तो चाँदी के भाव मे गिरावट और लालवर्ण की उल्का दिखलाई पडे तो सुवर्ण के व्यापार मे गिरावट रहती है। मगलवार, शनिवार और रविवार की रात्रि मे सट्टेबाज व्यक्ति पूर्व दिशा मे गिरती हुई उल्का देखे तो उन्हे माल बेचने मे लाभ होता है, बाजार का भाव गिरता है और खरीदनेवाले की हानि होती है। यदि इन्ही रात्रियो मे पश्चिम दिशा की ओर से गिरती हुई उल्का उन्हे दिखलाई पड़े तो भाव कुछ ऊँचे उठते है और सट्टेबालो को खरीदने मे लाभ होता है। दक्षिण से उत्तर की ओर गमन करती हुई उल्का दिखलाई पडे तो मोती, हीरा, पन्ना, माणिक्य आदि के व्यापार मे लाभ होता है। इन रत्नो के मूल्य मे आठ महीने तक घटा-बढ़ी होती रहती है। जवाहरात का बाजार स्थिर नही रहता है। यदि सूर्यास्त या चन्द्रास्त काल मे

उल्कापात हरे और लाल रग का वृत्ताकार दिखलाई पडे तो सुवर्ण और चाँदी के भाव स्थिर नही रहते। तीन महीनो तक लगातार घटा-बढी चलती रहती है। कृष्ण सर्प के आकार और रगवाली उल्का उत्तर दिशा से निकलती हुई दिखलाई पडे तो लोहा, उडद और तिलहन का भाव ऊँचा उठता है। व्यापारियो को खरीद से लाभ होता है। पतली और छोटी पूँछवाली उल्का मगलवार की रात्रि मे चमकती हुई दिखलाई पडे तो गेहूँ, लाल कपडा एव अन्य लाल रग की वस्तुओ के भाव मे घटा-बढी होती है। मनुष्य, गज और अश्व के आकार की उल्का यदि रात्रि के मध्यभाग मे शब्द सहित गिरे तो तिलहन के भाव मे अस्थिरता रहती है। मृग, अश्व और वृक्ष के आकार की उल्का मन्द-मन्द चमकती हुई दिखलाई पडे और इसका पतन किसी वृक्ष या घर के ऊपर हो तो पशुओ के भाव ऊँचे उठते हैं, साथ ही साथ तृण के दाम भी महँगे हो जाते है। चन्द्रमा या सूर्य के दाहिनी ओर उल्का गिरे तो सभी वस्तुओ के मूल्य मे वृद्धि होती है। यह स्थिति तीन महीने तक रहती हे, पश्चात् मूल्य पुन. नीचे गिर जाता है। वन या श्मशान भूमि मे उल्कापात हो तो दाल वाले अनाज महँगे होते है और अवशेष अनाज सस्ते होते है। पिण्डाकार, चिनगारी फूटती हुई उल्का आकाश मे भ्रमण करती हुई दिखलाई पडे और इसका पतन किसी नदी या तालाब के किनारे पर हो तो कपडे का भाव सस्ता होता है। रूई, कपास, सूत आदि के भाव मे भी गिरावट आ जाती है। चित्रा, मृगशिर, रेवती, पूर्वाषाढ, पूर्वाभाद्रपद, पूर्वाफाल्गुनी और ज्येष्ठा इन नक्षत्रो मे पश्चिम दिशा से चलकर पूर्व या दक्षिण की ओर उल्कापात हो तो सभी वस्तुओ के मूल्य मे वृद्धि होती है तथा विशेष रूप से अनाज का मूल्य बढता है। रोहिणी, धनिष्ठा, उत्तराफाल्गुनी, उत्तराषाढ, उत्तराभाद्रपद, श्रवण और पुष्य इन नक्षत्रो मे दक्षिण की ओर जाज्वल्यमान उल्कापात हो तो अन्न का भाव सस्ता, सुवर्ण और चाँदी के भावो मे भी गिरावट, जवाहरात के भाव मे कुछ महँगी, तृण और लकडी के मूल्य मे वृद्धि एव लोहा, इस्पात आदि के मूल्य मे भी गिरावट होती है। अन्य धातुओ के मूल्य मे वृद्धि होती है।

दहन और भस्म के समान रग और आकारवाली उल्काएँ आकाश मे गमन करती हुई रविवार, भौमवार और शनिवार की रात्रि को अकस्मात् किसी कुएँ पर पतित होती हुई दिखलाई पडे तो प्राय अन्न का भाव आगामी आठ महीनो से महँगा होता है और इस प्रकार का उल्कापात दुर्भिक्ष का सूचक भी है। अन्नसग्रह करनेवालो को विशेष लाभ होता है। शुक्रवार और गुरुवार को पुष्य या पुनर्वसु नक्षत्र हो और इन दोनो की रात्रि के पूर्वार्ध मे श्वेत या पीतवर्ण का उल्कापात दिखलाई पडे तो साधारणतया भाव सम रहते है। माणिक्य, मूँगा, मोती, हीरा, पद्मराग आदि रत्नो की कीमत मे वृद्धि होती है। सुवर्ण और चाँदी का भाव भी

कुछ ऊँचा रहता है। गुरु-पुष्य योग मे उल्कापात दिखलाई पडे तो यह सोने, चाँदी के भावो मे विशेष घटा-बढी का सूचक है। जूट, बादाम, घृत, और तेल के भाव भी इस प्रकार के उल्कापात मे घटा-बढी को प्राप्त करते हैं। रवि-पुष्य योग मे दक्षिणोत्तर आकाश मे जाज्वल्यमान उल्कापात दिखलाई पडे तो सोने का भाव प्रथम तीन महीने-तक नीचे गिरता है फिर ऊँचा चढता है। घी और तेल के भाव मे भी पहले गिरावट, पश्चात् तेजी आती है। यह व्यापार के लिए भी उत्तम है। नये व्यापारियो को इस प्रकार के उल्कापात के पश्चात् अपने व्यापारिक कार्यों मे अधिक प्रगति करनी चाहिए। रोहिणी नक्षत्र यदि सोमवार को हो और उस दिन सुन्दर और श्रेष्ठ आकार मे उल्का पूर्व दिशा मे गमन करती हुई किसी हरे-भरे खेत या वृक्ष के ऊपर गिरे तो समस्त वस्तुओ के मूल्य मे घटा-बढी रहती है व्यापारियो के लिए यह समय विशेष महत्त्वपूर्ण है, जो व्यापारी इस समय का सदुपयोग करते है, वे शीघ्र ही धनिक हो जाते हैं।

रोग और स्वास्थ्य सम्बन्धी फल देश—सछिद्र, कृष्णवर्ण या नीलवर्ण की उल्काएँ ताराओ का स्पर्श करती हुई पश्चिम दिशा मे गिरे तो मनुष्य और पशुओ मे सक्रामक रोग फैलते है तथा इन रोगो के कारण सहस्रो प्राणियो की मृत्यु होती है। आश्लेषा नक्षत्र मे मगर या सर्प की आकृति की उल्का नील या रक्तवर्ण की भ्रमण करती हुई गिरे तो जिस स्थान पर उल्कापात होता है, उस स्थान के चारो ओर पचास कोस की दूरी तक महामारी फैलती है। यह फल उल्कापात से तीन महीने के अन्दर ही उपलब्ध हो जाता है। श्वेतवर्ण की दण्डाकार उल्का रोहिणी नक्षत्र मे पतित हो तो पतन स्थान के चारो ओर सौ कोश तक सुभिक्ष, सुख, शान्ति और स्वास्थ्य लाभ होता है। जिस स्थान पर यह उल्कापात होता है, उससे दक्षिण दिशा मे दो सौ कोश की दूरी पर रोग, कष्ट एव नाना प्रकार की शारीरिक बीमारियाँ प्राप्त होती है। इस प्रकार के प्रदेश का त्याग कर देना ही श्रेयस्कर होता है। गोपुच्छ के आकार की उल्का मगलवार को आश्लेषा नक्षत्र मे पतित होती हुई दिखलाई पडे तो यह नाना प्रकार के रोगो की सूचना देती है। हैजा, चेचक आदि रोगो का प्रकोप विशेष रहता है। बच्चो और स्त्रियो के स्वास्थ्य के लिए विशेष हानिकारक है। किसी भी दिन प्रात काल के समय उल्कापात किसी भी वर्ण और किसी भी आकृति का हो तो भी यह रोगो की सूचना देता है। इस समय का उल्कापात प्रकृति विपरीत है, अत इसके द्वारा अनेक रोगो की सूचना समझ लेनी चाहिये। इन्द्रधनुष या इन्द्र की ध्वजा के आकार मे उल्कापात पूर्व की ओर दिखलाई पडे तो उस दिशा से रोग की सूचना समझनी चाहिए। किवाड, बन्दूक और तलवार के आकार की उल्का धूमिल वर्ण की पश्चिम दिशा मे दिखलाई पडे तो अनिष्टकारक समझना चाहिये। इस प्रकार का

उल्कापात व्यापी रोग और महामारियों का सूचक है। स्निग्ध, श्वेत, प्रकाशमान और सीधे आकार का उल्कापात शान्ति, सुख और नीरोगता का सूचक है। उल्कापात द्वार पर हो तो विशेष बीमारियाँ सामूहिक रूप से होती हैं।

चतुर्थोऽध्यायः

अथातः सम्प्रवक्ष्यामि परिवेषान् यथाक्रमम् ।
प्रशस्तानप्रशस्तांश्च यथावदनुपूर्वत[1] ॥1॥

उल्काध्याय के पश्चात् अब परिवेषों का पूर्व परम्परानुसार यथाक्रम से कथन करता हूँ। परिवेष दो प्रकार के होते है—प्रशस्त-शुभ और अप्रशस्त-अशुभ ॥1॥

पंच प्रकारा विज्ञेया पंचवर्णाश्च भौतिकाः ।
ग्रहनक्षत्रयोः कालं परिवेषाः समुत्थिताः[2] ॥2॥

पाँच वर्ण और पाँच भूतों - पृथ्वी, जल, वायु, अग्नि और आकाश—की अपेक्षा से परिवेष पाँच प्रकार के जानने चाहिए। ये परिवेष ग्रह और नक्षत्रों के काल को पाकर होते हैं ॥2॥

रूक्षाः खण्डाश्च वामाश्च क्रव्यादायुधसन्निभाः ।
अप्रशस्तः[3] प्रकीर्त्यन्ते[4] [5]विपरीतगुणान्विता ॥3॥

जो चन्द्रमा, सूर्य, ग्रह और नक्षत्रों के परिवेष—मण्डल-कुण्डल रूक्ष, खण्डित—अपूर्ण, टेढ़े, क्रव्याद—मांसभक्षी जीव अथवा चिता की अग्नि और आयुध—तलवार, धनुष आदि अस्त्रों के समान होते हैं, वे अशुभ और इनसे विपरीत लक्षण वाले शुभ माने गये है ॥3॥

रात्रौ तु सम्प्रवक्ष्यामि प्रथमं तेषु लक्षणम् ।
ततः पश्चाद्दिवा भूयो तन्निबोध[6] यथाक्रमम्[7] ॥4॥

---

1 थंनुपूर्वश मु०। 2 समुपस्थिता आ०। 3 प्रशस्ता मु० C। 4 न प्रशस्यन्ते मु० C.। 5 विपरीता आ०। 6 तन्निबोधत मु० C। 7 यत्नत मु० D.।

आगे हम रात्रि में होने वाले परिवेषों के लक्षण और फल को कहेंगे; पश्चात् दिन में होने वाले परिवेषों के लक्षण और फल का निरूपण करेंगे। क्रमशः उन्हें अवगत करना चाहिए ॥4॥

क्षीरशंखनिभश्चन्द्रे परिवेषो[1] यदा[2] भवेत् ।
तदा क्षेमं सुभिक्षं च राज्ञो विजयमादिशेत् ॥5॥

चन्द्रमा के इर्द-गिर्द दूध अथवा शंख के सदृश परिवेष हो तो क्षेम-कुशल और सुभिक्ष होता है तथा राजा की विजय होती है ॥5॥

सर्पिस्तैलनिकाशस्तु परिवेषो यदा भवेत् ।
न चाऽऽ[3]कृष्टोऽतिमात्रं च महामेघस्तदा भवेत् ॥6॥

यदि घृत और तैल के वर्ण का चन्द्रमा का मण्डल हो और वह अत्यन्त श्वेत न होकर किञ्चित् मन्द हो तो अत्यन्त वर्षा होती है ॥6॥

रूप्यपा[4]रापताभश्च[5] परिवेषो यदा भवेत् ।
[6]महामेघास्तदाभीक्ष्णं[7] तर्पयन्ति जलैर्महीम् ॥7॥

चाँदी और कबूतर के समान आभा वाला चन्द्रमा का परिवेष हो तो निरन्तर जल-वर्षा द्वारा पृथ्वी जलप्लावित हो जाती है अर्थात् कई दिनों तक झड़ी लगी रहती है ॥7॥

इन्द्रायुध सवर्णस्तु[8] परिवेषो यदा भवेत् ।
संग्राम तत्र जानीयाद् वर्ष[9] चापि जलागमम्[10] ॥8॥

यदि पूर्वादि दिशाओं में इन्द्रधनुष के समान वर्ण वाला चन्द्रमा का परिवेष हो तो उस दिशा में संग्राम का होना और जल का बरसना जानना चाहिए ॥8॥

कृष्णे नीले ध्रुवं वर्षं पीते तु[11] व्याधिमादिशेत् ।
[12]रूक्षे भस्मनिभे चापि वृष्टिभयमादिशेत् ॥9॥

काले और नीले वर्ण का चन्द्रमण्डल हो तो निश्चय ही वर्षा होती है। यदि पीले रंग का हो तो व्याधि का प्रकोप होता है। चन्द्रमण्डल के रूक्ष और भस्म सदृश होने पर वर्षा का अभाव रहता है और उससे भय होता है। तात्पर्य

---

1 परिवेषे आ० । 2. यदा आ० । 3 आकृष्ट मु० । 4 धारा मु० C । 5. प्रभावस्तु मु० C । 6. मेघ A C B. मु० । 7 भीक्ष्णं मु० C । 8 सुवर्ण आ० । 9. वर्षं आ० । 10 जलागमे आ० । 11 पीतके आ० । 12 मुद्रित C में इसके पूर्व 'नक्षत्रप्रतिमानस्तु महामेघस्तदा भवेत्' यह पाठ भी मिलता है ।

यह है कि जल की वर्षा न होकर वायु तेज चलती है, जिससे फूल की वर्षा दिखलाई पडती है ।।9।।

यदा तु सोममुदितं परिवेषो रुणद्धि हि ।
जीमूतवर्णस्निग्धश्च महामेघस्तदा भवेत् ।।10।।

यदि चन्द्रमा का परिवेष उदयप्राप्त चन्द्रमा को अवरुद्ध करता है—ढक लेता है और वह मेघ के समान तथा स्निग्ध हो तो उत्तम वृष्टि होती है ।।10।।

अभ्युन्नतो यदा श्वेतो रूक्षः सन्ध्यानिशाकरः ।
अचिरेणैव कालेन राष्ट्रं चौरैर्विलुप्यते ।।11।।

उदय होता हुआ सन्ध्या के समय का चन्द्रमा यदि श्वेत और रूक्ष वर्ण के परिवेष से युक्त हो तो देश को चोरों के उपद्रव का भय होता है ।।11।।

चन्द्रस्य परिवेषस्तु सर्वरात्र यदा भवेत् ।
शस्त्रं जनक्षय चैव तस्मिन् देशे विनिर्दिशेत् ।।12।।

यदि सारी रात—उदय से अस्त तक चन्द्रमा का परिवेष रहे तो उस प्रदेश मे परस्पर कलह-मारपीट और जनता का नाश सूचित होता है ।।12।।

भास्करं तु यदा रूक्ष परिवेषो रुणद्धि हि ।
तदा मरणमाख्याति [1]नागरस्य महीपतेः ।।13।।

यदि सूर्य का परिवेष रूक्ष हो और वह उसे ढक ले तो उसके द्वारा नागरिक एव प्रशासको की मृत्यु की सूचना मिलती है ।।13।।

आदित्यपरिवेषस्तु यदा सर्वदिनं भवेत् ।
क्षुद्भय जनमारिञ्च शस्त्रकोप च निर्दिशेत् ।।14।।

सूर्य का परिवेष सारे दिन उदय से अस्त तक बना रहे तो क्षुधा का भय, मनुष्यो का महामारी द्वारा मरण एव युद्ध का प्रकोप होता है ।।14।।

हरते सर्वसस्यानामीतिर्भवति दारुणा ।
वृक्षगुल्मलतानां च वर्तनीनां[2] तथैव च ।।15।।

उक्त प्रकार के परिवेष से सभी प्रकार के धान्यो का नाश, घोर ईति-भीति और वृक्षो, गुल्मो-झुरमुटो, लताओ तथा पथिको को हानि पहुंचती है ।।15।।

---

1 नागरस्य आ० । 2 तस्मिन्नुत्पातदर्शने मु० C ।

यत खण्डस्तु दृश्यते ततः प्रविशते परः।
तत प्रयत्नं[1] कुर्वीत रक्षणे पुरराष्ट्रयोः ॥16॥

उपर्युक्त समस्त दिनव्यापी सूर्य परिवेष का जिस ओर का भाग खण्डित दिखाई दे, उस दिशा मे परचक्र का प्रवेश होता है अत नगर और देश की रक्षा के लिए उस दिशा मे प्रबन्ध करना चाहिए ॥16॥

रक्तो[2] वा यथाभ्युदितं[3] कृष्णपर्यन्त एव च[4]।
परिवेषो रविं[5] रुन्ध्याद्[6] [7]राजव्यसनमाविशेत् ॥17॥

रक्त अथवा कृष्णवर्ण पर्यन्त चार वर्ण वाला सूर्य का परिवेष हो और वह उदित सूर्य को आच्छादित करे तो कष्ट सूचित होता है ॥17॥

यदा त्रिवर्णपर्यन्त परिवेषो दिवाकरम्।
तद्राष्ट्रमचिरात् कालाद् दस्युभि परिलुप्यते[8] ॥18॥

यदि तीन वर्ण वाला परिवेष सूर्य मण्डल को ढक ले तो डाकुओ द्वारा देश मे उपद्रव होता है तथा दस्यु वर्ग की उन्नति होती है ॥18॥

हरितो नीलपर्यन्तः परिवेषो यदा भवेत्।
आदित्ये यदि वा सोमे राजव्यसनमाविशेत् ॥19।

यदि हरे रग से लेकर नीले रग पर्यन्त परिवेष सूर्य अथवा चन्द्रमा का हो तो प्रशासक वर्ग को कष्ट होता है ॥19॥

दिवाकर बहुविधः परिवेषो रुणद्धि हि।
[9]भिद्यते बहुधा वापि गवां मरणमाविशेत् ॥20॥

यदि अनेक वर्ण वाला परिवेष सूर्य मण्डल को अवरुद्ध कर ले अथवा खण्ड-खण्ड अनेक प्रकार का हो तथा सूर्य को ढक ले तो गायों का मरण सूचित होता है ॥20॥

[10]यदाऽतिमुच्यते शीघ्र[11] दिशि चैवाभिवर्धते।
गवां विलोपमपि च तस्य राष्ट्रस्य निर्दिशेत् ॥21॥

---

1 प्रत्यस्न तत्र मु०।2 रक्त मु० A । 3 अभ्युदयेत् मु० C । 4 खे मु० D । 5 रवि मु० D । 6 विन्धात् आ०। 7 राजा मु० A, राज्ञा मु० C । 8 विलुप्यते, और परिताप्यते, ये दोनो ही पाठ मिलते हैं। आ०। 9 राष्ट्रक्षोभो भवेत् तस्य, मु०। 10 यथाभिमुच्यते मु०। 11 दिवसश्चैवाभिवर्धते मु०।

जिस दिशा में सूर्य का परिवेष शीघ्र हटे और जिस दिशा मे बढता जाय उस दिशा में राष्ट्र की गायों का लोप होता है —गायो का नाश होता है ।।21।।

अंशुमाली[1] यदा तु स्यात् परिवेषः समन्ततः ।
तदा सपुरराष्ट्रस्य देशस्य रुजमादिशेत् ।।22।।

सूर्य का परिवेष यदि सूर्य के चारो ओर हो तो नगर, राष्ट्र और देश के मनुष्य महामारी से पीड़ित होते हैं ।।22।।

ग्रहनक्षत्रचन्द्राणां परिवेषः प्रगृह्यते ।
अभीक्ष्णं यत्र वर्तेत[2] तं देशं परिवर्जयेत् ।।23।।

ग्रह—सूर्यादि सात ग्रह, नक्षत्र—अश्विनी, भरणी आदि 28 नक्षत्र और चन्द्रमा का परिवेष निरन्तर बना रहे और वह उस रूप मे ग्रहण किया जाय तो उस देश का परित्याग कर देना चाहिए, यतः वहाँ शीघ्र ही भय उपस्थित होता है ।।23।।

परिवेषो विरुद्धेषु नक्षत्रेषु ग्रहेषु च ।
कालेषु वृष्टिर्विज्ञेया भयमन्यत्र निर्दिशेत्[3] ।।24।।

वर्षाकाल मे ग्रहो और नक्षत्रो की जिस दिशा मे परिवेष हो उस दिशा मे वृष्टि होती है और अन्य प्रकार का भय होता है ।।24।।

अभ्रशक्तिर्यतो गच्छेत् तां दिशं त्वभियोजयेत् ।
रिक्ता[4] वा विपुला[5] चाग्रे जयं कुर्वीत[6] शाश्वतम् ।।25।।

जल से रिक्त अथवा जल से परिपूर्ण बादलों की पंक्ति जिस दिशा की ओर गमन करे उस दिशा मे शाश्वत जय होती है ।।25।।

यदाऽभ्रशक्तिर्दृश्येत परिवेषसमन्विता[7] ।
नागरान् यायिनो[8] हन्युस्तदा यत्नेन संयुगे ।।26।।

यदि परिवेष सहित अभ्रशक्ति—बादल दिखलाई पडे तो आक्रमण करने वाले शत्रु द्वारा नगरवासियो का युद्ध में विनाश होता है, अतः यत्नपूर्वक रक्षा करनी चाहिए ।।26।।

---

1 अर्थमाली आ० । 2 वर्तेत् मु० । 3 आदिशेत् मु० B D । 4 रक्तां मु० । 5. विपुलां मु० । 6 कुर्वीत मु० । 7 समुत्थिता मु० C । 8 गायिनो, यायिन मु० A D, यायिन मु० C ।

नानारूपो यदा दण्ड· परिवेषं प्रमर्दति।
नागरास्तत्र [1]बध्यन्ते यायिनो नात्र संशयः ॥27॥

यदि अनेक वर्ण वाला दण्ड परिवेष को मर्दन करता हुआ दिखलाई पड़े तो आक्रमणकारियो द्वारा नागरिकों का नाश होता है, इसमें सन्देह नही ॥27॥

त्रिकोटि[2] यदि दृश्येत् परिवेष कथञ्चन।
त्रिभागशस्त्रबध्योऽसाविति निर्ग्रन्थशासने ॥28॥

कदाचित् तीन कोने वाला परिवेष देखने मे आवे तो युद्ध में तीन भाग सेना मारी जाती है, ऐसा निर्ग्रन्थ शासन मे बतलाया गया है ॥28॥

चतुरस्रो यदा चापि परिवेष· प्रकाशते।
क्षुधया व्याधिभिश्चापि चतुर्भागोऽवशिष्यते[3] ॥29॥

यदि चार कोने वाला परिवेष दिखलाई दे तो क्षुधा—भूख और रोग से पीडित होकर विनाश को प्राप्त हो जाती है, जिससे जन-संख्या चतुर्थांश रह जाती है ॥29॥

अर्द्धचन्द्रनिकाशस्तु परिवेषो रुणद्धि हि।
आदित्यं[4] यदि वा सोमं[5] राष्ट्रं संकुलतां व्रजेत् ॥30॥

अर्ध चन्द्राकार परिवेष चन्द्रमा अथवा सूर्य को आच्छादित करे तो देश मे व्याकुलता होती है ॥30॥

प्राकाराट्टालिकाप्रख्य परिवेषो रुणद्धि हि।
आदित्यं यदि वा सोमं पुररोधं निवेदयेत् ॥31॥

यदि कोट और अट्टालिका के सदृश होकर परिवेष सूर्य और चन्द्रमा को अवरुद्ध करे तो नगर मे शत्रु के घेरे पड़ जाते हैं ऐसा कहना चाहिए ॥31॥

समन्ताद् बध्यते यस्तु मुच्यते च मुहुर्मुहुः।
संग्रामं तत्र जानीयाद् दारुणं पर्युपस्थितम्[6] ॥32॥

सूर्य अथवा चन्द्रमा के चारो ओर परिवेष हो और वह बार-बार होवे और बिखर जाये तो वहाँ पर कलह एव संग्राम होता है ॥32॥

---

1 बाध्यन्ते मु०। 2. त्रिकोणो मु०। 3 विशिष्यते मु०। 4 आदित्ये मु०। 5 सोमे मु०। 6 भयमाख्याति दारुणम् मु० C।

यदा गृहमवच्छाद्य परिवेष प्रकाशते।
अचिरेणैव कालेन सकुलं[1] तत्र जायते ॥33॥

यदि परिवेष ग्रह को आच्छादित करके दिखलाई दे तो वहाँ शीघ्र ही सब आकुलता से व्याप्त हो जाते हैं ॥33॥

[2]यदि राहुमपि प्राप्तं परिवेषो रुणद्धि चेत्।
तदा सुवृष्टिर्जानीयाद् व्याधिस्तत्र भयं भवेत् ॥34॥

यदि परिवेष राहु को भी ढक ले—घेरे के भीतर राहु ग्रह भी आ जाय—तो अच्छी वर्षा होती है, परन्तु वहाँ व्यधि का भय बना रहता है ॥34॥

पूर्वसन्ध्यां नागराणामागतानां[3] च पश्चिमा।
अर्द्धरात्रेषु[4] राष्ट्रस्य मध्याह्ने राज्ञ उच्यते ॥35॥

पूर्व की सन्ध्या का फल स्थायी—नगरवासियों को होता है और पश्चिम की सन्ध्या का फल आगन्तुक—यायी को होता है। अर्धरात्रि का फल देश भर को और मध्याह्न का फल राजा को प्राप्त होता है ॥35॥

धूमकेतुं च सोमं च नक्षत्र च रुणद्धि हि।
परिवेषो यदा राहु तदा यात्रा न सिध्यति ॥36॥

यदि परिवेष धूमकेतु—पुच्छलतारा, चन्द्रमा, नक्षत्र और राहु को आच्छादित करे तो यायी—आक्रमण करने वाले राजा की यात्रा की सिद्धि नहीं होती ॥36॥

यदा तु ग्रहनक्षत्रे परिवेषो रुणद्धि हि।
अभावस्तस्य देशस्य विज्ञेय. पर्युपस्थित ॥37॥

यदि परिवेष ग्रह और नक्षत्रों को रोके तो उस देश का अभाव हो जाता है—उस देश मे सकट होता है ॥37॥

त्रयो [5]यत्रावरुद्ध्यन्ते नक्षत्रं चन्द्रमा ग्रह।
त्र्यहाद् वा जायते वर्षं मासाद् वा जायते भयम् ॥38॥

नक्षत्र, चन्द्रमा और मगल, बुध, गुरु और शुक्र इन पाँच ग्रहो मे से किसी एक को एक साथ परिवेष अवरुद्ध करे तो तीन दिन में वर्षा होती है अथवा एक

---

1 सग्राम। 2 राहुण। वै यदा सार्द्ध परिवेषो रुणाद्धि हि। तदा भ्रष्ट विज।निग्रात् व्याधिमत्र भय भवेत् ॥34॥ मु० C। 3 आगन्तुना मु०। 4 रात्रेषु मु०। 5 त्रीणि यत्र विरुध्यन्ते, नक्षत्र चन्द्रमा ग्रह। मु०।

मास मे भय उत्पन्न होता है ॥38॥

उल्कावत् साधनं ज्ञेयं परिवेषेषु तत्त्वत. ।
लक्षण सम्प्रवक्ष्यामि विद्युतां तन्निबोधत[1] ॥39॥

परिवेषो का फल उल्का के फल के समान ही अवगत करना चाहिए । अब आगे विद्युत् के लक्षणादि का निरूपण करते हैं ॥39॥

इति नैर्ग्रन्थे भद्रबाहुनिमित्तशास्त्रे परिवेषवर्णनो नाम चतुर्थोऽध्यायः ।

विवेचन—परिवेषो के द्वारा शुभाशुभ अवगत करने की परम्परा निमित्त शास्त्र के अन्तर्गत है । परिवेषो का विचार ऋग्वेद मे आया है । सूर्य अथवा चन्द्रमा की किरणे पर्वत के ऊपर प्रतिबिम्बित और पवन के द्वारा मडलाकार होकर थोडे से मेघ वाले आकाश मे अनेक रग और आकार की दिखलाई पडती है, इन्ही को परिवेष करते है। वर्षा ऋतु मे सूर्य या चन्द्रमा के चारो ओर एक गोलाकार अथवा अन्य किसी आकार मे एक मडल-सा बनता है, इसी को परिवेष कहा जाता है ।

परिवेषो का साधारण फलादेश—जो परिवेष नीलकठ, मोर, चाँदी, तेल, दूध और जल के समान आभा वाला हो, स्वकालसम्भूत हो, जिसका वृत्त खण्डित न हो और स्निग्ध हो, वह सुभिक्ष और मगल करने वाला होता है । जो परिवेष समस्त आकाश मे गमन करे, अनेक प्रकार की आभा वाला हो, रुधिर के समान हो, रूखा हो, खण्डित हो तथा धनुष और शृ गाटिक के समान हो वह पापकारी, भयप्रद और रोगसूचक होता है । मोर की गर्दन के समान परिवेष हो तो अत्यन्त वर्षा, बहुत रगों वाला हो तो राजा का वध, धूमवर्ण का होने से भय और इन्द्रधनुष के समान या अशोक के फूल के समान कान्ति वाला हो तो युद्ध होता है । किसी भी ऋतु मे यदि परिवेष एक ही वर्ण का हो, स्निग्ध हो तथा छोटे-छोटे मेघो से व्याप्त हो और सूर्य की किरणें पीत वर्ण की हो तो इस प्रकार का परिवेष शीघ्र ही वर्षा का सूचक है । यदि तीनो कालो की सन्ध्या मे परिवेष दिखलाई पडे तथा परिवेष की ओर मुख करके मृग या पक्षी शब्द करते हो तो इस प्रकार का परिवेष अत्यन्त अनिष्टकारक होता है । यदि परिवेष का भेदन उल्का या विद्युत् द्वारा हो तो इस प्रकार के परिवेष द्वारा किसी बडे नेता की मृत्यु की सूचना समझनी चाहिए । रक्तवर्ण का परिवेष भी किसी नेता की मृत्यु का सूचक है । उदयकाल, अस्तकाल और मध्याह्न या मध्यरात्रि काल मे लगातार परिवेष दिखलाई पडे तो किसी नेता की मृत्यु समझनी चाहिए । दो मण्डल का परिवेष

1 तन्निबोधत मु० ।

सेनापति के लिए आतंककारी, तीन मंडल वाला परिवेष शस्त्रकोप का सूचक, चार मंडल का परिवेष देश में उपद्रव तथा महत्त्वपूर्ण युद्ध का सूचक एवं पाँच मण्डल का परिवेष देश या राष्ट्र के लिए अत्यन्त अशुभ सूचक है। मंगल परिवेष में हो तो सेना एवं सेनापति को भय; बुध परिवेष में हो तो कलाकार, कवि, लेखक एवं मन्त्री को भय, बृहस्पति परिवेष में हो तो पुरोहित, मन्त्री और राजा को भय, शुक्र परिवेष मे हो तो क्षत्रियो को कष्ट एव देश मे अशान्ति और शनि परिवेष में हो तो देश मे चोर, डाकुओ का उपद्रव वृद्धिगत हो तथा साधु, संन्यासियो को अनेक प्रकार के कष्ट हो। केतु परिवेष मे हो तो अग्नि का प्रकोप तथा शस्त्रादि का भय होता है। परिवेष में दो ग्रह हों तो कृषि के लिए हानि, वर्षा का अभाव, अशान्ति और साधारण जनता को कष्ट; तीन ग्रह परिवेष मे हो तो दुर्भिक्ष, अन्न का भाव महँगा और धनिक वर्ग को विशेष कष्ट, चार ग्रह परिवेष में हो तो मन्त्री, नेता एवं किसी धर्मात्मा की मृत्यु और पाँच ग्रह परिवेष मे हो तो प्रलय तुल्य कष्ट होता है। यदि मंगल बुधादि पाँच ग्रह परिवेष मे हो तो किसी बडे भारी राष्ट्रनायक की मृत्यु तथा जगत् मे अशान्ति होती है। शासन परिवर्तन का योग भी इसी के द्वारा बनता है। यदि प्रतिपदा से लेकर चतुर्थी तक परिवेष हो तो क्रमानुसार ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्रो को कष्टसूचक होता है। पंचमी से लेकर सप्तमी तक परिवेष हो तो नगर, कोष एव धान्य के लिए अशुभकारक होता है। अष्टमी को परिवेष हो तो युवक, मन्त्री या किसी बडे शासनाधिकारी की मृत्यु होती है। इस दिन का परिवेष गाँव और नगरो की उन्नति मे रुकावट की भी सूचना देता है। नवमी, दशमी और एकादशी मे होने वाला परिवेष नागरिक जीवन मे अशान्ति और प्रशासक या मडलाधिकारी की मृत्यु की सूचना देता है। द्वादशी तिथि में परिवेष हो तो देश या नगर मे घरेलू उपद्रव, त्रयोदशी में परिवेष हो तो शस्त्र का क्षोभ, चतुर्दशी में परिवेष हो तो नारियो में भयानक रोग, प्रशासनाधिकारी की रमणी को कष्ट एव पूर्णमासी मे परिवेष हो तो साधारणत शान्ति, समृद्धि एव सुख की सूचना मिलती है। यदि परिवेष के भीतर रेखा दिखलाई पड़े तो नगरवासियो को कष्ट और परिवेष के बाहर रेखा दिखालाई पड़े तो देश मे शान्ति और सुख का विस्तार होता है। स्निग्ध, श्वेत, और दीप्तिशाली परिवेष विजय, लक्ष्मी, सुख और शान्ति की सूचना देता है।

रोहिणी, धनिष्ठा और श्रवण नक्षत्र में परिवेष हो तो देश मे सुभिक्ष, शान्ति, वर्षा एव हर्ष की वृद्धि होती है। अश्विनी, कृत्तिका और मृगशिरा मे परिवेष हो तो समयानुकूल वर्षा, देश मे शान्ति, धन-धान्य की वृद्धि एवं व्यापारियो को लाभ, भरणी और आश्लेषा मे परिवेष हो तो जनता को अनेक प्रकार का

कष्ट, किसी महापुरुष की मृत्यु, देश मे उपद्रव, अन्न कष्ट एवं महामारी का प्रकोप, आर्द्रा नक्षत्र मे परिवेष हो तो सुख-शान्ति का कारक; पुनर्वसु नक्षत्र में परिवेष हो तो देश का प्रभाव बढ़े, अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति मिले, नेताओ को सभी प्रकार के सुख प्राप्त हो तथा देश की उपज वृद्धिगति हो, पुष्य नक्षत्र मे परिवेष हो तो कल-कारखानो की वृद्धि हो, आश्लेषा नक्षत्र मे परिवेष हो तो सब प्रकार से भय, आतक एव महामारी की सूचना, मघा नक्षत्र मे परिवेष हो तो श्रेष्ठ वर्षा की सूचना तथा अनाज सस्ते होने की सूचना, तीनो पूर्वाओं में परिवेष हो तो व्यापारियो को भय, साधारण जनता को भी कष्ट और कृषक वर्ग को चिन्ता की सूचना, तीनो उत्तराओ मे परिवेष हो तो साधारणतः शान्ति, चेचक का प्रकोप, फसल की श्रेष्ठता और पर-शासन से भय; हस्त नक्षत्र मे परिवेष हो तो सुभिक्ष, धान्य की अच्छी उपज और देश मे समृद्धि, चित्रा नक्षत्र मे परिवेष हो तो प्रशासको मे मतभेद, परस्पर कलह, और देश को हानि, स्वाती नक्षत्र मे परिवेष हो तो समयानुकूल वर्षा, प्रशासको को विजय और शान्ति, विशाखा नक्षत्र मे परिवेष हो तो अग्निभय, शस्त्रभय और रोगभय, अनुराधा नक्षत्र मे परिवेष हो तो व्यापारियो को कष्ट, देश की आर्थिक क्षति और नगर मे उपद्रव, ज्येष्ठा नक्षत्र मे परिवेष हो तो अशान्ति, उपद्रव और अग्नि भय, मूल नक्षत्र मे परिवेष हो तो देश मे घरेलू कलह, नेताओं मे मतभेद और अन्न की क्षति, पूर्वाषाढ़ा नक्षत्र मे परिवेष हो तो कृषको को लाभ, पशुओ की वृद्धि और धन-धान्य की वृद्धि, उत्तराषाढ़ा नक्षत्र मे परिवेष हो तो जनता मे प्रेम, नेताओ मे सहयोग, देश की उन्नति और व्यापार मे लाभ, शतभिषा में परिवेष हो तो शत्रु भय, अग्नि का विशेष प्रकोप और अन्न की कमी, पूर्वाभाद्रपद मे परिवेष हो तो कलाकारो का सम्मान और प्राय शान्ति, उत्तराभाद्रपद नक्षत्र मे परिवेष हो तो जनता मे सहयोग, देश मे कल-कारखानो की वृद्धि और शासन मे तरक्की एव रेवती नक्षत्र मे परिवेष हो तो सर्वत्र शान्ति की सूचना समझनी चाहिए। परिवेष के रग, आकृति और मण्डलो की सख्या के अनुसार फलादेश मे न्यूनता या अधिकता हो जाती है। किसी भी नक्षत्र मे एक मडल का परिवेष साधारणतः प्रतिपादित फल की सूचना देता है, दो मंडल का परिवेष निरूपित फल से प्राय. डेढ गुने फल की सूचना, तीन मडल का परिवेष द्विगुणित फल की सूचना, चार मडल का परिवेष त्रिगुणित फल की सूचना और पाँच मडल का परिवेष चौगुने फल की सूचना देता है। परिवेष मे पाँच से अधिक मंडल नहीं होते है। साधारणतः एक मडल का परिवेष शुभ ही माना जाता है। मंडलो मे उनकी आकृति की स्पष्टता का भी विचार कर लेना उचित ही होगा।

वर्षा और कृषि सम्बन्धी परिवेष का फलादेश—वर्षा का विचार प्रधान रूप

से चन्द्रमा के परिवेष से किया जाता है और कृषि सम्बन्धी विचार के लिए सूर्य परिवेष का अवलम्बन लिया जाता है। यद्यपि दोनो ही परिवेष उभय प्रकार के फल की सूचना देते है, फिर भी विशेष विचार के लिए पृथक् परिवेष को ही लेना चाहिए।

चन्द्रमा का परिवेष कपोत रग का हो और उसमे अधिक से अधिक दो मण्डल हो तो लगातार सात दिनो तक वर्षा की सूचना समझनी चाहिए। इस प्रकार का परिवेष फसल की उत्तमता की सूचना भी देता है। वर्षा ऋतु मे समय पर वर्षा होती है। आश्विन और कार्तिक मे भी वर्षा होने से धान्य की उत्पत्ति अच्छी होती है। यदि उक्त प्रकार के परिवेष के समय चन्द्रमा का रग श्वेत वर्ण हो तो माघ मास मे भी वर्षा होने की सूचना समझ लेनी चाहिए। कदाचित् चन्द्रमा का रग नीला या काला दिखलाई पडे तो निश्चय से अच्छी वर्षा होने की सूचना समझनी चाहिए। चन्द्रमा के नीले या काले होने से सुभिक्ष भी होता है। गेहूँ, धान और गुड की फसल अच्छी उत्पन्न होती है। काले रग के चन्द्रमा के होने से आश्विन मास मे वर्षा का दस दिनो तक अवरोध रहता है, जिससे धान की फसल मे कमी आती है। चन्द्रमा हरित वर्ण का मालूम हो और परिवेष दो मडलो के घेरे मे हो तो वर्षा सामान्य ही होती है, पर फसल अच्छी ही उत्पन्न होती है। चन्द्रमा जिस समय रोहिणी नक्षत्र के मध्य मे स्थित हो, उसी समय विचित्र वर्ण का परिवेष रात्रि के मध्य भाग मे दिखलाई पडे तो इस प्रकार के परिवेष द्वारा देश की उन्नति की सूचना समझनी चाहिए। देश मे धन-धान्य की उत्पत्ति प्रचुर रूप मे होती है, वर्षा भी समय पर होती है तथा देश मे सर्वत्र सुभिक्ष व्याप्त रहता है। चन्द्रमा का परिवेष रक्त वर्ण का दिखलाई पडे और चन्द्रमा का रग श्वेत या कपोत हो तथा एक ही मडल वाला परिवेष हो तो वर्षा आषाढ मे नही होती, श्रावण, भाद्रपद मे अच्छी वर्षा और आश्विन मे वर्षा का अभाव ही रहता है। फसल भी उत्पन्न नही होती। यदि आषाढ मास मे चन्द्रमा का परिवेष सन्ध्या समय ही दिखलाई पडे तो श्रावण मे धूप होती है, वर्षा का अभाव रहता है। आषाढ कृष्ण प्रतिपदा को सन्ध्या काल मे चन्द्रमा का परिवेष दो मडलो मे दिखलाई पडे तो वर्षा का अभाव, एक मडल मे रक्त वर्ण का परिवेष दिखलाई दे तो साधारण वर्षा, एक मडल मे ही श्वेत वर्ण और हरित वर्ण मिश्रित परिवेष दिखलाई दे तो प्रचुर वर्षा, तीन मंडल मे परिवेष दिखलाई दे तो दुष्काल, वर्षा का अभाव और चार मडल मे परिवेष दिखलाई पडे तो फसल मे कमी और दुर्भिक्ष, वर्षा ऋतु के चारो महीनो अल्पवृष्टि और अन्न की कमी होती है। आषाढ कृष्ण द्वितीया को चन्द्रोदय होते हरित और रक्त वर्ण मिश्रित परिवेष दिखलाई पडे तो पूरी वर्षा होती है। तृतीया को चन्द्रोदय के तीन घड़ी बाद यदि

लाल वर्ण का एक मडल वाला परिवेष दिखलाई पड़े तो निश्चयत. अधिक वर्षा होती है । नदी-नाले जल से भर जाते है । श्रावण के महीने मे वर्षा की कुछ कमी रहती है, फिर भी फसल उत्तम होती है। यदि इसी तिथि को मध्य रात्रि के उपरान्त परिवेष दो मडल वाला दिखलाई पडे तो वर्षा का अभाव, कृषि मे गड-बडी और सभी प्रकार की फसलो मे रोगादि लग जाते है । चतुर्थी तिथि को चन्द्रोदय के साथ ही परिवेष दिखलाई पडे तो फसल उत्तम होती है और वर्षा भी समयानुकूल होती है, यदि इसी दिन चन्द्रोदय के चार-पाँच घडी उपरान्त परिवेष दिखलाई पड़े तो वर्षा का भादो मास मे अभाव ही समझना चाहिए । उपर्युक्त प्रकार का परिवेष फसल के लिए भी अनिष्टकारक होता है ।

आषाढ कृष्ण पचमी, षष्ठी और सप्तमी को चन्द्रास्त काल मे विचित्र वर्ण का परिवेष दिखलाई पडे तो निश्चयत अल्प वर्षा होती है । अष्टमी तिथि को चन्द्रोदय काल मे ही परिवेष दिखलाई पडे तो वर्षा प्रचुर परिमाण मे तथा फसल उत्तम होती है । अष्टमी के उपरान्त कृष्ण पक्ष की अन्य तिथियो मे अस्त या उदय काल मे चन्द्र परिवेष दिखलाई पडे तो वर्षा की कमी ही समझनी चाहिए । फसल भी सामान्य ही होती है ।

आषाढ शुक्ला द्वितीया को चन्द्रोदय होते ही परिवेष घेर ले तो अगले दिन नियमत· वर्षा होती है । इस परिवेष का फल तीन दिनो तक लगातार वर्षा होना भी है । आषाढ शुक्ला तृतीया को चन्द्रोदय के तीन घडी भीतर ही विचित्र वर्ण का परिवेष चन्द्रमा को घेर ले तो नियमत अगले पाँच दिनो तक तेज धूप पडती है, पश्चात् हल्की वर्षा होती । आषाढ शुक्ला चतुर्थी को चन्द्रोदय काल मे ही परिवेष रक्त वर्ण का हो तो आषाढ मास मे सूखा पडता है और श्रावण मे वर्षा होती है । आषाढी पूर्णिमा को लाल वर्ण का परिवेष दिखलाई पडे तो यह सुभिक्ष का सूचक है, इस वर्ष वर्षा विशेष रूप से होती है । फसल भी अच्छी होती है । अन्न का भाव भी सस्ता रहता है। श्रावण कृष्ण प्रतिपदा को मध्य रात्रि मे चन्द्रमा का परिवेष दिखलाई पडे तो अगले आठ दिनो मे वर्षा का अभाव समझना चाहिए। यदि यह परिवेष श्वेत वर्ण का हो तो श्रावण भर वर्षा नही होती। कडाके की धूप पडती है, जिससे अनेक प्रकार की बीमारियाँ भी फैलती है। उदयकालीन चन्द्रमा को श्रावण कृष्ण द्वितीया के दिन परिवेष वेष्टित करे तो वर्षा अच्छी होती है । किन्तु गुर्जर, द्राविड और महाराष्ट्र में वर्षा का अभाव सूचित होता है । वर्षा ऋतु मे ग्रहो और नक्षत्रो की जिस दिशा मे परिवेष हो उस दिशा मे वर्षा अधिक होती है, फसल भी अच्छी होती है । श्रावण कृष्णा सप्तमी को उदय काल में चन्द्र परिवेष दिखाई पडे तो वर्षा सामान्यत अल्प समझनी चाहिए । यदि प्रातःकाल चन्द्रास्त के समय ही परिवेष दिखलाई पड़े तो वर्षा

अगले पाँच दिनों में खूब होती है। यदि त्रिकोण परिवेष श्रावण कृष्णा तृतीया को दिखलाई पड़े तो वर्षा का अभाव, दुर्भिक्ष और उपद्रव समझना चाहिए। नक्षत्रों का भी परिवेष होता है। श्रावण मास मे नक्षत्रो का परिवेष हो तो वर्षा का अभाव उस देश में अवगत करना चाहिए। यदि श्रावण मास की किसी भी तिथि में चन्द्र परिवेष चन्द्रोदय से लेकर चन्द्रास्त तक बना रहे तो श्रावण और भाद्रपद इन दोनों ही महीनो मे वर्षा का अभाव रहता है। आश्विन मास मे किसी भी तिथि को चन्द्रोदय काल या चन्द्रास्त काल मे चक्रपरिवेष दिखलाई पड़े तो वह फसल के लिए अच्छाई की सूचना देता है। वर्षा कम होने पर भी फसल अच्छी उत्पन्न होती है। ज्येष्ठ, वैशाख और चैत्र महीने का परिवेष घोर दुर्भिक्ष की सूचना देता है। इन तीनो महीनो मे चन्द्रोदय काल मे या चन्द्रास्त काल मे परिवेष दिखलाई पड़े तो फसल के लिए अत्यन्त अनिष्टकारक समझना चाहिए। उक्त महीनो की प्रतिपदाविद्ध पूर्णिमा को परिवेष दिखलाई पडे तो वर्षा के लिए उस वर्ष हाहाकार होता रहता है। बादल आकाश मे व्याप्त रहते है, पर वर्षा नही होती। तृण और घास की भी कमी होती है जिससे पशुओ को भी कष्ट होता है। द्वितीयाविद्ध प्रतिपदा को परिवेष हो तो साधारण वर्षा होती है। द्वितीयाविद्ध पूर्णिमा मे चन्द्र परिवेष दिखलाई पड़े तो उस वर्ष निश्चयत सूखा पड़ता है। कुंओ का पानी भी सूख जाता है। फसल का अभाव ही उस वर्ष रहता है।

सूर्य परिवेष का फल—यदि सूर्योदय काल मे ही सूर्य परिवेष दिखलाई पड़े तो साधारणत वर्षा होने की सूचना देता है। मध्याह्न मे परिवेष सूर्य को घेरकर मडलाकार हो जाय तो आगामी चार दिनो मे घोर वर्षा की सूचना देता है। इस प्रकार के परिवेष से फसल भी अच्छी होती है। सूर्य के परिवेष द्वारा प्रधान रूप से फसल का विचार किया जाता है। यदि किसी भी दिन सूर्योदय से लेकर सूर्यास्त तक परिवेष बना रह जाय तो घोर दुर्भिक्ष का सूचक समझना चाहिए। दिन भर परिवेष का बना रह जाना वर्षा का अवरोधन भी करता है तथा अनेक प्रकार की विपत्तियों की भी सूचना देता है। वर्षा ऋतु मे सूर्य का परिवेष प्रायः वर्षा सूचक समझा जाता है। वैशाख और ज्येष्ठ इन महीनो मे यदि सूर्य का परिवेष दिखलाई पड़े तो निश्चयत फसल की बरबादी का सूचक होता है। उस वर्ष वर्षा भी नहीं होती और यदि वर्षा होती है तो इतनी अधिक और असामयिक होती है, जिससे फसल मारी जाती है। इन तीनों महीनो का सूर्य का परिवेष मगलवार, शनिवार और रविवार इन तीन दिनो मे से किसी दिन हो तो ससार के लिए महान् भयकारक, उपद्रवसूचक और दुर्भिक्ष की सूचना समझनी चाहिए। सूर्य का परिवेष यदि आश्लेषा, विशाखा और भरणी इन नक्षत्रो में हो तथा सूर्य

भी इन नक्षत्रों मे से किसी एक पर स्थित हो तो इस परिवेष का फल फसल के लिए अत्यन्त अशुभसूचक होता है। अनेक प्रकार के उपाय करने पर भी फसल अच्छी नहीं हो पाती। नाना वर्ण का परिवेष सूर्य मण्डल को अवरुद्ध करे अथवा अनेक टुकड़ों में विभक्त होकर सूर्य को आच्छादित करे तो उस वर्ष वर्षा का अभाव एवं फसल की बरबादी समझनी चाहिए। रक्त अथवा कृष्ण वर्ण का परिवेष उदय होते हुए सूर्य को आच्छादित कर ले तो फसल का अभाव और वर्षा की कमी सूचित होती है। मध्याह्न में सूर्य का कृष्ण वर्ण का परिवेष आच्छादित करे तो दालवाले अनाजो की उत्पत्ति अधिक तथा अन्य प्रकार के अनाज कम उत्पन्न होते हैं। मवेशी को कष्ट भी इस प्रकार के परिवेष से समझना चाहिए। यदि रक्त वर्ण का परिवेष सूर्य को आच्छादित करे और सूर्यमडल श्वेतवर्ण का हो जाय तो इस प्रकार का परिवेष श्रेष्ठ फसल होने की सूचना देता है। आषाढ़, श्रावण और भाद्रपद मास मे होने वाले परिवेषो का फलादेश विशेष रूप से घटित होता है। यदि आषाढ शुक्ला प्रतिपदा को सन्ध्या समय सूर्यास्त काल मे परिवेष दिखलाई पडे तो फसल का अभाव, प्रात सूर्योदय काल में परिवेष दिखलाई पडे तो अच्छी फसल एवं मध्याह्न समय में परिवेष दिखलाई पड़े तो साधारण फसल उत्पन्न होती है। इस तिथि को सोमवार पडे तो पूर्णफल, मगलवार पडे तो प्रतिपादित फल से कुछ अधिक फल, बुधवार हो तो अल्प फल, गुरुवार हो तो पूर्णफल, शुक्रवार हो तो सामान्य फल एव शनिवार हो तो अधिक फल ही प्राप्त होता है। यदि आषाढ शुक्ला द्वितीया तिथि को पीतवर्ण का मंडलाकार परिवेष सूर्य के चारो ओर दिखलाई पडे तो समय पर वर्षा, श्रेष्ठ फसल की उत्पत्ति, मनुष्य और पशुओ को सब प्रकार से आनन्द की प्राप्ति होती है। इस तिथि को त्रिकोणाकार, चौकोर या अनेक कोणाकार टेढा-मेढा परिवेष दिखलाई पडे तो फसल मे बहुत कमी रहती है। वर्षा भी समय पर नही होती तथा अनेक प्रकार के रोग भी फसल में लग जाते है। सूर्य मंडल को दो या तीन वलयों में वेष्टित करने वाला परिवेष मध्यम फल का सूचक है। आषाढ़ शुक्ला चतुर्थी या पचमी को कृष्ण वर्ण का परिवेष सूर्य को चार घड़ी तक वेष्टित किये रहे तो आगामी ग्यारह दिनों तक सूखा पड़ता है, तेज धूप होती है, जिससे फसल के सभी पौधे सूख जाते हैं। इस प्रकार का परिवेष केवल बारह दिनो तक अपना फल देता है, इसके पश्चात् उसका फल क्षीण हो जाता है।

आषाढ़ शुक्ला षष्ठी, अष्टमी और दशमी को सूर्योदय होते ही पीत वर्ण का त्रिगुणाकार परिवेष वेष्टित करे तो उस वर्ष फसल अच्छी नही होती, वृत्ताकार आच्छादित करे तो फसल साधारणत. अच्छी, दीर्घ वृत्ताकार—अण्डाकार या ढोलक के आकार में आच्छादित करे तो फसल बहुत अच्छी, चावल की उत्पत्ति

विशेष रूप से, चौकोर रूप मे आच्छादित करे तो तिलहन की फसल और अन्य प्रकार की फसलो मे गड़बडी एव पच भुजाकार आच्छादित करे तो गन्ना, घी, मधु आदि की उत्पत्ति प्रचुर परिणाम मे तथा रूई की फसल को विशेष क्षति होती है। दशमी को सूर्यास्त काल मे कृष्ण वर्ण का परिवेष दिखलाई पडे तो वर्षा का अभाव, फसल की क्षति और पशुओ मे रोग फैलता है। षष्ठी और अष्टमी का फल जो उदय काल का है, वही अस्तकाल का भी है। विशेषता इतनी ही है कि उक्त तिथियों मे अस्तकालीन परिवेष द्वारा प्रत्येक वस्तु की उपज अवगत की जा सकती है। आषाढ शुक्ला त्रयोदशी और पूर्णिमा को दोपहर के पश्चात् सूर्य के चारो ओर परिवेष दिखलाई पडे तो सुभिक्ष, धान्य और तृण की विशेष उत्पत्ति होती है। श्रावण मास का सूर्य परिवेष फसल के लिए हानिकारक माना गया है। भौमादि कोई ग्रह और सूर्य नक्षत्र यदि एक ही परिवेष मे हो तो तीन दिन मे वर्षा होती है। यदि शनि परिवेष मडल मे हो तो छोटे धान्य को नष्ट करता है और कृषको के लिए अत्यन्त अनिष्टकारी होता है, तीव्र पवन चलता है। श्रावणी पूर्णिमा को मेघाच्छन्न आकाश मे सूर्य का परिवेष दृष्टिगोचर हो तो अत्यन्त अनिष्टकारक होता है।

भाद्रपद मास मे सूर्य के परिवेष का फल केवल कृष्णपक्ष की 3।6।7।10।11 और 13 तथा शुक्ल पक्ष मे 2।5।7।8।13।14।15 तिथियो मे मिलता है। कृष्ण-पक्ष मे परिवेष दिखलाई दे तो साधारण वर्षा की सूचना के साथ कृषि के जघन्य फल को सूचित करता है। विशेषत कृष्णपक्ष की एकादशी को सूर्य परिवेष दिखलाई पड़े तो नाना प्रकार के धान्यो की समृद्धि होती है, वर्षा समय पर होती है। अनाज का भाव भी सस्ता रहता है और जनता मे सुख शान्ति रहती है। शुक्ल पक्ष की द्वितीया और पचमी तिथि का परिवेष सूर्योदय या मध्याह्न काल मे दिखलाई पडे तो साधारणत फसल अच्छी और अपराह्न काल मे दिखलाई पडे तो फसल मे कमी ही समझनी चाहिए। सप्तमी और अष्टमी को अपराह्न काल मे परिवेष दिखलाई पडे तो वायु की अधिकता समझनी चाहिए। वर्षा के साथ वायु का प्राबल्य रहने से वर्षा की कमी रह जाती है और फसल मे न्यूनता रह जाती है। यदि चार कोनो वाला परिवेष इसी महीने मे सूर्य के चारो ओर दिखलाई पडे तो ससार मे अपकीर्ति के साथ फसल मे भी कमी रहती है। आश्विन मास का सूर्य परिवेष केवल फसल मे ही कमी नही करता, बल्कि इसका प्रभाव अनेक व्यक्तियो पर भी पडता है। सूर्य का परिवेष यदि उदय काल मे हो और परिवेश के निकट बुध या शुक्र कोई ग्रह हो तो शुभ फसल की सूचना समझनी चाहिए। रेवती, अश्विनी, भरणी, कृत्तिका और मृगशिर के नक्षत्र परिवेष की परिधि मे आते हो तो पूर्णतया वर्षा का अभाव, धान्य की कमी, पशुओ को कष्ट

एव विश्व के समस्त प्राणियो मे भय का संचार होता है। कार्त्तिक मास का परिवेष अत्यन्त अनिष्टकारी और माघ मास का परिवेष समस्त आगामी वर्ष का फलादेश सूचित करता है। माघी पूर्णिमा को आकाश मे बादल छा जाने पर विचित्र वर्ण का परिवेष सूर्य के चारो ओर वृत्ताकार मे दिखलाई पडे तो पूर्णतया सुभिक्ष आगामी वर्ष मे होता है। इस दिन का परिवेष प्राय शुभ होता है।

परिवेषों का राष्ट्र सम्बन्धी फलादेश—चन्द्रमा का परिवेष मगल, शनि और रविवार को आश्लेषा, विशाखा, भरणी, ज्येष्ठा, मूल और शतभिषा नक्षत्र मे काले वर्ण का दिखलाई पडे तो राष्ट्र के लिए अत्यन्त अशुभ सूचक होता है। इस प्रकार के परिवेष का फल राष्ट्र मे उपद्रव, घरेलू कलह, महामारी और नेताओं मे मतभेद तथा झगडो के होने से राष्ट्र की क्षति आदि समझना चाहिए। तीन मडल और पाँच मडल का परिवेष सभी प्रकार से राष्ट्र की क्षति करता है। यदि अनेक वर्ण वाला दण्डाकार चन्द्र परिवेष मर्दन करता हुआ दिखलाई पडे तो राष्ट्र के लिए अशुभ समझना चाहिए। इस प्रकार के परिवेष से राष्ट्र के निवासियो मे आपसी कलह एव किसी विशेष प्रकार की विपत्ति की सूचना मिलती है। जिन देशो मे पारस्परिक व्यापारिक समझौते होते हैं, वे भी इस प्रकार के परिवेष से भग हो जाते है अत पर-राष्ट्र का भय और आतक व्याप्त हो जाता है। देश की आर्थिक क्षति भी होती है। देश मे चोर, डाकुओ का अधिक आतक बढता है और देश की व्यापारिक स्थिति असन्तुलित हो जाती है। रात्रि मे शुक्ल पक्ष के दिनो मे जब मेघाच्छन्न आकाश हो, उन दिनो पूर्व दिशा की ओर से बढता हुआ चन्द्र परिवेष दिखलाई पड़े और इस परिवेष का दक्षिण का कोण अधिक बडा और उत्तर वाला कोण अधिक छोटा भी मालूम पडे तो इस परिवेष का फल भी राष्ट्र के लिए घातक समझना चाहिए। इस प्रकार के परिवेष से राष्ट्र की प्रतिष्ठा मे भी कमी आती है तथा राष्ट्र की सम्पत्ति भी घटती हुई दिखलाई पड़ती है। अच्छे कार्य राष्ट्र हित के लिए नही हो पाते है, केवल ऐसे ही कार्य होते रहते है, जिनसे राष्ट्र मे अशान्ति होती है। राष्ट्र के किसी अच्छे कर्णधार की मृत्यु होती है, जिससे राष्ट्र मे महान् अशान्ति छा जाती है। प्रशासकों मे भी मतभेद होता है, देश के प्रमुख-प्रमुख शासक अपने-अपने अहभाव की पुष्टि के लिए विरोध करते है, जिससे राष्ट्र मे अशान्ति होती है। मध्यरात्रि मे निरभ्र आकाश मे दक्षिण दिशा की ओर से विचित्र वर्ण का परिवेष उत्पन्न होकर चन्द्रमा को वेष्टित करे तथा इस मडल मे चन्द्रमा का उस दिन का नक्षत्र भी वेष्टित हो तो इस प्रकार का परिवेष राष्ट्र उत्थान का सूचक होता है। कलाकारो के लिए यह परिवेष उन्नतिसूचक है। देश मे कल-कारखानो की उन्नति होती है। नदियो

पर पुल बाँधने का कार्य विशेष रूप से होता है। धन-धान्य की उत्पत्ति विपुल परिणामों में होती है और राष्ट्र मे चारो ओर समृद्धि और शान्ति व्याप्त हो जाती है।

सूर्य परिवेष द्वारा भी राष्ट्र के भविष्य का विचार किया जाता है। चैत्र और वैशाख मे बिना बादलो के आकाश मे सूर्य-परिवेष दिखलाई पडे और यह कम से कम डेढ़ घण्टे तक बना रहे तो राष्ट्र के लिए अत्यन्त अशुभ की सूचना देता है। इस परिवेष का फल तीन वर्षों तक राष्ट्र को प्राप्त होता है। वर्षा का अभाव होने से तथा राष्ट्र के किसी हिस्से मे अतिवृष्टि से बाढ़, महामारी आदि का प्रकोप होता है। इस प्रकार का परिवेष राष्ट्र मे महान् उपद्रव का सूचक है। ऐसा परिवेष तभी दिखलाई पडेगा, जब देश के ऊपर महान् विपत्ति आयेगी। सिकन्दर के आक्रमण के समय भारत मे इस प्रकार का परिवेष देखा गया था। सूर्य के अस्तकाल मे, जब नैऋत्य दिशा से वायु बह रहा हो, इसी दिशा से वायु के साथ बढ़ता हुआ परिवेष सूर्य को आच्छादित कर ले तो राष्ट्र के लिए अत्यन्त शुभकारक होता है। देश मे धन-धान्य की वृद्धि होती है। सभी निवासियो को सुख-शान्ति मिलती है। अच्छे व्यक्तियो का जन्म होता है। परराष्ट्रो से सन्धियाँ होती है तथा राष्ट्र की आर्थिक स्थिति दृढ़ होती है। देश मे कला-कौशल का प्रचार होता है, नैतिकता, ईमानदारी और सच्चाई की वृद्धि होती है।

परिवेषों का व्यापारिक फलादेश—रविवार को चन्द्र-परिवेष दिखलाई पडे तो रूई, गुड, कपास और चाँदी का भाव महँगा, तिल, तिलहन, घी और तैल का भाव सस्ता होता है। सोने के भाव मे अधिक घटा-बढी रहती है तथा अनाज का भाव सम दिखलाई पडता है। फल और तरकारियो के भाव ऊँचे रहते है। रविवार के चन्द्र परिवेष का फल अगले दिन मे ही आरम्भ हो जाता है और दो महीनो तक प्राप्त होता है। जूट, मशाले एव रत्नो की कीमत घटती है तथा इन वस्तुओ के मूल्यो में निरन्तर घटा-बढी होती रहती है। उक्त दिन को सूर्य-परिवेष दिखलाई पडे तो प्रत्येक वस्तु की महँगाई होती है तथा विशेष रूप से तृण, पशु, सोना, चाँदी और मशीनो के कल पुर्जों के मूल्य मे वृद्धि होती है। व्यापारियो के लिए रविवार का सूर्य और चन्द्र-परिवेष विशेष महत्त्वपूर्ण होता है। इस परिवेष द्वारा सभी प्रकार के छोटे-बडे व्यापारी लाभान्वित होते है। ऊन एव ऊनी वस्त्रो के व्यापार में विशेष लाभ होता है। इनका मूल्य स्थिर नही रहता, उत्तरोत्तर मूल्य मे वृद्धि होती जाती है। सोमवार को सुन्दर आकार वाला चन्द्र-परिवेष निरभ्र आकाश मे दिखलाई पडे तो प्रत्येक प्रकार की वस्तु सस्ती होती है। विशेष रूप से घृत, दुग्ध, तैल, तिलहन और अन्न का मूल्य सस्ता हो जाता है। व्यापारिक दृष्टि से इस प्रकार का परिवेष घाटे की ही सूचना देता है। जो लोग चाँदी,

सोना, रूई, सूत, कपास, जूट आदि का सट्टा करते हैं, उन्हे विशेष रूप से घाटा लगता है। यदि इसी दिन सूर्य-परिवेष दिखलाई पडे तो गेहूँ, गुड़, लाल वस्त्र, लाख, लाल रंग तथा लाल रंग की सभी वस्तुएँ महँगी होती हैं और इस प्रकार के परिवेष से उक्त प्रकार की वस्तुओं के खरीदारो को दुगुना लाभ होता है। यह परिवेष व्यापारिक जगत् के लिए अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है, सीमेण्ट, चूना, रग, पत्थर आदि के व्यापार में भी विशेष लाभ की सभावना रहती है। सोमवार को सूर्य परिवेष देखने वाले व्यापारियो को सभी प्रकार की वस्तुओ में लाभ होता है। ईंट, कोयला और अल्प प्रकार के इमारती समान के मूल्य में भी वृद्धि होती है।

मंगलवार को चन्द्र-परिवेष दिखलाई पडे तो लाल रंग की वस्तुओं का मूल्य गिरता है और श्वेत रंग के पदार्थों का मूल्य बढता है। धातुओं के मूल्य में प्राय समता रहती है। सुवर्ण के मूल्य मे परिवेष के एक महीने तक वृद्धि, पश्चात् कमी होती है। चाँदी का मूल्य आरम्भ मे गिरता है, पश्चात् ऊँचा हो जाता है। श्वेत रग का कपडा, सूत, कपास, रूई आदि का मूल्य तीन महीनो तक सस्ता होता रहता है। जवाहरात का मूल्य भी गिरता है। मगलवार का चन्द्र-परिवेष तीन महीनो तक व्यापारिक स्थिति के क्षेत्र मे सस्ते भावो की ही सूचना देता है। यदि मगलवार को ही सूर्य-परिवेष दिखलाई पडे तो प्रत्येक वस्तु का मूल्य सवाया बढ़ जाता है, यह स्थिति आरम्भ मे एक महीने तक रहती है पश्चात् सोना, चाँदी, जवाहरात, रूई, चीनी, गुड आदि वस्तुओ के मूल्य मे गिरावट आ जाती है और बाजार की स्थिति बिगडने लगती है। मशाला, फल एवं मेवो के मूल्य मे भी गिरावट आ जाती है। दो महीने के पश्चात् कपडा तथा श्वेत रंग की अन्य वस्तुओं की स्थिति सुधर जाती है। अनाज का भाव कुछ सस्ता होता है, पर कालान्तर मे उसमे भी महँगाई आ जाती है। यदि मगलवार को पुष्य नक्षत्र हो और उस दिन सूर्य-परिवेष दिखलाई पडा हो तथा वह कम से कम दो घण्टे तक बना रहा हो तो सभी प्रकार की वस्तुओ के मूल्य में वृद्धि होती है। व्यापारियो के लिए यह परिवेष कई गुने लाभ की सूचना देती है। प्रत्येक वस्तु के व्यापार मे लाभ होता है। लगभग चार महीने तक इस प्रकार की व्यापारिक स्थिति अवस्थित रहती है। उक्त प्रकार के परिवेष से सट्टे के व्यापारियों को अपने लिए घाटे की ही सूचना समझनी चाहिए।

बुधवार को चन्द्र-परिवेष स्वच्छ रूप में दिखलाई पड़े और इस परिवेष की स्थिति कम से कम आध घण्टे तक रहे तो मशाला, तैल, घी, तिलहन, अनाज, सोना, चाँदी, रूई, जूट, वस्त्र, मेवा, फल, गुड़ आदि का मूल्य गिरता है और यह मूल्य की गिरावट कम से कम तीन महीनों तक बनी रहती है। केवल रेशमी वस्त्र का मूल्य बढ़ता है और इसके व्यापारियो को अच्छा लाभ होता है। यदि

इसी दिन सूर्य-परिवेष दिखलाई पडे और यह एक घण्टे तक स्थित रहे तो सभी प्रकार की वस्तुओ के मूल्य की स्थिरता का सूचक समझना चाहिए। बुधवार को सूर्य-परिवेष सूर्योदय काल मे ही दिखलाई पडे तो श्वेत, लाल और काले रग की वस्तुओ के भाव बढते है। यदि परिवेष काल मे आकाश का रग गाय की आँख के समान हो जाय तो इस परिवेष का फल लाल रग की वस्तुओ के व्यापार मे लाभ एव अन्य रग की वस्तुओ के व्यापार मे हानि की सूचना समझनी चाहिए। इस प्रकार की व्यापारिक स्थिति एक महीने तक ही रहती है। गुरुवार को चन्द्र-परिवेष चन्द्रोदय काल या चन्द्रास्त काल मे दिखलाई पडे तो इसका फल महर्घता होता है। रसादि पदार्थों मे विशेष रूप से महँगाई होती है। औषधियो के मूल्यो मे भी वृद्धि होती है। घृत, तैल आदि स्निग्ध पदार्थों का मूल्य अनुपातत ही बढता है।

गुरुवार को सूर्य-परिवेष मडलाकार मे दिखलाई पडे तो लाल, पीले और हरे रंग की वस्तुएं सस्ती होती हैं, अनाज का मूल्य भी घटता है। वस्त्र, चीनी, गुड आदि उपभोग की वस्तुओ मे भी सामान्यत कमी आती है। सट्टेबाजो के लिए यह परिवेष अनिष्ट सूचक है, यत उन्हे हानि ही होती है, लाभ होने की सभावना बिल्कुल नही। यदि उक्त प्रकार का सूर्य-परिवेष दो घण्टे से अधिक समय तक ठहर जाय तो पशुओ के व्यापारियो को विशेष लाभ होता है। श्वेत रग के सभी पदार्थ महँगे होते हैं और उपभोग की वस्तुओ का मूल्य बढता है। बाजार मे यह स्थिति चार महीनो तक रह सकती है।

शुक्रवार को चन्द्र-परिवेष लाल या पीले रग का दिखलाई पडे तो दूसरे दिन से ही सोना, पीतल आदि पीतवर्ण की धातुओ की कीमत बढ जाती है। चाँदी के भाव मे थोडी गिरावट के पश्चात् बढती होती है। मशाला, फल और तरकारियो के मूल्य मे वृद्धि होती है। हरे रग की सभी वस्तुएँ सस्ती होती है। पर तीन महीनो के पश्चात् हरे रग की वस्तुओ के भाव मे भी महँगी आ जाती है। रूई, कपास और सूत के व्यापार मे सामान्य लाभ होता है। काले रग की वस्तुओ मे अधिक लाभ की सभावना है। यदि शुक्रवार को सूर्य परिवेष दिखलाई पडे तो आरम्भ मे वस्तुओ के भाव तटस्थ रहते हैं, परन्तु औषधियो, विदेश से आनेवाली वस्तुओ और पशुओ की कीमत मे वृद्धि हो जाती है। श्वेत रग की वस्तुओ का मूल्य सम रहता है, लाल और नीले रंग के पदार्थों का मूल्य बढ़ जाता है।

शनिवार को चन्द्र-परिवेष दिखलाई पडे तो काले रग के सभी पदार्थ तीन महीनो तक सस्ते रहते है। लाल और श्वेत रग के पदार्थ तीन महीनो तक महँगे रहते हैं। जवाहरात विशेष रूप से महँगे होते हैं। सोना, चाँदी आदि खनिज पदार्थों के मूल्य मे असाधारण रूप से वृद्धि होती है। यदि इसी दिन सूर्य-परिवेष

दिखलाई पडे तो सभी प्रकार की वस्तुओ के मूल्य मे वृद्धि होती है। विशेष रूप से जूट, सीमेन्ट, कागज एव विदेश से आनेवाली वस्तुएँ अधिक महँगी होती है। चीनी, गुड, शहद आदि मिष्ट पदार्थों के मूल्य गिरते है। यदि उक्त प्रकार का सूर्य-परिवेष दिन भर रह जाय तो इसका फल व्यापार के लिए अत्यन्त लाभप्रद है। वस्तुओ के मूल्य चौगुने बढ जाते हैं और व्यापारियो को अपरिमित लाभ होता है। बाजार मे यह स्थिति अधिक से अधिक पाँच महीनो तक रह सकती है। आरम्भ के तीन माह महँगाई के और अवशेष दो महीने साधारण महँगाई के होते है।

पंचमोऽध्याय:

अथातः संप्रवक्ष्यामि विद्युतां नामविस्तरम् ।
प्रशस्ता वाऽप्रशस्ता च यायवदनुपूर्वतः[1] ॥1॥

अब पूर्वाचार्यानुसार विद्युत्—बिजली का विस्तार से निरूपण करते हैं। विद्युत् (बिजली) दो प्रकार की होती है—प्रशस्त और अप्रशस्त ॥1॥

सौदामिनी च पूर्वा च कुसुमोत्पलनिभा[2] शुभा ।
निरभ्रा मिश्रकेशी च क्षिप्रगा चाशनिस्तथा ॥2॥

एतासां नामभिर्वर्षं ज्ञेयं [3]कर्मनिरुक्तिता ।
भूयो व्यासेन वक्ष्यामि प्राणिनां पुण्यपापजाम्[4] ॥3॥

सौदामिनी और पूर्वा बिजली यदि कमल के पुष्प के समान हो तो वह शुभ-अशुभ फल देने वाली होती है। वह बिजली निरभ्रा—बादलो से रहित, देवागना के समान मिश्रकेशी, शीघ्र गमन करने वाली और वज्र के समान हो तो अशनि नाम से कही जाती है। वर्षा का कारण है, अतः यह वर्ष भी कही जाती है। इस बिजली के नाम इसकी क्रिया निरुक्ति से अवगत कर लेना चाहिए। अब पुन

1 अनुपूर्वश मु०। 2 कुम्भहेमोत्पला, मु०। 3 कर्मभिरुक्तित मु०।
4 पुण्यशालिनाम् मु०।

बिजली का विस्तारपूर्वक फल, लक्षण आदि का वर्णन किया जाता है, जो जीवों के पुण्य-पाप के निमित्त से होते हैं ॥2-3॥

स्निग्धास्निग्धेषु चाभ्रेषु विद्युत् प्राच्या जलावहा ।
कृष्णा तु कृष्णमार्गस्था [1]वातवर्षावहा भवेत् ॥4॥

स्निग्ध बादल से उत्पन्न बिजली स्निग्धा कही जाती है । यदि यह पूर्व दिशा की हो तो अवश्य वर्षा करती है । यदि काले बादल से उत्पन्न हो तो कृष्णा कही जाती है और यह वायु की वर्षा करती है—पवन चलता है । यहाँ पर 'कृष्ण' शब्द अग्निवाचक है, अत अग्निकोण के मार्ग मे स्थित विद्युत् कृष्णा नाम से कही जाती है । इसका फल तीव्र पवन का चलना है ॥4॥

अथ रश्मिगतो[2]ऽस्निग्धा हरिता हरितप्रभा ।
दक्षिणा दक्षिणावर्ता कुर्यादुदकसंभवम्[3] ॥5॥

जिस बिजली मे रश्मियाँ नही है, वह अस्निग्धा कही जाती है और हरित प्रभावशाली बिजली हरिता कही जाती है, दक्षिण मे गमन करने वाली दक्षिणा कहलाती है । इस प्रकार की विद्युत् जल बरसने की सूचना देती है ॥5॥

रश्मिवती[4] मेदिनी[5] भाति विद्युदपरदक्षिणे ।
हरिता[6] भाति रोमाञ्चं सोदकं पातयेद् बहुम् ॥6॥

पृथ्वी पर प्रकाश करने वाली विद्युत् रश्मिवती, नैर्ऋत्यकोण में गमन करने वाली हरिता और बहुत रोमवाली बिजली बहुत जल की वृष्टि करने वाली होती है ॥6॥

अपरेण[7] तु या विद्युच्चरते चोत्तरामुखी ।
कृष्णाभ्रसंश्रिता[8] स्निग्धा साऽपि कुर्याज्जलागमम्[9] ॥7॥

पश्चिम दिशा मे प्रकट होने वाली, उत्तर मुख करके गमन करने वाली, कृष्ण रंग के बादलो से निकलने वाली और स्निग्धा ये चारो प्रकार की बिजलियाँ जल के आने की सूचना देती हैं ॥7॥

अपरोत्तरा तु या विद्युन्मन्दतोया हि सा स्मृता ।
उदीच्यां सर्ववर्णस्था[10] रूक्षा[11] तु सा तु वर्षति ॥8॥

---

1 वातहवर्षावहा मु० D । 2 मती मु० । 3 सप्लवम् मु० । 4 मती, मु० । 5 मोदिनी मु० । 6 हरितां नां प्रभासेत् मु० C । 7. अरुणोदये मु० A. C. । 8 सस्थिता मु० । 9 जलागम. आ० । 10 श्यामवर्णस्था मु० । 11 तक्षात् मु० ।

वायव्यकोण की बिजली थोडी वर्षा करने वाली और उत्तर दिशा की बिजली चाहे किसी भी वर्ण की क्यो न हो; अथवा रूक्ष भी हो तो भी जलवृष्टि करने वाली होती है ।।8।।

या तु पूर्वोत्तरा विद्युत् दक्षिणा[1] च पलायते ।
चरत्यूर्ध्वं च तिर्यक्स्था[2] साऽपि श्वेता जलवहा ।।9।।

ईशानकोण की बिजली तिरछी होकर पूर्व मे गमन करे और दक्षिण मे जाकर विलीन हो जाय तथा श्वेत रंग की हो तो वह जल की वृष्टि करने वाली होती है ।।9।।

तथैवोर्ध्वमधो[3] वाऽपि स्निग्धा रश्मिमती भृशम् ।
सघोषा चाप्यघोषा वा[4] विक्षु सर्वासु वर्षति ।।10।।

इसी प्रकार ऊपर-नीचे जाने वाली, स्निग्धा और बहुत रश्मि वाली शब्द करती हुई अथवा शब्द न भी करने वाली बिजली सभी दिशाओ मे वर्षा करने वाली होती है ।।10।।

शिशिरे चापि वर्षन्ति रक्ताः पीताश्च विद्युत ।
नीला· श्वेता वसन्तेषु न वर्षन्ति कथंचन ।।11।।

यदि शिशिर—माघ, फाल्गुन मे नीले और पीले रग की बिजली हो तो वर्षा होती है तथा वसन्त—चैत्र, वैशाख मे नील और श्वेत रग की बिजली हो तो कदापि वर्षा नही होती ।। 11।।

हरिता मधुवर्णाश्च ग्रीष्मे रूक्षाश्च निश्चला ।
भवन्ति ताम्रगौराश्च वर्षास्वपि निरोधिका ।।12।।

हरे और मधु रंग की रूक्ष और स्थिर बिजली ग्रीष्म ऋतु—ज्येष्ठ, आषाढ मे चमके तो वर्षा नही होती तथा इसी प्रकार वर्षा ऋतु—श्रावण, भाद्रपद मे ताम्रवर्ण की बिजली चमके तो वर्षा का अवरोध होता है ।।12।।

शारद्यो नाभिवर्षन्ति नीला वर्षाश्च विद्युत. ।
हेमन्ते श्यामताम्रास्तुऽतडितो निर्जला स्मृता[5] ।।13।।

शरद् ऋतु --आश्विन, कार्तिक मे नील वर्ण की बिजली चमके तो वर्षा नही होती और हेमन्त --मार्गशीर्ष, पौष में यदि श्याम और ताम्रवर्ण की बिजली

---

1 दक्षिणं मु० । 2. तिर्यग् सा, मु० । 3 वार्धमधाऽल्मापि मु० A, । 4 वा मु० ।
5 हेमन्ते ताम्रवर्णास्तु तडितो निर्जला स्मृता मु० C. ।

चमके तो जल-वृष्टि नही होती ॥13॥

रक्तारक्तेषु चाभ्रेषु हरिताहरितेषु च।
नीलानीलेषु वा स्निग्धा वर्षन्तेऽनिष्टयोनिषु ॥14॥

रक्त-अरक्त, हरित-अहरित और नील-अनील बादलो मे यदि स्निग्धा बिजली चमकती है, तो उक्त प्रकार के बादलो के अनिष्टसूचक होने पर भी जल की वर्षा अवश्य होती है ॥14॥

अथ नीलाश्च पीताश्च रक्ता श्वेताश्च विद्युत·।
एतां श्वेतां पतत्यूर्ध्वं विद्युदुदकसंप्लवम् ॥15॥

अब बिजली के वर्णों का निरूपण करते है—नील, पीत, रक्त और श्वेत वर्ण की बिजलियो मे मे श्वेत रग की बिजली ऊपर गिरे तो पृथ्वी पर जल ही जल बरसता है—पृथ्वी जल से प्लावित हो जाती है ॥15॥

वैश्वानरपथे विद्युत् श्वेता रूक्षा चरेद् यत।
विन्द्यात् तदाऽशनिवर्षं रक्तायामग्नितो भयम् ॥16॥

वैश्वानर पथ अर्थात् अग्निकोण मे उत्पन्न हुई श्वेता और रूक्षा नाम की बिजलियाँ विद्युत् कही जाती है। ये अशनि वृष्टि करती है। रक्तवर्ण की बिजली अग्नि का भय करती है ॥16॥

यदा श्वेताऽभ्रवृक्षस्य विद्युच्छिरसि संचरेत्।
अथ वा गृहयोर्मध्ये वातवर्षं सृजेन्महत् ॥17॥

यदि श्वेत रग की बिजली वृक्ष के ऊपर गिरे अथवा दो गृहो के मध्य से होकर गिरे तो तेज वायु सहित जल की वर्षा होती है ॥17॥

अथ चन्द्राद् विनिष्क्रम्य विद्युन्मंडलसंस्थिता।
श्वेताऽऽभा प्रविशेदर्कं विन्द्यादुदकसंप्लवम् ॥18॥

यदि चन्द्रमण्डल से निकलकर श्वेत मेघ युक्त बिजली सूर्यमण्डल मे प्रवेश करे तो उसे अधिक वर्षासूचिका समझनी चाहिए ॥18॥

[1]अथ सूर्याद् विनिष्क्रम्य रक्ता समलिना[2] भवेत्।
प्रविश्य सोमं वा तस्य[3] तत्र[4] वृष्टिर्भयंकरा ॥19॥

यदि सूर्यमण्डल से निकलकर रक्त वर्ण की मलिन विद्युत् चन्द्रमण्डल मे प्रवेश

1 तदा मु॰ C। 2 ससलिला श्रा॰। 3 नश्येत् मु॰ C.। 4 सा तु मु॰ C।

करे तो वहाँ पर भयकर वायु चलती है ॥19॥

विद्युतं[1] तु यथा विद्युत् ताडयेत् प्रविशेद् यदा।
अन्योऽन्यं [2]वा लिखेयातां वर्षं विन्द्यात् तदा शुभम् ॥20॥

बिजली बिजली में ताडित होकर एक-दूसरे मे प्रवेश करती हुई दिखलाई दे तो शुभ जानना चाहिए—वर्षा यथोचित रूप मे होती है ॥20॥

राहुणा संवृतं चन्द्रमादित्यं चापि सर्वतः[3]।
कुर्यात् विद्युत् यदा साभ्रा तदा सस्यं न रोहति ॥21॥

राहु द्वारा चन्द्रमा और केतु द्वारा सूर्य अपसव्य मार्ग से ग्रहण किया गया हो और ये बादल से आच्छादित हो और उस समय उनसे बिजली निकले तो धान्य नही उगते ॥21॥

नीला ताम्रा च गौरा[4] च श्वेता [5]चाऽभ्रान्तरं चरेत्।
सघोषा मन्दघोषा वा विन्द्यादुदकसंप्लवम् ॥22॥

नील, ताम्र, गौर और श्वेत बादलो से बिजली का सचार हो और वह भारी अथवा थोडी गर्जना युक्त हो तो अच्छी वर्षा होती है ॥22॥

मध्यमे मध्यमं वर्षं अधमे अधमं दिशेत्।
उत्तमं चोत्तमे मार्गे चरन्तीनां च विद्युताम् ॥23॥

आकाश के मध्यमार्ग से गमन करनेवाली बिजली मध्यम वर्षा, जघन्य मार्ग से गमन करनेवाली जघन्य वर्षा और उत्तम मार्ग से गमन करनेवाली उत्तम वर्षा की सूचिका है ॥23॥

वीथ्यन्तरेषु या विद्युच्चरतामफलं[6] विदु:।
अभीक्ष्णं दर्शयेच्चापि तत्र दूरगतं फलम् ॥24॥

यदि बिजली वीथी—चन्द्रादि के मार्ग के अन्तराल मे सचार करे तो उसका कोई फल नही होता। यदि बार-बार दिखलाई पडे तो उसका फल कुछ दूर जाकर होता है ॥24॥

उल्कावत् साधनं ज्ञेयं विद्युतामपि तत्त्वतः।
अथाभ्राणां [7]प्रवक्ष्यामि [8]लक्षणं तन्निबोधत ॥25॥

---

1 विद्युद्विद्युद्यदा भूत्या आ०। 2 चा मु० A। 3 सव्यते, मु० A. सेव्यत मु० B.। 4 गौरी मु०। 5 वा, मु०। 6. वामफल, मु० A, त्वा फलं मु० B.। सफल मु० C.। 7. सप्रवक्ष्यामि, मु० C.। 8. लक्षणानि मु० C.।

बिजलियो के निमित्तो को उल्का के निमित्तो के समान ही अवगत करना चाहिए। अब आगे बादलो के लक्षण और फल को बतलाते है ॥25॥

इति नैर्ग्रन्थे भद्रबाहुनिमित्तशास्त्रे विद्युल्लक्षणो नाम पंचमोऽध्याय ।

विवेचन—बिजली के निमित्तो द्वारा प्रधानत वर्षा का विचार किया जाता है। रात्रि मे चमकने से वर्षा के सम्बन्ध में शुभाशुभ अवगत करने के साथ फसल का भविष्य भी ज्ञात किया जा सकता है। जब आकाश मे घने बादल छाये हुए हो, उस समय पूर्व दिशा मे बिजली कडके और इसका रग श्वेत या पीत हो तो निश्चयत वर्षा होती है। यह फल बिजली कडकने के दूसरे दिन ही प्राप्त होता है। विशेषता यहाँ यह भी है कि यह फलादेश उसी स्थान पर प्राप्त होता है, जिस स्थान पर बिजली चमकती है। इस बात का सदा ध्यान रखना होता है कि बिजली चमकने का फल तत्काल और तद्देश मे प्राप्त होता है। अत्यन्त इष्ट या अनिष्टसूचक यह निमित नही है और न इस निमित्त द्वारा वर्ष भर का फलादेश ही निकाला जा सकता है। सामान्य रूप से दो-चार दिन या अधिक-से-अधिक दस-पन्द्रह दिनो का फलादेश निकालना ही इस निमित का उद्देश्य है। जब पूर्व दिशा मे रक्त वर्ण की बिजली जोर-जोर से कडक कर चमके तो वायु चलती है तथा अल्प वर्षा होती है। मन्द-मन्द चमक के साथ जोर-जोर से कडकने का शब्द सुनाई दे तथा एकाएक आकाश मे बादल हट जावे तो अच्छी वर्षा होती है और साथ ही ओले भी बरसते है। पूर्व दिशा मे केशरिया रग की बिजली तेज प्रकाश के साथ चमके तो अगले दिन तेज धूप पडती है, पश्चात् मध्याह्नोत्तर जल की वर्षा होती है। जल भी इतना अधिक बरसता है, जिससे पृथ्वी जलमयी दिखलाई पडती है।

यदि पश्चिम दिशा मे साधारण रूप से मध्य रात्रि मे बिजली चमके तो तेज धूप पड़ती है। स्निग्ध विद्युत् पश्चिम दिशा मे कडाके के शब्द के साथ चमके तो धूप होने के पश्चात् जल की वर्षा होती है। यहाँ इतनी बात और अवगत करनी चाहिए कि जल की वर्षा के साथ तूफान भी रहता है। अनेक वृक्ष धराशायी हो जाते है, पशु और पक्षियो को अनेक प्रकार के कष्ट होते हैं। जिस समय आकाश काले-काले बादलो से आच्छादित हो, चारो ओर अन्धकार-ही-अन्धकार हो, उस समय नील प्रकाश करती हुई बिजली चमके, साथ ही भयकर जोर का शब्द भी हो तो अगले दिन तीव्र वायु बहने की सूचना समझनी चाहिए। वर्षा तीन दिनों के बाद होती है यह भी इस निमित्त का फलादेश है। फसल के लिए इस प्रकार की बिजली विनाशकारी ही मानी गई है। पश्चिम दिशा से निकलकर विचित्रवर्ण की बिजली चारो ओर घूमती हुई चमके तो अगले तीन दिनों मे वर्षा होने की

सूचना अवगत करनी चाहिए। इस प्रकार की बिजली फसल को भी समृद्धिशाली बनाने वाली होती है। गेहूँ, जौ, धान और ईख की वृद्धि विशेष रूप से होती है। पश्चिम दिशा मे रक्तवर्ण की प्रभावशाली बिजली मन्द-मन्द शब्द के साथ उत्तर की ओर गमन करती हुई दिखलाई पड़े तो अगले दिन तेज हवा चलती है और कड़ाके की धूप पड़ती है। इस प्रकार की बिजली दो दिनो मे वर्षा होने की सूचना देती है। जिस बिजली में रश्मियाँ निकलती हो, ऐसी बिजली पश्चिम दिशा में गडगड़ाहट के साथ चमके तो निश्चयत अगले तीन दिनो तक वर्षा का अवरोध होता है। आकाश में बादल छाये रहते हैं, फिर भी जल की वर्षा नही होती। कृष्णवर्ण के बादलो मे पश्चिम दिशा से पीतवर्ण की विद्युत धारा प्रवाहित हो और यह अपने तेज प्रकाश के द्वारा आँखो मे चकाचौंध उत्पन्न कर दे तो वर्षा की कमी समझनी चाहिए। वायु के साथ बूँदा-बूँदी होकर ही रह जाती है। धूप भी इतनी तेज पड़ती है, जिससे इस बूँदा-बूँदी का भी कुछ प्रभाव नही होता। पश्चिम से बिजली निकलकर पूर्व की ओर जाय तो प्रात काल कुछ वर्षा होती है और इस वर्षा का जल फसल के लिए अत्यन्त लाभप्रद सिद्ध होता है। फसल के लिए इस प्रकार बिजली उत्तम समझी गई है।

उत्तर दिशा मे बिजली चमके तो नियमत वर्षा होती है। उत्तर मे जोर-जोर से कडक के साथ बिजली चमके और आकाश मेघाच्छन्न हो तो प्रात काल घनघोर वर्षा होती है। जब आकाश मे नीलवर्ण के बादल छाये हो और इनमे पीतवर्ण की बिजली चमकती हो तो साधारण वर्षा के साथ वायु का भी प्रकोप समझना चाहिए। जब उत्तर मे केवल मन्द-मन्द शब्द करती हुई बिजली कडकती है, उस समय वायु चलने की ही सूचना समझनी चाहिए। हरे और पीले रग के बादल आकाश मे हो तथा उत्तर दिशा मे रह-रहकर बार-बार बिजली चमकती हो तो जल वर्षा का योग विशेष रूप से समझना चाहिए। यह वृष्टि उस स्थान से सौ कोश की दूरी तक होती है तथा पृथ्वी जलप्लावित हो जाती है। लालवर्ण के बादल जब आकाश मे हो, उस समय दिन मे बिजली का प्रकाश दिखलाई पडे तो वर्षा के अभाव की सूचना अवगत करनी चाहिए। इस प्रकार की बिजली दुष्काल पडने की सूचना भी देती है। यदि उक्त प्रकार की बिजली आषाढ़ मास के आरम्भ मे दिखलाई पडे तो उस वर्ष दुष्काल समझ लेना चाहिए। वायव्य कोण मे बिजली कड़ाके के शब्द के साथ चमके तो अल्प जल की वर्षा समझनी चाहिए। वर्षा काल में ही उक्त प्रकार की बिजली का निमित्त घटित होता है। ईशान कोण मे तिरछी चमकती हुई बिजली पूर्व दिशा की ओर गमन करे तो जल की वर्षा होती है। यदि इस कोण की बिजली गर्जन-तर्जन के साथ चमके तो तूफान की सूचना समझनी चाहिए। आषाढ़मास और श्रावणमास मे उत्तम प्रकार की विद्युत् का

फल घटित होता है।

दक्षिण दिशा मे बिजली की चकाचौध उत्पन्न हो और श्वेत रग की चमक दिखलाई पडे तो सात दिनो तक लगातार जल की वर्षा होती है। यदि दक्षिण दिशा मे केवल बिजली की चमक ही दिखलाई पड़े तो धूप होने की सूचना अवगत करनी चाहिए। जब लाल और काले वर्ण के मेघ आकाश मे आच्छादित हो और बार-बार तेजी से बिजली चमकती हो तो, साधारणतया दिन भर धूप रहने के पश्चात् रात मे वर्षा होती है। दक्षिण दिशा से पूर्वोत्तर गमन करती हुई बिजली चमके और उत्तर दिशा मे इसका तेज प्रकाश भर जाए तो तीन दिनो तक लगातार जल-वर्षा होती है। यहाँ इतना विशेष और है कि वर्षा के साथ ओले भी पडते हैं। यदि इस प्रकार की बिजली शरद् ऋतु मे चमकती है तो निश्चयत ओले ही पडते हैं, जल-वर्षा नही होती। ग्रीष्म ऋतु मे उक्त प्रकार की बिजली चमकती है तो वायु के साथ तेज धूप पडती है, वृष्टि नही होती। गोलाकार रूप मे दक्षिण दिशा मे बिजली चमके तो आगामी ग्यारह दिनो तक जल की अखण्ड वर्षा होती है। इस प्रकार की बिजली अतिवृष्टि की सूचना देती है। आषाढ बदी प्रतिपदा को दक्षिण दिशा मे शब्द रहित बिजली चमके तो आगामी वर्ष मे फसल निकृष्ट, उत्तर दिशा मे शब्द रहित बिजली चमके तो फसल साधारण, पश्चिम दिशा मे शब्द रहित बिजली चमके तो फसल के लिए मध्यम और पूर्व दिशा मे शब्द रहित बिजली चमके तो बहुत अच्छी फसल उपजती है। यदि इन्ही दिशाओ मे शब्द सहित बिजली चमके तो क्रमश आधी, तिहाई, साधारणत पूर्ण और सवाई फसल उत्पन्न होती है। यदि आषाढ बदी द्वितीया चतुर्थी से विद्ध हो और उसमे दक्षिण दिशा से निकलती हुई बिजली उत्तर की ओर जावे तथा इसकी चमक बहुत तेज हो तो घोर दुर्भिक्ष की सूचना मिलती है। वर्षा भी इस प्रकार की बिजली से अवरुद्ध ही होती है। चटचटाहट करती हुई बिजली चमके तो वर्षाभाव एव घोरोपद्रव की सूचना देती है।

ऋतुओ के अनुसार विद्युत् निमित्त का फल—शिशिर—माघ और फाल्गुन मास मे नीले और पीले रग की बिजली चमके तथा आकाश श्वेत रंग का दिखलाई पडे तो ओलो के साथ जलवर्षा एव कृषि के लिए हानि होती है। माघ कृष्ण प्रतिपदा को बिजली चमके तो गुड, चीनी, मिश्री आदि वस्तुएं महँगी होती है तथा कपडा, सूत, कपास, रूई आदि वस्तुएँ सस्ती और शेष वस्तुएँ सम रहती हैं। इस दिन बिजली का कडकना बीमारियो की सूचना भी देता है। माघ कृष्णा द्वितीया, षष्ठी और अष्टमी को पूर्व दिशा मे बिजली दिखलाई पड़े तो आगामी वर्ष मे अधिक व्यक्तियो के अकालमरण होने की सूचना समझनी चाहिए। यदि चन्द्रमा के बिम्ब के चारो ओर परिवेष होने पर उस परिवेष के निकट ही बिजली

चमकती प्रकाशमान दिखलाई पडे तो आगामी आषाढ मे अच्छी वर्षा होती है। माघ कृष्ण द्वितीया को गर्जन-तर्जन के साथ बिजली दिखलाई पडे तो आगामी वर्ष मे फसल साधारण तथा वर्षा की कमी होती है। माघी पूर्णिमा को मध्य रात्रि मे उत्तर-दक्षिण चमकती हुई बिजली दिखलाई पडे तो आगामी वर्ष राष्ट्र के लिए उत्तम होता है। व्यापारियो को सभी वस्तुओ के व्यापार मे लाभ होता है। यदि दूसरी रात मे चन्द्रोदय के समय मे ही लगातार एक मुहूर्त्त—48 मिनट तक बिजली चमके तो आगामी वर्ष मे राष्ट्र के लिए अनेक प्रकार से विपत्ति आती है। फाल्गुन मास की कृष्ण पक्ष की प्रतिपदा, द्वितीया और तृतीया को मेघाच्छन्न आकाश हो और उसमे पश्चिम दिशा की ओर बिजली चमकती हुई दिखलाई पडे तो आगामी वर्ष मे फसल अच्छी होती है और तत्काल ओलो के साथ जलवृष्टि होती है। यदि होली की रात्रि मे पूर्व दिशा से बिजली चमके तो आगामी वर्ष मे अकाल, वर्षाभाव, बीमारियो एव धन-धान्य की हानि और दक्षिण दिशा मे बिजली चमके तो आगामी वर्ष मे साधारण वर्षा, चेचक का विशेष प्रकोप, अन्न की महँगी एव खनिज पदार्थ सामान्यतया महँगे होते है। पश्चिम दिशा की ओर बिजली चमके तो उपद्रव, झगडे, मार-पीट, हत्याएँ, चोरी एव आगामी वर्ष मे अनेक प्रकार की विपत्ति और उत्तर दिशा मे बिजली चमके तो अग्निभय, आपसी विरोध, नेताओ मे मतभद, आरम्भ मे वस्तुएँ सस्ती पश्चात् महँगी एव आकस्मिक दुर्घटनाएँ घटित होती है। होली के दिन आकाश मे बादलो का छाना और बिजली का चमकना अशुभ है।

वसन्त ऋतु--चैत्र और वैशाख मे बिजली का चमकना प्राय निरर्थक होता है। चैत्र कृष्ण प्रतिपदा को आकाश मे मेघ व्याप्त हो और बूंदा-बूंदी के साथ बिजली चमके तो आगामी वर्ष के लिए अत्यन्त अशुभ होता है। फसल तो नष्ट होती ही है, साथ ही मोती, माणिक्य आदि जवाहरात भी नप्ट होते है। दिन मे इस दिन मेघ छा जाये और वर्षा के साथ बिजली चमके तो अत्यन्त अशुभ होता है। आगामी वर्ष के लिए यह निमित्त विशेष अशुभ की सूचना देता है। चैत्र कृष्ण प्रतिपदा तृतीया विद्ध हो तथा इस दिन भरणी नक्षत्र हो तो इस दिन चमकने वाली बिजली आगामी वर्ष मे मनुष्य और पशुओ के लिए नाना प्रकार के अरिष्टों की सूचना देती है। पशुओ में आगामी आश्विन, कार्तिक, माघ और चैत्र मे भयानक रोग फैलता है तथा मनुष्यो मे भी इन्ही महीनो मे बीमारियाँ फैलती है। भूकम्प होने की सूचना भी उक्त प्रकार की बिजली से ही अवगत करनी चाहिए। चैत्री पूर्णिमा को अचानक आकाश मे बादल छा जायें और पूर्व-पश्चिम बिजली कडके तो आगामी वर्ष उत्तम रहता है और वर्षा भी अच्छी होती है। फसल के लिए यह निमित्त बहुत अच्छा है। इस प्रकार के निमित्त से सभी वस्तुओ की

सस्ताई प्रकट होती है। वैशाखी पूर्णिमा को दिन मे तेज धूप हो और रात मे बिजली चमके तो आगामी वर्ष में वर्षा अच्छी होती है।

ग्रीष्म ऋतु—ज्येष्ठ और आषाढ मे साधारणत: बिजली चमके तो वर्षा नही होती। ज्येष्ठ मास मे बिजली चमकने का फल केवल तीन दिन घटित होता है, अवशेष दिनो मे कुछ भी फल नही मिलता। ज्येष्ठ कृष्ण प्रतिपदा, ज्येष्ठ कृष्ण अमावस्या और पूर्णिमा इन तीन दिनो मे बिजली चमकने का विशेष फल प्राप्त होता है। यदि प्रतिपदा को मध्य रात्रि के उपरान्त निरभ्र आकाश मे दक्षिण-उत्तर की ओर गमन करती हुई बिजली दिखाई पडे तो आगामी वर्ष के लिए अनिष्टकारक फल होता है। पूर्व-पश्चिम सन्ध्याकाल के दो घण्टे बाद तड्-तड् करती हुई बिजली इसी दिन दिखलाई पडे तो घोर दुर्भिक्ष और शब्दरहित बिजली दिखलाई पडे तो समयानुकूल वर्षा होती है। अमावस्या के दिन बूँदा-बूँदी के साथ बिजली चमके तो जगली जानवरो को कष्ट, धातुओ की उत्पत्ति मे कमी एव नागरिको मे परस्पर कलह होती है। ज्येष्ठ-पूर्णिमा को आकाश मे बिजली तड्-तड् शब्द के साथ चमके तो आगामी वर्ष के लिए शुभ, समयानुकूल वर्षा और धन-धान्य की उत्पत्ति प्रचुर परिमाण मे होती है।

वर्षा ऋतु—श्रावण और भाद्रपद मे ताम्रवर्ण की बिजली चमके तो वर्षा का अवरोध होता है। श्रावण मे कृष्ण द्वितीया, प्रतिपदा, सप्तमी, एकादशी, चतुर्दशी, अमावस्या, शुक्ला प्रतिपदा, पचमी, अष्टमी, द्वादशी और पूर्णिमा तिथियाँ विद्युत् निमित्त को अवगत करने के लिए विशेष महत्त्वपूर्ण हैं, अवशेष तिथियो मे रक्त और श्वेत वर्ण की बिजली चमकने से वर्षा और अन्य वर्ण की बिजली चमकने से वर्षा का अभाव होता है। कृष्ण प्रतिपदा को रात्रि मे लगातार दो घण्टे तक बिजली चमके तो श्रावण मास मे वर्षा की कमी, द्वितीया को रह-रहकर बिजली चमके तथा गर्जन-तर्जन भी हो तो भादो मे अल्पवर्षा और श्रावण के महीने मे साधारण वर्षा, सप्तमी को पीले रग की बिजली चमके तथा आकाश मे बादल चित्र-विचित्र रग के एकत्रित हो तो सामान्य वर्षा होती है। एकादशी को निरभ्र आकाश मे बिजली चमके तो फसल मे कमी और अनेक प्रकार से अशान्ति की सूचना समझनी चाहिए। चतुर्दशी को दिन मे बिजली चमके तो उत्तम वर्षा और रात मे चमके तो साधारण वर्षा होती है। अमावस्या को हरित, नील और ताम्र-वर्ण की बिजली चमके तो वर्षा का अवरोध होता है। भाद्रपद मास मे कृष्णपक्ष और शुक्लपक्ष की प्रतिपदा को निरभ्र आकाश मे बिजली चमके तो अकाल की सूचना और मेघाच्छादित आकाश मे बिजली चमकती हुई दिखलाई पडे तो सुकाल की सूचना समझनी चाहिए। कृष्ण पक्ष की सप्तमी और एकादशी को गर्जन-तर्जन के साथ स्निग्ध और रश्मियुक्त बिजली चमके तो परम सुकाल, समयानुकूल वर्षा,

सब प्रकार के नागरिको मे सन्तोष एवं सभी वस्तुएँ सस्ती होती हैं। पूर्णिमा और अमावस्या को बूँदा-बूँदी के साथ बिजली शब्द करती हुई चमके और उसकी एक धारा-सी बन जाए तो वर्षा अच्छी होती है तथा फसल भी अच्छी ही होती है।

शरदऋतु—आश्विन और कार्तिक मे बिजली का चमकना प्रायः निरर्थक है। केवल विजयदशमी के दिन बिजली चमके तो आगामी वर्ष के लिए अशुभ सूचक समझना चाहिए। कार्तिक मास में भी बिजली चमकने का फल अमावस्या और पूर्णिमा के अतिरिक्त अन्य तिथियो मे नही होता है। अमावस्या को बिजली चमकने से खाद्य-पदार्थ महँगे और पूर्णिमा को बिजली चमकने से रासायनिक पदार्थ महँगे होते हैं।

हेमन्तऋतु—मार्गशीर्ष और पौष मे श्याम और ताम्रवर्ण की बिजली चमकने से वर्षाभाव तथा रक्त, हरित, पीत और चित्र-विचित्र वर्ण की बिजली चमकने से वर्षा होती है।

षष्ठोऽध्यायः

अभ्राणां लक्षणं कृत्स्नं प्रवक्ष्यामि यथाक्रमम्।
प्रशस्त[1]मप्रशस्तं[2] च तन्निबोधत तत्त्वतः ॥1॥

बादलो की आकृति के लक्षण यथाक्रम से वर्णित करता हूँ। ये दो प्रकार के होते हैं—शुभ और अशुभ ॥1॥

स्निग्धान्यभ्राणि यावन्ति वर्षंदानि न संशयः।
उत्तर मार्गमाश्रित्य तिथौ मुखे यदा भवेत् ॥2॥

चिकने बादल अवश्य बरसते हैं, इसमे कुछ भी सशय नही, और उत्तर दिशा के आश्रित बादल प्रातःकाल नियमतः वर्षा करते है ॥2॥

उदीच्यान्यथ पूर्वाणि वर्षदानि शिवानि[3] च।
दक्षिणाण्यपराणि स्युः [4]समूत्राणि न संशयः ॥3॥

1 प्रशस्तान् मु० A B D. । 2. अप्रशस्तान् मु० A B D. । 3 शुभानि मु० C । 4 शुभमुहूर्तानि मु० C आ०।

उत्तर और पूर्व दिशा के बादल सदा उत्तम वर्षा करते है और दक्षिण तथा पश्चिम के बादल मूत्र के समान थोडी-थोडी वर्षा करते है, इसमे कुछ सशय नही ॥3॥

कृष्णानि पीत-ताम्राणि श्वेतानि च यदा भवेत् ।
तयोर्निर्देश[1]मासृत्य वर्षदानि शिवानि च ॥4॥

यदि बादल कृष्ण, पीले, ताँबे और श्वेत वर्ण के हो तो वे उत्तम वर्षा की सूचना देते है ॥4॥

अप्सराणां च सत्त्वानां सदृशानि चराणि च ।
सुस्निग्धानि च यानि स्युर्वर्षदानि शिवानि[3] च ॥5॥

यदि बादल देवागनाओ और प्राणियो के सदृश आचरण करे—विचरण करे और स्निग्ध हो तो वे शुभ होते है और उनसे उत्तम वर्षा होती है ॥5॥

शुक्लानि स्निग्धवर्णानि विद्युच्चित्रघनानि च ।
सद्यो वर्षं समाख्यान्ति तान्यभ्राणि न सशय ॥6॥

बादल शुक्ल वर्ण के हो, स्निग्ध हो, विद्युत् समान विचित्र—कबूतर के समान रग के बादल हो तो तत्काल वर्षा होती है ॥6॥

शकुनै. कारणैश्चापि सम्भवन्ति शुभैर्यदा ।
तदा वर्षं च क्षेम च सुभिक्षं च जय भवेत्[4] ॥7॥

शुभ शकुन और अन्य शुभ-चिह्नो सहित यदि बादल हो तो वे वर्षा करते है तथा क्षेम, कुशल, सुभिक्ष और राजा की विजय सूचित करते है ॥7॥

पक्षिणां द्विपदाना च सदृशानि यदा भवेत् ।
चतुष्पदानां सौम्यानां तदा विद्यान्महज्जलम्[5] ॥8॥

सौम्य पक्षियो के सदृश, सौम्य द्विपद—मनुष्यो के सदृश और सौम्य चतुष्पद—चौपायो - गाय, भैस, हाथी घोडो आदि के तुल्य बादल हो तो विजयसूचक समझना चाहिए । इस श्लोक मे सौम्य विशेषण से तात्पर्य है कि क्रूर प्राणियो की आकृति नही ग्रहण करनी चाहिए । जो प्राणी सीधे-साधे स्वभाव के है, उन्ही की आकृति के बादल शुभ सूचक होते है । सौम्य प्राणियो मे हाथी, घोडा, बैल, हस, मयूर, सारस, तोता, मैना, कोयल, कबूतर आदि प्राणी सग्रहीत है ॥8॥

---

1 श्वयोर्निदिशम् मु० । 2 अम्बराणा मु० । 3 शुभानि मु० । 4 वदेत् मु० A आ० । 5 जय वदेत् मु० A B D ।

यदा राज्ञः प्रयाणे तु यान्यभ्राणि शुभानि च ।
अनुमार्गाणि स्निग्धानि तदा राज्ञो जय वदेत्[1] ॥9॥

राजा के प्रयाण के समय यदि शुभ रूप बादल हों और वे राजा के मार्ग के साथ-साथ गमन करे, स्निग्ध हो तो उस यात्रा मे राजा की विजय होती है ॥9॥

[2]रथायुधानामश्वानां हस्तिनां सदृशानि च ।
यान्यग्रतो प्रधावन्ति[3] जयमाख्यान्त्युपस्थितम् ॥10॥

रथ — गाडी, मोटर तथा आयुध—तलवार, बन्दूक और हाथी आदि प्राणियो के सदृश बादल राजा के आगे-आगे गमन करे तो वे उसकी जय की सूचना देते है ॥10॥

ध्वजानां च पताकानां घण्टानां तोरणस्य च ।
सदृशान्यग्रतो यान्ति जयमाख्यान्त्युपस्थितम् ॥11॥

ध्वजा, पताका, घण्टा, तोरण इत्यादि की आकृति वाले बादल राजा के प्रयाण समय आगे-आगे चले तो उनसे राजा की विजय सूचित होती है ॥11॥

शुक्लानि स्निग्धवर्णानि पुरतः[4] पृष्ठतोऽपि वा ।
अभ्राणि[5] दीप्तरूपाणि जयमाख्यान्त्युपस्थितम् ॥12॥

श्वेत और चिकने बादल राजा के आगे अथवा पीछे चमकते हुए गमन करे तो विजयलक्ष्मी उसके सामने उपस्थित रहती है—युद्ध मे उसे विजय मिलती है ॥12॥

चतुष्पदानां पक्षिणां क्रव्यादानां च दंष्ट्रिणाम् ।
सदृशप्रतिलोमानि वधमाख्यानान्त्युपस्थितम् ॥13॥

चौपायो – भैंसा, शूकर, गधा आदि पशुओ और मासभक्षी क्रूर पक्षियो—गीध, काक, बगुला, बाज, तीतर आदि पक्षियो एव दाँत वाले सिंहादि हिंसक प्राणियो के आकार वाले बादल राजा के युद्धार्थ गमन करते समय प्रतिलोम गति —अपसव्य मार्ग से गमन करते हुए दिखाई दे तो राजा का घात अथवा पराजय होती है ॥13॥

---

1 भवेत् म० C । 2 स्वायुधानाम्, मु०, यदायुधानाम्, मु० C । 3 अभिधावन्ति मु० C । 4 पुरस्तात् मु० । 5 अभ्राणां मु० B ।

असिशक्तितोमराणां खड्गानां चक्रचर्मणाम् ।
सदृशप्रतिलोमानि सङ्ग्रामं तेषु निर्दिशेत् ॥14॥

तलवार, त्रिशूल, भाला, बर्छी, खड्ग, चक्र और ढाल के समान आकार वाले और प्रतिलोम—विपरीत मार्ग से गमन करने वाले बादल युद्ध की सूचना देते हैं ॥14॥

धनुषां कवचानां च बालानां सदृशानि च ।
खण्डान्यभ्राणि रूक्षाणि सङ्ग्रामं तेषु निर्दिशेत् ॥15॥

धनुषाकार, कवचाकार, बाल – हाथी, घोडो की पूँछ के बालो के समान तथा खण्डित और रूक्ष बादल सग्राम की सूचना देते हैं ॥15॥

नानारूपप्रहरणं सर्वे यान्ति परस्परम् ।
सङ्ग्रामं तेषु जानीयादतुलं प्रत्युपस्थितम् ॥16॥

नाना प्रकार के रूप धारण कर सब बादल परस्पर मे आघात-प्रतिघात करे तो घोर सग्राम की सूचना अवगत करनी चाहिए ॥16॥

अभ्रवृक्ष समुच्छाद्य योऽनुलोमसमं व्रजेत् ।
यस्य राज्ञो वधस्तस्य भद्रबाहुवचो यथा ॥17॥

जड से उखडे हुए वृक्ष के समान यदि बादल गमन करते हुए दिखलाई पडे तो राजा के वध की सूचना ज्ञात करनी चाहिए, ऐसा भद्रबाहु स्वामी का वचन है ॥17॥

[1]बालाऽभ्रवृक्षमरणं कुमारामात्ययोर्वदेत् ।
एवमेवं च विज्ञेयं प्रतिराजं[2] यदा भवेत् ॥18॥

छोटे-छोटे वृक्ष के समान आकृति वाले बादलो से युवराज और मन्त्री का मरण जानना चाहिए ॥18॥

तिर्यक्षु[3] यानि गच्छन्ति रूक्षाणि[4] च घनानि च ।
निवर्तयन्ति तान्याशु चमूं सर्वां सनायकाम्[5] ॥19॥

यदि मेघ तिरछे गमन करते हो, रूक्ष हो और सघन हो तो उनसे नायक

---

1 -भ्व्यग मु० A -भिमरण वृधे मु० B -भ्राणिक्ष मु० D । 2 प्रतिन्याना मु० B, प्रतिराज्ञ मु० C, प्रतिराज्ञा मु० D । 3 निर्यंचि मु० C । 4 रूपाणि मु० A D वृक्षाणि मु० C । 5, च नायकाम् मु० C ।

सहित समस्त सेना के युद्ध से लौट आने या पराङ्मुख हो जाने की सूचना मिलती है ॥19॥

अभिद्रवन्ति घोषेण[1] महता यां चमूं पुनः ।
सविद्युतानि [2]वाऽभ्राणि तदा विन्द्याच्चमूवधम् ॥20॥

जिस सेना के ऊपर बादल घोर गर्जना करते हुए बरसते हैं तथा बिजली सहित होते हैं तो उस सेना का नाश सूचित होता है ॥20॥

रुधिरोदकवर्णानि निम्बगन्धीनि यानि च ।
व्रजन्त्यभ्राणि[3] अत्यन्तं सङ्ग्रामं तेषु निर्दिशेत् ॥21॥

रुधिर के समान रंग वाली जलवर्षा हो और नीम जैसी गन्ध आती हो तथा बादल गमन करते हुए दिखलाई पड़ें तो युद्ध होने का निर्देश ज्ञात करना चाहिए ॥21॥

विस्वरं रवमाणाश्च शकुना यान्ति पृष्ठतः ।
यदा[4] चाभ्राणि धूम्राणि[5] तदा विन्द्यान्महद्[6] भयम्[7] ॥22॥

पीछे की ओर शब्द सहित अथवा शब्दरहित शकुन रूप धूम जैसी आकृति वाले बादल महान् भय की सूचना देते हैं ॥22॥

मलिनानि विवर्णानि[8] दीप्तायां दिशि यानि च ।
दीप्तान्येव यदा यान्ति भयमाख्यान्त्युपस्थितम् ॥23॥

मलिन तथा वर्णरहित बादल दीप्ति दिशा — सूर्य जिस दिशा में हो उस दिशा में स्थित हो तो भय की सूचना समझनी चाहिए ॥23॥

[9]सग्रहे [10]चापि नक्षत्रे ग्रहयुद्धे[11] ऽशुभे तिथौ ।
[12]सम्भ्रमन्ति यदाऽभ्राणि तदा विद्यान्महद् भयम् ॥24॥

मुहूर्ते शकुने वापि निमित्ते वाऽशुभे यदा ।
सम्भ्रमन्ति यदाऽभ्राणि तदा विन्द्यान्महद् भयम् ॥25॥

---

1 घोरेण मु० C. । 2 चा मु० । 3 व्रजन्ति-अभ्रामतोः मु० A. B D । 4 यानि अभ्राणि मु० C । 5. सधूमानि मु० A B D । 6-7 महाभयम् मु० A, भयम् महत् मु० B E । 8 विवर्णानि मु० A । 9 सग्राहे मु० A, सग्रहे मु० D । 10 वा । 11 अभ्रमुक्ते मु० C । 12. सम्भवन्ति मु० C ।

अशुभ ग्रह, नक्षत्र, ग्रहयुद्ध, तिथि-मुहूर्त-शकुन और निमित्त के अशुभ होने पर बादलों का भ्रमण हो तो बहुत भारी भय की सूचना समझनी चाहिए ॥24-25॥

अभ्रशक्तिर्यतो गच्छेत् तां दिशां[1] चाभियोजयेत्[2]।
विपुला क्षिप्रगा स्निग्धा जयमाख्याति निर्भयम् ॥26॥

भारी शीघ्रगामी और स्निग्ध बादल जिस दिशा में गमन करें उस दिशा में वे यायी राजा की विजय की सूचना करते हैं ॥26॥

यदा तु धान्यसंघाना[3] सदृशानि[4] भवन्ति हि।
अभ्राणि तोयवर्णानि सस्य तेषु समृद्ध्यते[5] ॥27॥

यदि बादल धान्य के समूह के सदृश अथवा जल के वर्ण वाले दिखाई दें तो धान्य की बहुत पैदावार होती है ॥27॥

[6]विरागान्यनुलोमानि शुक्लरक्तानि यानि च।
स्थावराणीति जानीयात् स्थावराणां च सश्रये ॥28॥

विरागी, अनुलोम गति वाले तथा श्वेत और रक्त वर्ण के बादल स्थिर हों तो स्थायी—उस स्थान के निवासी राजा की विजय होती है ॥28॥

क्षिप्रगानि विलोमानि नीलपीतानि यानि च।
चलानीति[7] [8]विजानीयाच्चलानां[9] च समागमे[10] ॥29॥

शीघ्रगामी, प्रतिलोम गति से चलने वाले, पीत और नील वर्ण के बादल चल होते हैं और ये यायी के लिए समागमकारक हैं ॥29॥

स्थावराणां जय विन्द्यात् स्थावराणां द्युतिर्यदा।
यायिनां च जयं विन्द्याच्चलाभ्राणां द्युतावपि ॥30॥

जो बादल स्थावरों—निवासियों के अनुकूल द्युति आदि चिह्न वाले हों तो उस परसे स्थायियों की जय जानना और यायी के अनुकूल द्युति आदि चिह्नवाले हों तो यायी की विजय जानना चाहिए ॥30॥

---

1 दिश मु०। 2 न्वाभियोजयेत मु०। 3 वात्यमधानाम् मु० A। 4 सदृशाना मु०। 5 समृद्ध्यर्यि मु०। 6 विरगानि मु० A। 7 चलानीति मु० A चचलानीति मु० D। 8 जानीयात् मु० D। 9 चूलाना मु० A 10 समागम मु० A।

राजा[1] तत्प्रतिरूपैस्तु[2] ज्ञेयान्यभ्राणि सर्वशः[3] ।
तत् सर्वं[4] सफलं[5] [6]विन्द्याच्छुभं वा यदि वाऽशुभम् ॥31॥

यदि राजा को बादल अपने प्रतिरूप—सदृश जान पड़ें तो उनसे शुभ और अशुभ दोनों प्रकार का फल अवगत करना चाहिए ॥31॥

इति नैर्ग्रन्थे भद्रबाहुनिमित्तशास्त्रे अभ्रलक्षणो नाम षष्ठोऽध्यायः ॥6॥

विवेचन—आकाश मे बादलो के आच्छादित होने से वर्षा, फसल, जय, पराजय, हानि, लाभ आदि के सम्बन्ध मे जाना जाता है। यह एक प्रकार का निमित्त है, जो शुभ-अशुभ की सूचना देता है। बादलो की आकृतियाँ अनेक प्रकार की होती है। कतिपय आकृतियाँ पशु-पक्षियो के आकार की होती है और कतिपय मनुष्य, अस्त्र-शस्त्र एव गेंद, कुर्सी आदि के आकार की भी। इन समस्त आकृतियो को फल की दृष्टि से शुभ और अशुभ इन दो भागो में विभक्त किया गया है। जो पशु सरल, सीधे और पालतू होते है, उनकी आकृति के बादलो का फल शुभ और हिंसक, क्रूर, दुष्ट जगली जानवरो की आकृति के बादलो का फल निकृष्ट होता है। इसी प्रकार सौम्य मनुष्य की आकृति के बादलो का फल शुभ और क्रूर मनुष्यो की आकृति के बादलो का फल निकृष्ट होता है। अस्त्र-शस्त्रो की आकृति के बादलो का फल साधारणतया अशुभ होता है। स्निग्ध वर्ण के बादलो का फल उत्तम और रूक्ष वर्ण के बादलो का फल सर्वदा निकृष्ट होता है।

पूर्व दिशा मे मेघ गर्जन-तर्जन करते हुए स्थित हो तो उत्तम वर्षा होती है तथा फसल भी उत्तम होती है। उत्तर दिशा मे बादल छाये हुए हो तो वर्षा की सूचना देते हैं। दक्षिण और पश्चिम दिशा मे बादलो का एकत्र होना वर्षावरोधक होता है। वर्षा का विचार ज्येष्ठ की पूर्णिमा की वर्षा से किया जाता है। यदि ज्येष्ठ की पूर्णिमा के दिन पूर्वाषाढा नक्षत्र हो और उस दिन बादल आकाश मे आच्छादित हो तो साधारण वर्षा आगामी वर्ष मे समझनी चाहिए। उत्तराषाढ़ा नक्षत्र यदि इस दिन हो तो अच्छी वर्षा होने की सूचना जाननी चाहिए। आषाढ कृष्ण पक्ष मे रोहिणी के चन्द्रमा योग हो और उस दिन आकाश मे पूर्व दिशा की ओर मेघ सुन्दर, सौम्य आकृति में स्थित हो तो आगामी वर्ष मे सभी दिशाए शान्त रहती हैं, पक्षीगण या मृगगण मनोहर शब्द करते हुए आनन्द से निवास करते हैं, भूमि सुन्दर दिखलाई पडती है और धन-धान्य की उत्पत्ति अच्छी होती

1 नर्भा मु॰ C । 2 तिप्रति मु॰ C । 3 सर्वतः मु॰ C । 4 तत मु॰ C
5 सर्वमल मु॰ C. । 6 ब्रूयात् मु॰ B C ।

है। यदि आकाश मे कही कृष्ण-श्वेत मिश्रित वर्ण के मेघ आच्छादित हो, कही श्वेत वर्ण के ही स्थित हो, कही कुण्डली आकार मे स्थित हो, कही बिजली चमकती हुई मेघो में दिखलाई पडे, कही कुमकुम और टेसू के पुष्प के समान रंग के बादल सामने दिखलाई पड़ें, कही मेघो के इन्द्र-धनुप दिखलाई पडे तो आगामी वर्ष मे साधारणत: वर्षा होती है। आचार्यों ने ज्येष्ठ शुक्ल पंचमी से आषाढ़ शुक्ल तक के मेघो का फल विशेष रूप से प्रतिपादित किया है।

विशेष फल—यदि ज्येष्ठ शुक्ला पचमी को प्रात निरभ्र आकाश हो और एकाएक मेघ मध्याह्नकाल मे छा जायें तो पौष मास मे वर्षा की सूचना देते है तथा इस प्रकार के मेघो से गुड, चीनी आदि मधुर पदार्थों के महँगे होने की भी सूचना समझनी चाहिए। यदि इसी तिथि को रात्रि मे गर्जन-तर्जन के साथ बूँदा-बूँदी हो और पूर्व दिशा मे बिजली भी चमके तो आगामी वर्ष मे सामान्यतया अच्छी वर्षा होने की सूचना देते हैं। यदि उपर्युक्त स्थिति मे दक्षिण दिशा मे बिजली चमकती है तो दुर्भिक्ष सूचक समझना चाहिए। ज्येष्ठ शुक्ला पचमी को उत्तराफाल्गुनी नक्षत्र हो और इस दिन उत्तर दिशा की ओर से मेघ एकत्र होकर आकाश को आच्छादित करें तो वस्त्र और अन्न सस्ते होते हैं और आषाढ से आश्विन तक अच्छी वर्षा होती है, सर्वत्र सुभिक्ष होने की सूचना मिलती है। केवल यह योग चूहो, सर्पों और जगली जानवरो के लिए अनिष्टप्रद है। उक्त तिथि को गुरुवार, शुक्रवार और मगलवार मे से कोई भी दिन हो और पूर्व या दक्षिण दिशा की ओर से बादलो का उमडना आरम्भ हो रहा हो तो निश्चयत मानव, पशु, पक्षी और अन्य समस्त प्राणियो के लिए वर्षा अच्छी होती है।

ज्येष्ठ शुक्ला षष्ठी को आकाश मे मडलाकार मेघ सचित हो और उनका लाल या काला रग हो तो आगामी वर्ष मे वृष्टि का अभाव अवगत करना चाहिए। यदि इस दिन बुधवार और मघा नक्षत्र का योग हो तथा पूर्व या उत्तर से मेघ उठ रहे हो तो श्रावण और भाद्रपद मे वर्षा अच्छी होती है, परन्तु अन्न का भाव महँगा रहता है। फसल मे कीडे लगते हैं तथा सोना, चाँदी आदि खनिज धातुओ के मूल्य मे भी वृद्धि होती है। यदि ज्येष्ठ शुक्ला षष्ठी रविवार को हो और इस दिन पुष्य नक्षत्र का योग हो तो मेघ का आकाश मे छाना बहुत अच्छा होता है। आगामी वर्ष वृष्टि बहुत अच्छी होती है, धन-धान्य की उत्पत्ति भी श्रेष्ठ होती है।

ज्येष्ठ शुक्ला सप्तमी शनिवार को हो और इस दिन आश्लेषा नक्षत्र का भी योग हो तो आकाश मे श्वेत रंग के बादलो का छा जाना उत्तम माना गया है। इस निमित्त से देश की उन्नति की सूचना मिलती है। देश का व्यापारिक सम्बन्ध अन्य देशो से बढता है तथा उसकी सैन्य और अर्थ शक्ति का पूर्ण विकास होता

है। वर्षा भी समय पर होती है, जिससे कृषि बहुत ही उत्तम होती है। यदि उक्त तिथि को गुरुवार और उत्तराफाल्गुनी नक्षत्र का योग हो और दक्षिण से बादल गर्जना करते हुए एकत्र हो तो आगामी आश्विन मास में उत्तम वर्षा होती है तथा फसल भी साधारणत अच्छी होती है।

ज्येष्ठ शुक्ला अष्टमी को रविवार या सोमवार दिन हो और इस दिन पश्चिम की ओर पर्वताकृति बादल दिखलाई पड़ें तो आगामी वर्ष के शुभ होने की सूचना देते है। पुष्य, मघा और पूर्वा फाल्गुनी इन नक्षत्रों मे से कोई भी नक्षत्र उस दिन हो तो लोहा, इस्पात तथा इनसे बनी समस्त वस्तुएँ महँगी होती हैं। जूट का बाजार भाव अस्थिर रहता है। तथा आगामी वर्ष मे अन्न की उपज भी कम ही होती है। देश मे गोधन और पशुधन का विनाश होता है। यदि उक्त नक्षत्रो के साथ गुरुवार का योग हो तो आगामी वर्ष सब प्रकार से सुखपूर्वक व्यतीत होता है। वर्षा प्रचुर परिमाण में होती है। कृषक वर्ग को सभी प्रकार मे शान्ति मिलती है।

ज्येष्ठ शुक्ला नवमी शनिवार को यदि आश्लेषा, विशाखा और अनुराधा में से कोई भी नक्षत्र हो तो इस दिन मेघो का आकाश मे व्याप्त होना साधारण वर्षा का सूचक है। साथ ही इन मेघो से माघ मास मे जल के बरसने की भी सूचना मिलती है। जौ, धान, चना, मूँग और बाजरा की उत्पत्ति अधिक होती है। गेहूँ का अभाव रहता है या स्वल्प परिमाण में उत्पादन होता है। ज्येष्ठ शुक्ला दशमी को रविवार या मगलवार हो और इस दिन ज्येष्ठ या अनुराधा नक्षत्र हो तो आगामी वर्ष मे श्रेष्ठ फसल होने की सूचना समझनी चाहिए। तिल, तैल, घी और तिलहनो का भाव महँगा होता है तथा घृत मे विशेष लाभ होता है। उक्त प्रकार का मेघ व्यापारी वर्ग के लिए भयदायक है तथा आगामी वर्ष मे उत्पातो की सूचना देता है।

ज्येष्ठ शुक्ला एकादशी को उत्तर दिशा की ओर सिंह, व्याघ्र के आकार मे बादल छा जायें तो आगामी वर्ष के लिए अनिष्टप्रद समझना चाहिए। इस प्रकार की मेघस्थिति पौष या माघ मास में देश के किसी नेता की मृत्यु भी सूचित करती है। वर्षा और कृषि के लिए उक्त प्रकार की मेघस्थिति अत्यन्त अनिष्ट-कारक है। अन्न और जूट की फसल सामान्य रूप से अच्छी नहीं होती। कपास और गन्ने की फसल अच्छी ही होती है। यदि उक्त तिथि को गुरुवार हो तो इस प्रकार की मेघस्थिति द्विज लोगो मे भय उत्पन्न करती है तथा देश में अधार्मिक वातावरण उपस्थित करने का कारण बनती है।

ज्येष्ठ शुक्ला द्वादशी को बुधवार हो और इस दिन पश्चिम दिशा मे सुन्दर और सौम्य आकार मे बादल आकाश में छा जावें तो आगामी वर्ष में अच्छी वर्षा

होती है। यदि इस दिन ज्येष्ठा या मूल नक्षत्र मे से कोई हो तो उक्त प्रकार की मेघ की स्थिति से धन-धान्य की उत्पत्ति मे डेढ गुनी वृद्धि हो जाती है। दैनिक उपयोग की समस्त वस्तुएँ आगामी वर्ष मे सस्ती होती है।

ज्येष्ठ शुक्ला त्रयोदशी को गुरुवार हो और इस दिन पूर्व दिशा की ओर से बादल उमडते हुए एकत्र हो तो उत्तम वर्षा की सूचना देते है। अनुराधा नक्षत्र भी हो तो कृषि मे वृद्धि होती है। ज्येष्ठ शुक्ला चर्तुदशी की रात्रि मे वर्षा हो और आकाश मण्डलाकार रूप मे मेघाच्छन्न हो तो आगामी वर्ष मे खेती अच्छी होती है। ज्येष्ठ पूर्णिमा को आकाश मे सघन मेघ आच्छादित हो और इस दिन गुरुवार हो तो आगामी वर्ष मे सुभिक्ष की सूचना समझनी चाहिए।

आषाढ कृष्णा प्रतिपदा को हाथी और अश्व के आकार मे कृष्ण वर्ण के बादल आकाश मे अवस्थित हो जायँ तथा पूर्व दिशा से वायु भी चलती हो और हल्की वर्षा हो रही हो तो आगामी वर्ष मे दुष्काल की सूचना समझनी चाहिए। आषाढ कृष्णा प्रतिपदा के दिन आकाश मे बादलो का आच्छादित होना तो उत्तम होता है, पर पानी का बरसना अत्यन्त अनिष्टप्रद समझा जाता है। इस दिन अनेक प्रकार के निमित्तो का विचार किया जाता है—यदि रात मे उत्तर दिशा से शृगाल मन्द-मन्द शब्द करते हुए बोलें तो आश्विन मास मे वर्षा का अभाव होता है तथा समस्त खाद्य पदार्थ महँगे होते है। तेज धूप का पडना श्रेष्ठ समझा जाता है और यह लक्षण सुभिक्ष का द्योतक होता है। आषाढ कृष्णा द्वितीया को पर्वत, या समुद्र के आकार मे उमडते हुए बादल एकत्रित हो और गर्जना करे, पर वर्षा न हो तो साधारणत अच्छा समझा जाता है। आगामी श्रावण और भाद्रपद मे वर्षा होती हे। आषाढ कृष्णा द्वितीया को सुन्दर द्विपदाकार मेघ आकाश मे अवस्थित हो तो उत्तम समझा जाता हे। वर्षा भी उत्तम होती है तथा आगामी वर्ष फसल भी अच्छी होती है। यदि आषाढ कृष्णा द्वितीया को सोमवार हो और इस दिन श्रवण नक्षत्र हो तो उक्त प्रकार के मेघ का विशेष फल प्राप्त होता है। तिलहन की उत्पत्ति प्रचुर परिमाण मे होती है तथा पशु धन की वृद्धि होती रहती है। इस तिथि को मेघाच्छन्न आकाश होने पर रात्रि मे शूकर और जगली जानवरो का कर्कश शब्द सुनाई पडे तो जिस नगर के व्यक्ति इस शब्द को सुनते हैं, उसके चारो ओर दस-दस कोश की दूरी तक महामारी फैलती है। यह फल कार्तिक मास मे ही प्राप्त होता है, सारा नगर कार्तिक मे वीरान हो जाता है। फसल भी कमजोर होती है और फसल को नष्ट करने वाले कीडो की वृद्धि होती है। यदि उक्त तिथि को प्रात काल आकाश निरभ्र हो और सन्ध्या समय रग-बिरगे वर्ण के बादल पूर्व से पश्चिम की ओर गमन करते हुए दिखलाई पड़ें तो सात दिन के उपरान्त घनघोर वर्षा होती है तथा श्रावण महीने मे भी खूब वर्षा

होने की सूचना समझनी चाहिए । यदि उक्त तिथि को दिन भर मेघाच्छन्न आकाश रहे और सन्ध्या समय निरभ्र हो जाय तो आगामी महीने मे साधारण जल-वर्षा होती है तथा भाद्रपद मे सूखा पडता है ।

आषाढ कृष्ण तृतीया को प्रात.काल ही आकाश मेघाच्छन्न हो जाय तो आगामी दो महीने अच्छी वर्षा होती है तथा विश्व मे सुभिक्ष होने की सूचना समझनी चाहिए। काले रग के अनाज महँगे होते है और श्वेत रग की सभी वस्तुएँ सस्ती होती हैं। यदि उक्त तिथि को मगलवार हो तो विशेष वर्षा की सूचना समझनी चाहिए। धनिष्ठा नक्षत्र सन्ध्या समय मे स्थित हो और इस तिथि को मगलवार मेघ स्थित हो तो भाद्रपद मास मे भी वर्षा की सूचना समझनी चाहिए ।

आषाढ कृष्णा चतुर्थी को मगलवार या शनिवार हो, पूर्वाषाढा, उत्तराषाढा और श्रावण मे से कोई भी एक नक्षत्र हो तो उक्त तिथि को प्रात काल ही मेघाच्छन्न होने से आगामी वर्ष अच्छी वर्षा की सूचना मिलती है । धन-धान्य की वृद्धि होती है । जूट की उपज के लिए उक्त मेघस्थिति अच्छी समझी जाती है। आषाढ कृष्णा पञ्चमी को मनुष्य के आकार मे मेघ आकाश मे स्थित हो तो वर्षा और फसल उत्तम होती हैं। देश की आर्थिक स्थिति मे वृद्धि होती है। विदेशो से भी देश का व्यापारिक सम्बन्ध स्थापित होता है। गेहूँ, गुड और लाल वस्त्र के व्यापार मे विशेष लाभ होता है । मोती, सोना, रत्न और अन्य प्रकार के बहुमूल्य जवाहरात की महँगी होती है । आषाढ कृष्णा षष्ठी को निरभ्र आकाश रहे और पूर्व दिशा से तेज वायु चले तथा सन्ध्या के समय पीत वर्ण के बादल आकाश मे व्याप्त हो जायें तो श्रावण मे वर्षा की कमी, भाद्रपद मे सामान्य वर्षा और आश्विन मे उत्तम वर्षा की सूचना समझनी चाहिए । यदि उक्त तिथि रविवार, सोमवार और मगलवार हो तो सामान्यत वर्षा उत्तम होती है तथा तृण और काष्ठ का मूल्य बढता है । पशुओ के मूल्य मे वृद्धि हो जाती है। यदि उक्त तिथि अश्विनी नक्षत्र हो तो वर्षा अच्छी होती है, किन्तु फसल मे कमी रहती है । बाढ और अतिवृष्टि के कारण फसल नष्ट हो जाती है । माघ मास मे भी वृष्टि की सूचना उक्त प्रकार के मेघ की स्थिति से मिलती है । यदि आषाढ कृष्ण सप्तमी को रात मे एकाएक मेघ एकत्र हो जायें तथा वर्षा न हो तो तीन दिन के पश्चात् अच्छी वर्षा होने की सूचना समझनी चाहिए। यदि उक्त तिथि को प्रात काल ही मेघ एकत्रित हो तथा हल्की वर्षा हो रही हो तो आषाढ मास मे अच्छी वर्षा, श्रावण मे कमी और भाद्रपद मे वर्षा का अभाव तथा आश्विन मास मे छिट-पुट वर्षा समझनी चाहिए। यदि उक्त तिथि को सोमवार पडे तो सूर्य की मेघस्थिति जगत् मे हाहाकार होने की सूचना देती है। अर्थात् मनुष्य

और पशु सभी प्राणी कष्ट पाते है। आश्विन मास मे अनेक प्रकार की बीमारियाँ भी व्याप्त होती हैं। आषाढ कृष्ण अष्टमी को प्रात काल सूर्योदय ही न हो अर्थात् सूर्य मेघाच्छन्न हो और मध्याह्न मे तेज धूप हो तो श्रावण मास मे वर्षा की सूचना समझनी चाहिए। भरणी नक्षत्र हो तो इसका फलादेश अत्यन्त अनिष्टकर होता है। फसल में अनेक प्रकार के रोग लग जाते हैं तथा व्यापार मे भी हानि होती है। आषाढ कृष्णा नवमी को पर्वताकार बादल दिखलाई पडे तो शुभ, ध्वजा-घण्टा-पताका के आकार मे बादल दिखलाई पडे तो प्रचुर वर्षा और व्यापार मे लाभ होता है। यदि इस दिन बादलो की आकृति मासभक्षी पशुओ के समान हो तो राष्ट्र के लिए भय होता है तथा आन्तरिक गृह-कलह के साथ अन्य शत्रु-राष्ट्रो की ओर से भी भय होता है। यदि तलवार, त्रिशूल, भाला, बर्छी आदि अस्त्रो के रूप मे बादलो की आकृति उक्त तिथि को दिखलाई पडे तो युद्ध की सूचना समझनी चाहिए। यदि आषाढ कृष्ण दशमी को उखडे हुए वृक्ष की आकृति के समान बादल दिखलाई पडे तो वर्षा का अभाव तथा राष्ट्र मे नाना प्रकार के उपद्रवो की सूचना समझनी चाहिए। आषाढ कृष्ण एकादशी को रुधिर वर्ण के बादल आकाश मे आच्छादित हो तो आगामी वर्ष प्रजा को अनेक प्रकार का कष्ट होता है तथा खाद्य पदार्थों की कमी होती है। आषाढ कृष्ण द्वादशी और त्रयोदशी को पूर्व दिशा की ओर से बादलो का एकत्र होना दिखलाई पडे तो फसल की क्षति तथा वर्षा का अभाव और चतुर्दशी को गर्जन-तर्जन के साथ बादल आकाश मे व्याप्त हुए दिखलाई पडे तो श्रावण मे सूखा पडता है। अमावस्या को वर्षा होना शुभ है और धूप पडना अनिष्टकारक है। शुक्ला प्रतिपदा को मेघो का एकत्र होना शुभ, वर्षा होना सामान्य और धूप पडना अनिष्टकारक है। शुक्ला द्वितीया और तृतीया को पूर्व मे मेघो का एकत्रित होना शुभसूचक है।

सप्तमोऽध्याय:

अथात. सम्प्रवक्ष्यामि सन्ध्यानां लक्षणं तत[1]।
प्रशस्तमप्रशस्तं च यथातत्त्वं निबोधत ॥1॥

1 त्विह मु० C ।

सन्ध्याओं के लक्षण का निरूपण किया जाता है । ये सन्ध्याएँ दो प्रकार की होती हैं—प्रशस्त और अप्रशस्त । निमित्त शास्त्र के तत्त्वों के अनुसार उनका फल अवगत करना चाहिए ॥1॥

उद्गच्छमाने चादित्ये[1] यदा सन्ध्या विराजते ।
नागराणां जयं विन्द्यादस्तं गच्छति यायिनाम्[2] ॥2॥

सूर्योदय के समय की सन्ध्या नागरों को और सूर्यास्त के समय की सन्ध्या यायी के लिए जय देने वाली होती है ॥2॥

उद्गच्छमाने चादित्ये[3] शुक्ला सन्ध्या यदा भवेत् ।
उत्तरेण गता[4] सौम्या ब्राह्मणानां जयं विदु ॥3॥

सूर्योदय के समय की सन्ध्या यदि श्वेत वर्ण की हो और वह उत्तर दिशा मे हो तथा सौम्य हो तो ब्राह्मणों के लिए जयदायक होती है ॥3॥

उद्गच्छमाने चाऽऽदित्ये रक्ता सन्ध्या यदा भवेत् ।
पूर्वेण च गता सौम्या क्षत्रियाणां जयावहा ॥4॥

सूर्योदय के समय लाल वर्ण की सन्ध्या हो और वह पूर्व दिशा मे स्थित हो तथा सौम्य हो तो क्षत्रियों को जय देने वाली होती है ॥4॥

उद्गच्छमाने चाऽऽदित्ये पीता सन्ध्या यदा भवेत् ।
दक्षिणेन गता सौम्या वैश्यानां सा[5] जयावहा[6] ॥5॥

सूर्योदय के समय पीत वर्ण की सन्ध्या यदि हो और वह दक्षिण दिशा का आश्रय करे तथा सौम्य हो तो वैश्यों के लिए जयदायी होती है ॥5॥

उद्गच्छमाने चादित्ये कृष्णसन्ध्या यदा भवेत् ।
अपरेण गता सौम्या शूद्राणां च जयावहा[7] ॥6॥

सूर्योदय के समय कृष्ण वर्ण की सन्ध्या यदि हो और वह पश्चिम दिशा का आश्रय करे तथा सौम्य हो तो शूद्रों के लिए जयकारक होती है ॥6॥

सन्ध्योत्तरा जयं राज्ञः ततः कुर्यात् पराजयम्[8] ।
पूर्वा क्षेमं सुभिक्षं च पश्चिमा च[9] भयंकरा ॥7॥

---

1 वादित्ये मु । 2 वायिनाम् मु० C । 3 वादित्ये मु० । 4 गतो मु० । 5. वा० मु० C । 6 यथावहा मु० B जयकरा: मु० C । 7 यथावहा मु० B. जयकरा मु० C । 8. कुर्यात् दक्षिणा च पराजयम् मु० । 9. तु मु० ।

उत्तर दिशा की सन्ध्या राजा के लिए जयसूचक है और दक्षिण दिशा की सन्ध्या पराजयसूचक होती है। पूर्व दिशा की सन्ध्या क्षेमकुशलसूचक और पश्चिम दिशा की सन्ध्या भयकर होती है ॥7॥

आग्नेयी अग्निमाख्याति नैर्ऋती राष्ट्रनाशिनी।
वायव्या प्रावृषं[1] हन्यात् ईशानी च शुभावहा ॥8॥

अग्निकोण की सन्ध्या अग्निभय कारक, नैर्ऋत्य दिशा की सन्ध्या देश का नाश करने वाली, वायु कोण की सन्ध्या वर्षा की हानिकारक एव ईशान कोण की सन्ध्या शुभ होती है ॥8॥

एवं सम्पत्कराद्येषु[2] नक्षत्रेष्वपि निर्दिशेत्।
जयं सा कुरुते सन्ध्या साधकेषु समुत्थिता ॥9॥

इसी प्रकार सम्पत्ति का लाभ आदि कराने वाले नक्षत्रो मे भी निर्देश करना चाहिए, इस प्रकार की सन्ध्या साधक को जयप्रदा होती है। तात्पर्य यह है कि साधक पुरुष को नक्षत्रो मे भी शुभ सन्ध्या का दिखाई देना जयप्रद होता है ॥9॥

उदयास्तमनेऽर्कस्य यान्यभ्राण्यतो भवेत्।
सम्प्रभाणि सरश्मीनि तानि सन्ध्या विनिर्दिशेत् ॥10॥

सूर्य के उदयास्त के समय बादलो पर जो सूर्य की प्रभा पडती है, उस प्रभा से बादलो मे नाना प्रकार के वर्ण उत्पन्न हो जाते है, उसी का नाम सन्ध्या है ॥10॥

अभ्राणां यानि रूपाणि सौम्यानि विकृतानि[3] च।
सर्वाणि तानि सन्ध्यायां[4] तथैव प्रतिवारयेत्[5] ॥11॥

अभ्र अध्याय मे जो उनके अच्छे और बुरे फल निरूपित किये गये है, उस सबको इस सन्ध्या अध्याय मे भी लागू कर लेना चाहिए ॥11॥

एवमस्तमने काले या सन्ध्या सर्व उच्यते।
लक्षणं यत्[6] तु[7] सन्ध्यानां[8] शुभं[9] वा यदि [10]वाऽशुभम् ॥12॥

उपर्युक्त सूर्योदय की सन्ध्या के लक्षण और शुभाशुभ फलानुसार अस्तकाल

---

1 वर्पण मु०। 2 मयुक्त रागेण मु० C। 3 विनतानि मु० C। 4 सा सन्ध्या मु० C.। 5 प्रतिचारयेत् मु०। 6-7-8 उदये चापि मु० C। 9 स्यात्रगणा शुभाशुभम् मु० C.। 10 च मु०।

की सन्ध्या का भी शुभाशुभ फल अवगत करना चाहिए ॥12॥

स्निग्धवर्णमती सन्ध्या वर्षदा सर्वशो भवेत् ।
[1]सर्वा वीथिगता वाऽपि सुनक्षत्रा[2] विशेषत: ॥13॥

स्निग्ध वर्ण की सन्ध्या वर्षा देने वाली होती है, वीथियो मे प्राप्त और विशेष कर शुभ नक्षत्रो वाली सन्ध्या वर्षा को करती है ॥13॥

[3]पूर्वरात्रपरिवेषा[4] [5]सविद्युत्परिखायुता ।
सरश्मी[6] सर्वत [7] सन्ध्या[8] सद्यो वर्ष प्रयच्छति ॥14॥

पूर्व रात्रि—पिछली बीती हुई रात्रि को परिवेष हो और परिखायुक्त बिजली हो तथा सब ओर रश्मि सहित सन्ध्या हो तो तत्काल वर्षा होती है ॥14॥

प्रतिसूर्यागमस्तत्र [9]शक्रचापरजस्तथा ।
सन्ध्यायां यदि दृश्यन्ते सद्यो वर्ष प्रयच्छति ॥15॥

प्रतिसूर्य का आगमन हो, वहाँ पर इन्द्रधनुष रजोयुक्त सन्ध्या मे दिखलाई पडे तो तत्काल वर्षा होती है ॥15॥

सन्ध्यायामेकरश्मिस्तु यदा सृजति भास्कर ।
उदितोऽस्तमितो चापि विन्द्याद् वर्षमुपस्थितम् ॥16॥

सन्ध्या मे सूर्य उदय या अस्त के समय मे एक रश्मि वाला दिखलाई पडे तो तत्काल वर्षा होती है ॥16॥

आदित्यपरिवेषस्तु सन्ध्यायां यदि दृश्यते ।
वर्षं महद् विजानीयाद् भयं वाऽथ[10] प्रवर्षणे[11] ॥17॥

सन्ध्या मे सूर्य के परिवेष दिखलाई दे तो भारी वर्षा होती है अथवा भय होता है। तात्पर्य यह है कि सन्ध्या काल मे सूर्य का परिवेष दिखलाई देना शुभ नही माना जाता है। इसका फलादेश अच्छा नही होता। वर्षा भी होती है तो अधिक होती है जिससे मनुष्य और पशुओ को कष्ट ही होता है ॥17॥

त्रिमण्डलपरिक्षिप्तो यदि वा[12] पंचमण्डल: ।
सन्ध्यायां दृश्यते सूर्यो महावर्षस्य सम्भव. ॥18॥

---

1 सर्वं मु० C । 2 नक्षत्राणि मु० । 3 सर्वरात्रि मु० । 4 सपरिवेषा मु० C । 5 सविद्युता मु० A । 6 सुरश्मि मु C । 7 सर्वश मु० । 8 सर्वमन्ध्याया मु० C । 9 सध्रुव मु० । 10-11 चा वर्षणे पुन मु० A । 12 अथवा मु० ।

यदि सूर्य सन्ध्या में तीन मंडल अथवा पाँच मडल से घिरा हुआ दिखलाई दे तो महावर्षा का होना संभव होता है ॥18॥

द्योतयन्ती दिशा सर्वा यदा सन्ध्या प्रदृश्यते ।
[1]महामेघांस्तदा विन्द्यात् भद्रबाहुवचो यथा ॥19॥

सब दिशाओ में प्रकाशमान झलझलाहट युक्त सन्ध्या दिखलाई दे तो भारी वर्षा होती है, ऐसा भद्रबाहु का वचन है ॥19॥

सरस्तडागप्रतिमाकूपकुम्भनिभा च या ।
यदा पश्यति[2] सुस्निग्धा सा सन्ध्या वर्षदा स्मृता[3] ॥20॥

सरोवर, तालाब, प्रतिमा, कूप और कुम्भ सदृश स्निग्ध सन्ध्या यदि दिखलाई दे तो वर्षा होगी, ऐसा जानना चाहिए ॥20॥

धूम्रवर्णा बहुच्छिद्रा खण्डपापसमा यदा ।
या सन्ध्या दृश्यते नित्यं सा तु राज्ञो भयंकरा ॥21॥

धूम्र वर्णवाली, छिद्रयुक्त, खण्डरूप सन्ध्या यदि नित्य दिखाई दे तो वह राजा को भयकारक है ॥21॥

द्विपदाश्चतुष्पदा क्रूराः पक्षिणश्च[4] भयंकरा ।
सन्ध्यायां यदि दृश्यन्ते भयमाख्यान्त्युपस्थितम् ॥22॥

क्रूर स्वभाव वाले द्विपद, चतुष्पद और पक्षीगण के सदृश बादल यदि सन्ध्या काल मे दिखलाई दे तो भय उपस्थित होता है ॥22॥

अनावृष्टिर्भयं रोगं दुर्भिक्षं राजविद्रवम् ।
रूक्षायां विकृतायां च [5]सन्ध्यायामभिनिर्दिशेत् ॥23॥

सन्ध्या मे बादल रूक्ष और विकृतिरूप दिखाई दे तो अनावृष्टि, भय, रोग, दुर्भिक्ष और राजा का उपद्रव होता है ॥23॥

विंशतिर्योजनानि स्युर्विद्युद्भाति च सुप्रभा ।
ततोऽधिकं तु स्तनितं[6] अभ्रं यत्रैव दृश्यते ॥24॥

---

1 महामेघ मु० । 2 दृश्यति मु० । 3 शिवा मु० C. । 4 पक्षिणस्तु मु० । 5 सन्ध्यायां विनिर्दिशेत्, मु० । 6 स्वनितम् मु० ।

विशेष नोट—मुद्रित प्रति में श्लोक-सख्या 22, 23 में व्यतिक्रम मिलता है ।

पंचयोजनिका सन्ध्या वायुवर्षं च दूरत: ।
त्रिरात्रं[1] सप्तरात्रं[2] च सद्यो वा पाकमादिशेत् ॥25॥

बिजली की प्रभा बीस योजन—अस्सी कोश पर से दिखाई दे तथा इससे भी अधिक दूरी से बादल दिखलाई दें तो वायु और वर्षा भी इतने ही योजन की दूरी तक दिखलाई देती है। यदि सन्ध्या पाँच योजन—बीस कोश से दिखलाई दे तो वायु और वर्षा भी इतनी ही दूरी से दिखलाई पड़ती है। उपर्युक्त चिह्नों का फल तीन या सात रात्रि मे मिलता है। तात्पर्य यह है कि जब बीस कोस की दूरी से सन्ध्या और अस्सी कोश की दूरी से विद्युत्प्रभा और अभ्र-बादल दिखलाई देते हैं, तब वर्षा भी उस स्थान के चारों ओर अस्सी कोश या बीस कोश की दूरी तक होती है। यह फलादेश तीन या सात दिनो मे प्राप्त होता है ॥24-25॥

उल्कावत् साधनं सर्वं सन्ध्यायामभिनिर्दिशेत् ।
अत: परं प्रवक्ष्यामि मेघानां तन्निबोधत ॥26॥

उल्का अध्याय के समान सन्ध्या के सब लक्षण और फल समझना चाहिए। जिस प्रकार अशुभ और दुर्भाग्य आकृति वाली उल्काएँ देश, समाज, व्यक्ति और राष्ट्र के लिए हानिकारक समझी जाती हैं, उसी प्रकार सन्ध्याएँ भी। अब आगे मेघ का फल और लक्षण निरूपित किया जाता है, उसे अवगत करना चाहिए ॥26॥

इति नैर्ग्रन्थे भद्रबाहुके निमित्ते सन्ध्यालक्षणो नाम सप्तमोऽध्याय. ॥7॥

विवेचन प्रतिदिन सूर्य के अर्धास्त हो जाने के समय से जब तक आकाश मे नक्षत्र भलीभाँति दिखाई न दें तब तक सन्ध्या काल रहता है, इसी प्रकार अर्धोदित सूर्य से पहले तारा दर्शन तक सन्ध्या काल माना जाता है। सन्ध्या समय बार-बार ऊँचा भयंकर शब्द करता हुआ मृग ग्राम के नष्ट होने की सूचना करता है। सेना के दक्षिण भाग मे स्थित मृग सूर्य के सम्मुख महान् शब्द करें तो सेना का नाश समझना चाहिए। यदि पूर्व मे प्रात: सन्ध्या के समय सूर्य की ओर मुख करके मृग और पक्षियो के शब्द से युक्त सन्ध्या दिखलाई पडे तो देश के नाश की सूचना मिलती है। दक्षिण मे स्थित मृग सूर्य की ओर मुख करके शब्द करें तो शत्रुओं द्वारा नगर का ग्रहण किया जाता है। गृह, वृक्ष, तोरण मथन और धूलि के साथ मिट्टी के ढेलों को भी उडाने वाला पवन प्रबल वेग और भयंकर रूखे

1 त्रिरात्रं मु० । 2. सप्तरात्रा मु० ।

शब्द से पक्षियो को आक्रान्त करे तो अशुभकारी सन्ध्या होती है। सन्ध्या काल मे मन्द पवन के प्रवाह से हिलते हुए पलाश अथवा मधुर शब्द करते हुए विहग और मृग निनाद करते हों तो सन्ध्या पूज्य होती है। सन्ध्या काल मे दण्ड, तडित्, मत्स्य, मडल, परिवेष, इन्द्रधनुष, ऐरावत और सूर्य की किरणे इन सबका स्निग्ध होना शीघ्र ही वर्षा को लाता है। टूटी-फूटी, क्षीण, विध्वस्त, विकराल, कुटिल, बाईं ओर को झुकी हुई छोटी-छोटी और मलिन सूर्य-किरणें सन्ध्या काल मे हो तो उपद्रव या युद्ध होने की सूचना समझनी चाहिए। उक्त प्रकार की सन्ध्या वर्षावरोधक होती है। अन्धकारविहीन आकाश मे सूर्य की किरणो का निर्मल, प्रसन्न, सीधा और प्रदक्षिणा के आकार मे भ्रमण करना ससार के मगल का कारण है। यदि सूर्यरश्मियां आदि, मध्य और अन्तगामी होकर चिकनी, सरल, अखण्डित और श्वेत हो तो वर्षा होती है। कृष्ण, पीत, कपिश, रक्त, हरित आदि विभिन्न वर्णों की किरणे आकाश मे व्याप्त हो जायं तो अच्छी वर्षा होती है तथा एक सप्ताह तक भय भी बना रहता है। यदि सन्ध्या समय सूर्य की किरणे ताम्र रग की हो तो सेनापति की मृत्यु, पीले और लाल रग के समान हो तो सेनापति को दुख, हरे रग की होने से पशु और धान्य का नाश, धूम्र वर्ण की होने से गायो का नाश, मंजीठ के समान आभा और रगदार होने से शस्त्र व अग्निभय, पीत हो तो पवन के साथ वर्षा, भस्म के समान होने से अनावृष्टि और मिश्रित एव कल्माष रग होने से वृष्टि का क्षीण भाव होता है। सन्ध्याकालीन धूल दुपहरिया के फूल और अंजन के चूर्ण के समान काली होकर जब सूर्य के सामने आती है, तब मनुष्य सैंकडो प्रकार के रोगो से पीडित होता है। यदि सन्ध्या काल मे सूर्य की किरणे श्वेत रग की हो तो मानव का अभ्युदय और उसकी शान्ति सूचित होती है। यदि सूर्य की किरणे सन्ध्या समय जल और पवन से मिलकर दण्ड के समान हो जायँ, तो यह दण्ड कहलाता है। जब यह दण्ड विदिशाओ मे स्थित होता है तो राजाओ के लिए और जब दिशाओ मे स्थित होता है तो द्विजातियो के लिए अनिष्टकारी है। दिन निकलने से पहले और मध्य सन्धि मे जो दण्ड दिखलाई दे तो शस्त्रभय और रोग-भय करने वाला होता है, शुक्लादि वर्ण का हो तो ब्राह्मणो को कष्टकारक, भयदायक और अर्थविनाश करने वाला होता है।

आकाश मे सूर्य के ढकने वाले दही के समान किनारेदार नीले मेघ को अभ्रतरु कहते है। यह नीले रग का मेघ यदि नीचे की ओर मुख किये हुए मालूम पडे तो अधिक वर्षा करता है। अभ्रतरु शत्रु के ऊपर आक्रमण करने वाले राजा के पीछे-पीछे चलकर अकस्मात् शान्त हो जाय तो युवराज और मन्त्री का नाश होता है।

नील कमल, वैडूर्य और पद्मकेसर के समान कान्तियुक्त, वायुरहित सन्ध्या सूर्य की किरणो को प्रकाशित करे तो घोर वर्षा होती है । इस प्रकार की सन्ध्या का फल तीन दिनो मे प्राप्त हो जाता है । यदि सन्ध्या समय गन्धर्वनगर, कुहासा और धूम छाये हुए दिखलाई पडे तो वर्षा की कमी होती है । सन्ध्याकाल मे शस्त्र धारण किए हुए नर रूपधारी के समान मेघ सूर्य के सम्मुख छिन्न-भिन्न हो तो शत्रुभय होता है । शुक्लवर्ण और शुक्ल किनारे वाले मेघ सन्ध्या समय मे सूर्य को आच्छादित करें तो वर्षा होने का योग समझना चाहिए । सूर्य के उदयकाल मे शुक्ल वर्ण की परिधि दिखलाई दे तो राजा को विपद् होती है, रक्तवर्ण हो तो सेना की और कनकवर्ण की हो तो बल और पुरुषार्थ की वृद्धि होती है । प्रात. कालीन सन्ध्या के समय सूर्य के दोनो ओर की परिधि, यदि शरीर वाली हो जाय तो बहुत जल-वृष्टि होती है और सब परिधि दिशाओ को घेर ले तो जल का कण भी नही बरसता । सन्ध्या काल मे मेघ, ध्वज, छत्र, पर्वत, हस्ती और घोडे का रूप धारण करें तो जय का कारण है और रक्त के समान लाल हो तो युद्ध का कारण होते है । पलाल के धुएँ के समान स्निग्ध मूर्तिधारी मेघ राजाओ के बल को बढाते है । सन्ध्या काल मे सूर्य का प्रकाश यदि तीक्ष्ण आकार हो या नीचे की ओर झुके आकार का हो तो मगल होता है । सूर्य के सम्मुख होकर पक्षी, गीदड और मृग सन्ध्याकाल मे शब्द करे तो सुभिक्ष का नाश होता है, प्रजा मे आपस मे सघर्ष होता है और अनेक प्रकार से देश मे कलह एव उपद्रव होते है ।

यदि सूर्योदय काल मे दिशाएँ पीत, हरित और चित्र-विचित्र वर्ण की मालूम हो तो सात दिन मे प्रजा मे भयकर रोग, नील वर्ण की मालूम हो तो समय पर वर्षा और कृष्ण वर्ण की मालूम हो तो बालको मे रोग फैलता है । यदि साय-कालीन सन्ध्या के समय दक्षिण दिशा से मेघ आते हुए दिखलाई पडें तो आठ दिनो तक वर्षाभाव, पश्चिम दिशा से आते हुए मालूम पड़ें तो पाँच दिनो का वर्षाभाव, उत्तर दिशा से आते हुए मालूम पडें तो खूब वर्षा और पूर्व दिशा से आते हुए मेघ गर्जन सहित दिखलाई पडे तो आठ दिनो तक घनघोर वर्षा होने की सूचना मिलती है । प्रात कालीन और सायकालीन सन्ध्याओ के वर्ण एक समान हो तो एक महीने तक मशाला और तिलहन का भाव सस्ता, सुवर्ण और चाँदी का भाव महँगा तथा वर्ण परिवर्तन हो तो सभी प्रकार की वस्तुओ के भाव नीचे गिर जाते हैं ।

ज्येष्ठ कृष्ण प्रतिपदा की प्रात कालीन सन्ध्या श्वेत वर्ण की हो तो आषाढ मे श्रेष्ठ वर्षा, लाल वर्ण की हो तो आषाढ मे वर्षा का अभाव और श्रावण मे स्वल्प वर्षा, पीत वर्ण की हो तो भी आषाढ मे समयोचित वर्षा एव विचित्र वर्ण की हो तो आगामी वर्षा ऋतु मे सामान्य रूप से अच्छी वर्षा होती है । उक्त तिथि को

सायंकालीन सन्ध्या श्वेत या रक्त वर्ण की हो तो सात दिन के उपरान्त वर्षा एव मिश्रित वर्ण की हो तो वर्षा ऋतु में अच्छी वर्षा होती है। ज्येष्ठ कृष्ण द्वितीया को प्रातःकालीन सन्ध्या श्वेत वर्ण की हो तो वर्षा ऋतु मे अच्छी वर्षा होती है। ज्येष्ठ कृष्ण द्वितीया प्रातःकालीन सन्ध्या श्वेतवर्ण की हो और पूर्व दिशा से बादल घुमड़कर एकत्र होते दिखलाई पड़ें तो आषाढ़ मे वर्षा का अभाव और वर्षा ऋतु में भी अल्प वर्षा तथा सायंकालीन सन्ध्या मे बादलो की गर्जना सुनाई पड़े या बूँदा-बूँदी हो तो घोर दुर्भिक्ष का अनुमान करना चाहिए। उक्त प्रकार की सन्ध्याएँ व्यापार में लाभ सूचित करती हैं। सट्टे के व्यापारियो के लिए उत्तम फल देती हैं। वस्तुओ के भाव प्रतिदिन ऊँचे उठते जाते हैं। सभी चिकने पदार्थ और तिलहन आदि का भाव कुछ सस्ता होता है। उक्त सन्ध्या का फल एक महीने तक प्राप्त होता है। यह सन्ध्या जनता मे रोगो की उत्पन्नकारक होती है। ज्येष्ठ कृष्ण तृतीया का क्षय हो और इस दिन चतुर्थी पचमी तिथि से विद्ध हो तो उक्त तिथि की प्रातःकालीन सन्ध्या अत्यन्त महत्त्वपूर्ण होती है। यदि इस प्रकार की सन्ध्या मे अर्घोदय के समय सूर्य के चारो ओर नीलवर्ण का मडलाकार परिवेष दिखलाई पडे तो माघ और फाल्गुन मास मे भूकम्प होने की सूचना समझनी चाहिए। इन दोनो महीनो मे भूकम्प के साथ और भी प्रकार की अनिष्ट घटनाएँ घटित होती हैं। अनेक स्थानो पर जनता मे सघर्ष होता है, गोलियाँ चलती हैं और रेल या विमान दुर्घटनाएँ भी घटित होती है। आकाश मे ओले बरसते है तथा दुर्घटना द्वारा किसी प्रसिद्ध व्यक्ति की मृत्यु होती है। एक बार राज्य मे क्रान्ति होती है तथा ऐसा लगता है कि राज्य-परिवर्तन ही होने वाला है। चैत्र मे जाकर जनता मे आत्म-विश्वास उत्पन्न होता है तथा सभी लोग प्रेम और श्रद्धा के साथ कार्य करते है। यदि उक्त प्रकार की सन्ध्या का वर्ण रक्त और श्वेत मिश्रित हो तो यह सन्ध्या सुकाल तथा समयानुकूल वर्षा और अमन-चैन की सूचना देती है। यदि उक्त प्रकार की सन्ध्या को उत्तर दिशा से सुमेरु पर्वत के आकार के बादल उठें और वे सूर्य को आच्छादित कर ले तो विश्व मे शान्ति समझनी चाहिए। सायंकालीन सन्ध्या यदि इस दिन हँसमुख मालूम पडे तो आषाढ़ मे खूब वर्षा और रोती हुई मालूम पड़े तो वर्षाभाव जानना चाहिए।

ज्येष्ठ कृष्णा षष्ठी को आश्लेषा नक्षत्र हो और सायंकालीन सन्ध्या रक्त-वर्ण भास्वर रूप हो तो आगामी वर्ष अच्छी वर्षा होने की सूचना समझनी चाहिए। इस सन्ध्या के दर्शक मीन, कर्क और मकर राशि वाले व्यक्तियो को कष्ट होता है और अवशेष राशि वाले व्यक्तियो का वर्ष आनन्दपूर्वक व्यतीत होता है। प्रात.-कालीन सन्ध्या इस तिथि की रक्त, श्वेत और पीतवर्ण की उत्तम मानी गई है और अवशेष वर्ण की सन्ध्या हानिकारक होती है। ज्येष्ठ कृष्ण सप्तमी को उदय-

कालीन सन्ध्या में सिंह की आकृति के बादल दिखलाई पड़ें तो वर्षाभाव और निरभ्र आकाश हो तो यथोचित वर्षा तथा श्रेष्ठ फसल उत्पन्न होती है। साय सन्ध्या में अग्निकोण की ओर रक्त वर्ण के बादल तथा उत्तर दिशा में श्वेत बर्ण के बादल सूर्य को आच्छादित कर रहे हो तो इसका फल देश के पूर्व भाग मे यथोचित जलवृष्टि और पश्चिम भाग मे वर्षा की कमी तथा सुवर्ण, चाँदी, मोती, माणिक्य, हीरा, पद्मराग, गोमेद आदि रत्नों की कीमत तीन दिनो के पश्चात् ही बढती है। वस्त्र और खाद्यान्न का भाव कुछ नीचे गिरता है। ज्येष्ठ कृष्ण अष्टमी को भी प्रात: सन्ध्या निरभ्र और निर्मल हो तो आषाढ़ कृष्ण पक्ष मे वर्षा होती है। यदि यह सन्ध्या मेघाच्छन्न हो तो बर्षाभाव रहता है तथा आषाढ़ का महीना प्राय सूखा निकल जाता है। उक्त तिथि को साय सन्ध्या मिश्रित वर्ण हो तो फसल उत्तम होती है तथा व्यापार मे लाभ होता है। ज्येष्ठ कृष्णा नवमी की प्रात सन्ध्या रक्त के समान लाल वर्ण की हो तो घोर दुर्भिक्ष की सूचक तथा सेना मे विद्रोह कराने वाली होती है। सायकालीन सन्ध्या उक्त तिथि को श्वेत वर्ण की हो तो सुभिक्ष और सुकाल की सूचना देती है। यदि उक्त तिथि को विशाखा या शत-भिषा नक्षत्र हो तथा इस तिथि का क्षय हो तो इस सन्ध्या की महत्ता फलादेश के के लिए अधिक बढ जाती है। क्योंकि इसके रग, आकृति और सौम्य या दुर्भग द्वारा अनेक प्रकार के स्वभाव-गुणानुसार फलादेश निरूपित किये गये हैं। यदि ज्येष्ठ कृष्ण दशमी की प्रात कालीन सन्ध्या स्वच्छ और निरभ्र हो तो आषाढ़ मे खूब वर्षा एव श्रावण मे साधारण वर्षा होती है। साय सन्ध्या स्वच्छ और निरभ्र हो तो सुभिक्ष की सूचना देती है। ज्येष्ठ कृष्णा एकादशी को प्रात सन्ध्या धूम्र वर्ण की मालूम हो तो भय, चिन्ता और अनेक प्रकार के रोगो की सूचना समझनी चाहिए। इस तिथि की सायं सन्ध्या स्वच्छ और निरभ्र हो तो आषाढ मे वर्षा की सूचना समझ लेनी चाहिए। ज्येष्ठ कृष्णा द्वादशी की प्रात.सन्ध्या भास्वर हो और सायं सन्ध्या मेघाच्छन्न हो तो सुभिक्ष की सूचना समझनी चाहिए। ज्येष्ठ कृष्णा त्रयोदशी की प्रात: सन्ध्या निरभ्र हो तथा साय सन्ध्या काल में परिवेष दिखलाई पडे तो श्रावण मे वर्षा, भाद्रपद मे जल की कमी एवं वर्षा ऋतु मे खाद्यान्नो की महँगी समझ लेनी चाहिए। यदि ज्येष्ठ चर्तुदशी की सन्ध्याएँ परिघ या परिधि से युक्त हों तथा सूर्य का त्रिमंडलाकार परिवेष दिखलाई पड़े तो महान् अनिष्ट की सूचना समझनी चाहिए। ज्येष्ठ कृष्णा अमावस्या और शुक्ला प्रतिपदा इन दोनों तिथियो की दोनो ही सन्ध्याएँ छिद्र युक्त विकृत आकृति वाली और परिवेष या परिघयुक्त दिखलाई दें तो वर्षा साधारण होती है और फसल भी साधारण ही होती है। इस प्रकार की सन्ध्या तिलहन, गुड़ और वस्त्र की विशेष उपज की सूचना देती है। ज्येष्ठ मास की अवशेष तिथियो की सन्ध्या के वर्ण-

आकृति के अनुसार फलादेश अवगत करना चाहिए। आषाढ मास मे कृष्ण प्रतिपदा की सन्ध्या विशेष महत्वपूर्ण हैं। इस दिन दोनो ही सन्ध्या स्वच्छ, निरभ्र और सौम्य दिखलाई पड़ें तो सुभिक्ष नियमत होता है। नागरिको मे शान्ति और सुख व्याप्त होता है। यदि इस दिन की किसी भी सन्ध्या मे इन्द्रधनुष दिखलाई पडे तो आपसी उपद्रवो की सूचना समझनी चाहिए। आषाढ मास की अवशेष तिथियो की सन्ध्या का फल पूर्वोक्त प्रकार से ही समझना चाहिए। स्वच्छ, सौम्य और श्वेत, रक्त, पीत और नील वर्ण की सन्ध्या अच्छा फल सूचित करती है और मलिन, विकृत आकृति तथा छिद्र युक्त सन्ध्या अनिष्ट फल सूचित करती है।

अष्टमोऽध्यायः

अत परं प्रवक्ष्यामि मेघनामपि लक्षणम्।
प्रशस्तमप्रशस्तं च यथावदनुपूर्वश ॥1॥

सन्ध्या का लक्षण और फल निरूपण करने के उपरान्त अब मेघो के लक्षण और फल का प्रतिपादन करते है। ये दो प्रकार के होते है—प्रशस्त—शुभ और अप्रशस्त—अशुभ ॥1॥

यदांजनिभो मेघ[1] शान्तायां दिशि दृश्यते।
स्निग्धो मन्तगतिश्चापि तदा विन्द्याज्जलं शुभम् ॥2॥

यदि अंजन के समान गहरे काले मेघ पश्चिम दिशा मे दिखलाई पड़ें और ये चिकने तथा मन्द गति वाले हो तो भारी जल-वृष्टि होती है ॥2॥

[2]पीतपुष्पनिभो यस्तु यदा मेघः समुत्थितः।
शान्तायां यदि दृश्येत स्निग्धो वर्षं तदुच्यते ॥3॥

पीले पुष्प के समान स्निग्ध मेघ पश्चिम दिशा मे स्थित हो तो जल की वृष्टि तत्काल कराते है। इस प्रकार के मेघ वर्षा के कारक माने जाते है ॥3॥

---

1 देव मु०। 2 तीन और चार सख्या वाले श्लोक मुद्रित प्रति मे नहीं है।

रक्तवर्णो यदा मेघ शान्तायां दिशि दृश्यते।
स्निग्धो मन्तगतिश्चापि तदा विन्द्याज्जलं शुभम् ॥4॥

लाल वर्ण के तथा स्निग्ध और मन्द गति वाले मेघ पश्चिम दिशा मे दिखलाई दें तो अच्छी जल-वृष्टि होती है ॥4॥

शुक्लवर्णो यदा मेघ शान्तायां दिशि दृश्यते।
स्निग्धो मन्दगतिश्चापि निवृत्तः[1] स जलावह.[2] ॥5॥

श्वेत वर्ण के स्निग्ध और मन्द गति वाले पश्चिम दिशा मे दिखलाई दें तो जितना जल उनमें रहता है उतनी वर्षा करके वे निवृत्त हो जाते है ॥5॥

स्निग्धा सर्वेषु वर्णेषु स्वां दिशं संसृता यदा।
[3]स्वर्णविजयं कुर्युर्दिक्षु शान्तासु ये स्थिता: ॥6॥

यदि पश्चिम दिशा मे स्थित मेघ स्निग्ध हो तो सब वर्णो की विजय करते है और अपने-अपने वर्ण के अनुसार अपनी-अपनी दिशा मे स्निग्ध मेघ स्थित हो तो वर्ण के अनुसार जय करते है ॥6॥

जाति	ब्राह्मण	क्षत्रिय	वैश्य	शूद्र
जातिवर्ण	श्वेत	रक्त	पीत	कृष्ण
जातिदिशा	उत्तर	पूर्व	दक्षिण	पश्चिम

यथास्थितं शुभं [4]मेघमनुपश्यन्ति[5] पक्षिण:[6]।
जलाशयः जलधरास्तदा विन्द्याज्जलं शुभम्[7] ॥7॥

यदि शुभ मेघ पक्षिगण और जलाशय रूप दिखलाई दे तो अच्छी वर्षा होती है और यह वर्षा फसल को अधिक लाभ पहुंचाती है ॥7॥

स्निग्धवर्णाश्च ते (ये) मेघा स्निग्धाश्च ते (ये) सदा।
मन्दगा: सुमुहूर्ताश्च ये (ते) सर्वत्र जलावहा: ॥8॥

यदि स्निग्ध—सौम्य, मृदुल शब्द वाले, मन्द गति वाले और उत्तम मुहूर्त वाले मेघ दिखलाई पड़ें तो सर्वत्र वर्षा होती है ॥8॥

सुगन्धगन्धा ये मेघा सुस्वरा:[8] स्वादुसंस्थिता.।
मधुरोदकाश्च[9] ये मेघा[10] जलाय[11] जलदास्तथा ॥9॥

---

1 विज्ञेय मु० C । 2 जयावह मु० C । 3 सवर्ण मु० । 4 अभ्र मु० C । 5 पश्यति मु० C । 6 दक्षिण मु० C । 7. शिवम् मु० । 8. मुखरा मु० A सुस्विना: मु० C 9 मधुरतोया मु० C । 10 ज्ञेया मु० C । 11 जलदा मु० C. ।

सुगन्ध—केशर और कस्तूरी के समान गन्ध वाले, मनोहर गर्जन करने वाले, स्वादु रस वाले, मीठे जल वाले मेघ समुचित जल की वर्षा करते हैं ॥9॥

मेघा[1] यदाऽभिवर्षन्ति प्रयाणे पृथिवीपतेः ।
मधुरा[2] मधुरेणैव[3] तदा सन्धिर्भविष्यति ॥10॥

राजा के आक्रमण के समय मनोहर और मधुर शब्द वाले मेघ वर्षा करें तो युद्ध न होकर परस्पर सन्धि हो जाती है ॥10॥

पृष्ठतो वर्षतं श्रेष्ठं[4] अग्रतो विजयंकरम् ।
मेघा कुर्वन्ति ये दूरे सगर्ज्जित-सविद्युत ॥11॥

राजा के प्रयाण के समय यदि मेघ दूरी पर गर्जना और बिजली सहित वृष्टि करें और पृष्ठ भाग पर हो तो श्रेष्ठ जानना चाहिए और अग्र भाग पर हो तो विजयप्रद समझना चाहिए ॥11॥

मेघशब्देन महता यदा निर्याति पार्थिव. ।
पृष्ठतो गर्जमानेन[5] तदा जयति दुर्जयम् ॥12॥

यदि राजा के प्रयाण के समय पीछे के मार्ग से मेघ बडी गर्जना करे तो दुर्जय शत्रु पर भी विजय सभव हो होती है ॥12॥

मेघशब्देन महता यदा तिर्यग् प्रधावति ।
न तत्र जायते सिद्धिरुभयो.[6] परिसैन्ययो[7] ॥13॥

यदि आक्रमण काल मे मेघ सम्मुख या पृष्ठ भाग मे गर्जना न कर तिर्यक् बायें या दायें भाग गर्जना करें तो यायी और स्थायी इन दोनो ही सेनाओ को सिद्धि नही होती अर्थात् दोनो ही सेनाएँ परस्पर मे भिडन्त करती हुई असफल रहती हैं ॥13॥

मेघा यत्राभिवर्षन्ति स्कन्धावार[8] समन्तत: ।
सनायका[9] विद्रवते[10] सा [11]चमूर्नात्र संशय: ॥14॥

मेघ जिस स्थान पर मूसलाधार पानी वर्षावें वहाँ पर नायक और सेना दोनो ही रक्तरजित होते है, इसमें कुछ भी सन्देह नही हैं ॥14॥

---

1 सद्यो मु० A । 2 मधुरान् । 3 सुस्वरानेव । 4 श्रेष्ठि मु० A मेघ मु० C । 5 गजमान मु० A नद्दमा । 6 युद्धमुभयो मु० । 7 परिसैन्ययो मु० । 8 न्धासारे मु० A, । 9 का पि मु० C । 10. वृष्ळयम् मु० C । 11 चमूं मु० C ।

रूक्षा वाताः प्रकुर्वन्ति व्याधयो विष्टगन्धिताः ।
कुशब्दाश्च विवर्णाश्च मेघो वर्षं न कुर्वते ॥15॥

रूक्ष वायु विष्टा गन्ध के समान गन्ध वाली बहती हो तो व्याधि उत्पन्न करती है। कुशब्द अर्थात् कठोर शब्द और बिकृत वर्ण वाली हो तो मेघ जल-वृष्टि नहीं करते ॥15॥

सिंहा[1] शृगालमार्जारा व्याघ्रमेघाः [2]द्रवन्ति ये[3] ।
महता भीम[4] शब्देन रुधिरं वर्षन्ति ते घना. ॥16॥

जो मेघ सिंह, सियार, बिल्ली, चीता की आकृति वाले होकर बरसें और भारी कठोर वर्षा करें तो इस प्रकार के मेघो का फल रुधिर की वर्षा करना है ॥16॥

पक्षिणश्चापि क्रव्यादा वा पश्यन्ति[5] समुत्थिताः ।
मेघास्तदाऽपि रुधिरं[6] [7]वर्षं वर्षन्ति ते घनाः ॥17॥

यदि मासभक्षी पक्षियो—गृद्ध आदि पक्षियो की आकृति वाले मेघ तथा उडते हुए पक्षियो की आकृति वाले मेघ दिखलाई पडें तो वे रुधिर की वर्षा करते है ॥17॥

अनावृष्टिभयं घोरं दुर्भिक्षं मरण[8] तथा ।
निवेदयन्ति ते मेघा ये भवन्तीदृशा[9] दिवि[10] ॥18॥

उपर्युक्त अशुभ आकृतिवाले मेघ अनावृष्टि, घोरभय, दुर्भिक्ष, मृत्यु आदि फलो को करने वाले होते हैं। अर्थात् मासभक्षी पशु और मासभक्षी पक्षियो की आकृतिवाले मेघ अत्यन्त अशुभ सूचक होते हैं ॥18॥

तिथौ [11]मुहूर्त्तकरणे नक्षत्रे शकुने[12] शुभे[13] ।
सम्भवन्ति यदा मेघाः पापदास्ते भयंकराः ॥19॥

अशुभ तिथि, मुहूर्त, करण, नक्षत्र और शकुन मे यदि मेघ आकाश मे आच्छादित हो तो भयकर पाप का फल देने वाले होते हैं ॥19॥

एवं लक्षणसंयुक्ताश्चमूं वर्षन्ति ये घनाः ।
चमूं सनायकां सर्वां हन्तुमाख्यान्ति सर्वशः ॥20॥

---

1 सिंघ मु० A. । 2 रवन्ति मु० A । 3. यत् मु० A । 4 मेघ मु० A. B. D । 5. पश्यन्ते मु० B वास्यन्ते मु० C वाश्यन्ते मु० D । 6 रुधिर मु० B । 7. वर्षन्ते तत्र वर्षने मु० । 8. मारक मु० A । 9 भवन्ति दृशा मु० B D । 10 भुवि मु० A । 11 मुहूर्ते मु० A D । 12 करणे मु० C । 13 तथा मु० A ।

यदि उपर्युक्त आकृति और लक्षणवाले मेघ युद्धस्थल मे स्थित सेना पर बहुत वर्षा करें तो सेना और उसके नायक सभी मारे जाते हैं ॥20॥

रक्तं पांशुः सधूमं वा क्षौद्र[1] केशाऽस्थिशर्करा:[2]।
मेघाः वर्षन्ति विषये यस्य राज्ञो हतस्तु सः ॥21॥

धूलि, धूम्र, मधु, केश, अस्थि और खाड के समान लाल वर्ण के मेघ वर्षा करें तो देश का राजा मारा जाता है ॥21॥

क्षार वा कटुकं वाऽथ [3]दुर्गन्धं [4]सस्यनाशनम् ।
यस्मिन् देशेऽभिवर्षन्ति मेघा देशो[5] विनश्यति[6] ॥22॥

जिस देश मे धान्य को नाश करनेवाले क्षार—लवणयुक्त, कटुक—चरपरे रस और दुर्गन्धित रस की मेघ वर्षा करे तो उस देश का नाश होता है ॥22॥

प्रयात[7] पार्थिव यत्र मेघो वित्रास्य वर्षति ।
वित्रस्तो बध्यते राजा विपरीतस्तदाऽपरे ॥23॥

राजा के प्रयाण के समय त्रासयुक्त मेघ बरसे तो राजा का त्रासयुक्त वध होता है । यदि त्रासयुक्त वर्षा न हो तो ऐसा नही होता ॥23॥

सर्वत्रैव प्रयाणेन नृपो येनाभिषिच्यते ।
रुधिरादि[8]-विशेषेण सर्वघाताय निर्दिशेत् ॥24॥

राजा के आक्रमण के समय वर्षा मे देश का सिचन हो तो सबो के घात की सम्भावना समझनी चाहिए ॥24॥

मेघाः सविद्युतश्चैव[9] सुगन्धाः सुस्वराश्च[10] ये ।
सुवेषाश्च[11] सुवाताश्च[12] [13]सुधियाश्च सुभिक्षदाः ॥25॥

बिजली सहित, सुगन्धित, मधुर स्वर वाले, सुन्दर वर्ण और आकृति वाले, शुभ घोषणा वाले और अमृत समान वर्षा करने वाले मेघो को सुभिक्ष का सूचक समझना चाहिए ॥25॥

अभ्राणां यानि रूपाणि सन्ध्यायामपि यानि च ।
मेघेषु[14] तानि सर्वाणि समासव्यासतो विदु: ॥26॥

---

1 रौद्र मु० B । 2 स्नर्कंग मु० B । 3 दूर मु० B । 4 यस्या मु० A । 5 मेघादेशे । 6 विनश्यन्ति मु० C. । 7 प्रयान्त मु० । 8 नृप सरुधिराज्य च मु० A B D । 9. सौक्या मु० C । 10 सुरभा मु० C । 11 अवेषा मु० C । 12 सुवेषा मु० C । 13 सुधी पार्श्वं मु० B. सुधाया मु० D स्वसना मु० C । 14. अमेघे मु० C ।

बादल, उल्का और सन्ध्या का जैसा निरूपण किया गया है, उसी प्रकार का सक्षेप और विस्तार से मेघो का भी समझना चाहिए ॥26॥

उल्कावत् साधनं [1]ज्ञेयं मेघेष्वपि [2]तदादिशेत् ।
अत परं प्रवक्ष्यामि [3]वातानामपि लक्षणम् ॥27॥

इस मेघवर्णन अध्याय का भी उल्का की तरह ही फलादेश अवगत कर लेना चाहिए। इसके पश्चात् अब आगे वायु-अध्याय का निरूपण किया जायगा ॥27॥

इति नैर्ग्रन्थे भद्रबाहुके निमित्ते मेघकाण्डो नामाष्टमोऽध्यायः ।

विवेचन—मेघो की आकृति, उनका काल, वर्ण, दिशा प्रभृति के द्वारा शुभाशुभ फल का निरूपण मेघ-अध्याय मे किया गया है। यहाँ एक विशेष बात यह है कि मेघ जिस स्थान मे दिखलाई पडते है उसी स्थान पर यह फल विशेष रूप से घटित होता है। इस अध्याय का प्रयोजन भी वर्षा, सुकाल, फसल की उत्पत्ति इत्यादि के सम्बन्ध मे ही विशेष रूप से फल बतलाना है। यो तो पहले के अध्यायो द्वारा भी वर्षा और सुभिक्ष सम्बन्धी फलादेश निरूपित किया गया है, पर इस अध्याय मे भी यही फल प्रतिपादित है। मेघो की आकृतियाँ चारो वर्ण के व्यक्तियो के लिए भी शुभाशुभ बतलाती है। अत सामाजिक और वैयक्तिक इन दोनो ही दृष्टिकोणो से मेघो के फलादेश का विवेचन किया जाएगा।

मेघो का विचार ऋतु के क्रमानुसार करना चाहिए। वर्षा ऋतु के मेघ केवल वर्षा की सूचना देते है। शरद् ऋतु के मेघ शुभाशुभ अनेक प्रकार का फल सूचित करते है। ग्रीष्म ऋतु के मेघो से वर्षा की सूचना तो मिलती ही है, पर ये विजय, यात्रा, लाभ, अलाभ, इष्ट, अनिष्ट, जीवन, मरण आदि को भी सूचित करते हैं। मेघो की भी भाषा होती है। जो व्यक्ति मेघो की भाषा—गर्जना को समझ लेते हैं, वे कई प्रकार के महत्त्वपूर्ण फलादेशो की जानकारी प्राप्त कर सकते हैं। पशु, पक्षी और मनुष्यो के समान मेघो की भी भाषा होती है और गर्जन-तर्जन द्वारा अनेक प्रकार का शुभाशुभ प्रकट हो जाता है। यहाँ सर्वप्रथम ग्रीष्म ऋतु के मेघो का निरूपण किया जाएगा। ग्रीष्म ऋतु का समय फाल्गुन से ज्येष्ठ तक माना जाता है। यदि फाल्गुन के महीने मे अजन के समान काले-काले मेघ दिखलाई पडें तो इनका फल दर्शको के लिए शुभ, यशप्रद और आर्थिक लाभ देने वाला होता है। जिस स्थान पर उक्त प्रकार के मेघ दिखलाई पडते हैं, उस स्थान पर अन्न का भाव सस्ता होता है, व्यापारिक वस्तुओ मे हानि तथा भोगोपभोग की वस्तुएँ प्रचुर

1 सर्व मु० C । 2. समा मु० C । 3 धात० मु० B D ।

परिमाण मे उपलब्ध होती हैं। वस्त्र के भाव साधारण रूप से कुछ ऊँचे चढ़ते हैं। स्निग्ध, श्वेत और मनोहर आकृति वाले मेघ जनता मे शान्ति, सुख, लाभ और हर्ष सूचक होते हैं। व्यापारियो को वस्तुओ मे साधारणतया लाभ होता है। ग्रीष्म ऋतु के अवशेष महीनों मे सजल मेघ जहाँ दिखलाई पड़ें उस प्रदेश मे दुर्भिक्ष, अन्न की फसल की कमी, जनता को आर्थिक कष्ट एव आपस मे मनमुटाव उत्पन्न होता है। चैत्र मास के कृष्ण पक्ष के मेघ साधारणतया जनता मे उल्लास, आगामी खेती का विकास और सुभिक्ष की सूचना देते हैं। चैत्र कृष्ण प्रतिपदा को वर्षा करने वाले मेघ जिस क्षेत्र मे दिखलाई पडे उस क्षेत्र मे आर्थिक संकट रहता है। हैजा और चेचक की बीमारी विशेष रूप से फैलती है। यदि इस दिन रक्त वर्ण के मेघ आकाश मे सघर्ष करते हुए दिखलाई पडे तो वहाँ सामाजिक संघर्ष होता है। चैत्र शुक्ला प्रतिपदा को भी मेघों की स्थिति का विचार किया जाता है। यदि इस दिन गर्जन-तर्जन करते हुए मेघ आकाश मे बूंदा-बूँदी करे तो उस प्रदेश के लिए भयदायक समझना चाहिए। फसल की उत्पत्ति भी नही होती है तथा जनता मे परस्पर सघर्ष होता है। चैत्री पूर्णिमा को पीतवर्ण के मेघ आकाश मे घूमते हुए दिखलाई पड़ें तो आगामी वर्ष उस प्रदेश मे फसल की क्षति होती है तथा पन्द्रह दिनो तक अन्न का भाव महंगा रहता है। सोना और चाँदी के भाव मे घटा-बढी होती है।

शरद् ऋतु के मेघ वर्षा और सुभिक्ष के साथ उस स्थान की आर्थिक और सामाजिक उन्नति-अवनति की भी सूचना देते हैं। यदि कार्तिक की पूर्णिमा को मेघ वर्षा करें तो उस प्रदेश की आर्थिक स्थिति दृढतर होती है, फसल भी उत्तम होती है तथा समाज मे शान्ति रहती है। पशुधन की वृद्धि होती है, दूध और घी की उत्पत्ति प्रचुर परिमाण मे होती है। उस प्रदेश के व्यापारियो को भी अच्छा लाभ होता है। जो व्यक्ति कार्तिकी पूर्णिमा को नील रंग के बादलो को देखता है, उसके उदर मे भयकर पीडा तीन महीनो के भीतर होती है। पीत वर्ण के मेघ उक्त दिन को दिखलाई पड़े तो किसी स्थान विशेष से आर्थिक लाभ होता है। श्वेत वर्ण के मेघ के दर्शन से व्यक्ति को सभी प्रकार के लाभ होते हैं। मार्गशीर्ष मास की कृष्ण प्रतिपदा को प्रात काल वर्षा करने वाले मेघ गोधूम वर्ण के दिखलाई पडें तो उस प्रदेश मे महामारी की सूचना अवगत करनी चाहिए। इस दिन कोई व्यक्ति स्निग्ध और सौम्य मेघो का दर्शन करे तो अपार लाभ, रूक्ष और विकृत वर्ण के मेघो का दर्शन करे तो आर्थिक क्षति होती है। उक्त प्रकार के मेघ वर्षा की भी सूचना देते है। आगामी वर्ष मे उस प्रदेश मे फसल अच्छी होती है। विशेषत. गन्ना, कपास, धान, गेहूँ, चना और तिलहन की उपज अधिक होती है। व्यापारियो के लिए उक्त प्रकार के मेघ का दर्शन लाभप्रद होता है। मार्गशीर्ष

कृष्णा अमावस्या को छिद्र युक्त मेघ बूंदा-बूंदी के साथ प्रातःकाल से सन्ध्याकाल तक अवस्थित रहे तो उस प्रदेश मे वर्तमान वर्ष मे फसल अच्छी तथा आगामी वर्ष मे अनिष्टकारक होती है। इस महीने की पूर्णिमा को सन्ध्या समय रक्त-पीत वर्ण के मेघ दिखलाई पडें तथा गर्जन के साथ वर्षण भी करें तो निश्चय से उस प्रदेश मे आगामी आषाढ मास मे सम्यक् वर्षा होती है तथा वहाँ के निवासियो को सन्तोष और शान्ति की प्राप्ति होती है। यदि उक्त दिन प्रात.काल आकाश निरभ्र रहे तो आगामी वर्ष वर्षा साधारण होती है तथा फसल भी साधारण ही होती है। जो व्यक्ति उक्त तिथि को अंजनवर्ण के समान मेघो का दर्शन प्रात.काल ही करता है, उसे राजसम्मान प्राप्त होता है, तथा किसी प्रकार की उपाधि भी उसे प्राप्त होती है। रक्त वर्ण के मेघ का दर्शन इस दिन व्यक्तिगत रूप से अनिष्ट-कारक माना गया है। यदि कोई व्यक्ति उक्त तिथि को मध्य रात्रि मे सछिद्र आकाश का दर्शन करे तथा दर्शन करने के कुछ ही समय उपरान्त वर्षा होने लगे तो व्यक्तिगत रूप से इस प्रकार के मेघ का दर्शन बहुत उत्तम होता है। पृथ्वी से निधि प्राप्त होती है तथा धार्मिक कार्यों के करने मे विशेष प्रवृत्ति बढती है। ससार मे जिन-जिन स्थानो पर उक्त तिथि को वर्षा करते हुए मेघ देखे जाते है, उन-उन स्थानो पर सुभिक्ष होता है तथा वर्तमान और आगामी दोनो ही वर्ष श्रेष्ठ समझे जाते है। पौष मास की अमावस्या को आकाश मे बिजली चमकने के उपरान्त वर्षा करते हुए मेघ दिखलाई पडे तो उत्तम फल होता है। इस दिन श्वेत वर्ण के मेघो का दर्शन बहुत शुभ माना जाता है। पौष मास की अमावस्या को यदि सोमवार, शुक्रवार और गुरुवार हो और इस दिन मेघ आकाश मे घिरे हुए हो तो जल की वर्षा आगामी वर्ष अच्छी होती है। फसल भी उत्तम होती है और प्रजा भी सुखी रहती है। यदि यही तिथि शनिवार, रविवार और मगलवार को हो तथा आकाश निरभ्र हो या सछिद्र विकृत वर्ण के मेघ आकाश मे आच्छादित हो तो अनावृष्टि होती है और अन्न मँहगा होता है। डाक कवि ने हिन्दी मे पौषमास की तिथियो के मेघो का फलादेश निम्न प्रकार बतलाया है.—

पौष इजोड़िया सप्तमी अष्टमी नवमी वाज।
डाक जलद देखे प्रजा, पूरण सब विधि काज।।

अर्थात्—पौष शुक्ला प्रतिपदा, सप्तमी, अष्टमी, नवमी तिथि को यदि आकाश मे बादल दिखलाई पड़े तो उस वर्ष वर्षा अच्छी होती है। धन-धान्य की उत्पत्ति अधिक होती है और सर्वत्र सुभिक्ष दिखलाई पड़ता है। जो व्यक्ति उन तिथियो मे प्रात.काल या सायकाल मयूर और हंसाकृति के मेघो का दर्शन करता है, वह जीवन में सभी प्रकार की इच्छाओ को प्राप्त कर लेता है। उक्त

प्रकार के मेघ का दर्शन व्यक्ति और समाज दोनो के लिए मंगल करने वाला होता है।

पौषबदी सतमी तिथि माही, बिन जल बादल गर्जत आही।
पूनो तिथि सावन के मास, अतिशय वर्षा राखो आस ॥
पौषबदी दशमी तिथि माही, जौ वर्ष मेघा अधिकाही।
तो सावन बदि दशमी दरसे, सो मेघा पुहुमी बहु बरसे ॥
रवि या रवि सुत ओ अगार, पूस अमावस कहत गोआर।
अपन अपन घर चेतहु जाय, रतनक मोल अन्न बिकाय ॥

पौष बदी सप्तमी को बिना जल बरसाये बादल गर्जना करे तो श्रावण पूर्णिमा को अत्यन्त वर्षा होती है। यदि पौष बदी दशमी तिथि को अधिक वर्षा हो तो श्रावण बदी दशमी को इतना अधिक जल बरसता है कि पानी पृथ्वी पर नही समाता। पौष अमावस्या, शनिवार और रविवार को मगलवार हो तो अन्न का भाव अत्यन्त मँहगा होता है। वर्षा की कमी रहती है। पौष मास मे वर्षा होना और मेघो का छाया रहना अच्छा समझा जाता है। यदि इस महीने मे आकाश निरभ्र दिखलाई पडे तो दुष्काल के लक्षण समझना चाहिए। पौष पूर्णिमा को प्रातःकाल श्वेत रग के बादल आकाश मे आच्छादित हो तो आषाढ और श्रावण मास मे अच्छी वर्षा होती है और सभी वर्ण वाले व्यक्ति को आनन्द की प्राप्ति होती है। यदि पौष शुक्ला चतुर्दशी को आकाश मे गर्जना करते हुए बादल दिखलाई पडे तो भाद्रपद मास मे अच्छी वर्षा होती है। माघ मास के मेघो का फल डाक ने निम्न प्रकार बतलाया है—

माघ बदी सतमी के ताईं, जो विज्जु चमके नभ माई।
मास बारहो बरसे मेह, मत सोचो चिन्ता तज देह ॥
माघ सुदी पडिवा के मध्य, दमके विज्जु गरजे बद्ध।
तेल आस सुरही दीनन मार, मँहगो होवे 'डाक' गोआर ॥
माघ बदी तिथि अष्टमी, दशमी पूस अन्हार।
'डाक' मेघ देखी दिना, सावन जलद अपार ॥
माघ द्वितीया चन्द्रमा, वर्षा बिजुली होय।
'डाक' कहथि सुनहु नृपति, अन्नक महँगी होय ॥
माघ तृतीया सूदि मे, वर्षा बिजुली देख।
'डाक' कहथि जौ गहुँम अति, मंहग वर्ष दिन लेख ॥
माघ सुदी के चौथ मे, जौ लागे घन देख।
मँहगो होवे नारियल, रहे न पानहिं शेष ॥

माघ पचमी चन्द्र तिथि, वहय जो उत्तर वाय।
तो जानौ भरि भाद्र मे, जल बिन पृथ्वी जाय॥
माघ सुदी षष्ठी तिथि, यदि वर्षा न होय।
'डाक' कपास मँहगो मिले, राखे ता नहि कोय॥

अर्थ—माघ बदी सप्तमी के दिन आकाश मे बिजली चमके और बरसते हुए मेघ दिखलाई पडें तो अच्छी फसल होती है और वर्षा भी उत्तम होती है। बारह महीनो ही वृष्टि होती रहती है, फसल उत्तम होती है। माघ सुदी प्रतिपदा के दिन आकाश मे बिजली चमके, बादल गर्जना करें तो तेल, घृत, गुड़ आदि पदार्थ मँहगे होते है। इस दिन का मेघदर्शन वस्तुओ की मँहगाई सूचित करता है। माघ कृष्ण अष्टमी को वर्षा हो तो सुभिक्ष सूचक है। मेघ स्निग्ध और सौम्य आकृति के दिखलाई पडे तो जनता के लिए सुखदायी होते है। माघ बदी अष्टमी और पौष बदी दशमी को आकाश मे बादल हो तथा वर्षा भी हो तो श्रावण के महीने मे अच्छी वर्षा होती है। माघ शुक्ला द्वितीया को वर्षा और बिजली दिखलाई पडे तो जौ और गेहूँ अत्यन्त मँहगे होते है। व्यापारियो को उक्त दोनो प्रकार के अनाज के सग्रह मे विशेष लाभ होता है। यद्यपि सभी प्रकार के अनाज मँहगे होते हैं, फिर भी गेहूँ और जौ की तेजी विशेष रूप से होती है। यदि माघ शुक्ला चतुर्थी के दिन आकाश मे बादल और बिजली दिखलाई पडे तो नारियल विशेष रूप से मँहगा होता है। यदि माघ शुक्ला पचमी को वायु के साथ मेघो का दर्शन हो तो भाद्रपद मे जल के बिना भूमि रहती है। माघ शुक्ला षष्ठी को आकाश मे केवल मेघ दिखलाई पडें और वर्षा न हो तो कपास मंहगा होता है। माघ शुक्ला अष्टमी और नवमी को विचित्र वण के मेघ आकाश मे दिखलाई पडे और हल्की सी वर्षा हो तो भाद्रपद मास मे खूब वर्षा होती है।

वर्षा ऋतु के मेघ स्निग्ध और सौम्य आकृति के हो तो खूब वर्षा होती है। आषाढ कृष्णा प्रदिपदा के दिन मेघ गर्जन हो तो पृथ्वी पर अकाल पडता है और युद्ध होते है। आषाढ कृष्णा एकादशी को आकाश मे वायु, मेघ और बिजली दिखलाई पडे तो श्रावण और भाद्रपद मे अल्पवृष्टि होती है। आषाढ शुक्ला तृतीया बुधवार को हो और इस दिन आकाश मे मेघ दिखलाई पडें तो अधिक वर्षा होती है। श्रावण शुक्ल सप्तमी के दिन आकाश मेघाच्छन्न हो तो देवोत्थान एकादशी पर्यन्त जल बरसता है। श्रावण कृष्ण चतुर्थी को जल बरसे तो उस दिन से 45 दिन तक खूब वर्षा होती है। उक्त तिथि को आकाश मे केवल मेघ दिखलाई पडें तो भी फसल अच्छी होती है। श्रावण बदी पचमी को वर्षा हो और आकाश मे मेघ छाये रहे तो चातुर्मास पर्यन्त वर्षा होती रहती है। श्रावण मास की अमावस्या सोमवार को हो और इस दिन आकाश मे घने मेघ दिखलाई पड़े तो दुष्काल समझना

चाहिए। इसका फल कही वर्षा, कही सूखा तथा कही पर महामारी और कही पर उपद्रव होना समझना चाहिए। भाद्रपद सुदी पंचमी स्वाती नक्षत्र मे हो और इस दिन मेघ आकाश मे सघन हो तथा वर्षा हो रही तो सर्वत्र सुख-शान्ति व्याप्त होती है और जगत् के सभी दु ख दूर हो जाते है तथा सर्वत्र मगल होता है। इस महीने में भरणी नक्षत्र मे वर्षा हो और मेघ आकाश में व्याप्त हो तो सर्वत्र सुभिक्ष होता है। गेहूँ, चना, जौ, धान, गन्ना, कपास और तिलहन की फसल खूब उत्पन्न होती है। भाद्रपद मास की पूर्णिमा को जल बरसे तो जगत् मे सुभिक्ष होता है। भाद्रपद मास मे अश्विनी और रोहिणी नक्षत्र मे आकाश मे बादल व्याप्त हो, पर वर्षा न हो तो पशुओ में भयकर रोग फैलता है। आर्द्रा और पुष्य मे रक्त वर्ण के मेघ संघर्षरत दिखलाई पड़ें तो विद्रोह और अशान्ति की सूचना समझनी चाहिए। यदि इन नक्षत्रों मे वर्षा भी हो जाए तो शुभ फल होता है। श्रवण नक्षत्र की वर्षा उत्तम मानी गयी है। भाद्रपद कृष्णा प्रतिपदा को श्रवण नक्षत्र हो और आकाश मे मेघ हो तो सुभिक्ष होता है।

नवमोऽध्याय:

अथातः सम्प्रवक्ष्यामि वातलक्षणमुत्तमम्[1]।
प्रशस्तमप्रशस्तं च यथावदनुपूर्वश:[2] ॥1॥

अब मैं वायु का उत्तम लक्षण पूर्वाचार्यों के अनुसार कहूँगा। वायु के द्वारा निरूपित फलादेश के भी दो भेद किये जा सकते हैं— प्रशस्त और अप्रशस्त ॥1॥

वर्षं भयं तथा क्षेमं राज्ञो जय-पराजयम्।
मारुत: कुरुते लोके जन्तूनां पुण्यपापजम्[3] ॥2॥

वायु संसारी प्राणियो के पुण्य एव पाप से उत्पन्न होने वाले वर्षण, भय, क्षेम और राजा के जय-पराजय को सूचित करती है ॥2॥

1 सक्रमम् मु० C.। 2 पूर्वंत मु०। 3 पापजाम् मु०।

[1]आदानाच्चैव पाताच्च पचनाच्च विसर्जनात् ।
मारुत सर्वगर्भाणां बलवान्नायकश्च सः ॥3॥

आदान, पातन, पचन और विसर्जन का कारण होने से मारुत बलवान् होता है और सब गर्भों का नायक बन जाता है ॥3॥

दक्षिणस्यां दिशि यदा वायुर्दक्षिणकाष्ठिकः ।
[2]समुद्रानुशयो[3] नाम स गर्भाणां तु सम्भवः ॥4॥

दक्षिण दिशा का वायु जब दक्षिण दिशा मे बहता है, तब वह 'समुद्रानुशय' नाम का वायु कहलाता है और गर्भों को उत्पन्न करने वाला भी है ॥4॥

तेन सञ्जनितं गर्भं वायुर्दक्षिण[4]काष्ठिकः ।
धारयेत् धारणे[5] मासे पाचयेत् पाचने तथा ॥5॥

उस समुद्रानुशय वायु से उत्पन्न गर्भ को दक्षिण दिशा का वायु धारण मास मे धारण करता है तथा पाचन मास मे पकाता है ॥5॥

धारितं पाचितं गर्भं वायुरुत्तरकाष्ठिकः ।
प्रमुंचति यतस्तोयं वर्षं तन्मरुदुच्यते ॥6॥

उस धारण किये तथा पाक को प्राप्त हुए मेघ गर्भ को चूंकि उत्तर दिशा का वायु विसर्जित करता है अतएव वर्षा करने वाले उस वायु को 'मरुत्' कहते है ॥6॥

आषाढीपूर्णिमायां तु पूर्ववातो यदा भवेत् ।
प्रवाति दिवसं सर्वं सुवृष्टिः सुषमा[6] तदा ॥7॥

आषाढी पूर्णिमा के दिन पूर्व दिशा का वायु यदि सारे दिन चले तो वर्षा काल मे अच्छी वर्षा होती है और यह वर्ष अच्छा व्यतीत होता है ॥7॥

वाप्यानि सर्वबीजानि[7] जायन्ते निरुपद्रवम्[8] ।
शूद्राणामुपघाताय सोऽत्र लोके परत्र च ॥8॥

उक्त प्रकार के वायु मे बोये गये सम्पूर्ण बीज उत्तम रीति से उत्पन्न होते हैं। परन्तु शूद्रो के लिए यह वायु इस लोक और परलोक मे उपघात का कारण है ॥8॥

---

1 अवात चैव वात च पातनश्च विसर्जन. मु० A D । 2 धारायद्गारणेमेसे मु० A । 3 तिर्यशो मु० B । 4 मध्यम -मु० C । 5 वारणे मु० A । 6 सुवृष्टिस्तु तदा मता मु० । 7 सर्वजीवानि मु० B । 8 निरुपद्रव. मु० C. ।

दिवसार्धं यदा वाति पूर्वमासौ[1] तु सोदकौ[2]।
चतुर्भागेण मासस्तु शेषं[3] ज्ञेयं[4] यथाक्रमम् ॥9॥

यदि आषाढ़ी पूर्णिमा के आधे दिन — दोपहर तक पूर्व दिशा का वायु चले तो पहले दो महीने अच्छी वर्षा के समझना चाहिए और चौथाई दिन—एक प्रहर भर वह वायु चले तो एक महीना अच्छी वर्षा ज्ञात करना चाहिए। इसी क्रम से वायु और वर्षा का हिसाब जानना चाहिए ॥9॥

पूर्वार्धदिवसे ज्ञेयौ[5] पूर्वमासौ[6] तु सोदकौ[7]।
पश्चिमे पश्चिमौ मासौ ज्ञेयौ द्वावपि सोदकौ ॥10॥

यहाँ इतना विशेष और जानना चाहिए कि उस दिन यदि पूर्वार्ध मे पूर्व वायु चले तो पहले दो महीने और उत्तरार्ध मे वायु चले तो अगले दो महीने अच्छी वर्षा के समझना चाहिए ॥10॥

हित्वा पूर्वं तु दिवसं मध्याह्ने यदि वाति चेत्।
[8]वायुर्मध्यममासात्तु तदा देवो न वर्षति ॥11॥

यदि दिन के पूर्व भाग को छोडकर मध्याह्न मे उस दिन वायु चले तो मध्यम मास से मेघ नही बरसेगा, ऐसा जानना चाहिए ॥11॥

आषाढीपूर्णिमायां तु दक्षिणो मारुतो यदि[9]।
न तदा वापयेत् किञ्चित् ब्रह्मक्षत्रं च पीडयेत् ॥12॥

आषाढी पूर्णिमा को यदि दक्षिण दिशा का वायु चले तो उस समय बोने का कार्य नही करना चाहिए। यह वायु ब्राह्मण और क्षत्रिय के लिए पीडाकारक होता है ॥12॥

धनधान्य न[10] विक्रेयं[11] बलवन्तं च संश्रयेत्।
दुर्भिक्ष मरण[12] व्याधिस्त्रास[13] मासं प्रवर्तते ॥13॥

उक्त प्रकार की वायु चलने पर धन-धान्य का विक्रय नही करना चाहिए एव बलवान् प्रशासक का आश्रय ग्रहण करना चाहिए, क्योकि एक मास मे ही दुर्भिक्ष, मरण, व्याधि और त्रास उपस्थित होने लगता ॥13॥

---

1 मासे मु० A व्याम मु० C। 2 सोदक मु० C। 3 शेषो मु० A शेषा मु० B D। 4 ज्ञेया मु० A ज्ञेयौ मु० B, D। 5 ज्ञेयो मु० C। 6 -मासो मु० C। 7 सोदको मु० C। 8 पूर्वाह्णे प्रहरे यत्र पश्चिमेन च वाति चेत् मु० C। 9 यदा मु०। 10 ते मु० A। 11 विज्ञेय मु A। 12. डामर मु० C.। 13 तश्कराच्च महद्भयम् मु०।

आषाढीपूर्णिमायां तु पश्चिमो यदि मारुतः।
मध्यमं वर्षणं सस्यं धान्यार्थो मध्यमस्तथा ॥14॥

आषाढ़ी पूर्णिमा को यदि पश्चिम वायु चले तो मध्यम प्रकार की वर्षा होती है। तृण और अन्न का मूल्य भी मध्यम—न अधिक मँहगा और न अधिक सस्ता रहता है ॥14॥

उद्विजन्ति[1] च[2] राजानो[3] वैराणि च[4] प्रकुर्वते।
परस्परोपघाताय[5] स्वराष्ट्रपरराष्ट्रयोः ॥15॥

उक्त प्रकार की वायु के चलने से राजा लोग उद्विग्न हो उठते है और अपने तथा दूसरो के राष्ट्रो को परस्पर मे घात करने के लिए वैर-भाव धारण करने लगते है। तात्पर्य यह है कि आषाढी पूर्णिमा को पश्चिम दिशा की वायु चले तो देश और राष्ट्र मे उपद्रव होता है। प्रशासन और नेताओ मे मतभेद बढता है ॥15॥

आषाढीपूर्णिमायां तु वायुः स्यादुत्तरो यदि[6]।
वापयेत् सर्वबीजानि सस्य ज्येष्ठं समृद्ध्यति ॥16॥

आषाढी पूर्णिमा को उत्तर दिशा की वायु चले तो सभी प्रकार के बीजो को बो देना चाहिए, क्योकि उक्त प्रकार के वायु मे बोये गये बीज बहुतायत से उत्पन्न होते है ॥16॥

क्षेमं सुभिक्षमारोग्यं प्रशान्ता[7] पार्थिवास्तथा।
बहूदकास्तदा[8] मेघा मही[9] धर्मोत्सवाकुला ॥17॥

उक्त प्रकार की वायु क्षेम, कुशल, आरोग्य की वृद्धि का सूचक है, राजा—प्रशासक परस्पर मे शान्ति और प्रेम से निवास करते है, प्रजा के साथ प्रशासको का व्यवहार उत्तम होता है। मेघ बहुत जल बरसाते है और पृथ्वी धर्मोत्सवो से युक्त हो जाती है ॥17॥

आषाढीपूर्णिमायां तु वायुः स्यात् पूर्वदक्षिणः।
[10]राजमृत्यु[11]र्विजानीयाच्चिवं सस्यं तथा जलम् ॥18॥

---

1 उद्गच्छन्ते मु० A B D। 2-3 तथा राजा मु A तथा राजौ मु० B. यथा राजा मु० D। 4 च हि कुर्वते मु० C प्रवर्तते मु० D। 5 परस्परो यथातोय मु० A। 6 यदा मु०। 7 वसन्तो मु० A। 8 वेहोदका मु० C। 9 महा मु० A D. सदा मु० C। 10 राज्ञां मु० A। 11 सुख मु०।

आषाढ़ी पूर्णिमा को यदि पूर्व और पश्चिम के बीच—अग्निकोण का वायु चले तो प्रशासक अथवा राजा की मृत्यु होती है। शस्य तथा जल की स्थिति चित्र-विचित्र होती है ॥18॥

क्वचिन्निष्पद्यते सस्यं क्वचिच्चापि विपद्यते।
धान्यार्थो मध्यमो ज्ञेयः तदाऽग्नेश्च भयं नृणाम्[1] ॥19॥

धान्य की उत्पत्ति कहीं होती है और कहीं उस पर आपत्ति आ जाती है। मनुष्य को धान्य का लाभ मध्यम होता है और अग्निभय बना रहता है ॥19॥

आषाढीपूर्णिमायां तु वायुः स्याद् दक्षिणापरः।
सस्यानामुपघाताय चौराणां तु विवृद्धये[2] ॥20॥

आषाढी पूर्णिमा को यदि दक्षिण और पश्चिम के बीच की दिशा अर्थात् नैर्ऋत्य कोण का वायु चले तो वह धान्यघातक और चोरों की वृद्धिकारक होती है ॥20॥

भस्मपांशुरजस्कीर्णा यदा[3] भवति मेदिनी।
सर्वत्यागं तदा कृत्वा कर्त्तव्यो धान्यसंग्रहः ॥21॥

उस समय पृथ्वी भस्म, धूलि एवं रजकण से व्याप्त हो जाती है—अनावृष्टि के कारण पृथ्वी धूलि-मिट्टी से व्याप्त हो जाती है। अत. समस्त वस्तुओं को त्याग कर धान्य का सग्रह करना चाहिए ॥21॥

विद्रवन्ति च राष्ट्राणि क्षीयन्ते नगराणि च।
श्वेतास्थिमेदिनी ज्ञेया मांसशोणितकर्दमा ॥22॥

उक्त प्रकार की वायु चलने से राष्ट्रों में उपद्रव पैदा होते हैं और नगरों का क्षय होता है। पृथ्वी श्वेत हड्डियों से भर जाती है और मास तथा खून की कीचड से सराबोर हो जाती है ॥22॥

आषाढीपूर्णिमायां तु वायुः स्यादुत्तरापरः।
मक्षिका[4]दशमशका जायन्ते प्रबलास्तदा ॥23॥
मध्यमं क्वचिदुत्कृष्टं वर्षं सस्यं च जायते।
नूनं च मध्यमं किंचिद् धान्यार्थं तत्र[5] निर्दिशेत्[6] ॥24॥

आषाढ़ी पूर्णिमा को यदि वायु उत्तर और पश्चिम के बीच के कोण—

---

1 भवेत् आ०। 2. सस्यदूष मु० A। 3 तदा मु० A। 4 काण्डम् मु०। 5-6 नात्र सक्षय मु० C। ऽऽचौराणां समुपद्रवम् मु० C।

वायव्य कोण की चले तो मक्खी, डास और मच्छर प्रबल हो उठते हैं। वर्षा और धान्योत्पत्ति कहीं मध्यम और कहीं उत्तम होती है और कुछ धान्यो का मूल्य अथवा लाभ निश्चित रूप से मध्यम समझना चाहिए ॥23-24॥

आषाढीपूर्णिमायां तु वायुः पूर्वोत्तरो यदा।
वापयेत् सर्वबीजानि तदा चौरांश्च घातयेत् ॥25॥
स्थलेष्वपि च यद्बीजमुप्यते तत् समृद्ध्यति।
क्षेमं चैव सुभिक्षं च भद्रबाहुवचो यथा ॥26॥
बहूदका सस्यवती यज्ञोत्सवसमाकुला।
प्रशान्तडिम्भ-डमरा शुभा भवति मेदिनी ॥27॥

आषाढी पूर्णिमा को यदि पूर्व और उत्तर दिशा के बीच का—ईशान कोण का वायु चले तो उससे चोरो का घात होता है अर्थात् चोरो का उपद्रव कम होता है। उस समय सभी प्रकार के बीज बोना शुभ होता है। स्थलो पर अर्थात् ककरीली, पथरीली जमीन मे भी बोया हुआ बीज उगता तथा समृद्धि को प्राप्त होता है। सर्वत्र क्षेम और सुभिक्ष होता है, ऐसा भद्रबाहु स्वामी का वचन है। साथ ही पृथ्वी बहुजल और धान्य से सम्पन्न होती है, पूजा-प्रतिष्ठादि महोत्सवो से परिपूर्ण होती है और सब बिडम्बनाएँ दूर होकर प्रशान्त वातारण को लिये मगलमय हो जाती हैं। नगर और देश मे शान्ति व्याप्त हो जाती है ॥25-27॥

पूर्वो[1] वातः[2] स्मृत. श्रेष्ठः तथा चाप्युत्तरो भवेत्।
उत्तमस्तु[3] तथैशानो मध्यमस्त्वपरोत्तरः[4] ॥28॥
अपरस्तु तथा न्यूनः[5] शिष्टो[6] वातः[7] प्रकीर्तित.।
पापे नक्षत्रकरणे मुहूर्ते च तथा भृशम् ॥29॥

पूर्व दिशा का वायु श्रेष्ठ होता है, इसी प्रकार उत्तर का वायु भी श्रेष्ठ कहा जाता है। ईशान दिशा का वायु उत्तम होता है। वायव्यकोण तथा पश्चिम का वायु मध्यम होता है। शेष दक्षिण दिशा, अग्निकोण और नैर्ऋत्यकोण का वायु अधम कहा गया है, उस समय नक्षत्र, करण तथा मुहूर्त यदि अशुभ हो तो वायु भी अधिक अधम होता है ॥28-29॥

पूर्ववातं यदा हन्यादुदीर्णो दक्षिणोऽनिलः[8]।
न तत्र वापयेद् धान्यं कुर्यात् सञ्चयमेव च ॥30॥

1-2 पूर्वोत्तर मु० C। 3 उत्तर मु० A. B D.। 4. परोत्तर मु० A परोत्तरा मु० C। 5 न्यून मु० A., न्यून मु० B. D। 6-7 शस्य वाता मु० A शिष्टतोय मु० C शिष्टा वाता मु० D। 8. दक्षिणानल मु A दक्षिणोऽनल. मु० B।

दुर्भिक्षं चाप्यवृष्टिं च शस्त्रं रोग जनक्षयम् ।
कुरुते सोऽनिलो घोर आषाढाभ्यतरं परम् ॥31॥

आषाढी पूर्णिमा के दिन पूर्व के चलते हुए वायु को यदि दक्षिण का उठा हुआ वायु परास्त करके नष्ट कर दे तो उस समय धान्य नही बोना चाहिए। बल्कि धान्यसचय करना ज्यादा अच्छा होता है, क्योकि वह वायु दुर्भिक्ष, अनावृष्टि, शस्त्रसंचार और जनक्षय का कारण होता है ॥30-31॥

पापघाते तु[1] वातानां[2] श्रेष्ठं[3] सर्वत्र चादिशेत् ।
[4]श्रेष्ठानपि यदा हन्यु पापाः[5] पापं[6] तदाऽऽदिशेत् ॥32॥

श्रेष्ठ वायुओ मे से किसी के द्वारा पापवायु का यदि घात हो तो उसका फल सर्वत्र श्रेष्ठ कहना ही चाहिए और पापवायुएँ श्रेष्ठ वायुओं का घात करे तो उसका फल अशुभ ही जानना चाहिए। तात्पर्य यह है कि जिस प्रकार के वायु की प्रधानता होती है, उसी प्रकार का शुभाशुभ फल होता है ॥32॥

यदा तु वाताश्चत्वारो भृश वान्त्यपसव्यत.[7] ।
अल्पोदक[8] शस्त्राघात[9] भयं व्याधिं च कुर्वते ॥33॥

यदि पूर्व, पश्चिम, दक्षिण और उत्तर के चारो पवन अपसव्य मार्ग से— दाहिनी ओर से तेजी के साथ चले तो वे अल्पवर्षा, धान्यनाश और व्याधि उत्पन्न होने की सूचना देते है -- उक्त बाते उस वर्ष घटित होती है ॥33॥

प्रदक्षिणं यदा वान्ति त एव सुखशीतलाः ।
क्षेम सुभिक्षमारोग्य [10]राज्यवृद्धिर्जयस्तथा ॥34॥

वे ही चारो पवन यदि प्रदक्षिणा करते हुए चलते है तो सुख एव शीतलता को प्रदान करने वाले होते है तथा लोगों को क्षेम, सुभिक्ष, आरोग्य, राजवृद्धि और विजय की सूचना देनेवाले होते है ॥34॥

समन्ततो यदा वान्ति परस्परविघातिनः[11] ।
शस्त्रं[12] जनक्षय[13] रोगं सस्यघातं च कुर्वते ॥35॥

चारो पवन यदि सब ओर से एक दूसरे का परस्पर घात करते हुए चले तो शस्त्रभय, प्रजानाश, रोग और धान्यघात करनेवाले होते है ॥35॥

---

1 -घातेषु मु० A । 2 नागाना मु० A । 3 श्रेष्ठ मु० A D । 4 श्रेष्ठात्तापि मु० A । 5-6 पयोत्युपम् मु० । 7 अपसवंत मु० A य समन्तत मु० C । 8 अल्पोदम् मु० । 9 सस्यसघात मु० । 10 राज्यवृद्धिर्जयस्तथा मु० । 11 परिविघानिल मु० A । 12 सत्व मु० A । 13 जनभय मु० C ।

एवं विज्ञाय वातानां[1] संयता [2]भैक्षवर्तिनः ।
प्रशस्तं यत्र पश्यन्ति[3] वसेयुस्तत्र निश्चितम्[4] । 36।।

इस प्रकार पवनो और उनके शुभाशुभ फल को जानकर भिक्षावृत्तिवाले साधुओ को चाहिए कि वे जहाँ बाधारहित प्रशस्त स्थान देखे वही निश्चित रूप से निवास करें ।।36।।

आहारस्थितय सर्वे जंगमस्थावरास्तथा ।
जलसम्भवं[5] च सर्वं तस्यापि [6]जनकोऽनिल ।।37।।

जगम—चल और स्थावर समस्त जीवो की स्थिति आहार पर निर्भर है—सबका आधार आहार है और खाद्यपदार्थ जल से उत्पन्न होते है तथा जल की उत्पत्ति वायु पर निर्भर है ।।37।।

सर्वकालं प्रवक्ष्यामि वातानां लक्षण[7] परम्[8] ।
आषाढीवत् तत् साध्य यत् पूर्वं सम्प्रकीर्तितम् ।।38।।

अब पवनो का सार्वकालिक उक्त लक्षण कहूँगा, उसे पूर्व मे कहे हुए आषाढी पूर्णिमा के समान सिद्ध करना चाहिए ।।38।।

पूर्ववातो यदा तूर्णं सप्ताह वाति कर्कशः ।
स्वस्थाने नाभिवर्षेत् महदुत्पद्यते भयम् ।।39।।
प्राकारपरिखाणां च शस्त्राणां[9] च समन्ततः ।
निवेदयति राष्ट्राणां विनाशं तादृशोऽनिलः ।।40।।

पूर्व दिशा का पवन यदि कर्कशरूप धारण करके अतिशीघ्र गति से चले तो वह स्वस्थान मे वर्षा के न होने की सूचना देता है और उससे अत्यन्त भय उत्पन्न होता है, उस प्रकार का पवन कोट, खाइयो, शस्त्रो और राष्ट्रो का सब ओर से विनाश सूचित करता है ।।39-40।।

सप्तरात्रं दिनार्धं[10] च यः कश्चिद् वाति मारुतः ।
महद्भय च विज्ञेयं वर्ष वाऽथ महद् भवेत् ।।41।।

किसी भी दिशा का वायु यदि साढ़े सात दिन तक लगातार चले तो उसे

---

1 वार्तास्तु मु० C । 2 लक्षणान्वितम् मु० C । 3 विज्ञाय मु० C । 4 निश्चिता मु० C । 5. जनसभ्रमं मु० B । 6 जलद मु० । 7-8 लक्षणान्वितम् मु० A B D । 9 शस्त्रकोपभय तत मु० C । 10. दिवावधि मु० A. दिवा चार्धं म० B दिवा सार्धं मु० D ।

महान् भय का सूचक जानना चाहिए अथवा इस प्रकार का वायु अतिवृष्टि का सूचक होता है ।।41।।

पूर्वसन्ध्यां यदा [1]वायुरपसव्य प्रवर्तते ।
पुरावरोध कुरुते यायिनां तु जयावहः ।।42।।

यदि वायु अपसव्य मार्ग से पूर्व सन्ध्या को वातान्वित करता है तो वह पुर के अवरोध का घेरे में पड जाने का सूचक है । इस समय यायियो—आक्रमणकारियो की विजय होती है ।।42।।

पूर्वसन्ध्यां यदा वायुः सम्प्रवाति प्रदक्षिणः ।
नागराणां जयं[2] कुर्याद् सुभिक्षं यायिविद्रवम्[3] ।।43।।

यदि वह वायु प्रदक्षिणा करता हुआ पूर्वसन्ध्या को व्याप्त करे तो उससे नागरिको की विजय होती है, सुभिक्ष होता है और चढकर आनेवाले आक्रमण-कारियो को लेने के देने पड जाते हैं अर्थात् उन्हे भागना पडता है ।।43।।

मध्याह्ने वार्धरात्रे वा[4] तथा वाऽस्तमनोदये ।
वायुस्तूर्ण यदा वाति तदाऽवृष्टिभयं [5]रुजाम् ।।44।।

यदि वायु मध्याह्न मे, अर्धरात्रि में तथा सूर्य के अस्त और उदय के समय शीघ्र गति से चले तो अनावृष्टि, भय और रोग उत्पन्न होते है ।।44।।

यदा राज्ञः प्रयातस्य प्रतिलोमोऽनिलो भवेत् ।
अपसव्यो [6]समार्गस्थस्तदा सेनावध[7] विदुः ।।45।।

यदि राजा के प्रयाण के समय वायु प्रतिलोम --विपरीत बहे अर्थात् उस दिशा को न चलकर जिधर प्रयाण किया जा रहा है, उससे विपरीत जिधर से प्रयाण हो रहा है, चले तो उससे आक्रमणकारी की सेना का वध समझना चाहिए ।।45।।

अनुलोमो यदा स्निग्धः सम्प्रवाति प्रदक्षिणः ।
[8]नागराणां जयं कुर्यात् सुभिक्षं च प्रदीपयेत् ।।46।।

---

1 रपरसन्ध्या द्रवात् पुर मु० A., परमन्ध्याद्रवात् परम् मु० B परसन्ध्या प्रवास्यते मु० D । 2 भय मु० D । 3 विद्रवाम् मु० A । 4 च मु० 5 रुजा मु० । 6. समार्गस्थ मु० । विमार्गस्थो मु० C । 7 भय मु० A । 8 प्रदीपनश्च चार्यमब्दश्च तदा क्षिप्र जयावह मु० C. ।

यदि वायु स्निग्ध हो और प्रदक्षिणा करता हुआ अनुलोमरूप से बहे—उसी दिशा की ओर चले जिधर प्रयाण हो रहा है, तो नगरवासियों की विजय होती है और सुभिक्ष की सूचना मिलती है ।।46।।

दशाहं द्वादशाहं वा पापवातो यदा भवेत् ।
अनुबन्धं तदा विन्द्याद् राजमृत्युं जनक्षयम् ।।47।।

यदि अशुभ वायु दस दिन या बारह दिन तक लगातार चले तो उससे सेनादिक का बन्धन, राजा की मृत्यु और मनुष्यों का क्षय होता है, ऐसा समझना चाहिए ।।47।।

यदाभ्रवर्जितो वाति वायुस्तूर्णमकालजः ।
पांशुभस्मसमाकीर्णः सस्यघातो भयावहः ।।48।।

जब अकाल में मेघरहित उत्पात वायु धूलि और भस्म से भरा हुआ चलता है, तब वह शस्त्रघातक एवं महाभयकर होता है ।।48।।

सविद्युत्सरजो वायुरूर्ध्वगो वायुभिः सह ।
[1]प्रवाति पक्षिशब्देन क्रूरेण स भयावहः ।।49।।

यदि बिजली और धूल से युक्त वायु अन्य वायुओं के साथ ऊर्ध्वगामी हो और क्रूरपक्षी के समान शब्द करता हुआ चले तो वह भयकर होता है ।।49।।

प्रवान्ति सर्वतो वाता यदा तूर्णं मुहुर्मुहुः ।
यतो यतोऽभिगच्छन्ति तत्र देशं निहन्ति ते ।।50।।

यदि पवन सब ओर से बार-बार शीघ्र गति से चले, तो वह जिस देश की ओर गमन करता है, उस देश को हानि पहुँचाता है ।।50।।

अनुलोमो यदाऽनीके सुगन्धो वाति मारुतः ।
[2]अयत्नतस्ततो राजा जयमाप्नोति सर्वदा ।।51।।

यदि राजा की सेना में सुगन्धित अनुलोम —प्रयाण की दिशा में प्रगतिशील पवन चले तो बिना यत्न के ही राजा सदा विजय को प्राप्त करता है ।।51।।

प्रतिलोमो यदाऽनीके दुर्गन्धो वाति मारुतः ।
तदा यत्नेन साध्यन्ते वीरकीर्तिसुलब्धयः ।।52।।

यदि राजा की सेना में दुर्गन्धित प्रतिलोम—प्रयाण की दिशा से विपरीत

1. मद्रित प्रति में श्लोको का व्यतिक्रम है । आधा श्लोक पूर्व के श्लोक में है आधा उत्तर उत्तर के श्लोक में । 2. आयातश्च ततो मु० ।

दिशा मे पवन चले तो उस समय वीर-कीर्ति की उपलब्धियाँ बडी ही प्रयत्नसाध्य होती है ॥52॥

यदा सपरिघा सन्ध्या पूर्वो वात्यनिलो भृशम् ।
पूर्वस्मिन्नेव दिग्भागे पश्चिमा वध्यते चमूः ॥53॥

यदि प्रातः अथवा सायकाल की सन्ध्या परिघसहित हो—सूर्य को लाँघती हुई मेघो की पंक्ति से युक्त हो—और उस समय पूर्व का वायु अतिवेग से चलता हो तो पूर्व दिशा मे ही पश्चिम दिशा की सेना का वध होता है ॥53॥

यदा सपरिघा सन्ध्या पश्चिमो वाति मारुत ।
परस्मिन् दिशो भागे पूर्वा स वध्यते चमू ॥54॥

यदि सन्ध्या सपरिघा —सूर्य को लाँघती मेघपक्ति से युक्त हो और उस समय पश्चिम पवन चले तो पूर्व दिशा मे स्थित सेना का पश्चिम दिशा मे वध होता होता है ॥54॥

यदा सपरिघा सन्ध्या दक्षिणो वाति मारुतः ।
अपरस्मिन् दिशो भागे उत्तरा वध्यते चमूः ॥55॥

यदि सन्ध्या सपरिघा—सूर्य को लाँघती हुई मेघपंक्ति से युक्त हो—और उस समय दक्षिण का वायु चलता हो तो उत्तर की सेना का पश्चिम मे वध होता है ॥55॥

यदा सपरिघा सन्ध्या उत्तरो वाति मारुत ।
अपरस्मिन् दिशो भागे दक्षिणा वध्यते चमूः ॥56॥

यदि सन्ध्या सपरिघा —सूर्य को लाँघती हुई मेघपक्ति से युक्त हो और उस समय उत्तर का पवन चले तो दक्षिण की सेना का उत्तर दिशा मे वध होता है ॥56॥

प्रशस्तस्तु यदा वातः प्रतिलोमोऽनुपद्रवः ।
तदा यान् प्रार्थयेत् कामांस्तान् प्राप्नोति नराधिपः ॥57॥

जब प्रतिलोम वायु प्रशस्त हो और उस समय कोई उपद्रव दिखाई न पडता हो तो राजा जिन कार्यों को चाहता है वे उसे प्राप्त होते है—राजा के अभीष्ट की सिद्धि होती है ॥57॥

अप्रशस्तो यदा वायुर्नाभिपश्यत्युपद्रवम् ।
प्रयातस्य नरेन्द्रस्य चमूर्हारयते सदा ॥58॥

यदि वायु अप्रशस्त हो और उस समय कोई उपद्रव दिखाई न पडे तो युद्ध

के लिए प्रयाण करनेवाले राजा की सेना सदा पराजित होती है ।।58।।

तिथीनां करणानां च मुहूर्तानां च ज्योतिषाम् ।
मारुतो बलवान् नेता तस्माद् यत्रैव मारुतः ।।59।।

तिथियो, करणो, मुहूर्तो और ग्रह-नक्षत्रादिको का बलवान् नेता वायु है, अतः जहाँ वायु है, वही उनका बल समझना चाहिए ।।59।।

वायमानेऽनिले पूर्वे मेघांस्तत्र समादिशेत् ।
उत्तरे वायमाने तु जलं तत्र समादिशेत् ।।60।।

यदि पूर्व दिशा मे पवन चले तो उस दिशा मे मेघो का होना कहना चाहिए और यदि उत्तर दिशा मे पवन चले तो उस दिशा मे जल का होना कहना चाहिए ।।60।।

ईशाने वर्षणं ज्ञेयमाग्नेये नैर्ऋतेऽपि च ।
याम्ये च विग्रहं ब्रूयाद् भद्रबाहुवचो यथा ।।61।।

यदि ईशान कोण मे पवन चले तो वर्षा का होना जानना चाहिए और यदि नैर्ऋत्य तथा पूर्व-दक्षिण दिशा मे पवन चले तो युद्ध का होना कहना चाहिए ऐसाभद्रबाहुस्वामी का वचन है ।।61।।

सुगन्धेषु प्रशान्तेषु स्निग्धेषु मार्दवेषु च ।
वायमानेषु[1] वातेषु सुभिक्षं क्षेममेव च ।।62।।

यदि चलने वाले पवन सुगन्धित, प्रशान्त, स्निग्ध एव कोमल हो तो सुभिक्ष और क्षेम का होना ही कहना चाहिए ।।62।।

महतोऽपि समुद्भूतान् सतडित् साभिगर्जितान् ।
मेघान्निहन्ते वायुर्नैर्ऋतो दक्षिणाग्निजः ।।63।।

नैऋत्यकोण, अग्निकोण तथा दक्षिण दिशा का पवन उन बडे मेघो को भी नष्ट कर देता है—बरसने नही देता, जो चमकती बिजली और भारी गर्जना से युक्त हो और ऐसे दिखाई पडते हो कि अभी बरसेंगे ।।63।।

सर्वलक्षणसम्पन्ना मेघा मुख्या जलवहा ।
मुहूर्त्ताद्वुत्थितो वायुर्हन्यात् सर्वोऽपि नैर्ऋतः ।।64।।

सभी शुभ लक्षणो के सम्पन्न जल को धारण करने वाले जो मुख्य मेघ हैं, उन्हे भी नैऋत्य दिशा का उठा हुआ पूर्व पवन एक मुहूर्त्त मे नष्ट कर देता है ।।64।।

---

1 मुद्रित प्रति मे श्लोकों की सख्या में व्यतिक्रम होने से पूर्वार्ध श्लोक नहीं है ।

सर्वथा बलवान् वायुः स्वचक्रे निरभिग्रहः ।
करणादिभिः संयुक्तो विशेषेण शुभाऽशुभः ॥65॥

अभिग्रह से रहित वायु स्वचक्र मे सर्वथा बलवान् होता है और करणादिक से संयुक्त हो तो विशेषरूप से शुभाशुभ होता है—शुभ करणादि से युक्त होने पर शुभफलसूचक और अशुभ करणादिक से युक्त होने पर अशुभसूचक होता है ॥65॥

इति नैर्ग्रन्थे भद्रबाहुके नैमित्ते वातलक्षणो नाम नवमोऽध्याय ।

विवेचन—वायु के चलने पर अनेक बातों का फलादेश निर्भर है । वायु द्वारा यहाँ पर आचार्य ने केवल वर्षा, कृषि और सेना, सेनापति, राजा तथा राष्ट्र के शुभाशुभत्व का निरूपण किया है । वायु विश्व के प्राणियो के पुण्य और पाप के उदय से शुभ और अशुभ रूप मे चलता है । अत निमित्तो द्वारा वायु जगत् के निवासी प्राणियो के पुण्य और पाप को अभिव्यक्त करता है । जो जानकार व्यक्ति है, वे वायु के द्वारा भावी फल को अवगत कर लेते है । आषाढी प्रतिपदा और पूर्णिमा ये दो तिथियाँ इस प्रकार की हैं, जिनके द्वारा वर्षा, कृषि, व्यापार, रोग, उपद्रव आदि के सम्बन्ध मे जानकारी प्राप्त की जा सकती है । यहाँ पर प्रत्येक फलादेश का क्रमश निरूपण किया जाता है ।

वर्षा सम्बन्धी फलादेश—आषाढी प्रतिपदा के दिन सूर्यास्त के समय पूर्व दिशा में वायु चले तो आश्विन महीने मे अच्छी वर्षा होती है तथा इस प्रकार के वायु से अगले महीने मे भी वर्षा का योग अवगत करना चाहिए । रात्रि के समय जब आकाश मे मेघ छाये हुए हो और धीमी-धीमी वर्षा हो रही हो, उस समय पूर्व का वायु चले तो भाद्रपद मास मे अच्छी वर्षा की सूचना समझनी चाहिए । इस तिथि को यदि मेघ प्रात काल से ही आकाश मे हो और वर्षा भी हो रही हो, तो पूर्व दिशा का वायु चतुर्मास मे वर्षा का अभाव सूचित करता है । तीव्र धूप दिन भर पडे और पूर्व दिशा का वायु दिन भर चलता रहे तो चातुर्मास मे अच्छी वर्षा का योग होता है । आषाढी प्रतिपदा का तपना उत्तम माना गया है, इससे चातुर्मास मे उत्तम वर्षा होने का योग समझना चाहिए । उपर्युक्त तिथि को सूर्योदय काल मे पूर्वीय वायु चले और साथ ही आकाश में मेघ हो पर वर्षा न होती हो तो श्रावण महीने में उत्तम वर्षा की सूचना समझनी चाहिए । उक्त तिथि को दक्षिण और पश्चिम दिशा का वायु चले तो वर्षा चातुर्मास मे बहुत कम या उसका बिल्कुल अभाव होता है । पश्चिमी वायु चलने से वर्षा का अभाव नही होता, बल्कि श्रावण मे घनघोर वर्षा, भाद्रपद में अभाव और आश्विन मे अल्प वर्षा होती है । दक्षिण दिशा का वायु वर्षा का अवरोध करता है । उत्तर दिशा का वायु चलने से भी वर्षा का अच्छा योग रहता है । आरम्भ में कुछ कमी रहती है, पर अन्त तक समयानुकूल और आवश्यकतानुसार होती जाती है । आषाढी

पूर्णिमा को आधे दिन—दोपहर तक पूर्वीय वायु चलता रहे तो श्रावण और भाद्रपद मे अच्छी वर्षा होती है। पूरे दिन पूर्वीय पवन चलता रहे तो चातुर्मास पर्यन्त अच्छी वर्षा होती है और एक प्रहर पूर्वीय पवन चले तो केवल श्रावण के महीने मे अच्छी वर्षा होती है। यदि उक्त तिथि को दोपहर के उपरान्त पूर्वीय पवन चले और आकाश मे बादल भी हो तो भाद्रपद और आश्विन इन दोनो महीनों में उत्तम वर्षा होती है। यदि उक्त तिथि को दिन भर सुगन्धित वायु चलता रहे और थोडी-थोडी वर्षा भी होती रहे तो चातुर्मास मे अच्छी वर्षा होती है। माघ महीने का भी इस प्रकार का पवन वर्षा होने की सूचना देता है। यदि आषाढ़ी पूर्णिमा को दक्षिण दिशा का वायु चले तो वर्षा का अभाव सूचित होता है। यह पवन सूर्योदय से लेकर मध्याह्न काल तक चले तो आरम्भ मे वर्षा का अभाव और मध्याह्नोत्तर चले तब अन्तिम महीनो मे वर्षा का अभाव समझना चाहिए। यदि आधे दिन दाक्षिणी पवन और आधे दिन पूर्वीय या उत्तरीय पवन चले तो आरम्भ मे वर्षाभाव, अनन्तर उत्तम वर्षा तथा आरम्भ मे उत्तम वर्षा, अनन्तर वर्षाभाव अवगत करना चाहिए। वर्षा की स्थिति पूर्वार्ध और उत्तरार्ध पर अवलम्बित समझनी चाहिए। यदि उक्त तिथि को पश्चिमीय पवन चले, आकाश मे विजली तडके तथा मेघो की गर्जना भी हो तो साधारत अच्छी वर्षा होती है। इस प्रकार की स्थिति मध्यम वर्षा होने की सूचना देती है। पश्चिमीय पवन यदि सूर्योदय से लेकर दोपहर तक चलता है तो उत्तम वर्षा और दोपहर के उपरान्त चले तो मध्यम वर्षा होती है।

श्रावण आदि महीनो के पवन का फलादेश 'डाक' ने निम्न प्रकार बताया है—

साँओन पछवा भादव पुरिवा आसिन बह ईसान।
कातिक कन्ता सिकियोने डोलै, कहाँ तक रखवह धान॥
साँओन पछवा बह दिन चारि, चूल्हीक पाछाँ उपजै सारि।
बरिसै रिमझिम निशिदिन वारि, कहिगेल वचन 'डाक' परचारि॥
साँओन पुरिवा भादव पछवा आसिन बह नैऋत।
कातिक कान्ता सिकियोने डोलै, उपजै नहिं भरिबीत॥
साँओन पुरिवा बह रविवार, कोदो मडुआक होय बहार।
खोजत भेटै नहिं थोड़ो अहार, कहत वैन यह 'डाक' गोआर॥
जो साँओन पुरवैआ बहै, शाली लागु करीन।
भादव पछवा जो बहै होहिं सकल नर दीन॥
साँओन बह जो बडदल्लासा, बीजा काटि कहूँ गै घासा।
साँओन जो बह पुरवैया, बडद बेचिकैं कीनहु गैया॥

अर्थ—यदि श्रावण मास मे पश्चिमीय हवा, भाद्रपद मास मे पूर्वीय हवा और आश्विन मास मे ईशान कोण की हवा चले तो अच्छी वर्षा होती है तथा फसल भी बहुत उत्तम उत्पन्न होती है। श्रावण मे यदि चार दिनो तक पश्चिमीय हवा चले तो रात-दिन पानी बरसता है तथा अन्न की उपज भी खूब होती है। यदि श्रावण मे पूर्वीय, भाद्रपद मे पश्चिमीय और आश्विन मे नैऋत कोणीय हवा चले तो वर्षा नही होती है तथा फसल की उत्पत्ति भी नही होती। यदि श्रावण मे पूर्वीय, भाद्रपद मे पश्चिमीय हवा चले तथा इस महीने मे रविवार के दिन पूर्वीय हवा चले तो अनाज उत्पन्न नही होता और वर्षा की भी कमी रहती है। श्रावण मास मे पूर्वीय वायु का चलना अत्यन्त अशुभ समझा जाता है। अत इस महीने मे पश्चिमीय हवा के चलने से फसल अच्छी उत्पन्न होती है। श्रावण मास में यदि प्रतिपदा तिथि रविवार को हो, और उस दिन तेज पूर्वीय हवा चलती हो तो वर्षा का अभाव आश्विन मास मे अवश्य रहता हे। प्रतिपदा तिथि का रविवार और मगलवार को पडना भी शुभ नही है। इससे वर्षा की कमी की और फसल की बरबादी की सूचना मिलती है। भाद्रपद मास मे पश्चिमीय हवा का चलना अशुभ और पूर्वीय हवा का चलना अधिक शुभ माना गया है। यदि श्रावणी पूर्णिमा शनिवार को हो और इस दिन दक्षिणीय वायु चलता हो तो वर्षा की कमी आश्विन मास मे रहती है। शनिवार के साथ शतभिषा नक्षत्र भी हो तो और भी अधिक हानिकर होता है। भाद्रपद प्रतिपदा को प्रात काल पश्चिमीय हवा चले और यह दिन भर चलती रह जाए, तो खूब वर्षा होती है। आश्विन मास के अतिरिक्त कार्तिक मास मे भी जल बरसता है। गेहूँ और धान दोनो की फसल के लिए यह उत्तम होता है। भाद्रपद कृष्णा पचमी शनिवार या मगलवार को हो और इस दिन पूर्वीय हवा चले तो साधारण वर्षा और साधारण ही फसल तथा दक्षिणीय हवा चले तो फसल के अभाव के साथ वर्षा का भी अभाव होता है। पचमी तिथि को भरणी नक्षत्र हो और इस दिन दक्षिणी हवा चले तो वर्षा का अभाव रहता है तथा फसल भी अच्छी नही होती। पचमी तिथि को गुरुवार और अश्विनी नक्षत्र हो तो अच्छी फसल होती है। कृतिका नक्षत्र हो तो साधारणतया वर्षा अच्छी होती है।

राष्ट्र, नगर सम्बन्धी फलादेश—आषाढी पूर्णिमा को पश्चिमीय वायु जिस प्रदेश मे चलती है, उस प्रदेश मे उपद्रव होता है, अनेक प्रकार के रोग फैलते हैं तथा उस क्षेत्र के प्रशासको मे मतभेद होता है। यदि पूर्णिमा शनिवार को हो तो उस प्रदेश के शिल्पी कष्ट पाते है, रविवार को हो तो चारो वर्ण के व्यक्तियो के लिए अनिष्टकर होता है। मगलवार को पूर्णिमा तिथि हो और दिनभर पश्चिमीय वायु चलता रहे तो उस प्रदेश मे चोरो का उपद्रव बढता है तथा धर्मात्माओं को अनेक प्रकार के कष्ट होते हैं। गुरुवार और शुक्रवार को पूर्णिमा हो और इस दिन

सन्ध्या समय तीन घटे तक पश्चिमीय वायु चलता रहे तो निश्चयत उस नगर, देश या राष्ट्र का विकास होता है। जनता मे परस्पर प्रेम बढता है, धन-धान्य की वृद्धि होती है और उस देश का प्रभाव अन्य देशो पर भी पडता है। व्यापारिक उन्नति होती है तथा शान्ति और सुख का अनुभव होता है। उक्त तिथि को दक्षिणी वायु चले तो उस क्षेत्र मे अत्यन्त भय, उपद्रव, कलह और माहमारी का प्रकोप होता है। आपसी कलह के कारण आन्तरिक झगडे बढ़ते जाते हैं और सुख-शान्ति दूर होती जाती है। मान्य नेताओ मे मतभेद बढता है, सैनिक शक्ति क्षीण होती है। देश मे नये-नये करो की वृद्धि होती है और गुप्त रोगो की उत्पत्ति भी होती है। यदि रविवार के दिन अपसव्य मार्ग से दक्षिणीय वायु चले तो घोर उपद्रवो की सूचना मिलती है। नगर मे शीतला और हैजे का प्रकोप होता है। जनता अनक प्रकार का त्रास उठाती है, भयकर भूकम्प होने की सूचना भी इसी प्रकार के वायु से समझनी चाहिए। यदि अर्धरात्रि मे दक्षिणीय वायु शब्द करता हुआ बहे तो इसका फलादेश समस्त राष्ट्र के लिए हानिकारक होता है। राष्ट्र को आर्थिक क्षति उठानी पडती है तथा राष्ट्र के सम्मान का भी ह्रास होता है। देश मे किसी महान् व्यक्ति की मृत्यु से अपूरणीय क्षति होती है। यदि यही वायु प्रदक्षिणा करता हुआ अनुलोम गति से प्रवाहित हो तो राष्ट्र को साधारण क्षति उठानी पडती है। स्निग्ध, मन्द, सुगन्ध दक्षिणीय वायु भी अच्छा होता है तथा राष्ट्र मे सुख-शान्ति उत्पन्न कराता है। मगलवार को दक्षिणीय वायु साय-साय का शब्द करता हुआ चले और एक प्रकार की दुर्गन्ध आती हो तो राष्ट्र और देश के लिए चार महीनो तक अनिष्ट सूचक होता है। इस प्रकार के वायु से राष्ट्र को अनेक प्रकार के सकट सहन करने पडते है। अनेक स्थानो पर उपद्रव होते है, जिससे प्रशासको को महती कठिनाइयो का सामना करना पडता है। देश के खनिज पदार्थों की उपज कम होती है और वनो मे अग्नि लग जाती है, जिससे देश का धन नष्ट हो जाता है। शनिवार की आषाढी पूर्णिमा को दक्षिणीय वायु चले तो देश को अनेक प्रकार के कष्ट उठाने पडते है। जिस प्रदेश मे इस प्रकार का वायु चलता है उस प्रदेश के सौ-सौ कोश चारो ओर अग्नि-प्रकोप होता है। आषाढी पूर्णिमा को पूर्वीय वायु चले तो देश मे सुख-शान्ति होती है तथा सभी प्रकार की शक्ति बढ़ती है। वन, खनिज पदार्थ, कल-कारखाने आदि की उन्नति होने का सुन्दर अवसर आता है। सोमवार को यदि पूर्वीय हवा प्रात काल से मध्याह्नकाल तक लगातार चलती रहे और हवा मे से सुगन्धि आती हो तो देश का भविष्य उज्ज्वल होता है। सभी प्रकार से देश की समृद्धि होती है। नये-नये नेताओं का नाम होता है, राजनीतिक प्रमुख बढता जाता है, सैनिक शक्ति का भी विकास होता है। यदि थोडी वर्षा के साथ उक्त प्रकार की हवा चले तो देश मे एक वर्ष तक आनन्दोत्सव होते रहते है, सभी प्रकार का अभ्युदय बढता है। शिक्षा

कला-कौशल की वृद्धि होती है और नैतिकता का विकास नागरिको मे पूर्णतया होता है। नेताओं में प्रेमभाव बढता है जिससे वे देश या राष्ट्र के कार्यों को बडे सुन्दर ढंग से सम्पादित करते हैं। गुरुवार को पूर्वीय वायु चले तो देश मे विद्या का विकास, नये-नये अन्वेषण के कार्य, विज्ञान की उन्नति एव नये-नये प्रकार की विद्याओं का प्रसार होता है। नगरो मे सभी प्रकार का अमन चैन रहता है। शुक्रवार को पूर्वीय वायु दिनभर चलता रहे तो शान्ति, सुभिक्ष और उन्नति का सूचक है, इस प्रकार के वायु से देश की सर्वांगीण उन्नति होती है।

व्यापारिक फलादेश—आषाढी पूर्णिमा को प्रात.काल पूर्वीय हवा, मध्याह्न दक्षिणीय हवा, अपराह्न काल पश्चिमीय हवा और सन्ध्या समय उत्तरीय हवा चले तो एक महीने मे स्वर्ण के व्यापार मे सवाया लाभ, चाँदी के व्यापार मे डेढ़ गुना तथा गुड के व्यापार मे बहुत लाभ होता है। अन्न का भाव सस्ता होता है तथा कपडे और सूत के व्यापार में तीन महीना तक लाभ होता रहता है। यदि इस दिन प्रात काल से सूर्यास्त तक दक्षिणीय हवा ही चलती रह तो सभी वस्तुएँ पन्द्रह दिन के बाद ही मँहगी हो जाती है और यह मँहगी का बाजार लगभग छ महीने तक चलता है। इस प्रकार के वायु का फल विशेषत. यह है कि अन्न का भाव बहुत मँहगा होता है तथा अन्न की कमी भी हो जाती है। यदि आधे दिन दक्षिणीय वायु चले, उपरान्त पूर्वीय या उत्तरीय वायु चलने लगे तो व्यापारिक जगत् मे विशेष हलचल रहती है तथा वस्तुओ के भाव स्थिर नही रहते है। सट्टे के व्यापारियो के लिए उक्त प्रकार का निमित्त विशेष लाभ सूचक है। यदि पूर्वार्ध भाग मे उक्त तिथि को उत्तरीय वायु चले और उत्तरार्ध मे अन्य किसी भी दिशा की वायु चलने लगे तो जिस प्रदेश मे यह निमित्त देखा गया है, उस प्रदेश के दो-दो सौ कोश तक अनाज का भाव सस्ता तथा वस्त्र को छोड अवशेष सभी वस्तुओ का भाव भी सस्ता ही रहता है। केवल दो महीने तक वस्त्र तथा श्वेत रग के पदार्थों के भाव ऊँचे चढते है तथा इन वस्तुओ की कमी भी रहती है। सोना, चाँदी और अन्य प्रकार की खनिज धातुओ का मूल्य प्रायः सम रहता है। इस निमित्त के दो महीने के उपरान्त सोने के मूल्य मे वृद्धि होती है, यद्यपि कुछ ही दिनो के पश्चात् पुन. उसका मूल्य गिर जाता है। पशुओ का मूल्य बहुत बढ़ जाता है। गाय, बैल और घोडे के मूल्य मे पहले से लगभग सवाया अन्तर आ जाता है। यदि आषाढी पूर्णिमा की रात मे ठीक बारह बजे के समय दक्षिणीय वायु चले तो उस प्रदेश मे छः महीनों तक अनाज की कमी रहती है और अनाज का मूल्य भी बहुत बढ़ जाता है। यदि उक्त तिथि की मध्यरात्रि मे उत्तरीय हवा चलने लगे तो मसाला, नारियल, सुपाडी आदि का भाव ऊँचा उठता है, अनाज सस्ता होता है। सोना, चाँदी का भाव पूर्ववत् ही रहता है। यदि श्रावण कृष्णा प्रतिपदा को सूर्योदय काल मे पूर्वीय हवा, मध्याह्न उत्तरीय, अपराह्न मे पश्चिमीय हवा और

सन्ध्या काल में उत्तरीय हवा चलने लगे तो लगभग एक वर्ष तक अनाज सस्ता रहता है, केवल आश्विन मास मे अनाज मँहगा होता है, अवशेष सभी महीनो मे अनाज सस्ता ही रहता है। सोना, चाँदी और अभ्रक का भाव आश्विन से माघ तक सस्ता तथा फाल्गुन से ज्येष्ठ तक मंहगा रहता है। व्यापारियो को कुछ लाभ ही रहता है। उक्त प्रकार के वायु निमित्त से व्यापारियो के लिए शुभ फलादेश ही समझा जाता है। यदि इस दिन सन्ध्या काल मे वर्षा के साथ उत्तरीय हवा चले तो अगले दिन से ही अनाज मँहगा होने लगता है। उपभोग और विलास की सभी वस्तुओ के मूल मे वृद्धि हो जाती है, विशेष रूप से आभूषणो के मूल्य भी बढ जाते है। जूट, सन, मूज आदि का भाव भी बढता है। रेशम की कीमत पहले से डेढ़ गुनी हो जाती है। काले रग की प्राय सभी वस्तुओ के भाव सम रहते है। हरे, लाल और पीले रग की वस्तुओ का मूल्य वृद्धिगत होता है। श्वेत रग के पदार्थों का मूल्य सम रहता है। यदि उक्त तिथि को ठीक दोपहर के समय पश्चिमीय वायु चले तो सभी वस्तुओं का भाव सस्ता रहता है; फिर भी व्यापारियो के लिए यह निमित्त अशुभ सूचक नही, उन्हे लाभ होता है। यदि श्रावणी पूर्णिमा को प्रात काल वर्षा हो और दक्षिणीय वायु भी चले तो अगले दिन से ही सभी वस्तुओ की मँहगाई समझ लेनी चाहिए। इस प्रकार के निमित्त का प्रधान फलादेश खाद्य पदार्थों के मूल्य मे वृद्धि होना है। खनिज धातुओ के मूल्य मे भी वृद्धि होती है, पर थोडे दिनो के उपरान्त उनका भाव भी नीचे उतर आता है। यदि उक्त तिथि को पूरे दिन एक ही प्रकार की हवा चलती रहे तो वस्तुओ के भाव सस्ते और हवा बदलती रहे तो वस्तुओ के भाव ऊँचे उठते हैं। विशेषत मध्याह्न और मध्यरात्रि मे जिस प्रकार की हवा हो, वैसा ही फल समझना चाहिए। पूर्वीय और उत्तरीय हवा से वस्तुएँ सस्ती और पश्चिमीय और दक्षिणीय हवा के चलने से वस्तुएं मँहगी होती हैं।

दशमोऽध्यायः

अथातः सम्प्रवक्ष्यामि प्रवर्षणं[1] निबोधत।
प्रशस्तमप्रशस्तं च यथावदनुपूर्वतः[2] ॥1॥

अब प्रवर्षण का वर्णन किया जाता है। यह भी पूर्व की तरह प्रशस्त—शुभ

1 मेघवर्षं आ०, प्रवर्षन्त मु० A. D.। 2. अनुपूर्वश. मु०।

और अप्रशस्त—अशुभ इस प्रकार दो तरह का होता है ॥1॥

ज्येष्ठे[1] मूलमतिक्रम्य [2]पतन्ति बिन्दवो यदा ।
प्रवर्षण तदा[3] ज्ञेयं शुभ वा यदि वाऽशुभम् ॥2॥

ज्येष्ठ मास मे मूल नक्षत्र को बिताकर यदि वर्षा हो तो उसके शुभाशुभ का विचार करना चाहिए ॥2॥

आषाढे शुक्लपूर्वासु ग्रीष्मे मासे तु पश्चिमे ।
[4]देव: प्रतिपदायां[5] तु यदा[6] कुर्यात् प्रवर्षणम् ॥3॥
चतु.षष्टिमाढकानि तदा वर्षति वासव:[7] ।
निष्पद्यन्ते च सस्यानि सर्वाणि निरुपद्रवम् ॥4॥

ग्रीष्म ऋतु मे शुक्ला प्रतिपाद को पूर्वाषाढा नक्षत्र मे पश्चिम दिशा से बादल उठकर वर्षा हो तो 64 आढक प्रमाण वर्षा होती है ओर निरुपद्रव—बिना किसी बाधा के सभी प्रकार के अनाज उत्पन्न होते है ॥3-4॥

धर्मकामार्था[8] वर्तन्ते[9] परचक्र प्रणश्यति[10] ।
क्षेम सुभिक्ष[11]मारोग्य दशरात्र[12] त्वपग्रहम् ॥5॥

उक्त प्रकार के प्रवर्षण से धर्म, काम और धन विद्यमान रहते है तथा क्षेम, सुभिक्ष और आरोग्य की वृद्धि होती है और परचक्र—परशासन का भय दूर हो जाता है किन्तु दस दिन के बाद पराजय होती है—अशुभ फल घटित होता है ॥5॥

[13]उत्तराभ्यामाषाढाभ्यां यदा देव प्रवर्षति ।
विज्ञेया[14] द्वादश द्रोणा अतो वर्षं सुभिक्षदम्[15] ॥6॥
तदा निम्नानि वातानि[16] मध्यम वर्षणं भवेत् ।
सस्यानां चापि निष्पत्ति सुभिक्षं क्षेममेव च ॥7॥

जब उत्तराषाढा नक्षत्र मे वर्षा होती है, तब 12 द्रोण प्रमाण जल की वर्षा होती है तथा सुभिक्ष भी होता है । मन्द-मन्द वायु चलता है, मध्यम वर्षा होती है, अनाजो की उत्पत्ति होती है, सुभिक्ष और कल्याण-मगल होते है ॥6-7॥

1. ज्यष्ठो मु० A D । 2. पतन्ते मु० B C D । 3 यथा मु० A B D । 4. मेघ मु० C D । 5 प्रतिपादनेह मु० C । 6 यद्, मु० A, तदा मु० D । 7 माधव आ० । 8. धर्माथिकामा आ० । 9 प्रवर्तन्ते मु० A D । 10 प्रशाम्यन्ति मु० C । 11 सुभिक्ष मु० । 12 वशगाजा मु० । 13 उत्तरा मु० C । 14 विज्ञेय मु० C । 15 सुभिक्षकम् मु० A । 16 वाप्यानि मु० B. ।

श्रवणेन वारि विज्ञेयं श्रेष्ठं सस्यं च निर्दिशेत् ।
चौराश्च प्रबला[1] ज्ञेया व्याधयोऽत्र पृथग्विधा: ॥8॥
क्षेत्राण्यत्र प्ररोहन्ति दंष्ट्रानां[2] नास्ति जीवितम् ।
अष्टादशाह जानीयादपग्रहं[3] न संशय: ॥9॥

यदि श्रवण नक्षत्र मे जल की वर्षा हो तो अन्न की उपज अच्छी होती है, चोरो की शक्ति बढती है और अनेक प्रकार के रोग उत्पन्न होते हैं । खेतो मे अन्न के अकुर अच्छी तरह उत्पन्न होते है, दष्ट्रो—चूहो के लिए तथा डास, मच्छरो के लिए यह वर्षा हानिकारक है, उनकी मृत्यु होती है । अठारह दिनो के पश्चात् अपग्रह-पराजय तथा अशुभ फल की प्राप्ति होती है, इसमे सन्देह नही ॥8-9॥

आढकानि धनिष्ठायां[4] सप्तपञ्च[5] समादिशेत्[6] ।
मही सस्यवती ज्ञेया वाणिज्यं च विनश्यति ॥10॥
क्षेमं सुभिक्षमारोग्यं सप्तरात्रभयग्रह ।
प्रबला दंष्ट्रिणो ज्ञेया मूषका: शलभा: शुका. ॥11॥

धनिष्ठा नक्षत्र मे वर्षा हो तो उस वर्ष 57 आढक वर्षा होती है, पृथ्वी पर फसल अच्छी उत्पन्न होती है और व्यापार गड़बडा जाता है । इस प्रकार की वर्षा से क्षेम-कल्याण, सुभिक्ष और आरोग्य होता है किन्तु सात दिनो के उपरान्त अपग्रह—अशुभ का फल प्राप्त होता है । दन्तधारी प्राणी मूषक, पतग, तोता आदि प्रबल होते हैं अर्थात् उनके द्वारा फसल को हानि पहुँचती है ॥10-11॥

खारीस्तु वारिणो [7]विन्द्यात् सस्याना [8]चाप्युपद्रवम् ।
चौरास्तु प्रबला ज्ञेया न च कश्चिदपग्रह [9] ॥12॥

शतभिषा नक्षत्र मे वर्षा हो तो फसल उत्पन्न होने मे अनेक प्रकार के उपद्रव होते है । चोरो की शक्ति बढती है, किन्तु अशुभ किसी का नही होता ॥12॥

पूर्वाभाद्रपदायां तु यदा मेघ. प्रवर्षति ।
चतु:षष्टिमाढकानि तदा वर्षति सर्वश: ॥13॥
सर्वधान्यानि जायन्ते बलवन्तश्च तस्करा. ।
[10]नाणकं क्षुभ्यते[11] चापि दशरात्रमपग्रह: ॥14॥

पूर्वाभाद्रपद नक्षत्र मे जब मेघ बरसता है तो उस समय सर्वत्र 64 आढक प्रमाण वर्षा होती है । सभी प्रकार के अनाज उत्पन्न होते है, चोरों की शक्ति

---

1 प्रलया मा० । 2 नष्टाना मु० C । 3 अवग्रह मु० C । 4 धनिष्ठायाम् आ० । 5 सप्तपञ्चाशतम् मु० C । 6 वदेत् । 7 ज्ञेया मु० A. B D. । 8 अप्यपद्रवम् मु० A । 9 उपग्रह मु० A । 10. नायक मु० B. । 11. विम्यते आ० ।

बढ़ती है तथा मुद्रा का चलन तेज हो जाता है। लेकिन दस दिन के बाद अनिष्ट या अशुभ होता है ॥13-14॥

नवतिराढकानि स्युरुत्तरायां समादिशेत्।
स्थलेषु वापयेद् बीजं सर्वसस्यं[1] समृद्धयति ॥15॥
क्षेमं सुभिक्षमारोग्यं विंशद्रा[2]त्रमपग्रह.।
विवस्ताना विजानीयाद् भद्रबाहुवचो यथा ॥16॥

यदि प्रथम वर्षा उत्तराभाद्रपद नक्षत्र मे हो तो 90 आढक प्रमाण जल-वृष्टि होती है। स्थल मे बोया गया बीज भी समृद्धि को प्राप्त होता है, तथा सभी प्रकार के अनाज बढ़ते है। क्षेम, सुभिक्ष और आरोग्य की प्राप्ति होती है तथा 20 दिन के पश्चात् अ ग्रह—अशुभ होता है, ऐसा भद्रबाहु स्वामी का वचन है ॥15-16॥

चतु.षष्टिमाढकानीह रेवत्यामभिनिर्दिशेत्।
सस्यानि च समृद्धयन्ते सर्वाण्येव यथाक्रमम् ॥17॥
उत्पद्यन्ते[3] च राजान: परस्परविरोधिन.[4]।
यानयुग्यानि शोभन्ते [5]बलवद्दंष्ट्रिवर्धनम् ॥18॥

यदि प्रथम वर्षा रेवती नक्षत्र मे हो तो उस वर्ष 64 आढक प्रमाण जल-वृष्टि होती है और क्रम स सभी प्रकार के अनाज की समृद्धि होती है। राजाओ मे परस्पर विरोध उत्पन्न होता है, सेना और दष्ट्रधारी—चूहो की वृद्धि होती है ॥17-18॥

एकोनानि[6] तु पंचाशदाढकानि समादिशेत्।
अश्विन्यां कुरुते यत्र प्रवर्षणमसशय: ॥19॥
[7]भवेतामुभये [8]सस्ये पीडयन्ते यवना शका।
गान्धारिकाश्च [9]काम्बोजा: पांचालाश्च चतुष्पदा ॥20॥

यदि प्रथम वर्षा अश्विनी नक्षत्र मे हो तो 49 आढ़क जल की वर्षा होती है, इसमे कोई भी सन्देह नही है। कार्तिकी और वैशाखी दोनो ही प्रकार की फसल होती है। यवन, शक, गान्धार, काम्बोज, पाचाल और चतुष्पद पीड़ित होते है अर्थात् उन्हे नाना प्रकार के कष्ट होते है ॥19-20॥

एकोनविंशतिर्विन्द्याद्वाढकानि न संशय.।
भरण्यां वासवश्चैव यदा कुर्यात् प्रवर्षणम् ॥21॥

---

1 सर्वमुक्त आ०। 2 विंशराव मु० A B D। 3. उद्वेजन्ते मु० A B D। 4 परस्पर-विरोधकृत मु० A, परस्परविनाशिन: मु० C। 5 बलवद्राष्ट्रबन्धनम् मु०। 6 एकान्यूनानि मु० C। 7. भवेत् मु०, भवे मु०, D, भवेतत् मु० C। 8 वापि मु० C। 9 शकाम्बोजा आ०।

व्याला[1] सरीसृपाश्चैव मरणं[1] व्याधयो रुजः[1] ।
सस्यं कनिष्ठं[2] विज्ञेयं प्रजाः सर्वाश्च दुखिताः ॥22॥

जब प्रथम वर्षा का प्रारम्भ भरणी नक्षत्र में होता है, उस समय वर्ष भर में निस्सन्देह उन्नीस आढक प्रमाण जल की वर्षा होती है। सर्प और सरीसृप— दुमुही, विभिन्न जातियों के सर्पादि, मरण, व्याधि, रोग आदि उत्पन्न होते हैं। अनाज भी निम्न कोटि का उत्पन्न होता है और प्रजा को सभी प्रकार से कष्ट उठाने पड़ते हैं ॥21-22॥

आढकान्येकपंचाशत् कृत्तिकासु समाविशेत् ।
तदा त्वपग्रहो ज्ञेयः सप्तविंशतिरात्रक ॥23॥
द्वैमासिकस्तदा [3]देवश्चित्रं सस्यमुपद्रवम् ।
निम्नेषु वापयेद् बीजं भयमग्नेर्विनिर्दिशेत् ॥24॥

यदि प्रथम वर्षा कृत्तिका नक्षत्र में हो तो 51 आढक प्रमाण वर्षा समझनी चाहिए और 27 दिनों के बाद अनिष्ट समझना चाहिए। उस वर्ष मेघ दो महीने तक ही बरसते है, अनाज की उत्पत्ति में विघ्न आते है, अत. निम्न स्थानों में बीज बोना अच्छा होता है। इस वर्ष अग्नि-भय भी कहा है ॥23-24॥

आढकान्येकविंशच्च[4] रोहिण्यामभिवर्षति[5] ।
अपग्रहं निजानीयात् सर्व मेकादशाहिकाम् ॥25॥
[6]सुभिक्ष क्षेममारोग्य नैऋतीयं बहूदकम् ।
स्थलेषु वापयेद् बीजं राज्ञो विजयमादिशेत् ॥26॥

यदि प्रथम वर्षा रोहिणी नक्षत्र में हो तो 91 आढक प्रमाण उस वर्ष जल बरसता है और 11 दिनों के बाद अपग्रह—अनिष्ट होता है। उस वर्ष क्षेम, सुभिक्ष और आरोग्य समझना चाहिए। नैऋत्य दिशा की ओर से बादल उठकर अधिक जल की वर्षा करते हैं। स्थल में बीज बोने पर भी अच्छी फसल उत्पन्न होती है तथा राजा की विजय की सूचना भी समझनी चाहिए ॥25-26॥

आढकान्येकनवति. सौम्ये प्रवर्षते यदा ।
[7]अपग्रहं तदा विन्द्यात् सर्वमेकादशाहिकम् ॥27॥
महामात्याश्च पीड्यन्ते [8]क्षुधा व्याधिश्च जायते ।
[9]क्षेमं सुभिक्षमारोग्यं दंष्ट्रिण प्रबलास्तदा ॥28॥

1 मृत्युव्याधितो विविधैर्वा: मु० A । 2 कनिष्ठक शेय। 3. मेघ. मु०। 4. नवतिं मु०। 5. विनिर्दिशेत् मु०। 6 मुद्रित प्रति में 'क्षेम सुभिक्षमारोग्य' पाठ मिलता है। 7 तदाऽप्यपग्रहं विन्द्यात् वासराणि चतुर्दश मु०। 8. बहुव्याधि विनिर्दिशेत्। 9. सुभिक्ष चैव विज्ञेयं दंष्ट्रिण प्रबलास्तथा।

यदि प्रथम वर्षा मृगशिरा नक्षत्र मे हो तो 91 आढक प्रमाण उस वर्ष जल की वर्षा समझ लेनी चाहिए और ग्यारह (चौदह) दिन के उपरान्त अपग्रह—अनिष्ट समझना चाहिए । प्रधानमन्त्री को पीडा तथा अनेक प्रकार के रोग फैलते है । वैसे सुभिक्ष एवं चूहो का प्रकोप उस वर्ष मे समझना चाहिए ।।27-28।।

आढकानि तु द्वात्रिंशदार्द्रायां चापि निर्दिशेत्[1] ।
दुर्भिक्षं व्याधिमरणं सस्यघातमुपद्रवम् ।।29।।
श्रावणे प्रथमे मासे [2]वर्षं वा न च वर्षति ।
प्रोष्ठपद च वर्षित्वा शेषकाल न वर्षति ।।30।।

यदि प्रथम वर्षा आर्द्रा मे हो तो 32 आढक प्रमाण उस वर्ष जल की वर्षा होती है । उस वर्ष दुर्भिक्ष, नाना प्रकार की व्याधियाँ, मृत्यु और फसल को बाधा पहुँचाने वाले अनेक प्रकार के उपद्रव होते है । श्रावण मास के प्रथम पक्ष —कृष्ण पक्ष मे अनेक बार वर्षा होती है, किन्तु भाद्रपद मास मे एक बार जल बरसता है, फिर वर्षा नही होती ।।29-30।।

आढकान्येकनर्वात विन्द्याच्चैव पुनर्वसौ ।
सस्यं निष्पद्यते क्षिप्रं व्याधिश्च प्रबला[3] भवेत् ।।31।।

यदि पुनर्वसु नक्षत्र मे प्रथम वर्षा हो तो 91 आढक प्रमाण उस वर्ष जल-वृष्टि होती है, अनाज शीघ्र ही उत्पन्न होता हे । रोगो का जोर रहता है ।।31।।

चत्वारिंशच्च द्वे वाऽपि जानीयादाढकानि[4] च ।
पुष्येण मन्दवृष्टिश्च निम्ने बीजानि वापयेत् ।।32।।
पक्षमश्वयुजे चापि[5] पक्षं प्रोष्ठपदे तथा ।
अपग्रहं विजानीयात् बहुलेऽपि प्रवर्षति[6] ।।33।।

पुष्य नक्षत्र मे प्रथम वर्षा हो तो 42 आढक प्रमाण जल-वृष्टि होती है । वर्षा मन्द-मन्द धीरे-धीरे होती है, अत निम्न स्थानो पर बीज बोने से अच्छी फसल उत्पन्न होती है । आश्विन और भाद्रपद मास मे कृष्ण पक्ष मे अपग्रह—अनिष्ट होता है तथा वर्षा भी इन्ही पक्षो मे होती है ।।32-33।।

[7]चतुष्षष्टिमाढकानीह तदा वर्षति वासवः ।
यदा श्लेषाश्च कुरुते प्रथमे च प्रवर्षणम् ।।34।।

---

1. अभिनिर्विशेत् मु० । 2. वर्षित्वा न च वर्षति, वर्षच्चैव पुन पुन मु० C । 3 बलवान् विदुः मु० । 4. -न्यथ मु० । 5 मासे मु० ।6 प्रवर्षणम् मु० । 7 सख्या 34 का श्लोक मुद्रित प्रति मे नही है ।

सस्यघात विजानीयाद् व्याधिभिश्चोदकेन तु ।
साधवो दु खिता [1]ज्ञेया प्रोष्ठपदमपग्रह: ॥35॥

यदि आश्लेषा नक्षत्र मे प्रथम जल-वृष्टि हो तो 64 आढक प्रमाण जल की वर्षा होती है । फसल मे अनेक प्रकार के रोग लगते हैं, नाना प्रकार के रोगो से जनता मे आतक व्याप्त रहता है, साधुओ को अनेक प्रकार के कष्ट होते है तथा भाद्रपद मास मे अपग्रह —अनिष्ट होता है ॥34-35॥

मघासु खारी विज्ञेया सस्यानाञ्च समुद्भव. ।
कुक्षिव्याधिश्च बलवाननीतिश्च तु जायते ॥36॥

यदि मघा नक्षत्र मे प्रथम जल की वर्षा हो तो खारी प्रमाण—16 द्रोण जल-वृष्टि उस वर्ष होती है और अनाज की उत्पत्ति खूब होती है। पेट के नाना प्रकार के रोग उत्पन्न होने है और अन्याय-नीति का प्रचार होता है ॥36॥

फाल्गुनीषु च पूर्वासु यदा देव: प्रवर्षति ।
खारी तदाऽऽविशेत् पूर्णा तदा स्त्रीणां सुखानि च[2] ॥37॥
सस्यानि फलवन्ति स्युर्वाणिज्यानि विशन्ति च ।
अपग्रहश्चतुस्त्रिंशच्छ्रावणे सप्तरात्रिक: ॥38॥

यदि पूर्वाफाल्गुनी नक्षत्र में प्रथम वर्षा हो तो उस वर्ष खारी प्रमाण —16 द्रोण जल की वर्षा होती है । स्त्रियो को अनेक प्रकार का सुख प्राप्त होता है । कृषि और वाणिज्य दोनो ही सफल होते है । 24 दिनो के पश्चात् अर्थात् श्रावण मास मे 7 दिन व्यतीत होने पर अपग्रह—अनिष्ट होता है ॥37-38॥

उत्तरायां तु फाल्गुन्यां षष्टिसप्त च निर्विशेत् ।
आढकानि सुभिक्ष च क्षेममारोग्यमेव च ॥39॥
बहुजा[3] दीना शीलाश्च धर्मशीलाश्च साधव. ।
अपग्रह विजानीयात् कार्तिके द्वादशाह्निकम् ॥40॥

उत्तराफाल्गुनी नक्षत्र मे प्रथम वर्षा हो तो उस वर्ष 67 आढक प्रमाण जल की वर्षा होती है तथा सुभिक्ष, क्षेम और आरोग्य की प्राप्ति होती है। सभी मनुष्यो मे दानशीलता और साधुओ के धर्मशीलता की वृद्धि होती है । कार्तिक मास मे 12 दिन व्यतीत होने पर अपग्रह—अनिष्ट होता है ॥39-40॥

पश्चाशीतिं विजानीयात् हस्ते प्रवर्षणं यदा ।
तदा निम्नानि वाप्यानि पंचवर्णं च जायते ॥41॥

---

1 विन्द्यात् मु० । 2 च तत्सुखम् मु० । 3. दानशीलाश्च मनुजा मु० ।

संग्रामास्तत्रानुवर्षन्ते शिल्पिकानां सुखोत्तमम् ।
श्रावणाश्वयुजे[1] मासि[2] तथा कार्तिकमेव च ॥42॥
अपग्रहं विजानीयान्मासि[3] मासि दशाहिकम् ।
चौराश्च बलवन्त: स्युरुत्पद्यन्ते च पार्थिवा: ॥43॥

हस्त नक्षत्र मे जब प्रथम वर्षा होती है तो 85 आढक प्रमाण जल उस वर्ष बरसता है। निम्न स्थानो की वापियाँ—बावडियाँ पंचवर्णात्मक हो जाती हैं। इस वर्ष मे युद्ध की वृद्धि होती है, शिल्पियो को उत्तम सुख प्राप्त होता है। श्रावण, आश्विन और कार्तिक इन तीनो महीनो मे से प्रत्येक महीने मे 10 दिन तक अपग्रह—अनिष्ट समझना चाहिए। चोर, सेना—योद्धा और नृपतियो की उत्पत्ति होती है अर्थात् उस वर्ष चोरो की, सैनिको की और नृपतियो की कार्यसिद्धि होती है ॥41-43॥

द्वात्रिंशमाढकानि स्युश्चित्रायां च[4] प्रवर्षणम् ।
चित्र विन्द्यात् तदा सस्य चित्र वर्ष प्रवर्षति[5] ॥44॥
निम्नेषु वापयेद् बीजं स्थलेषु परिवर्जयेत् ।
मध्यमं तं विजानीयाद् भद्रबाहुवचो यथा ॥45॥

चित्रा नक्षत्र मे जिस वर्ष प्रथम वर्षा होती है, उस वर्ष 32 आढक प्रमाण जल की वर्षा होती है। अनाज की उत्पत्ति भी विचित्र रूप से होती है और यह वर्ष भी विचित्र ही होता है। इस वर्ष निम्न स्थानो—आर्द्र स्थानो मे बीज बोना चाहिए, ऊँचे स्थलो मे नही, क्योकि यह वर्ष मध्यम होता है, ऐसा भद्रबाहु स्वामी का वचन है ॥44-45॥

द्वात्रिंशदाढकानि स्यु: स्वातौ स्याच्चेत् प्रवर्षणम् ।
[6]वायुरग्निरनावृष्टि: मासमेक तु वर्षति ॥46॥

स्वाति नक्षत्र मे प्रथम वर्षा हो तो 32 आढक प्रमाण वृष्टि होती है। इस वर्ष मे एक ही महीने तक जल की वर्षा होती है। वायु चलता है, अग्नि बरसती है तथा अनावृष्टि होती है ॥46॥

विशाखासु विजानीयात् खारीमेकां न[7] संशय: ।
सस्य निष्पद्यते चापि वाणिज्य पीड्यते तदा ॥47॥

---

1. युजौ मु० । 2 मासौ मु० । 3 मासे मासे मु० । 4 वर्षण यदा मु० । 5. विनिर्दिशेत्
6. वायुवृष्टिरनावृष्टिमासमेक च वर्षति मु० । 7 खारिरेव न संशय मु० ।

अपग्रह तु जानीयाद् दशाहं प्रौष्ठपादिकम् ।
क्षेमं सुभिक्षमारोग्यं तां समां[1] नाऽत्र संशय: ।।48।।

विशाखा में प्रथम वृष्टि हो तो एक खारी प्रमाण 16 द्रोण निस्सन्देह जल बरसता है। फसल बहुत अच्छी होती है तथा व्यापार भी निर्बाध रूप से चलता है। भाद्रपद मास मे दश दिन जाने पर अपग्रह—अनिष्ट होता है। यो इस वर्ष में निस्सन्देह क्षेम, सुभिक्ष, आरोग्य की स्थिति होती है ।।47-48।।

जानीयादनुराधायां खारीमेकां[2] प्रवर्षणम् ।
[3]तदा सुभिक्षं सक्षेमं परचक्रं प्रशाम्यति ।।49।।
दूरं प्रवासिका यान्ति धर्मशीलाश्च मानवा. ।
मैत्री च स्थावरा ज्ञेया शाम्यन्ते चेतयस्तदा ।।50।।

यदि अनुराधा नक्षत्र मे प्रथम जल-वृष्टि हो तो एक खारी प्रमाण—16 द्रोण प्रमाण जल उस वर्ष बरसता है। क्षेम, सुभिक्ष और आरोग्य रहते हैं तथा परशासन भी शान्त रहता है। इस वर्ष दूर के प्रवासी भी वापस आते हैं, सभी व्यक्ति धर्मात्मा रहते है। मित्रता स्थिर होती है तथा भय और आतंक नष्ट होते जाते हैं ।।49-50।।

ज्येष्ठायामाढकानि स्युर्दशश्चाष्टौ[4] विनिर्दिशेत् ।
स्थलेषु वापयेद् बीजं तदा भूदाहविद्रवम्[5] ।।51।।

ज्येष्ठा नक्षत्र मे प्रथम वर्षा हो तो 18 आढक प्रमाण जल-वृष्टि होती है। स्थल में बीज बोने पर भी फसल उत्तम होती है; किन्तु भूकम्प, भूदाह, आदि उपद्रव भी होते हैं। तात्पर्य यह है कि ज्येष्ठा नक्षत्र की प्रथम वर्षा फसल के लिए उत्तम है ।।51।।

मूलेन खारी [6]विज्ञेया सस्यं सर्वं समृद्ध्यति ।
एकमूलानि पीड्यन्ते [7]वर्द्धन्ते तस्करा अपि ।।52।।

मूल नक्षत्र में प्रथम वर्षा हो तो एक खारी प्रमाण जल बरसता है और सभी प्रकार के अनाजों की उत्पत्ति खूब होती है। सैनिक—योद्धा पीड़ा प्राप्त करते है तथा चोरो की वृद्धि होती है ।।52।।

---

1 सस्य सम्पद्येत् सर्वं वाणिज्य पीड्यते न हि मु० । 2 खारि प्रवर्षणं यदा मु० । 3. क्षेम सुभिक्षमारोग्य मु० । 4 चतुपष्टि मु० । 5. विद्रव मु० । 6 विजानीयात् मु० । 7 चौराश्च प्रबलाश्च ये मु० ।

एतद् व्यासेन कथितं [1]समासाच्छ्रूयतां पुनः ।
भद्रबाहुवचः श्रुत्वा मतिमानवधारयेत् ॥53॥

यह विस्तार से वर्णन किया है, सक्षेप मे पुन सुनिये। भद्रबाहु के वचनो को सुनकर बुद्धिमानों को उनका अवधारण करना चाहिए ॥53॥

द्वात्रिंशदाढकानि स्यु. नक्रमासेषु निर्दिशेत् ।
समक्षेत्रे द्विगुणितं तत् [2]त्रिगुण वाहिकेषु च ॥54॥

नक्रमास—श्रावण मास मे 32 आढक प्रमाण वर्षा हो तो समक्षेत्र मे दुगुनी और निम्न स्थल—आर्द्र स्थलो मे तिगुनी फसल होती है ॥54॥

उल्कावत् साधनं चात्र वर्षण च विनिर्दिशेत् ।
शुभाऽशुभं [3]तदा वाच्य सम्यग् ज्ञात्वा यथाविधि[4] ॥55॥

उल्का के समान वर्षण की सिद्धि भी कर लेनी चाहिए तथा सम्यक् प्रकार जानकर के शुभाशुभ फल का निरूपण करना चाहिए ॥55॥

इति भद्रबाहुके संहितायां महानैमित्तशास्त्रे सकलसारसमुच्चयवर्षणो नाम दशमोऽध्याय परिसमाप्त ।

विवेचन—वर्षा का विचार यद्यपि पूर्वोक्त अध्यायो मे भी हो चुका है, फिर भी आचार्य विशेष महत्ता दिखलाने के लिए पुन विचार करते हैं। प्रथम वर्षा जिस नक्षत्र मे होती है, उसी के अनुसार वर्षा के प्रमाण का विचार किया गया है। आचार्य ऋषिपुत्र ने निम्न प्रकार वर्षा का विचार किया है।

यदि मार्गशीर्ष महीने मे पानी बरसता है तो ज्येष्ठ के महीने मे वर्षा का अभाव रहता है। यदि पौष मास मे बिजली चमककर पानी बरसे तो आषाढ़ के महीने मे अच्छी वर्षा होती है। माघ और फाल्गुन महीनो के शुक्लपक्ष मे तीन दिनो तक पानी बरसता रहे तो छठे और नौवें महीने मे अवश्य पानी बरसता है। यदि प्रत्येक महीने मे आकाश मे बादल आच्छादित रहे तो उस प्रदेश मे अनेक प्रकार की बीमारियाँ होती है। वर्ष के आरम्भ मे यदि कृत्तिका नक्षत्र मे पानी बरसे तो अनाज की हानि होती है और उस वर्ष मे अतिवृष्टि या अनावृष्टि का भी योग रहता है। रोहिणी नक्षत्र मे प्रथम वर्षा होने पर भी देश की हानि होती है तथा असमय मे वर्षा होती है, जिससे फसल अच्छी नही उत्पन्न होती। अनेक प्रकार की व्याधियाँ तथा अनाज की महँगाई भी इस नक्षत्र मे पानी बरसने से होती है। परस्पर कलह और विसंवाद भी होते है। मृगशिर नक्षत्र मे प्रथम वर्षा होने से अवश्य सुभिक्ष होता है। फसल भी अच्छी उत्पन्न होती है। यदि सूर्य नक्षत्र

1. समासेन पुन श्रृणु। 2 त्रिगुण व्याधितेषु च मु०। 3 ततो मु०। 4 क्रमम् मु०।

मृगशिर हो तो खण्डवृष्टि होती है तथा कृषि मे अनेक प्रकार के रोग भी लगते हैं। इस नक्षत्र की वर्षा व्यापार के लिए भी उत्तम नही है। राजा या प्रशासक को भी कष्ट होते हैं। मन्त्री-पुत्र या किसी बडे अधिकारी की मृत्यु भी दो महीने मे होती है। आर्द्रा नक्षत्र मे प्रथम जल-वृष्टि हो तो खण्डवृष्टि का योग रहता है, फसल साधारणतया आधी उत्पन्न होती है। चीनी, गुड़, और मधु का भाव सस्ता रहता है। श्वेत रग के पदार्थों मे कुछ महँगाई आती है। पुनर्वसु नक्षत्र मे प्रथम वर्षा हो तो एक महीने तक लगातार जल बरसता है। फसल अच्छी नही होती तथा बोया गया बीज भी मारा जाता है। आश्विन और कार्त्तिक में वर्षा का अभाव रहता है और सभी वस्तुएं प्राय· महंगी होती हैं, लोगो मे धर्माचरण की प्रवृत्ति होती है। रोग-व्याधियो के लिए उक्त प्रकार का वर्ष अत्यन्त अनिष्टकर होता है, सर्वत्र अशान्ति और असन्तोष दिखलाई पडता है, तो साधारण जनता का ध्यान धर्म-साधन की ओर अवश्य जाता है। पुष्य नक्षत्र मे प्रथम जल वर्षा होने पर समयानुकूल जल की वर्षा एक वर्ष तक होती रहती है, कृषि बहुत उत्तम होती है, खाद्यान्नो के सिवाय फलो और मेवो की अधिक उत्पत्ति होती है। प्राय समस्त वस्तुओ के भाव गिरते हैं। जनता मे पूर्णतया शान्ति रहती है, प्रशासक वर्ग की समृद्धि बढती है। जनसाधारण मे परस्पर विश्वास और सहयोग की भावना का विकास होता है। यदि आश्लेषा नक्षत्र मे प्रथम जल की वर्षा हो तो वर्षा उत्तम नही होती, फसल की हानि होती है, जनता मे असन्तोष और अशान्ति फैलती है। सर्वत्र अनाज की कमी होने से हाहाकार व्याप्त हो जाता है। अग्निभय और शस्त्रभय का आतङ्क उस प्रदेश में अधिक रहता है। चोरी और लूट का व्यापार अधिक बढ़ता है। दैन्य और निराशा का सचार होने से राष्ट्र मे अनेक प्रकार के दोष प्रविष्ट होते हैं। यदि इस नक्षत्र मे वर्षा के साथ ओले भी गिरे तो जिस प्रदेश मे इस प्रकार की वर्षा हुई है, उस प्रदेश के लिए अत्यन्त भयकारक समझना चाहिए। उक्त प्रदेश मे प्लेग, हैजा जैसी सक्रामक बीमारियाँ अधिक बढ़ती है, जनसख्या घट जाती है। जनता सब तरह से कष्ट उठाती है। आश्लेषा नक्षत्र मे तेज वायु के साथ वर्षा हो तो एक वर्ष पर्यन्त उक्त प्रदेश को कष्ट उठाना पडता है, धूल और ककड पत्थरो के साथ वर्षा हो तथा चारो ओर बादल मण्डलाकार बन जाएँ, तो निश्चयत उस प्रदेश मे अकाल पडता है तथा पशुओ की भी हानि होती है और अनेक प्रकार के कष्ट उठाने पडते हैं। प्रशासक वर्ग के लिए उक्त प्रकार की वर्षा भी कष्टकारक होती है।

यदि मघा और पूर्वा फाल्गुनी मे प्रथम वर्षा हो तो समयानुकूल वर्षा होती है, फसल भी उत्तम होती है। जनता मे सब प्रकार का अमन-चैन व्याप्त रहता है। कलाकार और शिल्पियो के लिए उक्त नक्षत्रो की वर्षा कष्टप्रद है तथा

मनोरंजन के साधनो की कमी रहती है। राजनीतिक और सामाजिक दृष्टि से उक्त नक्षत्रों की वर्षा साधारण फल देती है। देश मे सभी प्रकार की समृद्धि बढती है और नागरिको में अभ्युदय की वृद्धि होती है। यद्यपि उक्त नक्षत्रों की वर्षा फसल की वृद्धि के लिए शुभ है, पर आन्तरिक शान्ति मे बाधक होती है। भीतरी आनन्द प्राप्त नही हो पाता और आन्तरिक अशान्ति बनी ही रह जाती है। उत्तरा फाल्गुनी और हस्त नक्षत्र मे प्रथम वर्षा होने से सुभिक्ष और आनन्द दोनों की ही प्राप्ति होती है। वर्षा प्रचुर परिमाण मे होती है, फसल की उत्पत्ति भी अच्छी होती है। विशेषत. धान की फसल खूब होती है। पशु-पक्षियों को भी शान्ति और सुख मिलता है। तृण और धान्य दोनो की उपज अच्छी होती है। आर्थिक शान्ति के विकास के लिए उक्त नक्षत्रो मे वर्षा होना अत्यन्त शुभ है। गुड की फसल बहुत अच्छी होती है तथा गुड का भाव भी सस्ता रहता है। जूट की फसल साधारण होती है, इसका भाव भी आरम्भ मे सस्ता, पर आगे जाकर तेज हो जाता है। व्यापारियो के लिए भी उक्त नक्षत्रो की वर्षा सुखदायक होती है। साधारणतः व्यापार बहुत ही अच्छा चलता है। देश मे कल-कारखानो का विकास भी अधिक होता है। चित्रा नक्षत्र मे प्रथम जल की वर्षा हो तो वर्षा अत्यन्त कम होती है, परन्तु भाद्रपद और आश्विन मे वर्षा का योग अच्छा रहता है। स्वाती नक्षत्र मे प्रथम वर्षा होने से मामूली वर्षा होती है। श्रावण मास में अच्छा पानी बरसता है, जिससे फसल अच्छी हो जाती है। कार्त्तिकी फसल साधारण ही रहती है, पर चैत्री फसल अच्छी हो जाती है, क्योकि उक्त नक्षत्र की वर्षा आश्विन मास मे भी जल की वर्षा का योग उत्पन्न करती है। यदि विशाखा और अनुराधा नक्षत्र में प्रथम जल की वर्षा हो तो उस वर्ष खूब जल-वृष्टि होती है। तालाब और पोखरे प्रथम जल की वर्षा से ही भर जाते है। धान, गेहूँ, जूट और तिलहन की फसल विशेष रूप से उत्पन्न होती है। व्यापार के लिए यह वर्ष साधारणतया अच्छा होता है। अनुराधा मे प्रथम वर्षा होने से गेहूँ मे एक प्रकार का रोग लगता है जिससे गेहूँ की फसल मारी जाती है। यद्यपि गन्ना की फसल बहुत अच्छी उत्पन्न होती है। व्यापार की दृष्टि से अनुराधा नक्षत्र की वर्षा बहुत उत्तम है। इस नक्षत्र मे वर्षा होने से व्यापार मे उन्नति होती है। देश का आर्थिक विकास होता है तथा कला-कौशल की भी उन्नति होती है। ज्येष्ठ नक्षत्र में प्रथम वर्षा होने से पानी बहुत कम बरसता है, पशुओ को कष्ट होता है। तृण की उत्पत्ति अनाज की अपेक्षा कम होती है, जिससे पालतू पशुओ को कष्ट उठाना पडता है। मवेशी का मूल्य सस्ता भी रहता है। दूध की उत्पत्ति भी कम होती है। उक्त प्रकार की वर्षा देश की आर्थिक क्षति की द्योतिका है। धन-धान्य की कमी होती है, सक्रामक रोग बढ़ते हैं। चेचक का प्रकोप विशेष रूप से होता है। सम-शीतोष्ण वाले प्रदेशो को मौसम बदल जाने से यह वर्षा विशेष कष्ट की

सूचिका है। तिलहन और तैल का भाव महँगा रहता है, घृत की कमी रहती है तथा प्रशासक और बड़े धनिक व्यक्तियों को भी कष्ट उठाना पड़ता है। सेना में परस्पर विरोध और जनता में अनेक प्रकार के उपद्रव होते है। साधारण व्यक्तियों को अनेक प्रकार के कष्ट उठाने पड़ते हैं। आश्विन और भाद्रपद के महीनो में केवल सात दिन वर्षा होती है तथा उक्त प्रकार की वर्षा फाल्गुन मास मे घनघोर वर्षा की सूचना देती है जिससे फसल और अधिक नष्ट होती है। चैत्र के महीनो मे जल बरसता है तथा ज्येष्ठ मे भयंकर गर्मी पडती है जिससे महान् कष्ट होता है।

यदि मूल नक्षत्र मे प्रथम वर्षा हो तो उस वर्ष सभी महीनो में अच्छा पानी बरसता है। फसल भी अच्छी उत्पन्न होती है। विशेष रूप से भाद्रपद और आश्विन मे समय पर उचित वर्षा होती है, जिससे दोनो ही प्रकार की फसलें बहुत अच्छी उत्पन्न होती है। व्यापार के लिए भी उक्त प्रकार की वर्षा अच्छी होती है। खनिज पदार्थ और वन-सम्पत्ति की वृद्धि के लिए उक्त प्रकार की वर्षा बहुत अच्छी होती है। मूल नक्षत्र की वर्षा यदि गर्जना के साथ हो तो माघ मे भी जल की वर्षा होती है। बिजुली अधिक कड़के तो फसल मे कमी रहती है। शान्त और सुन्दर मन्द-मन्द वायु चलते हुए वर्षा हो तो सभी प्रकार की फसलें अत्युत्तम होती हैं। धान की उत्पत्ति अत्यधिक होती है। गाय-बैल आदि मवेशी को भी चावल खाने को मिलते हैं। चावल का भाव भी सस्ता रहता है। गेहूँ, जौ और चना की फसल भी साधारणत उत्तम होती है। चने का भाव अन्य अनाजो की अपेक्षा महँगा रहता है तथा दाल वाले सभी अनाज महँगे होते हैं। यद्यपि इन अनाजो की उत्पत्ति भी अधिक होती है फिर भी इनका मूल्य वृद्धिगत होता है। उत्तराषाढ़ नक्षत्र मे प्रथम वर्षा हो तो अच्छी वर्षा होती है तथा हवा भी तेजी से चलती है। इस नक्षत्र मे वर्षा होने से चैत्र वाली फसल बहुत अच्छी होती है, अगहनी धान भी अच्छा होता है; किन्तु कार्त्तिकी अनाज कम उत्पन्न होते हैं। नदियों में बाढ़ आती है, जिससे जनता को अनेक प्रकार के कष्ट सहन करने पडते हैं। भाद्रपद और पौष मे हवा चलती है, जिससे फसल को भी क्षति होती है। श्रवण नक्षत्र मे प्रथम वर्षा हो तो कार्त्तिक मास मे जल का अभाव और अवशेष महीनो मे जल की वर्षा अच्छी होती है। भाद्रपद मे अच्छा जल बरसता है, जिससे धान, मकई, ज्वार और बाजरा की फसलें भी अच्छी होती हैं। आश्विन मे जल की वर्षा शुक्ल पक्ष मे होती है जिससे फसल अच्छी हो जाती है। गेहूँ में एक प्रकार का कीडा लगता है, जिससे इसकी फसल मे क्षति उठानी पड़ती है। उक्त प्रकार की वर्षा आश्विन, कार्त्तिक और चैत्र के महीनो मे रोगो की सूचना देती है। छोटे बच्चो को अनेक प्रकार के रोग होते हैं। स्त्रियो के लिए यह वर्षा उत्तम है, उनका सम्मान बढ़ता है तथा वे सब प्रकार

से शान्ति प्राप्त करती हैं। धनिष्ठा नक्षत्र मे जल की वर्षा होने पर पानी श्रावण, भाद्रपद, आश्विन, कार्त्तिक, माघ और वैशाख मे खूब बरसता है। फसल कहीं-कहीं अतिवृष्टि के कारण नष्ट भी हो जाती है। आर्थिक दृष्टि से उक्त प्रकार की वर्षा अच्छी होती है। देश के वैभव का भी विकास होता है। यदि गर्जन-तर्जन के साथ उक्त नक्षत्र मे वर्षा हो तो उपर्युक्त फल का चतुर्थांश फल कम समझना चाहिए। व्यापार के लिए भी उक्त प्रकार की वर्षा मध्यम है। यद्यपि विदेशो से व्यापारिक सम्बन्ध बढता है तथा प्रत्येक वस्तु के व्यापार मे लाभ होता है। धनिष्ठा नक्षत्र के आरम्भ मे ही जल की वर्षा हो तो फसल उत्तम और अन्तिम तीन घटियो मे जल बरसे तो साधारण फल होता है और वर्षा भी मध्यम ही होती है। शतभिषा नक्षत्र मे जल की प्रथम वर्षा हो तो बहुत पानी बरसता है। अगहनी फसल मध्यम होती है, पर चैती फसल अच्छी उपजती है। व्यापार मे हानि उठानी पडती है, जूट और चीनी के व्यापार मे साधारण लाभ होता है। पूर्वाभाद्रपद नक्षत्र के आरम्भ की पाँच घटियो मे जल बरसे तो फसल मध्यम और वर्षा भी मध्यम होती है। माघ मास मे वर्षा का अभाव होने से चैती फसल मे कमी आती है। यद्यपि चातुर्मास मे जल खूब बरसता है, फिर भी फसल मे न्यूनता रह जाती है। अन्तिम की घटियो मे जल की वर्षा होने से अगहन मे पानी की वर्षा होती है, फसल भी अच्छी उत्पन्न होती है। धान की फसल मे रोग लग जाते हैं, फिर भी फसल मध्यम हो ही जाती है। यदि उक्त नक्षत्र के मध्य भाग मे वर्षा हो तो अधिक जल की वर्षा होती है तथा आवश्यकतानुसार जल बरसने से फसल बहुत उत्तम होती है। व्यापारियो के लिए उक्त प्रकार की वर्षा हानि पहुँचाने वाली होती है। यदि उत्तराभाद्रपद विद्ध पूर्वाभाद्रपद मे वर्षा आरम्भ हो तो शासको के लिए अशुभकारक होती है तथा देश की समृद्धि मे भी कमी आती है।

उत्तराभाद्रपद नक्षत्र मे प्रथम वर्षा हो तो चातुर्मास मे अच्छी वर्षा होती है। फसल अधिक वृष्टि के कारण कुछ बिगड जाती है। कार्त्तिक मास मे आने वाली फसलों मे कमी होती है। चैती फसल अच्छी होती है। ज्वार और बाजरा की उत्पत्ति बहुत कम होती है। उत्तराभाद्रपद के प्रथम चरण मे वर्षा आरम्भ होकर बन्द हो जाय तो कार्त्तिक मे पानी नही बरसता, अवशेष महीनों मे वर्षा होती है। फसल भी उत्तम होती है। द्वितीय चरण मे वर्षा होकर तृतीय चरण मे समाप्त हो तो वर्षा समयानुकूल होती है और फसल भी उत्तम होती है। यदि उत्तराषाढा के तृतीय चरण मे वर्षा हो तो चातुर्मास मे वर्षा होने के साथ मार्गशीर्ष और माघ मास मे भी पर्याप्त वर्षा होती है। चतुर्थ चरण मे वर्षा आरम्भ हो तो भाद्रपद मास मे अत्यल्प पानी बरसता है। आश्विन मास मे साधारण वर्षा होती है। माघ मास मे वर्षा होने के कारण गेहूँ-चने की फसल बहुत अच्छी

होती है। रेवती नक्षत्र मे वर्षा आरम्भ हो तो अनाज का भाव ऊँचा हो जाता है, वर्षा साधारणत. अच्छी होती है। श्रावण मास के शुक्लपक्ष मे केवल पाँच दिन ही वर्षा होने का योग रहता है। भाद्रपद और आश्विन मे यथेष्ट जल बरसता है। भाद्रपद मास मे वस्त्र और अनाज महँगे होते है। कार्त्तिक मास के अन्त मे भी जल की वर्षा होती है। रेवती नक्षत्र के प्रथम चरण मे वर्षा होने पर चातुर्मास मे यथेष्ट वर्षा होती है तथा पौष और माघ मे भी वर्षा होने का योग रहता है। वस्तुओ के भाव अच्छे रहते है। गुड के व्यापार में अच्छा लाभ होता है। देश मे सुभिक्ष और सुख-शान्ति रहती है। यदि रेवती नक्षत्र लगते ही वर्षा आरम्भ हो जाय तो फसल के लिए मध्यम है, क्योकि अतिवृष्टि के कारण फसल खराब हो जाती है। चैती फसल उत्तम होती है, अगहनी मे भी कमी नही आती, केवल कार्तिकीय फसल मे कमी आती है। मोटे अनाजो की उत्पत्ति कम होती है। श्रावण के महीने मे प्रत्येक वस्तु महँगी होती है। यदि रेवती नक्षत्र के तृतीय चरण मे वर्षा हो तो भाद्रपद मास सूखा जाता है, केवल हल्की वर्षा होकर रुक जाती है। आश्विन मास मे अच्छी वर्षा होती है, जिससे फसल साधारणत अच्छी हो जाती है। श्रावण से आश्विन मास तक सभी प्रकार का अनाज महँगा रहता है। अन्य वस्तुओ मे साधारण लाभ होता है। घी का भाव इस वर्ष अधिक ऊँचा रहता है। मवेशी की भी कमी रहती है, मवेशी मे एक प्रकार का रोग फैलता है, जिससे मवेशी को क्षति होती है। द्वितीय चरण के अन्त मे वर्षा आरम्भ होने पर वर्ष के लिए अच्छा फलादेश होता है। गेहूँ, चना और गुड का भाव प्राय सस्ता रहता है, केवल मूल्यवान् धातुओ का भाव ऊँचा उठता है। खनिज पदार्थों की उत्पत्ति इस वर्ष अधिक होती है तथा इन पदार्थों के व्यापार मे भी लाभ रहता है। रेवती नक्षत्र के तृतीय चरण मे वर्षा हो तो प्राय अनावृष्टि का योग समझना चाहिए। श्रावण के पाँच दिन, भादो मे तीन और आश्विन में आठ दिन जल की वर्षा होती है। फसल निकृष्ट श्रेणी की उत्पन्न होती है, वस्तुओ के भाव महँगे रहते है। देश मे अशान्ति और लूट-पाट अधिक होती है। चतुर्थ चरण मे वर्षा होने से समयानुकूल पानी बरसता है, फसल भी अच्छी होती है। व्यापारियो के लिए भी यह वर्षा उत्तम होती है। यदि रेवती नक्षत्र का क्षय हो और अश्विनी मे वर्षा आरम्भ हो तो इस वर्ष अच्छी वर्षा होती है, पर मनुष्य और पशुओ को अधिक शीत पडने के कारण महान् कष्ट होता है। फसल को भी पाला मारता है। यदि अश्विनी नक्षत्र के प्रथम चरण मे वर्षा आरम्भ हो तो चातुर्मास मे अच्छी वर्षा होती है, फसल भी अच्छी उत्पन्न होती है। विशेषत चैती फसल बडे जोर की उपजती है तथा मनुष्य और पशुओ को सुख-शान्ति प्राप्त होती है। यद्यपि इस वर्ष वायु और अग्नि का अधिक प्रकोप रहता है। फिर भी किसी प्रकार की बड़ी क्षति नही होती है। ग्रीष्म ऋतु मे लू अधिक

चलती है, तथा इस वर्ष गर्मी भी भीषण पड़ती है। देश के नेताओं मे मतभेद एवं उपद्रव होते हैं। व्यापारियो के लिए उक्त प्रकार की वर्षा अधिक लाभदायक होती है। प्रथम चरण के लगते ही वर्षा का आरम्भ हो और समस्त नक्षत्र के अन्त तक वर्षा होती रहे तो वर्ष उत्तम नही रहता है। चातुर्मास के उपरान्त जल नहीं बरसता, जिससे फसल अच्छी नही होती। तृतीय चरण मे वर्षा होने पर पौष में वर्षा का अभाव तथा फाल्गुन मे वर्षा होती है। इस चरण मे वर्षा का आरम्भ होना साधारण होता है। वस्तुओं के भाव नीचे गिरते है। आश्विन मास से वस्तुओं के भावो में उन्नति होती है। व्यापारियो को अशान्ति रहती है, बाजार भाव प्राय: अस्थिर रहता है। चतुर्थ चरण मे वर्षा आरम्भ होने पर इस वर्ष उत्तम वर्षा होती है। सभी प्रकार के अनाज अच्छी तादाद मे उत्पन्न होते हैं। भरणी नक्षत्र मे वर्षा आरम्भ हो तो इस वर्ष प्राय. वर्षा का अभाव रहता है या अल्प वर्षा होती है। फसल के लिए भी उक्त नक्षत्र मे जल की वर्षा होना अच्छा नही है। अनेक प्रकार की बीमारियाँ भी उक्त नक्षत्र मे वर्षा होने पर फैलती है। यदि भरणी का क्षय हो और कृत्तिका भरणी के स्थान पर चल रहा हो तो प्रथम वर्षा के लिए बहुत उत्तम है। भरणी के प्रथम और तृतीय चरण बहुत अच्छे है, इनके होते वर्षा होने पर फसल प्राय अच्छी होती है, जनता मे शान्ति रहती है। यद्यपि उक्त चरण में वर्षा होने पर भी जल की कमी ही रहती है, फिर भी फसल हो जाती है। द्वितीय और चतुर्थ चरण मे वर्षा हो तो वर्षा के अभाव के साथ फसल का भी अभाव रहता है। प्राय सभी वस्तुएँ महँगी हो जाती हैं, व्यापारियो को भी साधारण ही लाभ होता है। नाना प्रकार की व्याधियाँ भी फैलती है।

यहाँ वर्षा का आरम्भ श्रावण कृष्ण प्रतिपदा को मानना होगा तथा उसके बाद ही या उसी दिन जो नक्षत्र हो उसके अनुसार उपर्युक्त क्रम से फलाफल अवगत करना चाहिए। समस्त वर्ष का फल श्रावण कृष्ण प्रतिपदा से ही अवगत किया जाता है।

वर्षा का प्रमाण निकालने का विशेष विचार— जिस समय सूर्य रोहिणी नक्षत्र मे प्रवेश करे, उस समय चार घड़ा सुन्दर स्वच्छ जल मंगाएँ और चतुष्कोण घर में गोबर या मिट्टी से लीपकर पवित्र चौक पर चारो घडो को उत्तर, पूर्व, दक्षिण और पश्चिम क्रम से स्थापित कर दें और उन जलपूरित घडो को उसी स्थान पर रोहिणी नक्षत्र पर्यन्त 15 दिन तक रखे, उन्हे तनिक भी अपने स्थान से इधर-उधर न उठाएँ। रोहिणी नक्षत्र के बीत जाने पर उत्तर दिशा वाले घड़े के जल का निरीक्षण करें। यदि उस घडा में पूर्णवार समस्त जल मिले तो श्रावण भर खूब वर्षा होगी। आधा खाली होवे तो आधे महीने वृष्टि और चतुर्थांश जल अवशेष हो तो चौथाई वर्षा एव जल से शून्य घडा देखा जाय तो श्रावण मे वर्षा का अभाव समझना चाहिए। तात्पर्य यह है कि उत्तर दिशा के घड़े के जलप्रमाण

से ही श्रावण में वर्षा का अनुमान लगाया जा सकता है। जितना कम जल घड़े में रहेगा, उतनी ही कम वर्षा होगी। इसी प्रकार पूर्व दिशा के घड़े से भाद्रपद मास की वर्षा, दक्षिण दिशा के घड़े से आश्विन मास की वर्षा, और पश्चिम के घड़े के जल से कार्तिक की वर्षा का अनुमान करना चाहिए। यह एक अनुभूत और सत्य वर्षा परिज्ञान का नियम है।

चित्र

1

उत्तर—श्रावण

4 पश्चिम—कार्तिक	वेदी या चतुष्कोण घर का भाग	2 पूर्व—भाद्रपद

3

दक्षिण—आश्विन

वर्षा का विचार रोहिणी-चक्र के अनुसार भी किया जाता है। 'वर्षप्रबोध' मे मेघविजय गणि ने इस चक्र का उल्लेख निम्न प्रकार किया है :

राशिचक्रं लिखित्वादौ मेषसक्रान्ति भादिकम्।
अष्टाविंशतिक तत्र लिखेन्नक्षत्रसंकुले॥
सन्धौ द्वय जल दद्यादन्यत्रैकैकमेव च।
चत्वार. सागरास्तत्र सन्धयश्चाष्टसंख्यया॥
शृंगाणि तत्र चत्वारि तटान्यष्टौ स्मृतानि च।
रोहिणी पतिता यत्र ज्ञेय तत्र शुभाशुभम्॥
जाता जलप्रदस्यैषा चन्द्रस्य परमप्रिया।
समुद्रेति महावृष्टिस्तटे वृष्टिश्च शोभना॥
पर्वते बिन्दुमात्रा च खण्डवृष्टिश्च सन्धिषु।
सन्धौ वणिग् गृहे वासः पर्वते कुम्भकृद्गृहे॥
मालाकारगृहे सिन्धौ रजकस्य गृहे तटे।

अर्थात् सूर्य की मेष सक्रान्ति के समय जो चन्द्र नक्षत्र हो, उसको आदि कर

अट्ठाईस नक्षत्रों को क्रम से स्थापित करना चाहिए । इनमे दो-दो शृंग मे, एक-एक नक्षत्र सन्धि मे, और एक-एक तट मे स्थापित करे । यदि उक्त क्रम से रोहिणी समुद्र मे पडे तो अधिक वर्षा, शृंग मे पडे तो थोडी वर्षा, सन्धि मे पड़े तो वर्षाभाव और तट मे पड़े तो अच्छी वर्षा होती है । यदि रोहिणी नक्षत्र सन्धि मे हो तो वैश्य के घर, पर्वत पर हो तो कुम्हार के घर, सिन्धु मे हो तो माली के घर और तट मे हो तो धोबी के घर रोहिणी का वास समझना चाहिए । रोहिणी चक्र मे अश्विनी नक्षत्र के स्थान पर मेष सूर्य सक्रान्ति का नक्षत्र रखना होगा ।

रोहिणी—चक्र

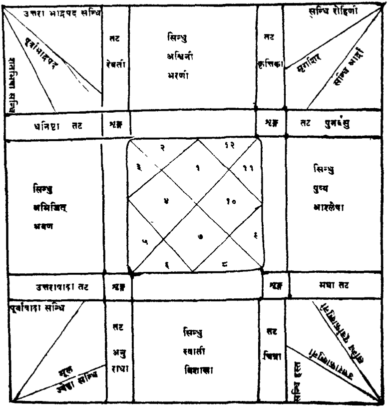

वर्षा का विचार एवं अन्य फलादेश—यदि माघ मास मे मेघ आच्छादित रहे और चैत्र मे आकाश निर्मल रहे तो पृथ्वी में धान्य अधिक उत्पन्न हो और

वर्षा अधिक मनोरम होती है। चैत्र शुक्लपक्ष मे आकाश मे बादलो का छाया रहना शुभ समझा जाता है। यदि चैत्र शुक्ला पचमी को रोहिणी नक्षत्र हो और इस दिन बादल आकाश मे दिखलाई पड़ें तो निश्चय से आगामी वर्ष अच्छी वर्षा होती है। सुभिक्ष रहता है तथा प्रजा मे सुख-शान्ति रहती है। सूर्य जिस समय या जिस दिन आर्द्रा मे प्रवेश करता है, उस समय या उस दिन के अनुसार भी वर्षा और सुभिक्ष का फल ज्ञात किया जाता है। आचार्य मेघ महोदय गार्ग ने लिखा है कि सूर्य रविवार के दिन आर्द्रा नक्षत्र मे प्रवेश करे तो वर्षा का अभाव या अल्पवृष्टि, देश मे उपद्रव, पशुओ का नाश, फसल की कमी, अन्न का भाव महँगा एव देश मे उपद्रव आदि फल घटित होते है। सोमवार को आर्द्रा मे रवि का प्रवेश हो तो समयानुकूल यथेष्ट वर्षा, सुभिक्ष, शान्ति, परस्पर मेल-मिलाप की वृद्धि, सहयोग का विकास, देश की उन्नति, व्यापारियो को लाभ, तिलहन मे विशेष लाभ, वस्त्र-व्यापार का विकास एव घृत सस्ता होता है। मगलवार को आर्द्रा मे रवि का प्रवेश हो तो देश मे धन की हानि, अग्निभय, कलह-विसवादो की वृद्धि, जनता मे परस्पर सघर्ष, चोर-लुटेरो की उन्नति, साधारण वर्षा, फसल मे कमी और वन एव खनिज पदार्थो की उत्पत्ति मे कमी होती है। बुधवार को आर्द्रा मे सूर्य का प्रवेश हो तो अच्छी वर्षा, सुभिक्ष, धान्य भाव सस्ता, रस भाव महँगा, खनिज पदार्थों की उत्पत्ति अधिक, मोती-माणिक्य की उत्पत्ति मे वृद्धि, घृत की कमी, पशुओ मे रोग और देश का आर्थिक विकास होता है। गुरुवार के दिन आर्द्रा मे सूर्य का प्रवेश हो तो अच्छी वर्षा, सुभिक्ष, अर्थ वृद्धि, देश मे उपद्रव, महामारियो का प्रकोप, गुड-गेहूँ का भाव महँगा तथा अन्य प्रकार के अनाजो का भाव सस्ता, शुक्रवार मे प्रवेश हो तो चातुर्मास मे अच्छी वर्षा, पर माघ मे वर्षा का अभाव तथा कार्तिक मे भी वर्षा की कमी रहती है। इसके अतिरिक्त फसल में साधारणत: रोग, पशुओ मे व्याधि और अग्निभय एव शनिवार को प्रवेश हो तो दुष्काल, वर्षाभाव या अल्पवृष्टि, असमय पर अधिक वर्षा, अनावृष्टि के कारण जनता मे अशान्ति, अनेक प्रकार के रोगो की वृद्धि, धान्य का अभाव और व्यापार मे भी हानि होती है। वर्षा का परिज्ञान रवि का आर्द्रा मे प्रवेश होने पर किया जा सकेगा। पर इस बात का ध्यान रखना होगा कि प्रवेश के समय चन्द्र नक्षत्र कौन-सा है? यदि चन्द्र नक्षत्र मृदु और जलसज्ञक हो तो निश्चयत. अच्छी वर्षा होती है। उग्र तथा अग्नि सज्ञक नक्षत्रो मे जल की वर्षा नही होती। प्रात:काल आर्द्रा में प्रवेश होने पर सुभिक्ष और साधारण वर्षा, मध्याह्न काल मे प्रवेश होने पर चातुर्मास के आरम्भ मे वर्षा, मध्य मे कमी और अन्त मे अल्पवृष्टि एवं सन्ध्या समय प्रवेश होने पर अतिवृष्टि या अनावृष्टि का योग रहता है। रात्रि मे जब सूर्य आर्द्रा मे प्रवेश करता है, तो उस वर्ष वर्षा अच्छी होती है, किन्तु फसल साधारण ही रहती है। अन्न का भाव निरन्तर ऊँचा-नीचा होता रहता है। सबसे

उत्तम समय मध्य रात्रि का है। इस समय रवि आर्द्रा मे प्रवेश करता है तो अच्छी वर्षा और धान्य की उत्पत्ति उत्तम होती है। जब सूर्य का आर्द्रा मे प्रवेश हो उस समय चन्द्रमा केन्द्र या त्रिकोण मे प्रवेश करे अथवा चन्द्रमा की दृष्टि हो तो पृथ्वी धान्य से परिपूर्ण हो जाती है। जिस ग्रह के साथ सूर्य का इत्थशाल सम्बन्ध हो, उसके अनुसार भी फलादेश घटित होता है। मगल, चन्द्रमा और शनि के साथ यदि सूर्य इत्थशाल कर रहा हो तो उस वर्ष घोर दुभिक्ष तथा अतिवृष्टि या अनावृष्टि का योग समझना चाहिए। गुरु के साथ यदि सूर्य का इत्थशाल हो तो यथेष्ट वर्षा, सुभिक्ष और जनता में शान्ति रहती है। व्यापार के लिए भी यह योग उत्तम है। देश का आर्थिक विकास होता है। बुध के साथ सूर्य का इत्थशाल हो तो पशुओ के व्यापार मे विशेष लाभ, समयानुकूल वर्षा, धान्य की वृद्धि और सुख-शान्ति रहती है। शुक्र के साथ इत्थशाल होने पर चातुर्मास मे कुल तीस दिन वर्षा होती है।

प्रश्नलग्नानुसार वर्षा का विचार—यदि प्रश्नलग्न के समय चौथे स्थान मे राहु और शनि हो तो उस वर्ष घोर दुर्भिक्ष होता है तथा वर्षा का अभाव रहता है। यदि चौथे स्थान मे मगल हो तो उस वर्ष वर्षा साधारण ही होती है और फसल भी उत्तम नही होती। चौथे स्थान मे गुरु और शुक्र के रहने से वर्षा उत्तम होती है। चन्द्रमा चौथे स्थान मे हो तो श्रावण और भाद्रपद मे अच्छी वर्षा होती है, किन्तु कार्तिक मे वर्षा का अभाव और आश्विन मे कुल सात दिन वर्षा होती है। हवा बहुत तेज चलती है, जिससे फसल भी अच्छी नही हो पाती। यदि प्रश्नलग्न मे गुरु हो और एक या दो ग्रह उच्च के चतुर्थ, सप्तम, दशम भाव मे स्थित हो तो वर्ष बहुत ही उत्तम होता है। समयानुसार यथेष्ट वर्षा होती है, गेहूँ, चना, धान, जौ, तिलहन, गन्ना आदि की फसल बहुत अच्छी होती है। जूट का भाव ऊपर उठता है तथा इसकी फसल भी बहुत अच्छी रहती है। व्यापारियो के लिए वर्ष बहुत ही अच्छा रहता है। यदि प्रश्नलग्न मे कन्या राशि हो तो अच्छी वर्षा, पूर्वीय हवा के साथ होती है। वर्ष मे कुल 90 दिन वर्षा होती है, फसल भी अच्छी होती है। मनुष्य और पशुओ को सुख-शान्ति मिलती है। केन्द्र स्थानो मे शुभ ग्रह हो तो सुभिक्ष और वर्षा होती है जिस दिशा मे क्रूर ग्रह हो अथवा शनि देखें तो उस दिशा मे अवश्य दुर्भिक्ष होता है। यदि वर्षा के सम्बन्ध मे प्रश्न करने वाला पाँचो अँगुलियो को स्पर्श करता हुआ प्रश्न करे तो अल्प वर्षा, फसल की क्षति एव अँगूठे का स्पर्श करता हुआ प्रश्न करे तो साधारण वर्षा होती है। यदि वर्षा के प्रश्न काल मे पृच्छक सिर का स्पर्श करता हुआ प्रश्न करे तो आश्विन मे वर्षा भाव तथा अन्य महीनो में साधारण वर्षा, कान का स्पर्श करता हुआ प्रश्न करे तो साधारण वर्षा, पर भाद्रपद मे कुल दस दिन की वर्षा, आँखो को मलता हुआ प्रश्न करे तो चातुर्मास के सिवा अन्य महीनों मे वर्षा का

अभाव तथा चातुर्मास मे भी कुल सत्ताईस दिन वर्षा; चुटनी को स्पर्श करता हुआ प्रश्न करे तो सामान्यतया सभी महीनो मे वर्षा, फसल उत्तम जनता का आर्थिक विकास, कला-कौशल की वृद्धि, पेट का स्पर्श करता हुआ प्रश्न करे तो साधारण वर्षा, श्रावण और भाद्रपद मे अच्छी वर्षा, फसल साधारण, देश का आर्थिक विकास, अग्निभय, जलभय, बाढ़ आने का भय, कमर स्पर्श करता हुआ प्रश्न करे तो परिमित वर्षा, धान्य की साम्मान्य उत्पत्ति, अनेक प्रकार के रोगों की वृद्धि, वस्तुओ के भाव महँगे, पाँव का स्पर्श करता हुआ प्रश्न करे तो श्रावण में वर्षा की कमी, अन्य महीनो मे अच्छी वर्षा, फसल की अच्छी उत्पत्ति, जौ और गेहूँ की विशेष उपज एव जघा का स्पर्श करता हुआ प्रश्न करे तो अनेक प्रकार के धान्यो की उत्पत्ति, मध्यम वर्षा, देश मे समृद्धि, उत्तम फसल और देश का सर्वांगीण विकास होता है। प्रश्न काल मे यदि मन मे उत्तेजना आये, या किसी कारण से क्रोधादि आ जाये तो वर्षा का अभाव समझना चाहिए। यदि किसी व्यक्ति को प्रश्नकाल मे रोते हुए देखें तो चातुर्मास मे अच्छी वर्षा होती है, किन्तु फसल मे कमी रहती है। व्यापारियो के लिए भी यह वर्ष उत्तम नहीं होता। प्रश्नकाल मे यदि काना व्यक्ति भी वहाँ उपस्थित हो और वह अपने हाथ से दाहिने कान को खुजला रहा हो तो घोर दुर्भिक्ष की सूचना समझनी चाहिए। विकृत अंग वाला किसी भी प्रकार का व्यक्ति वहाँ रहे तो वर्षा की कमी ही समझनी चाहिए। फसल भी साधारण ही होती है। सौम्य और सुन्दर व्यक्तियो का वहाँ उपस्थित रहना उत्तम माना जाता है।

एकादशोऽध्यायः

अथातः सम्प्रवक्ष्यामि गन्धर्वनगरं तथा।
शुभाऽशुभार्थभूतानां [1]निर्ग्रन्थस्य च भाषितम् ॥1॥

अब गन्धर्व नगर का फलादेश कहता हूँ, जिस प्रकार पूर्वाचार्यों ने प्राणियों के शुभाशुभ का निरूपण किया है, उसी प्रकार यहाँ पर भी फल अवगत करना चाहिए ॥1॥

1. नैर्ग्रन्थे निपुणे यथा मु० ।

पूर्वसूरे यदा घोरं गन्धर्वनगरं भवेत्।
नागराणां वधं विन्द्यात् तदा घोरमसंशयम् ॥2॥

यदि सूर्योदय काल मे पूर्व दिशा मे गन्धर्व नगर दिखलाई दे तो नागरिको का वध होता है, इसमे सन्देह नही है ॥2॥

[1]अस्तमायाति दीप्तांशौ गन्धर्वनगरं भवेत्।
यायिनां च तु [2]भय विन्द्याद् [3]तदा घोरमुपस्थितम् ॥3॥

यदि सूर्य के अस्तकाल मे गन्धर्व नगर दिखलाई दे तो यायी—आक्रमणकारी के लिए घोर भय की उपस्थिति सूचित करता है ॥3॥

रक्तं गन्धर्वनगरं दिशं दीप्तां यदा [4]भवेत्।
शस्त्रोत्पातं तदा विन्द्याद् दारुण समुपस्थितम् ॥4॥

यदि रक्त गन्धर्वनगर पूर्व दिशा मे दिखलाई पडे तो शस्त्रोत्पात -मार-काट का भय समझना चाहिए ॥4॥

पीत गन्धर्वनगरं दिश [5]दीप्तां यदा [6]भवेत्।
व्याधिं तदा विजानीयात् प्राणिनां मृत्युसन्निभम् ॥5॥

यदि पीत—पीला गन्धर्वनगर दिखलाई पडे तो प्राणियो के लिए मृत्यु के तुल्य कष्टदायक व्याधि उत्पन्न होती है ॥5॥

कृष्णं गन्धर्वनगरमपरां[7] [8]दिशिमासृतम्।
[9]वध तदा विजानीयाद् भय वा शूद्रयोनिजम् ॥6॥

यदि कृष्ण वर्ण—काले रग का गन्धर्वनगर पश्चिम दिशा मे दिखलाई पडे तो वध—मार-काट से उत्पन्न वध होता है तथा शूद्रो के लिए भयोत्पादक है ॥6॥

श्वेत गन्धर्वनगर दिश सौम्यां यदा भृशम्।
राज्ञो विजयमाख्याति [10]नगरश्च धनान्वितम् ॥7॥

यदि श्वेत गन्धर्वनगर उत्तर दिशा मे दिखलाई पडे तो राजा की विजय होती है और नगर धन-धान्य से परिपूर्ण होता है ॥7॥

---

1 अस्त याते यथाऽऽदित्ये मु०। 2 तदा मु०। 3 वध मु०। 4 भृशम् मु०। 5. याम्यां मु०। 6 भृशम् मु०। 7 अपरस्या मु०। 8 सृत दिशि मु०। 9 वर्ष मु० A B D। 10 नगरस्य मु०, नगर मु० C।

सर्वास्वपि यदा दिक्षु गन्धर्वनगरं भवेत् ।
सर्वे वर्णा विरुध्यन्ते सर्वदिक्षु परस्परम् ॥8॥

यदि सभी दिशाओ मे गन्धर्वनगर हो तो सभी दिशाओ मे सभी वर्ण वाले परस्पर विरोध करते है—कलह करते हैं ॥8॥

कपिलं सस्यघाताय मांजिष्ठ हरिणं [1]गवाम् ।
अव्यक्तवर्णं कुरुते बलक्षोभं [2]न संशयः ॥9॥

कपिल वर्ण का गन्धर्वनगर धान्य द्योतक, मञ्जिष्ठ वर्ण का गन्धर्वनगर हरिण, गौ आदि पशुओ का घातक और अव्यक्त वर्ण का गन्धर्वनगर सेना मे क्षोभ उत्पन्न करता है ।।9।।

गन्धर्वनगरं स्निग्धं सप्राकार सतोरणम् ।
शान्तदिशि समाश्रित्य राज्ञस्तद् विजय [3]वदेत् ॥10॥

यदि स्निग्ध, परकोटा और तोरण सहित गन्धर्वनगर नीरव दिशा मे दिखलाई पडे तो राजा के लिए विजय देने वाला होता है ॥10॥

गन्धर्वनगरं व्योम्नि परुष यदि दृश्यते ।
वाताशनिनिपातांस्तु तत् करोति सुदारुणम् ॥11॥

यदि आकाश में परुष—कठोर गन्धर्वनगर दिखलाई पडे तो वायु के चलने और बिजली के गिरने का महान भय होता है ॥11॥

इन्द्रायुधसवर्णं च धूमाग्निसदृशं च यत् ।
तदाग्निभयमाख्याति गन्धर्वनगरं नृणाम् ॥12॥

यदि इन्द्रधनुष के समान वर्णमाला और धूमयुक्त अग्नि के समान गन्धर्व नगर दिखलाई पडे तो मनुष्यो को अग्नि-भय होता है ॥12॥

खण्डं विशीर्णं [4]सच्छिद्रं गन्धर्वनगर यदा ।
तदा तस्करसंघानां [5]भयं सञ्जायते सदा ॥13॥

यदि खण्डित, विश्रृंखलित और छिद्रयुक्त गन्धर्वनगर दिखलाई पडे तो पृथ्वी पर चोरो का भय होता है ॥13॥

यदा गन्धर्वनगरं सप्राकारं सतोरणम् ।
दृश्यते तस्करान् हन्ति तदा [6]चानूपवासिनः ॥14॥

---

1 तथा मु० । 2 समन्तत मु० । 3 -करम् मु० । 4 छिद्र वा मु० । 5 स भयो जायते भुवि मु० । 6. यदान्तवासिन मु० ।

यदि गन्धर्व नगर परकोटा और तोरणरहित दिखलाई पड़े तो वनवासी तस्करों—चोरों और अनूपदेश निवासियो का विनाश होता है ॥14॥

विशेषतापसव्य तु गन्धर्वनगरं यदा।
परचक्रेण महता नगरं [1]चाभिभूयते ॥15॥

यदि विशेष रूप से अपसव्य—दक्षिण की ओर गन्धर्व नगर दिखलाई पड़े तो परशासन के द्वारा नगर का घेरा डाला जाता है—परशासन का आक्रमण होता है ॥15॥

गन्धर्वनगरं क्षिप्रं [2]जायते चाभिदक्षिणम् ।
स्वपक्षागमनं चैव जय वृद्धि जल वहेत् ॥16॥

यदि शीघ्रतापूर्वक दक्षिण की ओर गन्धर्वनगर गमन करता हुआ दिखलाई पडे तो स्वपक्ष की सिद्धि, जय, वृद्धि और बल—सामर्थ्य की प्राप्ति होती है ॥16॥

यदा गन्धर्वनगरं प्रकटं तु दवाग्निवत् ।
दृश्यते पुररोधाय तद्भत्रेन्नात्र संशय: ॥17॥

जब गन्धर्वनगर दावाग्नि— अरण्य में लगी अग्नि के समान दिखलाई पडे तब नगर का अवरोध अवश्य होता है, इसमे सन्देह नही है ॥17॥

[3]अपसव्यं विशीर्णं तु गन्धर्वनगरं यदा ।
तदा विलुप्यते राष्ट्रं बलक्षोभश्च जायते ॥18॥

अपसव्य—दक्षिण की ओर जर्जरित गन्धर्वनगर दिखलाई पडे तो राष्ट्रो मे विप्लव—उपद्रव और सेना मे क्षोभ होता है ॥18॥

यदा गन्धर्वनगरं प्रविशेच्चाभिदक्षिणम् ।
अपूर्वां लभते राजा तदा स्फीतां वसुन्धराम् ॥19॥

जब गन्धर्वनगर दक्षिण से प्रवेश करे—दक्षिण से चारो दिशाओ की ओर घूमता हुआ दिखलाई दे तब राजा अपूर्व विशाल भूमि प्राप्त करता है ॥19॥

सध्वजं सपताकं वा सुस्निग्धं सुप्रतिष्ठितम् ।
शान्तां दिशं प्रपद्येत राजवृद्धि[4]स्तथा भवेत् ॥20॥

ध्वजा और पताकाओं से युक्त स्निग्ध तथा सुव्यवस्थित शान्त दिशा—

1 परिवार्यते मु० । 2 दक्षिणे जायते यदा । 3 विशीर्यत् मु० C । 4 तदाऽऽविशेत् मु० ।

नीरव दिशा में गन्धर्वनगर दिखलाई पड़े तो राजवृद्धि का फलादेश समझना चाहिए ॥20॥

यदा [1]चाभ्रै र्घनैर्मिश्रं [2]सघनैः सबलाहकम् ।
गन्धर्वनगरं स्निग्धं विन्द्यादुदकसंप्लवम् ॥21॥

यदि शुभ मेघों से युक्त विद्युत् सहित स्निग्ध गन्धर्वनगर दिखलाई पड़े तो जल की बाढ़ आती है—वर्षा अधिक होती है और नदियों में बाढ़ आती है, सर्वत्र जल ही जल दिखलाई पड़ता है ॥21॥

सध्वजं सपताकं वा गन्धर्वनगरं [3]भवेत् ।
दीप्तां दिशं समाश्रित्य नियतं राजमृत्युदम् ॥22॥

यदि ध्वजा और पताका सहित गन्धर्वनगर पूर्व दिशा में दिखलाई पड़े तो नियमित रूप से राजा की मृत्यु होती है ॥22॥

विदिक्षु [4]चापि सर्वासु गन्धर्वनगरं यदा ।
संकरः सर्ववर्णानां तदा भवति दारुणः ॥23॥

यदि सभी विदिशाओं में गन्धर्वनगर दिखलाई पड़े तो सभी वर्णों का अत्यन्त संकर-सम्मिश्रण होता है ॥23॥

द्विवर्णं वा त्रिवर्णं वा गन्धर्वनगरं [5]भवेत् ।
चातुर्वर्ण्यमयं भेदं तदाऽत्रापि विनिर्दिशेत् ॥24॥

यदि दो रंग, तीन रंग या चार रंग का गन्धर्वनगर दिखलाई पड़े तो भी उक्त प्रकार का ही फल घटित होता है ॥24॥

अनेकवर्णसंस्थानं गन्धर्वनगरं [6]यदा ।
क्षुभ्यन्ते तत्र राष्ट्राणि ग्रामाश्च नगराणि च ॥25॥
सङ्ग्रामाश्चापि जायन्ते[7] मांसशोणितकर्दमाः ।
[8]एतैश्च लक्षणैर्युक्तं भद्रबाहुवचो यथा ॥26॥

यदि अनेक वर्ण आकार का गन्धर्वनगर दिखलाई पड़े तो नगर, ग्राम और राष्ट्र में क्षोभ उत्पन्न होता है, युद्ध होते हैं और स्थान मांस तथा रक्त की कीचड़ से भर जाते हैं। उक्त प्रकार के निमित्त से अनेक प्रकार का उत्पात होता है, इस प्रकार का भद्रबाहु स्वामी का वचन है ॥25-26॥

---

1 शुभै- मु० । 2 सविद्युत् मु० । 3 यदा मु० 4. चैव मु० । 5 यदा मु० । 6. भवेत् मु० । 7 अनुवर्तन्ते मु० । 8 एतस्मिल्लक्षणोत्पाते मु० ।

रक्तं गन्धर्वनगरं क्षत्रियाणां भयावहम् ।
पीतं वैश्यान् निहन्त्याशु कृष्णं शूद्रान् सितं द्विजान् ॥27॥

लाल रंग का गन्धर्वनगर क्षत्रियों के लिए भयोत्पादक, पीतवर्ण का गन्धर्वनगर वैश्यों को, कृष्णवर्ण का गन्धर्वनगर शूद्रों को और श्वेत वर्ण का गन्धर्वनगर ब्राह्मणों को भयोत्पादक होने के साथ शीघ्र ही विनाश करता है ॥27॥

अरण्यानि तु सर्वाणि गन्धर्वनगरं यदा ।
आरण्यं जायते [1]सर्वं [2]तद्राष्ट्रं नात्र संशय. ॥28॥

यदि अरण्य में गन्धर्वनगर दिखलाई पड़े तो शीघ्र ही राष्ट्र उजड़कर अरण्य —जंगल बन जाता है, इसमें सन्देह नहीं है ॥28॥

अम्बरेषूदकं विन्द्याद् भयं प्रहरणेषु च ।
अग्निजेषूपकरणेषु भयमग्नेः समादिशेत् ॥29॥

यदि स्वच्छ आकाश में गन्धर्वनगर दिखलाई पड़े तो जल की वृष्टि, अस्त्रों के बीच गन्धर्वनगर दिखलाई पड़े तो भय और अग्नि सम्बन्धी उपकरणों के मध्य गन्धर्वनगर दिखलाई पड़े तो अग्निभय होता है ॥29॥

शुभाऽशुभं विजानीयाच्चातुर्वर्ण्यं यथाक्रमम् ।
दिक्षु सर्वासु नियतं भद्रबाहुवचो यथा ॥30॥

ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र वर्ण को क्रमानुसार पूर्वादि सभी दिशाओं के गन्धर्वनगर के अनुसार भद्रबाहु स्वामी के वचनों से शुभाशुभत्व जानना चाहिए ॥30॥

उल्कावत् साधनं दिक्षु जानीयात् पूर्वकीर्तितम् ।
गन्धर्वनगरं [3]सर्वं यथावदनुपूर्वश ॥31॥

उल्का के समान पूर्व बताये गये निमित्तों के अनुसार गन्धर्व नगरों के फलाफल को अवगत कर लेना चाहिए ॥31॥

इति भद्रबाहुविरचिते निखिलनिमित्तोयाधिकारद्वादशांगाद्—उद्धृत-निमित्तशास्त्रे गन्धर्वनगर एकादशमं लक्षणम् ।

विवेचन—वराहमिहिर ने उत्तर, पूर्व, दक्षिण और पश्चिम दिशा के गन्धर्वनगर का फलादेश क्रमश पुरोहित, राजा, सेनापति और युवराज को विघ्नकारक बताया है। श्वेत, रक्त, पीत और कृष्ण वर्ण के गन्धर्वनगर को ब्राह्मण,

1 राष्ट्र मु० । 2 अचिरान्नात्र सशय । 3 सर्वग-धर्वनगर ।

क्षत्रिय, वैश्य और शूद्रो के नाश का कारण माना है। उत्तर दिशा मे गन्धर्वनगर हो तो राजाओं को जयदायी, ईशान, अग्नि और वायुकोण मे स्थित हो तो नीच जाति का नाश होता है। शान्त दिशा मे तोरणयुक्त गन्धर्वनगर दिखलाई दे तो प्रशासको की विजय होती है। यदि सभी दिशाओ मे गन्धर्वनगर दिखलाई दे तो राजा और राज्य के लिए समान रूप से भयदायक होता है। धूम, अनल और इन्द्रधनुष के समान हो तो चोर और वनवासियो को कष्ट देता है। कुछ पाडुरग का गन्धर्वनगर हो तो वज्रपात होता है, भयकर पवन भी चलता है। दीप्त दिशा मे गन्धर्वनगर हो तो राजा की मृत्यु, वाम दिशा में हो तो शत्रुभय और दक्षिण भाग मे स्थित हो तो जय की प्राप्ति होती है। नाना रग की पताका से युक्त गन्धर्वनगर दिखलाई पडे तो रण मे हाथी, मनुष्य और घोडो का अधिक रक्त-पात होता है।

आचार्य ऋषिपुत्र ने बतलाया है कि पूर्व दिशा मे गन्धर्वनगर दिखाई पडे तो पश्चिम दिशा का नाश अवश्य होता है। पश्चिम मे अन्न और वस्त्र की कमी रहती है। अनेक प्रकार के कष्ट पश्चिम निवासियो को सहन करने पडते है। दक्षिण दिशा मे गन्धर्वनगर दिखलाई दे तो राजा का नाश होता है, प्रशासक वर्ग में आपसी मनमुटाव भी रहता है, नेताओ मे पारस्परिक कलह होती है, जिससे आन्तरिक अशान्ति होती रहती है। पश्चिम दिशा का गन्धर्वनगर पूर्व के वैभव का विनाश करता है। पूर्व मे हैजा, प्लेग जैसी सक्रामक बीमारियाँ फैलती है और मलेरिया का प्रकोप भी अधिक रहेगा। उक्त दिशा का गन्धर्वनगर पूर्व दिशा के निवासियो को अनेक प्रकार का कष्ट देता है। उत्तर दिशा का गन्धर्वनगर उत्तर निवासियो के लिए ही कष्टकारक होता है। यह धन, जन और वैभव का विनाश करता है। हेमन्तऋतु के गन्धर्वनगर से रोगो का विशेष आतक रहता है। वसन्त ऋतु मे दिखाई देनेवाला गन्धर्वनगर सुकाल करता है तथा जनता का पूर्णरूप से आर्थिक विकास होता है। ग्रीष्मऋतु मे दिखलाई देनेवाला गन्धर्वनगर नगर का विनाश करता है, नागरिको मे अनेक प्रकार से अशान्ति फैलाता है। अनाज की उपज भी कम होती है। वस्त्राभाव के कारण भी जनता मे अशान्ति रहती है। आपस मे भी झगडे बढते हैं, जिससे परिस्थिति उत्तरोत्तर विषम होती जाती है। वर्षा ऋतु मे दिखलाई देनेवाला गन्धर्वनगर वर्षा का अभाव करता है। इस गन्धर्व नगर का फल दुष्काल भी है। व्यापारी और कृषक दोनो के लिए ही इस प्रकार के गन्धर्वनगर का फलादेश अशुभ होता है। जिस वर्ष मे उक्त प्रकार का गन्धर्व-नगर दिखलाई पडता है, उस वर्ष मे गेहूँ और चावल की उपज भी बहुत कम होती है। शरदऋतु मे गन्धर्वनगर दिखाई पड़े तो मनुष्यों को अनेक प्रकार की पीडा होती है। चोट लगना, शरीर में घाव लगना, चेचक निकलना एवं अनेक प्रकार के फोड़े होना आदि फल घटित होते हैं। अवशेष ऋतुओ मे गन्धर्वनगर

दिखलाई दे तो नागरिकों को कष्ट होता है। साथ ही छ: महीने तक उपद्रव होते रहते हैं। प्रकृति का प्रकोप होने से अनेक प्रकार की बीमारियाँ भी होती हैं। रात्रि में गन्धर्वनगर दिखलाई पडे तो देश की आर्थिक हानि, वैदेशिक सम्मान का अभाव तथा देशवासियो को अनेक प्रकार के कष्ट सहन करने पड़ते है। यदि कुछ रात्रि शेष रहे तब गन्धर्वनगर दिखलाई पडे तो चोर, नृपति, प्रबन्धक एव पूँजीपतियो के लिए हानिकारक होता है। रात्रि के अन्तिम प्रहर मे—ब्रह्म-मुहूर्त काल में गन्धर्वनगर दिखलाई पडे तो उस प्रदेश मे धन सपदा का अधिक विकास होता है। भूमि के नीचे से धन प्राप्त होता है। यह गन्धर्वनगर सुभिक्ष-कारक है। इसके द्वारा धन-धान्य की वृद्धि होती है। प्रशासक वर्ग का भी अभ्युदय होता है। कला-कौशल की वृद्धि के लिए भी इस समय का गन्धर्वनगर श्रेष्ठ माना गया है।

पँचरगा गन्धर्वनगर हो तो नागरिको में भय और आतक का सचार करता है, रोगभय भी इसके द्वारा होते है। हवा बहुत तेज चलती है, जिससे फसल को भी क्षति पहुँचती है। श्वेत और रक्तवर्ण की वस्तुओ की महँगाई विशेष रूप से रहती है। जनता मे अशान्ति और आतक फैलता है। श्वेतवर्ण का गन्धर्वनगर हो तो घी, तेल और दूध का नाश होता है। पशुओ की भी कमी होती है और अनेक प्रकार की व्याधियाँ भी व्याप्त हो जाती हैं। गाय, बैल और घोडो की कीमत में अधिक वृद्धि होती है। तिलहन और तिल का भाव ऊंचा बढ़ता है। विदेशों से व्यापारिक सम्बन्ध दृढ होता है। काले रग का गन्धर्वनगर वस्त्र नाश करता है, कपास की उत्पत्ति कम होती है तथा वस्त्र बनानेवाले मिलो मे भी हड़ताल होती है, जिससे वस्त्र का भाव तेज हो जाता है। कागज तथा कागज के द्वारा निर्मित वस्तुओ के मूल्य में भी वृद्धि होती है। पुरानी वस्तुओ का भाव भी बढ़ जाता है तथा वस्तुओ की कमी होने के कारण बाजार तेज होता जाता है। लालरग का गन्धर्वनगर अधिक अशुभ होता है, यह जितनी ज्यादा देर तक दिखलाई पड़ता रहता है, उतना ही हानिकारक होता है। इस प्रकार के गन्धर्वनगर का फल मारपीट, झगड़ा, उपद्रव, अस्त्र-शस्त्र का प्रहार एव अन्य प्रकार से झगडे-टण्टो का होना आदि है। सभी प्रकार के रंगों में लालरग का गन्धर्वनगर अशुभ कहा गया है। इसका फल रक्तपात निश्चित है। जिस रग का गन्धर्वनगर जितने अधिक समय तक रहता है, उसका फल उतना ही अधिक शुभाशुभ समझना चाहिए।

गन्धर्वनगर जिस स्थान या नगर में दिखलाई देता है, उसका फलादेश उसी स्थान और नगर में समझना चाहिए। जिस दिशा मे दिखलाई दे उस दिशा मे भी हानि या लाभ पहुँचाता है। इसका फलादेश विश्वजनीन नही होता, केवल थोड़े से प्रदेश में ही होता है। जब गन्धर्वनगर आकाश के तारो की तरह बीच मे

छाया हुआ दिखलाई दे तो मध्य देश को अवश्य नाश करता है। यह जितनी दूर तक फैला हुआ दिखलाई दे तो समझ लेना चाहिए कि उतनी दूर तक देश का नाश होगा। रोग, मरण, दुर्भिक्ष आदि अनिष्टकारक फलादेशो की प्राप्ति होती है। इस प्रकार का गन्धर्वनगर जनता, प्रशासक और उच्चवर्ग के लोगो के लिए भी भयदायक होता है। अवर्षण, सूखा आदि के कारण फसल भी मारी जाती है। यदि गन्धर्वनगर इन्द्रधनुषाकार या साँप के बिल के आकार मे दिखलाई पड़े तो देशनाश, दुर्भिक्ष, मरण, व्याधि आदि अनेक प्रकार के अनिष्टकारक फल प्राप्त होते हैं। यदि चारदीवारी के समान गन्धर्वनगर की भी चहारदीवारी दिखलाई पडे और ऊपर के गुम्बज भी दिखलाई पड़ें तो निश्चयत. प्रशासक या मन्त्री का विनाश होता है। नगर के मुखिया के लिए भी इस प्रकार का गन्धर्वनगर दुखदायक बताया गया है। जब गन्धर्वनगर का ऊपरी हिस्सा टूटा हुआ दिखलाई दे तो दस दिन के भीतर ही किसी प्रधान व्यक्ति की मृत्यु सूचित करता है। ऊपर स्वर्ण की गुम्वजें दिखलाई पडे और उनगर स्वर्ण-कलश भी दिखलाई देते हो तो निश्चयत उस प्रदेश की आर्थिक हानि, किसी प्रधान व्यक्ति की मृत्यु, वस्तुओ की महँगाई और रोगादि उपद्रव होते हैं। जब गन्धर्वनगर के घरो की स्थिति ऊँचे मन्दिरो के समान दिखलाई दे और उनके कलशो पर मालाएँ लटकती हुई दिखलाई पड़े तो सुभिक्ष, समयानुसार वर्षा, कृषि का विकास, अच्छी फसल और धन-धान्य की समृद्धि होती है। टूटते-ढहते गन्धर्वनगर दिखलाई दें तो उनका फल अच्छा नही होता। रोग और मानसिक आपत्तियो के साथ पारस्परिक कलह की भी सूचना समझनी चाहिए। जिस गन्धर्वनगर के द्वारपर सिंहाकृति दिखलाई दे, वह जनता मे बल, पौरुष और शक्ति का विकास करता है। वृषभाकृतिवाला गन्धर्वनगर जनता को धर्म-मार्ग की ओर ले जानेवाला है। उस प्रदेश की जनता मे सयम और धर्म की भावनाएं विशेष रूप से उत्पन्न होती हैं। जो व्यक्ति उक्त प्रकार के गन्धर्वनगरो को स्वर्णाकृति में देखता है, उसे उस क्षेत्र मे शान्ति समझ लेनी चाहिए।

मास और वार के अनुसार गन्धर्वनगर का फलादेश—यदि रविवार को गन्धर्वनगर दिखलाई पडे तो जनता को कष्ट, दुर्भिक्ष, अन्न का भाव तेज, तृण की कमी, वृश्चिक-सर्प आदि विषैले जन्तुओं की वृद्धि, व्यापार में लाभ, कृषि का विनाश और अन्य प्रकार के उपद्रव भी होते हैं। तेज वायु चलता है, आश्विन मास में कुछ वर्षा होती है, जिससे साधारण रूप से खेती फसल हो जाती है। रविवार को सन्ध्या में गन्धर्वनगर देखने से भूकम्प का भय, मध्याह्न में गन्धर्वनगर देखने से जनता में अराजकता एवं प्रात काल सूर्योदय के साथ गन्धर्वनगर दिखलाई पड़े तो नगर में साधारणतः शान्ति रहती है। सन्ध्या काल का गन्धर्वनगर बहुत अधिक बुरा समझा जाता है। रात मे दिखलाई देने से कम फल देता है।

मेघविजय गणि ने रविवार के गन्धर्वनगर को अधिक अशुभकारक बतलाया है। इस दिन का गन्धर्वनगर वर्षा का अभाव करता है तथा व्यापारिक दृष्टि से भी हानिकारक होता है। सोमवार को गन्धर्वनगर दीप्तियुक्त दिखलाई पडे तो कलाकारो के लिए शुभफल, प्रशासक वर्ग और कृषको के लिए भी शुभ-फलदायक होता है। इस प्रकार के गन्धर्वनगर के देखने से श्रावण और आषाढ मास मे अच्छी वर्षा होती है। भाद्रपद और आश्विन मे वर्षा की कमी रहती है। यदि इस प्रकार का गन्धर्वनगर ज्येष्ठ मास मे रविवार को दिखलाई पडे तो निश्चयत दुर्भिक्ष होता है। आषाढ मे रविवार को दिखलाई पडे तो आश्विन मे वर्षा, अवशेष महीनो में वर्षा का अभाव तथा साधारण फसल, श्रावण मे दिखलाई पडे तो भूकम्प का भय, मार्गशीर्ष मे अल्प वर्षा, वन-बगीचो की वृद्धि, खनिज पदार्थो की उपज मे कमी, भाद्रपद मास मे रविवार को गन्धर्वनगर दिखलाई पडे तो आश्विन और कार्तिक मे अनेक प्रकार के रोग, जनता मे अशान्ति तथा उपद्रव होते हैं। आश्विन मास मे रविवार को गन्धर्वनगर दिखलाई पडे तो साधारण कष्ट, माघ मे ओलो की वर्षा, भयकर शीत का प्रकोप और चैती फसल की हानि होती है। कार्तिक और अगहन मास मे रविवार के दिन गन्धर्वनगर दिखलाई पडे तो अनेक प्रकार के रोगो के साथ घृत, दूध, तैल आदि पदार्थो का अभाव होता है, पशुओ के लिए चारे की भी कमी रहती है। पौष और माघ मास मे गन्धर्वनगर रविवार को दिखलाई पडे तो छ महीनो तक जनता को आर्थिक कष्ट रहता है। निमोनिया और प्लेग दो महीने तक विशेष रूप से उत्पन्न होते हैं। होली के दिन गन्धर्वनगर दिखलाई पडे तो आगामी वर्ष घोर दुर्भिक्ष पडता है। अन्न की अत्यन्त कमी रहती है, चोर और लुटेरो का भय-आतक बढ़ता चला जाता है। फाल्गुन और चैत मे रविवार के दिन गन्धर्वनगर दिखलाई पडे तो जिस दिन गन्धर्वनगर का दर्शन हो उससे ग्यारह दिन के भीतर मे भूकम्प या अन्य किसी भी प्रकार का महान् उत्पात होता है। वज्रपात होना या आकस्मिक घटनाओ का घटित होना आदि फलादेश समझना चाहिए। वैशाख महीने मे रविवार को गन्धर्व नगर दिखलाई पडे तो साधारणत शुभ फल होता है। केवल उस प्रदेश के प्रशासनाधिकारी के लिए अनिष्टप्रद समझना चाहिए। इसी प्रकार ज्येष्ठमास मे सोमवार को गन्धर्वनगर दिखलाई पडे तो जनता मे साधारण शान्ति, आषाढ मास मे सोमवार को गन्धर्वनगर दिखलाई पडे तो श्रावण मे वर्षा की कमी, धान्योत्पत्ति की साधारण कमी, वस्त्र के व्यापार मे लाभ, घी, नमक और चीनी के व्यापार में अत्यधिक लाभ, सोना-चाँदी के व्यापार मे साधारण हानि और अन्न के व्यापार मे लाभ होता है। श्रावण मास मे सोमवार को गन्धर्वनगर दिखलाई पड़े तो चातुर्मास मे अच्छी वर्षा, श्रेष्ठ फसल और जनता मे सुख-शान्ति रहती है। व्यापारियो के लिए भी इस महीने का गन्धर्वनगर उत्तम माना

गया है। भाद्रपद और आश्विनमास मे सोमवार के दिन का गन्धर्वनगर अनिष्टकारक, लोहा, सोना, चाँदी आदि धातुओ के व्यापार मे अत्यधिक लाभ, फसल माधारण एवं जनता मे शान्ति रहती है। कार्त्तिकमास के सोमवार को गन्धर्वनगर दिखलाई पड़े तो शरद् ऋतु मे अत्यधिक हवा चलती है, जिससे शीत का प्रकोप बढ जाता है। अगहन मास मे गन्धर्वनगर सोमवार को दिखलाई पडे तो सुभिक्ष, शान्ति और आर्थिक विकास होता है। मागलिक कार्यों की वृद्धि के लिए यह गन्धर्वनगर उत्तम माना गया है। पौष, माघ और फाल्गुन मास में सोमवार को गन्धर्वनगर दिखलाई पडे तो आगामी वर्ष सुभिक्ष, अनेक प्रकार के रोगो की वृद्धि, देश की समृद्धि और व्यापार मे साधारण लाभ होता है। चैत्र मास मे सोमवार को गन्धर्वनगर दिखलाई पडे तो जनता को कष्ट, आर्थिक क्षति, अनेक प्रकार की व्याधियाँ और प्रशासकवर्ग का विनाश होता है। अन्य प्रदेशों से सघर्ष का भी भय रहता है। वैशाखमास मे सोमवार को गन्धर्वनगर दिखलाई दे तो जनता मे धार्मिक रुचि उत्पन्न होती है, उस वर्ष अनेक धार्मिक महोत्सव होते है। राजा, प्रजा सभी मे धर्माचरण का विकास होता है।

ज्येष्ठमास मे मगलवार को गन्धर्वनगर दिखलाई पडे तो उस वर्ष आषाढ़ मे साधारण वर्षा होती है, श्रावण और भाद्रपद मे वर्षा की कमी रहती है तथा आश्विन मास मे पुन वर्षा हो जाती है, जिससे फसल अच्छी हो जाती है। व्यापारिक दृष्टि मे वर्ष अच्छा नही रहता। लोहा, सोना और वस्त्र के व्यापार मे हानि उठानी पडती है। पुराने पदार्थों के व्यापार मे लाभ होता है। कागज के मूल्य मे भी वृद्धि होती है। इमी महीने मे बुधवार को गन्धर्वनगर दिखलाई पडे तो अशान्ति, कष्ट, भूकम्प, वज्रपात, रोग, धनहानि आदि फल प्राप्त होता है। गुरुवार को गन्धर्वनगर दिखाई पडे तो जनता को लाभ, पारस्परिक प्रेम, शान्ति और सुभिक्ष होता है। शुक्रवार को इस महीने मे गन्धर्वनगर दिखलाई पडे तो साधारण व्यक्तियो को विशेष लाभ, धनी-मानियो को कष्ट, प्रशासक वर्ग की हानि, तत्प्रदेशीय किसी नेता की मृत्यु, कलाकारो को कष्ट और वर्षा साधारणत अच्छी होती है। फसल भी अच्छी होती है। इसी महीने मे शनिवार को गन्धर्वनगर दिखलाई पडे तो वर्षा का अभाव, दुर्भिक्ष, जनता को कष्ट, तेज वायु या तूफानो का प्रकोप, अग्निभय, विषैले जन्तुओ का विकास तथा उनके प्रभाव से जनता मे अधिक आतंक होता है।

आषाढ महीने मे मंगलवार के दिन गन्धर्वनगर दिखलाई पडे तो अच्छी वर्षा, सुभिक्ष, अन्न का भाव सस्ता, सोना, चाँदी के मूल्य मे भी गिरावट, कलाकार और शिल्पियो को सुख-शान्ति, देश का आर्थिक विकास, व्यापारी समाज को सुख और प्रशासकों को भी शान्ति मिलती है। केवल लोहे की बनी वस्तुओ मे हानि होती है। इसी महीने मे बुधवार को गन्धर्वनगर दिखलाई पड़े तो जनता

को साधारण कष्ट, अच्छी वर्षा, सुभिक्ष और व्यापार में साधारण लाभ होता है। वज्रपात का योग अधिक रहता है। इस दिन गुरुवार को गन्धर्वनगर दिखलाई पड़े तो भी जनता को विशेष लाभ, अच्छी वर्षा, सुभिक्ष, श्रेष्ठ फसल, व्यापार में लाभ और सभी प्रकार का अमन-चैन रहता है। शुक्रवार को गन्धर्वनगर दिखलाई पड़े तो साधारण वर्षा, पर फसल अच्छी, वस्त्र के व्यापार में अधिक लाभ, मशीनों के कल-पुर्जों में अधिक लाभ, गुड, चीनी का भाव सस्ता एव प्रतिदिन उपभोग मे आनेवाली वस्तुएँ महँगी होती हैं। शनिवार को गन्धर्वनगर उक्त महीने में दिखलाई पडे तो साधारण वर्षा, फसल की कमी और व्यापारियो को कष्ट होता है।

श्रावण मास मे मंगलवार को गन्धर्वनगर दिखलाई पड़े तो वर्षा की कमी, किन्तु भाद्रपद में अच्छी वर्षा, फसल साधारण, धन-धान्य की वृद्धि, व्यापारियो को लाभ, जनता को कष्ट, वस्त्र का अभाव, आपसी-कलह और उक्त प्रदेश मे उपद्रव होते हैं। बुधवार को गन्धर्वनगर दिखलाई पडे तो अल्प वर्षा, साधारण फसल, घी की महँगी, तैल की भी महँगी, वस्त्र का बाजार सस्ता, सोना-चाँदी का बाजार भी सस्ता, शरद् ऋतु मे अधिक शीत, अन्न का भाव भी महँगा रहता है। साधारण जनता को तो कष्ट होता ही है, पर धनी-मानियो को भी अनेक प्रकार के कष्ट सहन करने पड़ते हैं। गुरुवार को गन्धर्वनगर दिखलाई पड़े तो अच्छी वर्षा, सुभिक्ष, जनता मे शान्ति और व्यापारियो को साधारण लाभ होता है। शुक्रवार को गन्धर्वनगर दिखलाई पडे तो वर्षाभाव, दुर्भिक्ष और जनता को आर्थिक कष्ट होता है। शनिवार को गन्धर्वनगर दिखलाई पड़े तो घोर दुर्भिक्ष और नाना प्रकार के उपद्रव होते है।

भाद्रपद मास मे मंगलवार को गन्धर्वनगर दिखलाई पड़े तो अल्प वर्षा, फसल की कमी, जनता को कष्ट एव आर्थिक क्षति होती है। बुधवार को दिखलाई पड़े तो अच्छी वर्षा, सुभिक्ष, व्यापारी समाज को लाभ, मसाले के व्यापार में हानि एव पशुओ में अनेक प्रकार के रोग फैलते हैं। गुरुवार को गन्धर्वनगर दिखलाई पड़े तो अतिवृष्टि, फसल की कमी, बाढ़, राजा की मृत्यु, नागरिकों में अशान्ति, घृत, तैल के व्यापार मे लाभ और गुड, चीनी का भाव घटता है। शुक्रवार को गन्धर्वनगर दिखलाई पडे तो जनता को कष्ट, अनेक प्रकार के उपद्रव, व्यापार में हानि और आभिजात्य वर्ग के व्यक्तियो को कष्ट होता है। शनिवार को गन्धर्वनगर दिखलाई पड़े तो वर्षा मे रुकावट, फसल की कमी और धान्य का भाव महँगा होता है।

आश्विन मास मे मगलवार को गन्धर्वनगर दिखलाई पड़े तो सामान्य वर्षा, माध मे विशेष वर्षा और शीत का प्रकोप, फसल साधारण, खनिज पदार्थों का विकास और देश की समृद्धि होती है। बुधवार को गन्धर्वनगर दिखलाई पड़े तो

अच्छी वर्षा, सामान्य शीत, माघ में वज्रपात, अन्न का भाव महँगा और व्यापारी वर्ग या धोबी, कुम्हार, नाई आदि के लिए फाल्गुन, चैत्र और वैशाख में कष्ट होता है। गुरुवार को गन्धर्वनगर दिखलाई पडे तो जिस दिन इसका दर्शन होता है, उस दिन के आठ दिन पश्चात् ही घोर वर्षा होती है। इस वर्षा से नदियों में बाढ़ आने की भी सभावना रहती है। व्यापारी वर्ग के लिए यह दर्शन उत्तम माना गया है। शुक्रवार को गन्धर्वनगर दिखलाई पड़े तो जनता को आनन्द, सुभिक्ष, परस्पर मे सहयोग की भावना का विकास, धन-जन की वृद्धि एवं नागरिकों को सुख-शान्ति मिलती है। शनिवार को गन्धर्वनगर दिखलाई पडे तो साधारण जनता को भी कष्ट होता है। वर्षा अच्छी होती है, पर असामयिक वर्षा होने के कारण जनता के साथ पशु वर्ग को भी कष्ट उठाना पडता है।

कार्तिक मास मे मगलवार को गन्धर्वनगर दिखलाई पड़े तो अग्नि का प्रकोप होता है, अनेक स्थानो पर आग लगने की घटनाएँ सुनाई पड़ती है। व्यापार मे घाटा होता है। देश मे कुछ अशान्ति रहती है। पशुओ के लिए चारे का अभाव रहता है। बुधवार को गन्धर्वनगर दिखलाई पड़े तो शीत का प्रकोप होता है। शहरो मे भी ओले बरसते हैं। पशु और मनुष्यो को अपार कष्ट होता है। गुरुवार को गन्धर्वनगर दिखलाई पड़े तो जनता को अपार कष्ट होता है। यद्यपि आर्थिक विकास के लिए इस प्रकार के गन्धर्वनगर दिखलाई पड़ना उत्तम होता है। शुक्र को गन्धर्वनगर दिखलाई पडे तो शान्ति रहती है। जनता मे सहयोग बढ़ता है। औद्योगिक विकास के लिए उत्तम होता है। शनिवार को गन्धर्वनगर दिखलाई पड़े तो सिंह, व्याघ्र आदि हिंसक पशुओ द्वारा जनता को कष्ट होता है। व्यापार के लिए इस प्रकार के गन्धर्वनगर का दिखलाई पड़ना शुभ नहीं है।

मार्गशीर्ष मास मे मंगलवार के दिन गन्धर्वनगर दिखलाई पडे तो जनता को कष्ट, आगामी वर्ष उत्तम वर्षा, फसल अच्छी और बडे पूँजीपतियो को कष्ट होता है। बुधवार को गन्धर्वनगर दिखलाई पडे तो भी जनता को कष्ट होता है। गुरुवार को गन्धर्वनगर का दिखलाई पड़ना अच्छा होता है, देश का सर्वांगीण विकास होता है। शुक्रवार को गन्धर्वनगर का देखा जाना लाभ, सुख, आरोग्य और शनिवार को देखने से हानि होती है। शनिवार की शाम को यदि पश्चिम दिशा मे गन्धर्वनगर दिखलाई पड़े तो गदर होता है। कोई किसी को पूछता नहीं, मारकाट और लूटपाट की स्थिति उत्पन्न हो जाती है।

पौषमास में मगलवार को गन्धर्वनगर दिखलाई पड़े तो प्रजा को कष्ट, रोग और अग्निभय; बुधवार को दिखलाई पड़े तो पूर्ण सुभिक्ष, धान्य का भाव सस्ता, सोना-चाँदी का भाव महँगा; शुक्रवार को दिखलाई पड़े तो आगामी वर्ष घनघोर

वर्षा, आर्थिक कष्ट, आवास की समस्या और अन्न कष्ट, एव शनिवार को गन्धर्वनगर दिखलाई पडे तो राजा और प्रजा दोनो को अपार कष्ट होता है।

माघ मास मे मगलवार को गन्धर्वनगर दिखलाई पडे तो चैती फसल बहुत उत्तम, लोहा के व्यापार मे पूर्ण लाभ, रबर या गोद के व्यापार मे हानि, राजनीतिक उपद्रव और अशान्ति, बुधवार को दिखलाई पडे तो उत्तम वर्षा, सुभिक्ष, आर्थिक विकास और शान्ति, गुरुवार को दिखलाई पडे तो सुख, सुभिक्ष और प्रसन्नता, शुक्रवार को दिखलाई पडे तो शान्ति, लाभ और आनन्द एव शनिवार को दिखलाई पडे तो अपार कष्ट होता है। प्रात काल शनिवार को इस महीने मे गन्धर्वनगर का देखना शुभ होता है। उस प्रदेश मे सुभिक्ष, सुख और शान्ति रहती है।

फाल्गुन मास मे मगलवार को गन्धर्वनगर दिखलाई पडे तो आषाढ मे आश्विन तक अच्छी वर्षा होती है, गेहूँ, धान, ज्वार, जौ, गन्ना के भाव मे महँगी रहती है। यद्यपि कार्तिक के पश्चात ये पदार्थ भी सस्ते हो जाते है। व्यापारियो, कलाकारो और राजनीतिज्ञो के लिए वर्ष उत्तम रहता है। बुधवार को गन्धर्वनगर दिखलाई देने से फसल मे कमी, राजा या अधिकारी शासक का विनाश, पंचायत मे मतभेद एव सोना-चाँदी के व्यापार मे लाभ, गुरुवार को दिखलाई दे तो पीले रंग की वस्तुओ का भाव सस्ता, लाल रग की वस्तुओ का भाव महँगा और तिल, तिलहन आदि का भाव समर्घ, शुक्र को दिखलाई पडे तो पत्थर, चूने के व्यापार मे विशेष लाभ, जूट मे घाटा और वर्षा समयानुसार, एव शनिवार को दिखलाई पडे तो वर्षा अच्छी और फसल सामान्यतया अच्छी ही होती है।

चैत्र मास मे मगलवार को सन्ध्या समय गन्धर्वनगर दिखलाई पडे तो नगर मे अग्नि का प्रकोप, पशुओ मे रोग, नागरिको मे कलह और अर्थहानि, बुधवार को मध्याह्न मे दिखलाई पडे तो अर्थविनाश, नागरिको मे असन्तोष, रसादि पदार्थों का अभाव और पशुओ के लिए चारे की कमी, गुरुवार को रात्रि मे गन्धर्वनगर दिखलाई पडे तो जनता को अत्यन्त कष्ट, व्यसनो का प्रचार, अधार्मिक जीवन एव अर्थक्षति, शुक्रवार को दिखलाई पडे तो चातुर्मास मे अच्छी वर्षा, उत्तम फसल, अनाज का भाव सस्ता, घी, दूध की अधिक उत्पत्ति, व्यापारियो को लाभ एव शनिवार को मध्यरात्रि या मध्य दिन मे गन्धर्वनगर दिखलाई पडे तो जनता मे घोर सघर्ष, मारकाट एव अशान्ति होती है। अराजकता सर्वत्र फैल जाती है।

वैशाख मास मे मगलवार को प्रात काल या अपराह्न काल मे गन्धर्वनगर दिखलाई पडे तो चातुर्मास मे अच्छी वर्षा और सुभिक्ष, बुधवार को दिखलाई पडे तो व्यापारियो मे मतभेद, आपस मे झगडा और आर्थिक क्षति; गुरुवार को

दिखलाई पड़े तो अनेक प्रकार के लाभ और सुख, शुक्रवार को दिखलाई पड़े तो समय पर वर्षा, धान्य की अधिक उत्पत्ति और वस्त्र-व्यापार मे लाभ एव शनिवार को गन्धर्वनगर दिखलाई पड़े तो सामान्यतया अच्छी फसल होती है।

गन्धर्वनगर सम्बन्धी फलादेश अवगत करते समय उनकी आकृति, रग और सौम्यता या कुरूपता का भी ख्याल करना पड़ेगा। जो गन्धर्वनगर स्वच्छ होगा उसका फल उतना ही अच्छा और पूर्ण तथा कुरूप और अस्पष्ट गन्धर्वनगर का फलादेश अत्यल्प होता है।

तत्काल वर्षा होने के निमित्त—वर्षा ऋतु मे जिस दिन सूर्य अत्यन्त जोशीला, दुस्सह और घृत के रग के समान प्रभावशाली हो उस दिन अवश्य वर्षा होती है। वर्षा काल मे जिस दिन उदय के समय का सूर्य अत्यन्त प्रकाश के कारण देखा न जाय, पिघले हुए स्वर्ण के समान हो, स्निग्ध वैडूर्य मणि की-सी प्रभावाला हो और अत्यन्त तीव्र होकर तप रहा हो अथवा आकाश मे बहुत ऊँचा चढ गया हो तो उस दिन खूब अच्छी वर्षा होती है। उदय या अस्त के समय सूर्य अथवा चन्द्रमा फीका होकर शहद के रग के समान दिखलाई पड़े तथा प्रचण्ड वायु चले तो अतिवृष्टि होती है। सूर्य की अमोघ किरणे सन्ध्या के समय निकली रहे और बादल पृथ्वी पर झुके रहे तो ये महावृष्टि के लक्षण समझने चाहिए। सूर्यपिण्ड से एक प्रकार की जो सीधी रेखा कभी-कभी दिखलाई देती है, वह अमोघ किरण कहलाती है। चन्द्रमा यदि कबूतर और तोते की आँखो के सदृश हो अथवा शहद के रग का हो और आकाश मे चन्द्रमा का दूसरा बिम्ब दिखलाई दे तो शीघ्र ही वर्षा होती है। चन्द्रमा के परिवेश चक्रवाक की आँखो के समान हो तो वे वृष्टि के सूचक होते है और यदि आकाश तीतर के पखो के समान बादलो से आच्छादित हो तो वृष्टि होती है। चन्द्रमा के परिवेश हो, तारागण मे तीव्र प्रकाश हो, तो वे वृष्टि के सूचक होते है। दिशाएँ निर्मल हो और आकाश काक के अण्डे की कान्तिवाला हो, वायु का गमन रुककर होता हो एव आकाश गोनेत्र की-सी कान्तिवाला हो तो यह भी वृष्टि के आगमन का लक्षण है। रात मे तारे चमकते हो, प्रातःकाल लाल वर्ण का सूर्य उदय हो और बिना वर्षा के इन्द्रधनुष दिखलाई पड़े तो तत्काल वृष्टि समझनी चाहिए। प्रात.काल इन्द्रधनुष पश्चिम दिशा मे दिखलाई देता हो तो शीघ्र वर्षा होती है। नील रग वाले बादलो मे सूर्य के चारो ओर कुण्डलता हो और दिन मे ईशान कोण के अन्दर बिजली चमकती हो तो अधिक वर्षा होती है। श्रावण महीने मे प्रात काल गर्जना हो और जल पर मछली का भ्रम हो तो अठारह प्रहर के भीतर पृथ्वी जल से पूरित हो जाती है। श्रावण मे एक बार ही दक्षिण की प्रचण्ड हवा चले तो हस्त, चित्रा, स्वाती, मूल, पूर्वाषाढ़ा, श्रवण, पूर्वाभाद्रपद, रेवती, भरणी, उत्तराफाल्गुनी, उत्तराषाढ़ा, उत्तराभाद्रपद और रोहिणी इन नक्षत्रो के आने पर वर्षा होती है। रात मे गर्जना

हो और दिन में दण्डाकार बिजली चमकती हो और प्राची दिशा में शीतल हवा चलती हो तो शीघ्र ही वर्षा होती है। पूर्व दिशा में धूम्रवर्ण बादल यदि सूर्यास्त होने पर काला हो जाय और उत्तर मे मेघमाला हो तो शीघ्र ही वर्षा होती है। प्रातःकाल सभी दिशाएँ निर्मल हो और मध्याह्न के समय गर्मी पड़ती हो तो अर्द्धरात्रि के समय प्रजा के सन्तोष के लायक अच्छी वर्षा होती है। अत्यन्त वायु का चलना, सर्वथा वायु का न चलना, अत्यन्त गर्मी पड़ना, अत्यन्त शीत पड़ना, अत्यन्त बादलो का होना और सर्वथा ही बादलों का न होना छ प्रकार के मेघ के लक्षण बतलाये गये हैं। वायु का न चलना, बहुत वायु चलना, अत्यन्त गर्मी पड़ना वर्षा होने के लक्षण हैं। वर्षा काल के आरम्भ मे दक्षिण दिशा मे यदि वायु बहे, बादल या चमकती हुई बिजली दिखलाई पडे तो अवश्य वर्षा होती है। शुक्रवार के निकले हुए बादल यदि शनिवार तक ठहरे रहे तो वे बिना वर्षा किये कभी नष्ट नही होते। उत्तर मे बादलो का घटाटोप हो रहा हो और पूर्व से वायु चलता हो तो अवश्य वर्षा होती है। सायंकाल मे अनेक तह वाले बादल यदि मोर, धनुष, लाल पुष्प और तोते के तुल्य हो अथवा जल-जन्तु, लहरो एव पहाडो के तुल्य दिखाई दें तो शीघ्र ही वर्षा होती है। तीतर के पखो की-सी आभा वाले विचित्र वर्ण के मेघ यदि उदय और अस्त के समय अथवा रात-दिन दिखलाई दे तो शीघ्र ही बहुत वर्षा होती है। मोटे तहवाले बादलो से जब आकाश ढका हुआ हो और हवा चारो ओर से रुकी हुई हो तो शीघ्र ही अधिक वर्षा होती है।

घड़े मे रखा हुआ जल गर्म हो जाय, सभी लताओ का मुख ऊँचा हो जाय, कुकुम का-सा तेज चारो ओर निकलता हो, पक्षी स्नान करते हो, गीदड सायकाल मे चिल्लाते हो, सात दिन तक आकाश मेघाच्छन्न रहे, रात्रि मे जुगुनू जल के स्थान के समीप जाते हो तो तत्काल वृष्टि होती है। गोबर मे कीटो का होना, अत्यन्त कठिन परिताप का होना, तक्र—छाछ का खट्टा हो जाना, जल का स्वाद रहित हो जाना, मछलियो का भूमि की ओर कूदना, बिल्ली का पृथ्वी को खोदना, लोह की जग से दुर्गन्ध निकलना, पर्वत का काजल के समान वर्ण का हो जाना, कन्दराओं से भाप का निकलना, गिरगिट, कृकलास आदि का वृक्ष की चोटी पर चढ़कर आकाश को स्थिर होकर देखना, गायो का सूर्य को देखना, पशु-पक्षी और कुत्तो का पंजो और खुरो द्वारा कान का खुजलाना, मकान की छत पर स्थित होकर कुत्ते का आकाश को स्थिर होकर देखना, बगुलो का पख फैलाकर स्थिरता से बैठना, वृक्ष पर चढ़े हुए सर्पों का चीत्कार शब्द होना, मेढको की जोर की आवाज आना, चिड़ियों का मिट्टी मे स्नान करना, टिटिहरी का जल मे स्नान करना, चातक का जोर से शब्द करना, छोटे-छोटे सर्पों का वृक्ष पर चढ़ना, बकरी का अधिक समय तक पवन की गति की ओर मुँह करके खड़ा

रहना, छोटे पेड़ों की कलियों का जल जाना, बड़े पेड़ों में कलियों का निकल आना, बड़ की शाखाओं में खोखलों का हो जाना, दाढ़ी-मूँछों का चिकना और नरम हो जाना, अत्यधिक गर्मी से प्राणियों का व्याकुल होना, मोर के पंखों में भन-भन शब्द का होना, गिरगिट का लाल आभायुक्त हो जाना, बालक-मोर-सियार आदि का रोना, आधी रात में मुर्गों का रोना, मक्खियों का अधिक घूमना, भ्रमरों का अधिक घूमना और उनका गोबर की गोलियों को ले जाना, काँसे के बर्तन में जंग लग जाना, वृक्षतुल्य लता आदि का स्निग्ध, छिद्र रहित दिखलाई पड़ना, पित्त प्रकृति के व्यक्ति का गाढ़ निद्रा में शयन करना, कागज पर लिखने से स्याही का न सूखना, एवं वातप्रधान व्यक्ति के सिर का घूमना तत्काल वर्षा का सूचक है।

वर्षा ज्ञान के लिए अत्युपयोगी सप्तनाड़ी चक्र—शनि, बृहस्पति, मंगल, सूर्य, शुक्र, बुध और चन्द्रमा—इनकी क्रम से चण्डा, समीरा, दहना, सौम्या, नीरा, जला और अमृता—ये सात नाड़ियाँ होती हैं।

कृत्तिका से आरम्भ कर अभिजित् सहित 28 नक्षत्रों को उपर्युक्त सात नाड़ियों में चार बार घुमाकर विभक्त कर देना चाहिए। इस चक्र में नक्षत्रों का क्रम इस प्रकार होगा कि कृत्तिका से अनुराधा तक सरल क्रम से और मघा से धनिष्ठा तक विपरीत क्रम से नक्षत्रों को लिखें। सात नाड़ियों के मध्य में सौम्य नाड़ी रहेगी और इसके आगे-पीछे तीन-तीन नाड़ियाँ। दक्षिण दिशा में गई हुई नाड़ियाँ क्रूर कहलायेंगी और उत्तर दिशा में गई हुई नाड़ियाँ सौम्य कहलायेंगी। मध्य में रहनेवाली नाड़ी मध्यनाड़ी कही जायेगी। ये नाड़ियाँ ग्रहयोग के अनुसार फल देती हैं।

दिशा	दक्षिणमें निर्जल नाड़ी			मध्य	उत्तरमें सजल नाड़ी		
नाड़ी के नाम	चण्डा	समीरा	दहना	सौम्या	नीरा	जला	अमृता
स्वामी	शनि	गुरु या सूर्य	मंगल	सूर्य या गुरु	शुक्र	बुध	चन्द्रमा
नक्षत्र	कृत्तिका	रोहिणी	मृगशिर	आर्द्रा	पुनर्वसु	पुष्य	आश्लेषा
	विशाखा	स्वाती	चित्रा	हस्त	उत्तराफाल्गुनी	पूर्वाफाल्गुनी	मघा
	अनुराधा	ज्येष्ठा	मूल	पूर्वाषाढ़ा	उत्तराषाढ़ा	अभिजित	श्रवण
	भरणी	अश्विनी	रेवती	उत्तराभाद्रपद	पूर्वाभाद्रपद	शतभिषा	धनिष्ठा

सप्तनाड़ी चक्र द्वारा वर्षाज्ञान करने की विधि—जिस ग्राम में वर्षा का ज्ञान करना हो, उस ग्राम के नामानुसार नक्षत्र का परिज्ञान कर लेना चाहिए। अब

इष्टग्राम के नक्षत्र को उपर्युक्त चक्र मे देखना चाहिए कि वह किस नाडी का है। यदि ग्राम-नक्षत्र की सौम्या नाडी—आर्द्रा, हस्त, पूर्वाषाढा और पूर्वाभाद्रपद हो और उस पर चन्द्रमा शुक्र के साथ हो अथवा ग्राम-नक्षत्र, चन्द्रमा और शुक्र ये तीनो सौम्या नाडी के हो तथा उस पर पापग्रह की दृष्टि या सयोग नही हो तो अच्छी वर्षा होती है। पापयोग दृष्टि बाधक होती है। इस विचार के अनुसार चण्डा,समीरा और दहना नाडियाँ अशुभ है, शेष सौम्या, नीरा, जला और अमृता शुभ है।

चक्र का विशेष फल—चण्डा नाडी मे दो-तीन से अधिक स्थित हुए ग्रह प्रचण्ड हवा चलाते हैं। समीरा नाडी मे स्थित होने पर वायु और दहना नाडी पर स्थित होने से ऊष्मा पैदा करते हैं। सौम्या नाडी मे स्थित होने से समता करते हैं। नीरा नाडी मे स्थित होने पर मेघो का सचय करते है, जला नाडी मे प्रविष्ट होने से वर्षा करते हैं तथा वे ही दो-तीन से अधिक एकत्रित ग्रह अमृता नाडी मे स्थित होने पर अतिवृष्टि करते है। अपनी नाडी मे स्थित हुआ एक भी ग्रह उस नाडी का फल दे देता है। किन्तु मंगल सभी नाडियो मे स्थित नाडी के अनुसार ही फल देता है। पुग्रहो —गुरु, मगल और सूर्य के योग से धुआँ, स्त्री—चन्द्रमा और शुक्र और पुग्रहो के योग से वर्षा तथा केवल स्त्री ग्रहो के योग से छाया होती है, जिस नाडी मे क्रूर और सौम्यग्रह मिले हुए स्थित हो उसमे जिस दिन चन्द्रमा का गमन हो, उस दिन अच्छी वर्षा होती है। यदि एक नक्षत्र मे ग्रहो का योग हो तो उस काल मे महावृष्टि होती है। जब चन्द्रमा पापग्रहो से या केवल सौम्यग्रहो से विद्ध हो तब साधारण वर्षा होती है तथा फसल भी साधारण ही होती है।

चन्द्रमा जिस ग्रह की नाडी मे स्थित हो, उस ग्रह से यदि यह मुक्त हो जाये तथा क्षीण न दिखलाई देता हो तो वह अवश्य वर्षा करता है। तात्पर्य यह है कि शुक्लपक्ष की षष्ठी से कृष्ण पक्ष की दशमी तक का चन्द्रमा जिस नाडी मे हो और नाडी का स्वामी चन्द्रमा के साथ बैठा हो या उसे देखता हो तो वह अवश्य वर्षा करता है। चन्द्रमा सौम्य एव क्रूर ग्रहो के साथ यदि अमृत नाडी मे हो तो एक, तीन या सात दिन मे दो, पाँच या सात बार वर्षा होती है। इसी प्रकार चन्द्रमा क्रूर और सौम्य ग्रहो से युक्त हो और जला नाडी मे स्थित हो तो इस योग से आधा दिन, एक पहर या तीन दिन तक वर्षा होती है। यदि सभी ग्रह अमृता नाड़ी मे स्थित हो तो 18 दिन, जला नाडी मे हो तो 12 दिन और नीरा नाडी मे हो तो 6 दिन तक वर्षा होती है। मध्य नाडी में गये हुए सभी ग्रह तीन दिन तक वर्षा करते हैं। शेष नाडियो मे गए हुए सभी ग्रह महावायु और दुष्ट वृष्टि करते है। अधिक शूरग्रहो के भोग से निर्जला नाडियाँ भी जलदायिनी तथा क्रूर ग्रहो के भोग से सजल नाड़ियाँ भी निर्जला बन जाती हैं। दक्षिण की तीनो नाडियो मे गये हुए ग्रह अनावृष्टि की सूचना देते हैं। और ये ही क्रूरग्रह शुभ-ग्रहो से युक्त हो और

उत्तर की तीन नाडियो मे स्थित हो तो कुछ वर्षा कर देते हैं। जलनाडी मे स्थित चन्द्र और शुक्र यदि क्रूर ग्रहो से युक्त हो जायें तो वे इस क्रूर योग से अल्पवृष्टि करते हैं। जलनाडी मे स्थित हुए बुध, शुक्र और बृहस्पति ये चन्द्रमा से युक्त होने पर उत्तम वर्षा करते हैं। जलनाडी मे चन्द्रमा और मगल आरूढ हो तो वे चन्द्रमा से समागम होने पर अच्छी वर्षा करते है। जलनाडी मे चन्द्रमा और मगल शनि द्वारा दृष्ट हो तो वर्षा की कमी होती है। गमनकाल, सयोगकाल, वक्रगति-काल, मार्गगतिकाल, अस्त या उदयकाल मे इन सभी दशाओ मे जलनाडी मे प्राप्त हुए सभी ग्रह महावृष्टि करने वाले होते हैं।

अक्षर क्रमानुसार ग्रामनक्षत्र निकालने का नियम—चू चे चो ला = अश्विनी, ली लू ले लो = भरणी, अ ई उ ए = कृतिका, ओ वा वी वू = रोहिणी, वे वो का की = मृगशिर, कू घ ड छ = आर्द्रा, के को हा ही = पुनर्वसु, हू हे हो डा = पुष्य, डी डू डे डो = आश्लेषा, मा मी मू मे = मघा, मो टा टी टू = पूर्वाफाल्गुनी, टे टो पा पी = उत्तराफाल्गुनी, पू ष ण ठ = हस्त, पे पो रा री = चित्रा, रू रे रो ता = स्वाती, ती तू ते तो = विशाखा, ना नी नू ने = अनुराधा, नो या यी यू = ज्येष्ठा, ये यो भा भी = मूल, भू धा फा ढा = पूर्वाषाढ़ा, भे भो जा जी = उत्तराषाढ़ा, खी खू खे खो = श्रवण, गा गी गू गे = घनिष्ठा, गो सा सी सू = शतभिषा, से सो दा दी = पूर्वाभाद्रपद, दू थ झ ञ = उत्तराभाद्रपद, दे दो चा ची = रेवती।

वर्षा के सम्बन्ध मे एक आवश्यक बात यह भी जान लेनी चाहिए कि भारत मे तीन प्रकार के प्राकृतिक प्रदेश हैं—अनूप, जोगल और मिश्र। जिस प्रदेश मे अधिक वर्षा होती है, वह अनूप; कम वर्षा वाला जोगल और अल्प जल वाला मिश्र कहलाता है। मारवाड मे मामूली भी अशुभ योग वर्षा को नष्ट कर देता है और अनूप देश मे प्रबल अशुभ योग भी अल्प वर्षा कर ही देता है। जिस ग्रह के जो प्रदेश बतलाये गये है, वह ग्रह अपने ही प्रदेशो मे वर्षा का अभाव या सद्भाव करता है।

ग्रहों के प्रदेश—सूर्य के प्रदेश—द्रविड देश का पूर्वार्द्ध, नर्मदा और सोन नदी का पूर्वार्द्ध, यमुना के दक्षिण का भाग, इक्षुमती नदी, श्री शैल और विन्ध्याचल के देश, चम्प, मुण्ड्र, चेदीदेश, कौशाम्बी, मगध, औण्ड्र सुड्म, बग, कलिंग, प्राग्ज्योतिष, शबर, किरात, मेकल, चीन, बाह्लीक, यवन, काम्बोज और शक हैं।

चन्द्रमा के प्रदेश—दुर्ग, आर्द्र, द्वीप, समुद्र, जलाशय, तुषार, रोम, स्त्रीराज, मरुकच्छ और कोशल हैं।

मंगल के प्रदेश—नासिक, दण्डक, अश्मक, केरल, कुन्तल, कोकण, आन्ध्र, कान्ति, उत्तर पाण्ड्य, द्रविड, नर्मदा, सोन नदी और भीमरथी का पश्चिम अर्द्ध भाग, निर्विन्ध्या, क्षिप्रा, वेत्रवती, वेणा, गोदावरी, मन्दाकिनी, तापी, महानदी,

पयोष्णी, गोमती तथा विन्ध्य, महेन्द्र और मलयाचल की नदियाँ आदि हैं।

बुध के प्रदेश—सिन्धु और लौहित्य, गंगा, मदीरका, रथा, सरयू और कौशिकी के प्रान्त के देश तथा चित्रकूट, हिमालय और गोमन्त पर्वत, सौराष्ट्र देश और मथुरा का पूर्व भाग आदि है।

बृहस्पति के प्रदेश—सिन्धु का पूर्वार्द्ध, मथुरा का पश्चिमार्द्ध भाग तथा विराट् और शतद्रु नदी, मत्स्यदेश (धौलपुर, भरतपुर, जयपुर आदि) का आधा भाग, उदीच्यदेश, अर्जुनायन, सारस्वत, वाटधान, रमट, अम्बष्ठ, पारत, स्रुघ्न, सौवीर, भरत, साल्व, त्रैगर्त, पौरव और यौधेय हैं।

शुक्र के प्रदेश—वितस्ता, इरावती और चन्द्रभागा नदी, तक्षशिला, गान्धार, पुष्कलावत, मालवा, उशीनर, शिवि, प्रस्थल, मार्तिकावत, दशार्ण और कैकेय हैं।

शनि के प्रदेश—वेदस्मृति, विदिशा, कुरुक्षेत्र का समीपवर्ती देश, प्रभास क्षेत्र, पश्चिम देश, सौराष्ट्र, आभीर, शूद्रक देश तथा आनर्त से पुष्कर प्रान्त तक के प्रदेश, आबू और रैवतक पर्वत है।

केतु के प्रदेश—मारवाड, दुर्गाचलादिक, अवगाण, श्वेत हूणदेश, पल्लव, चोल और चौलक हैं।

वृष्टिकारक अन्य योग—सूर्य, गुरु और बुध का योग जल की वर्षा करता है। यदि इन्हीं के ग्रहों के साथ मंगल का योग हो जाये तो वायु के साथ जल की वर्षा होती है। गुरु और सूर्य, राहु और चन्द्रमा, गुरु और मंगल, शनि और चन्द्रमा, गुरु और मंगल, गुरु और बुध तथा शुक्र और चन्द्रमा इन ग्रहों के योग होने से जल की वर्षा होती है।

सुभिक्ष-दुर्भिक्ष का परिज्ञान—

प्रभवाद् द्विगुणं कृत्वा त्रिभिर्न्यूनं च कारयेत्।
सप्तभिस्तु हरेद्भागं शेषं ज्ञेयं शुभाशुभम्॥
एक चत्वारि दुर्भिक्षं पंचद्वाभ्यां सुभिक्षकम्।
त्रिषष्ठे तु समं ज्ञेयं शून्ये पीडा न संशयः॥

अर्थात् प्रभवादि क्रम से वर्तमान चालू संवत् की संख्या को दुगुना कर उसमें से तीन घटा के सात का भाग देने से जो शेष रहे, उससे शुभाशुभ फल अवगत करना चाहिए। उदाहरण—साधारण नाम का संवत् चल रहा है। इसकी संख्या प्रभवादि से 44 आती है, अत. इसे दुगुना किया। $44 \times 2 = 88$, $88 - 3 = 85$, $85 \div 7 = 12$ ल०, 1 शेष, इसका फल दुर्भिक्ष है। क्योंकि एक और चार शेष में दुर्भिक्ष, पाँच और दो शेष में सुभिक्ष, तीन या छः शेष में साधारण और

शौर्यशस्त्रबलोपेता विख्यातास्च पदातयः ।
परस्परेण भिद्यन्ते तत्प्रधानवधस्तदा ॥12॥

यदि यात्रा काल में प्रसिद्ध पैदल सेना शौर्य, शस्त्र और शक्ति से सम्पन्न होकर आपस में ही झगड जाये तो प्रधान सेनापति के वध की सूचना अवगत करनी चाहिए ॥12॥

निमित्ते लक्षयेदेतां चतुरंगां तु वाहिनीम् ।
[1]नैमित्त: स्थपतिर्वैद्य: पुरोधाश्च ततो विदु ॥13॥

चतुरग सेना के गमन समय के निमित्तो का अवलोकन करना चाहिए। नैमित्तिक, राजा, वैद्य और पुरोहित इन चारो के लक्षणो को निम्न प्रकार ज्ञात करना चाहिए ॥13॥

चतुर्विधोऽयं विष्कम्भस्तस्य बिम्बा: प्रकीर्तिता: ।
स्निग्धो जीमूतसंकाशः [2]सुस्वप्न: चापविच्छुभ: ॥14॥

नैमित्तिक, राजा, वैद्य और पुरोहित यह चार प्रकार का विष्कम्भ है, इसके बिम्ब—पर्याय स्निग्ध, जीमूतसकाश—मेघो का सान्निध्य, सुस्वप्न और धनुषश हैं ॥14॥

[3]नैमित्त. साधुसम्पन्नो राज्ञ कार्यहिताय स: ।
संघाता पार्थिवेनोक्ता समानस्थाप्यकोविद: ॥15॥

स्कन्धावारनिवेशेषु कुशल: [4]स्थापको मत ।
कायशल्यशलाकासु विषोन्मादज्वरेषु च ॥16॥

चिकित्सानिपुण: कार्य: राज्ञा वैद्यस्तु यान्त्रिक: ।
ज्ञानवानल्प[5]वाग्धीमान् [6]कांक्षामुक्तो [7]यश:प्रिय: ॥17॥

मानोन्मानप्रभायुक्तो पुरोधा गुणवांछित: ।
स्निग्धो गम्भीरघोषश्च [8]सुमनाश्चाशुमान् बुध: ॥18॥

छायालक्षणपुष्टश्च सुवर्ण: पुष्टक: सुवाक् ।
सबल: पुरुषो [9]विद्वान् क्रोधश्च यति: शुचि: ॥19॥

---

1. एवमेव जय कुर्युर्विपरीता न सशय , आ० । 2. सुस्वन: मु० । 3 यह श्लोक हस्तलिखित प्रति मे नही है । 4. स्थपति स्मृत. मु० । 5. वाग्मी च मु० । 6 क्षान्तो मु० । 7 सम मु० । 8 म.स.ह्सस्मायुद मु० । 9 विद्वान् क्रोधनाश्चपल लिप्सु: मु० ।

हिंस्रो त्रिवर्ण: पिंगो वा नीरोमा [1]छिद्रवर्जित ।
रक्तश्मश्रु. पिंगनेत्रो गौरस्ताम्र: पुरोहित: ॥20॥

शुभ लक्षणो से युक्त, राजा के हित कार्य मे सलग्न, राजा के द्वारा प्रतिपादित योजनाओ को घटित करने वाला, समताभाव स्थापित करने वाला और निमित्तो का ज्ञाता नैमित्तिक होता है ।

छावनी—सैन्य-शिविर बनाने मे निपुण, युद्ध-सचालक और समयज्ञ स्थपति राजा होता है।

शरीरशास्त्र, निदानशास्त्र, शल्यकर्म—ऑपरेशन, सूचीकर्म—इन्जेक्शन, मूर्च्छा, ज्वर आदि कर्मों मे प्रवीण और चिकित्सा कार्य मे दक्ष वैद्य को ही राजा द्वारा यात्रा काल मे वैद्य निर्वाचित किया जाना चाहिए ।

ज्ञानी, अल्प भाषण करनेवाला अर्थात् मितभाषी, बुद्धिमान्, सासारिक आकाक्षाओ से रहित, यश की कामना रखने वाला, गुणवान्, मानोन्मान प्रभायुक्त—समान कद वाला, स्निग्ध और गम्भीर स्वर—कोमल और स्निग्ध स्वर वाला, श्रेष्ठ चित्त वाला, बुद्धिमान्, पुष्ट शरीर वाला, सुन्दर वर्ण वाला, सुन्दर आकृति वाला, सुन्दर वचन वाला, बलवान्, विद्वान्, अक्रोधी—शान्तचित्त, जितेन्द्रिय, पवित्र, त्रिवर्ण—द्विज, हिंसक, दिगवर्ण, लोभरहित, छिद्र—चेचक के दाग रहित, लाल मूंछ, पिंगल नेत्र, गौरवर्ण, ताम्र-कांचन देह पुरोहित होता है ॥15-20॥

नित्योद्विग्नो [2]नृपहिते युक्त प्राज्ञ सदाहित: ।
एवमेतान् यथोद्दिष्टान् सत्कर्मसु च योजयेत् ॥21॥

नित्य ही चिन्तित, राजा के हित कार्य में सलग्न, बुद्धिमान्, सर्वदा हित चाहने वाला पुरोहित नैमित्त होता है । राजा को चाहिए कि वहपूर्वोक्त गुण वाले नैमित्त, वैद्य और पुरोहित को ही कार्य मे लगाये ॥21॥

इतरेतरयोगेन न सिद्धयन्ति कदाचन ।
[3]अशान्तौ शान्तकारो यो शान्तिपुष्टिशरीरिणाम् ॥22॥

इतरेतर योग—उपर्युक्त लक्षणो से रहित व्यक्तियों को कार्य मे लगा देने पर सग्राम सम्बन्धी यात्रा सफल नही होती । ऐसे ही व्यक्ति को नियुक्त करना चाहिए, जो अशान्त को शान्त कर सके और प्रजा मे शान्ति और पुष्टि— समृद्धि स्थापित कर सके ॥22॥

1 निवरोपगत् मु० । 2 नृपहीनो युक्त मु० । 3 अशान्त शान्तकरण शास्त्पुण्याभिचारिणाम् मु० ।

यद्देवाऽसुरयुद्धे च निमित्तं दैवतैरपि।
कृतप्रमाणं च [1]तस्माद्धि द्विविधं दैवत मतम् ॥23॥

देवासुर संग्राम मे देवताओ ने निमित्तो को देखा था और उन्हे प्रमाणभूत स्वीकार किया था। अतएव निमित्त दो प्रकार के होते हैं—शुभ और अशुभ ॥23॥

ज्ञानविज्ञान[2]युक्तोऽपि लक्षणैर्यैर्विवर्जितः।
[3]न कार्यसाधको ज्ञेयो यथा चक्रो रथस्तथा ॥24॥

ज्ञान-विज्ञान से सहित होने पर भी यदि नैमित्त, पुरोहितादि उपर्युक्त लक्षणो से रहित हो तो वे कार्य-साधक नही हो सकते हैं। जिस प्रकार वक्ररथ—टेढा रथ अच्छी तरह से गमन करने मे असमर्थ है, उसी प्रकार उपर्युक्त लक्षणो से हीन व्यक्तियो से युक्त होने पर राजा अपने कार्य के सम्पादन मे असमर्थ रहता है ॥24॥

यस्तु लक्षणसम्पन्नो ज्ञानेन च समायुत।
स [4]कार्यसाधनो ज्ञेयो यथा सर्वांगिको रथः ॥25॥

जो नृप उपर्युक्त लक्षणो से युक्त, ज्ञान-विज्ञान से सहित व्यक्तियो को नियुक्त करता है, उसके कार्य सफल हो जाते है। जिस प्रकार सर्वांगीण रथ द्वारा मार्ग तय करने मे सुविधा होती है, उसी प्रकार उक्त लक्षणो से सहित व्यक्तियो के नियुक्त करने पर कार्य साधने मे सफलता प्राप्त होती है ॥25॥

अल्पेनापि तु ज्ञानेन कर्मज्ञो लक्षणान्वितः।
तद् विन्द्यात् सर्वमतिमान् राजकर्मसु [5]सिद्धये ॥26॥

कार्यकुशल, भले ही अल्पज्ञानी हो, किन्तु उपर्युक्त लक्षणो से युक्त बुद्धिमान् व्यक्ति को ही राजकार्यों की सिद्धि के लिए नियुक्त करना चाहिए ॥26॥

अपि लक्षणवान् मुख्यः कंचिदर्थं प्रसाधयेत्।
[6]न च लक्षणहीनस्तु [7]विद्वानपि न साधयेत् ॥27॥

उपर्युक्त लक्षणवाला व्यक्ति अल्पज्ञानी होने पर भी कार्य की सिद्धि कर सकता है। किन्तु लक्षण रहित विद्वान् व्यक्ति भी कार्य को सिद्ध नही कर सकता है ॥27॥

---

1 यस्मात् यद्वृत्त दैवतैरपि मु०। 2 मुक्तोऽपि मु०। 3 त साधुकार्यगो मु०। 4 साधुकार्यगो मु०। 5 सिद्ध्यति मु०। 6 ज्ञानेन बलहीनस्तु मु०। 7 वेदवानपि मु०।

यथान्धः पथिको भ्रष्टः पथि क्लिश्यत्वनायकः ।
अनैमित्तस्तथा राजा नष्टे श्रेयसि क्लिश्यति ॥28॥

जिस प्रकार अन्धा रास्तागीर ले जाने वाले के न रहने से च्युत हो जाने से कष्ट उठाता है उसी प्रकार नैमित्तिक के बिना राजा भी कल्याण के नष्ट होने से कष्ट उठाता है ॥28॥

यथा तमसि चक्षुष्मान्न रूपं साधु पश्यति ।
अनैमित्तस्तथा राजा न श्रेयः साधु यास्यति ॥29॥

जिस प्रकार नेत्र वाला व्यक्ति भी अन्धकार मे अच्छी तरह रूप को नही देख सकता है, उसी प्रकार नैमित्तिक से हीन राजा भी अच्छी तरह कल्याण को नही प्राप्त कर सकता है ॥29॥

यथा वक्रो रथो गन्ता खिन्नं य्यति यथा च्युतम्[1] ।
अनैमित्तस्तथा राजा न [3]साधुफलमीहते ॥30॥

जिस प्रकार वक्र—टेढे-मेढे रथ द्वारा मार्ग पर चलने वाला व्यक्ति मार्ग से च्युत हो जाता है और अभीष्ट स्थान पर नहीं पहुँच पाता, उसी प्रकार नैमित्तिक से रहित राजा भी कल्याणमार्ग नहीं प्राप्त कर पाता है ॥30॥

चतुरंगान्वितो युद्धं कुलालो वर्तिनं यथा ।
अविनष्टं न गृह्णाति वर्जितं सूत्रतन्तुना ॥31॥

जिस प्रकार कुम्हार बर्तन बनाते समय मृत्तिका, चाक, दण्ड आदि उपकरणों के रहने पर भी, बर्तन निकालने वाले धागे के बिना बर्तन बनाने का कार्य सम्यक् प्रकार नहीं कर सकता है, उसी प्रकार चतुरग सेना से सहित होने पर भी राजा नैमित्तिक के बिना सफलता प्राप्त नही कर सकता है ॥31॥

चतुरंगबलोपेतस्तथा राजा न शक्नुयात् ।
अविनष्टफलं भोक्तुं नैमित्तेन विवर्जितः ॥32॥

चतुरग सेना से युक्त होने पर भी राजा नैमित्तिक से रहित होने पर युद्ध के समग्रफल प्राप्त नही कर सकता है ॥32॥

तस्माद्राजा निमित्तज्ञं अष्टांगकुशलं वरम् ।
बिभृयात् प्रथमं प्रीत्याऽभ्यर्थयेत् सर्वसिद्धये ॥33॥

अतएव राजा सभी प्रकार की सिद्धि प्राप्त करने के अष्टांग निमित्त के ज्ञाता,

1. ताव मु० । 2 स्वनम् मु० । 3 सेना- मु० ।

चतुर, श्रेष्ठ नैमित्तिक को प्रार्थना पूर्वक अपने यहाँ नियुक्त करें ॥33॥

आरोग्यं जीवितं लाभं सुखं मित्राणि सम्पदः ।
धर्मार्थकाममोक्षाय तथा यात्रा नृपस्य हि ॥34॥

आरोग्य, जीवन, लाभ, सुख, सम्पत्ति, मित्र-मिलाप, धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष की प्राप्ति जिस समय होने का योग हो, उसी समय राजा को यात्रा करनी चाहिए ॥34॥

शय्याऽऽसनं यानयुग्मं हस्त्यश्वं स्त्री-नरं स्थितम् ।
वस्त्राम्लस्वप्नयोधांश्च यथास्थानं स योक्ष्यति ॥35॥

शुभ-यात्रा से ही शय्या, आसन, सवारी, हाथी, घोडा, स्त्री, पुरुष, वस्त्र, योद्धा आदि यथासमय प्राप्त होते है । अर्थात् कुसमय मे यात्रा करने से अच्छी वस्तुएँ भी नष्ट हो जाती हैं । अत. समय का प्रभाव सभी वस्तुओ पर पड़ता है ॥35॥

भृत्यामात्यास्त्रियः पूज्या राज्ञा स्थाप्याः सुलक्षणाः ।
[1]एभिस्तु लक्षणै राजा लक्षणोऽप्यवसीदति ॥36॥

भृत्य, अमात्य—प्रधानमन्त्री और स्त्रियो का यथोचित सम्मान करके इन्हे राज्य चलाने के लिए राजधानी मे स्थापित करना चाहिए । इन उपर्युक्त लक्षणो से युक्त राजा ही लक्ष्य को प्राप्त करता है ॥36॥

तस्माद् देशे च काले च सर्वज्ञानवतां वरम् ।
सुमनाः पूजयेद् राजा नैमित्तं दिव्यचक्षुषम् ॥37॥

अतएव देश और काल मे सभी प्रकार के ज्ञानियो मे श्रेष्ठ दिव्य चक्षुधारी नैमित्तिक का सम्मान राजा को प्रसन्न चित्त से करना चाहिए ॥37॥

न वेदा नापि चांगानि न विद्याश्च पृथक् पृथक् ।
प्रसाधयन्ति तानर्थान्निमित्तं यत् सुभाषितम् ॥38॥

निमित्तो के द्वारा जितने प्रकार के और जैसे कार्य सफल हो सकते हैं, उस प्रकार के उन कार्यों को न वेद से सिद्ध किया जा सकता है, न वेदांग से और न अन्य किसी भी प्रकार की विद्या से ॥38॥

अतीतं वर्तमानं च भविष्यद्यच्च किंचन ।
सर्वं विज्ञायते येन तज्ज्ञानं नेतरं मतम् ॥39॥

1. एवां कुलक्षणैः मु० ।

अतीत—भूत, वर्तमान और भविष्यत् का परिज्ञान निमित्तो के द्वारा ही किया जा सकता है, अन्य किसी शास्त्र या विद्या के द्वारा नही ॥39॥

स्वर्गप्रीतिफलं प्राहु: सौख्यं धर्मविदो जनाः।
तस्मात् प्रीति. सखा ज्ञेया सर्वस्य जगत: सदा ॥40॥

धर्म के जानकार व्यक्तियो ने प्रेम का फल स्वर्ग और सुख बतलाया है। अतएव समस्त ससार के प्रेम को मित्र जानना चाहिए ॥40॥

स्वर्गेण तादृशा प्रीतिर्विषयैर्वापि मानुषे।
[1]यदेष्ट: स्यान्निमित्तेन सतां प्रीतिस्तु जायते ॥41॥

मनुष्यो की स्वर्ग से जैसी प्रीति होती है अथवा विषयो मे—भोगो मे जैसी प्रीति होती है, उस प्रकार निमित्तो से सज्जनो की प्रीति होती है अर्थात् शुभाशुभ को ज्ञात करने के लिए निमित्तो की परम आवश्यकता है, अत निमित्तो से प्रीति करना प्रत्येक व्यक्ति का कर्त्तव्य है ॥41॥

तस्मात् स्वर्गास्पदं पुण्यं निमित्तं जिनभाषितम्।
पावनं परमं[2] श्रीमत् कामदं च[3] [4]प्रमोदकम् ॥42॥

अतएव जिनेन्द्र भगवान् के द्वारा निरूपित निमित्त स्वर्ग के तुल्य पुण्यास्पद, परम पवित्र, इच्छाओ को पूर्ण करने वाले और प्रमोद को देने वाले है ॥42॥

रागद्वेषौ च मोहं च वर्जयित्वा निमित्तवित्।
देवेन्द्रमपि निर्भीको यथाशास्त्रं समादिशेत् ॥43॥

निमित्तज्ञ को राग, द्वेष और मोह का त्याग कर निर्भय होकर शास्त्र के अनुसार इन्द्र को भी यथार्थ बात कह देनी चाहिए ॥43॥

सर्वाण्यपि निमित्तानि [5]अनिमित्तानि सर्वश।
[6]नैमित्ते पृच्छतो याति निमित्तानि भवन्ति च[7] ॥44॥

सभी निमित्त और सभी अनिमित्त नैमित्तिक से पूछने पर निमित्त हो जाते हैं। अर्थात् नैमित्तिक व्यक्ति अनिमित्तको को निमित्त मानकर फलाफल का निर्देश करता है ॥44॥

यथान्तरिक्षात् पतितं यथा भूमौ च तिष्ठति।
तथांगजनिता चेष्टं निमित्तं फलमात्मकम् ॥45॥

---

1 यदि स्पष्टा निमित्तेन मु०। 2 प्रवर मु०। 3 वा मु०। 4 प्रसादन मु०। 5 निमित्तान्यपि मु०। 6 निमित्त मु०। 7 तु मु०।

निमित्त तीन प्रकार के हैं—आकाश से पतित, भूमि पर दिखाई देने वाले और शरीर से उत्पन्न चेष्टाएँ ॥45॥

[1]पतेन्निम्ने यथाप्यम्भो सेतुबन्धे च तिष्ठति।
[2]चेतो निम्ने तथा[3] तत्त्वं [4]तद्विद्यादफलात्मकम् ॥46॥

जिस प्रकार जल नीचे की ओर जाता है, पर पुल बाँध देने पर रुक जाता है, उसी प्रकार मानव का मन भी निम्न बातो की ओर जाता है, किन्तु इन बातो को अफलात्मक—फल रहित जानना चाहिए ॥46॥

[5]बहिरंगाश्च जायन्ते अन्तरंगाच्च चिन्तितम्।
तज्ज्ञः शुभाऽशुभं ब्रूयान्निमित्तज्ञानकोविदः ॥47॥

अन्तरग मे विचार करने पर ही बहिरग मे विकृति आती है। अतः निमित्त ज्ञान मे प्रवीण व्यक्ति को शुभाशुभ निमित्त का वर्णन करना चाहिए। तात्पर्य यह है कि बाह्य प्रकृति मे विकार अन्तरग कारणो से ही होता है, अत बाह्य निमित्तो मे क्रिया वर्णन सत्य सिद्ध होता है ॥47॥

सुनिमित्तेन संयुक्तस्तत्परः साधुवृत्तय.।
अदीनमनसंकल्पो भव्यादि लक्षयेद् बुधः[6] ॥48॥

सुनिमित्तो को जानकर, साधु आचरण वाला व्यक्ति, मन को दृढ करता हुआ, शुभाशुभ फल का निरूपण करे ॥48॥

कुञ्जरस्तु तदा नर्दत् ज्वलमाने[7] हुताशने।
स्निग्धदेशे [8]ससम्भ्रान्तो राज्ञां विजयमावहेत् ॥49॥

स्निग्ध देश मे यकायक अग्नि प्रज्वलित हो और हाथी गर्जना करे तो राजा की विजय होती है ॥49॥

एवं हयवृषाश्चाऽपि सिंहव्याघ्राश्च सस्वरा[9]।
नर्दयन्ति तु [10]सैन्यानि तदा राजा प्रमर्दति ॥50॥

इसी प्रकार घोड़ा, बैल, सिंह, व्याघ्र स्वरपूर्वक सुन्दर नाद या गर्जन करें तो राजा सेना को कुचलता है ॥50॥

---

1 तथैवाम्भो यथा निम्ने सेतुबन्धे च तिष्ठति मु०। 2 चित्ते मु०। 3 तद्वै मु०। 4 विन्द्यात् बन्धफलात्मकम् मु०। 5 बहिरगादिविषयमन्तरगाश्च चिन्तितम् मु०। 6. विधिम् मु०। 7 नर्देद्धूयमाने मु०। 8 स्निग्धमुच्च च निर्भ्रान्ति राजा मु०। 9 सुस्वर मु०। 10. सौम्यानि मु०।

स्निग्धोऽल्पघोषो धूमोऽथ गौरवर्णो महानृजुः।
प्रदक्षिणोऽप्यवच्छिन्न सेनानी विजयावहः ॥51॥

यदि गमन काल में स्निग्धा, मन्द ध्वनि, धूम्रयुक्ता, गौरवर्णा, सीधी बड़ी शिखावाली अग्नि दाहिनी ओर से चारो ओर को प्रदक्षिणा करती हुई भी अविच्छिन्ना दिखलाई पड़े तो सेनानी की विजय होती है ॥51॥

कृष्णो वा विकृतो रूक्षो वामावर्तो हुताशनः।
हीनार्च्चिधूमबहुलः स प्रस्थाने भयावहः ॥52॥

यदि गमन समय मे कृष्ण शिखावाली, रूक्ष विकृति-विकार वाली, अधिक धूम वाली अग्नि सेना की बायी ओर दिखलाई पडे तो भयप्रद होती है ॥52॥

सेनाग्रे हूयमानस्य यदि पीता शिखा भवेत्।
श्यामाऽथवा यदा रक्ता पराजयति सा चमूः ॥53॥

यदि गमनकाल मे सेना के आगे पीतवर्ण की अग्नि की ज्वाला धू-धू करती हुई दिखलाई पड़े, रक्त वर्ण की अथवा कृष्ण वर्ण की शिखा उपर्युक्त प्रकार की ही दिखलाई पड़े तो सेना की पराजय होती है ॥53॥

यदि होतुः पथे शीघ्रं [1]ज्वलत्स्फुलिंगमग्रतः।
पार्श्वतः पृष्ठतो वाऽपि तदेवं फलमादिशेत् ॥54॥

यदि गमन समय मार्ग मे होता अर्थात् हवन करने वाले के आगे अग्निकण शीघ्रता से उडते हुए दिखलाई पडें, अथवा पीछे या बगल की ओर अग्निकण दिखलाई पडें तो भी सेना की पराजय होती है।।54॥

यदि धूमाभिभूता स्याद् वातो भस्म निपातयेत्।
आहूतः कम्पते वाऽऽज्यं न सा यात्रा विधीयते ॥55॥

यदि अग्नि धूमयुक्त हो और वायु के द्वारा इसकी भस्म— राख इधर-उधर उड़ रही हो अथवा अग्नि में आहुति रूप दिया गया घी कम्पित हो रहा हो तो यात्रा नही करनी चाहिए ॥55॥

राजा परिजनो वाऽपि कुप्यते मन्त्रशासने।
होतुराज्यविलोपे च तस्यैव वधमादिशेत् ॥56॥

राजा या परिजन मन्त्री के अनुशासन से क्रोधित हों और हवन करनेवाले होता का घी नष्ट हो जाये तो उसकी वध की सूचना समझनी चाहिए ॥56॥

---

1 जुहूवत भृगमग्रत: मु० ।

यद्याज्यभाजने केशा भस्मास्थीनि पुनः पुनः ।
सेनाग्रे हूयमानस्य मरणं तत्र निर्दिशेत् ॥57॥

यदि सेना के समक्ष हवन के घृतपात्र में केश, भस्म, हड्डी पुनः-पुनः गिरती हों तो सेना के मरण का निर्देश करना चाहिए ॥57॥

आपो होतुः पतेद्धस्तात् पूर्णपात्राणि वा भुवि ।
कालेन स्याद्वधस्तत्र सेनाया नात्र संशयः ॥58॥

यदि होता के हाथ से जल गिर जाये अथवा पूर्ण पात्र पृथ्वी पर गिर जाये तो कुछ समय में सेना का वध होता है, इसमें सन्देह नहीं है ॥58॥

यदा होता तु सेनायाः प्रस्थाने स्खलते मुहुः ।
बाधयेद् ब्राह्मणान् भूमौ तदा स्ववधमादिशेत् ॥59॥

जब सेना के प्रस्थान में होता बार-बार स्खलित हो और पृथ्वी पर ब्राह्मणों को बाधा पहुँचाता हो तो अपने वध का निर्देश करता है ॥59॥

धूमः [1]कुणिपगन्धो वा पीतको वा यदा भवेत् ।
सेनाग्रे हूयमानस्य तदा सेना पराजयः ॥60॥

यदि आमन्त्रित सेना के आगे हवन की अग्नि का धूम मुर्दा जैसी गन्ध वाला हो अथवा धूम पीले वर्ण का हो तो सेना के पराजय की सूचना समझनी चाहिए ॥60॥

मूषको नकुलस्थाने वराहो [2]गच्छतोऽन्तरा ।
[3]वामावर्तः पतंगो वा राज्ञो व्यसनमाविशेत् ॥61॥

न्यौला, मूषक और शूकर यदि पीछे की ओर आते हुए दिखलाई पड़ें अथवा बायीं ओर पतंग—चिड़िया उड़ती हुई दिखलाई पड़े तो राजा की विपत्ति की सूचना समझनी चाहिए ॥61॥

मक्षिका वा पतंगो वा यद्वाऽप्यन्यः सरीसृपः ।
सेनाग्रे निपतेत् किञ्चिद्धूयमाने वधं वदेत् ॥62॥

मधुमक्खी, पतंग, सरीसृप—रेंगकर चलने वाला जन्तु, सर्पादि आमन्त्रित सेना के आगे गिरे तो वध होने की सूचना समझनी चाहिए ॥62॥

शुष्कं प्रदह्यते यदा वृष्टिश्चाप्यपवर्षति ।
ज्वाला धूमाभिभूता तु ततः सैन्यो निवर्तते ॥63॥

---

1. कुणिम मु० । 2 गच्छेतेतरात् मु० । 3 वामा- मु० ।

शुष्क—सूखे काष्ठादि जलने लगे, कुछ-कुछ वर्षा भी हो और अग्नि की लौ धूमयुक्त हो तो सेना लौट आती है ॥63॥

[1]जुह्वतो दक्षिणं देशं यदि गच्छन्ति चार्चिषः ।
राज्ञो विजयमाचष्टे वामतस्तु पराजयम् ॥64॥

यदि राजा के गमन समय मे दक्षिण ओर हवन करती हुई अग्नि दिखलाई पड़े तो विजय और बायीं ओर उक्त प्रकार की अग्नि दिखलाई पड़े तो पराजय होती है ॥64॥

जुह्वत्यनुपसर्पणस्थान[2] तु यत् पुरोहितः ।
जित्वा शत्रून् रणे सर्वान् राजा तुष्टो निवर्तते ॥65॥

यदि पुरोहित ढालू स्थान पर यज्ञ करता हो अथवा जिधर राजा गमन कर रहा हो, उधर पुरोहित यज्ञ करता हो तो समस्त शत्रुओं को जीत कर प्रसन्न होता हुआ राजा लौटता है ॥65॥

यस्य वा सम्प्रयातस्य [3]सम्मुखो पृष्ठतोऽपि वा ।
पतत्युल्का सनिर्घाता वध तस्य निवेदयेत् ॥66॥

प्रयाण करने वाले जिस राजा के सम्मुख या पीछे घर्षण करती हुई उल्का गिरे तो उस राजा का वध होता है ॥66॥

सेनां यान्ति प्रयातां यां क्रव्यादाश्च जुगुप्सिताः ।
अभीक्ष्णं विस्वरा घोरा. सा सेना वध्यते परैः ॥67॥

घृणित मासभक्षी जन्तु—शेर, व्याघ्र, गृद्ध आदि जन्तु बार-बार विकृत और भयकर शब्द करते हुए प्रयाण करने वाली सेना का अनुगमन करें तो सेना शत्रुओं द्वारा वध को प्राप्त होती है ॥67॥

प्रयाणे निपतेदुल्का प्रतिलोमा यदा चमूः ।
निवर्तयति मासेन तत्र यात्रा न [4]सिध्यति ॥68॥

जब सेना के प्रयाण के समय विपरीत दिशा मे उल्कापात होता है, तब सेना एक महीने मे लौट आती है और यात्रा सफल नहीं होती ॥68॥

छिन्ना भिन्ना प्रदृश्येत तदा सम्प्रस्थिता चमूः ।
निवर्तयेत सा शीघ्रं न सा सिद्ध्यति कुत्रचित् ॥69॥

---

1 युद्ध प्रदक्षिण देवा यदि गच्छति वा दिशम् मु० । 2 सम्पन्नस्थान मु० । 3 प्रमुखे मु० । 4 सिद्ध्यते मु० ।

यदि सेना के प्रयाण के समय उल्का छिन्न-भिन्न दिखलाई पड़े तो शीघ्र ही सेना लौट आती है और यात्रा सफल नही होती ॥69॥

यस्याः प्रयाणे सेनायाः सनिर्घाता मही चलेत् ।
न तया सम्प्रयातव्यं साऽपि बध्येत सर्वशः ॥70॥

जिस सेना के प्रयाण के समय घर्षण करती हुई पृथ्वी चले—भूकम्प हो तो उस सेना के साथ नही जाना चाहिए, क्योकि उसका भी वध होता है ॥70॥

अग्रतस्तु सपाषाण तोयं वर्षति वासवः ।
सङ्ग्रामं घोरमत्यन्तं जयं राज्ञश्च शंसति ॥71॥

यदि सेना के आगे मेघ ओलो सहित वर्षा कर रहा हो तो भयकर युद्ध होता है और राजा के जय लाभ मे सन्देह समझना चाहिए ॥71॥

प्रतिलोमो यदा वायुः सपाषाणो रजस्करः ।
निवर्तयति प्रस्थाने परस्परजयावहः ॥72॥

ककड-पत्थर और धूलि को लिये हुए यदि विपरीत दिशा का वायु चलता हो तो प्रस्थान करने वाले राजा को लौटना पडता है तथा परस्पर विजय लाभ होता है—दोनो को—पक्ष-विपक्षियो को जयलाभ होता है ॥72॥

मारुतो दक्षिणो वापि यदा हन्ति परां चमूम् ।
[1]प्रस्थितानां प्रमुखत विन्द्यात् तत्र पराजयम् ॥73॥

यदि सेना के प्रयाण के समय दक्षिणी वायु चल रहा हो और यह सेना का घात कर रहा हो तो प्रस्थान करने वाले राजा की पराजय होती है ॥73॥

[2]यदा तु तत्परां सेनां समागम्य महाघनाः[3] ।
तस्य विजयमाख्याति भद्रबाहुवचो यथा ॥74॥

यदि प्रयाण करने वाली सेना के चारो ओर बादल एकत्र हो जाये तो भद्रबाहु स्वामी के वचनानुसार उस सेना की विजय होती है ॥74॥

हीनांगा जटिला बद्धा व्याधिताः [4]पापचेतसः ।
षण्ढाः पापस्वरा ये च प्रयाणे ते तु निन्दिताः ॥75॥

प्रस्थान काल मे ही हीनाग व्यक्ति, बेड़ी आदि मे बद्ध व्यक्ति, रोगी, पाप बुद्धि, नपुसक, पाप स्वर—विकृत स्वर—तोतली बोली बोलने वाला, हकलाने

1 प्रस्थितो प्रमुख तस्य मु० । 2. यदा सूर्यात् पर सेनां समागत्य महाजन मु० । 3 महाजन. मु० । 4. पापपापव. मु० ।

बाला आदि व्यक्ति यदि मिल जायें तो यात्रा को निन्दित समझना चाहिए ॥75॥

नग्नं प्रव्रजितं [1]दृष्ट्वा मंगलं मंगलार्थिनः ।
कुर्वादिमंगलं यस्तु तस्य सोऽपि न मंगलम् ॥76॥

नग्न, दीक्षित मुनि आदि साधुओं का दर्शन मगलार्थी के लिए मंगलमय होता है। जिसको साधु-मुनि का दर्शन अमगल रूप होता है, उसके लिए वह भी मंगल रूप नहीं है ॥76॥

पीडितोऽप्यभयं कुर्याद्बाक्रुष्टो वधबन्धनम् ।
ताडितो मरणं दद्याद् त्रासितो रुदितं तथा ॥77॥

यदि प्रयाण काल मे पीडित व्यक्ति दिखलाई पड़े तो हानि, चीखता हुआ दिखलाई पड़े तो वध-बन्धन, ताडित दिखलाई पडे तो मरण और रुदित दिखलाई पड़े तो त्रासित होना पड़ता है ॥77॥

पूजितः [2]सानुरागेण लाभं राज्ञः समादिशेत् ।
तस्मात्तु मंगलं कुर्यात् प्रशस्त साधुदर्शनम् ॥78॥

अनुराग पूर्वक पूजित व्यक्ति दिखलाई पड़े तो राजा को लाभ होता है, अतएव आनन्द मंगल करना चाहिए। यात्रा काल मे साधु का दर्शन शुभ होता है ॥78॥

दैवतं तु यदा बाह्यं राजा सत्कृत्य स्व पुरम् ।
प्रवेशयति तद्राजा बाह्यस्तु लभते पुरम् ॥79॥

जब राजा बाह्य देवता के मन्दिर की अर्चना कर अपने नगर मे प्रवेश करता है तो बाह्य से ही नगर को प्राप्त कर लेता है ॥79॥

वैजयन्त्यो विवर्णास्तु[3] [4]बाह्या राज्ञो यदाग्रतः ।
पराजयं समाख्याति तस्मात् तां परिवर्जयेत् ॥80॥

यदि राजा के आगे बहिर्भाग की पताका विकृत रग बदरगी दिखलाई पड़े तो राजा की पराजय होती है, अत उसका त्याग कर देना चाहिए ॥80॥

सर्वार्थेषु प्रमत्तश्च यो भवेत् पृथिवीपतिः ।
हितं न शृण्वतश्चापि तस्य विन्द्यात् पराजयम् ॥81॥

जो राजा समस्त कार्यों मे प्रमाद करता है और हितकारी बचनो को नहीं सुनता है, उसकी पराजय होती है ॥81॥

1 दृष्टा मु० । 2 सोत्तरांगेन मु० । 3 श्च मु० । 4. राज्ञो बाह्यो यदा ग्रहः मु० ।

अभिद्रवन्ति यां सेनां विस्वरं मृगपक्षिणः ।
श्वमानुषशृगाला वा सा सेना बध्यते परैः ॥82॥

जिस सेना पर विकृत स्वर में आवाज करते हुए पशु-पक्षी आक्रमण करें अथवा कुत्ता, मनुष्य और शृगाल सेना का पीछा करें तो यह सेना शत्रुओं के द्वारा वध को प्राप्त होती है ॥82॥

भग्नं दग्धं च शकटं यस्य राज्ञः प्रयायिण ।
दैवोपसृष्टं जानीयान्न तत्र गमनं शिवम् ॥83॥

प्रस्थान करने वाले जिस राजा की गाड़ी—रथ, या अन्य वाहन अकस्मात् भग्न या दग्ध हो जाय तो उसे यह दैविक उपसर्ग समझना चाहिए और उसका गमन करना कल्याणकारी नहीं है ॥83॥

उल्का वा विद्युतोऽभ्रं वा कनका: सूर्यरश्मयः ।
स्तनितं यदि वा छिद्रं सा सेना बध्यते परैः ॥84॥

यदि प्रयाण काल मे उल्का, विद्युत्, अभ्र और सूर्य की स्वर्ण किरणें स्तनित कड़कती हुई अथवा सछिद्र दिखाई पड़ें तो सेना शत्रुओं के द्वारा वध को प्राप्त होती है ॥84॥

प्रयातायास्तु सेनाया यदि कश्चिन्निवर्तते ।
चतुष्पदो द्विपदो वा न सा यात्रा विशिष्यते ॥85॥

यदि प्रयाण करने वाली सेना से कोई चतुष्पद—हाथी, घोड़े आदि पशु (या द्विपद—मनुष्य (या पक्षी) लौटने लगें तो उस यात्रा को शिष्ट-शुभकारी नहीं समझना चाहिए ॥85॥

प्रयातो यदि वा राजा निपतेद् वाहनात् क्वचित् ।
अन्यो वाऽपि गजाऽश्वो वा साऽपि यात्रा जुगुप्सिता ॥86॥

यदि प्रयाण करता हुआ राजा यकायक सवारी से गिर जाये अथवा अन्य हाथी, घोड़े गिर जायें तो यात्रा को निन्दित समझना चाहिए ॥86॥

क्रव्यादाः पक्षिणो यत्र निलीयन्ते ध्वजादिषु ।
निवेदयन्ति ते राज्ञस्तस्य घोरं चमूवधम् ॥87॥

जिस राजा की सेना की ध्वजा पर मासभक्षी पक्षी बैठ जायँ तो उस राजा की सेना का भयंकर वध होता है ॥87॥

मुहुर्मुहुर्यदा राजा निवर्तन्तो निमित्ततः ।
प्रयातः परचक्रेण सोऽपि बध्येत संयुगे ॥88॥

जब किसी निमित्त—कार्य के लिए राजा प्रयाण करने वाली सेना से लौट करके जाए तो शत्रु राजा के द्वारा वह युद्ध मे मारा जाता है ॥88॥

यदा राज्ञ: प्रयातस्य रथश्च पथि भज्यते।
[1]भग्नानि चोपकरणानि तस्य राज्ञो वधं विशेत् ॥89॥

जब यात्रा करने वाले राजा का रथ मार्ग मे भग्न हो जाये तथा उस राजा के क्षत्र, चमर आदि उपकरण भग्न हो जाये तो उसका वध समझना चाहिए ॥89॥

प्रयाणे पुरुषा वाऽपि यदि नश्यन्ति सर्वशः।
सेनाया बहुशश्चाऽपि हता दैवेन सर्वशः ॥90॥

यदि प्रस्थान मे—यात्रा मे अनेक व्यक्तियो की मृत्यु हो तो भाग्यवश सेना मे भी अनेक प्रकार की हानि होती है ॥90॥

यदा राज्ञ प्रयातस्य दान न कुरुते जनः।
हिरण्यव्यवहारेषु साऽपि यात्रा न सिध्यति[2] ॥91॥

यदि प्रयाण करने वाले राजा के व्यक्ति प्रयाण काल मे स्वर्णादिक दान न करें तो यात्रा सफल नही होती है ॥91॥

प्रवरं घातयेत् भृत्य प्रयाणे यस्य[3] पार्थिव.।
अभिषिञ्चेत् सुतं चापि चमूस्तस्यापि वध्यते ॥92॥

प्रयाणकाल मे जिस राजा के प्रधान भृत्य का घात हो और नृप उसके पुत्र को अभिषिक्त करे तो उसकी सेना का वध होता है ॥92॥

विपरीतं यदा कुर्यात् सर्वकार्यं मुहुर्मुहुः।
तदा तेन परित्रस्ता सा सेना परिवर्तते ॥93॥

यदि प्रयाण काल मे नृप बार-बार विपरीत कार्य करे तो सेना उससे परित्रस्त होकर लौट आती है ॥93॥

परिवर्तेद् यदा वात: सेनामध्ये यदा-यदा।
तदा तेन परित्रस्ता सा सेना परिवर्तते ॥94॥

सेना में जब वायु बार-बार सेना को अभिघातित और परिवर्तित करे तो सेना उसके द्वारा त्रस्त होकर लौट आती है ॥94॥

1 युगाद्य चोपकरण मु०। 2 सिध्यते मु०। 3 यदि मु०।

विशाखारोहिणीभानु[1] नक्षत्रैरुत्तरैश्च या।
पूर्वाह्णे च [2]प्रयाता वा सा सेना परिवर्तते ॥95॥

विशाखा और रोहिणी सूर्य के नक्षत्र तथा उत्तरात्रय सूर्य नक्षत्रो के पूर्वाह्न मे प्रयाण करने पर सेना लौट आती है ॥95॥

पुष्येण मैत्रयोगेन योऽश्विन्यां च नराधिप.।
पूर्वाह्णे विनर्याति वांछित स समाप्नुयात् ॥96॥

पुष्य, अनुराधा और अश्विनी नक्षत्र मे अपराह्नकाल मे जो राजा प्रयाण करता है, वह इच्छित कार्य को पूरा कर लेता है अर्थात् उसकी इच्छा पूर्ण हो जाती है ॥96॥

दिवा हस्ते तु रेवत्यां वैष्णवे च न शोभनम्।
प्रयाणं सर्वभूतानां विशेषेण महीपतेः ॥97॥

हस्त नक्षत्र मे दिन में तथा रेवती और श्रवण नक्षत्र मे प्रयाण करना सभी को अच्छा होता है, किन्तु, राजाओ का प्रयाण विशेष रूप से अच्छा होता है ॥97॥

हीने मुहूर्त्ते नक्षत्रे तिथौ च करणे तथा।
पार्थिवो योऽभिनिर्याति अचिरात् सोऽपि वध्यते ॥98॥

हीन मुहूर्त्त, नक्षत्र, तिथि और करण मे जो राजा अभिनिष्क्रमण करता है, वह शीघ्र ही वध को प्राप्त होता है ॥98॥

[3]यद्यप्ययुक्तो मात्रयात्यधिको मारुतस्तदा।
परैस्तद्वध्यते सैन्यं यदि वा न निवर्त्तते ॥99॥

यदि यात्राकाल में वायु परिमाण से अधिक चले तो सेना को लौट आना चाहिए। यदि ऐसी स्थिति मे सेना नही लौटती है तो सेना शत्रुओ के द्वारा वध को प्राप्त होती है ॥99॥

विहारानुत्सवांश्चापि कारयेत् पथि पार्थिवः।
स सिद्धार्थो निवर्तेत भद्रबाहुवचो यथा ॥100॥

यदि राजा मार्ग मे विहार और उत्सव करे तो सफल मनोरथ होकर लौटता है, ऐसा भद्रबाहु स्वामी का वचन है ॥100॥

---

1. -भ्यां तु नक्षत्रैरुत्तरैश्च यत् मु०। 2 प्रयातस्य हतसैन्यो निवर्तते मु०। 3 यथा-मयुक्ति वा राजा मात्रामधिकमूषते मु०। तदा ससैन्यो वध्येत यदि नैव निवर्तते मु०।

वसुधा वारि वा यस्य यानेषु प्रतिहीयते।
वज्राशयो निपतन्ते ससैन्यो वध्यते नृपः ॥101॥

यदि प्रयाण काल मे पृथ्वी जल से युक्त हो अथवा यान —रथ, घोड़ा, हाथी आदि की सवारी मे हीनता हो—सवारियो के चलने मे किसी तरह की कठिनाई आ रही हो अथवा बिजली आदि गिरे तो राजा का सेना सहित विनाश होता है ॥101॥

सर्वेषां शकुनानां च प्रशस्तानां स्वरः शुभः।
[1]पूर्णं विजयमाख्याति प्रशस्तानां च दर्शनम् ॥102॥

सभी शुभ शकुनो मे स्वर शुभ शकुन होता है। श्रेष्ठ शुभ वस्तुओं का दर्शन पूर्ण विजय देता है ॥102॥

फलं वा यदि वा पुष्पं ददते यस्य पादपः।
अकालजं प्रयातस्य न सा यात्रा विधीयते ॥103॥

प्रयाण काल मे जिस नृप को असमय मे ही वृक्ष फल या पुष्प दे, तो उस समय यात्रा नही करनी चाहिए ॥103॥

येषां [2]निवर्शने किंचित् विपरीतं मुहुर्मुहुः।
स्थालिका पिठरो वाऽपि तस्य तद्वधमीहते ॥104॥

प्रयाण काल मे जिन वस्तुओ के दर्शन मे कुछ विपरीतता दिखलाई पड़े अथवा बटलोई, मथानी आदि वस्तुओ के दर्शन हो तो उस राजा की सेना का वध होता है ॥104॥

[3]अचिरेणैवाकालेन तद् विनाशाय कल्पते।
निवर्तयन्ति ये केचित् प्रयाता बहुशो नराः ॥105॥

यदि गमन करने वाले अधिक व्यक्ति लौट कर वापस जाने लगें तो शीघ्र ही असमय मे सेना का विध्वस होता है ॥105॥

यात्रामुपस्थितोपकरण तेषां च स्याद् ध्रुवं वधः।
पक्वानां विरसं दग्धं [4]सर्पिर्भाण्डो विभिद्यते ॥106॥
तस्य व्याधिभयं चाऽपि मरणं वा पराजयम्।
[5]रथानां प्रहरणानांच ध्वजानामथ यो नृपः ॥107॥

---

1 तूर्णं मु०। 2 निवसन मु०। 3 आचारार्थ भवेन्नृणां मु०। 4 दग्धमभिषु मीहते मु०। 5 रथप्रहरण चैव ध्वजध्यान यो नृप मु०।

शून्य शेष में पीडा समझनी चाहिए।

अन्य नियम—विक्रम संवत् की संख्या को तीन से गुणा कर पाँच जोड़ना चाहिए। योगफल मे सात का भाग देने से शेष क्रमानुसार फल जानना। 3 और 5 शेष मे दुर्भिक्ष, शून्य मे महाकाल और 1, 2, 4, 6 शेष मे सुभिक्ष होता है।

उदाहरण—विक्रम सवत् 2048, इसे तीन से गुणा किया; 2048 × 3 = 6144, 6144 + 5 = 6149, इसमे 7 का भाग दिया, 6149 ÷ 7 = 878 लब्धि, शेष 3 रहा। इसका फल दुर्भिक्ष हुआ।

प्रभवादि संवत्सरबोधक चक्र

सख्या	सवत्सर	सख्या	सवत्सर	सख्या	संवत्सर	संख्या	सवत्सर
1	प्रभव	16	चित्रभानु	31	हेमलम्बी	46	परिधावी
2	विभव	17	सुभानु	32	विलम्बी	47	प्रमादी
3	शुल्क	18	तारण	33	विकारी	48	आनन्द
4	प्रमोद	19	पार्थिव	34	शार्वरी	49	राक्षस
5	प्रजापति	20	व्यय	35	प्लव	50	नल
6	अगिरा	21	सर्वजित्	36	शुभकृत्	51	पिंगल
7	श्रीमुख	22	सर्वधारी	37	शोभन	52	कालयुक्त
8	भाव	23	विरोधी	38	क्रोधी	53	सिद्धार्थी
9	युवा	24	विकृति	39	विश्वावसु	54	रौद्र
10	धाता	25	स्वर	40	पराभव	55	दुर्मति
11	ईश्वर	26	नन्दन	41	प्लवंग	56	दुन्दुभि
12	बहुधान्य	27	विजय	42	कीलक	57	रुधिरोद्गारी
13	प्रमाथी	27	जय	43	सौम्य	58	रक्ताक्षी
14	विक्रम	29	मन्मथ	44	साधारण	59	क्रोधन
15	वृष	30	दुर्मुख	45	विरोधकृत्	60	क्षय

संवत्सर निकालने की प्रक्रिया

संवत्कालो ग्रहयुतः कृत्वा शून्यरसैर्हृतः।
शेषा सवत्सरा ज्ञेया प्रभवाद्या बुधैः क्रमात् ॥

अर्थात्—विक्रम सवत् मे 9 जोडकर 60 का भाग देने मे जो शेष रहे, वह प्रभवादि गत सवत्सर होता है, उसमे आगे वाला वर्तमान होता है। उदाहरण—संवत् 2047, इसमे 9 जोडा तो 2047+9=2056—60=34 उपलब्धि शेष 16, अत 16वी सख्या चित्रभानु की थी, जो गत हो चुका है, वर्तमान मे सुभानु सवत् है, जो आगे बदल जाएगा, और वर्षान्त मे तारण हो जाएगा।

प्रभवादि संवत्सर बोधक चक्र

पाँच वर्ष का एक युग होता है, इसी प्रमाण से 60 वर्ष के 12 युग और उनके 12 स्वामी हैं विष्णु, बृहस्पति, इन्द्र, अग्नि, ब्रह्मा, शिव, पितर, विश्वेदेवा, चन्द्र, अग्नि, अश्विनीकुमार और सूर्य।

मतान्तर से प्रथम बीस सवत्सरो के स्वामी ब्रह्मा, इसके आगे बीस सवत्सरो के स्वामी विष्णु और इससे आगे वाले बीस सवत्सरो के स्वामी रुद्र—शिव हैं।

द्वादशोऽध्यायः

अथात· सम्प्रवक्ष्यामि गर्भान् सर्वान् सुखावहान्।
भिक्षुकाणां[1] विशेषेण परदत्तोपजीविनाम् ॥1॥

अब सभी प्राणियो को सुख देने वाले मेघ के गर्भधारण का वर्णन करता हूँ। विशेष रूप से इस निमित्त का फल दूसरो के द्वारा दिये गए भोजन को ग्रहण करने वाले भिक्षुको के लिए प्रतिपादित करता हूँ। तात्पर्य यह है कि उक्त निमित्त द्वारा वर्षा और फसल की जानकारी सम्यक् प्रकार से प्राप्त की जाती है। जिस देश मे सुभिक्ष नही, उस देश मे त्यागी, मुनियो का निवास करना कठिन है।

1 भिक्षाचराणा मु० A ।

अत: मुनिजन इस निमित्तद्वारा पहले से ही सुकाल दुष्काल का ज्ञान कर विहार करते हैं ॥1॥

ज्येष्ठा-मूलममावस्यां मार्गशीर्षं प्रपद्यते[1] ।
मार्गशीर्षप्रतिपदि गर्भाधानं प्रवर्त्तते ॥2॥

मार्गशीर्ष—अगहन की अमावस्या को, जिस दिन चन्द्रमा ज्येष्ठा या मूल नक्षत्र में होता है, मेघ गर्भ धारण करते हैं अथवा मार्गशीर्ष शुक्ला प्रतिपदा को, जबकि चन्द्रमा पूर्वाषाढा नक्षत्र मे होता है, मेघ गर्भ धारण करते हैं ॥2॥

[2]दिवा समुत्थितो गर्भो रात्रौ विसृजते जलम् ।
रात्रौ समुत्थितश्चापि दिवा विसृजते जलम् ॥3॥

दिन का गर्भ रात्रि मे जल की वर्षा करता है और रात्रि का गर्भ दिन मे जल की वर्षा करता है ॥3॥

सप्तमे सप्तमे मासे सप्तमे सप्तमेऽहनि ।
गर्भा पाकं विगच्छन्ति यादृशं तादृशं फलम् ॥4॥

सात-सात महीने और सात-सात दिन मे गर्भ पूर्ण परिपाक अवस्था को प्राप्त होता है। जिस प्रकार का गर्भ होता है, उसी प्रकार का फल प्राप्त होता है। अभिप्राय यह है कि गर्भ के परिपक्व होने का समय सात महीना और सात दिन है। वाराही सहिता मे यद्यपि 196 दिन ही गर्भ परिपक्व होने के लिए बताये गए है, किन्तु यहाँ आचार्य ने सात महीने और सात दिन कहे हैं। दोनो कथनो मे अन्तर कुछ भी नही है, यत यहाँ भी नक्षत्र मास गृहीत है, एक नक्षत्र मास 27 दिन का होता है, अत: योग करने पर यहाँ भी 196 दिन आते हैं ॥4॥

पूर्वसन्ध्या-समुत्पन्न पश्चिमायां प्रयच्छति ।
पश्चिमायां समुत्पन्न: पूर्वायां तु[3] प्रयच्छति ॥5॥

पूर्व सन्ध्या में धारण किया गया गर्भ पश्चिम सन्ध्या मे बरसता है और पश्चिम मे धारण किया गया गर्भ पूर्व सन्ध्या मे बरसता है। अभिप्राय यह है कि प्रात: धारण किया गया गर्भ सन्ध्या समय बरसता है और सन्ध्या समय धारण किया गया गर्भ प्रात. बरसता है ॥5॥

नक्षत्राणि मुहूर्त्तांश्च सर्वमेवं समाविशेत् ।
[4]षण्मासं समतिक्रम्य ततो देव: प्रवर्षति ॥6॥

---

1 प्रवर्तते मु० C । 2 दिवसो मु० A । 3 च मु० । 4. षण्मासान् मु० ।

नक्षत्र, मुहूर्त आदि सभी का निर्देश करना चाहिए। मेघ गर्भ धारण के छः महीने के पश्चात् वर्षा करते हैं ॥6॥

गर्भाधानादयो मासास्ते च मासा अवधारिणः ।
विपाचनत्रयश्चापि त्रय. कालाभिवर्षणाः ॥7॥

गर्भाधान, वर्षा आदि के महीनो का निश्चय करना चाहिए। तीन महीनो तक गर्भ की पक्व-क्रिया होती है और तीन महीने वर्षा के होते हैं ॥7॥

शीतवातश्च विद्युच्च [1]गजितं परिवेषणम् ।
सर्वगर्भेषु शस्यन्ते निर्ग्रन्थाः साधुदर्शिनः ॥8॥

सभी गर्भों मे शीत वायु का बहना, बिजली का चमकना, गर्जन करना और परिवेष की प्रशसा सभी निर्ग्रन्थ साधु करते हैं। अर्थात् मेघो के गर्भ धारण के समय शीतवायु का बहना, बिजली का चमकना, गर्जन करना और परिवेष धारण करना अच्छा माना गया है। उक्त चिह्न फसल के लिए भी श्रेष्ठ होते हैं ॥8॥

गर्भास्तु विविधा ज्ञेया शुभाऽशुभा यदा तदा ।
पापलिंगा निरुदका भयं दद्युर्न संशय [2] ॥9॥
उल्कापातोऽथ निर्घाताः दिग्-दाहा[3] पांशुवृष्टयः ।
गृहयुद्धं निवृत्तिश्च ग्रहणं चन्द्रसूर्ययो ॥10॥
ग्रहाणां चरितं चक्रं साधूनां[4] कोपसम्भवम् ।
गर्भाणामुपघाताय न ते ग्राह्या [5]विचक्षणैः ॥11॥

मेघ-गर्भ अनेक प्रकार के होते हैं, पर इनमे दो मुख्य हैं—शुभ और अशुभ। पाप के कारणीभूत अशुभ मेघ गर्भ निस्सन्देह जल की वर्षा नही करते हैं तथा भय भी प्रदान करते हैं। अशुभ गर्भ से उल्कापात, दिग्दाह, धूलि की वर्षा, गृहकलह, घर से विरक्ति और चन्द्रग्रहण तथा सूर्यग्रहण होते है। ग्रहो का युद्ध, साधुओ का क्रोधित होना, गर्भों का विनाश होता है, अत. बुद्धिमान व्यक्तियो को अशुभ गर्भ-मेघो का ग्रहण नही करना चाहिए ॥9-11॥

धूमं रजः पिशाचांश्च शस्त्रमुल्कां सनागजः ।
तैलं घृतं सुरामस्थि क्षारं[6] लाक्षां वसां मधु ॥12॥
अंगारकान् नखान् केशान् मांसशोणितकर्दमान् ।
विपच्यमाना मुञ्चन्ति गर्भाः पापभयावहाः ॥13॥

---

1 गर्जन मु०। 2 असशय मु०। 3 दिशा दाहा मु०। 4. सधूम मु० B। 5 विपश्चितै मु०। 6. क्षौर मु० A।

पापगर्भ पंचममान होने के उपरान्त धूप, रज—धूलि का वर्षण, पिशाच—भूत-पिशाचादि का भय, शस्त्रप्रहार, उल्कापतन, हाथियों का विनाश; तैल, घी, मद्य, हड्डी, क्षार—घातक तेज पदार्थ, लाख, चर्बी, मधु, अग्नि के अंगारे, नख, केश, मास, रक्त, कीचड आदि की वर्षा करते हैं ॥12-13॥

कार्तिकं [1]चाऽथ पौषं च चैत्र-वैशाखमेव च।
श्रावणं चाश्विनं सौम्यं गर्भं विन्द्याद् बहूदकम् ॥14॥

कार्तिक, पौष, चैत्र, वैशाख, श्रावण, आश्विन मास में सौम्य अर्थात् शुभ गर्भ होता है और अधिक जल की वर्षा करता है। अर्थात् उक्त मासों में यदि मेघ गर्भ धारण करे तो अच्छी वर्षा होती है ॥14॥

ये तु पुष्येण दृश्यन्ते हस्तेनाभिजिता तथा।
अश्विन्यां सम्भवन्तश्च ते पश्चान्नैव शोभना. ॥15॥

आर्द्राऽऽश्लेषासु ज्येष्ठासु मूले वा सम्भवन्ति ये।
[2]ये गर्भागमदक्षाश्च मतास्तेऽपि बहूदका:[3] ॥16॥

यदि पुष्य, हस्त, अभिजित, अश्विनी इन नक्षत्रों में गर्भ धारण हो तो शुभ है, इन नक्षत्रों के बाद शुभ नहीं। आर्द्रा, आश्लेषा, ज्येष्ठा, मूल इन नक्षत्रों में गर्भ धारण का कार्य हो तो उत्तम जल की वर्षा होती है ॥15-16॥

[4]उच्छ्रितं चापि वैशाखात् कार्तिके स्रवते जलम्।
हिमागमेन गमिका [5]तेऽपि मन्दोदका स्मृता: ॥17॥

वैशाख मे गर्भ धारण करने पर कार्तिक मास मे जल की वर्षा होती है। इस प्रकार के मेघ हिमागम के साथ जल की मन्दवृष्टि करने वाले होते हैं ॥17॥

स्वातौ च मैत्रदेवे च वैष्णवे च सुवारुणे[6]।
गर्भा: सुधारणा ज्ञेया ते स्रवन्ते[7] बहूदकम् ॥18॥

स्वाती, अनुराधा, श्रवण और शतभिषा इन नक्षत्रों मे मेघ गर्भ धारण करें तो अधिक जल की वर्षा होती है ॥18॥

पूर्वामुदीचीमैशानीं ये गर्भा विशमाश्रिता:।
ते सम्यवन्तस्तोयाढ्यास्ते गर्भास्तु सुपूजिता: ॥19॥

पूर्व, उत्तर और ईशान कोण में जो मेघ गर्भ धारण करते है, वे जल की वर्षा

---

1. वाऽथ मु०। 2 गर्भागमनदक्षाश्च मु०। 3 वरोदका मु०। 4 उत्थित मु०। 5 मन्दोदास्ते प्रकीर्तिता। 6 सुदारुणे मु० A, सवारुणे मु० D। 7. संभवन्तो बहूदका मु०।

करते हैं तथा फसल भी उत्तम होती है ॥19॥

[1]वायव्यामथ वारुण्यां ये गर्भा स्रवन्ति च ।
[2]ते वर्षं मध्यम दद्युः सस्यसम्पदमेव च ॥20॥

वायव्यकोण और पश्चिम दिशा मे जो मेघ गर्भ धारण करते है, उनसे मध्यम जल की वर्षा होती है और अनाज की फसल उत्तम होती है ॥20॥

शिष्टं सुभिक्ष विज्ञेयं जघन्या नात्र संशयः ।
मन्दगाश्च घना वा च सर्वतश्च सुपूजिताः ॥21॥

दक्षिण दिशा मे मेघ गर्भ धारण करे तो सामान्यत शिष्टता, सुभिक्ष समझना चाहिए, इसमे सन्देह नही है तथा इस प्रकार के मन्दगति वाले मेघ सर्वत्र पूजे भी जाते हैं ॥21॥

मारुत. तत्प्रभवाः गर्भा धूयन्ते मारुतेन च ।
वातो [3]गर्भाश्च वर्षञ्च करोत्यपकरोति च ॥22॥

वायु से उत्पन्न गर्भ वायु के द्वारा ही आन्दोलित किये जाते है तथा वायु चलता है, वर्षा करता है और गर्भ की क्षति भी होती है ॥22॥

कृष्णा नीलाश्च रक्ताश्च पीताः शुक्लाश्च सर्वतः ।
व्यामिश्राश्चापि ये गर्भा. स्निग्धा सर्वत्र पूजिताः ॥23॥

कृष्ण, नील, रक्त, पीत, शुक्ल, मिश्रिववर्ण तथा स्निग्ध गर्भ सभी जगह पूज्य होते है— शुभ होते है ॥23॥

अप्सराणां तु सदृशा. पक्षिणां जलचारिणाम् ।
वृक्षपर्वतसंस्थाना गर्भाः सर्वत्र पूजिताः ॥24॥

देवागनाओ के सदृश, जलचर पक्षियो के समान, वृक्ष और पर्वत के आकार वाले गर्भ सर्वत्र पूज्य है— शुभ है ॥24॥

वापीकूपतडागाश्च[4] नद्यश्चापि मुहुर्मुहुः ।
पूर्यन्ते तादृशैर्गर्भैस्तोयक्लिन्ना [5]नदीवहैः ॥25॥

इस प्रकार के गर्भ से बावडी, कुआ, तालाब, नदी आदि जल से लबालब भर जाते हैं तथा इस प्रकार जल कई बार बरसता है ॥25॥

---

1 वायव्या (याया) तु मु० । 2 मध्यम वर्षण दद्यु मु० । 3 वर्षन्तु गर्भाश्च मु० । 4 तडागानि मु० । 5 धरावहैः मु० ।

नक्षत्रेषु तिथौ चापि मुहूर्त्ते करणे दिशि ।
यत्र यत्र समुत्पन्नाः [1]गर्भाः सर्वत्र पूजिताः ॥26॥

जिस-जिस नक्षत्र, तिथि, दिशा, मुहूर्त, करण मे स्निग्ध मेघ गर्भ धारण करते हैं, वे उस-उस प्रकार के मेघ पूज्य होते हैं—शुभ होते हैं ॥26॥

सुसंस्थानाः सुवर्णाश्च सुवेषाः स्वभ्रजा घनाः ।
सुबिन्दवः स्थिता गर्भाः सर्वे सर्वत्र पूजिताः ॥27॥

सुन्दर आकार, सुन्दर वर्ण, सुन्दर वेष, सुन्दर बादलो से उत्पन्न, सुन्दर बिन्दुओं से युक्त मेघगर्भ सर्वत्र पूजित होते है—शुभ होते हैं ॥27॥

कृष्णा रूक्षाः सुखण्डाश्च विद्रवन्तः पुनः पुनः ।
विस्वरा रूक्षशब्दाश्च गर्भाः सर्वत्र निन्दिताः ॥28॥

कृष्ण, रूक्ष, खण्डित तथा विकृत-आकार वाले, भयकर और रूक्ष शब्द करने वाले मेघगर्भ सर्वत्र निन्दित हैं ॥28॥

[2]अन्धकारसमुत्पन्ना गर्भास्ते तु न पूजिताः ।
चित्राः स्रवन्ति सर्वाणि गर्भाः सर्वत्र निन्दिताः ॥29॥

अन्धकार में समुत्पन्न गर्भ—कृष्णपक्ष मे उत्पन्न गर्भ पूज्य नही—शुभ नही होते हैं। चित्रा नक्षत्र मे उत्पन्न गर्भ भी निन्दित है ॥29॥

मन्दवृष्टिमनावृष्टिं भयं राजपराजयम् ।
दुर्भिक्षं मरणं रोगं गर्भाः कुर्वन्ति तादृशम् ॥30॥

उक्त प्रकार का मेघगर्भ मन्दवृष्टि, अनावृष्टि, राजा की पराजय का भय, दुर्भिक्ष, मरण, रोग इत्यादि बातो को करता है ॥30॥

मार्गशीर्षे तु गर्भास्तु ज्येष्ठामूलं समादिशेत् ।
पौषमासस्य गर्भास्तु विन्द्यादाषाढिकां बुधाः ॥31॥
माघजात् श्रवणे विन्द्यात् प्रोष्ठपदे च फाल्गुनात् ।
चैत्रामश्वयुजे विन्द्याद्गर्भं जलविसर्जनम् ॥32॥

मार्गशीर्ष का गर्भ ज्येष्ठा या मूल मे और पौष का गर्भ पूर्वाषाढा मे, माघ मे उत्पन्न गर्भ श्रवण में, फाल्गुन मे उत्पन्न धनिष्ठा नक्षत्र मे, चैत्र मे उत्पन्न गर्भ अश्विनी नक्षत्र मे जल-वृष्टि करता है ॥31-32॥

---

1 स्निग्धा. मु० । 2. इस श्लोक के पहले B C D मे यह श्लोक मुद्रित है—अत्युष्णाश्चातिशीताश्च बहूदका विकृताश्च ये । चित्रा स्रवन्ति सर्वाणि गर्भा. सर्वत्र निन्दिता ।। मु० ।

मन्दोदा: प्रथमे मासे पश्चिमे ये च कीर्तिता: ।
शेषा बहूदका ज्ञेया: प्रशस्तैर्लक्षणैर्यदा ॥33॥

पहले दिन मेघगर्भों का निरूपण किया है, उनमे से उपर्युक्त मेघगर्भ पहले महीने में कम जल की वर्षा करते हैं, अवशेष प्रशस्त-शुभ लक्षणो के अनुसार अधिक जल की वर्षा करते हैं ॥33॥

यानि रूपाणि दृश्यन्ते गर्भाणां यत्र यत्र च ।
तानि सर्वानि ज्ञेयानि भिक्षूणां भैक्षवर्तिनाम् ॥34॥

मेघगर्भों का जहाँ-जहाँ जो-जो रूप दिखाई देता हो, मधुकरीवृत्ति करने वाले साधु को वहाँ-वहाँ उसका निरीक्षण करना चाहिए ॥34॥

सन्ध्यायां यानि रूपाणि मेघेष्वभ्रेषु यानि च ।
तानि गर्भेषु सर्वाणि [1]यथावदुपलक्षयेत् ॥35॥

मेघो का जो रूप सन्ध्या समय मे हो, उनका गर्भकाल मे अवस्था के अनुसार निरीक्षण करना चाहिए ॥35॥

ये केचिद् विपरीतानि पठ्यन्ते तानि सर्वश: ।
लिंगानि तोयगर्भेषु भयदेषु भवेत् तदा ॥36॥

प्रतिपादित शुभ चिह्नों के विपरीत चिह्न यदि दिखलाई पड़ें तो उन चिह्नों वाला मेघगर्भ भय देने वाला होता है ॥36॥

गर्भा यत्र न दृश्यन्ते तत्र विन्द्यान्महद्भयम् ।
उत्पन्ना वा स्रवन्त्याशु भद्रबाहुवचो यथा ॥37॥

जहाँ मेघगर्भ दिखलाई नही पड़े, वहाँ अत्यन्त भय समझना चाहिए । उत्पन्न हुई फसल शीघ्र नष्ट हो जाती है, ऐसा भद्रबाहु स्वामी का वचन है ॥37॥

निर्ग्रन्था यत्र गर्भांश्च न पश्येयु: कदाचन ।
[2]तं च देशं परित्यज्य सगर्भं संश्रयेत् त्वरा ॥38॥

निर्ग्रन्थ मुनि जिस देश मे मेघगर्भ न देखें, उस देश को छोडकर शीघ्र ही उन्हें मेघगर्भ वाले अन्य देश का आश्रय लेना चाहिए ॥38॥

इति श्रीभद्रबाहुके संहितायां सकलमुनिजनानन्द भद्रबाहुविरचिते महानैमित्त-शास्त्रे गर्भवातलक्षणं द्वादशमं परिसमाप्तम् ।

---

1 यथावस्थं निरीक्षयेत् मु० । 2 त देश प्रथम त्यक्त्वा सगर्भं त्वरित भजेत् मु० ।

विवेचन—मेघगर्भ की परीक्षा द्वारा वर्षा का निश्चय किया जाता है। वराहमिहिर ने बतलाया है—"दैवविदवहितचित्तो द्युनिशं यो गर्भलक्षणे भवति। तस्य मुनेरिव वाणी न भवति मिथ्याम्बुनिर्देशे" ॥ अर्थात् जो दैव का जानकार पुरुष रात-दिन गर्भलक्षण मे मन लगाकर सावधान चित्त से रहता है, उसके वाक्य मुनियो के समान मेघगणित मे कभी मिथ्या नही होते। अतः गर्भ की परीक्षा का परिज्ञान कर लेना आवश्यक है। आचार्य ने इस अध्याय मे गर्भधारण का निरूपण किया है। मार्गशीर्ष मास में शुक्ल पक्ष की प्रतिपदा से जिस दिन चन्द्रमा पूर्वाषाढा नक्षत्र मे होता है, उस दिन से ही सभी गर्भों का लक्षण जानना चाहिए। चन्द्रमा जिस नक्षत्र मे रहता है, यदि उसी नक्षत्र मे गर्भ धारण हो तो उस नक्षत्र से 195 दिन के उपरान्त प्रसवकाल—वर्षा होने का समय होता है। शुक्लपक्ष का गर्भ कृष्णपक्ष मे और कृष्णपक्ष का गर्भ शुक्लपक्ष मे, दिन का गर्भ रात्रि मे, रात का गर्भ दिन मे, प्रात.काल का गर्भ सन्ध्या में और सन्ध्या का गर्भ प्रात काल मे जल की वर्षा करता है। मार्गशीर्ष के आदि में उत्पन्न गर्भ एव पौष मास में उत्पन्न गर्भ मन्दफल युक्त हैं—अर्थात् कम वर्षा होती है। माघ मास का गर्भ श्रावण कृष्णपक्ष मे प्रात काल को प्राप्त होता है। माघ के कृष्ण पक्ष द्वारा भाद्रपद मास का शुक्लपक्ष निश्चित है। फाल्गुन मास के शुक्ल पक्ष मे उत्पन्न गर्भ भाद्रपद मास के शुक्लपक्ष मे जल की वर्षा करता है। फाल्गुन के कृष्ण पक्ष का गर्भ आश्विन के शुक्लपक्ष में जल की वृष्टि करता है।

पूर्व दिशा के मेघ जब पश्चिम की ओर उड़ते हैं और पश्चिम के मेघ पूर्व दिशा मे उदित होते हैं, इसी प्रकार चारो दिशाओ के मेघ पवन के कारण अदला-बदली करते रहते हैं, तो मेघ का गर्भकाल जानना चाहिए। जब उत्तर, ईशानकोण और पूर्व दिशा वायु मे आकाश विमल, स्वच्छ और आनन्दयुक्त होता है तथा चन्द्रमा और सूर्य स्निग्ध, श्वेत और बहुत घेरेदार होते हैं, उस समय भी मेघो के गर्भधारण का समय रहता है। मेघों के गर्भधारण करने का समय मार्गशीर्ष—अगहन, पौष, माघ और फाल्गुन हैं। इन्ही महीनो मे मेघ गर्भ धारण करते हैं। जो व्यक्ति गर्भधारण का काल पहचान लेता है,वह गणित द्वारा बडी ही सरलता से जान सकता है कि गर्भधारण के 195 दिन के उपरान्त वर्षा होती है। अगहन के महीने मे जिस तिथि को मेघ गर्भ धारण करते हैं, उस तिथि से ठीक 195वें दिन में अवश्य वर्षा होती है। अतः गर्भधारण की तिथि का ज्ञान लक्षणो के आधार पर ही किया जा सकता है। स्थूल और स्निग्ध मेघ जब आकाश में आच्छादित हो और आकाश का रंग काक के अण्डे और मोर के पंख के समान हो तो मेघों का गर्भधारण समझना चाहिए। इन्द्रधनुष और गम्भीर गर्जनायुक्त, सूर्याभिमुख, बिजली का प्रकाश करने वाले मेघ हो तो;

ईशान और पूर्व दिशा मे गर्भधारण करते हैं। जिस समय मेघ गर्भधारण करते हैं उस समय दिशाएँ शान्त हो जाती हैं, पक्षियो का कलरव सुनाई पड़ने लगता है। अगहन मास मे जिस तिथि को मेघ सन्ध्या की अरुणिमा से अनुरक्त और मंडलाकार होते हैं, उसी तिथि को उनकी गर्भ धारण की क्रिया समझनी चाहिए। अगहन मास मे जिस तिथि को प्रबल वायु चले, लाल-लाल बादल आच्छादित हो, चन्द्र और सूर्य की किरणें तुषार के समान कलुषित और शीतल हो तो छिन्न-भिन्न गर्भ समझना चाहिए। गर्भधारण के उपर्युक्त चारो मासो के अतिरिक्त ज्येष्ठ मास भी माना गया है। ज्येष्ठ मे शुक्ल पक्ष की अष्टमी से चार दिनो तक गर्भ धारण की क्रिया होती है। यदि ये चारो दिन एक समान हो तो सुखदायी होते है, तथा गर्भधारण क्रिया बहुत उत्तम होती है। यदि इन दिनो मे एक दिन जल बरसे, एक दिन पवन चले, एक दिन तेज धूप पडे और एक दिन आँधी चले तो निश्चयत. गर्भ शुभ नही होता। ज्येष्ठमास का गर्भ मात्र 89 दिनो मे बरसता है। अगहन का गर्भ दिन मे वर्षा करता है, किन्तु वास्तविक गर्भ अगहन, पौष और माघ का ही होता है। अगहन के गर्भ द्वारा आषाढ़ मे वर्षा, पौष के गर्भ से श्रावण मे, माघ के गर्भ से भाद्रपद और फाल्गुन के गर्भ से आश्विन मे जल-वृष्टि होती है।

फाल्गुन मे तीक्ष्ण पवन चलने से, स्निग्ध बादलो के एकत्र होने से, सूर्य के अग्नि समान पिंगल और ताम्रवर्ण होने से गर्भ क्षीण होता है। चैत्र मे सभी गर्भ पवन, मेघ, वर्षा और परिवेष युक्त होने से शुभ होते है। बैशाख मे मेघ, वायु, जल और बिजली की चमक एव कडकडाहट के होने से गर्भ की पुष्टि होती है। उल्का, वज्र, धूलि, दिग्दाह, भूकम्प, गन्धर्वनगर, कीलक, केतु, ग्रहयुद्ध, निर्घात, परिघ, इन्द्रधनुष, राहुदर्शन, रुधिरादिका वर्षण आदि के होने से गर्भ का नाश होता है। पूर्वाभाद्रपदा, उत्तराभाद्रपदा, पूर्वाषाढा, उत्तराषाढा और रोहिणी नक्षत्र मे धारण किया गया गर्भ पुष्ट होता है। इन पाँच नक्षत्रो मे गर्भ धारण करना शुभ माना जाता है तथा मेघ प्राय इन्ही नक्षत्रो मे गर्भ धारण करते भी हैं। अगहन महीने मे जब ये नक्षत्र हो, उन दिनो गर्भ काल का निरीक्षण करना चाहिए। पौष, माघ और फाल्गुन मे भी इन्ही नक्षत्रो का मेघगर्भ शुभ होता है, किन्तु शतभिषा, आश्लेषा, आर्द्रा और स्वाती नक्षत्र मे भी गर्भ धारण की क्रिया होती है। अगहन से बैशाख मास तक छः महीनो मे गर्भ धारण करने से 8, 6, 16, 24, 20 और 3 दिन तक निरन्तर वर्षा होती है। क्रूरग्रहयुक्त होने पर समस्त गर्भ मे ओले, अशनि और मछली की वर्षा होती है। यदि गर्भ समय मे अकारण ही घोर वर्षा हो तो गर्भ का स्खलन हो जाता है।

गर्भ पाँच प्रकार के निमित्तो से पुष्ट होता है। जो पुष्टगर्भ है, वह सौ योजन

तक फैल कर जल की वर्षा करता है। चतुर्निमित्तक पुष्ट गर्भ 50 योजन, त्रिनिमित्तक 25 योजन, द्विनिमित्तक 12½ योजन और एकनिमित्तक 5 योजन तक जल की वर्षा करता है। पञ्चनिमित्तो मे पवन, जल, बिजली, गर्जना और मेघ शामिल हैं। वर्षा का प्रभाव भी निमित्तो के अनुसार ही ज्ञात किया जाता है। पञ्चनिमित्त मेघगर्भ से एक द्रोण जल की वर्षा, चतुर्निमित्तक से बारह आढक जल की वर्षा, त्रिनिमित्तक से 8 आढक जल की वर्षा, द्विनिमित्तक से 6 आढक और एक निमित्तक से 3 आढक जल की वर्षा होती है। यदि गर्भकाल में अधिक जल की वर्षा हो जाय तो प्रसवकाल के अनन्तर ही जल की वर्षा होती है।

मेघविजयगणि ने मेघगर्भ का विचार करते हुए लिखा है कि मार्गशीर्ष शुक्ला प्रतिपदा के उपरान्त जब चन्द्रमा पूर्वाषाढा नक्षत्र पर स्थित हो, उसी समय गर्भ के लक्षण अवगत करने चाहिए। जिस नक्षत्र मे मेघ गर्भ धारण करते हैं, उससे 195 वें दिन जब वही नक्षत्र आता है तो जल-वृष्टि होती है। मार्गशीर्ष शुक्लपक्ष का गर्भ तथा पौष कृष्णपक्ष का गर्भ अत्यल्प वर्षा करने वाला होता है। माघ शुक्लपक्ष का गर्भ श्रावण मे और माघ कृष्ण का गर्भ भाद्रपद शुक्ल मे जल की वृष्टि करता है। फाल्गुन शुक्ल का गर्भ भाद्रपद कृष्ण मे, फाल्गुन कृष्ण का आश्विन शुक्ल मे, चैत्र शुक्ल का गर्भ आश्विन कृष्ण मे, चैत्र कृष्ण का गर्भ कार्तिक शुक्ल मे जल की वर्षा करता है। सन्ध्या समय पूर्व मे आकाश मेघाच्छादित हो और ये मेघ पर्वत या हाथी के समान हो तथा अनेक प्रकार के श्वेत हाथियो के समान दिखलाई पड़े तो पाँच या सात रात मे अच्छी वर्षा होती है। सन्ध्या समय उत्तर मे आकाश मेघाच्छादित हो और मेघ पर्वत या हाथी के समान मालूम पडें तो तीन दिन मे उत्तम वर्षा होती है। सन्ध्या समय पश्चिम दिशा में श्याम रग के मेघ आच्छादित हो तो सूर्यास्त काल मे ही जल की उत्तम वर्षा होती है। दक्षिण और आग्नेय दिशा के मेघ, जिन्होने पौष मे गर्भ धारण किया है, अल्प वर्षा करते है। श्रावण मास मे ऐसे मेघो द्वारा श्रेष्ठ वर्षा होने की सम्भावना रहती है। आग्नेय दिशा मे अनेक प्रकार के आकार वाले मेघ स्थित हो तो ईति, सन्ताप के साथ सामान्य वर्षा करते है। वायव्य और ईशान दिशा के बादल शीघ्र ही जल बरसाते है। जिन मेघो ने किसी भी महीने की चतुर्थी, पचमी, षष्ठी और सप्तमी को गर्भ धारण किया है, वे मेघ शीघ्र ही जल-वृष्टि करते है। मार्गशीर्ष कृष्ण पक्ष मे मघा नक्षत्र मे मेघ गर्भ धारण करे अथवा मार्गशीर्ष कृष्णा चतुर्दशी को मेघ और बिजली दिखलाई पड़े तो आषाढ़ शुक्ल पक्ष मे अवश्य ही जल-वृष्टि होती है।

मार्गशीर्ष कृष्ण चतुर्थी, पंचमी और षष्ठी इन तिथियो मे आश्लेषा, मघा

और पूर्वाफाल्गुनी ये नक्षत्र हों और इन्हीं मे गर्भ धारण की क्रिया हुई हो तो आषाढ़ में केवल तीन दिनो तक ही उत्तम वर्षा होती है। यदि मार्गशीर्ष में उत्तरा, हस्त और चित्रा ये नक्षत्र सप्तमी तिथि को पडते हो और इसी तिथि को गर्भ धारण करें तो आषाढ़ मे केवल बिजली चमकती है और मेघो की गर्जना होती है। अन्तिम दिनो में तीन दिन वर्षा होती है। आषाढ़ शुक्ला अष्टमी को स्वाती नक्षत्र पड़े तो इस दिन महावृष्टि होने का योग रहता है। मार्गशीर्ष कृष्णा दशमी, एकादशी और द्वादशी और अमावस्या को चित्रा, स्वाती, विशाखा नक्षत्र हो और इन तिथियों मे मेघों ने गर्भ धारण किया हो तो आषाढ़ी पूर्णिमा को घनघोर वर्षा होती है। जब गर्भ का प्रसवकाल आता है, उस समय पूर्व मे बादल धूमिल, सूर्यास्त मे श्याम और मध्याह्न मे विशेष गर्मी रहती है। यह लक्षण प्रसवकाल का है। श्रावण, भाद्रपद और आश्विन का गर्भ सात दिन या नौ दिन मे ही बरस जाता है। इन महीनो का गर्भ अधिक वर्षा करने वाला होता है। दक्षिण की प्रबल हवा के साथ पश्चिम की वायु भी साथ ही चले तो शीघ्र ही वर्षा होती है। यदि पूर्व पवन चले और सभी दिशाएँ धूम्रवर्ण हो जायें तो चार प्रहर के भीतर मेघ बरसता है। यदि उदयकाल मे सूर्य पिघलाये गये स्वर्ण के समान या वैडूर्य मणि के समान उज्ज्वल हो तो शीघ्र ही वर्षा करता है। गर्भकाल मे साधारणत. आकाश मे बादलो का छाया रहना शुभ माना गया है। उल्कापात, विद्युत्पात, धूलि, वर्षा, भूकम्प, दिग्दाह, गन्धर्वनगर, निर्घात शब्द आदि का होना मेघगर्भ काल मे अशुभ माना गया है। पंचनक्षत्र—पूर्वाषाढा, उत्तराषाढ़ा, रोहिणी, पूर्वाभाद्रपद और उत्तराभाद्रपद मे धारण किया गया गर्भ सभी ऋतुओ मे वर्षा का कारण होता है। शतभिषा, आश्लेषा, आर्द्रा, स्वाती, मघा इन नक्षत्रो मे धारण किया गया गर्भ भी शुभ होता है। अच्छी वर्षा के साथ सुभिक्ष, शान्ति, व्यापार मे लाभ और जनता मे सन्तोष रहता है। पूर्वाषाढा नक्षत्र का गर्भ पशुओ के लिए लाभदायक होता है। इस गर्भ का निमित्त नर और मादा पशुओ की उन्नति का कारण होता है। पशुओं के रोग आदि नष्ट हो जाते हैं और उन्हे अनेक प्रकार से लोग अपने कार्यों मे लाते हैं। पशुओ की कीमत भी बढ़ जाती है। देश मे कृषि का विकास पूर्णरूप से होता है तथा कृषि के सम्बन्ध मे नये-नये अन्वेषण होते हैं। पूर्वाषाढ़ा मे गर्भ धारण करने से चातुर्मास में उत्तम वर्षा होती है और माघ के महीने मे भी वर्षा होती है, जिससे फसल की उत्पत्ति अच्छी होती है। पूर्वाषाढ़ा का गर्भ देश के निवासियों के आर्थिक विकास का भी कारण बनता है। यदि इस नक्षत्र के मध्य मे गर्भ धारण का कार्य होता है, तो प्रशासक के लिए हानि होती है तथा राजनीतिक दृष्टि से उक्त प्रदेश का सम्मान गिर जाता है। उत्तराषाढ़ा में गर्भ धारण की क्रिया होती है तो भाद्रपद के महीने में अल्प वर्षा होती है, अवशेष महीनो मे खूब वर्षा होती है। कलाकार और शिल्पियों के

लिए उक्त प्रकार का गर्भ अच्छा होता है। देश में कला-कौशल की भी वृद्धि होती है। यदि उक्त नक्षत्र में सन्ध्या समय गर्भ धारण की क्रिया हो तो व्यापारियों के लिए अशुभ होता है। वर्षा प्रचुर परिमाण मे होती है। विद्युत्पात अधिक होता है, तथा देश के किसी बड़े नेता की मृत्यु की भी सूचक होती है। उत्तराषाढ़ा के प्रथम चरण मे गर्भ धारण की क्रिया हो तो साधारण वर्षा आश्विन मास में होती है, द्वितीय चरण मे गर्भधारण की क्रिया हो तो भाद्रपद मास मे अल्प वर्षा होती है और यदि तृतीय चरण मे गर्भधारण की क्रिया हो तो पशुओं को कष्ट होता है। अतिवृष्टि के कारण बाढ अधिक आती है तथा समस्त बडी नदियाँ जल से आप्लावित हो जाती हैं। दिग्दाह और भूकम्प होने का योग भी आश्विन और माघ मास मे रहता है। कृषि के लिए उक्त प्रकार की जलवृष्टि हानिकारक ही होती है। उत्तराषाढा के चतुर्थ चरण मे गर्भधारण होने पर उत्तम वर्षा होती है और फसल के लिए यह वर्षा अमृत के समान गुणकारी सिद्ध होती है।

पूर्वा भाद्रपद मे गर्भ धारण हो तो चातुर्मास के अलावा पौष में भी वर्षा होती है और फसल मे अनेक प्रकार के रोग उत्पन्न होते हैं, जिससे फसल की क्षति होती है। यदि इस नक्षत्र के प्रथम चरण मे गर्भ धारण की क्रिया मार्गशीर्ष कृष्ण पक्ष मे हो तो गर्भ धारण के 193 दिन बाद उत्तम वर्षा होती है और आषाढ के महीने मे आठ दिन वर्षा होती है। प्रथम चरण की आरम्भ वाली तीन घटियों मे गर्भ धारण हो तो पाँच आढक जल आषाढ मे, सात आढक श्रावण मे, छ. आढक भाद्रपद और चार आढक आश्विन मे बरसता है। गर्भ धारण के दिन से ठीक 193 वें दिन मे निश्चयत. जल बरस जाता है। यदि द्वितीय चरण मे गर्भ धारण की क्रिया मार्गशीर्ष कृष्ण पक्ष मे हो तो 192 दिन के पश्चात् या 192वे दिन ही जल वृष्टि हो जाती है। आषाढ़ कृष्ण पक्ष में उत्तम जल बरसता है, शुक्ल पक्ष मे केवल दो दिन अच्छी वर्षा और तीन दिन साधारण वर्षा होती है। द्वितीय चरण का गर्भ चार सौ कोश की दूरी में जल बरसाता है। यदि इसी नक्षत्र के इसी चरण मे मार्गशीर्ष शुक्ल पक्ष में गर्भ धारण की क्रिया हो तो आषाढ़ में प्राय वर्षा का अभाव रहता है। श्रावण मास में पानी बरसना आरम्भ होता है, भाद्रपद मे भी अल्प ही वर्षा होनी है। यद्यपि उक्त नक्षत्र के उक्त चरण मे गर्भ धारण करने का फल वर्ष मे एक खारी जल बरसता है, किन्तु यह जल इस प्रकार बरसता है, जिससे इसका सदुपयोग पूर्ण रूप से नहीं हो पाता। यदि पूर्वाभाद्रपद के तृतीय चरण में मेघ मार्गशीर्ष कृष्ण पक्ष मे गर्भधारण करें तो 190वें दिन वर्षा होती है। वर्षा का आरम्भ आषाढ़ कृष्ण सप्तमी से हो जाता है तथा आषाढ मे ग्यारह दिनों तक वर्षा होती रहती है। श्रावण मे कुल आठ दिन, भाद्रपद मे चौदह दिन और आश्विन में नौ दिन वर्षा होती है। कार्त्तिक मास में कृष्णपक्ष की त्रयोदशी से शुक्लपक्ष की पंचमी

तक वर्षा होती है। इस चरण का गर्भधारण फसल के लिए भी उत्तम होता है तथा सभी प्रकार के धान्यो की उत्पत्ति उत्तम होती है। जब नक्षत्र के चतुर्थ चरण मे गर्भ धारण की क्रिया हो तो 196वें दिन घोर वर्षा होती है। सुभिक्ष, शान्ति और देश के आर्थिक विकास के लिए उक्त गर्भ धारण का योग उत्तम है। वर्ष मे कुल 84 दिन वर्षा होती है। आषाढ मे 16 दिन, श्रावण मे 19 दिन, भाद्रपद में 14 दिन, आश्विन मे 19 दिन, कार्तिक मे 10 दिन, मार्गशीर्ष मे 3 दिन और माघ मे 3 दिन पानी बरसता है। अन्न का भाव सस्ता रहता है। गुड, चीनी, घी, तैल, तिलहन का भाव कुछ तेज रहता है।

उत्तराभाद्रपद के प्रथम चरण मे मार्गशीर्ष शुक्लपक्ष मे गर्भधारण हो तो गर्भधारण के 188वें दिन वर्षा होती है। वर्षा का आरम्भ आषाढ शुक्ल तृतीया से होता है। वर्ष मे 73 दिन वर्षा होती है। आषाढ मे 6 दिन, श्रावण मे 18 दिन, भाद्रपद मे 18, आश्विन मे 14 दिन, कार्तिक मे 10 दिन, मार्गशीर्ष मे 5 दिन और पौष मे 2 दिन वर्षा होती है। द्वितीय चरण मे गर्भ धारण होने पर 185वे दिन वर्षा आरम्भ होती है तथा वर्ष मे कुल 66 दिन जल बरसता है। तृतीय चरण मे गर्भ धारण होने पर 183वें दिन ही जल की वर्षा होने लगती है। यदि इसी नक्षत्र मे आषाढ या श्रावण मे मेघ गर्भ धारण करे तो 7 वें दिन ही वर्षा हो जाती है। चतुर्थ चरण मे गर्भ धारण करने पर 178वे दिन वर्षा आरम्भ हो जाती है तथा फसल भी अच्छी होती है। ज्येष्ठ मे उक्त नक्षत्र के उक्त चरण मे गर्भ धारण हो तो 11वे दिन वर्षा, आषाढ मे गर्भधारण हो तो छठे दिन वर्षा, और श्रावण मे गर्भधारण हो तो तीसरे दिन वर्षा आरम्भ होती है। रोहिणी नक्षत्र मे गर्भधारण होने पर अच्छी वर्षा होती है तथा वर्ष में कुल 81 दिन जल बरसता है। आषाढ में 12 दिन, श्रावण मे 16 दिन, भाद्रपद में 18 दिन, आश्विन में 14, कार्त्तिक मे 5 दिन, मार्गशीर्ष मे 7 दिन, पौष में 3 दिन और माघ में 6 दिन पानी बरसता है। फसल उत्तम होती है। गेहूँ की उत्पत्ति विशेष रूप से होती है।

त्रयोदशोऽध्यायः

अथातः सम्प्रवक्ष्यामि यात्रां [1]मुख्यां जयावहाम् ।
[2]निर्ग्रन्थदर्शनं तथ्यं पार्थिवानां जयैषिणाम् ॥1॥

अब निर्ग्रन्थ आचार्यों के द्वारा प्रतिपादित एव राजाओ को विजय और सुख देने वाली यात्रा का वर्णन करता हूँ ॥1॥

आस्तिकाय विनीताय श्रद्धानाय धीमते ।
कृतज्ञाय सुभक्ताय यात्रा सिद्ध्यति श्रीमते ॥2॥

आस्तिक—लोक, परलोक, धर्म, कर्म, पुण्य, पाप पर आस्था रखने वाले, विनीत, श्रद्धालु, बुद्धिमान्, कृतज्ञ, भक्त और श्रीमान् की यात्रा सफल होती है ॥2॥

अहंकृतं नृपं क्रूरं नास्तिकं पिशुनं शिशुम् ।
कृतघ्नं चपलं भीरुं श्रीर्जहात्यबुधं शठम् ॥3॥

अहकारी, क्रूर, नास्तिक, चुगलखोर, बालक, कृतघ्नी चपल, डरपोक और शठ नृप की यात्रा असफल होती है—यात्रा मे सफलता रूपी लक्ष्मी की प्राप्ति उपर्युक्त लक्षण विशिष्ट व्यक्ति को नही होती ॥3॥

वृद्धान् साधून् समागम्य दैवज्ञांश्च विपश्चितान् ।
ततो यात्राविधिं कुर्यान् [3]नृपस्तान् पूज्य बुद्धिमान् ॥4॥

वृद्ध, साधु, दैवज्ञ—ज्योतिषी, विद्वान् का यथाविधि सम्मान कर बुद्धिमान् राजा को यात्रा करनी चाहिए ॥4॥

राज्ञा बहुश्रुतेनापि प्रष्टव्या ज्ञाननिश्चिताः ।
अहंकार परित्यज्य तेभ्यो गृह्णीत निश्चयम् ॥5॥

अनेक शास्त्रों के ज्ञाता नृपति को भी अहकार का त्याग कर निमित्तज्ञ से यात्रा का मुहूर्त्त ग्रहण करना चाहिए—ज्योतिषी से यात्रा का मुहूर्त्त एव यात्रा के शकुनों का विचार कर ही यात्रा करनी चाहिए ॥5॥

ग्रहनक्षत्रतिथयो मुहूर्त[4] करणं स्वराः ।
लक्षणं व्यंजनोत्पातं[5] निमित्तं साधुमंगलम् ॥6॥

ग्रह, नक्षत्र, करण, तिथि, मुहूर्त्त, स्वर, लक्षण, व्यजन, उत्पात, साधुमगल आदि निमित्तो का विचार यात्राकाल मे करना आवश्यक है ॥6॥

---

1 यात्रामत्रसुखावहाम् मु० । 2 निर्ग्रन्थदर्शिता तथ्यां पार्थिवाना जिगीषिणाम् । 3. नृपस्त मु० । 4 मुहूर्ताः मु० । 5 उत्पाता, मु० ।

[1]यस्माद्देवासुरे युद्धे निमित्तं दैवतैरपि।
कृतं प्रमाणं तस्माद्धि विविध दैवतं मतम् ॥7॥

देवासुर संग्राम मे देवताओ ने भी निमित्तों का विचार किया था, अत राजाओ को सर्वदा निश्चयपूर्वक निमित्तो की पूजा करनी चाहिए—निमित्तो के शुभा-शुभ के अनुसार यात्रा करनी चाहिए ॥7॥

हस्त्यश्वरथपादातं बल खलु चतुर्विधम्।
निमित्ते तु तथा ज्ञेयं [2]यत्र तत्र शुभाऽशुभम् ॥8॥

हाथी, घोडा, रथ और पैदल इस प्रकार चार तरह की चतुरग सेना होती है। यात्रा कालीन निमित्तों के अनुसार उक्त प्रकार की सेना का शुभाशुभत्व अवगत करना चाहिए ॥8॥

[3]शनैश्चरगता एव हीयन्ते हस्तिनो [4]यदा।
अहोरात्रान्यमाक्रोधः तत्प्रधानवधस्मृत.[5] ॥9॥

यदि कोई राजा ससैन्य शनिश्चर को यात्रा करे तो हाथियो का विनाश होता है। अहर्निश यमराज का प्रकोप रहता है तथा प्रधान सेना नायक का वध होता है ॥9॥

यावच्छायाकृतिरवंहींयन्ते वाजिनो यदा।
विगनस्का विगतयः [6]तत्प्रधानवध. स्मृतः ॥10॥

यदि घोडों की छाया, आकृति और हिनहिनाने की ध्वनि—आवाज हीयमान हो तथा वे अन्यमनस्क और अस्त-व्यस्त चलते हों तो सेनापति का वध होता है ॥10॥

[7]मेघशंखस्वराभास्तु हेमरत्नविभूषिताः।
[8]छायाहीनाः प्रकुर्वन्ति तत्प्रधानवधस्तथा[9] ॥11॥

यदि स्वर्ण आभूषणो से युक्त घोड़े मेघ के समान आकृति और शंख ध्वनि के समान शब्द करते हुए छायाहीन दिखलाई पड़ें तो प्रधान सेनापति के वध की सूचना देते हैं ॥11॥

---

1 पूर्वं च पूजिता ह्येते निमित्ता भूभृतैरपि। तस्माद्धि पूजनीयाश्च निमित्ता. सतत नृपै ॥7॥ 2 तत्र मु०। 3 गतिस्वरमदोपेता मु०। 4 यथा मु०। 5 वधस्तथा मु०। 6 प्रधानस्य वधस्तथा मु०। 7. मेखशङ्खस्वनाभाश्च मु०। 8. छायाप्रहीणा कुर्वन्ति मु०। 9. तदा मु०।

[1]चिह्नं कुर्यात् क्वचिन्नील [2]मन्त्रिणा सह बध्यते।
म्रियते पुरोहितो वाऽस्य छत्रं वा पथि भज्यते ॥108॥

जिनको यात्राकाल मे उपकरण —अस्त्र-शस्त्रों का दर्शन हो, उनका वध होता है। पक्वान्न नीरस और जला हुआ तथा घृत का बर्तन फूटा हुआ दिखलाई पड़े तो व्याधि, भय, मरण और पराजय होता है। रथ, अस्त्र-शस्त्र और ध्वजा में जो राजा नील चिह्न अंकित करता है, वह मन्त्री सहित वध को प्राप्त होता है। यदि मार्ग में राजा का छत्र भंग हो तो पुरोहित का मरण होता है ॥106-108॥

[3]जायते चक्षुषो व्याधिः स्कन्धवारे प्रयायिनाम्।
अनग्निज्वलनं वा स्यात् सोऽपि राजा विनश्यति ॥109॥

प्रयाण करने वालो के सैन्य-शिविर मे यदि नेत्ररोग उत्पन्न हो अथवा बिना अग्नि जलाये ही आग जल जाये तो प्रयाण करने वाले राजा का विनाश होता है ॥109॥

द्विपदश्चतुःपदो वाऽपि सकृन्मुंचति विस्वरः।
बहुशो व्याधितार्त्ता वा सा सेना विद्रव व्रजेत् ॥110॥

यदि द्विपद—मनुष्यादि, चतुष्पद—चौपाये आदि एक साथ विकृत शब्द करें तो अधिक व्याधि से पीडित होकर सेना उपद्रव को प्राप्त होती है ॥110॥

सेनायास्तु प्रयातायां कलहो यदि जायते।
द्विधा त्रिधा वा सा सेना विनश्यति न संशय. ॥111॥

यदि सेना के प्रयाण के समय कलह हो और सेना दो या तीन भागो में बँट जाये तो निस्सन्देह उसका विनाश होता है ॥111॥

जायते चक्षुषो व्याधिः स्कन्धावारे प्रयायिणाम्।
अचिरेणैव कालेन साऽग्निना बह्यते चमूः ॥112॥

यदि प्रयाण करने वाली सेना की आँख में शिविर मे ही पीडा उत्पन्न हो तो शीघ्र ही अग्नि के द्वारा वह सेना विनाश को प्राप्त होती है ॥112॥

व्याधयश्च प्रयातानामतिशीतं विपर्ययेत्।
अत्युष्णं चातिरूक्षं च राज्ञो यात्रा न सिध्यति ॥113॥

---

1. चिह्नं मु०। 2. स च मन्त्री मु०। 3. जायते चक्षुषो व्याधि स्कन्धावारे प्रयायिनां, यह पंक्ति मुद्रित प्रति में नहीं है।

यदि प्रयाण करने वालो के लिए व्याधियाँ उत्पन्न हो जायें तथा अति शीत विपरीत—अति उष्ण या अति रूक्ष मे परिणत हो जाये तो राजा की यात्रा सफल नही होती है ॥113॥

निविष्टो यदि सेनाग्नि. क्षिप्रमेव प्रशाम्यति।
उपवह्य [1]नदन्तश्च भज्यते सोऽपि वध्यते ॥114॥

यदि सेना की प्रज्वलित अग्नि शीघ्र ही शान्त हो जाये—बुझ जाये तो बाहर मे स्थित आनन्दित भागने वाले व्यक्ति भी वध को प्राप्त होते है ॥114॥

[2]देवो वा यत्र नो वर्षेत् क्षीराणां [3]कल्पना तथा।
विद्यान्महद्भयं घोरं शान्तिं तत्र तु कारयेत् ॥115॥

जहाँ वर्षा न हो और जल जहाँ केवल कल्पना की वस्तु ही रहे, वहाँ अत्यन्त घोर भय होता है, अत शान्ति का उपाय करना चाहिए ॥115॥

दैवतं दीक्षितान् वृद्धान् पूजयेत् ब्रह्मचारिणः।
ततस्तेषां तपोभिश्च पाप राज्ञां प्रशाम्यति ॥116॥

राजा को देवताओ, यतियो, वृद्धो और ब्रह्मचारियो की पूजा करनी चाहिए, क्योकि इनके तप के द्वारा ही राजा का पाप शान्त होता है ॥116॥

[4]उत्पाताश्चापि जायन्ते हस्त्यश्वरथपत्तिषु।
[5]भोजनेष्वप्नोकेषु राजबन्धश्चमूवधः ॥117॥

यदि हाथी, घोडे, रथ और पैदल सेना मे उत्पात हो तथा सेना के भोजन मे भी उत्पात—कोई अद्‌भुत बात दिखलाई पडे तो राजा को कैद और सेना का वध होता है ॥117॥

उत्पाता विकृताश्चापि दृश्यन्ते ये प्रयायिणाम्।
सेनायां चतुरङ्गायां तेषामौत्पातिकं फलम् ॥118॥

प्रयाण करने वालो को जो उत्पात और विकार दिखलाई पडते है, चतुरग सेना मे उनका औत्पातिक फल अवगत करना चाहिए ॥118॥

भेरीशंखमृदंगाश्च प्रयाणे ये यथोचिता:।
निबध्यन्ते प्रयातानां विस्वरा वाहनाश्च ये ॥119॥

भेरी, शंख, मृदग का शब्द प्रयाण-काल मे यथोचित हो—न अधिक और न

1 सदन्तस्य मु०। 2 देवताबेष्टने वर्षे मु०। 3. कल्केन मु०। 4. उत्पातकाश्च मु०। 5 भोजनेषु अनेकेषु मु०।

कम तथा सैनिको के वाहन भी विकृत शब्द न करें तो शुभ फल होता है ॥119॥

यद्यग्रतस्तु प्रयायेत काकसैन्यं प्रयायिणाम् ।
विस्वरं निभृतं वाऽपि येषां विद्यांच्चमूवधम् ॥120॥

यदि प्रयाण करने वालो के आगे काकसेना—कौओ की पक्ति गमन करे अथवा विकृत स्वर करती हुई काकपक्ति लौटे तो सेना का वध होता है ॥120॥

राज्ञो यदि प्रयातस्य गायन्ते ग्रामिका: पुरे।
चण्डानिलो नदीं शुष्येत् सोऽपि बध्येत पार्थिवः ॥121॥

यदि प्रयाण करने वाले राजा के आगे ग्रामवासी नारियाँ गाना (रुदन करती) गाती हो और प्रचण्ड वायु नदी को सुखा दे तो राजा के वध की सूचना समझनी चाहिए ॥121॥

देवताऽतिथिभृत्येभ्योऽदत्वा तु भुंजते यदा।
यदा भक्ष्याणि भोज्यानि तदा राजा विनश्यति ॥122॥

देवता की पूजा, अतिथि का सत्कार और भृत्यो को बिना दिये जो भोजन करता है, वह राजा विनाश को प्राप्त होता है ॥122॥

द्विपदाश्चतु पदा वाऽपि यदाऽभीक्ष्णं [1]रदन्ति वै।
परस्परं सुसम्बद्धा सा सेना बध्यते परै ॥123॥

द्विपद—मनुष्यादि अथवा चतुष्पद—पशु आदि चौपाये परस्पर मे सुसगठित होकर आवाज करते है—गर्जना करते है, तो सेना शत्रुओ के द्वारा वध को प्राप्त होती है ॥123॥

ज्वलन्ति यस्य शस्त्राणि नमन्ते निष्क्रमन्ति वा।
सेनाया. शस्त्रकोशेभ्य· साऽपि सेना विनश्यति ॥124॥

यदि प्रयाण के समय सेना के अस्त्र-शस्त्र ज्वलन्त होने लगें—अपने आप झुकने लगें अथवा शस्त्रकोश से बाहर निकलने लगे तो भी सेना का विनाश होता है ॥124॥

नर्दन्ति द्विपदा यत्र पक्षिणो वा चतुष्पदा:।
क्रव्यादास्तु विशेषेण तत्र संग्राममादिशेत् ॥125॥

द्विपद—पक्षी अथवा चतुष्पद - चौपाये गर्जना करते हो अथवा विशेष रूप से मासभक्षी पशु-पक्षी गर्जना करते हों तो सग्राम की सूचना समझनी

---

1 रसन्ति मु०।

चाहिए ॥125॥

विलोमषु च वातेषु [1]प्रतीष्टे वाहनेऽपि च।
शकुनेषु च दीप्तेषु युध्यतां तु पराजय ॥126॥

उलटी हवा चलती हो, वाहन—सवारियाँ प्रदीप्त मालूम पड़ें और शकुन भी दीप्त हो तो युद्ध करने वाले की पराजय होती है ॥126॥

युद्धप्रियेषु हृष्टेषु नर्दत्सु वृषभेषु च।
रक्तेषु चाभ्रजालेषु सन्ध्यायां युद्धमाविशेत्। 127॥

प्रयाण-काल मे तगडे, हट्टे-कट्टे एव युद्धप्रिय (लडाकू) साँडो, बैलों आदि के गर्जना करने पर और सन्ध्याकाल मे बादलो के लाल होने पर युद्ध की सूचना समझनी चाहिए ॥127॥

अभ्रेषु च विवर्णेषु युद्धोपकरणेषु च।
दृश्यमानेषु सन्ध्यायां सद्यः संग्राममाविशेत् ॥128॥

युद्ध के उपकरण—अस्त्र-शस्त्रादि एव सन्ध्याकाल मे बादलो के विवर्ण दिखलाई देने पर शीघ्र ही युद्ध का निर्देश समझना चाहिए ॥128॥

कपिले रक्तपीते वा हरिते च तले चमूः।
स सद्य. परसैन्येन बध्यते नाऽत्र संशय ॥129॥

यदि प्रयाण-काल में सेना कपिल वर्ण, हरित, रक्त और पीत वर्ण के बादलो के नीचे गमन करे तो सेना निस्सन्देह शीघ्र ही शत्रुसेना के द्वारा वध को प्राप्त होती है ॥129॥

काका गृध्राः शृगालाश्च कंका ये चामिषप्रिया.।
पश्यन्ति यदि सेनायां प्रयातायां भयं भवेत् ॥130॥

यदि प्रयाण करने वाली सेना के समक्ष काक, गृद्ध, शृगाल और मांसप्रिय अन्य चिड़ियाँ दिखलाई पडें तो सेना को भय होता है ॥130॥

उलूका वा विडाला वा मूषका वा यदा भृशम्।
वासन्ते यदि सेनायां [2]निश्चितः स्वामिनो वधः ॥131॥

यदि प्रयाण करने वाली सेना मे उल्लू, बिडाल या मूषक अधिक संख्या मे निवास करें तो निश्चित रूप से स्वामी का वध होता है ॥131॥

1 विनेषु वाहिनेषु मु० । 2. नियत सोऽस्ति को वध. मु० ।

ग्राम्या वा यदि वाऽरण्या विवा वसन्ति निर्भयम् ।
सेनायां संप्रयातायां [1]स्वामिनोऽत्र भयं भवेत् ॥132॥

यदि प्रयाण करने वाली सेना मे शहरी या ग्रामीण कौए निर्भय होकर निवास करें तो स्वामी को भय होता है ॥132॥

मैथुनेन विपर्यासं यदा कुर्यु विजातयः ।
रात्रौ दिवा च सेनायां [2]स्वामिनो वधमाविशेत् ॥133॥

यदि प्रयाण करने वाली सेना मे रात्रि या दिन मे विजाति के प्राणी—गाय के साथ घोड़ा या गधा मैथुन मे विपर्यास—उल्टी क्रिया करें, पुरुष का कार्य स्त्री और स्त्री का कार्य पुरुष करे तो स्वामी का वध होता है ॥133॥

चतुःपदानां मनुजा यदा कुर्बन्ति [3]वाशितम् ।
मृगा वा पुरुषाणां तु तत्रापि [4]स्वामिनो वधः ॥134॥

यदि चतुष्पद की आवाज मनुष्य करें अथवा पुरुषो की आवाज मृग—पशु करें तो स्वामी का वध होता है ॥134॥

एकपादस्त्रिपादो वा त्रिभृंगो यदि वाऽधिकः ।
प्रसूयते पशुर्यत्र यत्रापि सौप्तिको वधः ॥135॥

जहाँ एक पैर या तीन पैर वाला अथवा तीन सीग या इससे अधिक वाला पशु उत्पन्न हो तो स्वामी का वध होता है ॥135॥

अश्रुपूर्णमुखादीनां शेरते च यदा भृशम् ।
पदान्विलिखमानास्तु हया यस्य स वध्यते ॥136॥

जिस सेना के घोडे अत्यन्त आँसुओ से मुख भरे होकर शयन करें अथवा अपनी टाप से जमीन को खोदें तो उसके राजा का वध होता है ॥136॥

निष्कुद्यन्ति पादैर्वा भूमौ बालान् किरन्ति च ।
प्रहृष्टाश्च प्रपश्यन्ति तत्र संग्राममाविशेत् ॥137॥

जब घोड़े पैरो से धरती को कूटते हो अथवा भूमि मे अपने बालो को गिराते हो और प्रसन्न-से दिखलाई पड़ते हों तो संग्राम की सूचना समझनी चाहिए ॥137॥

न चरन्ति यदा ग्रासं न च पानं पिबन्ति वै ।
श्वसन्ति वाऽपि धावन्ति विन्द्यादग्निभयं तदा ॥138॥

---

1 सोऽस्तिको । मु० । 2 सौप्तिको मु० । 3. वासितम् मु० । 4. सोऽस्तिको मु० ।

जब घोड़े घास न खायें, जल न पीयें, हाँफते हों या दौड़ते हो तो अग्निभय समझना चाहिए ॥138॥

क्रौञ्चस्वरेण स्निग्धेन मधुरेण पुन पुनः।
हेषन्ते गर्वितास्तुष्टास्तदा राज्ञो जयावहा॥139॥

जब क्रौंच पक्षी स्निग्ध और मधुर स्वर से बार-बार प्रसन्न और गर्वित होता हुआ शब्द करे तो राजा के लिए जय देने वाला समझना चाहिए ॥139॥

प्रहेषन्ते प्रयातेषु यदा वादित्रनिःस्वनैः।
लक्ष्यन्ते बहवो हृष्टास्तस्य राज्ञो ध्रुवं जय ॥140॥

जिस राजा के प्रयाण करने पर बाजे शब्द करते हुए दिखलाई पड़ें तथा अधिकाश व्यक्ति प्रसन्न दिखलाई पड़ें, उस राजा की निश्चयत. जय होती है ॥140॥

यदा मधुरशब्देन हेषन्ति खलु वाजिनः।
कुर्यादभ्युत्थितं सैन्यं तदा तस्य पराजयम् ॥141॥

जब मधुर शब्द करते हुए घोड़े हींसने की आवाज करे तो प्रयाण करने वाली सेना की पराजय होती है ॥141॥

अभ्युत्थितायां सेनायां लक्ष्यते यच्छुभाऽशुभम्।
वाहने प्रहरणे वा तत् तत् फलं समीहते ॥142॥

प्रयाण करने वाली सेना के वाहन—सवारी और प्रहरण—अस्त्र-शस्त्र सेना मे जितने शुभाशुभ शकुन दिखलाई पड़े उन्ही के अनुसार फल प्राप्त होता है ॥142॥

सन्नाहिको यदा युक्तो नष्टसैन्यो बहिर्व्रजेत्।
तदा राज्यप्रणाशस्तु अचिरेण भविष्यति ॥143॥

जब वखतर से युक्त सेनापति सेना के नष्ट होने पर बाहर चला जाता है तो शीघ्र ही राज्य का विनाश हो जाता है ॥143॥

[1]सौम्यं बाह्यं नरेन्द्रस्य हयमारुहते हयः।
सेनायामन्यराजानां तदा मार्गन्ति नागराः ॥144॥

---

1 अपवाह्य मु०।

यदि राजा के उत्तर मे घोडा घोडे पर चढे तो उस समय नागरिक अन्य राजा की सेना मे प्रवेश करते है—शरण ग्रहण करते है ॥144॥

अर्द्धवृत्ता:[1] प्रधावन्ति वाजिनस्तु युयुत्सव:।
हेषमाना: प्रमुदितास्तदा ज्ञेयो जयो ध्रुवम् ॥145॥

प्रसन्न हीसते हुए युद्धोन्मुख घोडे अर्द्धवृत्ताकार मे जब दौडते हुए दिखलाई पड़ें तो निश्चय से जय समझना चाहिए ॥145॥

पादं पादेन मुक्तानि नि:क्रमन्ति यदा हया:।
पृथग् पृथग् संस्पृश्यन्ते तदा विन्द्याद्भयावहम् ॥146॥

जब घोडे पैर को पैर से मुक्त करके चले और पैरो का पृथक्-पृथक् स्पर्श हो तो उस समय भय समझना चाहिए ॥146॥

यदा राज्ञ: प्रयातस्य वाजिनां सांप्रणाहिक:।
पथि च म्रियते यस्मिन्नचिरात्मा नो भविष्यति ॥147॥

जब प्रयाण करने वाले राजा के घोडो को सन्नद्ध करने वाला सईस मार्ग मे मृत्यु को प्राप्त हो जाये तो राजा की शीघ्र ही मृत्यु होती है ॥147॥

शिरस्यास्ये च दृश्यन्ते यदा हृष्टास्तु वाजिन:।
तदा राज्ञो जयं विन्द्यान्नचिरात् समुपस्थितम् ॥148॥

जब घोडो के सिर और मुख प्रसन्न दिखलाई पडे तो शीघ्र ही राजा की विजय समझनी चाहिए ॥148॥

[2]हयानां ज्वलिते चाग्नि: पुच्छे पाणौ पदेषु वा।
जघने च नितम्बे च तदा विद्यान्महद्भयम् ॥149॥

यदि प्रयाण काल मे घोडो की पूंछ, पाँव, पिछले पैर, जघन और नितम्ब—चूतडो मे अग्नि प्रज्वलित दिखलाई पडे तो अत्यन्त भय समझना चाहिए ॥149॥

हेषमानस्य दीप्तासु निपतन्त्यर्चिषो मुखात्।
अश्वस्य विजयं श्रेष्ठमूर्ध्वदृष्टिश्च शंसते ॥150॥

यदि हीसते हुए घोडे के मुख से प्रदीप्त अग्नि निकलती हुई दिखलाई पड़े तो

---

1. अर्धयुक्ता मु०। 2 हयाना जघने पाणौ पुच्छे पादेषु वा यदि। दृश्येताग्निरथा धूमास्तदा ।

विजय होती है । घोड़े का ऊपर को मुख किये रहना भी अच्छा समझा जाता है ॥150॥

श्वेतस्य कृष्णं दृश्येत पूर्वकाये तु वाजिनः ।
हन्यात् तं स्वामिनं क्षिप्रं विपरीते [1]धनागमम् ॥151॥

यदि घोड़े का पूर्व भाग श्वेत या कृष्ण दिखलाई पड़े तो स्वामी की मृत्यु शीघ्र कराता है । विपरीत —परभाग—श्वेत का कृष्ण और कृष्ण का श्वेत दिखलाई पड़े तो स्वामी को धन की प्राप्ति होती है ॥151॥

[2]वाहकस्य वधं विन्द्याद् यदा स्कन्धे हयो ज्वलेत् ।
पृष्ठतो ज्वलमाने तु भयं सेनापतेर्भवेत् ॥152॥

जब घोड़े का स्कन्ध—कन्धा जलता हुआ दिखलाई पड़े तो सवार का वध और पृष्ठ भाग ज्वलित दिखलाई पड़े तो सेनापति का वध समझना चाहिए ॥152॥

तस्यैव तु यदा धूमो निर्धावति प्रहेषतः ।
पुरस्यापि तदा नाशं निर्दिशेत् प्रत्युपस्थितम् ॥153॥

यदि हींसते हुए घोड़े का धुआँ पीछा करे तो उस नगर का भी नाश उपस्थित हुआ समझना चाहिए ॥153॥

सेनापतिवधं विद्याद् वालस्थानं यदा ज्वलेत् ।
त्रीणि वर्षाण्यनावृष्टिस्तदा तद्विषये भवेत् ॥154॥

यदि घोड़े के वालस्थान—करुवारस्थान जलने लगे तो सेनापति का वध समझना चाहिए । और उस देश में तीन वर्ष तक अनावृष्टि समझनी चाहिए ॥154॥

अन्तःपुरविनाशाय मेढ़ प्रज्वलते यदा ।
उदरं ज्वलमानं च कोशनाशाय वा ज्वलेत् ॥155॥

यदि घोड़े का मेढ़—अण्डकोश स्थान जलने लगे तो अन्तःपुर का विनाश और उदर के जलने से कोशनाश होता है ॥155॥

क्षेरते दक्षिणे पार्श्वे हयो जयपुरस्कृतः ।
स्वबन्धशायिनश्चाहुर्जयमाश्चर्यसाधकः ॥156॥

1 वधागमम् मु० । 2. वाचकस्य मु० ।

यदि दक्षिण—दाहिनी, पार्श्व—ओर से घोडा शयन करे तो जय देने वाला और पेट की ओर से शयन करे तो आश्चर्यपूर्वक जय देता है ॥156॥

वामार्धशायिनश्चैव तुरङ्गा नित्यमेव च।
राज्ञो यस्य न सन्देहस्तस्य मृत्युं समादिशेत् ॥157॥

यदि नित्य बायी आधी करवट से घोड़ा शयन करे तो नि सन्देह उस राजा की मृत्यु की सूचना समझनी चाहिए ॥157॥

सौसुप्यन्ते यदा नाग: पश्चिमश्चरणस्तथा।
सेनापतिवधं विद्याद् यदाऽन्नं च न भुञ्जते ॥158॥

यदि हाथी पश्चिम की ओर पैर करके शयन करे तथा कोई अन्न नहीं खाये तो सेनापति का वध समझना चाहिए ॥158॥

[1]यदान्नं पादवारीं वा नाभिनन्दन्ति हस्तिन:।
यस्यां तस्यां तु सेनायामचिराद्वधमादिशेत् ॥159॥

जिस सेना मे हाथी अन्न, जल और तृण नही खाते हो —त्याग कर चुके हो, उस सेना मे शीघ्र ही वध होता है ॥159॥

निपतन्त्यग्रतो यद्वै त्रस्यन्ति वा रुदन्ति वा।
निष्पवन्ते समुद्विग्नां यस्य तस्य वधं वदेत् ॥160॥

जिस राजा के प्रयाण काल मे उसके आगे आकर दु:खी या रुदन करता हुआ व्यक्ति गिरता हो अथवा उद्विग्न होकर आता हो तो उस राजा का वध होता है ॥160॥

क्रूरं नदन्ति विषमं विस्वरं निशि हस्तिन:।
दीप्यमानास्तु केचित्सु तदा सेनावधं ध्रुवम् ॥161॥

यदि रात्रि मे हाथी क्रूर, विषम, घोर और विस्वर—विकृत स्वर वाली आवाज करें अथवा दीप्त—ताप मे जलते हुए दिखलाई पड़ें तो सेना का शीघ्र वध होता है ॥161॥

गो-नागवाजिनां स्त्रीणां मुखाच्छोणितबिन्दव:।
स्रवन्ति बहुशो यत्र तस्य राज्ञ: पराजय: ॥162॥

जिस राजा को प्रयाण-काल में गाय, हाथी, घोड़ा, और स्त्रियों के मुख पर

---

1 यदन्ता. पादचारी वा नाभिनन्दन्ति हस्तिन.।

रक्त की बूँदें दिखलाई पड़ें उस राजा की पराजय होती है ॥162॥

नरा यस्य विपद्यन्ते प्रयाणे वारणैः पथि ।
कपालं गृह्य धावन्ति दीनास्तस्य पराजयः ॥163॥

जिस राजा के प्रयाण-काल मे मार्ग मे उसके हाथियो के द्वारा मनुष्य पीडित हो और वे मनुष्य अपना सिर पकडकर दीन होकर भागे तो उस राजा की पराजय होती है ॥163॥

यदा धुनन्ति सीदन्ति निपतन्ति किरन्ति च ।
खादमानास्तु खिद्यन्ते तदाऽऽख्याति पराजयम् ॥164॥

जिसके प्रयाण काल मे घोडे पूँछ का सचालन अधिक करते हो, खिन्न होते हो, गिरते हो, दु खी होते हो, अधिक लीद करते हो और घास खाते समय खिन्न होते हो तो वे उसकी पराजय की सूचना देते है ॥164॥

हेषन्त्यभीक्ष्णमश्वास्तु विलिखन्ति खुरैर्धराम् ।
नदन्ति च यदा नागास्तदा विन्द्याद् ध्रुवं जयम् ॥165॥

घोडे बार-बार हीसते हो, खुरो से जमीन को खोदते हो और हाथी प्रसन्नता की चिग्घाड करते हो तो उसकी निश्चित जय समझनी चाहिए ॥165॥

पुष्पाणि पीतरक्तानि शुक्लानि च यदा गजा. ।
अभ्यन्तराग्रदन्तेषु दर्शयन्ति यदा जयम् ॥166॥

यदि हाथी पीत, रक्त और श्वेत रग के पुष्पो को भीतरी दाँतो के अग्रभाग मे दिखलाते हुए मालूम हो तो जय समझना चाहिए ॥166॥

यदा मुंचन्ति शुण्डाभिर्नागा नादं पुन· पुन. ।
परसैन्योपघाताय तदा विन्द्याद् ध्रुवमजयम् ॥167॥

जब हाथी सूँड से बार-बार नाद करते हो तो परसेना—शत्रु सेना के विनाश के लिए प्रयाण करने वाले राजा की जय होती है ॥167॥

पादैः पादान् विकर्षन्ति तलैर्वा विलिखन्ति च ।
गजास्तु यस्य सेनायां निरुध्यन्ते ध्रुवं[1] परैः ॥168॥

जिस सेना के हाथी पैरो द्वारा पैरो को खीचे अथवा तल के द्वारा धरती को खोदें तो शत्रु के द्वारा सेना का निरोध होता है ॥168॥

---

1 विरुध्यन्ते मु० ।

मत्ता यत्र विपद्यन्ते न माद्यन्ते च योजिताः।
नागास्तत्र वधो राज्ञो महाऽमात्यस्य वा भवेत् ॥169॥

जहाँ मदोन्मत्त हाथी विपत्ति को प्राप्त हो अथवा मत्त हाथियो की योजना करने पर भी वे मद को प्राप्त न हो तो उस समय वहाँ राजा या महामात्य—महामन्त्री का वध होता है ॥169॥

यदा राजा निवेशेत भूमौ कण्टकसंकुले।
विषमे सिकताकीर्णे सेनापतिवधो ध्रुवम् ॥170॥

जब राजा कटकाकीर्ण, विषम, बालुकायुक्त भूमि मे सेना का निवास करावे—सैन्य शिविर स्थापित करे तो सेनापति के वध का निर्देश समझना चाहिए ॥170॥

श्मशानास्थिरजःकीर्णे पचदग्धवनस्पतौ।
शुष्कवृक्षसमाकीर्णे निविष्टो[1] वधमीयते ॥171॥

श्मशान भूमि की हड्डियाँ जहाँ हो, धूलि युक्त, दग्ध वनस्पति और शुष्क वृक्ष वाली भूमि मे सैन्य शिविर की स्थापना की जाये तो वध होता है ॥171॥

कोविदारसमाकीर्णे श्लेष्मान्तकमहाद्रुमे।
पिलू-कालनिविष्टस्य प्राप्नुयाच्च चिराद् वधम् ॥172॥

लाल कचनार वृक्ष से युक्त तथा गोद वाले बडे वृक्षो से युक्त और पीलू के वृक्ष के स्थान मे सैन्य शिविर स्थापित किया जाये तो विलम्ब से वध होता है ॥172॥

असारवृक्षभूयिष्ठे पाषाणतृणकुत्सिते।
देवतायतनाक्रान्ते निविष्टो वधमाप्नुयात् ॥173॥

रेडी के अधिक वृक्ष वाले स्थान मे अथवा पाषाण-पत्थर और तिनके वाले स्थान मे, कुत्सित—ऊँची-नीची खराब भूमि मे, अथवा देवमन्दिर की भूमि मे यदि सैन्य शिविर हो तो वध प्राप्त होता है ॥173॥

अमनोज्ञैः फलैः पुष्पैः पापपक्षिसमन्वितं।
अधोमार्गे निविष्टश्च युद्धमिच्छति पार्थिवः ॥174॥

कुरूप फल, पुष्प से युक्त तथा पापी—मासाहारी पक्षियो से युक्त वृक्षो के

---

1 निविष्टो मु०।

नीचे सैन्य पड़ाव करने वाला राजा युद्ध की इच्छा करता है ॥174॥

नीचैर्निविष्टभूपस्य[1] नीचेभ्यो भयमाविशेत् ।
यथा दृष्टेषु देशेषु तज्ज्ञेभ्यः प्राप्नुयाद् बधम् ॥175॥

नीचे स्थानो मे स्थित रहने वाले राजा को नीचो से भय होता है। तथानुसार देखे गये देशों में उनसे वध प्राप्त होता है ॥175॥

यत् किंचित् परिहीनं स्यात् तत् पराजयलक्षणम् ।
परिवृद्धं च यद् किंचिद् दृश्यते विजयावहम् ॥176॥

जो कुछ भी कमी दिखलाई पड़े वह पराजय की सूचिका है और जो अधिकता दिखलाई पडे वह विजय की सूचिका होती है ॥176॥

दुर्वर्णाश्च दुर्गन्धाश्च कुवेषा व्याधिनस्तथा ।
सेनाया ये नराश्च स्युः शस्त्रवध्या भवन्त्यथ ॥177॥

बुरे रग वाले, दुर्गन्धित, कुवेषधारी और रोगी सेना के व्यक्ति शस्त्र के द्वारा वध्य होते हैं ॥177॥

यथाज्ञानप्ररूपेण राज्ञो जयपराजयः ।
विज्ञेयः सम्प्रयातस्य भद्रबाहुवचो यथा ॥178॥

इस प्रकार से भद्राबाहु स्वामी के वचनानुसार प्रयाण करने वाले राजा की जय-पराजय अवगत कर लेनी चाहिए ॥178॥

परस्य विषयं लब्ध्वा अग्निदग्धा न लोपयेत् ।
परदारां न हिंस्येत् पशून् वा पक्षिणस्तथा ॥179॥

शत्रु के देश को प्राप्त करके भी उसे अग्नि से नही जलाना चाहिए और न उस देश का लोप ही करना चाहिए । परस्त्री, पशु और पक्षियो की भी हिंसा नहीं करनी चाहिए ॥179॥

वशीकृतेषु मध्येषु न च शस्त्रं निपातयेत्[2] ।
निरापराधचित्तानि नाबधीत कदाचन ॥180॥

अधीन हुए देशों मे शस्त्रपात प्रयोग नहीं करना चाहिए। निरपराधी व्यक्तियो को कभी भी कष्ट नहीं देना चाहिए ॥180॥

---

1 भूपस्य मु० । 2 अग्निकृतेषु मध्यस्तु शस्त्राग्नर निम्रापयेत् ।

देवतान् पूजयेत् वृद्धान् [1]लिंगिनो ब्राह्मणान् गुरून् ।
परिहारेण[2] नृपती राज्यं मोदति सर्वत: ॥181॥

जो राजा देवता, वृद्ध, मुनि, ब्राह्मण, गुरु की पूजा करता है और समस्त बुराइयो को दूर करता है, वह सर्व प्रकार से आनन्दपूर्वक राज्य करता है ॥181॥

राजवंशं न वोच्छिद्यात् बालवृद्धांश्च पण्डितान् ।
[3]न्यायेनार्थान् समासाद्य सार्थो राजा विवर्द्धते ॥182॥

किसी राज्य पर अधिकार कर लेने पर भी उस राजवंश का उच्छेद—विनाश नही करना चाहिए तथा बाल, वृद्ध और पडितों का भी विनाश नहीं करना चाहिए। न्यायपूर्वक जो धनादि को प्राप्त करता है, वही राजा वृद्धिगत होता है ॥182॥

धर्मोत्सवान् विवाहांश्च [4]सुतानां कारयेद् बुध: ।
न चिरं धारयेद् कन्यां तथा धर्मेण वर्द्धते ॥183॥

अधिकार किये गये राज्य में धर्मोत्सव करे, अधिकृत राजा की कन्याओ का विवाह कराये और उसकी कन्याओ को अधिक समय तक न रखे, क्योकि धर्मपूर्वक ही राज्य की वृद्धि होती है ॥183॥

कार्याणि धर्मत: कुर्यात् पक्षपात विसर्जयेत् ।
व्यसनैर्विप्रयुक्तश्च [5]तस्य राज्यं विवर्द्धते ॥184॥

धर्मपूर्वक ही पक्षपात छोडकर कार्य करे और सभी प्रकार के व्यसन—जुआ खेलना, मांस खाना, चोरी करना, परस्त्रीसेवन करना, शिकार खेलना, वेश्या गमन करना और मद्यपान करना इन व्यसनो से अलग रहे, उसका राज्य बढ़ता है ॥184॥

यथोचितानि सर्वाणि यथा न्यायेन पश्यति ।
राजा कीर्ति समाप्नोति [6]परत्रेह च मोदते ॥185॥

यथोचित सभी को जो न्यायपूर्वक देखता है, वही राजकीर्ति—यश प्राप्त करता है और इह लोक और परलोक मे आनन्द को प्राप्त होता है ॥185॥

---

1. लिंगस्थान् । 2 परिहार नृपतिर्दंद्यात्रामायतज्जिनाम् मु० । 3 न्यायेनार्था: समवाप्य तथा राज्येन वर्धते । 4 सुप्तानां मु० । 5 यथोत्सिक्त-सुखप्रद मु० । 6 तथा प्रत्यय-मोदते मु० ।

इमं यात्राविधिं कृत्स्नं योऽभिजानाति तत्वतः ।
न्यायतश्च प्रयुंजीत् प्राप्नुयात् स महत् पदम् ॥186॥

जो राजा इस यात्रा विधि को वास्तविक और सम्पूर्ण रूप से जानता है और न्यायपूर्वक व्यवहार करता है, वह महान् पद प्राप्त करता है ॥186॥

इति महामुनीश्वरसकलानन्वमहामुनिभद्रबाहुविरचिते
महानिमित्तशास्त्रे राजयात्राध्याय समाप्त ।

विवेचन—प्रस्तुत यात्रा प्रकरण मे राजा महाराजाओ की यात्रा का निरूपण आचार्य ने किया है। चूँकि अब गणतन्त्र भारत मे राजाओ की परम्परा ही समाप्त हो चुकी है। अत यहाँ पर सर्व सामान्य के लिए यात्रा सम्बन्ध की उपयोगी बातो पर प्रकाश डाला जायगा। सर्वप्रथम यात्रा के मुहूर्त्त के सम्बन्ध मे कुछ लिखा जाता है। क्योकि समय के शुभाशुभत्व का प्रभाव प्रत्येक जड या चेतन पदार्थ पर पडता है। यात्रा के मूहूर्त्त के लिए शुभ नक्षत्र, शुभ तिथि, शुभ वार और चन्द्रवास के विचार के अतिरिक्त वारशूल, नक्षत्र शूल, समय शूल, योगिनी और राशि के क्रम का विचार भी करना चाहिए।

यात्रा के लिए नक्षत्र-विचार

अश्विनी, पुनर्वसु, अनुराधा, मृगशिरा, पुष्य, रेवती, हस्त, श्रवण और धनिष्ठा नक्षत्र यात्रा के लिए उत्तम, रोहिणी, उत्तराफाल्गुनी, उत्तराषाढा, उत्तराभाद्रपद, पूर्वाफाल्गुनी, पूर्वाषाढा, पूर्वाभाद्रपद, ज्येष्ठा, मूल और शतभिषा ये नक्षत्र मध्यम एव भरणी, कृत्तिका, आर्द्रा, आश्लेषा, मघा, चित्रा, स्वाति, विशाखा ये नक्षत्र यात्रा के लिए निन्द्य है।

तिथियो मे द्वितीया, पचमी, सप्तमी, दशमी, एकादशी और त्रयोदशी शुभ बताई गई है।

दिक्शूल और नक्षत्रशूल तथा प्रत्येक दिशा के शुभ दिन

ज्येष्ठा नक्षत्र, सोमवार तथा शनिवार को पूर्व मे, पूर्वाभाद्रपद नक्षत्र और गुरुवार को दक्षिण मे, रोहिणी नक्षत्र और शुक्रवार को पश्चिम एवं मंगल तथा बुधवार को उत्तराफाल्गुनी नक्षत्र मे उत्तर दिशा मे यात्रा करना वर्जित है। पूर्व दिशा मे रविवार, मगलवार और गुरुवार, पश्चिम मे शनिवार, सोमवार, बुधवार और गुरुवार, उत्तर दिशा मे गुरुवार, रविवार, सोमवार और शुक्रवार एव दक्षिण दिशा मे बुधवार, मगलवार, सोमवार, रविवार और शुक्रवार को गमन करना शुभ होता है। जो नक्षत्र का विचार नही कर सकते हैं वे उक्त

शुभवारो मे यात्रा कर सकते है। पूर्व दिशा मे ऊषा काल मे यात्रा वर्जित है। पश्चिम दिशा मे गोधूलिकी यात्रा वर्जित है। उत्तर दिशा मे अर्द्धरात्रि और दक्षिण दिशा मे दोपहर की यात्रा वर्जित है।

योगनीवास-विचार

नवभूम्य शिववह्नयोऽक्षविश्वेऽर्ककृता शक्ररसास्तुरंगा तिथय।
द्विदशोमा वसश्च पूर्वत स्यु तिथय समुखवामगा च शस्ता ॥

अर्थ—प्रतिपदा और नवमी को पूर्व दिशा मे, एकादशी और तृतीया को अग्निकोण, पचमी और त्रयोदशी को दक्षिण दिशा मे, चतुर्थी और द्वादशी को नैऋत्य कोण मे, षष्ठी और चतुर्दशी को पश्चिम दिशा मे, सप्तमी और पूर्णिमा को वायव्यकोण मे, द्वितीया और दशमी को उत्तर दिशा मे एव अमावस्या और अष्टमी को ईशान कोण मे योगिनी का वास होता है। सम्मुख और बायें तरफ अशुभ एवं पीछे और दाहिनी ओर योगिनी शुभ होती है।

चन्द्रमा का निवास

चन्द्रश्चरति पूर्वादौ क्रमान्त्रिदिक्चतुष्टये।
मेषादिष्वेष यात्राया सम्मुखस्त्वतिशोभन ॥

अर्थात् मेष, सिंह और धनु राशि का चन्द्रमा पूर्व मे, वृष, कन्या और मकर राशि का चन्द्रमा दक्षिण दिशा मे, तुला, मिथुन और कुम्भ राशि का चन्द्रमा पश्चिम दिशा मे एवं कर्क, वृश्चिक और मीन राशि का चन्द्रमा उत्तर दिशा मे बास करता है।

चन्द्रमा का फल

सम्मुखीनोऽर्थलाभाय दक्षिण· सर्वसम्पदे।
पश्चिम: कुरुते मृत्यु वामश्चन्द्रो धनक्षयम् ॥

अर्थ—सम्मुख चन्द्रमा धन लाभ करने वाला, दक्षिण चन्द्रमा सुख-सम्पत्ति देने वाला, पृष्ठ चन्द्रमा शोक-सन्ताप देनेवाला और वाम चन्द्रमा धन-हानि करने वाला होता है।

राहु विचार

अष्टासु प्रथमाद्येषु प्रहरार्धेष्वहर्निशम्।
पूर्वस्या वामतो राहुस्तुर्यां तुर्यां व्रजेद्दिशम् ॥

अर्थ—राहु प्रथम अर्धमास मे पूर्व दिशा मे, द्वितीय अर्धमास मे वायव्य-

कोण में, तृतीय अर्धमास मे दक्षिण दिशा मे, चतुर्थ अर्धमास में ईशानकोण में, पञ्चम अर्धमास मे पश्चिम दिशा मे, षष्ठ अर्धमास मे आग्नेयी दिशा मे, सप्तम अर्धमास में उत्तर दिशा मे और अष्टम अर्धमास मे नैऋत्यकोण मे राहु का वास रहता है।

यात्रा के लिए राहु आदि का विचार

जयाय दक्षिणो राहु योगिनी वामत. स्थिता।
पृष्ठतो द्वयमप्येतच्चन्द्रमा· सम्मुख· पुन: ॥

अर्थ—दिशाशूल का बायीं ओर रहना, राहु का दाहिनी ओर या पीछे की ओर रहना, योगिनी का बायी ओर या पीछे की ओर रहना एवं चन्द्रमा का सम्मुख रहना यात्रा मे शुभ होता है। द्वादश महीनो में पूर्व, दक्षिण, पश्चिम और उत्तर के क्रम से प्रतिपदा मे पूर्णिमा तक क्रम से सौख्य, क्लेश, भीति, अर्थागम, शून्य, नि स्वत्व, मित्रघात, द्रव्य-क्लेश, दु.ख, इष्टाप्ति, अर्थलाभ, लाभ, सौख्य, मगल, वित्तलाभ, लाभ, द्रव्यप्राप्ति, धन, सौख्य, भीति, लाभ, मृत्यु, अर्थागाम, लाभ, कष्ट, द्रव्यलाभ, कष्ट, सौख्य, क्लेश, सुख, सौख्य, लाभ, कार्य सिद्धि, कष्ट, क्लेश, अर्थ, धन-लाभ, मृत्यु, लाभ, द्रव्यलाभ, शून्य, शून्य, सौख्य, मृत्यु, अत्यन्त कष्ट फल होता है। 13, 14 और 15 तिथि का फल 3,4 और 5 तिथि के फल समान जानना चाहिए।

तिथि चक्र प्रकार

पौ.	मा.	फा.	चै.	वै.	ज्ये.	आ.	श्रा.	भा.	आ.	का.	मा.	पूर्व	दक्षिण	पश्चिम	उत्तर
१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	सौख्यं	क्लेश	भीतिः	अर्थागम
२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	शून्यम्	नै.स्वम्	निःस्व	मित्रघातः
३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	द्रव्यक्ले	दुःखम्	इष्टाप्तिः	अर्थः
४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	लाभः	सौख्य	मङ्गलम्	वित्तला
५	६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	लाभः	द्रव्याप्ति	धनम्	सौख्यं
६	७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	भीतिः	लाभः	मृत्युः	अर्थागम
७	८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	लाभः	कष्टम्	द्रव्यला	सुखम्
८	९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	कष्टम्	सौख्यम्	क्लेश	सुखम्
९	१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	सौख्य	लाभः	कार्यसि	कष्टम्
१०	११	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	९	क्लेशः	कष्टम्	अर्थः	धनम्
११	१२	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	मृत्युः	लाभः	द्रव्यला	शून्यम्
१२	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	शून्यम्	सौख्यं	मृत्युः	कष्ट

यात्रामुहूर्त्त चक्र

नक्षत्र	अश्वि० पुन० अनु० मृ० पु० रे० ह० श्र० ध० ये उत्तम हैं।
	रो० उफा० उषा० उभा० पूफा० पूषा० पूभा० ज्ये० मू० शत० ये मध्यम हैं।
	भ० कृ० आ० आश्ले० म० चि० स्वा० वि० ये निन्द्य हैं।
तिथि	2,3,5,7,10,11,12

चन्द्रवास चक्र

पूर्व	पश्चिम	दक्षिण	उत्तर
मेष	मिथुन	वृष	कर्क
सिंह	तुला	कन्या	वृश्चिक
धनु	कुम्भ	मकर	मीन

समयशूल चक्र

पूर्व	प्रात काल
पश्चिम	सायकाल
दक्षिण	मध्याह्नकाल
उत्तर	अर्द्धरात्रि

दिक्शूल चक्र

पूर्व	दक्षिण	पश्चिम	उत्तर
च० श०	वृ०	सू० शु०	म० बु०

योगिनी चक्र

पू०	आ०	द०	नै०	प०	वा०	उ०	ई०	दिशा
9,1	3,11	13,5	12,4	14,6	15,7	10,2	30,8	तिथि

यात्रा के शुभाशुभत्व का गणित द्वारा ज्ञान

शुक्ल पक्ष की प्रतिपदा से लेकर तिथि, वार, नक्षत्र इनके योग को तीन स्थान में स्थापित करे और क्रमश सात, आठ और तीन का भाग देने से यदि प्रथम स्थान मे शून्य शेष रहे तो यात्रा करनेवाला दु खी होता है। द्वितीय स्थान मे शून्य बचने से धन नाश होता है और तृतीय स्थान मे शून्य शेष रहने से मृत्यु होती है। उदाहरण—कृष्णपक्ष की एकादशी रविवार और विशाखा नक्षत्र मे भुवनमोहनराय को यात्रा करनी है। अत शुक्ल पक्ष की प्रतिपदा से कृष्ण पक्ष की द्वादशी तिथि तक गणना की तो 27 सख्या आई, रविवार की संख्या एक ही हुई और अश्विनी से विशाखा तक गणना की तो 16 सख्या हुई। इन तीनो अंक का योग किया तो $27+1+16=44$ हुआ। इसे तीन स्थानो पर रखकर 7,8 और 3 का भाग दिया। 44 7 = 6 लब्ध और 2 शेष, 44 - 8 = 5 लब्ध और 4 शेष, 44 - 3 = 14 लब्ध और 2 शेष। यहाँ एक भी स्थान पर शून्य शेष नही आया है। अत फलादेश उत्तम है, यात्रा करना शुभ है।

घातक चन्द्र विचार

मेषराशि वालो को जन्म का, वृषराशि वालो को पाँचवाँ, मिथुन राशि वालो को नौवाँ, कर्क राशि वालो को दूसरा, सिंह राशि वालो को छठा, कन्या राशि वालो को दशवाँ, तुला राशि वालो को तीसरा, वृश्चिक राशि वालो को सातवाँ, धनराशि वालो को चौथा, मकर राशि वालो को आठवाँ, कुम्भ राशि वालो को ग्यारहवाँ और मीन राशि वालो को बारहवाँ चन्द्र घातक होता है। यात्रा मे घातक चन्द्र त्यक्त है।

घातक नक्षत्र

कृत्तिका, चित्रा, शतभिषा, मघा, धनिष्ठा, आर्द्रा, मूल, रोहिणी, पूर्वाभाद्रपद, मघा, मूल और पूर्वाभाद्रपद ये नक्षत्र मेषादि बारह राशिवाले व्यक्तियो के लिए घातक है। किसी-किसी आचार्य का मत है कि मेष राशि वालो को कृत्तिका का प्रथम चरण, वृषराशि वालो को चित्रा का दूसरा चरण, मिथुन राशि वालो को शतभिषा का तीसरा चरण, वृषराशि वालो को मघा का तीसरा चरण, सिंहराशि वालो को धनिष्ठा का प्रथम चरण, कन्या राशि वालो को आर्द्रा का तीसरा चरण, तुला राशि वालो को मूल का दूसरा चरण, वृश्चिक राशि वालो को रोहिणी का चौथा चरण, धनराशि वालो को पूर्वाभाद्रपद का चौथा चरण, मकर राशि वालो को मघा का चौथा चरण, कुम्भ राशि वालो को मूल का चौथा चरण और मीन राशि वालो को पूर्वाभाद्रपद का तीसरा चरण त्याज्य है।

घाततिथि विचार

वृष, कन्या और मीन राशि वालो को पचमी, दशमी और पूर्णिमा घाततिथि हैं। मिथुन और कर्क राशि वाले व्यक्तियो को द्वितीया, द्वादशी और सप्तमी घाततिथियाँ है। वृश्चिक और मेष राशिवालो को प्रतिपदा, षष्ठी और एकादशी घात तिथि हैं। मकर और तुला राशि वालो को चतुर्थी, चतुर्दशी और नवमी घाततिथियाँ एव धन, कुम्भ और सिंह राशिवाले व्यक्तियो के लिए तृतीया, त्रयोदशी और अष्टमी घात तिथियाँ हैं। इनका यात्रा मे त्याग परम आवश्यक है।

घातवार

मकर राशि वाले व्यक्तियो को मगलवार घातक है, वृष, सिंह और कन्या राशि वालो को शनिवार, मिथुन राशि वाले व्यक्ति के लिए सोमवार, मेष राशिवालो को रविवार, कर्क राशिवालो को बुधवार, धनु, मीन और वृश्चिक को शुक्रवार एवं कुम्भ और तुला राशिवालो को गुरुवार घातक है। इन घातक वारो मे यात्रा करना वर्जित है।

घातक लग्न

मेष, वृष आदि द्वादश राशिवालो को क्रमश मेष, वृष, कर्क, तुला, मकर, मीन, कन्या, वृश्चिक, धनु, कुम्भ, मिथुन और सिंह लग्न घातक है। अत यात्रा मे वर्जित है।

राशि ज्ञात करने की विधि

चू, चे, चोला, ली, लू, ले लो और आ इन अक्षरो मे से कोई भी अक्षर अपने नाम के आदि का हो तो मेष राशि, ई, उ, ए, ओ, बा, बी, बू, बे और बो इन अक्षरो मे से कोई भी अक्षर अपने नाम का आदि अक्षर हो तो मिथुन राशि, ही, हू, हे, हो, डा, डी, डू, डे और डो इन अक्षरो मे मे कोई भी अक्षर अपने नाम का आदि अक्षर हो तो कर्क राशि, मा, मी, मू, मे, मो, टा, टी, टू और टे इन अक्षरों मे से कोई भी अक्षर नाम का आदि अक्षर हो तो सिंह राशि, टो, पा, पी, पू, ष, ण, ठ, पे और पो इन अक्षरो मे से कोई भी अक्षर नाम का आदि अक्षर हो तो कन्या राशि, रा, री, रू, रे, रो, ता, ती, तू और ते इन अक्षरो मे से कोई भी अक्षर नाम के आदि का अक्षर हो तो तुला राशि, तो, ना, नी, नू, ने, नो, या, यी और यू इन अक्षरो मे से कोई भी अक्षर नाम के आदि का अक्षर हो तो वृश्चिक राशि, ये, यो, भा, भी, भू, धा, फा, ढा और भे इन अक्षरों में से कोई भी

अक्षर नाम का आदि अक्षर हो तो धनु राशि, भो, जा, जी, खी, खू, खे खो, गा और गी इन अक्षरो मे से कोई भी अक्षर नाम के आदि का अक्षर हो तो मकर राशि, गू, गे, गो, सा, सी, सू, से, सो और दा इन अक्षरो मे से कोई भी अक्षर नाम का आदि अक्षर हो तो कुम्भ राशि एव दी, दू, था, झ, ञ, दे, दो, चा और ची इन अक्षरों में से कोई भी अक्षर नाम का आदि अक्षर हो तो मीन राशि होती है।

संक्षिप्त विधि

आला=मेष, उवा=वृष, काछा=मिथुन, डाहा=कर्क, माटा=सिंह, पाठा=कन्या, राता=तुला, नोया वृश्चिक, भू धा फा ढ,=मकर, गोसा=कुम्भ, दा चा=मीन।

उपर्युक्त अक्षर विधि पर से अपनी राशि निकाल कर घाततिथि, घातनक्षत्र, घातवार और घातलग्न का विचार करना चाहिए।

यात्राकालीन शकुन—ब्राह्मण, घोडा, हाथी, फल, अन्न, दूध, दही, गौ, सरसो, कमल, वस्त्र, वेश्या,बाजा, मोर, पपैया, नेवला, बंधा हुआ पशु, मांस, श्रेष्ठ वाक्य, फूल, ऊख, भरा कलश, छाता, मृत्तिका, कन्या, रत्न, पगडी, बिना बंधा सफेद बैल, मदिरा, पुत्रवती स्त्री, जलती हुई अग्नि और मछली आदि पदार्थ यात्रा के लिए गमन करते हुए दिखलाई पडें तो शुभ शकुन समझना चाहिए। सीसा, काजल, धुला वस्त्र, अथवा धोये हुए वस्त्र लिये हुए धोबी, मछली, घृत, सिंहासन, रोदन रहित मुर्दा, ध्वजा, शहद, मेढा, धनुष, गोरोचन, भरद्वाज पक्षी, पालकी, वेदध्वनि, श्रेष्ठ स्तोत्र पाठ की ध्वनि, मागलिक गायन और अकुश ये पदार्थ यात्रा के समय सम्मुख आवे और बिना जल का घडा लिये हुए आदमी पीछे जाता हो तो अत्युत्तम है।

बांझ स्त्री, चमडा, धान की भूसी, हाड, सर्प, लवण, अगार, इन्धन, हिजडा, विष्ठा लिये पुरुष, तैल, पागल व्यक्ति, चर्बी, औषध, शत्रु, जटावाला व्यक्ति, सन्यासी, तृण, रोगी, मुनि और बालक के अतिरिक्त अन्य नगा व्यक्ति, तेल लगाकर बिना स्नान किये हुए, छूटे केश, जाति से पतित, कान-नाक कटा व्यक्ति, भूखा, रुधिर, रजस्वला स्त्री, गिरगिट, निज घर का जलना, बिलावो का लड़ना और सम्मुख छींक यात्रा मे अशुभ है। गेरू से रंगा कपड़ा, या इस प्रकार के वस्त्रो को धारण करने वाला व्यक्ति, गुड़, छाछ, कीचड़, विधवा स्त्री, कुबड़ा व्यक्ति, लड़ाई, शरीर से वस्त्र गिर जाना, भैंसों की लडाई, काला अन्न, रूई, वमन, दाहिनी ओर गर्दभ शब्द, अतिक्रोध, गर्भवती, शिरमुण्डा, गीले वस्त्र वाला, दुष्ट वचन बोलने वाला, अन्धा और बहरा ये सब यात्रा समय में सम्मुख आयें तो अति निन्दित हैं।

गोहा, जाहा, शूकर, सर्प और खरगोश का शब्द शुभ होता है। निज या पर के मुख से इनका नाम लेना शुभ है, परन्तु इनका शब्द या दर्शन शुभ नहीं है। रीछ और वानर का नाम लेना और सुनना अशुभ है, पर शब्द सुनना शुभ होता है। नदी का तैरना, भयकार्य, गृहप्रवेश और नष्ट वस्तु का देखना साधारण शुभ है। कोयल, छिपकली, पोतकी, शूकरी, रता, पिंगला, छछुन्दरि, सियारिन, कपोत, खंजन, तीतर इत्यादि पक्षी यदि राजा की यात्रा के समय वाम भाग में हों तो शुभ हैं। छिक्कर, पपीहा, श्रीकण्ठ, वानर और रुरुमृग यात्रा समय दक्षिण भाग मे हों तो शुभ है। दाहिनी ओर आये हुए मृग और पक्षी यात्रा मे शुभ होते हैं। विषम सख्यक मृग अर्थात् तीन, पाँच, सात, नौ, ग्यारह, तेरह, पन्द्रह, सत्रह, उन्नीस, इक्कीस आदि सख्या मे मृगो का झुण्ड चलते हुए साथ दें तो शुभ है। यात्रा समय बायी ओर गदहे का शब्द शुभ है। यदि सिर के ऊपर दही की हण्डी रखे हुए कोई ग्वालिन जा रही हो और दही के कण गिरते हुए दिखलाई पड़ें तो यह शकुन यात्रा के लिए अत्यन्त शुभ है। यदि दही की हण्डी काले रग की हो और वह काले रग के वस्त्र से आच्छादित हो तो यात्रा मे आधी सफलता मिलती है। श्वेत रग की हण्डी श्वेत वस्त्र से आच्छादित हो तो पूर्ण सफलता प्राप्त होती है। यदि रक्त वस्त्र से आच्छादित हो तो यश प्राप्त होता है, पर यात्रा मे कठिनाइयाँ अवश्य सहन करनी पड़ती हैं। पीतवर्ण के वस्त्र से आच्छादित होने पर धन लाभ होता है तथा यात्रा भी सफलतापूर्वक निर्विघ्न हो जाता है। हरे रग का वस्त्र विजय की सूचना देता है तथा यात्रा करने वाले की मनोकामना सिद्ध होने की ओर संकेत करता है। यदि यात्रा करने के समय कोई व्यक्ति खाली घड़ा लेकर सामने आये और तत्काल भरकर साथ-साथ वापस चले तो यह शकुन यात्रा की सिद्धि के लिए अत्यन्त शुभकारक है। यदि कोई व्यक्ति भरा घड़ा लेकर सामने आये और तत्काल पानी गिराकर खाली घडा लेकर चले तो यह शकुन अशुभ है, यात्रा की कठिनाइयो के साथ धनहानि की सूचना देता है।

यात्रा समय में काक का विचार—यदि यात्रा के समय काक वाणी बोलता हुआ वाम भाग में गमन करे तो सभी प्रकार के मनोरथों की सिद्धि होती है। यदि काक मार्ग में प्रदक्षिणा करता हुआ बायें हाथ आ जाये तो कार्य की सिद्धि, क्षेम, कुशल तथा मनोरथो की सिद्धि होती है। यदि पीठ पीछे काक मन्द रूप में मधुर शब्द करता हुआ गमन करे अथवा शब्द करता हुआ उसी ओर मार्ग मे आगे बढ़े, जिधर यात्रा के लिए जाना है, अथवा शब्द करता हुआ काक आगे हरे वृक्ष की हरी डाली पर स्थित हो और अपने पैर से मस्तक को खुजला रहा हो तो यात्रा में अभीष्ट फल की सिद्धि होती है। यदि गमन काल मे काक हाथी के ऊपर बैठा दिखलाई पड़े या हाथी पर बजते हुए बाजो पर बैठा हुआ दिखलाई पड़े तो यात्रा मे सफलता मिलती है, साथ ही धनधान्य, सवारी, भूमि आदि का

लाभ होता है। यदि काक घोडे के ऊपर स्थित दिखलाई पडे तो भूमिलाभ, मित्र-लाभ एव धनलाभ करता है। देवमन्दिर, ध्वजा, ऊँचे महल, धान्य की राशि, अन्न के ढेर एव उन्नत भूमि पर बैठा हुआ काक मुँह मे सूखी घास लेकर चबा रहा हो तो निश्चय यात्रा मे अर्थ लाभ होता है। इस प्रकार की यात्रा मे सभी प्रकार के सुख साधन प्रस्तुत रहते हैं। यह यात्रा अत्यन्त सुखकर मानी जाती है। आगे-पीछे काक गोबर के ढेर पर बैठा हो या दूध वाले—वट, पीपल आदि पर स्थित होकर बीट कर रहा हो अथवा मुँह मे अन्न, फल, मूल, पुष्प आदि हो तो अनायास ही यात्रा की सिद्धि होती है। यदि कोई स्त्री जल का भरा हुआ कलश लेकर आये और उस पर काक स्थित होकर शब्द करने लगे तथा जल के भरे हुए घड़े पर स्थित हो काक शब्द करे तो स्त्री और धन की प्राप्ति होती है। यदि शय्या के ऊपर स्थित होकर काक शब्द करे तो आप्तजनो की प्राप्ति होती है। गाय की पीठ पर बैठकर या दूर्वा पर बैठकर अथवा गोबर पर बैठकर काक चोच घिसता हो तो अनेक प्रकार के भोज्य पदार्थों की प्राप्ति होती है। धान्य, दूध, दही, मनोहर अकुर, पत्र, पुष्प, फल, हरे-भरे वृक्ष पर स्थित होकर काक बोलता जाय तो सभी प्रकार के इच्छित कार्य सिद्ध होते है। वृक्षो के ऊपर स्थित होकर काक शान्त शब्द बोले तो स्त्रीप्रसग हो, धन-धान्य पर स्थित होकर शान्त शब्द करे तो धन-धान्य का लाभ हो एव गाय की पीठ पर स्थित होकर शब्द करे तो स्त्री, धन, यश और उत्तम भोजन की प्राप्ति होती है। ऊँट की पीठ पर स्थित होकर शान्त शब्द करे, गदहे की पीठ पर स्थित होकर शान्त शब्द करे तो धन-लाभ और सुख की प्राप्ति होती है। यदि शूकर, बैल, खाली घडा, मुर्दा मनुष्य या मुर्दा पशु, पाषाण और सूखे वृक्ष की डाली पर स्थित होकर काक शब्द करे तो यात्रा मे ज्वर, अर्थहानि, चोरो द्वारा धन का अपहरण एव यात्रा मे अनेक प्रकार के कष्ट होते है। यदि काक दक्षिण की ओर गमन करे और दक्षिण की ओर ही शब्द करे, पीछे से सम्मुख आये, कोलाहल करता हो और प्रतिलोम गति करके पीठ पीछे की ओर चला आये तो यात्रा मे चोट लगती है, रक्तपात होता है तथा और भी अनेक प्रकार के कष्ट होते है। बलिभोजन करता हुआ काक बायी ओर शब्द करता हो और वहाँ से दक्षिण की ओर चला आये एव वाम प्रदेश मे प्रति-लोम गमन करता हो तो यात्रा मे अनेक प्रकार के विघ्न होते हैं। आर्थिक हानि भी होती है। यदि गमनकाल मे काक दक्षिण बोलकर पीठ पीछे की ओर चला जाय तो किसी की हत्या सुनाई पडती है। गाय की पूँछ या सर्प के बिल पर बैठा हुआ काक दिखलाई पड़े तो मार्ग मे सर्पदर्शन, नाना तरह के सघर्ष और भय होते हैं। यदि काक आगे कठोर शब्द करता हुआ स्थित हो तो हानि, रोग, पीठ पीछे स्थित हो कठोर शब्द करे तो मृत्यु एव खाली बैठकर शब्द कर रहा हो तो यात्रा सदा निन्दित है। सूखे काठ के टूक को तोड़कर चोच के अग्रभाग मे

दबाकर रखा हो और बायें भाग मे स्थित हो तो मृत्यु या नाना प्रकार के कष्ट होते हैं। यदि चोच मे काक हड्डी दबाये हो तो अशुभ फल होता है। वाम भाग मे सूखे वृक्ष पर काक स्थित हो तो अतिरोग, खाली या तीखे वृक्ष पर बैठा हो तो यात्रा मे कलह और कार्यनाश एव कांटेदार वृक्ष पर स्थित होकर रूखा शब्द करे तो यात्रा मे मृत्यु होती है।

भग्नशरण के वृक्ष पर स्थित काक कठोर शब्द करता हो तो यात्रा मे धन-क्षय, कुटुम्बी मरण एव नाना तरह से अशुभ होता है। यदि छत पर बैठकर काक बोलता हो तो यात्रा नही करनी चाहिए। इस शकुन के होने पर यात्रा करने से वज्रपात—बिजली गिरती है। यदि कूडे के ढेर पर या राख—भस्म के ढेर पर स्थित होकर काक शब्द करे तो कार्य का नाश होता है। अपयश, धनक्षय एव नाना तरह के कष्ट यात्रा में उठाने पडते है। लता, रस्सी, केश, सूखी लकडी, चमडा, हड्डी, फटे-पुराने चिथडे, वृक्षो की छाल, रुधिरयुक्त वस्तु, जलती लकडी एव कीचड काक की चोच मे दिखलाई पडे तो यात्रा मे पापयुक्त कार्य करने पडते है, यात्रा मे कष्ट होता है, धनक्षय या धन की चोरी, अचानक दुर्घटनाएं आदि घटित होती है। आयुध, छत्र, घडा, हड्डी, वाहन, काष्ठ एव पाषाण चोच मे रखे हुए काक दिखलाई पडे तो यात्रा करने वाले की मृत्यु होती है। एक पाँव समेटकर, चचल चित्त होकर जोर-जोर से कठोर शब्द करता हो तो काक युद्ध, झगडे, मार-पीट आदि की सूचना देता है। यदि यात्रा करते समय काक अपनी बीट यात्रा करने वाले के मस्तक पर गिरा दे तो यात्रा मे विपत्ति आती है। नदी तट या मार्ग मे काक तीव्र स्वर बोले तो अत्यन्त विपत्ति की सूचना समझ लेनी चाहिए। यात्रा के समय मे यदि काक रथ, हाथी, घोडा और मनुष्य के मस्तक पर बैठा दीख पडे तो पराजय, कष्ट, चोरी और झगडे की सूचना समझनी चाहिए। शास्त्र, ध्वजा, छत्र पर स्थित होकर काक आकाश की ओर देख रहा हो तो यात्रा मे सफलता मिलनी चाहिए।

यात्रा में उल्लू का विचार—यदि यात्रा काल मे उल्लू बायी ओर दिखलाई पडे तथा उल्लू अपना भोजन भी साथ मे लिये हो तो यात्रा सफल होती है। यदि उल्लू वृक्ष पर स्थित होकर अपना भोजन सचय करता हुआ दिखलाई पड़े तो यात्रा करने वाला इस यात्रा मे अवश्य धन लाभ कर लौटता है। यदि गमन करने वाले पुरुष के वाम भाग मे उल्लू का प्रशान्तमय शब्द हो और दक्षिण भाग मे असम शब्द हो तो यात्रा मे सफलता मिलती है। किसी भी प्रकार की बाधा नही आती है। यदि यात्रा कर्त्ता के वाम भाग मे उल्लू शब्द करता हुआ दिखलाई पड़े अथवा बायी ओर से उल्लू का शब्द सुनाई पडे तो यात्रा प्रशस्त होती है। यदि पृथ्वी पर स्थित होकर उल्लू शब्द कर रहा हो तो धनहानि, आकाश मे स्थित होकर शब्द कर रहा हो तो कलह, दक्षिण भाग मे स्थित होकर शब्द कर रहा

हो तो कलह या मृत्युतुल्य कष्ट होता है। यदि उल्लू का शब्द तैजस और पवन-युक्त हो तो निश्चयतः यात्रा करने वाले की मृत्यु होती है। यदि उल्लू पहले बायी ओर शब्द करे, पश्चात् दक्षिण की ओर शब्द करे तो यात्रा मे पहले समृद्धि, सुख और शान्ति; पश्चात् कष्ट होता है। इस प्रकार के शकुन मे यात्रा करने से कभी-कभी मृत्यु तुल्य कष्ट भी भोगना पडता है।

नीलकण्ठ विचार—यदि यात्रा काल मे नीलकण्ठ स्वस्तिक गति मे भक्ष्य पदार्थों को ग्रहण कर प्रदक्षिणा करता हुआ दिखलाई पड़े तो सभी प्रकार के मनोरथो की सिद्धि होती है। यदि दक्षिण—दाहिनी ओर नीलकण्ठ गमन समय में दिखलाई पड़े तो विजय, धन, यश और पूर्ण सफलता प्राप्त होती है। यदि नीलकण्ठ काक को पराजय करता हुआ सामने दिखलाई पड़े तो निर्विघ्न यात्रा की सिद्धि करता है। यदि वन मध्य मे रुदन करता हुआ नीलकण्ठ सामने आये अथवा भयकर शब्द करता हुआ या घबडाकर शब्द करता हुआ आगे आये तो यात्रा मे बिघ्न आते हे। धन चोरी चला जाता है और जिस कार्य की सिद्धि के लिए यात्रा की जाती है वह सफल नही होता। यदि यात्राकाल में नीलकण्ठ मयूर के समान शब्द करे तो यशप्राप्ति, धनलाभ, विजय एव निर्विघ्न यात्रा सिद्ध होती है। गमन करने वाले व्यक्ति के आगे-आगे कुछ दूर तक नीलकण्ठ के दर्शन हो तो यात्रा सफल होती है। धन, विजय और यश प्राप्त होता है। शत्रु भी यात्रा मे मित्र बन जाते है तथा वे भी सभी तरह की सहायता करते है।

खजन विचार—यदि यात्राकाल मे खजन पक्षी हरे पत्र, पुष्प और फल युक्त वृक्ष पर स्थित दिखलाई पडे तो यात्रा सफल होती है, मित्रो से मिलन, शुभ कार्यों की सिद्धि एव लक्ष्मी की प्राप्ति होती है। हाथी, घोड़ा के बँधने के स्थान मे, उपवन, घर के समीप, देवमन्दिर, राजमहल आदि के शिखर पर खजन बैठा हुआ सशब्द दिखलाई पड़े तो यात्रा सफल होती है। दही, दूध, घृत आदि को मुख मे लिये हुए खजन पक्षी दिखलाई पड़े तो नियमत लक्ष्मी की प्राप्ति होती है। यात्रा मे इस प्रकार के शुभ शकुन मिलते है, जिनसे चित्त प्रसन्न रहता है तथा बिना किसी प्रकार के कष्ट के यात्रा सिद्ध हो जाती है। सहस्रो व्यक्ति सहायक मिल जाते है। छाया सहित, सुन्दर, फल-पुष्प युक्त वृक्ष पर खजन पक्षी दिखलाई पडे तो लक्ष्मी की प्राप्ति के साथ विजय, यश और अधिकारो की प्राप्ति होती है। खजन का दर्शन यात्रा काल में बहुत ही उत्तम माना जाता है। गधा, ऊँट, श्वान की पीठ पर खजन पक्षी दिखलाई पड़े अथवा अशुचि और गन्दे स्थानो पर बैठा हुआ खंजन दिखलाई पड़े तो यात्रा मे बाधाएँ आती है, धनहानि होती है और पराजय भी होती है।

तोता विचार—यदि गमन समय मे दाहिनी ओर या सम्मुख तोता दिखलाई पड़े तथा वह मधुर शब्द कर रहा हो, बन्धन मुक्त हो तो यात्रा मे सभी प्रकार

से सफलता प्राप्त होती है। यदि तोता मुख मे फल दबाये और बायें पैर से अपनी गर्दन खुजला रहा हो तो यात्रा मे धन-धान्य की प्राप्ति होती है। हरित फल, पुष्प और पत्तो से युक्त वृक्ष के ऊपर तोता स्थित हो तो यात्रा मे विजय, सफलता, धन और यश की प्राप्ति समझनी चाहिए। किसी विशेष व्यक्ति से मिलने के लिए यदि यात्रा की जाय और यात्रा के आरम्भ मे तोता जयनाद करता हुआ दिखलाई पड़े तो यात्रा पूर्ण सफल होती है। यदि गमन काल मे तोता बायी ओर से दायीं ओर चला आये और प्रदक्षिणा करता हुआ-सा प्रतीत हो तो यात्रा मे सभी प्रकार की सफलता समझनी चाहिए। यदि तोता शरीर को कँपाता हुआ इधर से उधर घूमता जाय अथवा निन्दित, दूषित और घृणित स्थलो पर जाकर स्थित हो जाय तो यात्रा की सिद्धि मे कठिनाई होती है। मुक्त विचरण करने वाला तोता यदि सामने फल या पुष्प को कुरेदता हुआ दिखलाई पड़े तो धनप्राप्ति का योग समझना चाहिए। यदि तोता रुदन करता हुआ या किसी प्रकार के शोक शब्द को करता हुआ सामने आये तो यात्रा अत्यन्त अशुभ होती है। इस प्रकार के शकुन में यात्रा करने से प्राणघात का भी भय रहता है।

चिड़िया विचार—यदि छोटी लाल मुनैया सामने दिखलाई पड़े तो विजय, पीठ पीछे शब्द करे तो कष्ट, दाहिनी ओर शब्द करती हुई दिखलाई पड़े तो हर्ष एवं बायी ओर धन क्षय, रोग या अनेक प्रकार की आपत्तियो की सूचना देती है। जिस चिडिया के सिर पर कलगी हो, यदि वह सामने या दाहिनी ओर दिखलाई पड़े तो शुभ, बायी ओर तथा पीठ पीछे उसका रहना अशुभ होता है। मुँह में चारा लिये हुए दिखलाई पडे तो यात्रा मे सभी प्रकार की सिद्धि, धन-धान्य की प्राप्ति, सांसारिक सुखो का लाभ एव अभीष्ट मनोरथो की सिद्धि होती है। यदि किसी भी प्रकार की चिड़ियाँ आपस मे लडती हुई सामने गिर जायँ तो यात्रा मे कलह, विवाद, झगडा के साथ मृत्यु भी प्राप्त होती है। चिड़िया के परो का टूटकर सामने गिरना यात्राकर्त्ता को विपत्ति की सूचना देता है। चिडियाँ का लँगडाकर चलना और धूल मे स्नान करना यात्रा मे कष्टो की सूचना देता है।

मयूर विचार—यात्रा मे मयूर का नृत्य करते हुए देखना अत्यन्त शुभ होता है। मधुर शब्द एवं नृत्य करता हुआ मयूर यदि यात्रा करते समय दिखलाई पडे तो यह शकुन अत्यन्त उत्तम है, इसके द्वारा धन-धान्य की प्राप्ति, विजय-प्राप्ति, सुख एवं सभी प्रकार के अभीष्ट मनोरथो की सिद्धि समझ लेनी चाहिए। मयूर का एक ही झटके में उड़कर सूखे वृक्ष पर बैठ जाना यात्रा मे विपत्ति की सूचना देता है।

हाथी विचार—यदि प्रस्थान काल में हाथी सूँड़ को ऊपर किये हुए दिखलाई पडे तो यात्रा मे इच्छाओ की पूर्ति होती है। यदि यात्रा करते समय हाथी का दांत ही टूटा हुआ दिखलाई पड़े तो भय, कष्ट और मृत्यु होती है। गर्जना करता

हुआ मदोन्मत्त हाथी यदि सामने आता हुआ दिखलाई पडे तो यात्रा सफल होती है। जो हाथी पीलवान को गिराकर आगे दौड़ता हुआ आये तो यात्रा मे कष्ट, पराजय, आर्थिक क्षति आदि फलो की प्राप्ति होती है।

अश्व विचार—यदि प्रस्थान काल मे घोडा हिनहिनाता हुआ दाहिने पैर से पृथ्वी को खोद रहा हो और दाहिने अग को खुजला रहा हो तो वह यात्रा मे पूर्ण सफलता दिलाता है तथा पद-वृद्धि की सूचना देता है। घोडे का दाहिनी ओर हिनहिनाते हुए निकल जाना, पूँछ को फटकारते हुए चलना एव दाना खाते हुए दिखलाई पडना शुभ है। घोडे का लेटे हुए दिखलाई पडना, कानो को फटफटाना, मल-मूत्र त्याग करते हुए दिखलाई पडना यात्रा के लिए अशुभ होता है।

गर्दभ विचार—वाम भाग मे स्थित गर्दभ अतिदीर्घ शब्द करता हुआ यात्रा मे शुभ होता है। आगे या पीछे स्थित होकर गर्दभ शब्द करे तो भी यात्रा की सिद्धि होती है। यदि प्रयाण काल मे गर्दभ अपने दाँतो से अपने कन्धे को खुजलाता हो तो धन की प्राप्ति, सफल मनोरथ और यात्रा मे किसी भी प्रकार का कष्ट नही होता है। यदि सभोग करता हुआ गर्दभ दिखलाई पडे तो स्त्रीलाभ, युद्ध करता हुआ दिखलाई पडे तो वध-बधन एव देह या कान को फटफटाता हुआ दिखलाई पडे तो कार्य नाश होता है। खच्चर का विचार भी गर्दभ के विचार के समान ही है।

वृषभ विचार—प्रयाण काल मे वृषभ बायी ओर शब्द करे तो हानि, दाहिनी ओर शब्द करे और सीगो से पृथ्वी को खोदे तो शुभ, घोर शब्द करता हुआ साथ-साथ चले तो विजय एव दक्षिण की ओर गमन करता हुआ दिखलाई पडे तो मनोरथ सिद्धि होती है। बैल या साँड बायी ओर आकर बायी सीग से पृथ्वी को खोदे, बायी करवट लेटा हुआ दिखलाई पडे तो अशुभ होता है। यात्रा काल मे बैल या साँड का बायी ओर आना भी अशुभ कहा गया है।

महिष विचार—दो महिष सामने लडते हुए दिखलाई पडे तो अशुभ, विवाद कलह और युद्ध की सूचना देते है। महिष का दाहिनी ओर रहना, दाहिने सीग से या दाहिनी ओर स्थित होकर दोनो सीगो से मिट्टी का खोदना यात्रा मे विजय कारक है। बैल और महिष दोनो की छीक यात्रा के लिए वर्जित है।

गाय विचार—गर्भिणी गाय, गर्भिणी भैंस और गर्भिणी बकरी का यात्रा काल मे सम्मुख या दाहिनी ओर आना शुभ है। रँभाती हुई गाय सामने आये और बच्चे को दूध पिला रही हो तो यात्रा काल मे अत्यधिक शुभ माना जाता है। जिस गाय का दूध दुहा जा रहा हो, वह भी यात्रा काल मे शुभ होती है। रँभाती हुई, बच्चे को देखने के लिए उत्सुक, हर्षयुक्त गाय का प्रयाण काल मे दिखलाई पडना शुभ होता है।

बिडाल विचार—यात्रा काल मे बिल्ली रोती हुई, लडती हुई, छीकती हुई

दिखलाई पड़े तो यात्रा मे नाना प्रकार के कष्ट होते है। बिल्ली का रास्ता काटना भी यात्रा मे सकट पैदा कराता है। यदि अकस्मात् बिल्ली दाहिनी ओर से बायी ओर आये तो किंचित् शुभ और बायी ओर से दाहिनी ओर आये तो अत्यन्त अशुभ होता है। इस प्रकार का बिल्ली का आना यात्रा में सकटो की सूचना देता है। यदि बिल्ली चूहे को मुख मे दबाये सामने आ जाय तो कष्ट, रोटी का टुकड़ा दबाकर सामने आये तो यात्रा मे लाभ एव दही या दूध पीकर सामने आये तो साधारणत यात्रा सफल होती है। बिल्ली का रुदन यात्रा काल मे अत्यन्त वर्जित है, इसमे यात्रा मे मृत्यु या तत्तुल्य कष्ट होता है।

कुत्ता विचार—यात्रा काल मे कुत्ता दक्षिण भाग से वाम भाग मे गमन करे तो शुभ और कुतिया वाम भाग से दक्षिण भाग की ओर आये तो शुभ, सुन्दर वस्तु को मुख मे लेकर यदि कुत्ता सामने दिखनाई पड़े तो यात्रा मे लाभ होता है। व्यापार के निमित्त की गयी यात्रा अत्यन्त सफल होती है। यदि कुत्ता थोड़ी-सी दूर आगे चलकर, पुन पीछे की ओर लौट आये तो यात्रा करने वाले को सुख, प्रसन्न क्रीड़ा करता हुआ कुत्ता सम्मुख आने क उपरान्त पीछे की ओर लौट जाय तो यात्रा करने वाले को धन-धान्य की प्राप्ति होती है। इस प्रकार के शकुन से यात्रा मे विजय, सुख और शान्ति रहती है। यदि श्वान ऊँचे स्थान से उतरकर नीचे भाग मे आ जाय तथा यह दाहिनी ओर आ जाये तो शुभकारक होता है। निर्विघ्न यात्रा की सिद्धि तो होती ही है, साथ ही यात्रा करने वाले को अत्यधिक सम्मान की प्राप्ति होती है। हाथी के बँधने के स्थान, घोडा के स्थान, शय्या, आसन, हरी घास, छत्र, ध्वजा, उत्तम वृक्ष, घडा, ईंटो के ढेर, चमर, ऊँची भूमि आदि स्थानो पर मूत्र करके कुत्ता यदि मनुष्य के आगे गमन करे तो अभीष्ट कार्यों की सिद्धि हो जाती है। यात्रा सभी प्रकार से सफल होती है। सन्तुष्ट, पुष्ट, प्रसन्न, रोग-रहित, आनन्दयुक्त, लीला सहित एव क्रीडा सहित कुत्ता सम्मुख आये तो अभीष्ट कार्यों की सिद्धि होती है। नवीन अन्न, घृत, विष्ठा, गोबर इनको मुख मे धारण कर दाहिनी ओर और बायी ओर देखता हुआ श्वान सामने आये तो सभी प्रकार से यात्रा सफल होती है। यदि श्वान आगे पृथ्वी को खोदता हुआ यात्रा करने वाले को देखे तो निस्सन्देह इस यात्रा से धन लाभ होता है। यदि कुत्ता गमन करने वाले को आकर सूँघे, अनुलोम गति से आगे बढे, पैर से मस्तक को खुजलाये तो यात्रा सफल होती है। श्वान गमनकर्त्ता के साथ-साथ बायी ओर चले तो सुन्दर रमणी, धन और यश की प्राप्ति कराता है। श्वान जूता मुँह मे लेकर सामने आये या साथ-साथ चले, हड्डी लेकर सामने आये या साथ-साथ चले, केश, वल्कल, पाषाण, जीर्णवस्त्र, अगार, भस्म, ईंधन, ठीकरा इन पदार्थों को मुँह मे लेकर श्वान सामने आये तो यात्रा मे रोग, कष्ट, मरण, धन हानि आदि फल प्राप्त होते हैं। काष्ठ, पाषाण को कुत्ता मुख मे लेकर यात्रा करने वाले के सामने आये, पूंछ,

काल और शरीर को यात्रा करने वाले के सामने हिलावे तो यात्रा में धन हरण, कष्ट एवं रोग आदि होते हैं। यदि यात्रा करने वाला व्यक्ति किसी कुत्ता को जल, वृक्ष की लकडी, अग्नि, भस्म, केश, हड्डी, काष्ठ, सींग, श्मशान, भूसा, अंगार, शूल, पाषाण, विष्ठा, चमड़ा आदि पर मूत्र करते हुए देखे तो यात्रा मे नाना प्रकार के कष्ट होते हैं।

शृगाल विचार—जिस दिशा मे यात्रा की जा रही हो, उसी दिशा मे शृगाल या शृगाली का शब्द सुनाई पड़े तो यात्रा मे सफलता प्राप्त होती है। यदि पूर्व दिशा की यात्रा करने वाले व्यक्ति के समक्ष शृगाल या शृगाली आ जाय और बहु शब्द भी कर रही हो तो यात्रा करने वाले को महान् सकट की सूचना देती है। यदि सूर्य सम्मुख देखती हुई शृगाली बायीं ओर बोले तो भय, दाहिनी ओर बोले तो कार्य हानि फल होता है। दक्षिण दिशा की यात्रा करने वाले व्यक्ति के दायी ओर शृगाली शब्द करे तो यात्रा मे सफलता की सूचना देती है। इसी दिशा के यात्री के आगे सूर्य की ओर मुँह कर शृगाली बोले तो मृत्यु की प्राप्ति होती है। पश्चिम दिशा को गमन करने वाले के सम्मुख शृगाली बोले तो किंचित् हानि और सूर्य की ओर मुँह करके बोले तो अत्यन्त संकट की सूचना देती है। यदि पश्चिम दिशा के यात्री के पीठ के पीछे शृगाली शब्द करती हुई चले तो अर्थनाश, बायीं ओर शब्द करे तो अर्थागम होता है। उत्तर दिशा को गमन करने वाले व्यक्ति के पीठ पीछे शृगाली सूर्य की ओर मुँह कर बोले तो यात्रा मे अर्थहानि और मरण होता है। यदि यात्रा-काल मे शृगाली दाहिनी ओर से निकलकर बाईं ओर चली जाय और वही पर शब्द करे तो यात्रा मे सफलता की सूचना समझनी चाहिए। शृगाली शब्द की कर्कशता और मधुरता के अनुसार फल मे भी हीनाधिकता हो जाती है।

यात्रा में छींक विचार—छीक होने पर सभी प्रकार के कार्यों को बन्द कर देना चाहिए। गमन काल मे छींक होने से प्राणो की हानि होती है। सामने छीक होने पर कार्य का नाश, दाहिने नेत्र के पास छींक हो तो कार्य का निषेध, दाहिने कान के पास छीक हो तो धन का क्षय, दक्षिण कान के पृष्ठ भाग मे छीक हो तो शत्रुओं की वृद्धि, बायें कान के पास छीक हो तो जय, बायें कान के पृष्ठ भाग की ओर छींक हो तो भोगों की प्राप्ति, बायें नेत्र के आगे छीक हो तो धन लाभ होता है। प्रयाण काल मे सम्मुख की छींक अत्यन्त अशुभकारक है और दाहिनी छींक धन नाश करने वाली है। अपनी छीक अत्यन्त अशुभकारक होती है। ऊँचे स्थान की छींक मृत्युमय है, पीठ पीछे की छीक भी शुभ होती है। छींक का विचार 'डाक' ने इस प्रकार किया है—

दक्षिन छींकैं धन लै दीजै, नैरित कोन सिंहासन दीजै ।।
पच्छिम छींकै मिठ भोजना, गेलो पलटै वायव कोना ।।
उत्तर छींकै मान समान, सर्व सिद्ध लै कोन ईशान ।।
पूरब छिक्का मृत्यु हुंकार, अग्निकोन में दुख के भार ।।
सबके छिक्का कहिगेल 'डाक' अपने छिक्का नहिं कस काज ।।
आकाश छिक्के जे नर जाय, पलटि अन्न मन्दिर नहिं खाय ।

अर्थात्—दक्षिण दिशा से होने वाली छींक धन हानि करती है, नैऋत्यकोण की छीक सिंहासन दिलाती है, पश्चिम दिशा की छींक मीठा भोजन और वायव्य

आठों दिशाओं में प्रहरानुसार छींकफल बोधकचक्र

ईशान	पूर्व	आग्नेय
1 हर्ष	1. लाभ	1. लाभ
2 नाश	2. धनलाभ	2. मित्रदर्शन
3 व्याधि	3 मित्रलाभ	3. शुभवार्ता
4 मित्रसंगम	4. अग्निभय	4. अग्निभय
उत्तर		**दक्षिण**
1. शत्रुभय		1. लाभ
2. रिपुसंग	यात्रा	2 मृत्युभय
3 लाभ		3. नाश
4. भोजन		4. काल
वायव्यकोण	**पश्चिम**	**नैऋत्य**
1. स्त्रीलाभ	1. दूरगमन	1. लाभ
2. लाभ	2. हर्ष	2. मित्रभेंट
3. मित्रलाभ	3. कलह	3. शुभवार्ता
4. दूरगमन	4 चौर	4. लाभ

कोण की छीक द्वारा गया हुआ व्यक्ति सकुशल लौट आता है। उत्तर की छीक मान-सम्मान दिलाती है, ईशान कोण की छीक समस्त मनोरथो की सिद्धि करती है। पूर्व की छीक मृत्यु और अग्निकोण की दुख देती है। यह अन्य लोगो की छीक का फल है। अपनी छीक तो सभी कार्यों को नष्ट करने वाली होती है। अत अपनी छीक का सदा त्याग करना चाहिए। ऊँच स्थान की छीक मे जो व्यक्ति यात्रा के लिए जाता है, वह पुन वापस नही लौटता है। नीचे स्थान की छीक विजय देती है।

'बसन्तराज शाकुन' मे दशो दिशाओ की अपेक्षा छीक के दस भेद बतलाये हैं। पूर्व दिशा मे छीक होने से मृत्यु, अग्निकोण मे शोक, दक्षिण मे हानि, नैऋत्य मे प्रियसगम, पश्चिम मे मिष्ठ आहार, वायव्य मे श्रीसम्पदा, उत्तर में कलह, ईशान मे धनागम, ऊपर की छीक मे सहार और नीचे की छीक मे सम्पत्ति की प्राप्ति होती है। आठो दिशाओ मे प्रहर-प्रहर के अनुसार छीक का शुभाशुभत्व दिखलाया गया है। छीक फल-बोधक चक्र मे देखे।

चतुर्दशोऽध्याय:

अथात सम्प्रवक्ष्यामि पूर्वकर्मविपाकजम्।
[1]शुभाशुभतथोत्पातं राज्ञो जनपदस्य च ॥1॥

अब राजा और जनपद के पूर्वोपार्जित शुभाशुभ कार्यों के फल से होने वाले उत्पातो का निरूपण करता हूँ ॥1॥

प्रकृतेर्यो विपर्यासः [2]स चोत्पातः प्रकीर्तितः।
दिव्याऽन्तरिक्षभौमाश्च व्यासमेषां निबोधत ॥2॥

प्रकृति के विपर्यास—विपरीत कार्य के होने को उत्पात कहते हैं। ये उत्पात तीन प्रकार के होते है—दिव्य, अन्तरिक्ष और भौम। इनका विस्तार से वर्णन अवगत करना चाहिए ॥2॥

1 शुभाऽशुभान् समुत्पातान् मु०। 2 स उत्पात मु०।

यदात्युष्णं भवेच्छीते शीतमुष्णे तथा ऋतौ।
तदा तु नवमे मासे दशमे वा भयं भवेत् ॥3॥

यदि शीत ऋतु मे अधिक गर्मी पडे और ग्रीष्म ऋतु मे कडाके की सर्दी पडे तो उक्त घटना के नौ महीने या दश महीने के उपरान्त महान् भय होता है ॥3॥

सप्ताहमष्टरात्रं वा नवरात्र दशाह्निकम्।
यदा निपतते वर्षं प्रधानस्य वधाय तत् ॥4॥

यदि वर्षा सात दिन और आठ रात अथवा नौ रात्रि और दश दिन तक हो तो प्रधान—राजा या मन्त्री का वध होता है। तात्पर्य यह है कि वर्षा लगातार सात दिन और आठ रात अर्थात् दिन से आरम्भ होकर आठवी रात मे समाप्त हो या नौ रात और दस दिन अर्थात्—रात से आरम्भ होकर दशवे दिन समाप्त हो तो प्रधान का वध होता है ॥4॥

पक्षिणश्च यदा मत्ताः पशवश्च पृथग्विधाः।
विपर्ययेण संसक्ता विन्द्याज्जनपदे भयम् ॥5॥

यदि पक्षी मत्त—पागल और पशु भिन्न स्वभाव के हो जायें तथा विपर्यय—विपरीत जाति, गुण, धर्म वालो का सयोग हो अर्थात् पशु-पक्षियो से मिलें, पक्षी पशुओ से अथवा गाय आदि पशु भी भिन्न स्वभाव वालो से सयोग करे तो राष्ट्र मे भय—आतक व्याप्त हो जाता है ॥5॥

आरण्या ग्राममायान्ति वनं गच्छन्ति नागरा.।
रुदन्ति चाथ जल्पन्ति तदापायाय[1] कल्पते ॥6॥

[2]अष्टादशसु मासेषु तथा सप्तदशसु च।
राजा च म्रियते तत्र भयं रोगश्च जायते ॥7॥

जगली पशु गाव मे आयें और ग्रामीण पशु जगल को जाये, रुदन करे और शब्द करें तो जनपद के पाप का उदय समझना चाहिए। इस पाप के फल से अठारह महीनो मे या सत्रह महीनो मे राजा का मरण होता है और उस जनपद मे भय एव रोग आदि उत्पन्न होते हैं। अर्थात् उस जनपद मे सभी प्रकार का कष्ट व्याप्त हो जाता है ॥6-7॥

---

1 तदारण्याय मु०। 2 अष्टादशस्य मासस्य तथा सप्तदशस्य च।

स्थिराणां कम्पसरणे चलानां [1]गमने तथा।
ब्रूयात् तत्र वधं राज्ञः षण्मासात् पुत्रमन्त्रिणः ॥8॥

स्थिर पदार्थ—जड-चेतनात्मक स्थिर पदार्थ काँपने लगें—चंचल हो जायें और चंचल पदार्थों की गति रुक जाय—स्थिर हो जायें तो इस घटना के छः महीने के उपरान्त राजा एव मंत्री-पुत्र का वध होता है ॥8॥

[2]सर्पणे हसने चापि [3]क्रन्दने युद्धसम्भवे।
स्थावराणां वध विन्द्यात्त्रिमासं[4] नात्र संशयः ॥9॥

युद्धकाल में अकारण चलने, हँसने और रोने-कल्पने से तीन महीने के उपरान्त स्थावर—वहाँ के निवासियो का निस्सन्देह वध होता है ॥9॥

पक्षिणः पशवो मर्त्याः प्रसूयन्ति [5]विपर्ययात्।
यदा तदा तु षण्मासाद् [6]ब्रूयात् राजवधो ध्रुवम् ॥10॥

यदि पक्षी, पशु और मनुष्य विपर्यय—विपरीत सन्तान उत्पन्न करें अर्थात् पक्षियो के पशु या मनुष्य की आकृति की सन्तान उत्पन्न हो, पशुओ के पक्षी या मनुष्य की आकृति की सन्तान उत्पन्न हो और मनुष्यो के पशु या पक्षी की आकृति की सन्तान उत्पन्न हो तो इस घटना के छ महीने उपरान्त राजा का वध होता है और उस जनपद मे भय—आतक व्याप्त हो जाता है ॥10॥

विकृतैः पाणिपादाद्यैर्न्यूनैश्चाप्यधिकैस्तथा।
यदा त्वेते प्रसूयन्ते क्षुद्भयानि तदाविशेत् ॥11॥

विकृत हाथ, पैर वाली अथवा न्यून या अधिक हाथ, पैर, सिर, आँख वाली सन्तान पशु-पक्षी और मनुष्यो के उत्पन्न हो तो क्षुधा की पीड़ा और भय—आतंक आदि होने की सूचना अवगत करनी चाहिए ॥11॥

षण्मासं द्विगुणं चापि परं वाथ चतुर्गुणम्।
राजा च म्रियते तत्र भयानि च न संशयः ॥12॥

जहाँ उक्त प्रकार की घटना घटित होती है, वहाँ छः महीने, एक वर्ष और दो वर्ष के उपरान्त राजा की मृत्यु एवं निस्सन्देह भय होता है ॥12॥

मद्यानि रुधिराऽस्थीनि धान्यऽंगारवसास्तथा।
[7]मघवान् वर्षते यत्र तत्र विन्द्यात् महद्भयम् ॥13॥

---

1 गमने हि मु०। 2 दर्पण हसते मु०। 3 कन्दन मु०। 4 स्थावरात्मकम् मु०। 5 विपर्यये मु०। 6 भय राजवधस्तदा मु०। 7 मेघो वा वर्षते यत्र भय विद्याच्चतुर्विधम्।

जहाँ मेघ मद्य, रुधिर, हड्डी, अग्नि चिनगारियाँ और चर्बी की वर्षा करते हैं वहाँ चार प्रकार का भय होता है ॥13॥

[1]सरीसृपा जलचराः पक्षिणो द्विपदास्तथा ।
[2]वर्षमाणा जलधरात् तदाख्यान्ति महाभयम् ॥14॥

जहाँ मेघो से सरीसृप—रीढ वाले सर्पादि जन्तु, जलचर—मेढक, मछली आदि एव द्विपद पक्षियों की वर्षा हो, वहाँ घोर भय की सूचना समझनी चाहिए ॥14॥

निरिन्धनो यदा चाग्नि[3]रीक्ष्यते सततं पुरे ।
स राजा नश्यते देशाच्छण्मासात् परतस्तदा ॥15॥

यदि राजा नगर मे निरन्तर बिना ईंधन के अग्नि को प्रज्वलित होते हुए देखे तो वह राजा छ महीने के उपरान्त—उक्त घटना के छ. महीने पश्चात् विनाश को प्राप्त हो जाता है ॥15॥

दीप्यन्ते यत्र शस्त्राणि वस्त्राण्यश्वा नरा गजाः ।
वर्षे च म्रियते राजा देशस्य च महद्भयम् ॥16॥

जहाँ शस्त्र, वस्त्र, अश्व—घोडा, मनुष्य और हाथी आदि जलते हुए दिखलाई पड़ें वहाँ इस घटना के पश्चात् एक वर्ष मे राजा का मरण हो जाता है और देश के लिए महान् भय होता है ॥16॥

चैत्य[4]वृक्षा रसान् यद्वत् [5]प्रस्रवन्ति विपर्ययात् ।
समस्ता यदि वा व्यस्तास्तदा [6]देशे भय वदेत् ॥17॥

यदि चैत्यवृक्ष गूलर के वृक्षो से विपर्यय रस टपके अथवा चैत्यालय के समक्ष स्थित वृक्षो मे से सभी से या पृथक्-पृथक् वृक्ष से विपरीत रस टपके अर्थात् जिस वृक्ष से जिस प्रकार का रस निकलता है, उससे भिन्न प्रकार का रस निकले तो जनपद के लिए भय का आगमन समझना चाहिए ॥17॥

दधि क्षौद्रं घृतं तोयं दुग्धं रेतर्विमिश्रितम् ।
[7]प्रस्रवन्ति यदा वृक्षास्तदा व्याधिभयं भवेत्[8] ॥18॥

जब वृक्षो से दही, शहद, घी, जल, दूध और वीर्य मिश्रित रस निकले तब

---

1 प्रसर्पन्ति मु० । 2 वर्षमाणो जल हृन्याद् भयम।ख्याति दारुणम् मु० । 3. दीप्यते C मु० । 4 वृक्षरसा मु० । 5 प्रभवन्ति मु० । 6 विन्द्याद्भयागमम् मु० । 7. निस्रवन्ति मु० । 8 विदु मु० ।

जनपद के लिए व्याधि और भय समझना चाहिए ॥18॥

रक्ते [1]पुत्रभयं [2]विन्द्यात् नीले श्रेष्ठिभय [3]तथा।
अन्येष्वेषु विचित्रेषु वृक्षेषु तु भयं विदुः ॥19॥

यदि लाल रंग का रस निकले तो पुत्र को भय, नील रंग का रस निकले तो सेठो को भय, और अन्य विचित्र प्रकार का रस निकले तो जनपद को भय होता है ॥19॥

विस्वरं रवमानस्तु चैत्यवृक्षो [4]यदा पतेत्।
[5]सतत भयमाख्याति देशजं पञ्चमासिकम् ॥20॥

यदि चैत्य वृक्ष—चैत्यालय के समक्ष स्थित वृक्ष अथवा गूलर का वृक्ष विकृत आवाज करता हुआ गिरे तो देश-निवासियो को पचमासिक—पाँच महीनो के लिए भय होता है ॥20॥

नानावस्त्रैः समाच्छन्ना [6]दृश्यन्ते चैव यद् द्रुमा।
राष्ट्रजं तद्भय विन्द्याद् विशेषेण तदा विषे ॥21॥

यदि नाना प्रकार के वस्त्रो से युक्त वृक्ष दिखलाई पडे तो राष्ट्र के निवासियो को भय होता है तथा विशेष रूप से देश के लिए भय समझना चाहिए ॥21॥

शुक्लवस्त्रो द्विजान् हन्ति रक्त क्षत्र तदाश्रयम्।
पीतवस्त्रो यदा व्याधि तदा च वैश्यघातकः ॥22॥

यदि वृक्ष श्वेत वस्त्र से युक्त दिखलाई पडे तो ब्राह्मणो का विनाश, रक्त वस्त्र से युक्त दिखलाई पडे तो क्षत्रियो का विनाश और पीत वस्त्र से युक्त दिखलाई पडे तो व्याधि उत्पन्न होती है और वैश्यो के लिए विनाशक है ॥22॥

[7]नीलवस्त्रैस्तथा श्रेणीन् कपिलैर्म्लेच्छमण्डलम्।
धूम्रैर्निहन्ति श्वपचान् चाण्डालानप्यसंशयम् ॥23॥

नील वर्ण के वस्त्र से युक्त वृक्ष दिखलाई पडे तो अश्रेणी—शूद्रादि निम्न वर्ग के व्यक्तियो का विनाश, कपिल वर्ण के वस्त्र से युक्त दिखलाई पडे तो म्लेच्छ—यवनादिका विनाश, धूम्र वर्ण के वस्त्रसे युक्त दिखलाई पडे तो श्वपच—चाण्डाल डोमादि का विनाश होता है ॥23॥

---

1 शत्रु मु०। 2 वक्षे मु० 3 विदु मु०। 4 यत मु०। 5. ततो भय समाख्याति मु०। 6 यदा दृश्यन्ते वै द्रुमा मु०। 7 नीलवस्त्रो निहन्त्याशु शूद्राश्च प्रभृतिन्नरान्। पशुपक्षिभय चित्र विवर्णं स्त्रीभयकर मु०।

मधुराः क्षीरवृक्षाश्च[1]श्वेतपुष्पफलाश्च ये ।
सौम्यायां दिशि यज्ञार्थं जानीयात् प्रतिपुद्गलाः ॥24॥

जो मधुर, क्षीर, श्वेत पुष्प और फलो से युक्त वृक्ष उत्तर दिशा में होते हैं, वे यज्ञ के लिए उत्पात के फल की सूचना देते है। अर्थात्, उत्तर दिशा मे मधुर, श्वेत पुष्प और फलो से युक्त क्षीर वृक्ष ब्राह्मणो के लिए उत्पात की सूचना देते हैं ॥24॥

कषायमधुरास्तिक्ता उष्णवीर्यविलासिनः ।
रक्तपुष्पफला प्राच्यां सुवीर्यनृपक्षत्रयोः ॥25॥

कषाय, मधुर, तिक्त, उष्णवीर्य, विलासी, लाल पुष्प और फल वाले वृक्ष पूर्व दिशा मे बलवान् राजा और क्षत्रियो के लिए प्रतिपुद्गल—उत्पातसूचक है ॥25॥

अम्लाः सलवणा. स्निग्धा पीतपुष्पफलाश्च ये ।
[2]दक्षिण दिशि विज्ञेया वैश्यानां प्रतिपुद्गलाः ॥26॥

आम्ल, लवणयुक्त, स्निग्ध, पीत पुष्प और फल वाले वृक्ष दक्षिण दिशा मे वैश्यो के लिए उत्पात सूचक है ॥26॥

कटुकण्टकिनो रूक्षा. कृष्णपुष्पफलाश्च ये ।
वारुण्यां दिशि वृक्षा स्युः शूद्राणां प्रतिपुद्गलाः ॥27॥

कटु, काँटो वाले, रूक्ष, काले रग के फूल-फल वाले वृक्ष पश्चिम दिशा मे शूद्रो के लिए उत्पात सूचक हैं ॥27॥

[3]महान्तश्चतुरस्राश्च गाढाश्चापि विशेषिण. ।
वनमध्ये स्थिताः सन्त. स्थावरा प्रतिपुद्गला ॥28॥

महान् चौकोर, और विशेष रूप से गाढ—मजबूत और वन के मध्य मे स्थित वृक्ष स्थावरो—वहाँ के निवासियो के लिए उत्पात सूचक होते हैं ॥28॥

ह्रस्वाश्च तरवो येऽन्ये अन्त्ये जाता वनस्य च ।
अचिरोद्भवकारा ये यायिनां प्रतिपुद्गला. ॥29॥

छोटे वृक्ष और जो अन्य वृक्ष वन के अन्त मे उत्पन्न हुए हैं एव शीघ्र ही उत्पन्न हुए पौधों जैसा जिनका आकार है अर्थात् जो छोटे-छोटे हैं, वे यायी—आक्रमण करने वालों के लिए उत्पात सूचक हैं ॥29॥

---

1. फलाश्च ये मु० । 2 दक्षिणा मु० । 3 महान्तश्चतुरस्राश्च स्वगाढ़ाश्च वरोषिता ।

ये विदिक्षु विमिश्राश्च [1]विकर्मस्था विजातिषु ।
[2]प्रतिपुद्गलाश्च येषां तेषामुत्पातजं फलम् ॥30॥

जो विदिशाओ में अलग-अलग हो तथा विजाति—भिन्न-भिन्न जाति के वृक्षो मे विकर्मस्थ—जिनके कार्य पृथक्-पृथक् हो वे जनपद के लिए उत्पात सूचक होते हैं। प्रति पुद्गल का तात्पर्य उत्पात से होने वाले फल की सूचना देना है ॥30॥

श्वेतो [3]रसो द्विजान् हन्ति रक्तः क्षत्रनृपान् वदेत् ।
पीतो वैश्यविनाशाय कृष्णः शूद्रनिषूदये ॥31॥

यदि वृक्षो से श्वेत रस का क्षरण हो तो द्विज—ब्राह्मणो का विनाश, लाल रस क्षरित हो तो क्षत्रिय और राजाओ का विनाश, पीला रस क्षरित हो तो वैश्यो का विनाश और कृष्ण काला रस क्षरित हो तो शूद्रो का विनाश होता है ॥31॥

परचक्र नृपभय क्षुधाव्याधिधनक्षयम् ।
एवं लक्षणसंयुक्ता स्रावाः कुर्युर्महद्भयम् ॥32॥

यदि श्वेत, रक्त, पीत और कृष्ण वर्ण का मिश्रित रस क्षरित हो तो परशासन और नृपति का भय, क्षुधा, रोग, धन का नाश और महान् भय होता है ॥32॥

कीटदष्टस्य वृक्षस्य व्याधितस्य च यो रसः ।
विवर्णः स्रवते गन्ध न दोषाय स कल्पते ॥33॥

यदि कीडो द्वारा खाये गये रोगी वृक्ष का विकृत और दुर्गन्धित रस क्षरित होता है, तो उनका दोष नही माना जाता। अर्थात् रोगी वृक्ष के रस क्षरण का विचार नही किया जाता ॥33॥

वृद्धा द्रुमा [4]स्रवन्त्याशु मरणे पर्युपस्थिता. ।
ऊर्ध्वा. शुष्का भवन्त्येते तस्मात् ताल्लक्षयेद् बुध ॥34॥

मरण के लिए उपस्थित—जर्जरित टूटकर गिरने वाले पुराने वृक्ष ही रस का क्षरण करते हे। ऊपर की ओर ये सूखे होते हैं। अतएव बुद्धिमान् व्यक्तियो को इनका लक्ष्य करना चाहिए ॥34॥

यथा वृद्धो नरः कश्चित् प्राप्य हेतुं विनश्यति ।
तथा वृद्धो द्रुमः कश्चित् प्राप्य हेतुं विनश्यति ॥35॥

---

1. विकर्मसु मु० । 2. पुद्गलाश्च तु ये येषा ते तेषा प्रतिपुद्गला मु० । 3 राजा मु० । 4. निहन्त्याशु मु० ।

जैसे कोई वृद्ध पुरुष किसी निमित्त के मिलते ही मरण को प्राप्त हो जाता है, उसी प्रकार पुराना वृक्ष भी किसी निमित्त को प्राप्त होते ही विनाश को प्राप्त हो जाता है ॥35॥

इतरेतरयोगास्तु वृक्षादिवर्णनामभिः ।
वृद्धाबलोग्रमूलाश्च चलच्छैर्याश्च साधयेत् ॥36॥

वृद्ध पुरुष और पुराने वृक्ष का परस्पर मे इतरेतर—अन्योन्याश्रय सम्बन्ध है। अत. पुराने वृक्ष के उत्पातो से वृद्ध का फल तथा नवीन युवा वृक्षों से युवक और शिशुओ का उत्पात निमित्तक फल ज्ञात करना चाहिए तथा उल्कापात आदि के द्वारा भी निमित्तो का परिज्ञान करना चाहिए ।।36॥

हसने रोदने नृत्ये देवतानां प्रसर्पणे ।
महद्भयं विजानीयात् [1]षण्मासाद्द्विगुणात्परम् ॥37॥

देवताओ के हँसने, रोने, नृत्य करने और चलने से छह महीने से लेकर एक वर्ष तक जनपद के लिए महान् भय अवगत करना चाहिए ॥37॥

चित्राश्चर्यसुलिंगानि निमीलन्ति वदन्ति वा ।
ज्वलन्ति च विगन्धीनि भयं राजवधोद्भवम् ॥38॥

विचित्र, आश्चर्य कार्य चिह्न लुप्त हो या प्रकट हो और हिंगुट वृक्ष सहसा जलने लगे तो जनपद के लिए भय और राजा का मरण होता है ॥38॥

[2]तोयावहानि सहसा रुदन्ति च हसन्ति च ।
मार्जारवच्च वासन्ति तत्र विन्द्याद् महद्भयम् ॥39॥

तोयावहानि – नदियाँ सहसा रोती और हँसती हुई दिखलाई पड़ें तथा मार्जार- बिल्ली के समान गन्ध आती हो तो महान् भय समझना चाहिए ॥39॥

वादित्रशब्दाः श्रूयन्ते देशे यस्मिन्न मानुषै. ।
स देशो राजदण्डेन पीड्यते नात्र संशयः ॥40॥

जिस देश मे मनुष्य बिना किसी के बजाये भी बाजे की आवाज सुनते हैं, वह देश राजदण्ड से पीडित होता है, इसमे सन्देह नही है ॥40॥

तोयावहानि[3] सर्वाणि वहन्ति रुधिरं यदा ।
षष्ठे मासे समुद्भूते सङ्ग्राम. शोणिताकुलः ॥41॥

जिस देश मे नदियो मे रक्त की-सी धारा प्रवाहित होती है, उस देश मे इस

---

1 षण्मासाद्द्विगुणो परान् । 2 तोयधान्यानि मु० । 3 तोयधान्यानि मु० ।

घटना के छठे महीने में सग्राम होता है और पृथ्वी जल से प्लावित हो जाती है ॥41॥

चिरस्थायीनि तोयानि [1]पूर्वं यान्ति पयःक्षयम् ।
गच्छन्ति वा प्रतिस्रोत. परचक्रागमस्तदा ॥42॥

चिरस्थायी नदियो का जल जब पूर्ण क्षय हो जाय—सूख जाय अथवा विपरीत धारा प्रवाहित होने लगे तो परशासन का आगमन होता है ॥42॥

वर्धन्ते चापि शीर्यन्ते चलन्ति वा तदाश्रयात् ।
सशोणितानि दृश्यन्ते यत्र तत्र महद्भयम् ॥43॥

जहाँ नदियाँ बढती हो, विशीर्ण होती हो अथवा चलती हो और रक्त युक्त दिखलाई पडती हो, वहाँ महान् भय समझना चाहिए ॥43॥

शस्त्रकोषात् प्रधावन्ते नदन्ति विचरन्ति वा ।
यदा रुदन्ति दीप्यन्ते संग्रामस्तेषु निर्दिशेत् ॥44॥

जहाँ अस्त्र अपने कोश से बाहर निकलते हो, शब्द करते हो, विचरण करते हो, रोते हो और दीप्त—चमकते हो, वहाँ सग्राम की सूचना समझनी चाहिए ॥44॥

यानानि वृक्षवेश्मानि धूमायन्ति ज्वलन्ति वा ।
अकालज फल पुष्पं तत्र मुख्यो विनश्यति ॥45॥

जहाँ सवारी, वृक्ष और घर धूमायमान—धुआँ युक्त या जलते हुए दिखलाई पडे अथवा वृक्षो मे असमय मे फल, पुष्प उत्पन्न हो, मुख्य—प्रधान का नाश होता है ॥45॥

भवने यदि श्रूयन्ते गीतवादित्रनिस्वना. ।
यस्य तद्भवन तस्य शारीरं जायते भयम् ॥46॥

जिसके घर मे बिना किसी व्यक्ति के द्वारा गाये-बजाये जाने पर भी गीत, वादित्र का शब्द सुनाई पड़ता हो, उसके शारीरिक भय होता है ॥46॥

[2]पुष्प पुष्पे निबध्येत फलेन च यदा फलम् ।
वितथं च तदा विन्द्यात् महज्जनपदक्षयम् ॥47॥

---

1 तूर्णं मु० । 2 पुष्पे पुष्प फले पुष्प फले वा विफल यदा । वध्यते वितथ विन्द्यात्तथा जनपदे भयम् ॥ मु० ।

जब पुष्प मे पुष्प निबद्ध हो अर्थात् पुष्प मे पुष्प की-सी उत्पत्ति हो अथवा फल मे फल निबद्ध हो अर्थात् फल से फल की उत्पत्ति हुई हो तो सर्वत्र वितण्डावाद का प्रचार एव जनपद का महान् विनाश होता है ॥47॥

चतुःपदानां सर्वेषां मनुजानां यदाऽम्बरे ।
श्रूयते व्याहृतं घोर तदा मुख्यो विपद्यते ॥48॥

जब आकाश मे समस्त पशुओ और मनुष्यो का व्यवहार किया गया घोर शब्द सुनाई पडे तो मुखिया की मृत्यु होती है अथवा मुखिया विपत्ति को प्राप्त होता है ॥48॥

निर्घाते कम्पने भूमौ [1]शुष्कवृक्षप्ररोहणे ।
देशपीडां विजानीयान्मुख्यश्चात्र न जीवति ॥49॥

भूमि के अकारण निर्घातित और कम्पित होने तथा सूखे वृक्ष के पुन हरे हो जाने से देश को पीडा समझनी चाहिए तथा वहाँ के मुखिया की मृत्यु होती है ॥49॥

[2]यदा भूधरशृंगाणि निपतन्ति महीतले ।
तदा राष्ट्रभय विन्द्यात् भद्रबाहुवचो यथा ॥50॥

जब अकारण ही पर्वतो की चोटियाँ पृथ्वीतल पर आकर गिर जायँ, तब राष्ट्र भय समझना चाहिए, ऐसा भद्रबाहु स्वामी का वचन है ॥50॥

वल्मीकस्याशु जनने मनुजस्य निवेशने ।
अरण्यं विशतश्चैव तत्र विद्यान्महद्भयम् ॥51॥

मनुष्यो के निवास स्थान मे चीटियाँ जल्दी ही अपना बिल बनाये और नगरो से निकलकर जगन्न मे प्रवेश करें तो राष्ट्र के लिए महान् भय जानना चाहिए ॥51॥

महापिपीलिकावृन्दं सन्द्रकाभृत्यविप्लुतम् ।
तत्र तत्र च सर्वं तद्राष्ट्रभङ्गस्य चाविशेत् ॥52॥

जहाँ-जहाँ अत्यधिक चीटियाँ एकत्रित होकर झुण्ड-के-झुण्ड बनाकर भाग रही हो, वहाँ-वहाँ सर्वत्र राष्ट्र भग का निर्देश समझना चाहिए ॥52॥

---

1 शुक्ल मु० । 2 स्थिरां भूमि प्रयातस्य यदा सुव्रवता व्रजेत् । निमज्जन्ति च चक्राणि तस्य विन्द्यात् महद्भयम् ॥ मु० ।

महापिपीलिकाराशिर्विस्फुरन्ती विपद्यते ।
उह्यानुत्तिष्ठते यत्र तत्र विन्द्यान्महद्भयम् ॥53॥

जहाँ अत्यधिक चीटियो का समूह विस्फुरित—काँपते हुए मृत्यु को प्राप्त हो और उह्य—क्षत-विक्षत—घायल होकर स्थित हो, वहाँ महान् भय होता है ॥53॥

श्वश्वत्पिपीलिकावृन्दं निम्नमूर्ध्वं विसर्पति ।
वर्षं तत्र विजानीयाद्भद्रबाहुवचो यथा ॥54॥

जहाँ चीटियाँ रूप बदल कर—पख वाली होकर नीचे से ऊपर को जाती है, वहाँ वर्षा होती है, ऐसा भद्रबाहु स्वामी का वचन है ॥54॥

राजोपकरणे भग्ने चलिते पतितेऽपि वा ।
क्रव्यादसेवने चैव राजपीडा समादिशेत् ॥55॥

राजा के उपकरण—छत्र, चमर, मुकुट आदि के भग्न होने, चलित होने या गिरने से तथा मासाहारी के द्वारा सेवा करने से राजा पीडा को प्राप्त होता है ॥55॥

वाजिवारणयानानां मरणे छेदने द्रुते ।
परचक्रागमात् विन्द्यादुत्पातज्ञो जितेन्द्रियः ॥56॥

घोडा, हाथी आदि सवारियो के अचानक मरण, घायल या छेदन होने से जितेन्द्रिय उत्पात शास्त्र के जानने वाले को परशासन का आगमन जानना चाहिए ॥56॥

क्षत्रियाः पुष्पितेऽश्वत्थे ब्राह्मणाश्चाप्युदुम्बरे ।
वैश्याः प्लक्षेऽथ पीड्यन्ते न्यग्रोधे शूद्रदस्यवः ॥57॥

असमय मे पीपल के पेड के पुष्पित होने से ब्राह्मणो को, उदुम्बर के वृक्ष के पुष्पित होने से क्षत्रियों को, पाकर वृक्ष के पुष्पित होने से वैश्यो को और वट वृक्ष के पुष्पित होने से शूद्रो को पीडा होती है ॥57॥

इन्द्रायुध निशिश्वेतं विप्रान् रक्तं च क्षत्रियान् ।
निहन्ति पीतकं वैश्यान् कृष्णं शूद्रभयंकरम् ॥58॥

रात्रि मे इन्द्रधनुष यदि श्वेत रग का हो तो ब्राह्मणो को, लाल रग का हो तो क्षत्रियो को, पीले रग का हो तो वैश्यो को और काले रग का हो तो शूद्रो को भयदायक होता है ॥58॥

भज्यते नश्यते तत्तु कम्पते शीर्यते जलम् ।
चतुर्मासं परं राजा म्रियते भज्यते तदा ॥59॥

यदि इन्द्रधनुष भग्न होता हो, नष्ट होता हो, काँपता हो और जल की वर्षा करता हो तो राजा चार महीने के उपरान्त मृत्यु को प्राप्त होता है, या आघात को प्राप्त होता है ॥59॥

[1]पितामहर्षयः सर्वे सोमं च क्षतसंयुतम् ।
त्रैमासिकं विजानीयादुत्पातं ब्राह्मणेषु [2]वै ॥60॥

पिता, महर्षि तथा चन्द्रमा यदि क्षत-विक्षत दिखलाई पड़े तो निश्चय से ब्राह्मणो मे त्रैमासिक उत्पात होता है ॥60॥

रूक्षा विवर्णा विकृता यदा सन्ध्या भयानका ।
मारीं कुर्युः सुविकृतां पक्षत्रिपक्षकं भयम् ॥61॥

यदि सन्ध्या रूक्ष, विकृत और विवर्ण हो तो नाना प्रकार के विकार और मरण को करने वाली होती है तथा एक पक्ष या तीन पक्ष मे भय की प्राप्ति भी होती है ॥61॥

[3]यदि वैश्रवणे कश्चिदुत्पातं समुदीरयेत् ।
राजनश्च सचिवाश्च पञ्चमासान् स पीडयेत् ॥62॥

यदि गमन समय मे—राजा को युद्ध के लिए प्रस्थान करते समय कोई उत्पात दिखलाई पड़े तो राजा और मन्त्री को पाँच महीने तक कष्ट होता है ॥62॥

यदोत्पातोऽयमेकश्चिद् दृश्यते विकृतः क्वचित् ।
तदा व्याधिश्च मारी च चतुर्मासात् परं भवेत् ॥63॥

यदि कही कोई विकृत उत्पात दिखलाई पड़े तो इस उत्पात-दर्शन के चार महीने के उपरान्त व्याधि और मरण होता है ॥63॥

यदा चन्द्रे वरुणे वोत्पातः कश्चिदुदीर्यते ।
मारकः सिन्धु-सौवीर-सुराष्ट्र-वत्सभूमिषु ॥64॥
भोजनेषु[4] भयं विन्द्यात् पूर्वे च म्रियते नृपः ।
पञ्चमासात् परं विन्द्याद् भयं घोरमुपस्थितम् ॥65॥

1 पितामहेषु सर्वेषु धर्मवेन्द्रकृत अलम् । 2 तम् मु० । 3 यदा वैश्रवणे गमने कश्चिदुत्पात. समुदीर्यते । 4. भोजेषु च मु० ।

यदि चन्द्रमा या वरुण मे कोई उत्पात दिखलाई पडे तो सिन्धु देश, सौवीर देश, सौराष्ट्र—गुजरात और वत्सभूमि मे मरण होता है। भोजन सामग्री मे भय रहता है और राजा का मरण पूर्व मे ही हो जाता है। पाँच महीने के उपरान्त वहाँ घोर भय का सचार होता है अर्थात् भय व्याप्त होता है ।।64-65।।

रुद्रे च वरुणे कश्चिदुत्पातः समुदीर्यते।
सप्तपक्षं भय विन्द्याद् ब्राह्मणानां न सशय. ।।66।।

शिवजी और वरुणदेव की प्रतिमा मे यदि किसी भी प्रकार का उत्पात दिखलाई पडे तो वहाँ ब्राह्मणो के लिए सात पक्ष अर्थात् तीन महीना पन्द्रह दिन का भय समझना चाहिए, इसमे किसी भी प्रकार का सन्देह नही है ।।66।।

इन्द्रस्य प्रतिमायां तु यद्युत्पातः प्रदृश्यते।
संग्रामे त्रिषु मासेषु राज्ञ· सेनापतेर्वध ।।67।।

यदि इन्द्र की प्रतिमा मे कोई भी उत्पात दिखलाई पडे तो तीन महीने मे सग्राम होता है और राजा या सेनापति का वध होता है ।।67।।

यद्युत्पातो बलन्देवे तस्योपकरणेषु च।
महाराष्ट्रान् महायोद्धान् सप्तमासान् प्रपीडयेत् ।।68।।

यदि बलदेव की प्रतिमा या उसके उपकरणो—छत्र, चमर आदि मे किसी भी प्रकार का उत्पात दिखलाई पडे तो सात महीनो तक महाराष्ट्र के महान् योद्धाओ को पीड़ा होती है ।।68।।

वासुदेवे यद्युत्पातस्तस्योपकरणेषु च।
चक्रारूढा प्रजा ज्ञेयाश्चतुर्मासान् वधो नृपे ।।69।।

वासुदेव की प्रतिमा उसके उपकरणो मे किसी भी प्रकार का उत्पात दिखलाई पडे तो प्रजा चक्रारूढ—षड्यन्त्र मे तल्लीन रहती है और चार महीनो मे राजा का वध होता है ।।69।।

प्रद्युम्ने वाऽथ उत्पातो गणिकानां भयावह।
[1]कुशीलानां च द्रष्टव्यं भयं चेद्वाऽष्टमासिकम् ।।70।।

प्रद्युम्न की मूर्ति मे किसी प्रकार का उत्पात दिखलाई पडे तो वेश्याओ के लिए अत्यन्त भय कारक होता है और कुशील व्यक्ति के लिए आठ महीनो तक भय बना रहता है ।।70।।

1 विशालायां मु०।

यदार्यप्रतिमायां तु किञ्चिद्‌वुत्पातज भवेत् ।
चौरा मासा त्रिपक्षाद्वा विलीयन्ते [1]रुदन्ति वा ॥71॥

यदि सूर्य की प्रतिमा मे कुछ उत्पात हो तो एक महीने या तीन पक्ष – डेढ महीने मे चोर विलीन हो जाते—नष्ट हो जाते हैं या विलाप करते हुए दु ख को प्राप्त होते हैं ॥71॥

यद्युत्पातः श्रियाः कश्चित् त्रिमासात् कुरुते फलम् ।
वणिजां पुष्पबीजानां वनितालेख्यजीविनाम् ॥72॥

यदि लक्ष्मी की मूर्त्ति मे उत्पात हो तो इस उत्पात का फल तीन महीने मे प्राप्त होता है और वैश्य – व्यापारी वर्ग, पुष्प, बीज और लिखकर आजीविका करने वालो की स्त्रियो को कष्ट होता है ॥72॥

वीरस्थाने श्मशाने च यद्युत्पात समीर्यते ।
चतुर्मासान् क्षुधामारी पीडयन्ते च यतस्ततः ॥73॥

वीरभूमि या श्मशानभूमि मे यदि उत्पात दिखलाई पडे तो चार महीने तक क्षुधामारी—भुखमरी से इधर-उधर की समस्त जनता पीडित होती है ॥73॥

यद्युत्पाताः प्रदृश्यन्ते विश्वकर्माणमाश्रिताः ।
पीड्यन्ते शिल्पिनः सर्वे पञ्चमासात्परं भयम् ॥74॥

यदि विश्वकर्मा मे किसी भी प्रकार का उत्पात दिखलाई पडे तो सभी शिल्पियो को पीडा होती है और इस उत्पात के पाँच महीने के उपरान्त भय होता है ॥74॥

[2]भद्रकाली विकुर्वन्ती स्त्रियो हन्तीह सुव्रताः ।
आत्मान वृत्तिनो ये च षण्मासात् पीडयेत् प्रजाम् ॥75॥

यदि भद्रकाली की प्रतिमा मे विकार—उत्पात हो तो सुव्रता स्त्रियो का नाश होता है और इस उत्पात के छ महीने पश्चात् प्रजा को पीडा होती है ॥75॥

इन्द्राण्या. समुत्पात. कुमार्यः परिपीडयेत् ।
त्रिपक्षादक्षिरोगेण कुक्षिकर्णशिरोज्वरैः ॥76॥

यदि इन्द्राणी की मूर्त्ति मे उत्पात हो तो कुमारियो को तीन पक्ष—डेढ महीने के उपरान्त नेत्ररोग, कुक्षिरोग, कर्णरोग, शिररोग और ज्वर की पीड़ा से पीड़ित होना पडता है—कष्ट होता है ॥76॥

---

1 रजन्ति मु० । 2 व्रतनिश्चये मु० । 3 भद्रष्टाली मु० ।

धन्वन्तरे समुत्पातो वैद्यानां स भयंकरः ।
षाण्मासिकविकारांश्च रोगजान् जनयेन्नृणाम् ॥77॥

धन्वन्तरि की प्रतिमा मे उत्पात हो तो वैद्य को अत्यन्त भयकर उत्पात होता है और छ: महीने तक मनुष्यो को विकार और रोग उत्पन्न होते हैं ॥77॥

जामदग्न्ये यदा रामे विकार. कश्चिदीर्यते ।
तापसांश्च तपाढ्यांश्च त्रिपक्षेण जिघांसति ॥78॥

परशुराम या रामचन्द्र की प्रतिमा मे विकार दिखलाई पडे तो तपस्वी और तप आरम्भ करने वालो का तीन पक्ष मे विनाश होता है ॥78॥

पञ्चविंशतिरात्रेण कबन्ध यदि दृश्यते ।
सन्ध्यायां भयमाख्याति महापुरुषविद्रवम् ॥79॥

यदि सन्ध्या काल मे कबन्ध धड दिखलाई पडे तो पच्चीस रात्रियो तक भय रहता है तथा किसी महापुरुष का विद्रवण-विनाश होता है ॥79॥

सुलसायां यदोत्पात: षण्मासं सर्पजीविन: ।
पीडयेद् गरुडे यस्य वासुकास्तिकभक्तिषु ॥80॥

यदि सुलसा की मूर्ति मे उत्पात दिखलाई पडे तो सर्पजीवियो—सपहरो आदि के छ. महीनो तक पीड़ा होती है और गरुड की मूर्ति मे उत्पात दिखलाई पडे तो वासुकी मे श्रद्धाभाव और भक्ति करने वालो को कष्ट होता है ॥80॥

भूतेषु य: समुत्पात. [1]सदैव परिचारिका. ।
मासेन पीडयेत्तूर्णं निर्ग्रन्थवचनं यथा ॥81॥

भूतो की मूर्ति मे उत्पात दिखलाई पडे तो परिचारिकाओ - दासियो को सदा पीडा होती है और इस उत्पात-दर्शन के एक महीने तक अधिक पीडा रहती है, ऐसा निर्ग्रन्थ गुरुओ का वचन है ॥81॥

अर्हत्सु वरुणे रुद्रे ग्रहे शुक्रे नृपे भवेत् ।
पञ्चालगुरुशुक्रेषु पावकेषु पुरोहिते ॥82॥
वालेऽग्नौ वासुभद्रे च विश्वकर्मप्रजापतौ ।
सर्वस्य तद् विजानीयात् वक्ष्ये सामान्यज फलम् ॥83॥

अर्हन्त प्रतिमा, वरुणप्रतिमा, रुद्रप्रतिमा, सूर्यादिग्रहो की प्रतिमाओ, शुक्र-प्रतिमा, द्रोणप्रतिमा, इन्द्रप्रतिमा, अग्निपुरोहित, वायु, अग्नि, समुद्र, विश्वकर्मा,

1 सदेवपरिवारिक मु० ।

प्रजापति की प्रतिमाओ के विकार उत्पात का फल सामान्य ही अवगत करना चाहिए ।।82-83।।

चन्द्रस्य वरुणस्यापि रुद्रस्य च वधूषु च ।
[1]समाहारे यदोत्पातो राजाग्रमहिषीभयम् ।।84।।

चन्द्रमा, वरुण, शिव और पार्वती की प्रतिमाओ मे उत्पात हो तो राजा की पट्टरानी को भय होता है ।।84।।

कामजस्य[2] यदा भार्या या चान्या: केवला: स्त्रिय: ।
कुर्वन्ति किञ्चिद् विकृत प्रधानस्त्रीषु तद्भयम् ।।85।।

यदि कामदेव की स्त्री रति की प्रतिमा अथवा किसी भी स्त्री की प्रतिमा मे उत्पात दिखलाई पडे तो प्रधान स्त्रियो मे भय का सचार होता है ।।85।।

एवं देशे च जातौ च कुले पाखण्डिभिक्षुषु ।
तज्जातिप्रतिरूपेण स्वै: स्वैर्देवै: शुभं वदेत् ।।86।।

इस प्रकार जाति, देश कुल और धर्म की उपासना आदि के अनुसार अपने-अपने आराध्य देव की प्रतिमा के विकार-उत्पात से अपना-अपना शुभाशुभ फल ज्ञात करना चाहिए ।।86।।

उद्गच्छमान सविता पूर्वतो विकृतो यदा ।
स्थावरस्य विनाशाय पृष्ठतो यायिनाशन: ।।87।।

यदि उदय होता हुआ सूर्य पूर्व दिशा मे—सम्मुख विकृत उत्पात युक्त दिखलाई पडे तो स्थावर—निवासी राजा के और पीछे की ओर विकृत दिखलाई पडे तो यायी—आक्रामक राजा के विनाश का सूचक होता है ।।87।।

हेमवर्ण: सुतोयाय मधुवर्णो भयंकर: ।
शुक्ले च सूर्यवर्णेऽस्मिन् सुभिक्षं क्षेममेव च ।।88।।

यदि उदयकालीन सूर्य स्वर्ण वर्ण का हो तो जल की वर्षा, मधु वर्ण का हो तो लाभप्रद और शुक्ल वर्ण का हो तो सुभिक्ष और कल्याण की सूचना देता है ।।88।।

हेमन्ते शिशिरे रक्त: पीतो ग्रीष्मवसन्तयो: ।
वर्षासु शरदि शुक्लो विपरीतो भयंकर: ।।89।।

हेमन्त और शिशिर ऋतु मे लाल वर्ण, ग्रीष्म और वसन्त ऋतु मे पीत एव

1 स महाराजसूत्पातो राजाग्रमहिषीषु च । 2 एका यस्य मु० ।

वर्षा और शरद् मे शुक्ल वर्ण का सूर्य शुभप्रद है, इन वर्णों से विपरीत वर्ण हो तो भयप्रद है ॥89॥

दक्षिणे चन्द्रशृंगे तु यदा तिष्ठति भार्गवः ।
[1]अभ्युद्गतं तदा राजा बलं हन्यात् सपार्थिवम् ॥90॥

यदि चन्द्रमा के उदय काल मे चन्द्रमा के दक्षिण शृंग पर शुक्र हो तो ससैन्य राजा का विनाश होता है ॥90॥

चन्द्रशृंगे यदा भौमो[2] विकृतस्तिष्ठतेतराम् ।
[3]भृश प्रजा विपद्यन्ते कुरवः पार्थिवाश्चला ॥91॥

यदि चन्द्रशृंग पर विकृत मगल स्थित हो तो प्रजा को अत्यन्त कष्ट होता है और पुरोहित एव राजा चचल हो जाते है ॥91॥

शनैश्चरो यदा सौम्यशृंगे पर्युपतिष्ठति ।
तदा वृष्टिभयं घोरं दुर्भिक्षं प्रकरोति च ॥92॥

यदि चन्द्रशृंग पर शनैश्चर हो तो वर्षा का भय होता है और भयकर दुर्भिक्ष होता है ॥92॥

भिनत्ति सोमं मध्येन ग्रहेष्वन्यतमो यदा ।
तदा राजभयं विन्द्यात् प्रजाक्षोभ च दारुणम् ॥93॥

जब कोई भी ग्रह चन्द्रमा के मध्य से भेदन करता है तो राजभय होता है और प्रजा को दारुण क्षोभ होता है ॥93॥

राहुणा गृह्यते चन्द्रो यस्य नक्षत्रजन्मनि ।
रोगं मृत्युभयं वाऽपि तस्य कुर्यान्न संशय ॥94॥

जिस व्यक्ति के जन्म नक्षत्र पर राहु चन्द्रमा का ग्रहण करे—चन्द्रग्रहण हो तो रोग और मृत्यु भय निस्सन्देह होता है ॥94॥

क्रूरग्रहयुतश्चन्द्रो गृह्यते दृश्यतेऽपि वा ।
यदा क्षुभ्यन्ति सामन्ता राजा राष्ट्र च पीड्यते ॥95॥

क्रूरग्रह युक्त चन्द्रमा राहु के द्वारा ग्रहीत या दृष्ट हो तो राजा और सामन्त क्षुब्ध होते है और राष्ट्र को पीडा होती है ॥95॥

1. अभ्युत्कृत मु० । 2. भौमस्तिष्ठते विकृतो भृशम् मु० । 3 प्रजास्तत्र मु ।०

लिखेत सोमः [1]शृंगेन भौमं शुक्रं गुरुं यथा।
शनैश्चरं चाधिकृतं षड्भयानि तदा दिशेत् ॥96॥

चन्द्रशृंग के द्वारा मगल, शुक्र और गुरु का स्पर्श हो तथा शनैश्चर आधीन किया जा रहा हो तो छ प्रकार के भय होते हैं ॥96॥

यदा बृहस्पति शुक्र भिद्येदथ विशेषत·।
पुरोहितास्तदाऽमात्याः प्राप्नुवन्ति महद्भयम् ॥97॥

यदि बृहस्पति—गुरु, शुक्र का भेदन करे तो विशेष रूप से पुरोहित और मन्त्री महान् भय को प्राप्त होते हैं ॥97॥

ग्रहाः परस्परं यत्र भिन्दन्ति प्रविशन्ति वा।
तत्र शस्त्रवाणिज्यानि विन्द्यादर्थविपर्ययम् ॥98॥

यदि ग्रह परस्पर मे भेदन करें अथवा प्रवेश को प्राप्त हो तो शस्त्र का अर्थ-विपर्यय—विपरीत हो जाता है अर्थात् वहाँ युद्ध होते है ॥98॥

श्वतो गृहमन्यं श्वेतं प्रविशेत लिखेत् तदा।
ब्राह्मणानां मिथो भेदं मिथ पीडां विनिर्दिशेत् ॥99॥

यदि श्वेत वर्ण का ग्रह—चन्द्रमा, शुक्र श्वेत वर्ण के ग्रहो का स्पर्श और प्रवेश करे तो ब्राह्मणो मे परस्पर मतभेद होता है तथा परस्पर मे पीडा को भी प्राप्त होते है ॥99॥

एवं शेषेषु वर्णेषु स्ववर्णेश्चारयेद् ग्रहः।
वर्णत· स्वभयानि स्युस्तद्युतान्युपलक्षयेत् ॥100॥

इसी प्रकार रक्त वर्ण के ग्रह रक्त वर्ण ग्रहो का स्पर्श और प्रवेश करें तो क्षत्रियो को, पीत वर्ण के ग्रह पीत वर्ण के ग्रहो का स्पर्श और प्रवेश करें तो वैश्यो को एव कृष्ण वर्ण के ग्रह कृष्ण वर्ण के ग्रहो का स्पर्श और प्रवेश करें तो शूद्रो को भय, पीडा या उनमे परस्पर मतभेद होता है। ज्योतिषशास्त्र मे सूर्य को रक्तवर्ण, चन्द्रमा को श्वेतवर्ण, मगल को रक्तवर्ण, बुध को श्यामवर्ण, गुरु को पीतवर्ण, शुक्र को श्यामगौर वर्ण, शनि को कृष्णवर्ण, राहु को कृष्णवर्ण और केतु को कृष्णवर्ण माना गया है ॥100॥

श्वेतो ग्रहो यदा पीतो रक्तकृष्णोऽथवा भवेत्।
सवर्णविजयं कुर्यात् यथास्वं वर्णसंकरम् ॥101॥

---

1 शृंगिणाम् मु०।

यदि श्वेतग्रह पीत, रक्त अथवा कृष्ण हो तो जाति के वर्णानुसार विजय प्राप्त कराता है अर्थात् रक्त होने पर क्षत्रियो की, पीत होने पर वैश्यों की और कृष्ण-वर्ण होने पर शूद्रो की विजय होती है। मिश्रितवर्ण होने से वर्णसकरो की विजय होती है ॥101॥

उत्पाता विविधा ये तु ग्रहाऽघाताश्च दारुणाः।
उत्तरा: सर्वभूतानां दक्षिणा [1]मृगपक्षिणाम् ॥102॥

अनेक प्रकार के उत्पात होते है, इनमे ग्रहघात —ग्रहयुद्ध उत्पात अत्यन्त दारुण हैं। उत्तर दिशा का ग्रहघात समस्त प्राणियो को कष्टप्रद होता है और दक्षिण का ग्रहघात केवल पशु-पक्षियो को कष्ट देता है ॥102॥

करंकं शोणितं मांस विद्युतश्च भयं वदेत्।
दुर्भिक्षं जनमारिं च शीघ्रमाख्यान्त्युपस्थितम् ॥103॥

अस्थिपजर, रक्त, मास और बिजली का उत्पात भय की सूचना देता है तथा जहाँ यह उत्पात हो वहाँ दुर्भिक्ष और जनमारी शीघ्र ही फैल जाती है ॥103॥

शब्देन महता भूमिर्यदा रसति कम्पते।
सेनापतिरमात्यश्च राजा राष्ट्रं च पीड्यते ॥104॥

अकारण भयकर शब्द के द्वारा जब पृथ्वी काँपने लगे तथा सर्वत्र शोर-गुल व्याप्त हो जाय तो सेनापति, मन्त्री, राजा और राष्ट्र को पीडा होती है ॥104॥

फले फलं यदा किंचित् पुष्पे पुष्प च दृश्यते।
गर्भा: पतन्ति नारीणां युवराजा च वध्यते ॥105॥

यदि फल मे फल और पुष्प मे पुष्प दिखलाई पडे तो स्त्रियो के गर्भ गिर जाते हैं तथा युवराज का वध होता है ॥105॥

नर्तनं जल्पनं हासमुत्कीलननिमीलने।
[2]देवाः यत्र प्रकुर्वन्ति तत्र विन्द्यान्महद्भयम् ॥106॥

जहाँ देवो द्वारा नाचना, बोलना, हँसना, कीलना और पलक झपकना आदि क्रियाएँ की जायँ, वहाँ अत्यन्त भय होता है ॥106॥

पिशाचा यत्र दृश्यन्ते देशेषु नगरेषु वा।
अन्यराजो भवेत्तत्र प्रजानां च महद्भयम् ॥107॥

1 मृगभृगिणाम् मु०। 2. दिवा मु०।

जहाँ देश और नगरों में पिशाच दिखलाई पड़ें वहाँ अन्य व्यक्ति राजा होता है तथा प्रजा को अत्यन्त भय होता है ।।107।।

भूमिर्यत्र नभो याति विशति वसुधाजलम् ।
दृश्यन्ते वाऽम्बरे देवास्तदा राजवधो ध्रुवम् ।।108।।

जहाँ पृथ्वी आकाश की ओर जाती हुई मालूम हो अथवा पाताल में प्रविष्ट होती हुई दिखलाई पड़े और आकाश में देव दिखलाई पड़ें तो वहाँ राजा का वध निश्चयतः होता है ।।108।।

धूमज्वालां रजो भस्म यदा मुञ्चन्ति देवताः ।
तदा तु म्रियते राजा मूलतस्तु जनक्षयः ।।109।।

यदि देव धूम, ज्वाला, धूलि और भस्म—राख की वर्षा करें तो राजा का मरण होता है तथा मूलरूप से मनुष्यों का भी विनाश होता है ।।109।।

[1]अस्थिमांसै पशूनां च भस्मनां निचयैरपि ।
जनक्षयाः प्रभूतास्तु विकृते वा नृपवधः ।।110।।

यदि पशुओ की हड्डियाँ और मास तथा भस्म का समूह आकाश से बरसे तो अधिक मनुष्यो का विनाश होता है। अथवा उक्त वस्तुओ मे विकार—उत्पात होने पर राजा का वध होता है ।।110।।

विकृताकृति-संस्थाना जायन्ते यत्र मानवाः ।
तत्र राजवधो ज्ञेयो विकृतेन सुखेन वा ।।111।।

जहाँ मनुष्य विकृत आकार वाले और विचित्र दिखलाई पड़ें वहाँ राजा का वध होता है अथवा विकृत दिखलाई पड़ने मे सुख क्षीण होता है ।।111।।

वधः सेनापतेश्चापि भयं दुर्भिक्षमेव च ।
अग्नेर्वा ह्यथवा वृष्टिस्तदा स्यान्नात्र संशयः ।।112।।

यदि आकाश से अग्नि की वर्षा हो तो सेनापति का वध, भय और दुर्भिक्ष आदि फल घटित होते हैं, इसमे सन्देह नही है ।।112।।

द्वारं शस्त्रगृहं वेश्म राज्ञो देवगृहं तथा ।
धूमायन्ते यदा राज्ञस्तदा मरणमादिशेत् ।।113।।

देवमन्दिर या राजा के महल के द्वार, शस्त्रागार, दालान या बरामदे मे धुआँ दिखलाई पडे तो राजा का मरण होता है ।।113।।

---

1 मृगपक्षिपशूनां च भावणे ज्वलने गमे मु० ।

परिघार्गला कपाट द्वारं रुन्धन्ति वा स्वयम्।
पुररोधस्तदा विन्द्यान्नैगमानां महद्भयम् ॥114॥

यदि स्वय ही बिना किसी के बन्द किये वेडा, साँकल और द्वार के किवाड बन्द हो जायँ तो पुरोहित और वेद के व्याख्याताओ को महान् भय होता है ॥114॥

यदा द्वारेण नगर शिवा प्रविशते दिवा।
वास्यमाना विकृता वा तदा राजवधो ध्रुवम् ॥115॥

यदि दिन मे सियारिन—गीदडी नगर के द्वार से विकृत या सिक्त होकर प्रविष्ट हो तो राजा का वध होता है ॥115॥

अन्तःपुरेषु द्वारेषु विष्णुमित्रे तथा पुरे।
अट्टालकेऽथ हट्टेषु मधु लोनं विनाशयेत् ॥116॥

यदि मियारिन अन्त पुर, द्वार, नगर, तीर्थ, अट्टालिका और बाजार मे प्रवेश करे तो सुख का विनाश करती है ॥116॥

धूमकेतुहतं मार्गं शुक्रश्चरति वै यदा।
तदा तु सप्तवर्षाणि महान्तमनयं वदेत् ॥117॥

यदि शुक्र धूमकेतु द्वारा आक्रान्त मार्ग मे गमन करे तो मात वर्षों तक महान् अन्याय-अकल्याण होता रहता है ॥117॥

गुरुणा प्रहतं मार्गं यदा भौम. प्रपद्यते।
भयं तु सार्वजनिकं करोति बहुधा नृणाम् ॥118॥

यदि बृहस्पति के द्वारा प्रताडित मार्ग मे मगल गमन करे तो सार्वजनिक भय होता है तथा अधिकतर मनुष्यो को भय होता है ॥118॥

भौमेनापि हतं मार्गं यदा सौरि प्रपद्यते।
तदाऽपि शूद्रचौराणामनयं कुरुते नृणाम् ॥119॥

मगल के द्वारा प्रताडित मार्ग मे शनैश्चर गमन करे तो शूद्र और चोरों का अकल्याण होता है ॥119॥

सौरेण तु हतं मार्गं [1]वाचस्पतिः प्रपद्यते।
भयं सर्वजनानां तु करोति बहुधा तदा ॥120॥

---

1 वाचस्स मु०।

यदि शनैश्चर के द्वारा प्रताडित मार्ग मे बृहस्पति गमन करे तो सभी मनुष्यों को भय होता है ॥120॥

राजदीपो निपतते भ्रश्यतेऽधः कदाचन।
षण्मासात् पंचमासाद्वा नृपमन्यं निवेदयेत् ॥121॥

यदि राजा का दीपक अकारण नीचे गिर जाय तो छ महीने या पाँच महीने मे अन्य राजा होने का निर्देश समझना चाहिए ॥121॥

[1]हसन्ति यत्र निर्जीवा. धावन्ति प्रवदन्ति च।
जातमात्रस्य तु शिशोः सुमहद्भयमादिशेत् ॥122॥

जहाँ निर्जीव—जड पदार्थ हँसते हो, दौडते हो और बातें करते हो वहाँ उत्पन्न हुए समस्त बच्चो को महान् भय का निर्देश समझना चाहिए ॥122॥

निवर्तते यदा छाया [2]परितो वा [3]जलाशयान्।
प्रदृश्यते च दैत्यानां सुमहद्भय[4]मादिशेत् ॥123॥

यदि जलाशय—तालाब, नदी आदि के चारो ओर से छाया लौटती हुई दिखलाई पडे तो दैत्यो के महान् भय का निर्देश समझना चाहिए ॥123॥

अद्वारे द्वारकरणं कृतस्य च विनाशनम्।
हृतस्य ग्रहणं वाऽपि तदा ह्युत्पातलक्षणम् ॥124॥

अद्वार मे —जहाँ द्वार करने योग्य न हो वहाँ द्वार करना, किये हुए कार्य का विनाश करना और नष्ट वस्तु को ग्रहण करना उत्पात का लक्षण है ॥124॥

[5]यजनोच्छेदनं यस्य ज्वलितांगमथाऽपि वा।
स्पन्दते वा स्थिरं किंचित् कुलहानिं तदाऽऽदिशेत् ॥125॥

यदि किसी के यजन—पूजा, प्रतिष्ठा, यज्ञादि का स्वयमेव उच्छेद—विनाश हो अथवा अग प्रज्वलित होते हो अथवा स्थिर वस्तु मे चचलता उत्पन्न हो जाय तो कुलहानि समझनी चाहिए ॥125॥

दैवज्ञा भिक्षव. प्राज्ञाः साधवश्च पृथग्विधाः।
परित्यजन्ति तं देशं ध्रुवमन्यत्र शोभनम् ॥126॥

दैवज्ञ—ज्योतिषियो, भिक्षुओ, मनीषियो और साधुओ को विभिन्न प्रकार के उत्पात होने वाले देश को छोडकर अन्यत्र निवास करना ही श्रेष्ठ होता है ॥126॥

---

1 निर्जीवाभाषणे हासे जलरोधे प्रधावने मु०। 2 परिग्रस्ता मु०। 3 जलाश्रयात् मु०। 4 लक्षणम् मु०। 5. यजने छादन यस्य मु०।

युद्धानि कलहा बाधा विरोधाऽरिविवृद्धयः ।
अभीक्ष्णं यत्र वर्तन्ते देशं परिवर्जयेत् ॥127॥

युद्ध, कलह, बाधा, विरोध एवं शत्रुओं की वृद्धि जिस देश में निरन्तर हो उस देश का त्याग कर देना चाहिए ॥127॥

विपरीता यदा छाया दृश्यन्ते वृक्ष-वेश्मनि ।
यदा ग्रामे पुरे वाऽपि प्रधानवधमादिशेत् ॥128॥

ग्राम और नगर में जब वृक्ष और घर की छाया विपरीत—जिस समय पूर्व में छाया रहती हो, उस समय पश्चिम में और जब पश्चिम में रहती हो तब पूर्व में हो तो प्रधान का वध होता है ॥128॥

महावृक्षो यदा शाखामुत्करां मुञ्चते द्रुतम् ।
भोजकस्य वध विन्द्यात् सर्पाणां वधमादिशेत् ॥129॥

महावृक्ष जब अकारण ही अपनी शाखा को शीघ्र ही गिराता है तो भोजक—सपेरों का वध होता है तथा सर्पों का भी वध होता है ॥129॥

पांशुवृष्टिस्तथोल्का च निर्घाताश्च सुदारुणा ।
यदा पतन्ति युगपद् घ्नन्ति राष्ट्रं सनायकम् ॥130॥

धूलि की वर्षा, उल्कापात, भयंकर कड़क—विद्युत्पात एक साथ हों तो राष्ट्रनायक का विनाश होता है ॥130॥

रसाश्च विरसा यत्र नायकस्य च दूषणम् ।
तुलामानस्य हसनं राष्ट्रनाशाय तद्भवेत् ॥131॥

जब अकारण ही रस-विरस—विकृत रस वाले हों तो नायक में दोष लगता है तथा तराजू के हँसने से राष्ट्र का नाश होता है ॥131॥

शुक्लप्रतिपदि चन्द्रे सम भवति मण्डलम् ।
भयंकर तदा तस्य नृपस्याथ न संशयः ॥132॥

यदि शुक्ल प्रतिपदा को चन्द्रमा के दोनों शृंग समान दिखलाई पड़े—समान मण्डल हो तो निस्सन्देह राजा के लिए भय करने वाला होता है ॥132॥

समाभ्यां यदि शृंगाभ्यां यदा दृश्येत चन्द्रमाः ।
धान्यं भवेत् तदा न्यूनं मन्दवृष्टिं विनिर्दिशेत् ॥133॥

यदि इसी दिन दोनों शृंग समान दिखलाई पड़ें तो अन्न की उपज कम होती है और वृष्टि भी कम होती है। यहाँ विशेषता यह है कि आषाढ़ शुक्ला प्रतिपदा

को चन्द्रमा के शृंगो का अवलोकन करना चाहिए ।।133।।

वामशृंगं यदा वा स्यादुन्नतं[1] दृश्यते भृशम् ।
तदा सृजति लोकस्य दारुणत्व न संशय: ।।134।।

यदि चन्द्रमा का बायाँ शृंग उन्नत मालूम हो तो लोक में दारुण भय का सचार होता है, इसमे सशय नही है ।।134।।

ऊर्ध्वस्थितं नृणां पापं तिर्यक्स्थं राजमन्त्रिणाम् ।
अधोगतं च वसुधां सर्वां हन्यादसंशयम् ।।135।।

ऊर्ध्वस्थित चन्द्रमा मनुष्यो के पाप का, तिर्यक्स्थ राजा और मन्त्री के पाप का, अधोगत समस्त पृथ्वी के पाप का निस्सन्देह विनाश करता है ।।135।।

शस्त्रं रक्ते भयं पीते धूम्रे दुर्भिक्षविद्रवे ।
चन्द्रे तदोदिते ज्ञेयं भद्रबाहुवचो यथा ।।136।।

चन्द्रमा यदि रक्तवर्ण का उदित हो तो शस्त्र का भय, पीतवर्ण का हो तो दुर्भिक्ष का भय और धूम्रवर्ण होने पर आतक का सूचक होता है, ऐसा भद्रबाहु स्वामी का वचन है ।।136।।

दक्षिणात्परतो दृष्ट. चौरदूतभयंकर: ।
अपरे तोयजीवानां वायव्ये हन्ति वै गदम् ।।137।।

यदि दक्षिण की ओर शृ ग या रक्तवर्णादि दिखलाई पडे तो चोर और दूत को भयकारी होता है, पूर्व की ओर दिखलाई पडे तो जल-जन्तुओ का और वायव्य दिशा की ओर दिखलाई पडे तो रोग का विनाश होता है ।। 137।।

[2]विवदत्सु च लिंगेषु यानेषु प्रवदत्सु च ।
वाहनेषु च हृष्टेषु विन्द्याद्भयमुपस्थितम् ।।138।।

शिवलिंगो मे विवाद होने पर, सवारियों में वार्तालाप होने पर और वाहनो मे प्रसन्नता दिखलाई पडने पर महान् भय होता है ।।138।।

ऊर्ध्वं वृषो यदा नर्देत् तदा स्याच्च भयंकर ।
ककुदं चलते वापि तदाऽपि स भयंकर: ।।139।।

यदि बैल—सॉड ऊपर को मुँह कर गर्जना करे तो अत्यन्त भयकर होता है और वह अपने ककुद (कुब्ब) को चचल करे तो भी भयंकर समझना चाहिए ।।139।।

---

1. उन्नत मु० । 2 शस्त्रकोटेषु बालेषु विवादेषु च लिंगिषु मु० ।

व्याधय प्रबला यत्र माल्यगन्धं न वायते ।
आहूतिपूर्णकुम्भाश्च विनश्यन्ति भयं वदेत् ॥140॥

जहाँ व्याधियाँ प्रबल हो, माल्यगन्ध न मालूम पडती हो और आहूतिपूर्ण कलश—मगल-कलश विनाश को प्राप्त होते हो, वहाँ भय होता है ॥140॥

नववस्त्र प्रसंगेन ज्वलते मधुरा गिरा।
अरुन्धतीं न पश्येत स्वदेहं यदि दर्पणे ॥141॥

यदि नवीन वस्त्र अकारण जल जाय और मधुर वचन मुँह से निकलें, अरुन्धती तारा दिखलाई न पडे तो महान् भय अवगत करना चाहिए अर्थात् मृत्यु की सूचना समझनी चाहिए ॥141॥

न पश्यति स्वकार्याणि परकार्यविशारद: ।
मैथुने यो निरक्तश्च न च सेवति मैथुनम् ॥142॥
न मित्रचित्तो भूतेषु स्त्री वृद्ध [1]हिंसते शिशुम् ।
विपरीतश्च सर्वत्र सर्वदा स भयावह ॥143॥

जो परकार्य मे तो रत हो, पर स्व कार्य का सेवन न करता हो, मैथुन मे सलग्न रहने पर भी मैथुन का सेवन न करता हो, मित्र मे जिसका चित्त आसक्त नही हो और जो स्त्री, वृद्ध और शिशुओ की हिंसा करता हो तथा स्वभाव और प्रकृति से विपरीत जितने भी कार्य है, सब भयप्रद हैं ॥142-143॥

अभीक्ष्ण [2]चापि सुप्तस्य निरुत्साहाविलम्बिन ।
[3]अलक्ष्मीपूर्णचित्तस्य प्राप्नोति स महद्भयम् ॥144॥

जो निरन्तर सोने वाला है, निरुत्साही है और धन से रहित है, उसे महान् भय की प्राप्ति होती है ॥144॥

क्रव्यादा शकुना यत्र बहुशो विकृतस्वना ।
तत्रेन्द्रियार्थविगुणा[4] श्रिया हीनाश्च मानवा. ॥145॥

जहाँ मासभक्षी पक्षी अत्यधिक विकृत स्वर वाले हो वहाँ मनुष्य इन्द्रियो के अर्थों को ग्रहण करने की शक्ति से हीन और लक्ष्मी से रहित होते हैं। अर्थात् वहाँ अज्ञानता और निर्धनता निव स करती है ॥145॥

निपतति द्रुमश्छिन्नो [5]स्वप्नेष्वभयलक्षणम् ।
रत्नानि यस्य नश्यन्ति बहुश· प्रज्वलन्ति वा ॥146॥

---

1. सेवते मु० । 2 पापस्वप्नस्य निरुत्साहो विचिन्नित मु० । 3. अलक्ष्मीपूर्णो न चिरात् मु० । 4 पिशुना मु० । 5 अपुच्च हृयलक्षणम् मु० ।

जो व्यक्ति स्वप्न मे निर्भय होकर कटे हुए पेड को गिरते देखता है, उसके रत्न नष्ट हो जात हैं अथवा बहुमूल्य पदार्थ अग्नि लगने से जल जाते हैं ॥146॥

क्षीयते वा म्रियते वा पंचमासात् परं नृपः।
गजस्यारोहणे यस्य यदा दन्तः प्रभिद्यते ॥147॥

जब हाथी पर सवारी करते समय, हाथी के दाँत टूट जाएँ तो सवारी करने वाला राजा पाँच महीने के उपरान्त क्षय या मरण को प्राप्त हो जाता है ॥147॥

दक्षिणे राजपीडा स्यात्सेनायास्तु वधं वदेत्।
मूलभंगस्तु यातारं करिकान नृपं वदेत् ॥148॥
[1]मध्यमंसे गजाध्यक्षमग्रजे स पुरोहितम्।
विडाल-नकुलोलूक-काक-ककसमप्रभः ॥149॥
यदा भंगो भवत्येषां तदा ब्रूयादसत्फलम्।
शिरो नासाग्रकण्ठेन सानुस्वारं निशसनैः ॥150॥
[2]भक्षितं संचितं यच्च न तद् ग्राह्यन्तु वाजिनाम्।
नाभ्यंगतो महोरस्कः कण्ठे वृत्तो [3]यदेरितः ॥151॥
[4]पार्श्वे तदा भयं ब्रूयात् प्रजानामशुभंकरम्।
अन्योन्यं समुवीक्षन्ते हेष्यस्थानगता हयाः ॥152॥

यदि दाहिना दाँत टूटे तो राजपीडा और सेना का वध तथा मूल दाँतो का भग होना गमन करने वाले राजाओ के लिए खरोच और भय देने वाला है ॥148॥

मध्य से टूटने पर गजाध्यक्ष और पुरोहित को भय होता है।

विडाल, नकुल, उलूक, काक और बगुला दन्त का भग हो तो असत् फल होता है ॥149

घोडो के सिर, नासाग्र भाग और कठ के द्वारा सानुस्वार शब्द होने से सचित भोजन भी ग्राह्य नही होता ।

जब छाती तानकर घोड़ा नाभि से कण्ठ तक अकडता हुआ शब्द करे तब वह समीपस्थ प्रजा को अशुभकारी और भयप्रद होता है ॥15।

यदि घोडा हीसते हुए आपस मे देखे तो प्रजा को भय होता है ॥152॥

---

1 मध्यम रोगजाध्यक्षमग्रजे मु०। 2 साक्षार्थी मु०। 3. सुखेरित.। 4 स पार्श्वे रुदन्वानुच्चो नो गृह्यते हि स । मु०।

शयनासने परीक्षा ग्राममारीं वदेत् ततः ।
सन्ध्यायां सुप्रदीप्तायां यदा सेनामुखा हयाः ॥153॥

यदि सन्ध्याकाल मे घोड़े सेना के सम्मुख हीसते हो अथवा शयन और आसन की परीक्षा करके अशुभ होते हो तो ग्राममारी का निर्देश करना चाहिए ॥153॥

त्रासयन्तो विशेषन्तो घोरात् पादसमुद्धृताः ।
दिवसं यदि वा रात्रिं हेषन्ति सहसा हयाः ॥154॥

यदि घोडे पैरो से मिट्टी उखाडते हुए डराते हो या स्वय डरकर छिप रहे हो तो भय समझना चाहिए । दिन अथवा रात्रि मे घोडो का अकस्मात् हीसना भी भय का निर्देशक है ॥154॥

सन्ध्यायां सुप्रदीप्तायां तदा विन्द्यात् पराजयम् ।
[1]उन्मुखा रुदन्तो वा दीनं दीन समन्ततः ॥155॥

यदि सन्ध्याकाल मे घोडे ऊपर को मुँह किये हुए रोते हो या दीन होकर चारो ओर भ्रमण करते हो तो पराजय समझना चाहिए ॥155॥

[2]हया यत्र तदोत्पातं निर्दिशेद्राजमृत्यवे ।
विच्छिद्यमाना हेषन्ते यदा रूक्षस्वरं हयाः ॥156॥

जब घोड़े रूक्ष स्वर और टूटी-फूटी आवाज मे हीसते हो तो वे अपने इस उत्पात द्वारा राजा की मृत्यु की सूचना देते है ॥156॥

[3]खरवद्भीमनादेन तदा विन्द्यात् पराजयम् ।
उत्तिष्ठन्ति निषीदन्ति विश्वसन्ति भ्रमन्ति च ॥157॥

जब घोडे गधो के समान तीव्र स्वर मे रेकें और उठे-बैठे तथा भ्रमण करें तो पराजय समझना चाहिए ॥157॥

रोगार्त्ता इव हेषन्ते तदा विन्द्यात् पराजयम् ।
ऊर्ध्वमुखा विलोकन्ते विन्द्याज्जनपदे भयम् ॥158॥

यदि रोग से पीड़ित हुए के समान हीसते हो तो पराजय समझना चाहिए और ऊर्ध्वमुख रेंकें तो जनपद को भय होता है ॥158॥

शान्ता प्रहृष्टा धर्मार्त्ता विचरन्ति यदा हयाः ।
बालानां वीक्ष्यमाणास्ते न ते ग्राह्या विपश्चितै. ॥159॥

---

1. उन्मुखा रुदन्तो वा दीन दीन समन्ततः —यह उत्तरार्ध भाग मुद्रित प्रति मे नही है । 2 156वा श्लोक मुद्रित प्रति मे नही है । 3 इस श्लोक का पूर्वार्ध मुद्रित प्रति मे नही है ।

जब घोडे शान्त, प्रसन्न और काम से पीड़ित होकर विचरण करें और स्त्रियों के द्वारा देखे जाते हो तो विद्वानो को उनका शुभाशुभत्व नही लेना चाहिए ॥159॥

मूत्रं पुरीषं बहुशो विलुप्ताङ्गा प्रकुर्वतः ।
हेषन्ते दीननिद्रार्त्तास्तदा कुर्वन्ति ते जयम् ॥160॥

यदि घोडे विलुप्तांग होकर अधिक मूत्र और लीद करें और निद्रा से पीड़ित होकर हीसें तो जय की सूचना देते है ॥160॥

स्तम्भयन्तोऽथ लांगूलं हेषन्तो दुर्मनो हयाः ।
मुहुर्मुहुश्च जृम्भन्ते तदा शस्त्रभयं वदेत् ॥161॥

पूँछ को स्तम्भित करते हुए खिन्न होकर घोडे हीसें और बार-बार जँभाई ले तो शस्त्रभय कहना चाहिए ॥161॥

यदा विरुद्धं हेषन्ते स्वल्पं विकृतिकारणम् ।
तदोपसर्गो व्याधिर्वा सद्यो भवति रात्रिजः ॥162॥

यदि घोडे विकृत कारणो के होने पर विपरीत हीसते हो तो रात्रि मे उत्पन्न होने वाली व्याधि या उपसर्ग शीघ्र ही होते है ॥162॥

भूम्यां ग्रसित्वा ग्रासं तु हेषन्ते प्राङ्मुखा यदा ।
अश्वारोधाश्च बद्धाश्च तदा क्लिश्यति क्षुद्भयम् ॥163॥

पृथ्वी मे से एकाध कौर घास खाकर यदि पूर्व की ओर मुखकर घोडे हीसें तो क्षुधा के क्लेश और भय की सूचना देते हैं ॥163॥

शरीरं केसरं पुच्छ यदा ज्वलति वाजिनः ।
परचक्रं प्रयात च देशभंगं च निर्दिशेत् ॥164॥

यदि घोडो के शरीर, पूँछ और कसबार जलने लगे तो परशासन का आगमन और देशभग की सूचना समझनी चाहिए ॥164॥

यदा बाला प्रक्षरन्ते पुच्छं चटपटायते ।
वाजिनः सस्फुलिंगा वा तदा विद्यान्महद्भयम् ॥165॥

यदि अकारण घोडो के बाल टूटकर गिरने लगें, पूँछ चट-चट करने लगे और उनके शरीर से स्फुलिंग निकलने लगें तो अत्यधिक भय समझना चाहिए ॥165॥

हेषन्ते तु तदा राज्ञः पूर्वाह्णे नाग-वाजिनः ।
तदा सूर्यग्रहं विन्द्यादपराह्णे तु चन्द्रजम् ॥166॥

यदि दोपहर से पहले राजा के हाथी, घोडे हीसने लगे तो सूर्यग्रह और दोपहर

के बाद हींसने लगें तो चन्द्रग्रह समझना चाहिए ॥166॥

शुष्कं काष्ठं तृणं वाऽपि यदा सदंशते हय.।
हेषन्ते सूर्यमुद्वीक्ष्य तदाऽग्निभयमादिशेत् ॥167॥

सूखे काठ, तिनके आदि खाते हुए घोड़े सूर्य की ओर मुँहकर हीसने लगें तो अग्निभय समझना चाहिए ॥167॥

यदा शेवालजले वाऽपि मग्न कृत्वा मुखं हया.।
हेषन्ते विकृता यत्र तदाप्यग्निभयं भवेत् ॥168॥

जब घोड़े शेवाल युक्त जल मे मुँह डुबाकर हीसे तो उस समय भी अग्निभय समझना चाहिए ॥168॥

उल्कासमाना हेषन्ते संदृश्य दशनान् हया ।
संग्रामे विजयं क्षेमं भर्तु पुष्टि विनिर्दिशेत् ॥169॥

जब उल्का के समान दाँत निकालते हुए घोड़े हीसे तो स्वामी के लिए संग्राम मे विजय, क्षेम और पुष्टि का निर्देश करते है ॥169॥

प्रसारयित्वा ग्रीवा च स्तम्भयित्वा च वाजिनाम् ।
हेषन्ते विजयं ब्रूयात्संग्रामे नात्र संशय ॥170॥

गर्दन को जरा-मा झुकाकर—टेढ़ी करके स्थिर रूप से खड़े होकर जब घोड़े हीसे तो संग्राम मे निस्सन्देह विजय की प्राप्ति होती है ॥170॥

श्रमणा ब्राह्मणा वृद्धा न पूज्यन्ते यथा पुरा।
सप्तमासात् परं यत्र भयमाख्यात्युपस्थितम् ॥171॥

जिस नगर मे श्रमण, ब्राह्मण और वृद्धो की पूजा नही की जाती है उस नगर मे सात महीने के उपरान्त भय उपस्थित होता है ॥171॥

अनाहतानि तूर्याणि नर्दन्ति विकृतं यदा।
षष्ठे मासे नृपो वध्य. भयानि च तदाऽऽदिशेत् ॥172॥

जब बाजे बिना बजाये ही विकृतघोर शब्द करें तो छठे महीने मे राजा का वध होता है और वहाँ भय भी होता है ॥172॥

कृत्तिकासु यद्योत्पातो दीप्तायां दिशि दृश्यते ।
आग्नेयीं वा समाश्रित्य त्रिपक्षादग्नितो भयम् ॥173॥

यदि पूर्व दिशा मे कृत्तिका नक्षत्र मे उत्पात दिखलाई पड़े अथवा आग्नेय

कोण मे उत्पात दिखलाई पडे तो तीन पक्ष—डेढ़ महीने मे अग्नि का भय होता है ॥173॥

रोहिण्यां तु यदा घोषो निर्घातो यदि दृश्यते ।
सर्वा. प्रजा: प्रपीड्यन्ते षण्मासात्परतस्तदा ॥174॥

यदि रोहिणी नक्षत्र मे बिना वायु के शब्द सुनाई पडे तो इस उत्पात के छः महीने पश्चात् सारी प्रजा को पीडा होती है ॥174॥

उल्कापात सनिर्घातः सवातो यदि दृश्यते ।
रोहिण्यां पञ्चमासेन कुर्याद् घोरं महद्भयम् ॥175॥

यदि रोहिणी नक्षत्र मे घर्षण और वायु सहित उल्कापात हो तो पाँच महीने मे घोर भय होता है ॥175॥

एवं नक्षत्रशेषेषु यद्युत्पाताः पृथग्विधा ।
देवतार्जनलीनं च प्रसाध्यं भिक्षुणा सदा ॥176॥

इसी प्रकार अन्य नक्षत्रो मे भिन्न-भिन्न प्रकार का उत्पात दिखलाई पडे तो भिक्षुओ को देवपूजा द्वारा उस उत्पात के अनिष्ट फल को दूर करना चाहिए। अर्थात् उत्पात की शान्ति पूजा-पाठ द्वारा करनी चाहिए ॥176॥

वाहनं महिषीं पुत्रं बलं सेनापतिं पुरम् ।
पुरोहितं नृपं वित्तं घ्नन्त्युत्पाताः समुच्छ्रिताः ॥177॥

उत्पन्न हुए विभिन्न प्रकार के उत्पात सवारी, सेना, रानी, पुत्र, सेनापति, पुरोहित, अमात्य, राजा और धन आदि का विनाश करते है ॥177॥

एषामन्यतरं हित्वा निर्वृतिं यान्ति ते सदा ।
परं द्वादशरात्रेण सद्यो नाशयिता पिता ॥178॥

जो व्यक्ति इन उत्पातो मे से किसी भी उत्पात की अवहेलना करते हैं, वे बारह रात्रियो मे ही कष्ट को प्राप्त करते हैं तथा उनके कुटुम्ब मे पिता या अन्य कोई मृत्यु को प्राप्त होता है ॥178॥

यत्रोत्पाताः न दृश्यन्ते यथाकालमुपस्थिताः ।
तेन सञ्चयदोषेण राजा देशश्च [1]नश्यति ॥179॥

जहाँ यथा समय उपस्थित हुए उत्पातो को नही देखा जाता है, वहाँ उत्पातो के द्वारा संचित दोष से राजा और देश दोनो का नाश होता है ॥179॥

1 नश्यतं मु० ।

देवान् प्रव्रजितान् विप्रांस्तस्माद्राजाऽभिपूजयेत् ।
तदा शाम्यति तत् पापं यथा साधुभिरीरितम् ॥180॥

उत्पात से उत्पन्न हुए दोष की शान्ति के लिए देव, दीक्षित मुनि और ब्राह्मण—व्रती व्यक्तियो की पूजा करनी चाहिए। इससे जिस पाप से उत्पात उत्पन्न होते हैं, वह मुनियो के द्वारा उपदिष्ट होकर शान्त हो जाता है ॥180॥

यत्र देशे समुत्पाता दृश्यन्ते भिक्षुभिः क्वचित् ।
ततो देशादतिक्रम्य व्रजेयुरन्यतस्तदा ॥181॥

मुनियों को जिस देश मे कही भी उत्पात दिखलाई पडे उस देश को छोडकर अन्य देश मे चला जाना चाहिए ॥181॥

सचित्ते [1]सुभिक्षे देशे निरुत्पाते प्रियातिथौ ।
विहरन्ति सुखं तत्र भिक्षवो धर्मचारिण ॥182॥

धन-धान्य से परिपूर्ण, सुभिक्ष युक्त, निरुपद्रव और अतिथि-सत्कार करने वाले देश मे धर्माचरण करने वाले साधु सुखपूर्वक विहार करते हैं ॥182॥

इति सकलमुनिजनानन्दमहामुनीश्वरभद्रबाहुविरचिते निमित्तशास्त्रे सकलशुभाऽशुभव्याख्यानविधानकथने चतुर्दश परिच्छेद समाप्त ॥14॥

विवेचन—स्वभाव के विपरीत होना उत्पात है। ये उत्पात तीन प्रकार के होते हैं—दिव्य, अन्तरिक्ष और भौम। देव-प्रतिमाओ द्वारा जिन उत्पातो की सूचना मिलती है, वे दिव्य कहलाते हैं। नक्षत्रो का विकार, उल्का निर्घात, पवन, विद्युत्पात, गन्धर्वपुर एव इन्द्रधनुषादि अन्तरिक्ष उत्पात हैं। इस भूमि पर चल एवं स्थिर पदार्थों का विपरीत रूप मे दिखलायी पडना भौम उत्पात है। आचार्य ऋषिपुत्र ने दिव्य उत्पातो का वर्णन करते हुए बतलाया है कि तीर्थंकर प्रतिमा का छत्र भग होना, हाथ-पाँव, मस्तक, भामण्डल का भग होना अशुभसूचक है। जिस देश या नगर मे प्रतिमाजी स्थिर या चलित भग हो जायँ तो उस देश या नगर मे अशुभ होता है। छत्र भग होने से प्रशासक या अन्य किसी नेता की मृत्यु, रथ टूटने से राजा का मरण तथा जिस नगर मे रथ टूटता है, उस नगर मे छ महीने के पश्चात् अशुभ फल की प्राप्ति होती है। नगर मे महामारी, चोरी, डकैती या अन्य अशुभ कार्य छ महीनो के भीतर होता है। भामण्डल के भग होने से तीसरे या पाँचवें महीने मे आपत्ति आती है। उस प्रदेश के शासक या शासन परिवार मे किसी की मृत्यु होती है। नगर मे धन-जन की हानि होती है। प्रतिमा

1 भिक्षुदे।

के हाथ भग होने से तीसरे महीने मे कष्ट और पाँव भंग होने से सातवें महीने में कष्ट होता है। हाथ और पाँव के भंग होने का फल नगर के साथ नगर के प्रशासक, मुखिया एव पचायत के प्रमुख को भी भोगना पडता है। प्रतिमा का अचानक भग होना अत्यन्त अशुभ है। यदि रखी हुई प्रतिमा स्वयमेव ही मध्याह्न या प्रातःकाल मे भग हो जाय तो उस नगर मे तीन महीने के उपरान्त महा रोग या संक्रामक रोग फैलते है। विशेष रूप से हैजा, प्लेग एवं इनफ्लुएंजा की उत्पत्ति होती है। पशुओ मे भी रोग उत्पन्न होता है।

यदि स्थिर प्रतिमा अपने स्थान से हटकर दूसरी जगह पहुँच जाय या चलती हुई मालूम पडे तो तीसरे महीने अचानक विपत्ति आती है। उस नगर या प्रदेश के प्रमुख अधिकारी को मृत्यु तुल्य कष्ट भोगना पडता है। जनसाधारण को भी आधि-व्याधिजन्य कष्ट उठाना पडता है। यदि प्रतिमा सिंहासन से नीचे उतर आये अथवा सिंहासन से नीचे गिर जाये तो उस प्रदेश के प्रमुख की मृत्यु होती है। उस प्रदेश मे अकाल, महामारी और वर्षाभाव रहता है। यदि उपर्युक्त उत्पात लगातार सात दिन या पन्द्रह दिन तक हो तो निश्चयत प्रतिपादित फल की प्राप्ति होती है। यदि एकाध दिन उत्पात होकर शान्त हो गया तो पूर्ण फल प्राप्त नही होता है। यदि प्रतिमा जीभ निकालकर कई दिनों तक रोती हुई दिखलाई पडे तो नगर मे यह घटना घटती है, उस नगर मे अत्यन्त उपद्रव होता है। प्रशासक और प्रशास्यो मे झगडा होता है। धन-धान्य की क्षति होती है। चोर और डाकुओ का उपद्रव अधिक बढता है। सग्राम, मारकाट एव संघर्ष की स्थिति बढती जाती है। प्रतिमा का रोना राजा, मन्त्री या किसी महान् नेता की मृत्यु का सूचक, हँसना पारस्परिक विद्वेष, सघर्ष एव कलह का सूचक; चलना और काँपना बीमारी, सघर्ष, कलह, विषाद, आपसी फूट एव गोलाकार चक्कर काटना भय, विद्वेष, सम्मान हानि तथा देश की धन-जन-हानि का सूचक है। प्रतिमा का हिलना तथा रग बदलना अनिष्टसूचक एव तीन महीनो मे नाना प्रकार के कष्टो का सूचक अवगत करना चाहिए। प्रतिमा का पसीजना अग्निभय, चोरभय एव महामारी का सूचक है। धुआँ सहित प्रतिमा से पसीना निकले तो जिस प्रदेश में यह घटना घटित होती है, उसके सौ कोस की दूरी तक चारों ओर धन-जन की क्षति होती है। अतिवृष्टि या अनावृष्टि के कारण जनता को महान् कष्ट होता है।

तीर्थंकर की प्रतिमा से पसीना निकलना धार्मिक विद्वेष एव संघर्ष की सूचना देता है। मुनि और श्रावक दोनों पर किसी प्रकार की विपत्ति आती है तथा दोनो को विधर्मियों द्वारा उपसर्ग सहन करना पडता है। अकाल और अवर्षण की स्थिति भी उत्पन्न हो जाती है। यदि शिव की प्रतिमा से पसीना निकले तो ब्राह्मणो को कष्ट, कुबेर की प्रतिमा से पसीना निकले तो वैश्यो को कष्ट, कामदेव

की प्रतिमा से पसीना निकले तो आगम की हानि, कृष्ण की प्रतिमा से पसीना निकले तो सभी जातियो को कष्ट, सिद्ध और बौद्ध प्रतिमाओ से धुआँ सहित पसीना निकले तो उस प्रदेश के ऊपर महान् कष्ट, चण्डिका देवी की प्रतिमा से पसीना निकले तो स्त्रियो को कष्ट, वाराही देवी की प्रतिमा मे पसीना निकले तो हाथियो का ध्वस, नागिन देवी की प्रतिमा मे धुआँ सहित पसीना निकले तो गर्भनाश, राम की प्रतिमा से पसीना निकले तो देश मे महान् उपद्रव, लूट-पाट, धननाश, सीता या पार्वती की प्रतिमा मे पसीना निकले तो नारी-समाज को महान् कष्ट एवं सूर्य की प्रतिमा से पसीना निकले तो ससार को अत्यधिक कष्ट और उपद्रव सहन करने पडते हैं। यदि तीर्थंकर की प्रतिमा भग्न हो और उससे अग्नि की लपट या रक्त की धारा निकलती हुई दिखलायी पडे तो ससार मे मार-काट निश्चय होती है। आपस मे मार-काट हुए बिना किसी को शान्ति नही मिलती है। किसी भी देव की प्रतिमा का भग होना, फूटना वा हँसना चलना आदि अशुभकारक है। उक्त क्रियाएँ एक सप्ताह तक लगातार होती हो तो निश्चय ही तीन महीने के भीतर अनिष्टकारक फल मिलता है। ग्रहो की प्रतिमाएँ, चौबीस शासनदेवो एव शासनदेवियो की प्रतिमाएँ, क्षेत्रपाल और दिक्पालो की प्रतिमाएँ इनमे उक्त प्रकार की विकृति होने से व्याधि, धनहानि, मरण एव अनेक प्रकार की व्याधियाँ उत्पन्न होती है। देवकुमार, देवकुमारी, देववनिता एव देवदूतो के जो विकार उत्पन्न होते हैं, वे समाज मे अनेक प्रकार की हानि पहुँचाते है। देवो के प्रसाद, भवन, चैत्यालय, वेदिका, तोरण, केतु आदि के जलने या बिजली द्वारा अग्नि प्राप्त होने से उस देश मे अत्यन्त अनिष्टकर क्रियाएँ होती है। उक्त क्रियाओ का फल छ: महीने मे प्राप्त होता है। भवनवासी, व्यन्तर, ज्योतिषी और कल्पवासी देवो के प्रकृति विपर्यय से लोगों को नाना प्रकार के कष्टो का सामना करना पडता है।

आकाश मे असमय मे इन्द्रधनुष दिखलायी पडे तो प्रजा को कष्ट, वर्षाभाव और धनहानि होती है। इन्द्रधनुष का वर्षा ऋतु मे होना ही शुभसूचक माना जाता है, अन्य ऋतु मे अशुभसूचक कहा गया है। आकाश से रुधिर, मास, अस्थि और चर्बी की वर्षा होने से सग्राम, जनता को भय, महामारी एव प्रशासको मे मतभेद होता है। धान्य, सुवर्ण, वल्कल, पुष्प और फल की वर्षा हो तो उस नगर का विनाश होता है, जिसमे यह घटना घटती है। जिस नगर मे कोयले और धूलि की वर्षा होती है, उस नगर का सर्वनाश होता है। बिना बादल के आकाश से ओलो का गिरना, बिजली का तडकना तथा बिना गर्जन के अकस्मात् बिजली का गिरना उस प्रदेश के लिए भयोत्पादक है तथा नाना प्रकार की हानियाँ होती है। किसी भी व्यक्ति को शान्ति नही मिल सकती है। निर्मल सूर्य मे छाया दिखलायी न दे अथवा विकृत छाया दिखलायी दे तो देश मे महाभय होता है। जब दिन या

रात मे मेघहीन आकाश मे पूर्व या पश्चिम दिशा मे इन्द्रधनुष दिखलायी देता है, तब उस प्रदेश मे घोर दुर्भिक्ष पडता है। जब आकाश मे प्रतिध्वनि हो, तूर्य-तुरई की ध्वनि सुनाई दे एव आकाश मे घण्टा, झालर का शब्द सुनाई पड़े तो दो महीने तक महाध्वनि से प्रजा पीडित रहती है। आकाश मे किसी भी प्रकार का अन्य उत्पात दिखलाई पडे तो जनता को कष्ट, व्याधि, मृत्यु एव सघर्षजन्य दु ख उठाना पडता है।

दिन मे धूलि का बरसना, रात्रि के समय मेघविहीन आकाश मे नक्षत्रो का नाश या दिन मे नक्षत्रो का दर्शन होना सघर्ष, मरण, भय और धन-धान्य का विनाश सूचक है। आकाश का बिना बादलो के रग-बिरग होना, विकृत आकृति और सस्थान का होना भी अशुभसूचक है। जहाँ छ महीनो तक लगातार हर महीने उल्का दिखलाई देती रहे, वहाँ मनुष्य का मरण होता है। सफेद और धूसर रग की उल्काएँ पुण्यात्मा कहे जाने वाले व्यक्तियो को कष्ट पहुँचाती है। पचरगी उल्का महामारी और इधर-उधर टकराकर नष्ट होने वाली उल्का देश मे उपद्रव उत्पन्न करती है। अन्तरिक्ष निमित्तो का विचार करते समय पूर्वोक्त विद्युत्पात, उल्कापात आदि का विचार अवश्य कर लेना चाहिए।

भूमि पर प्रकृति विपर्यय—उत्पात दिखलाई पडें तो अनिष्ट समझना चाहिए। ये उत्पात जिस स्थान मे दिखलाई देते है, अनिष्ट फल उसी जगह घटित होता है अस्त्र-शस्त्रो का जलना, उनके शब्द होना, जलते समय अग्नि से शब्द होना तथा ईधन के बिना जलाये अग्नि का जल जाना अनिष्टसूचक हैं। इस प्रकार के उत्पात मे किसी आत्मीय की मृत्यु होती है। असमय मे वृक्षो मे फल-फूल का आना, वृक्षो का हँसना, रोना, दूध निकलना आदि उत्पात धनक्षय, शिशुओ मे रोग तथा आपस मे झगडा होने की सूचना देते हैं। वृक्षो से मद्य निकले तो वाहनो का नाश, रुधिर निकलने से सग्राम, शहद निकलने से रोग, तेल निकलने से भय और दुर्गन्धित पदार्थ निकलने से पशुक्षय होता है। अकुर सूख जाने से वीर्य और अन्न का नाश, रोगहीन वृक्ष अकारण सूख जायँ तो सेना का विनाश और अन्नक्षय, आप ही वृक्ष खडा होकर उठ बैठे तो देव का भय, कुसमय मे फल फूलो का आना प्रशासक और नेताओ का विनाश, वृक्षो से ज्वाला और धुआँ निकले तो मनुष्यो का क्षय होता है। वृक्षो से मनुष्य के जैसा शब्द निकलता हुआ सुनाई पडे तो अत्यन्त अशुभकारी होता है। इससे मनुष्यो मे अनेक प्रकार की बीमारियाँ फैलती हैं, जनता मे अनेक प्रकार मे अशान्ति आती है।

कमल आदि के एक काल मे दो या तीन फल की उत्पत्ति हो अथवा दो फूल या फल दिखायी पडे तो जिस जगह यह घटना घटित होती है, वहाँ के प्रशासक का मरण होता है। जिस किसान के खेत मे यह निमित्त दिखलाई पडता है, उसकी भी मृत्यु होती है। जिस गाँव मे यह उत्पात दिखलाई पड़ता है, उस गाँव मे

धन-धान्य के विनाश के साथ अनेक प्रकार के उपद्रव होते हैं। फल-फूलों में विकार का दिखलाई पड़ना, प्रकृति विरुद्ध फल-फूलो का दृष्टिगोचर होना ही उस स्थान की शान्ति को नष्ट करने वाला तथा आपस में संघर्ष उत्पन्न करने वाला है। शीत और ग्रीष्म मे परिवर्तन हो जाने से अर्थात् शीत ऋतु में गर्मी और ग्रीष्म ऋतु में शीत पडने से अथवा सभी ऋतुओ मे परस्पर परिवर्तन हो जाने से दैवभय, राजभय, रोगभय और नाना प्रकार के कष्ट होते है। यदि नदियाँ नगर के निकटवर्ती स्थान को छोडकर दूर हटकर बहने लगें तो उन नगरो की आबादी घट जाती है, वहाँ अनेक प्रकार के रोग फैलते हैं। यदि नदियों का जल विकृत हो जाय, वह रुधिर, तैल, घी, शहद आदि की गन्ध और आकृति के समान बहता हुआ दिखलाई पडे तो भय, अशान्ति और धनक्षय होता है। कुओ से धूम निकलता हुआ दिखलाई पडे, कुआँ का जल स्वय ही खौलने लगे, रोने और गाने का शब्द जल से निकले तो महामारी फैलती है। जल का रूप, रस, गन्ध और स्पर्श मे परिवर्तन हो जाय तो भी महामारी की सूचना समझनी चाहिए।

स्त्रियो का प्रसव विकार होना, उनके एक साथ तीन-चार बच्चो का पैदा होना, उत्पन्न हुए बच्चो की आकृति पशुओ और पक्षियो के समान हो तो जिस कुल मे यह घटना घटित होती है, उस कुल का विनाश, उस गाँव या नगर मे महामारी, अवर्षण और अशान्ति रहती है। इस प्रकार के उत्पात का फल छह महीने से लेकर एक वर्ष तक प्राप्त होता है। घोडी, ऊँटनी, भैंस, गाय और हथिनी एक साथ दो बच्चे पैदा करें तो इनकी मृत्यु हो जाती है तथा उस नगर मे मार-काट होती है। एक जाति का पशु दूसरे जाति के पशु के साथ मैथुन करे तो अमगल होता है। दो बैल परस्पर मे स्तनपान करें तथा कुत्ता गाय के बछड़े का स्तनपान करे तो महान् अमंगल होता है। पशुओ के विपरीत आचरण से भी अनिष्ट की आशंका समझनी चाहिए। यदि दो स्त्री जाति के प्राणी आपस में मैथुन करें तो भय, स्तनपान अकारण करें तो हानि, दुर्भिक्ष एव धन-विनाश होता है।

रथ, मोटर, बहली आदि की सवारी बिना चलाये चलने लगे और बिना किसी खराबी के चलाने पर भी न चले तथा सवारियाँ चलाने पर भूमि मे गड जायें तो अशुभ होता है। बिना बजाये तुरही का शब्द होने लगे और बजाने पर बिना किसी प्रकार की खराबी के तुरही शब्द न करे तो इससे परचक्र का आगमन होता है अथवा शासक का परिवर्तन होता है। नेताओ मे मतभेद होता है और वे आपस में झगडते हैं। यदि पवन स्वय ही साय-साँय की विकृत ध्वनि करता हुआ चले तथा पवन से घोर दुर्गन्ध आती हो तो भय होता है, प्रजा का विनाश होता है तथा दुर्भिक्ष भी होता है। घर के पालतू पक्षिगण वनमे जायें और बनैले पक्षी निर्भय होकर पुर मे प्रवेश करें, दिन मे चरने वाले रात्रि मे अथवा रात्रि के चरने वाले दिन मे प्रवेश करें तथा दोनो सन्ध्याओ में मृग और पक्षी मण्डल बाँधकर एकत्र

हों तो भय, मरण, महामारी एवं धान्य का विनाश होता है। सूर्य की ओर मुँह कर गीदड रोयें, कबूतर या उल्लू दिन मे राजभवन में प्रवेश करे, प्रदोष के समय मुर्गा शब्द करे, हेमन्त आदि ऋतुओं मे कोयल बोले, आकाश में बाज आदि पक्षियों का प्रतिलोम मण्डल विचरण करे तो भयदायी होता है। घर, चैत्यालय और द्वार पर अकारण ही पक्षियों का झुण्ड गिरे तो उस घर या चैत्यालय का विनाश होता है। यदि कुत्ता हड्डी लेकर घर मे प्रवेश करे तो रोग उत्पन्न होने की सूचना देता है। पशुओं की आवाज मनुष्यो के समान मालूम पडती हो तथा वे पशु मनुष्यो के समान आचरण भी करें तो उस स्थान पर घोर सकट उपस्थित होता है। रात में पश्चिम दिशा की ओर कुत्ता शब्द करते हो और उनके उत्तर मे शृगाल शब्द करें अर्थात् पहले कुत्ता बोलें, पश्चात् शृगाल अनन्तर पुनः कुत्ता, पश्चात् शृगाल इस प्रकार शब्द करें तो उस नगर का विनाश छ. महीने के बाद होने लगता है और तीन वर्षों तक उस नगर पर आपत्ति आती रहती है। भूकम्प हुए बिना पृथ्वी फट जाय, बिना अग्नि के धुआँ दिखलाई पडे और बालक गण मार-पीट का खेल खेलते हुए कहें—मार डालो, पीटो, इसका विनाश कर दो तो उस प्रदेश मे भूकम्प होने की सूचना समझनी चाहिए। बिना बनाये किसी व्यक्ति के घर की दीवारो पर गेरू के लाल चिह्न या कोयले से काले चित्र बन जायें तो उस घर का पाँच महीने मे विनाश हो जाता है। जिस घर मे अधिक मकडियाँ जाला बनाती हैं उस घर में कलह होती है। गाँव या नगर के बाहर दिन मे शृगाल और उल्लू शब्द करें तो उस गाँव के विनाश की सूचना समझनी चाहिए। वर्षा काल मे पृथ्वी का काँपना, भूकम्प होना, बादलो की आकृति का बदल जाना, पर्वत और घरों का चलायमान होना, भयकर शब्दो का चारो दिशाओ से सुनाई पड़ना, सूखे हुए वृक्षो में अंकुर का निकल आना, इन्द्रधनुष का काले रूप मे दिखलाई पड़ना एव श्यामवर्ण की विद्युत का गिरना भय, मृत्यु और अनावृष्टि का सूचक है। जब वर्षा-ऋतु मे अधिक वर्षा होने पर भी पृथ्वी सूखी दिखलाई पड़े, तो उस वर्ष दुर्भिक्ष की स्थिति समझनी चाहिए। ग्रीष्मऋतु मे आकाश मे बादल दिखलाई पड़ें, बिजली कड़के और चारो ओर वर्षा ऋतु की बहार दिखलाई पडे तो भय तथा महामारी होती है। वर्षा ऋतु मे तेज हवा चले और त्रिकोण या चौकोर ओले गिरें तो उस वर्ष अकाल की आशका समझनी चाहिए। यदि गाय, बकरी, घोड़ी, हथिनी और स्त्री के विपरीत गर्भ की स्थिति हो तथा विपरीत सन्तान प्रसव करे तो राजा और प्रजा दोनो के लिए अत्यन्त कष्ट होता है। ऋतुओ में अस्वाभाविक विकार दिखलाई पड़े तो जगत् मे पीडा, भय, सघर्ष आदि होते हैं। यदि आकाश में धूलि, अग्नि और धुआँ की अधिकता दिखलाई पडे तो दुर्भिक्ष, चोरो का उपद्रव एवं जनता मे अशान्ति होती है।

रोग-सूचक-उत्पात—चन्द्रमा कृष्ण वर्ण का दिखलाई दे तथा ताराएँ

विभिन्न वर्ण की टूटती हुई मालूम पड़ें तथा सूर्य उदयकाल मे कई दिनो तक लगातार काला और रोता हुआ दिखलाई पडे तो दो महीने उपरान्त महामारी का प्रकोप होता है। बिल्ली तीन बार रोकर चुप हो जाय तथा नगर के भीतर आकर श्रृगाल—सियार तीन बार रोकर चुप हो जाय तो उस नगर मे भयकर हैजा फैलता है। उल्कापात हरे वर्ण का हो, चद्रमा भी हरे वर्ण का दिखलाई पडे तो सामूहिक रूप मे ज्वर का प्रकोप होता है। यदि सूखे वृक्ष अचानक हरे हो जाएँ तो उस नगर मे सात महीने के भीतर महामारी फैलती है। चूहो का समूह सेना बनाकर नगर के बाहर जाता हुआ दिखलाई पडे तो प्लेग का प्रकोप समझना चाहिए। पीपल वृक्ष और वट वृक्ष मे असमय मे पुष्प फल आवें तो नगर या गाँव मे पाँच महीनो के भीतर सक्रामक रोग फैलता है, जिससे सभी प्राणियो को कष्ट होता है। गोधा मेढक और मोर रात्रि मे भ्रमण करे तथा श्वेत काक एव गृद्ध घरो मे घुस आयें तो उस नगर या गाँव मे तीन महीने के भीतर बीमारी फैलती है। काक मैथुन देखने से छ मास मे मृत्यु होती है।

धन-धान्य नाशसूचक उत्पात—वर्षा ऋतु मे लगातार सात दिनो तक जिस प्रदेश मे ओले बरसते हैं, उस प्रदेश के धन-धान्य का नाश हो जाता है। रात या दिन उल्लू किसी के घर मे प्रविष्ट होकर बोलने लगे तो उस व्यक्ति की सम्पत्ति छ महीने मे विलीन हो जाती है। घर के द्वार पर स्थित वृक्ष रोने लगें तो उस घर की सम्पत्ति विलीन होती है, घर मे रोग एव कष्ट फैलते हैं। अचानक घर की छत के ऊपर स्थित होकर श्वेत काक पाँच बार जोर-जोर से काँव-काँव करे, पुन. चुप होकर तीन बार धीरे-धीरे काँव-काँव करे तो उस घर की सम्पत्ति एक वर्ष मे विलीन हो जाती है। यदि यह घटना नगर के बाहर पश्चिमी द्वार पर घटित हो तो नगर की सम्पत्ति विलीन हो जाती है। नगर के मध्य मे किसी व्यन्तर की बाधा या व्यन्तर का दर्शन लगातार कई दिनो तक हो तो भी नगर की श्री विलीन हो जाती है। यदि आकाश से दिन भर धूल बरसती रहे, तेज वायु चले और दिन भयकर मालूम हो तो उस नगर की सम्पत्ति नष्ट होती है, जिस नगर मे यह घटना घटती है। जगल मे गयी हुई गायें मध्याह्न मे ही रभाती हुई लौट आये और वे अपने बछडो को दूध न पिलायें तो सम्पत्ति का विनाश समझना चाहिए। किसी भी नगर मे कई दिनो तक सघर्ष होता रहे, वहाँ के निवासियो मे मेल-मिलाप न हो तो पाँच महीनो मे समस्त सम्पत्ति का विनाश हो जाता है। वरुण नक्षत्र का केतु दक्षिण मे उदय हो तो भी सम्पत्ति का विनाश समझना चाहिए। यदि लगातार तीन दिनो तक प्रातः सन्ध्या काली, मध्याह्न सन्ध्या नीली और सायं सन्ध्या मिश्रित वर्ण की दिखलाई पडे तो भय, आतक के साथ द्रव्य विनाश की भी सूचना मिलती है। रात को निरभ्र आकाश मे ताराओ का अभाव दिखलाई पडे या ताराएँ टूटती हुई मालूम हो तो रोग और धननाश दोनो फल प्राप्त होते

हैं। यदि ताराओं का रग भस्म के समान मालूम हो, दक्षिण दिशा रुदन करती हुई और उत्तर दिशा हँसती हुई-सी दिखलाई पड़े तो धन-धान्य का विनाश होता है। पशुओं की वाणी यदि मनुष्य के समान मालूम हो तो धन धान्य के विनाश के साथ सग्राम की सूचना भी मिलती है। कबूतर अपने पंखो को पटकता हुआ जिस घर मे उल्टा गिरता है और अकारण ही मृत जैसा हो जाता है, उस घर की सम्पत्ति का विनाश हो जाता है। यदि गाँव या नगर के बीस-पच्चीस नगे बच्चे धूलि मे खेल रहे हो, और वे अकस्मात् 'नष्ट हो गया' 'नष्ट हो गया' इन शब्दो का व्यवहार करें तो उस नगर से सम्पत्ति रूठकर चली जाती है। रथ, मोटर, इक्का, रिक्शा, साइकिल आदि की सवारी पर चढ़ते ही कोई व्यक्ति पानी गिराते हुए दिखलाई पडे तो भी धननाश होता है। दक्षिण दिशा की ओर से शृगाल का रोते हुए नगर मे प्रवेश करना धनहानि का सूचक है।

वर्षाभाव सूचक उत्पात—ग्रीष्म ऋतु मे आकाश मे इन्द्रधनुष दिखलाई पड़े, माघ मास मे गर्मी पडे तो उस वर्ष वर्षा नही होती है। वर्षा ऋतु के आगमन पर कुहासा छा जाये तो उस वर्ष वर्षा का अभाव जानना चाहिए। आषाढ महीने के प्रारम्भ मे इन्द्रधनुष का दिखलाई पडना भी वर्षाभाव सूचक है। सर्प को छोडकर अन्य जाति के प्राणी सन्तान का भक्षण करें तो वर्षाभाव और घोर दुर्भिक्ष की सूचना समझनी चाहिए। यदि चूहे लडते हुए दिखलाई पडें, रात के समय श्वेत धनुष दिखलाई दे, सूर्य मे छेद मालूम पडे, चन्द्रमा टूटा हुआ-सा दिखलाई पडे, धूलि मे चिडियाँ स्नान करें और सूर्य के अस्त होते समय सूर्य के पास ही दूसरा उद्योतवाला सूर्य दिखाई दे तो वर्षाभाव होता है तथा प्रजा को कष्ट उठाना पडता है।

अग्निभय सूचक उत्पात—सूखे काठ, तिनके, घास आदि का भक्षण कर घोडे सूर्य की ओर मुँह कर हीसने लगे तो तीन महीने मे नगर में अग्नि का प्रकोप होता है। घोडो का जल मे हीसना गायो का अग्नि चाटना, या खाना, सूखे वृक्षो का स्वय जल उठना, एकत्र घास या लकडी मे से स्वयं धुआँ निकलना, लडको का आग से खेल करना, या खेलते-खेलते बच्चे घर से आग ले आये, पक्षी आकाश में उडते हुए अकस्मात् गिर जायें तो उस गाँव या नगर मे पाँच दिन से लेकर तीन महीने तक अग्नि का प्रकोप होता है।

राजनीतिक उपद्रव सूचक—जिस स्थान पर मनुष्य गाना गा रहे हो, वहाँ गाना सुनने के लिए यदि घोड़ी, हथिनी, कुतियाँ एकत्र हो तो राजनीतिक उपद्रव होते हैं। जहाँ बच्चे खेलते-खेलते आपस मे लडाई करें, क्रोध से झगडा आरम्भ करें वहाँ युद्ध अवश्य होता है तथा राजनीति के मुखियो मे आपस में फूट पड जाने से देश की हानि भी होती है। बिना बैलो का हल यदि आप से आप खडा होकर नाचने लगे तो परचक्र—जिस पार्टी का शासन है, उससे विपरीत पार्टी का शासन होता

है। शासन प्राप्त पार्टी या दल को पराजित होना पड़ता है। शहर के मध्य में कुत्ते ऊँचे मुँह कर लगातार आठ दिन तक भूँकते दिखलाई पड़ें तो भी राजनीतिक झगड़े उत्पन्न होते हैं। जिस नगर या गाँव मे गीदड, कुत्ते और चूहा बिल्ली को मार लगायें, उस नगर या गाँव मे राजनीति को लेकर उपद्रव होते है। उसमें अशान्ति इस घटना के बाद दस महीने तक रहती है। जिस नगर या गाँव मे सूखा वृक्ष स्वयं ही उखडता हुआ दिखलाई पडे, उस नगर या गाँव मे पार्टीबन्दी होती है। नेताओं और मुखियो मे परस्पर वैमनस्य हो जाता है, जिससे अत्यधिक हानि होती है। जनता में भी फूट हो जाने से राजनीति की स्थिति और भी विषम हो जाती है। जिस देश मे बहुत मनुष्यो की आवाज सुनाई पड़े, पर बोलने वाला कोई नही दिखलाई दे उस देश या नगर मे पाँच महीनो तक अशान्ति रहती है। रोग-बीमारी का प्रकोप भी बना रहता है। यदि सन्ध्या समय गीदड, लोमडी किसी नगर या ग्राम के चारो ओर रुदन करें तो भी राजनीतिक झझट रहता है।

वैयक्तिक हानि-लाभ सूचक उत्पात— यदि कोई व्यक्ति बाजो के न बजाने पर भी लगातार सात दिनो तक बाजो की ध्वनि सुने तो चार महीने में उसकी मृत्यु तथा धनहानि होती है। जो अपनी नाक के अग्रभाग पर मक्खी के न रहने पर भी मक्खी बैठी हुई देखता है, उसे व्यापार मे चार महीने तक हानि होती है। यदि प्रातःकाल जागने पर हाथो की हथेलियो पर दृष्टि पड जाय तथा हाथ मे कलश, ध्वजा और छत्र यो ही दिखलाई पडें तो उसे सात महीने तक धन का लाभ होता है तथा भावी उन्नति भी होती है। कही गन्ध के साधन न रहने पर भी सुगन्ध मालूम पडे तो मित्रो से मिलाप, शान्ति एव व्यापार मे लाभ तथा सुख की प्राप्ति होती है। जो व्यक्ति स्थिर चीजो को चलायमान और चञ्चल वस्तुओ को स्थिर देखता है, उसे व्याधि, मरणभय एव धननाश के कारण कष्ट होता है। प्रातःकाल यदि आकाश काला दिखलाई पडे और सूर्य मे अनेक प्रकार के दाग दिखलाई दें तो उस व्यक्ति को तीन महीने के भीतर रोग होता है।

सुख-दु:ख की जानकारी के लिए अन्य फलादेश

नेत्रस्फुरण—आँख फडकने का विशेष फलादेश—दाहिनी आँख का नीचे का कान के पास का हिस्सा फडकने से हानि, नीचे का मध्य का हिस्सा फडकने से भय और नाक के पास वाला नीचे का हिस्सा फडकने से धनहानि, आत्मीय को कष्ट या मृत्यु, क्षय आदि फल होते है। इसी आँख का ऊपरी भाग अर्थात् बरौनी का कान के निकट वाला हिस्सा फडकने से सुख, मध्य का भाग फकडने से धनलाभ और ऊपर ही नाक के पास वाला भाग फडकने से हानि होती है। बायी आँख का नीचे वाला भाग नाक के पास का फड़कने से सुख, मध्य का हिस्सा फड़कने से भग और कान के पास वाला नीचे का हिस्सा फड़कने से सम्पत्ति-लाभ होता है। बरौनी

अंगस्फुरण फल—अंग फड़कने का फल

स्थान	फल	स्थान	फल	स्थान	फल
मस्तक स्फुरण	पृथ्वी लाभ	वक्ष स्फुरण	विजय	कण्ठ स्फुरण	ऐश्वर्य लाभ
ललाट स्फुरण	स्थान लाभ	हृदय स्फुरण	वांछित सिद्धि	ग्रीवा स्फुरण	रिपु भय
कन्धा स्फुरण	भोग समृद्धि	कटि स्फुरण	प्रमोद बल	पृष्ठ स्फुरण	युद्ध पराजय
भ्रूमध्य	सुख प्राप्ति	कटिपार्श्व	प्रीति	कपोल स्फुरण	वरांगना प्राप्ति
भ्रूयुग्म	महान् सुख	नाभि स्फुरण	स्त्री नाश	मुख स्फुरण	मित्र प्राप्ति
कपाल स्फुरण	शुभ	आंत्रक स्फुरण	कोश वृद्धि	बाहु स्फुरण	मधुर भोजन
नेत्र स्फुरण	धन प्राप्ति	भग स्फुरण	पति प्राप्ति	बाहु मध्य	धनागम
नेत्रकोण स्फुरण	लक्ष्मी लाभ	कुक्षि स्फुरण	सुप्रीति लाभ	वस्तिदेश स्फुरण	अभ्युदय
नेत्रसमीप	प्रिय समागम	उदर स्फुरण	कोश प्राप्ति	उर स्फुरण	वस्त्र लाभ
नेत्रपक्ष्म स्फुरण	सफलता, राजसम्मान	लिंग स्फुरण	स्त्रीलाभ	जानु स्फुरण	शत्रु वृद्धि
नेत्रपक्ष्म पलक स्फुरण	मुकदमेमें विजय	गुदा स्फुरण	वाहन प्राप्ति	जंघा स्फुरण	स्वामि प्राप्ति
नेत्रवाह्य देश स्फुरण	कलत्र लाभ	वृषण स्फुरण	पुत्र प्राप्ति	पादोपरि	स्थान लाभ
नासिका स्फुरण	प्रीति सुख	ओष्ठ स्फुरण	प्रियवस्तु लाभ	पादतल	नृपत्व
हस्त स्फुरण	सद् द्रव्यलाभ	हनु स्फुरण	भय	पाद स्फुरण	अलाभ

पल्लीपतन और गिरगिट आरोहण फलबोधक चक्र

स्थान	फल	स्थान	फल	स्थान	फल	स्थान	फल	स्थान	फल
शिर	लाभ	ललाट	बन्धुदर्शन	भ्रूमध्य	राज्यसम्बन्ध	उत्तरोष्ठ	धननाश	अधरोष्ठ	धनयुक्तता
नासाग्र	व्याधि	दक्षिणकर्ण	आयुवृद्धि	वामकर्ण	बहुलाभ	नेत्र २	धनप्राप्ति	द० भुज	बुद्धिनाश
वामभुजा	राजभय	कण्ठ	शत्रुनाश	स्तनद्वय	दुर्भाग्य	उदर	भूषणलाभ	पृष्ठदेश	बहुधन प्राप्ति
अंगुष्ठ	शुभागम	जंघा	शुभ	हस्तद्वय	वस्त्रलाभ	स्कन्ध	विजय		
कटिभाग	सवारी लाभ	दक्षिण मणिबन्ध	कष्ट, धन नाश	वाममणिबन्ध	कीर्तिनाश	हृदय	धनलाभ	नासिका	मिष्टान्न भोजन
						वामपाद	नाश		
गुल्फ	बन्धन	केशान्त	मरण	दक्षिणपाद	गमन			मुख	कीर्तिनाश
								पादमध्य	मरण

का नाक के पास वाला भाग फड़कने से भय, मध्य का हिस्सा फडकने से चोरी या धनहानि और कान के पास वाला हिस्सा फडकने से कष्ट, मृत्यु अपनी या किसी आत्मीय की अथवा अन्य किसी भी प्रकार की अशुभ सूचना समझना चाहिए। साधारणतया स्त्री की बायी आँख का फडकना और पुरुष की दाहिनी आँख का फडकना शुभ माना जाता है, पर विशेष जानने के लिए दोनो ही नेत्रों के पृथक्-पृथक् भागो के फडकने का विचार करना चाहिए।

पैर, जंघा, घुटने, गुदा और कमर पर छिपकली गिरने से बुरा फल होता है, अन्यत्र प्राय शुभ फल होता है। पुरुषो के बाये अग का जो फल बतलाया गया है, उसे स्त्रियो के दाहिने भाग तथा पुरुषो के दाहिने अग के फलादेश को स्त्रियो के बायें भाग का फल जानना चाहिए। छिपकली के गिरने से और गिरगिट के ऊपर चढने से बराबर ही फल होता है। सक्षेप मे बतलाया गया है कि—

यदि पतति च पल्ली दक्षिणागे नराणा, स्वजनजनविरोधो वामभागे च लाभम्।
उदरशिरसि कण्ठे पृष्ठभागे च मृत्यु, करचरणहृदिस्थे सर्वसौख्य मनुष्य ॥

अर्थात् दाहिने अग पर पल्ली पतन हो तो आत्मीय लोगो मे विरोध होता है और वाम अग पर पल्ली के गिरने से लाभ होता है। पेट, सिर, कण्ठ, पीठ पर पल्ली के गिरने से मृत्यु तथा हाथ, पाँव और छाती पर गिरने से सब सुख प्राप्त होते हैं।

गणित द्वारा पल्ली पतन के प्रश्न का उत्तर

'तिथिप्रहरसयुक्ता तारकावारमिश्रिता।
नवभिस्तु हरेद् भाग शेष ज्ञेय फलाफलम् ॥
घात नाश तथा लाभ कल्याण जयमगले।
उत्साहहानी मृत्युञ्च छिक्का पल्ली च जाम्बुक ॥'

अर्थात् जिस दिन जिस प्रहर मे पल्लीपतन हुआ हो—छिपकली गिरी हो उस दिन की तिथि शुक्ल प्रतिपदा से गिनकर लेना, प्रात काल से प्रहर और अश्विनी से पतन के नक्षत्र तक लेना अर्थात् तिथि सख्या, नक्षत्र सख्या और प्रहर संख्या को योग कर देना, इस योग मे नौ का भाग देने पर एक शेष मे घात, दो मे नाश, तीन मे लाभ, चार मे कल्याण, पाँच मे जय, छ मे मगल, सात मे उत्साह, आठ मे हानि और नौ शेष में मृत्यु फल कहना चाहिए। उदाहरण—रामलाल के ऊपर चैत्र कृष्ण द्वादशी को अनुराधा नक्षत्र मे दिन मे 10 बजे छिपकली गिरी है। इसका फल गणित द्वारा विचार करना है, अत तिथि सख्या 27 (फाल्गुन शुक्ला 1 से चैत्र कृष्ण द्वादशी तक), नक्षत्र सख्या 17 (अश्विनी से अनुराधा तक), प्रहर सख्या 2 (प्रात काल सूर्योदय से तीन-तीन घटे का एक-एक

प्रहर लेना चाहिए) अत 27+17+2=46÷9=5 ल० और शेष 1 आया। यहाँ उदाहरण मे एक शेष रहा है, अत: इसका फल घात होता है। अर्थात् किसी दुर्घटना का शिकार यह व्यक्ति होगा ।

पल्ली-पतन का फलादेश इस प्रकार का भी मिलता है कि प्रात काल से लेकर मध्याह्न काल तक पल्लीपतन होने से विशेष अनिष्ट, मध्याह्न से सायकाल तक पल्लीपतन होने से साधारण अनिष्ट और सन्ध्याकाल के उपरान्त पल्ली-पतन होने से फलाभाव होता है। किसी-किसी का यह भी मत है कि तीनो कालो की सन्ध्याओ मे पल्ली-पतन होने से अधिक अनिष्ट होता है। इसका फल किसी-न-किसी प्रकार की अशुभ घटना का घटित होना है। दिन मे सोमवार को पल्ली-पतन होने से साधारण फल, मगलवार को पल्ली-पतन का विशेष फल, बुधवार को पल्ली-पतन होने से शुभ फल की वृद्धि तथा अशुभ फल की हानि, गुरुवार को पल्ली-पतन होने से शुभ फल का अधिक प्रभाव तथा अशुभ फल साधारण, शुक्रवार को पल्ली-पतन होने से सामान्य फलादेश, शनिवार को पल्ली-पतन होने से अशुभ फल की वृद्धि और शुभ फल की हानि एव रविवार को पल्ली-पतन होने से शुभ फल भी अशुभ फल के रूप मे परिणत हो जाता है। पल्ली-पतन का अनिष्ट फल तभी विशेष होता है, जब शनि या रविवार को भरणी या आश्लेषा नक्षत्र मे चतुर्थी या नवमी तिथि को सन्ध्याकाल मे पल्ली—छिपकली गिरती है। इसका फल मृत्यु की सूचना या किसी आत्मीय की मृत्यु-सूचना अथवा किसी मुकद्दमे की पराजय की सूचना समझनी चाहिए।

पञ्चदशोऽध्यायः

अथातः सम्प्रवक्ष्यामि ग्रहचारं जिनोदितम्।
तत्रादितः प्रवक्ष्यामि शुक्रचारं निबोधत ॥1॥

अब जिनेन्द्र भगवान् के द्वारा प्रतिपादित ग्रहाचार का निरूपण करता हूँ। इसमे सबसे पहले शुक्राचार का वर्णन किया जा रहा है ॥1॥

भूतं भव्यं भवद्वृष्टिमवृष्टिं भयमग्निजम् ।
जयाऽजयोरुजं [1]चापि सर्वान् सृजति भार्गवः ॥2॥

भूत-भविष्य फल, वृष्टि, अवृष्टि, भय, अग्निप्रकोप, जय, पराजय, रोग, धन-सम्पत्ति आदि समस्त फल का शुक्र निर्देशक है ॥2॥

म्रियन्ते वा प्रजास्तत्र वसुधा [2]वा प्रकम्पते ।
दिवि मध्ये यदा गच्छेदर्धरात्रेण भार्गवः ॥3॥

जब अर्धरात्रि के समय शुक्र आकाश मे गमन करता है, तब प्रजा की मृत्यु होती है और पृथ्वी कम्पित होती है ॥3॥

दिवि मध्ये यदा दृश्येच्छुक्रः सूर्यपथास्थितः ।
सर्वभूतभयं कुर्याद्विशेषाद्वर्णसंकरम् ॥4॥

सूर्य पथ मे स्थिर होकर—सूर्य के साथ रहकर शुक्र यदि आकाश के मध्य मे दिखलाई पड़े तो समस्त प्राणियो को भय करता है तथा विशेष रूप से वर्णसकरो के लिए भयप्रद है ॥4॥

अकाले उदित शुक्रः [3]प्रस्थितो वा यदा भवेत् ।
तदा त्रिसांवत्सरिकं ग्रीष्मे वपेत्सरसु वा ॥5॥

यदि असमय मे शुक्र उदित या अस्त हो तीन वर्षों तक ग्रीष्म और शरद् ऋतु मे ईति—प्लेग या अन्य महामारी होती ॥5॥

गुरुभार्गवचन्द्राणां रश्मयस्तु यदा हताः ।
एकाहमपि दीप्यन्ते तदा विन्द्याद्भयं खलु ॥6॥

यदि बृहस्पति, शुक्र और चन्द्रमा की किरणे घातित होकर एक दिन भी दीप्त हो तो अत्यन्त भय समझना चाहिए ॥6॥

भरण्यादीनि चत्वारि चतुर्नक्षत्रकाणि हि ।
षडेव मण्डलानि स्युस्तेषां नामानि लक्षयेत् ॥7॥

भरणी नक्षत्र को आदि कर चार-चार नक्षत्रो के छ· मण्डल होते है, जिनके नाम निम्न प्रकार अवगत करना चाहिए ॥7॥

सर्वभूतहितं रक्तं परुषं रोचनं तथा ।
ऊर्ध्वं चण्डं च तीक्ष्णं च [4]निरुक्तानि निबोधत ॥8॥

---

1 अधीश्च मु० । 2 च० मु० । 3 निवृत्तो वा यदा तदा । त्रिसांवत्सरिक ग्रीष्म शारद चेतभिर्भवेत् ॥ मु० । 4 निरुक्त तानि साधयेत् मु० ।

समस्त प्राणियों का कल्याण करने वाले रक्त, परुष, दीप्तिमान्, ऊर्ध्व, चण्ड और तीक्ष्ण ये छ मण्डल हैं। नाम के अनुसार उसका अर्थ अवगत करना चाहिए ॥8॥

[1]चतुष्कं च चतुष्कञ्च पञ्चकं त्रिकमेव च।
पञ्चकं षट्कविज्ञेयो भरण्यादौ तु भार्गवः ॥9॥

भरणी से चार नक्षत्र—भरणी, कृत्तिका, रोहिणी और मृगशिरा का प्रथम मण्डल, आर्द्रा से चार नक्षत्र—आर्द्रा, पुनर्वसु, पुष्य और आश्लेषा का द्वितीय मण्डल, मघा से पाँच नक्षत्र—मघा, पूर्वाफाल्गुनी, उत्तराफाल्गुनी, हस्त और चित्रा का तृतीय मण्डल, स्वाति से तीन नक्षत्र—स्वाति, विशाखा और अनुराधा का चतुर्थ मण्डल, ज्येष्ठा से पाँच नक्षत्र—ज्येष्ठा, मूल, पूर्वाषाढा, उत्तराषाढा और श्रवण का पचम मण्डल एव धनिष्ठा से छः नक्षत्र—धनिष्ठा, शतभिषा, पूर्वाभाद्रपद, उत्तराभाद्रपद और रेवती का षष्ठ मण्डल होता है। इन मण्डलो के नाम क्रमश. रक्त, परुष, रोचन, ऊर्ध्व, चण्ड और तीक्ष्ण हैं ॥9॥

प्रथमं च द्वितीयं च मध्यमे शुक्रमण्डले।
तृतीयं पञ्चमं चैव मण्डले साधुनिन्दिते ॥10॥

शुक्र के प्रथम और द्वितीय मण्डल मध्यम है तथा तृतीय और पचम साधुओ के द्वारा निन्दित हैं ॥10॥

चतुर्थं चैव षष्ठं च मण्डले प्रवरे स्मृते।
आद्ये द्वे मध्यमे विन्द्यान्निन्दिते त्रिकपञ्चमे ॥11॥

चतुर्थ और षष्ठ मण्डल उत्तम है। आदि के दो—प्रथम और द्वितीय मध्यम है तथा तृतीय और पचम निन्दित है ॥11॥

श्रेष्ठे चतुर्थषष्ठे च मण्डले भार्गवस्य [2]हि।
शुक्लपक्षे [3]प्रशस्येत् सर्वत्वस्तमनोदये ॥12॥

शुक्ल पक्ष मे अनुदित—अस्त शुक्र के चौथे और छठे मण्डल की प्रशसा की गयी है ॥12॥

[4]अथ गोमूत्रगतिमान् भार्गवो नाभिवर्षति।
विकृतानि च वर्तन्ते सर्वमण्डलवुर्गतौ ॥13॥

यदि वक्रगति शुक्र हो तो वर्षा नही होती है। चौथे और षष्ठ के अतिरिक्त अन्य सभी मण्डलो में रहने वाला शुक्र विकृत—उत्पातकारक होता है ॥13॥

---

1 यह श्लोक मुद्रित प्रति मे नही है। 2. तु मु०। 3. प्रशसन्ति मु०। 4. अथातो वक्र- मु०।

प्रथमे मण्डले शुक्रो यदास्तं यात्युदेति च ।
मध्यमा सस्यनिष्पत्तिः[1]र्मध्यमं वर्षमुच्यते ॥14॥

यदि प्रथम मण्डल मे शुक्र अस्त हो या उदित हो—भरणी, कृत्तिका, रोहिणी और मृगशिरा नक्षत्र मे शुक्र अस्त हो या उदित हो तो उस वर्ष मध्यम वर्षा होती है और फसल भी मध्यम ही होती है ॥14॥

भोजान् कलिंगानुंगांश्च काश्मीरान् दस्युमालवान् ।
यवनान् सौरसेनांश्च गोद्विजान् शबरान् वधेत् ॥15॥

भोज, कलिंग, उग, काश्मीर, यवन, मालव, सौरसेन, गो, द्विज और शबरो का उक्त प्रकार के शुक्र के अस्त और उदय से वध होता है ॥15॥

पूर्वत: [2]शीरकालिंगान् मागधो जयते नृप. ।
[3]सुभिक्षं क्षेममारोग्यं मध्यदेशेषु [4]जायते ॥16॥

पूर्व मे शीर और कलिंग को मागध नृप जीतता है तथा मध्य देश मे सुवृष्टि, क्षेम और आरोग्य रहता है ॥16॥

यदा चान्ये तिरोहन्ति तत्रस्थभार्गवं ग्रहाः ।
[5]कुण्डानि अंगा वधय: क्षत्रिया: लम्बशाकुना: ॥17॥

[6]धार्मिका: शूरसेनाश्च, किराता मांससेवका ।
यवना भिल्लदेशाश्च प्राचीनाश्चीनदेशजा: ॥18॥

यदि शुक्र को अन्य ग्रह आच्छादित करते हो तो विदर्भ और अग देश के क्षत्रिय, लवादि पक्षियो का वध होता है । धार्मिक शूरसेन देशवासी, मत्स्याहारी, किरात, यवन, भिल्ल और चीन देशवासियो को शुक्र की पीडा होने से पीडित होना पडता है ॥17-18॥

द्वितीयमण्डले शुक्रो यदास्त यात्युदेति वा ।
शारदस्योपघाताय विषमां वृष्टिमादिशेत् ॥19॥

यदि द्वितीय मडल मे शुक्र अस्त हो या उदित हो तो शरद् ऋतु मे होनेवाली फसल का उपघात होता है और वर्षा हीनाधिक होती है ॥19॥

अहिच्छत्रं च कच्छं च सूर्यावर्त च पीडयेत् ।
[7]ततोत्पातनिवासानां देशानां क्षयमादिशेत् ॥20॥

---

1 वर्षं च मध्यम नृणाम् मु० । 2 नर मु० । 3 सुवृष्टि मु० । 4 विनिदिशेत् मु० । 5 कुण्डा निजघा मु० । 6 धर्मिण सूरसेनाश्च मत्स्यकीरा अनेकश । किराना महिषाश्चैव पीड्यन्ते शुक्रपीडिते मु० । 7 यह पक्ति मुद्रित प्रति मे नही है ।

अहिच्छत्र, कच्छ और सूर्यावर्त को पीडा होती है। उत्पात वाले देशों का विनाश होता है ॥20॥

यदा वाऽन्ये तिरोहन्ति तत्रस्थं भार्गवं ग्रहाः।
निषादा. [1]पाण्डवा म्लेच्छाः संकुलस्थाश्च साधवः ॥21॥
[2]कौण्डजाः पुरुषादाश्च शिल्पिनो बर्बरा· शकाः।
वाहीका यवनाश्चैव मण्डूकाः केकरास्तथा ॥22॥
पाञ्चाला. कुरवश्चैव पीड्यन्ते [3]सयुगन्धराः।
एकमण्डलसंयुक्ते भार्गवे पीडिते फलम् ॥23॥

यदि द्वितीय मण्डल स्थित शुक्र को अन्य ग्रह आच्छादित करें तो निषाद, पाण्डव, म्लेच्छ, साधु, व्यापारी, कौण्डेय, पुरुषार्थी, शिल्पी, बर्बर, शक, वाहीक, यवन, मण्डूक, केकर, पाचाल, कौरव और गान्धार आदि को पीडा होती है। यह एक मण्डल मे स्थित शुक्र के पीडन का फल है ॥21-23॥

तृतीये मण्डले शुक्रो यदास्तं यात्युदेति वा।
तदा धान्यं सनिचयं पीड्यन्ते [4]व्यूहकेतवः ॥24॥
वाटधानाः कुनाटाश्च कालकूटश्च पर्वत ।
ऋषयः कुरुपाञ्चालाश्चातुर्वर्णश्च पीड्यते ॥25॥
वाणिजश्चैव [5]कालज्ञ· पण्या [6]वासास्तथाऽश्मकाः।
अवन्तीश्चापरान्ताश्च सपल्याः सचराचराः ॥26॥
पीड्यन्ते [7]भयेनाथ क्षुधारोगेण चार्दिताः।
[8]महान्तश्शवराश्चैव पारसीकास्सयावना· ॥27॥

यदि तृतीय मण्डल मे शुक्र उदय या अस्त को प्राप्त हो तो धान्य और उसका समूह विनाश को प्राप्त होता है। मूर्ख और धूर्त पीडित होते हैं। वाटधान, कुनाट, कालकूट पर्वत, ऋषि, कुरु, पाचाल और चातुर्वर्ण को पीडा होती है। व्यापारी, कुलीन, ज्योतिषी, दुकानदार, वनवासी-ऋषि-मुनि, दक्षिणी प्रदेश, अवन्तिनिवासी, उपरान्तक, गोमास भक्षी शवरादि, पारसीक, यवनादिक भयभीत और शत्रु के द्वारा पीडित होते है तथा क्षुधा की पीडा भी उठानी पडती है। शुक्र के स्नेह, संस्थान और वर्ण के द्वारा नृपपीडन का भी विचार करना चाहिए ॥24-27॥

---

1 पाण्डिका मु०। 2. कोटिका मु०। 3 सकुगान्धरा। मु०। 4 मूढकेतव मु०। 5 कुलजा मु०। 6 वनवासी तथा मु०। 7 भयशस्त्राभ्या क्षुधारोगेण चार्दिता मु०। 8 स्नेहसस्थानवर्णैश्च विचार्य नृपपीडनम् ॥ मु०।

चतुर्थे मण्डले शुक्रो कुर्यादस्तमनोदयम् ।
तदा सस्यानि जायन्ते महामेघाः सुभिक्षदाः ॥28॥

पुण्यशीलो जनो राजा [1]प्रजानां मधुरोहितः ।
बहुधान्यां महीं विद्यादुत्तमं देववर्षणम् ॥29॥

[2]अन्तवस्त्वावन्तश्च मूलकाः कास्यपास्तथा ।
बाह्लो [3]वृद्धोऽर्थवन्तश्च पीड्यन्ते सर्वपास्तथा ॥30॥

यदा चान्ये ग्रहा यान्ति [4]रौरवा म्लेच्छसंकुलाः ।
टङ्कणाश्च पुलिन्दाश्च किराताः [5]सौरकर्णजाः ॥31॥

पीड्यन्ते पूर्ववत्सर्वे दुर्भिक्षेण भयेन च ।
ऐक्ष्वाको म्रियते राजा शेषाणां क्षेममादिशेत् ॥32॥

यदि चतुर्थ मण्डल मे शुक्र का उदय या अस्त हो तो वर्षा अच्छी होती है, मेघ जल की अधिक वर्षा करते है, सुभिक्ष और फसल उत्तम उत्पन्न होती है। राजा, प्रजा और पुरोहित धर्म का आचरण करने वाले होते हैं। पृथ्वी मे अनाज खूब उत्पन्न होते है तथा वर्षा भी उत्तम होती है। अन्तधा, अवन्ती, मूलिका, श्यामिका और सर्वत्र पीडा होती हे। यदि शुक्र अन्य ग्रहो द्वारा आच्छादित हो तो म्लेच्छ, शिल्पी, पुलिन्द, किरात्, सौरकर्णज और पूर्ववत् अन्य सभी भय और दुर्भिक्ष से पीडित होते हैं। इक्ष्वाकुवशी राजा की मृत्यु होती है, किन्तु अवशेष सभी राजाओ की क्षेम-कुशल बनी रहती है ॥28-32॥

यदा [6]तु पञ्चमे शुक्रः कुर्यादस्तमनोदयौ ।
अनावृष्टिभयं घोरं दुर्भिक्षं जनयेत् तदा ॥33॥

सर्वं श्वेतं तदा धान्यं क्रेतव्यं सिद्धिमिच्छता ।
त्याज्या देशास्तथा चेमे निर्ग्रन्थैः साधुवृत्तिभिः ॥34॥

स्त्रीराज्य ताम्रकर्णाश्च कर्णाटा. कमनोत्कटाः ।
बाह्लीकाश्च विदर्भाश्च मत्स्यकाशीसतस्कराः ॥35॥

स्फीताश्च रामदेशाश्च सूरसेनास्तथैव च ।
जायन्ते वत्सराजाश्च परं यदि [7]तथा हताः ॥36॥

---

1 प्रजाश्चापि पुरोहित. मु०। 2 अन्तधाश्चाप्यावन्तश्च मूलिका श्यामकास्तथा। मु०। 3 विजश्च दन्ताश्च मु०। 4 सौरेया मु०। 5 सौष्टकर्णिका मु०। 6 वा मु०। 7 तदा हता. मु०।

क्षुधामरणरोगेभ्यश्चतुर्भागे भविष्यति।
एषु देशेषु चान्येषु भद्रबाहुवचो यथा ॥37॥

यदि पंचम मण्डल मे शुक्र का उदय या अस्त हो तो अनावृष्टि, दुर्भिक्ष और भय उत्पन्न करता है। धन-धान्य की वृद्धि चाहने वालो को सभी श्वेत पदार्थ और अनाज खरीद लेना चाहिए और निर्ग्रन्थ साधुओ को इन देशो का त्याग कर देना चाहिए। स्त्री राज्य, ताम्रकर्ण, कर्णाटिक, आसाम, बाह्लीक, विदर्भ, मत्स्य, काशी, स्फीत देश, रामदेश, सूरसेन, वत्सराज इत्यादि देशों में क्षुधा, मरण, रोग, दुर्भिक्ष आदि का कष्ट होगा, इस प्रकार का भद्रबाहु स्वामी का वचन है ॥33-37॥

यदा चान्येऽभिगच्छन्ति तत्रस्थं भार्गवं ग्रहाः।
[1]सौराष्ट्राः सिन्धुसौवीराः मन्तिसाराश्च साधवः ॥38॥
[2]अनार्या. कच्छयौधेयाः सांवृष्टार्जुननायकाः।
पीड्यन्ते तेषु देशेषु [3]म्लेच्छो वै म्रियते नृपः ॥39॥

यदि पचम मडल मे शुक्र अन्य ग्रहो के द्वारा अभिभूत हो तो सौराष्ट्र, सिन्धु देश, सौवीर देश, मन्तिसार देश, साधुजन, अनार्य (या आनर्त) देश, कच्छ देश, सन्धि के योग्य है। पूर्व दिशा के स्वामी भी सन्धि करने के योग्य हैं। इन देशो से पीडा होती है तथा म्लेच्छ नृप का मरण होता है ॥38-39॥

यदा तु मण्डले षष्ठे कुर्यादस्तमथोदयम्।
शुक्रस्तदा प्रकुर्वीत भयानि तत्र क्षुद्भयम् ॥40॥
[4]रसाः पाञ्चालबाह्लीका गन्धाराश्च [5]गवोलकाः।
विदर्भाश्च दशार्णाश्च पीड्यन्ते नात्र संशयः ॥41॥
द्विगुण धान्यमर्घेण नोत्तरं वर्षयेत् तदा।
क्षतैः शस्त्रं च व्याधिं च मूर्च्छयेत् तादृशेन यत् ॥42॥

यदि शुक्र छठे मडल मे अस्त या उदय को प्राप्त हो तो साधारण भयो को उत्पन्न करता है तथा यहाँ क्षुधा का भय होता है। वत्स, पांचाल, बाह्लीक, गान्धार, गवोलक, विदर्भ, दशार्ण निस्सन्देह पीडा को प्राप्त होते हैं। अनाज का भाव दूना महँगा हो जाता है तथा उत्तरार्ध चातुर्मास में वर्षा भी नही होती है। शस्त्र, घात और मूर्च्छा इस प्रकार के शुक्र मे होती है ॥40-42॥

---

1 सुराष्ट्रा· मु०। 2 आनर्त्तकच्छसैन्धेया· साम्बष्ठाश्चार्जुना जनाः। मु०। 3 म्लेच्छस्य म्रियते मु०। 4. वच्छा । 5. गमेलिका. मु०।

[1]यदा चान्येऽभिगच्छन्ति तत्रस्थं भार्गवं ग्रहाः।
हिरण्यौषधयश्चैव शौण्डिका दूतलेखकाः ॥43॥
काश्मीरा बर्बराः पौण्ड्रा भृगुकच्छा अनुप्रजाः।
पीड्यन्तेऽवन्तिगाश्चैव म्रियन्ते च नृपास्तथा ॥44॥

यदि अन्य ग्रह इस छठे मडल मे स्थित शुक्र के साथ सयोग करें तो हिरण्य, औषधि, शौण्डिक, दूतलेखक, काश्मीर, बर्बर, पौण्ड्र, भडौच, आवन्तिक पीडित होते हैं और नृप का मरण होता है ॥43-44॥

नागवीथीति विज्ञेया भरणी कृत्तिकाऽश्विनी।
[2]रोहिण्यार्द्रा मृगशिरगजवीथीति निर्दिशेत् ॥45॥
ऐरावणपथं विन्द्यात् पुष्याऽऽश्लेषा पुनर्वसु।
फाल्गुनौ च मघा चैव वृषवीथीति संज्ञिता ॥46॥
गोवीथी रेवती चैव द्वे च प्रोष्ठपदे तथा।
जरद्गवपथं [3]विन्द्याच्छ्रवणे वसुवारुणे ॥47॥
अजवीथी विशाखा च चित्रा स्वाति. करस्तथा।
ज्येष्ठा मूलाऽनुराधासु मृगवीथीति सज्ञिता ॥48॥
अभिजिद् द्वे तथाषाढे वैश्वानरपथ· स्मृतः।
शुक्रस्याग्रगताद्वर्णात् संस्थानाश्च फलं वदेत् ॥49॥

अश्विनी, भरणी और कृत्तिका की सज्ञा नागवीथि, रोहिणी, मृगशिरा और आर्द्रा की गजवीथि, पुनर्वसु, पुष्य और आश्लेषा की सज्ञा ऐरावतवीथि, पूर्वाफाल्गुनी, उत्तराफाल्गुनी और मघा की सज्ञा वृषवीथि, पूर्वाभाद्रपद, उत्तराभाद्रपद और रेवती की गोवीथि, श्रवण, धनिष्ठा और शतभिषा की जरद्गववीथि, हस्त, विशाखा और चित्रा की अजवीथि, ज्येष्ठा, मूल और अनुराधा की मृगवीथि एव पूर्वाषाढा, उत्तराषाढा और स्वाति या अभिजित् की वैश्वानरवीथि है। शुक्र के अग्रगत वर्ण और आकार से फल का निरूपण करना चाहिए ॥45-49॥

तज्जातप्रतिरूपेण जधन्योत्तममध्यमम्।
स्नेहादिषु शुभं ब्रूयाद् रूक्षादिषु [4]न संशय. ॥50॥

तीन-तीन नक्षत्रो की एक-एक वीथि बतायी गयी है। इन नक्षत्रो मे शुक्र के

1 यदाऽश्वाऽन्ये मु०। 2 सस्थाना रोहिणी चार्द्रा, गजवीथीति निर्दिशेत्। मु०। 3 च्छ्रवण वसुवारुण मु०। 4. भय वदेत् मु०।

गमन करने से जघन्य, उत्तम और मध्यम फल होता है। अतएव इन नक्षत्रो में निस्सन्देह शुभाशुभ फल का प्रतिपादन करना चाहिए ॥50॥

तिष्यो ज्येष्ठा तथाऽऽश्लेषा [1]हरिणो मूलमेव च।
हस्तं चित्रा मघाऽषाढ़े शुक्रो दक्षिणतो व्रजेत् ॥51॥

पुष्य, आश्लेषा, ज्येष्ठा, मृगशिरा, मूल, हस्त, चित्रा, मघा, पूर्वाषाढा इन नक्षत्रो मे शुक्र दक्षिण से गमन करता है ॥51॥

शुष्यन्ते तोयधान्यानि राजानः क्षत्रियास्तथा।
उग्रभोगाश्च पीड्यन्ते धननाशो [2]विनायकः ॥52॥

दक्षिण मार्ग से जब शुक्र गमन करता है तो जल और अनाज के पौधे सूख जाते है तथा राजा, क्षत्रिय और महाजन पीडित होते हैं एव धन का नाश होता है ॥52॥

वैश्वानरपथो नाम्ना यदा हेमन्तग्रीष्मयोः।
मारुताऽग्निभय [3]कुर्यात् [4]वारीं च चतुःषष्टिकाम् ॥53॥

जब हेमन्त और ग्रीष्म ऋतु में वैश्वानरवीथि मे शुक्र गमन करता है तो वायु और अग्नि भय, मृत्यु आदि फल घटित होते है तथा एक आढक प्रमाण जल बरसाता है ॥53॥

एतेषामेव मध्येन यदा गच्छति भार्गवः।
विषम [5]वर्षमाख्याति [6]स्थले बीजानि वापयेत् ॥54॥

जब शुक्र इनके मध्य मे गमन करता है तो सभी बातें विषम हो जाती हैं अर्थात् वर्ष निकृष्ट होता है। उस वर्ष बीज स्थल मे बोना चाहिए ॥54॥

खारी द्वात्रिंशिका ज्ञेया मृगवीथीति संज्ञिता।
[7]व्याधय त्रिषु विज्ञेयास्तथा[8] चरति भार्गवे ॥55॥

जब शुक्र मृगवीथि मे विचरण करता है तब धान्य 32 खारी प्रमाण उत्पन्न होते हैं और दैहिक, दैविक तथा भौतिक तीनो प्रकार की व्याधियाँ अवगत करनी चाहिए ॥55॥

एतेषां तु यदा शुक्रो व्रजत्युत्तरस्तथा।
विषमं वर्षमाख्याति [9]निम्ने बीजानि वापयेत् ॥56॥

---

1 सन्ध्याया मु०। 2 विनाशक मु०। 3 मृत्यु मु०। 4 खारी मु०। 5 सर्वं मु०। 6 बीजानि तु स्थले वपेत् मु०। 7 व्याधयश्च मु०। 8. यदा मु०। 9 भृश निम्ने वपेत्सदा मु०।

जब शुक्र उत्तर की ओर जाता है तो सभी वस्तुओं को विषम समझना चाहिए तथा निम्न स्थान में बीज बोना चाहिए ॥56॥

कोद्रवाणां च बीजानां खारी षोडशिका वदेत् ।
अजवीथीति विज्ञेया पुनरेवा न संशयः ॥57॥

यदि शुक्र अजवीथि मे गमन करे तो निस्सन्देह कोद्रव बीज सालह खारी प्रमाण उत्पन्न होते हैं ॥57॥

कृत्तिका रोहिणी चार्द्रा मघा मैत्र पुनर्वसुः ।
स्वातिस्तथा विशाखासु फाल्गुन्योरुभयोस्तथा ॥58॥
दक्षिणेन यदा शुक्रो व्रजत्येतैर्यदा समम् ।
मध्यमं वर्षमाख्याति समे बीजानि वापयेत् ॥59॥
[1]निष्पद्यन्ते च शस्यानि मध्यमेनापि वारिणा ।
जरद्गवपथश्चैव [2]खारीं द्वात्रिंशिकां भवेत् ॥60॥

कृत्तिका, रोहिणी, आर्द्रा, मघा, अनुराधा, पुनर्बसु, स्वाति, विशाखा, पूर्वाफाल्गुनी और उत्तराफाल्गुनी इन नक्षत्रो के साथ जब शुक्र दक्षिण की ओर गमन करता है, तो मध्यम वर्ष होता है तथा समभूमि मे बीज बोने से अच्छी फसल होती है। कम वर्षा होने पर भी फसल उत्तम होती है तथा जरद्गववीथि से शुक्र का गमन होने पर द्वादश खारी प्रमाण धान्य की उत्पत्ति होती है ॥58-60॥

एतेषामेव मध्येन यदा गच्छति भार्गवः ।
तदापि मध्यमं वर्षं मीषत् पूर्वा विशिष्यते ॥61॥

उपर्युक्त नक्षत्रो के मध्य से जब शुक्र गमन करे तो मध्यम वर्ष होता है तथा पूर्वोक्त वर्ष की अपेक्षा कुछ उत्तम रहता है ॥61॥

सर्वं निष्पद्यते धान्यं न व्याधिर्नापि चेतयः ।
खारी तदाऽष्टिका ज्ञेया [3]गोवीथीति च संज्ञिता ॥62॥

सभी प्रकार के धान्य उत्पन्न होते है, किसी भी प्रकार की महामारी और व्याधियाँ नही होतीं। इस गोवीथि में शुक्र के गमन से आठ खारी प्रमाण धान्य उत्पन्न होता है ॥62॥

एतेषामेव यदा शुक्रो व्रजत्युत्तरतस्तदा ।
मध्यमं सर्वमाचष्टे नेतयो नापि व्याधयः ॥63॥

---

1. निष्पद्यते तथा शस्य मन्देनाप्यथ वारिणा मु० । 2. खारी द्वादशिका मु० । 3 सा वीथी सारसंज्ञिता ।

जब उपर्युक्त नक्षत्रों मे शुक्र उत्तर की ओर से गमन करता है तो मध्यम वर्षा होता है तथा महामारी और व्याधियों का अभाव होता है ॥63॥

निष्पत्ति: सर्वधान्यानां भयं चात्र न मूर्च्छति।
खारीचतुष्का विज्ञेया वृषवीथीति संज्ञिता ॥64॥

जब वृषवीथि मे शुक्र गमन करता है तो सभी प्रकार के धान्यों की उत्पत्ति होती है, भय और आतंक का अभाव रहता है तथा चार खारी प्रमाण धान्य उत्पन्न होता है ॥65॥

अभिजिच्छ्रवणं चापि धनिष्ठावारुणे तथा।
रेवती भरणी चैव तथा भाद्रपदाऽश्विनी ॥65॥

निचयास्तदा विपद्यन्ते खारी विन्द्याच्च पञ्चिका।
ऐरावणपथो ज्ञेयोऽश्रेष्ठ एव प्रकीर्तित: ॥66॥

अभिजित्, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा, रेवती, भरणी, पूर्वाभाद्रपद, उत्तराभाद्रपद और अश्विनी इन नक्षत्रो मे शुक्र का गमन करना ऐरावणपथ माना जाता है। इस मार्ग मे गमन करने से समुदायों को विपत्ति होती है और पाँच खारी प्रमाण उत्पन्न होता है ॥65-66॥

[1]एषां यदा दक्षिणतो भार्गव: प्रतिपद्यते।
बहूदकं तदा विन्द्यात् [2]महाधान्यानि वापयेत् ॥67॥

उपर्युक्त नक्षत्रो मे यदि शुक्र दक्षिण मार्ग से गमन करे तो अत्यधिक वर्षा होती है तथा स्थल में बीज बोने पर भी धान्य की उत्पत्ति होती है ॥67॥

जलजानि तु शोभन्ते ये च जीवन्ति वारिणा।
खारी तदाष्टिका ज्ञेया गजवीथीति संज्ञिता ॥68॥

जलचर जन्तु शोभित और आनन्दित होते हैं तथा इसमें आठ खारी प्रमाण धान्य और इसकी संज्ञा गजवीथि है ॥68॥

एतेषामेव तु मध्येन यदा याति तु भार्गव:।
[3]स्थलेष्वप्तबीजानि जायन्ते निरुपद्रवम् ॥69॥

जब शुक्र उपर्युक्त नक्षत्रो के मध्य से गमन करता है तो स्थल में बोये गये बीज भी निर्विघ्न होते हैं ॥69॥

---

1. एतेषां मु०। 2 महाधान्य स्थले वपेत् मु०। 3. स्थलेषूप्तानि बीजानि जायन्ते निरुपद्रवम् मु०।

निचयाश्च विनश्यन्ति खारी द्वादशिका भवेत् ।
दानशीला नरा[1] हृष्टा नागवीथीति संज्ञिता ॥70॥

नागवीथि मे शुक्र के गमन करने से समुदायो की हानि होती है तथा द्वादश खारी प्रमाण धान्य उत्पन्न होता है और मनुष्य दानशील होते हैं ॥70॥

[2]एवमेव यदा शुक्रो व्रजत्युत्तरतस्तदा ।
स्थले धान्यानि जायन्ते शोभन्ते जलजानि वा ॥71॥

जब शुक्र उपर्युक्त नक्षत्रो मे उत्तर की ओर से गमन करता है तो स्थल मे भी फसल उत्पन्न होती है और जलज जीव शोभित होते है ॥71॥

सर्वोत्तरा नागवीथी सर्वदक्षिणतोऽग्निजा ।
गोवीथी मध्यमा ज्ञेया मार्गाश्चैवं त्रयः स्मृताः ॥72॥

नागवीथि सबसे उत्तर, वैश्वानर वीथि दक्षिण और गोवीथि मध्यमा होती है, इस प्रकार तीन प्रकार के मार्ग बतलाये गये है ॥72॥

उत्तरेणोत्तरं विद्यान्मध्यमे मध्यमं फलम् ।
दक्षिणे तु जघन्यं स्याद् भद्रबाहुवचो यथा ॥73॥

उत्तरवीथि से गमन करने पर उत्तम फल, मध्यवीथि से गमन करने पर मध्यम फल और दक्षिण से गमन करने पर जघन्य फल होता है, ऐसा भद्रबाहु स्वामी का वचन है ॥73॥

यत्रोदितश्च विचरेन्नक्षत्रं भार्गवस्तथा ।
नृपं पुरं धनं मुख्यं पशुं हन्याद् विलम्बकः ॥74॥

निम्न प्रकार प्रतिपादित रविवारादि क्रूर वारो मे उक्त नक्षत्रो मे जब शुक्र गमन करता है तो राजा, नगर, धान्य, धन और मुख्य पशुओ का अविलम्ब नाश होता है अर्थात् श्रेष्ठ वारो मे उत्तर फल और क्रूर वारो मे गमन करने पर निकृष्ट फल प्राप्त होता है ॥74॥

आदित्ये विचरेद् रोगं मार्गेऽतुल्यामय भयम् ।
गर्भोपघातं कुरुते ज्वलनेनाविलम्बितम् ॥75॥
[3]ईतिव्याधिभयं चौरान् कुरुतेऽन्तःप्रकोपनम् ।
प्रविशन् भार्गवः सूर्ये जिह्मेनाथ विलम्बिना ॥76॥

---

1 हृष्टा मु० । 2 एवामेव मु० । 3 ईतिव्याधि-इत्यादि यह पक्ति हस्तलिखित प्रति मे अधिक मिलती है ।

शुक्र के सूर्य मे विचरण करने पर रोग, अत्यधिक भय, शीघ्र ही अग्नि के द्वारा गर्भोपघात आदि फल घटित होते हैं, शुक्र के सूर्य में प्रवेश करने पर व्याधि, भय, दारुण प्रकोप आदि फल होते हैं ॥75-76॥

प्रथमे मण्डले शुक्रो विलम्बी डमरायते।
पूर्वापरा दिशो हन्यात् पृष्ठे तेन विलम्बिना॥77॥

यदि प्रथम मण्डल में शुक्र लम्बायमान होकर अधिक समय तक रहे तो पूर्व और पश्चिम दिशा मे घात करता है ॥77॥

द्वितीयमण्डले शुक्रश्चिरगो मण्डलेरितः।
हन्याद्देशान् धनं तोयं सकलेन विलम्बिना॥78॥

यदि द्वितीय मण्डल मे शुक्र सूर्य से प्रेरित होकर अधिक समय तक रहे तो देश के धन, जल एव धान्य का विनाश करता है ॥78॥

तृतीये चिरगो व्याधि मृत्युं सृजति भार्गवः।
चलितेन विलम्बेन मण्डलोक्ताश्च या दिशः॥79॥

यदि तृतीय मण्डल मे शुक्र अधिक समय तक विचरण करे तो व्याधि और मृत्यु मण्डल की दिशा होती है अर्थात् तृतीय मण्डल की जिस दिशा मे अधिक समय तक शुक्र गमन करता है उस दिशा मे व्याधि और मृत्यु फल घटित होते है ॥79॥

चतुर्थे विचरन् शुक्रो [1]शयी हन्यात् सुयानकान्।
शस्यशेष च सृजते निन्दितेन विलम्बिना॥80॥

चतुर्थ मण्डल मे शयनावस्थागत शुक्र के रहने से अच्छे वाहनो का विनाश होता है तथा निन्दित विलम्बी शुक्र धान्य का विनाश करता है ॥80॥

पञ्चमे विचरन् शुक्रो दुर्भिक्षं जनयेत् तदा।
[2]हन्याच्च मण्डलं देशं क्षीणेनाथ विलम्बिना॥81॥

क्षीण और विलम्बी शुक्र यदि पचम मण्डल मे विचरण करे तो दुर्भिक्ष उत्पन्न होता है तथा उस मण्डल और देश का विनाश होता है ॥81॥

यदा तु मण्डले षष्ठे भार्गवश्चिरगो भवेत्।
तदा तं मण्डलं देशं हन्ति लम्बेन पाशिना॥82॥

जब षष्ठ मण्डल मे शुक्र अधिक समय तक गमन करता है तो लम्बायमान

1 सयी मु०। 2. हन्यात्तं मु०।

पाश के द्वारा उस मण्डल और देश का विनाश करता है ।।82।।

हीने चारे जनपदानतिरिक्ते नृपं वधेत् ।
समे तु समतां विन्द्याद्विषमे विषमं वदेत् ।।83।।

हीनचार—हीन गतिवाला शुक्र जनपद का विनाश, अतिरिक्त—अधिक गतिवाला शुक्र नृप का वध, समगतिवाला शुक्र समता और विषमगति वाला शुक्र विषमता करता है । अर्थात् शुक्र अपनी गति के अनुसार शुभाशुभ फल होता है ।।83।।

कृत्तिकां रोहिणीं चित्रां [1]मैत्रमित्रं तथैव च ।
वर्षासु दक्षिणाद्यासु यदा चरति भार्गवः ।।84।।
व्याधिश्चेतिश्च दुर्वृष्टितदा धान्यं विनाशयेत् ।
महार्घं जनमारिश्च जायते नात्र संशय ।।85।।

कृत्तिका, रोहिणी, चित्रा, अनुराधा, विशाखा, इन नक्षत्रों में, दक्षिणादि दिशाओं में, वर्षाकाल में जब शुक्र गमन करता है, तब निम्न फल घटित होते हैं । उक्त प्रकार के शुक्र में व्याधि, ईति, महामारी, अनावृष्टि या अतिवृष्टि, महँगाई, जनमारी एवं धान्य का नाश निस्सन्देह होता है । तात्पर्य यह है कि उक्त नक्षत्रों में जब शुक्र शीघ्र गति से गमन करता है या अधिक मन्दगति से गमन करता है, तब उपर्युक्त अशुभ फल घटता है ।।84-85।।

एतेषामेव मध्येन मध्यमं फलमादिशेत् ।
उत्तरेणोत्तरं विन्द्यात् सुभिक्षं क्षेममेव च ।।86।।

जब उपर्युक्त नक्षत्रों में शुक्र मध्यम गति से गमन करता है, तो मध्यम फल घटता है । उत्तर दिशा में शुक्र के गमन करने से सुभिक्ष और कल्याण होता है ।।86।।

मघायां च विशाखायां वर्षासु मध्यमस्थितः ।
तदा सम्पद्यते सस्यं समर्घं च सुखं शिवम् ।।87।।

वर्षाकाल में जब शुक्र मघा और विशाखा में मध्यम गति से स्थित रहता है तो धान्य की खूब उत्पत्ति होने के साथ वस्तुओं के भाव में समता, सुख और कल्याण होता है ।।87।।

पुनर्वसुमाषाढां च याति मध्येन भार्गवः ।
[2]तदा सुवृष्टिञ्च विन्द्यात् व्याधिश्च समुदीर्यते ।।88।।

1. मैत्रमैन्द्र मु० । 2. यह पंक्ति हस्तलिखित प्रति में नहीं है ।

यदि पुनर्वसु और पूर्वाषाढ़ा में शुक्र मध्यम गति से गमन करे तो व्याधि और वर्षा सर्वत्र होती है ॥88॥

आषाढां श्रवणं चैव यदि मध्येन गच्छति।
कुमारांश्चैव पीड्येतानार्यान्श्चान्त्यवासिनः ॥89॥

उत्तराषाढ़ा और श्रवण मे जब शुक्र मध्यम गति से गमन करता है तो कुमार, अनार्य और अन्त्यजो को पीड़ा होती है ॥89॥

[1]प्रजापत्यमाषाढां च यदा मध्येन गच्छति।
तदा व्याधिश्च चौराश्च पीड्यन्ते वणिजस्तथा ॥90॥

रोहिणी और उत्तराषाढ़ा मे जब शुक्र मध्यम गति से गमन करता है तो व्यापारी, रोगी और चोरो को पीड़ा होती है ॥90॥

चित्रामेव विशाखां च याम्यमार्द्रां च रेवतीम्।
मैत्रे भद्रपदां चैव याति वर्षति भार्गवः ॥91॥

चित्रा, विशाखा, भरणी, आर्द्रा, रेवती, अनुराधा और पूर्वभाद्रपद मे जब शुक्र गमन करता है तो वर्षा होती है ॥91॥

फल्गुन्यथ भरण्यां च चित्रवर्णस्तु भार्गवः।
तदा तु तिष्ठेद् गच्छेद् तु[2] चक्रं भाद्रपदं जलम् ॥92॥

जब विचित्र वर्ण का शुक्र पूर्वाफाल्गुनी और भरणी मे गमन करता है या स्थित रहता है तो भाद्रपद मास मे निश्चय से वर्षा होती है ॥92॥

प्रत्यूषे पूर्वतः शुक्रः पृष्ठतश्च बृहस्पतिः।
यदाऽन्योऽन्यं [3]न पश्येत् तदा चक्रं [4]परिवर्तते ॥93॥
धर्मार्थकामा लुप्यन्ते सम्भ्रमो वर्णसंकरः।
नृपाणां च समुद्योगो यतः शुक्रस्ततो जयः ॥94॥
अवृष्टिश्च भयं घोरं दुर्भिक्षं च तदा भवेत्।
आढकेन तु धान्यस्य प्रियो भवति ग्राहकः ॥95॥

प्रातःकाल मे पूर्व में शुक्र हो और उसके पीछे बृहस्पति हो और परस्पर मे एक-दूसरे को न देखते हो तो शासनचक्र में परिवर्तन होता है; धर्म, अर्थ, काम लुप्त हो जाते हैं, वर्णसंकरों मे आकुलता व्याप्त हो जाती है और राजाओं की

1 प्रा० मु०। 2 वा ध्रुव भाद्रपदे जलम् मु०। 3. स मु०। 4 प्रवर्तते मु०।

उद्योग में प्रवृत्ति होती है। क्योंकि जिस ओर शुक्र रहता है, उसी ओर जय होती है। तात्पर्य यह है कि जो नृप शुक्र के सम्मुख रहता है, उसे विजय लाभ होता है। अनावृष्टि, घोर दुर्भिक्ष तथा एक आढक प्रमाण जल की वर्षा होने से धान्य ग्राहकों के लिए प्रिय हो जाते हैं अर्थात् अनाज का भाव महँगा होता है ॥93-95॥

यदा च पृष्ठतः शुक्र पुरस्ताच्च बृहस्पतिः।
यदा लोकयतेऽन्योन्यं तदेव हि फलं तदा ॥96॥

जब शुक्र पीछे हो और बृहस्पति आगे हो और परस्पर दृष्टि भी हो तो भी उपर्युक्त फल की प्राप्ति होती है ॥96॥

कृत्तिकायां यदा शुक्र. विकृष्य [1]प्रतिपद्यते।
ऐरावणपथे यद्वत् तद्वद् ब्रूयात् फल तदा ॥97॥

यदि शुक्र कृत्तिका नक्षत्र मे खिचा हुआ-सा दिखलायी पड़े तो जो फलादेश शुक्र का ऐरावणवीथि मे शुक्र के गमन करने का है, वही यहाँ पर भी समझना चाहिए ॥97॥

रोहिणीशकट शुक्रो यदा समभिरोहति।
चक्रारूढाः प्रजा ज्ञेया महद्भयं विनिर्दिशेत् ॥98॥
पाण्ड्यकेरलचोलाश्च [2]चेद्याश्च [3]करनाटकाः।
[4]चेरा विकल्पकाश्चैव पीड्यन्ते तादृशेन यत् ॥99॥

यदि शुक्र शकटाकार रोहिणी मे आरोहण करे तो प्रजा शासन मे आरूढ रहती है और महान् भय होता है। पाण्ड्य, केरल, चोल, कर्नाटक, चेदि, चेर और विदर्भ आदि प्रदेश पीडा को प्राप्त होते हैं ॥98-99॥

प्रदक्षिणं यदा याति तदा हिंसति स प्रजाः ॥
उपघात बहुविधं वा शुक्र कुरुते भुवि ॥100॥

जब शुक्र दक्षिण की ओर गमन करता है तो प्रजा का विनाश एव पृथ्वी पर नाना प्रकार के उपद्रव, उत्पात आदि करता है ॥100॥

संव्यानमुपसेवानो [5]भद्रेयं सोमशर्मण.।
सोमं च सोमजं चैव सोमपार्श्वं च हिंसति ॥101॥

1 प्रतिदृश्यते मु०। 2 ज्येष्ठाश्च मु०। 3 करवाटका मु०। 4 चौरा मु०। 5 भद्रेय मु०।

बायी ओर से शुक्र गमन करे तो सोम और शर्मा नामधारियों के लिए कल्याणप्रद होता है। सोम, सोम से उत्पन्न और सोमपार्श्व की हिंसा करता है ॥101॥

वत्सा विदेहजिह्वाश्च[1] वसा [2]मद्रास्तथोरगाः।
पीड्यन्ते ये च तद्भक्ता [3]सन्ध्यानमारोहेत् यथा ॥102॥

वत्स, विदेह, कुन्तल, वसा, मद्रा, उरगपुर आदि प्रदेश शुक्र के बायी ओर जाने पर पीडित होते हैं ॥102॥

अलंकारोपघाताय यदा दक्षिणतो व्रजेत्।
सौम्ये सुराष्ट्रे च तदा वामगः परिहिंसति ॥103॥

जब शुक्र दक्षिण की ओर से गमन करता है तो अलंकारो का विनाश होता है तथा बायी ओर से गमन करने पर सुन्दर सुराष्ट्र का घात करता है ॥103॥

आर्द्रां हत्वा निवर्तेत यदि शुक्रः कदाचन।
संग्रामास्तत्र जायन्ते मांसशोणितकर्दमा ॥104॥

यदि शुक्र आर्द्रा का घात कर परिवर्तित हो तो युद्ध होते हैं तथा पृथ्वी मे रक्त और मास की कीचड हो जाती है ॥104॥

तैलिका [4]सारिकाश्चान्त्यं चामुण्डामांसिकास्तथा।
[5]आषण्डाः क्रूरकर्माण पीड्यन्ते तावृशेन यत् ॥105॥

उक्त प्रकार के शुक्र के होने से तेली, सैनिक, ऊँट, भैंसे तथा कूँची आदि से कठोर क्रूर कार्य करने वाले पीडित होते है ॥105॥

दक्षिणेन यदा गच्छेद् द्रोणमेघं तदा दिशेत्।
वामगो रुद्रकर्माणि भार्गवः परिहिंसति ॥106॥

यदि आर्द्रा का घात कर दक्षिण की ओर शुक्र गमन करे तो एक द्रोण प्रमाण जल की वर्षा होती है और बायी ओर शुक्र गमन करे तो रौद्रकर्म—क्रूर कर्मों का विनाश होता है ॥106॥

पुनर्वसुं यदा रोहेद् गावश्च गोजीविनस्तथा।
हासं प्रहासं राष्ट्रं च विदर्भान् दासकांस्तथा ॥107॥

जब शुक्र पुनर्वसु नक्षत्र मे आरोहण करता है तो गाय और गोपाल आदि मे

---

1 जिह्वाश्च मु०। 2 भौमास्त मु०। 3 सध्याने मारुते यथा मु०। 4 [illegible] उष्ट्रा माहिषकास्तथा। मु०। 5. ईषिडाः मु०।

हास-परिहास, आमोद-प्रमोद होता है। विदर्भ और दासों को भी प्रसन्नता और आमोद-प्रमोद प्राप्त होता है ॥107॥

शम्बरान् [1]पुलिन्दकाश्च श्वानवण्ढांश्च वल्कलान्।
पीडयेच्च [2]महासण्डान् शुक्रस्तादृशेन यत् ॥108॥

उक्त प्रकार का शुक्र भील, पुलिन्द, श्वान, नपुंसक, बल्कलधारी और अत्यन्त नपुंसकों को अत्यन्त पीड़ित करता है ॥108॥

प्रदक्षिणे प्रयाणे तु द्रोणमेकं तदा विशेत्।
वामयाने तदा पीडां ब्रूयात्तत्सर्वकर्मणाम् ॥109॥

पुनर्वसु का घातकर शुक्र के दाहिनी ओर से प्रयाण करने पर एक द्रोण प्रमाण जल की वर्षा कहनी चाहिए और बायीं ओर से प्रयाण करने पर सभी कार्यों का घात कहना चाहिए ॥109॥

पुष्यं प्राप्तो द्विजान् हन्ति [3]पुनर्वसावपि शिल्पिनः।
[4]पुरुषान् धर्मिणश्चापि पीड्यन्ते चोत्तरायणाः ॥110॥

पुष्य नक्षत्र को प्राप्त होने वाला उत्तरायण शुक्र द्विज, प्रजावान् और धनुष के शिल्पी और धार्मिक व्यक्तियों को पीडित करता है ॥110॥

बङ्गा उत्कल[5]-चाण्डालाः पार्वतेयाश्च ये नराः।
इक्षुमत्याश्च पीड्यन्ते आर्द्रामारोहणं यथा[6] ॥111॥

जब शुक्र आर्द्रा में आरोहण करता है तो बंगवासी, उत्कलवासी चाण्डाल, पहाड़ी व्यक्ति और इक्षुमती नदी के किनारे के निवासी व्यक्तियों को पीडा होती है ॥111॥

[7]मत्स्यभागीरथीनां तु शुक्रोऽश्लेषां यदाऽऽरुहेत्।
वामगः [8]सृजते व्याधिं दक्षिणो [9]हिंसते प्रजाः ॥112॥

जब शुक्र बायें जाता हुआ आश्लेषा में आरोहण करता है तो मत्स्यदेश और भागीरथी के तटनिवासियों को व्याधि होती है और दक्षिण से गमन करता हुआ आरोहण करता है तो प्रजा की हिंसा होती है ॥112॥

मघानां दक्षिणं पार्श्वं भिनत्ति यदि भार्गवः।
आढकेन तदा धान्यं प्रियं विन्द्यादसंशयम् ॥113॥

---

1. मणिबन्धांश्च मु०। 2. महाम्० मु०। 3 प्राज्ञांश्च धनुशिल्पिनः मु०। 4 मरुण्डा मु०। 5 दुकूल- मु०। 6 यदा मु०। 7. पणीभीमरथीनां मु०। 8 सृजति मु०। 9 हिंसति।

यदि शुक्र मघा नक्षत्र के दक्षिण भाग का भेदन करे तो आढक प्रमाण जल की वर्षा होती है और धान्य महँगा होता है ॥113॥

विलम्बेन यदा तिष्ठेन् मध्ये भित्त्वा यदा मघाम् ।
आढकेन हि धान्यस्य प्रियो भवति ग्राहकः ॥114॥

जब मघा के मध्य का भेदन कर शुक्र अधिक समय तक रहता है तो आढक प्रमाण जल की वर्षा होती है और धान्य प्रिय होता—महँगा होता है ॥114॥

मघानामुत्तरं पार्श्वं भिनत्ति यदि भार्गवः ।
कोष्ठागाराणि पीड्यन्ते तदा [1]धान्यमुपहिंसन्ति ॥115॥

यदि मघा के उत्तर भाग का शुक्र भेदन करे तो धान्य के लिए हिंसा होती है और कोष्ठागार—खजाची लोग पीड़ित होते हैं ॥115॥

प्राज्ञा महान्तः पीड्यन्ते ताम्रवर्णो [2]यदा भृगुः ।
प्रदक्षिणे विलम्बश्च [3]महदुत्पादयेज्जलम् ॥116॥

जब शुक्र ताम्रवर्ण का होता है तो विद्वान् मनीषी व्यक्ति पीड़ित होते हैं और प्रदक्षिणा में शुक्र विलम्ब करे तो अत्यधिक वर्षा होती है ॥116॥

पूर्वाफाल्गुनीं सेवेत गणिका रूपजीविनीः ।
पीडयेद् वामगः कन्यामुग्रकर्माणं दक्षिणः ॥117॥

पूर्वाफाल्गुनी में शुक्र का बायीं ओर से आरोहण हो तो रूप से आजीविका करने वाली गणिकाएँ पीडित होती हैं और दाहिनी ओर से आरोहण हो तो उग्रकार्य करने वाले पीडित होते हैं ॥117॥

शबरान् प्रतिलिङ्गानि पीडयेदुत्तरां [4]श्रितः ।
वामगः स्थविरान् हन्ति दक्षिणः स्त्रीर्निपीडयेत् ॥118॥

उत्तराफाल्गुनी नक्षत्र में बायीं ओर से शुक्र आरोहण करे तो शबर, ब्रह्मचारी, स्थविर—निवासी राजा को पीड़ा होती है तथा दाहिनी ओर से आरोहण करने पर स्त्रियों को पीड़ा होती है ॥118॥

काशांश्च रेवतीहस्ते पीडयेत् भार्गवः स्थितः ।
दक्षिणे चोरघाताय वामश्चोरजयावहः ॥119॥

दाहिनी ओर से रेवती और हस्त नक्षत्र में शुक्र स्थित हो तो काश और चोरों का घात करता है और बाँयी ओर से स्थित होने पर चोरों को जय-लाभ देता है ॥119॥

1. धान्यार्थमुपहिंसति मु० । 2 स्तदा नृपा. मु० । 3. महान् मु० । 4 गत. मु० ।

चित्रस्थ: पीडयेत् सर्वं विचित्रं गणितं लिपिम् ।
कोशलान् मेखलान् शिल्पं द्यूतं कनक[1]वाणिजान् ॥120॥

चित्रा नक्षत्र स्थित शुक्र गणित, लिपि, साहित्य आदि सभी का घात करता है। कला-कौशल, द्यूत, स्वर्ण का व्यापार आदि को पीडित करता है ॥120॥

आरूढपल्लवान् हन्ति [2]मारीचोवारकोशलान् ।
मार्जारनकुलांश्चैव कक्षमार्गे च पीड्यते ॥121॥

चित्रा नक्षत्र पर आरूढ़ शुक्र पल्लव, सौराष्ट्र, कोशल का विनाश करता है और कक्षमार्ग मे स्थित होने पर मार्जार-बिल्ली और नेवलो को पीडित करता है ॥121॥

[3]चित्रमूलाश्च त्रिपुरां वातन्वतमथापि च ।
वामग: सृजते व्याधिं दक्षिणो [4]वणिकान् वधेत् ॥122॥

यदि वाम भाग से गमन करता हुआ शुक्र चित्रा के अन्तिम चरण मे कुछ समय तक अपना विस्तार करे तो व्याधि की उत्पत्ति एव दक्षिण ओर से गमन करता हुआ अन्तिम चरण मे स्थित हो तो व्यापारियो का विनाश करता है ॥122॥

स्वातौ दशार्णांश्चेति सुराष्ट्रं चोपहिंसति ।
आरूढो नायकं हन्ति वामो [5]वामं तु दक्षिण: ॥123॥

स्वाति नक्षत्र मे शुक्र गमन करे तो दशार्ण और सौराष्ट्र की हिंसा करता है तथा बायी ओर से आरूढ होने वाला शुक्र बायी ओर के नायक और दाहिनी ओर से आरूढ़ होने वाला शुक्र दाहिनी ओर के नायक का वध करता है ॥123॥

विशाखायां समारूढो [6]वरसामन्त जायते ।
अथ विन्द्यात् महापीडां [7]उशना स्रवते यदि ॥124॥

यदि विशाखा नक्षत्र मे शुक्र आरूढ़ हो तो श्रेष्ठ सामन्त उत्पन्न होते है और शुक्र आदि स्रवण करे—च्युत हो तो महा पीडा होती है ॥124॥

दक्षिणस्तु मृगान् हन्ति [8]पश्चिमो पाक्षिणान् यथा ।
अग्निकर्माणि वामस्थो हन्ति सर्वाणि भार्गव: ॥125॥

दक्षिणस्थ शुक्र मृगो—पशुओ का विनाश करता है, पश्चिमस्थ पक्षियो का विनाश और वामस्थ समस्त अग्नि कार्यों का बिनाश करता है ॥125॥

---

1 वाणिजम् मु० । 2 सिलीन्ध्र रूक्षकोशलान् मु० । 3 चित्रचूला चित्रपुरी मु० । 4 गणिकां मु० । 5 वातेऽस्तु मु० । 6 वामवासी भवेत्तम मु० । 7 पीडयेदुशनास्तथा मु० । 8 पक्षिणश्चलितो यत: मु० ।

मध्येन प्रज्वलन् गच्छन् विशाखामश्वजे नृपम् ।
उत्तरोऽवन्तिजान् हन्ति [1]स्त्रीराज्यस्थांश्च दक्षिणः ।।126।।

यदि शुक्र प्रज्वलित होता हुआ उत्तर से विशाखा और अश्विनी नक्षत्र के मध्य से गमन करता है तो अवन्ति देश मे उत्पन्न व्यक्तियो का घात एवं दक्षिण से गमन करता है तो स्त्री राज्य के व्यक्तियो का विनाश करता है ।। 126।।

अनुराधास्थितो शुक्रो यायिनः प्रस्थितान् वधेत् ।
मर्दते च मिथो भेदं दक्षिणे न तु वामगः ।।127।।

अनुराधा स्थित शुक्र यायी—आक्रमण करने के लिए प्रस्थान करने वालों के वध का संकेत करता है । यदि अनुराधा नक्षत्र का शुक्र मर्दन करे तो परस्पर मे मतभेद होता है । यह फल दक्षिण की ओर का है, बायी ओर का नही ।।127।।

मध्यदेशे तु दुर्भिक्षं जयं विन्द्यादुदये ततः ।
फलं प्राप्यन्ति चारेण भद्रबाहुवचो यथा ।।128।।

यदि अनुराधा नक्षत्र मे शुक्र का उदय हो तो मध्य देश में दुर्भिक्ष और जय होती है । भद्रबाहु स्वामी का ऐसा वचन है कि शुक्र का फल उसके विचरण के अनुसार प्राप्त होता है ।।128।।

ज्येष्ठास्थः पीडयेज्ज्येष्ठान् [2]इक्ष्वाकून् गन्धमादजान् ।
मर्दनारोहणे [3]व्याधि मध्यदेशे [4]ततो वधेत् ।।129।।

ज्येष्ठा नक्षत्र मे स्थित शुक्र इक्ष्वाकुवंश तथा गन्धमादन पर्वत पर स्थित बड़े व्यक्तियो को पीडित करता है । मर्दन और आरोहण करने वाला शुक्र विनाश करता है तथा मध्य देश के मत-मतान्तरो का निराकरण करता है ।।129।।

दक्षिणः क्षेमकृज्ज्ञेयो वामगस्तु भयंकरः ।
[5]प्रसन्नवर्णो विमल स विज्ञेयो [6]सुखंकरः ।।130।।

दक्षिण की ओर से ज्येष्ठा नक्षत्र मे गमन करने वाला शुक्र क्षेम करने वाला होता है और बायी ओर से गमन करने वाला शुक्र भयकर होता है तथा निर्मल श्रेष्ठवर्ण का शुक्र सुखकारक होता है ।।130।।

हन्ति मूलफलं मूले [7]कन्दानि च वनस्पतिम् ।
औषध्योर्मलयं चाऽपि माल्यकाष्ठोपजीविनः ।।131।।

मूल नक्षत्र मे स्थित शुक्र वनस्पति के फल, मूल, कन्द, औषधि, चन्दन एवं

1 स्त्रैराज्य० मु० । 2. इक्ष्वाकानश्चारपद्रिकान् मु० । 3 हन्ति मु० । 4 मतान् वधेत् मु० । 5 प्रशस्त मु० । 6. सुखावह मु० । 7. कन्दानथ मु० ।

चंदन-लकड़ी आदि के द्वारा आजीविका करने वालों का विनाश करता है।।131।।

यदाऽऽवहेत् प्रमर्देत कुटुम्बा भूश्च दुःखिताः।
कन्दमूलं फलं हन्ति दक्षिणो वामगो जलम् ।।132।।

दक्षिण की ओर से गमन करता हुआ शुक्र जब मूल नक्षत्र का आरोहण या प्रमर्दन करे तो कुटुम्ब, भूमि आदि दुःखित होती है, कन्द, मूल, फल का विनाश होता है और बायीं ओर से गमन करता हुआ जल का विनाश करता है ।।132।।

[1]सर्वभूमिजलेचारं आषाढस्थः प्रपीडयेत् ।
[2]शान्तिकरश्च मेघश्च तालोरारोह-मर्दने ।।133।।

पूर्वाषाढा नक्षत्र मे स्थित शुक्र सभी भूमि और जलचर आदि को पीड़ा देता है और शुक्र के आरोहण और मर्दन करने से शान्तिकर जल की वर्षा होती है ।।133।।

दक्षिणः स्थविरान् हन्ति वामगो भयमावहेत् ।
सुवर्णो मध्यमः स्निग्धो भार्गवः सुखमावहेत् ।।134।।

दक्षिण की ओर से गमन कर पूर्वाषाढा नक्षत्र मे विचरण करने वाला शुक्र स्थावरो—निवासी राजाओं का घात करता है और बायी ओर गमन करने वाला शुक्र भय उत्पन्न करता है तथा सुन्दर, स्निग्ध मध्यम से गमन करने वाला शुक्र सुख उत्पन्न करता है ।।134।।

यद्युत्तरासु तिष्ठेच्च पाञ्चालान् मालवत्रयान् ।
पीडयेन्मर्द्दयेद्द्रोहाद्विश्वासाद्भेदकृत्तथा ।।135।।

यदि उत्तराषाढ़ा नक्षत्र मे शुक्र स्थित हो तो पाञ्चाल तथा तीनो मालवो को पीड़ित, मर्दित, द्रोहित एव विश्वास के कारण भेद उत्पन्न करता है ।।135।।

अभिजित्स्थः कुरून् हन्ति कौरव्यान् क्षत्रियांस्तथा ।
[3]पशवः साधवश्चापि पीड्यन्ते रोह-मर्दने ।।136।।

अभिजित् नक्षत्र पर जब शुक्र स्थित रहता है तो कौरवों तथा क्षत्रियो का मर्दन करता है तथा अभिजित् नक्षत्र मे आरोहण और मर्दन करने पर शुक्र पशु और साधुओ को पीड़ित करता है ।।136।।

यदा प्रदक्षिणं गच्छेत् पञ्चत्व कुरुमाविशेत् ।
वामतो गच्छमानस्तु ब्राह्मणानां भयंकरः ।।137।।

इस नक्षत्र के लिए दक्षिण की ओर से जब शुक्र गमन करता है तो कुरुवंशी

1 भूमिजलचरान् मु० । 2. शातकेशांश्च मरीश्च मु० । 3. नवश्च मु० ।

क्षत्रियों के लिए मृत्यु एवं बायीं ओर से जब गमन करता है तो ब्राह्मणों के लिए भयंकर होता है ।।137।।

सौरसेनांश्च मत्स्यांश्च श्रवणस्थ: प्रपीडयेत् ।
वंगांगमगधान् हन्यादारोहणप्रमर्दने ।।138।।

यदि शुक्र श्रवण नक्षत्र में स्थित हो तो सौरसेन और मत्स्य देश को पीड़ित करता है । श्रवण नक्षत्र में आरोहण और प्रमर्दन करने से शुक्र बंग, अंग और मगध का विनाश करता है ।।138।।

दक्षिण: श्रवणं गच्छेद् द्रोणमेकं निवेदयेत् ।
वामगस्तूपघाताय नृणां च प्राणिनां तथा ।।139।।

यदि दक्षिण की ओर से शुक्र श्रवण नक्षत्र मे जाय तो एक द्रोण प्रमाण जल की वर्षा होती है और बायी ओर से गमन करे तो मनुष्य और पशुओं के लिए घातक होता है ।।139।।

धनिष्ठास्थो धनं हन्ति समृद्धांश्च कुटुम्बिन: ।
पाञ्चालान् सूरसेनांश्च मत्स्यानारोहमर्दने ।।140।।

यदि धनिष्ठा नक्षत्र में शुक्र गमन करे तो समृद्धशाली, धनिक कुटुम्बियों के धन का अपहरण करता है । धनिष्ठा नक्षत्र के आरोहण और मर्दन करने पर शुक्र पाञ्चाल, सूरसेन और मत्स्य देश का विनाश करता है ।।140।।

दक्षिणो धनिनो हन्ति वामगो व्याधिकृद् भवेत् ।
मध्यग: सुप्रसन्नश्च सम्प्रशास्यति भार्गव: ।।141।।

दक्षिण की ओर गमन करने वाला शुक्र धनिकों का विनाश और बायीं ओर से गमन करने वाला शुक्र व्याधि करने वाला होता है । मध्य से गमन करने वाला शुक्र उत्तम होता है तथा सुख और शान्ति की वृद्धि करता है ।।141।।

शलाकिन: शिलाकृतान् वारुणस्थ: प्रहिंसति ।
कालकूटान् कुनाटांश्च हन्यादारोहमर्दने ।।142।।

शतभिषा नक्षत्र में स्थित शुक्र शलाकी और शिलाकृतों की हिंसा करता है । इस नक्षत्र में आरोहण और मर्दन करने वाला शुक्र कालकूट और कुनाटों की हिंसा करता है ।।142।।

दक्षिणो नीचकर्माणि हिंसते नीचकर्मिण: ।
वामगो दारुणं व्याधिं तत: सृजति भार्गव: ।।143।।

दक्षिण से गमन करने वाला शुक्र नीच कार्य और नीच कार्य करने वालों का

विनाश करता है तथा वाम ओर से गमन करने वाला शुक्र भयकर रोग उत्पन्न करता है ॥143॥

यदा भाद्रपदां सेवेत् धूर्तान् दूतांश्च हिंसति।
मलयान्मालवान् हन्ति मर्दनारोहणे तथा ॥144॥

पूर्वाभाद्रपद नक्षत्र मे स्थित शुक्र धूर्त और दूतो की हिंसा करता है तथा मर्दन और आरोहण करने वाला शुक्र मलय और मालवानो की हिंसा करता है ॥144॥

दूतोपजीविनो वैद्यान् दक्षिणस्थ: प्रहिंसति।
वामग: स्थविरान् हन्ति भद्रबाहुवचो यथा ॥145॥

दक्षिस्थ शुक्र दौत्य कार्य द्वारा आजीविका करने वालो और वैद्यो का घात करता है तथा वामस्थ शुक्र स्थविरो की हिंसा करता है, ऐसा भद्रवाहु स्वामी का वचन है ॥145॥

उत्तरां तु यदा सेवेज्जलजान् हिंसते सदा।
वत्सान् वाह्लीकगान्धारानारोहणप्रमर्दने ॥146॥

उत्तराभाद्रपद नक्षत्र मे स्थित शुक्र जलज—जलनिवासी और जल मे उत्पन्न प्राणियो का घात करता है। इस नक्षत्र मे आरोहण और प्रमर्दन करने वाला शुक्र वत्स्य, वाह्लीक और गान्धार देशो का विनाश करता है ॥146॥

दक्षिणे स्थावरान् हन्ति वामग: स्याद् भयंकर.।
[1]मध्यग. सुप्रसन्नश्च भार्गव· सुखमावहेत् ॥147॥॥

दक्षिणस्थ शुक्र स्थावरों का विनाश करना है और वामग शुक्र भयकर होता है। मध्यग शुक्र प्रसन्नता और सुख प्रदान करता है ॥147॥

भयान्तिकं नागराणां नागरांश्चोपहिंसति।
भार्गवो रेवतीप्राप्तो दु·प्रभश्च कृशो यदा ॥148॥

रेवती नक्षत्र को प्राप्त होने वाला शुक्र नागरिक और नगरो के लिए भय और आतंक करने वाला है ॥148॥

मर्दनारोहणे हन्ति नाविकानथ नागरान्।
दक्षिणो गोपकान् हन्ति चोत्तरो[2] भूषणानि तु ॥149॥

रेवती नक्षत्र को मर्दन और आरोहण करने वाला शुक्र नाविक और नागरिको की हिंसा करता है। दक्षिणस्थ शुक्र गोपो का घात करता है और उत्तरस्थ भूषणो का विनाश करता है ॥149॥

---

1 मध्यम. मु० । 2. उत्तरे मु० ।

हन्यादश्विनीप्राप्तः सिन्धुसौवीरमेव च ।
मत्स्यांश्च कुनटान् रूढो मर्दमानश्च हिंसति ॥150॥

अश्विनी नक्षत्र मे स्थित शुक्र सिन्धु और सौवीर देश का विनाश करता है। इस नक्षत्र का आरोहण और मर्दन करने से शुक्र मत्स्य और कुनटो का घात करता है ॥150॥

अश्वपण्योपजीविनो दक्षिणो हन्ति भार्गवः ।
तेषां व्याधिं तथा मृत्युं सृजत्यथ तु [1]वामगः ।

दक्षिणस्थ भार्गव—शुक्र अश्व-घोड़ो के व्यापारी और दुकानदारो का घात करता है और वामग शुक्र उनके लिए व्याधि और मृत्यु करता है ॥151॥

भृत्यकरान् यवनांश्च भरणीस्थः प्रपीडयेत् ।
किरातान् मद्रदेशानामाभीरान्मर्द-रोहणे ॥152॥

भरणी स्थित शुक्र भृत्यकर्म करने वालो एव यवनो—मुसलमानो को पीड़ा करता है। इस नक्षत्र का मर्दन और रोहण करने वाला शुक्र किरात, मद्र और आभीर देश का घात करता है ॥152॥

प्रदक्षिणं प्रयातश्च द्रोणं मेघं निवेदयेत् ।
वामगः संप्रयातस्य रुद्रकर्माणि हिंसति ॥153॥

इस नक्षत्र से दक्षिण की ओर गया शुक्र एक द्रोण प्रमाण मेघो की वर्षा करता है और बायीं ओर गया शुक्र रुद्र कार्यों का विनाश करता है ॥153॥

एवमेतत् फलं कुर्यादनुचारं तु भार्गवः ।
पूर्वतः पृष्ठतश्चापि [2]समाचारो भवेल्लघुः ॥154॥

इस प्रकार शुक्र अपने विचरण का फल देता है। पूर्व से और पीछे से शुक्र के गमन का सक्षिप्त फल कहा गया है ॥154॥

उदये च प्रवासे च ग्रहाणां कारणं रविः ।
प्रवासं छादयन्कुर्यात् मुञ्चमानस्तथोदयम् ॥155॥

ग्रहो के उदय और प्रवास में कारण सूर्य है। यहाँ प्रवास का अभिप्राय ग्रहों के अस्त होने से है । जब सूर्य ग्रहों को अच्छादित करता है तो यह उनका अस्त कहा जाता है और जब छोडता है तो उदय माना जाता है।155॥

---

1. भार्गव मु० । 2. समाचारे तु यल्लघु. मु० ।

प्रवासाः पञ्च शुक्रस्य पुरस्तात् पञ्च पृष्ठतः।
मार्गे तु मार्गसन्ध्यास्च वक्रे वीथीसु निर्दिशेत् ॥156॥

शुक्र के सम्मुख और पीछे पाँच-पाँच प्रकार के अस्त हैं। मार्गी होने पर सन्ध्या होती हैं तथा वक्री का कथन भी वीथियों मे अवगत करना चाहिए ॥156॥

त्रैमासिकः प्रवास स्यात् पुरस्तात् दक्षिणे पथि।
पञ्चसप्ततिर्मध्ये स्यात् पञ्चाशीतिस्तथोत्तरे ॥157॥

चतुर्विंशत्यहानि स्युः पृष्ठतो दक्षिणे पथि।
मध्ये पञ्चदशाहानि षडहान्युत्तरे पथि ॥158॥

दक्षिण मार्ग मे शुक्र का सम्मुख त्रैमासिक अस्त है, मध्य मे 75 दिनो का और उत्तर मे 85 दिनों का अस्त होता है। दक्षिण मार्ग मे पीछे की ओर 24 दिनों का, मध्य में पन्द्रह दिनों का और उत्तर मार्ग मे 6 दिनो का अस्त होता है ॥157-158॥

ज्येष्ठानुराधयोश्चैव [1]द्वौ मासौ पूर्वतो विदुः।
अपरेणाष्टरात्रं तु तौ च सन्ध्ये स्मृते बुधैः ॥159॥

ज्येष्ठा और अनुराधा में पूर्व की ओर से द्विमास—दो महीनो की और पश्चिम से आठ रात्रि की सन्ध्या विद्वानों द्वारा प्रतिपादित की गयी है ॥159॥

मूलादिदक्षिणो मार्गः फाल्गुन्यादिषु मध्यम.।
उत्तरश्च भरण्यादिर्जघन्यो मध्यमोऽन्तिमौ ॥160॥

मूलादि नक्षत्र में दक्षिण मार्ग, पूर्वाफाल्गुनी आदि नक्षत्रों में मध्यम और भरणी आदि नक्षत्र में उत्तर मार्ग होता है। इनमें प्रथम मार्ग जघन्य है और अन्तिम दोनो मध्यम हैं ॥160॥

[2]वामो वदेत् यदा खारीं विंशकां त्रिंशकामपि।
करोति नागवीथीस्थो भार्गवश्चारमार्गगः[3] ॥161॥

नागवीथि में विचरण करने वाला वामगत शुक्र दश, बीस और तीस खारी अन्न का भाव करता है ॥161॥

विंशका त्रिंशका खारी चत्वारिंशतिकाऽपि वा।
वामे शुक्रे तु विज्ञेया गजवीथीमुपागते ॥162॥

---

1 द्विमास मु०। 2 वामोऽथ दशकां मु०। 3 ०मार्गतः मु०।

गजवीथि में विचरण करने वाला वाम शुक्र बीस, तीस और चालीस खारी प्रमाण अन्न का भाव करता है ॥162॥

ऐरावणपथे त्रिंशच्चत्वारिंशद्वथापि वा।
पंचाशीतिका ज्ञेया खारी तुल्या तु भार्गवः ॥163॥

ऐरावणवीथि मे विचरण करने वाला शुक्र तीस, चालीस और पचासी खारी प्रमाण अन्न का भाव करता है ॥163॥

विंशका त्रिंशका खारी चत्वारिंशतिकाऽपि वा।
[1]व्योमगो वीथिमागम्य [2]करोत्यर्घेण भार्गवः ॥164॥

बीस, तीस और चालीस खारी प्रमाण अन्न का भाव व्योमवीथि मे गमन करने वाला शुक्र करता है ॥164॥

चत्वारिंशत् पंचाशद् वा षष्टिं वाऽथ समादिशेत्।
जरद्गवपथं प्राप्ते भार्गवे खारिसंज्ञया ॥165॥

जरद्गव वीथि को प्राप्त होने वाला शुक्र चालीस, पचास और साठ खारी प्रमाण अन्न का भाव करता है ॥165॥

सप्तति चाथ वाऽशीतिं नवतिं वा तथा दिशेत्।
अजवीथीगते शुक्रे भद्रबाहुवचो यथा ॥166॥

अजवीथि को प्राप्त होने वाला शुक्र सत्तर, अस्सी अथवा नब्बे खारी प्रमाण अन्न का भाव करता है, ऐसा भद्रबाहु स्वामी का वचन है ॥166॥

[3]विंशत्यशीतिकां खारिं शतिकामप्ययथा दिशेत्।
मृगवीथीमुपागम्य विवर्णो भार्गवो यदा ॥167॥

जब शुक्र विवर्ण होकर मृगवीथि को प्राप्त करता है तो बीस, अस्सी अथवा सौ खारी प्रमाण अन्न का भाव होता है ॥167॥

बिच्छिम्मविषमृणालं न च पुष्प फलं यदा।
वैश्वानरपथं प्राप्तो यदा वामस्तु भार्गवः ॥168॥

जब वामस्थ शुक्र वैश्वानर वीथि मे गमन करता है तब कमल का डण्ठल, विसपत्र, पुष्प और फल उत्पन्न नही होते है ॥168॥

---

1 वामगो मु० । 2 करोत्यर्थं च भार्गव मु० । 3 शतिका द्विशता खारी, त्रिंशता वा तदा भवेत् मु० ।

[1]अनुलोमो विजयं ब्रूते प्रतिलोमः पराजयम् ।
उदयास्तमने शुक्रो बुधश्च कुरुते तथा ॥169॥

शुक्र और बुध अनुलोम उदय, अस्त को प्राप्त होने पर विजय करते हैं और प्रतिलोम उदय, अस्त को प्राप्त होने पर पराजय ॥169॥

मार्गमेकं समाश्रित्य सुभिक्षक्षेमदस्तथा ।
उशना विशतितरां सानुलोमो न संशयः ॥170॥

शुक्र सीधी दिशा मे एक-सा ही गमन करता है तो निस्सन्देह सुभिक्ष और कल्याण देता है ॥170॥

यस्य देशस्य नक्षत्रं शुक्रो हन्याद्विकारगः ।
तस्मात् भयं परं विन्द्याच्चतुर्मासं न चापरम् ॥171॥

विकृत होकर शुक्र जिस देश के नक्षत्र का घात करता है, उस देश को, उस घातित होने वाले दिन से चार महीने तक भय होता है, अन्य कोई दुर्घटना नही घटती है ॥171॥

शुक्रोदये ग्रहो याति प्रवासं यदि कश्चन ।
क्षेमं सुभिक्षमाचष्टे[2] [3]सर्ववर्षसमस्तदा ॥172॥

शुक्र के उदय होने पर यदि कोई ग्रह अस्त हो जाय तो सुभिक्ष, कल्याण और समयानुकूल यथेष्ट वर्षा होती है तथा वर्ष भर एक-सा आनन्द रहता है ॥172॥

बलक्षोभो भवेच्छ्यामे मृत्युः कपिलकृष्णयो ।
नीले गवां [4]च मरणं रूक्षे वृष्टिक्षयः क्षुधा ॥173॥

यदि शुक्र श्यामवर्ण का हो तो बल क्षुब्ध होता है । पिंगल और कृष्ण वर्ण का शुक्र हो तो मृत्यु, नीलवर्ण का होने पर गायो का मरण और रूक्ष होने पर वर्षा का नाश तथा क्षुधा की वेदना का सूचक होता है ॥173॥

वाताक्षिरोगो माञ्जिष्ठे पीते शुक्रे ज्वरो भवेत् ।
कृष्णे विचित्रे वर्णे च क्षयं लोकस्य निर्दिशेत् ॥174॥

शुक्र के मंजिष्ठ वर्ण होने पर वात और अक्षिरोग, पीतवर्ण होने पर ज्वर और विचित्र कृष्ण वर्ण होने पर लोक का क्षय होता है ॥174॥

---

1. तेषा विजयमाख्याति मु० । 2. माख्याति मु० । 3 महद्वर्षं च तत्तथा मु० । 3 तु मु० ।

नभस्तृतीयभागं च आरुहेत् त्वरितो यदा।
नक्षत्राणि च चत्वारि [1]प्रवासमारुहश्चरेत् ॥175॥

जब शुक्र शीघ्र ही आकाश के तृतीय भाग का आरोहण करता है तब चार नक्षत्रों मे प्रवास—अस्त होता है ॥175॥

एकोनविंशवृक्षाणि मासानष्टौ च भार्गवः।
चत्वारि पृष्ठतश्चारं प्रवासं कुरुते ततः ॥176॥

जब शुक्र आठ महीनो मे उन्नीस नक्षत्रो का भोग करता है, उस समय पीछे के चार नक्षत्रो मे प्रवास करता है ॥176॥

द्वादशैकोनविंशद्वा दशाहं[2] चैव भार्गवः।
एकैकस्मिंश्च नक्षत्रे चरमाणोऽवतिष्ठति ॥177॥

शुक्र एक नक्षत्र पर बारह दिन, दस दिन और उन्नीस दिन तक विचरण करता है ॥177॥

वक्रं याते द्वादशाहं[3] समक्षेत्रे दशाह्निकम्।
शेषेषु पृष्ठतो विन्द्यात् एकविंशमहोनिशम् ॥178॥

वक्र मार्ग मे—वक्री होने पर शुक्र को बारह दिन और सम क्षेत्र मे दस दिन एक नक्षत्र के भोग में लगते हैं। पीछे की ओर गमन करने मे उन्नीस दिन एक नक्षत्र के भोग मे व्यतीत होते हैं ॥178॥

पूर्वतः समचारेण पंच पक्षेण भार्गवः।
[4]तदा करोति कौशल्यं भद्रबाहुवचो यथा ॥179॥

पूर्व से गमन करता हुआ शुक्र पाँच पक्ष अर्थात् 75 दिनो मे कौशल करता है, ऐसा भद्रबाहु स्वामी का वचन है ॥179॥

ततः पंचदशर्क्षाणि [5]सञ्चरत्युशना पुनः।
षड्भिर्मासैस्ततो ज्ञेयः प्रवासं पूर्वतः [6]परम् ॥180॥

इसके पश्चात् शुक्र पन्द्रह नक्षत्र चलता है और हटता है। इस प्रकार छः महीनो मे पुनः प्रवास को प्राप्त हो जाता है ॥180॥

द्वाशीतिं चतुराशीतिं षडशीतिं च भार्गवः।
भक्तं समेषु भागेषु प्रवासं कुरुते समम् ॥181॥

---

1 वासाभ्यामारुहश्चरेत् मु०। 2 द्वादशाह मु०। 3 सप्तभागेषु सप्ताह मु०। 4. पंचाह इति ऋक्षाणि, मु०। 5 सुरत्यसररयुशनाहृत मु०। 6. पुन मु०।

82, 84 और 86 दिनो मे समान भाग देने पर शुक्र का समान प्रवास आ जाता है ।।181।।

द्वादशाहं च विंशाहं दशपंच च भार्गव ।
नक्षत्रे तिष्ठते त्वेवं समचारेण पूर्वतः ।।182।।

बारह दिन, बीस दिन और पन्द्रह दिन शुक्र एक नक्षत्र पर पूर्व दिशा से विचरण करने पर निवास करता है ।।182।।

पाशुं वातं रजो धूमं शीतोष्णं वा प्रवर्षणम् ।
विद्युदुल्काश्च कुरुते भार्गवोऽस्तमनोदये ।।183।।

शुक्र का अस्त होना धूलि, वर्षा, धूम, गर्मी और ठण्डक का पडना, विद्युत्पात और उल्कापात आदि फलो को करता है ।।183।।

सितकुसुमनिभस्तु भार्गवः प्रचलति वीथीषु [1]सर्वशो यदा वै ।
घटगृहजलपोतस्थितोऽभूद् बहुजलकृच्च ततः सुखदश्चारु ।।184।।

श्वेत पुष्पो के समान वर्ण वाला शुक्र वीथियो मे गमन करता है, तो निश्चय से सभी ओर खूब जलवृष्टि होती है तथा वर्ष सुख देने वाला और आनन्ददायी व्यतीत होता है ।।184।।

अत ऊर्ध्वं प्रवक्ष्यामि वक्रं चारं निबोधत ।
भार्गवस्य समासेन तथ्यं निर्ग्रन्थभाषितम् ।।185।।

इसके पश्चात् शुक्र के वक्रचार का निरूपण सक्षेप मे किया जाता है, जैसा कि निर्ग्रन्थ मुनियो ने वर्णन किया है ।।185।।

पूर्वेण विंशऋक्षाणि [2]पश्चिमेकोनविंशतिः ।
चरेत् प्रकृतिचारेण समं [3]सीमानिरीक्षयोः ।।186।।

सीमा निरीक्षण मे स्वाभाविक गति से शुक्र पूर्व मे बीस नक्षत्र और पश्चिम मे उन्नीस नक्षत्र गमन करता है ।।186।।

एकविंशं यदा गत्वा याति विंशतिमं पुनः ।
भार्गवोऽस्तमने काले तद्वक्रं विकृतं भवेत् ।।187।।

अस्त काल मे इक्कीसवें नक्षत्र तक पहुँचकर शुक्र पुन बीसवें नक्षत्र पर आता है, इसी लौटने की गति को उसका विकृत वक्र कहा जाता है ।।187।।

---

1 सर्वदेशशोकद, मु० । 2 पश्चाद्वे मु० । 3 हीनातिरिक्तयोः मु० ।

[1]तथा ग्रामं नगरं धान्यं चैव पल्वलोदकान्।
धनधान्यं च विविधं हरन्ति च दहन्ति च ॥188॥

इस प्रकार का विकृत वक्र ग्राम, नगर, धान्य, छोटे-छोटे तालाब, नाना प्रकार के धन, धान्य और समृद्धि आदि का हरण और दहन करता है ॥188॥

द्वाविंशतिं यदा गत्वा पुनरायाति विंशतिम्।
भार्गवोऽस्तमने काले तद्वक्रं शोभनं भवेत् ॥189॥

यदि अस्तकाल मे शुक्र बाईसवें नक्षत्र पर जाकर पुन. बीसवें पर लौट आये तो इस प्रकार का वक्र शुभ माना जाता है ॥189॥

क्षिप्रमोदं च वस्त्रं च पल्वलां औषधींस्तथा।
ह्रदान् नदींश्च कूपांश्च [2]भार्गव: पूरयिष्यति ॥190॥

इस प्रकार के शोभन वक्र मे शुक्र आमोद-प्रमोद, वस्त्रप्राप्ति, तालाबो का जल से पूर्ण होना, औषधियो की उपज, नदी, कुएँ, पोखरे आदि का जल से पूर्ण होना एव धन-धान्य की समृद्धि आदि फल करता है ॥190॥

त्रिविंशतिं यदा गत्वा पुनरायाति विंशतिम्।
भार्गवोऽस्तमने काले तद्वक्रं दीप्तमुच्यते ॥191॥

यदि अस्तकाल मे शुक्र तेईसवे नक्षत्र पर जाकर पुन. बीसवे नक्षत्र पर लौट आये तो इस प्रकार का वक्र दीप्त कहा जाता है ॥191॥

गृहांश्च वनखण्डांश्च दहत्यग्निरभीक्ष्णशः।
दिशो वनस्पतींश्चापि [3]भृगुर्दहति रश्मिभि: ॥192॥

इस प्रकार के दीप्त वक्र मे शुक्र अपनी किरणो द्वारा घर, वनप्रदेश, दिशा, वनस्पति आदि को जलाता है। अर्थात् दीप्त वक्र मे अग्नि और सूर्य की तेज किरणों द्वारा सभी वस्तुएँ जलने लगती है 192॥

एतानि त्रीणि वक्राणि कुर्यात् पूर्वेण भार्गवः।
इमाश्च पृष्ठतो विन्द्यात् [4]वक्रं शुक्रस्य संयत: ॥193॥

इन तीन वक्रो—विकृत वक्र, शोभन और दीप्त वक्र को शुक्र पूर्व की ओर से करता है तथा पृष्ठत.—पीछे की ओर से निम्न वक्रो को करता है ॥193॥

---

1 प्रवह्य ग्राम-नगर लभते दृश्यनो व्रजेत् मु०। 2. शोषयत्युशनाहतम् मु०। 3. रविर्दहति मु०। 4 वक्राणि मु०।

विंशतिं तु यदा गत्वा पुनरेकोनविंशतिम्।
आयात्यस्तमने काले वायव्यं वक्रमुच्यते ॥194॥

जब शुक्र अस्तकाल में बीसवें नक्षत्र पर जाकर पुन उन्नीसवें नक्षत्र पर लौट आता है तो उसे वायव्यवक्र कहते है ॥194॥

वायुवेगसमां विन्द्यान्महीं वातसमाकुलाम्।
[1]क्लिष्टामल्पेन जलेन जनेनान्येन सर्वशः ॥195॥

उक्त प्रकार के वायव्यवक्र में पृथ्वी वायु से परिपूर्ण हो जाती है तथा वायु का जोर अत्यधिक रहता है, अल्प वर्षा होने से पृथ्वी जल से परिपूर्ण हो जाती है तथा अन्य राष्ट्र के द्वारा प्रदेश आक्रान्त हो जाता है ॥195॥

एकविंशतिं यदा गत्वा पुनरेकोनविंशतिम्।
आयात्यस्तमने काले भस्म तद् वक्रमुच्यते ॥196॥

अस्तकाल मे यदि शुक्र इक्कीसवे नक्षत्र पर जाकर पुन उन्नीसवे नक्षत्र पर लौट आता है तो उसे भस्मवक्र कहते है ॥196॥

ग्रामाणां नगराणां च प्रजानां च विशो दिशम्।
नरेन्द्राणां च चत्वारि भस्मभूतानि निर्दिशेत् ॥197॥

इस प्रकार के वक्र मे ग्राम, नगर, प्रजा और राजा ये चारो भस्मभूत हो जाते है अर्थात् वह वक्र अपने नामानुसार फल देता है ॥197॥

एतानि पंच वक्राणि कुरुते यानि भार्गवः।
अतिचारं प्रवक्ष्यामि फलं यच्चास्य किंचन ॥198॥

इस प्रकार शुक्र के पाँच-पाँच वक्रों का निरूपण किया गया है। अब अतिचार के किंचित् फलादेश के साथ वर्णन किया जाता है ॥198॥

यदाऽतिक्रमते चारमुशना दारुणं फलम्।
तदा सृजति लोकस्य दुःखक्लेशभयावहम् ॥199॥

यदि शुक्र अपनी गति का अतिक्रमण करे तो यह उसका अतिचार कहलाता है, इसका फल ससार को दुःख, क्लेश, भय आदि होता है ॥199॥

तदाऽन्योन्यं तु राजानो ग्रामांश्च नगराणि च।
समयुक्तानि [2]बाधन्ते [3]नष्टधर्म-जयार्थिनः ॥200॥

1 क्लिष्टां माल्येन जालेन मु०। 2. धावन्ति मु०। 3. नष्टकर्म मु०।

शुक्र के अतिचार में राजा ग्राम और नगर धर्म से च्युत होकर जय की अभिलाषा से परस्पर मे दौड़ लगाते हैं अर्थात् परस्पर में संघर्षरत होते हैं ।।200।।

धर्मार्थकामा लुप्यन्ते जायते वर्णसंकरः ।
शस्त्रेण संक्षयं विन्द्यान्महाजनगतं तदा ।।201।।

राष्ट्र मे धर्म, अर्थ और काम लुप्त हो जाते हैं और सभी धर्म भ्रष्ट होकर वर्णसंकर हो जाते हैं तथा शस्त्र द्वारा क्षत्र-विनाश होता है ।।201।।

मित्राणि स्वजनाः पुत्रा गुरुद्वेष्या जनास्तथा ।
[1]जहति प्राणवर्णांश्च कुरुते तावृशेन यत् ।।202।।

शुक्र के अतिचार मे लोगों की प्रवृत्ति इस प्रकार की हो जाती है जिससे वे आपस में द्वेष-भाव करने लगते हैं तथा मित्र, कुटुम्बी, पुत्र, भाई, गुरु आदि भी द्वेष मे रत रहते है । इसका परिणाम यह होता है कि अपने वर्ण—जाति मर्यादा एव प्राणो का त्याग कर देते है । तात्पर्य यह है कि दुराचार की प्रवृत्ति बढ़ जाने से जाति-मर्यादा का लोप हो जाता है ।।202।।

विलीयन्ते च राष्ट्राणि दुर्भिक्षेण भयेन च ।
चक्रं प्रवर्तते दुर्गं भार्गवस्यातिचारतः ।।203।।

शुक्र के अतिचार मे दुर्भिक्ष और भय से राष्ट्र विलीन हो जाते हैं और दुर्ग के ऊपर अस्त्र-शस्त्रो की वर्षा होती है तथा यह अन्य चक्र शासन के अधीन हो जाता है ।।203।।

ततः श्मशानभूतास्थिकृष्णभूता मही तदा ।
वसा-रुधिरसंकुला काकगृध्रसमाकुला ।।204।।

पृथ्वी श्मशान भूमि बन जाती है, मुर्दाओ की भस्म से कृष्ण हो जाती है तथा मास, रुधिर और चर्बी से युक्त होने के कारण काक, शृगाल और गृद्धो से युक्त हो जाती है ।।204।।

वक्राण्युक्तानि सर्वाणि फलं यच्चातिचारकम् ।
वक्रचारं प्रवक्ष्यामि पुनरस्तमनोदयात् ।।205।।

जो फल सभी प्रकार के वक्रों का कहा गया है, वह अतिचार मे भी घटित होता है । अब अस्तकाल में पुन. वक्रचार का निरूपण करते हैं ।।205।।

1. जहन्ति मु० ।

वैश्वानरपथं प्राप्त: पूर्वत: प्रविशेद यदा।
षडशीतिं तदाऽहानि गत्वा दृश्येत पृष्ठत. ॥206॥

जब शुक्र वैश्वानरपथ मे पूर्व की ओर से प्रवेश करता है तो 86 दिनो के पश्चात् पीछे की ओर दिखलाई पडता है ॥206॥

मृगवीथीं [1]पुन: प्राप्त: प्रवासं यदि गच्छति।
चतुरशीतिं तदाऽहानि गत्वा दृश्येत पृष्ठत: ॥207॥

यदि शुक्र मृगवीथि को दुबारा प्राप्त होकर अस्त हो तो 84 दिनो के पश्चात् पीछे की ओर दिखलाई पड़ता है ॥207॥

अजवीथिमनुप्राप्त: प्रवासं यदि गच्छति।
अशीतिं षडहानि तु गत्वा दृश्येत पृष्ठत: ॥208॥

यदि शुक्र अजवीथि को पुन प्राप्त कर अस्त हो तो 86 दिनो के पश्चात् पीछे की ओर दिखलाई पडता है ॥208॥

जरद्‌गवपथप्राप्त. प्रवास यदि गच्छति।
सप्तति पंच चाऽहानि गत्वा दृश्येत पृष्ठत. ॥209॥

यदि शुक्र जरद्‌गवपथ को प्राप्त होकर प्रवास करे तो 75 दिनो के पश्चात् पीछे की ओर दिखलाई पडता है ॥209॥

गोवीथीं समनुप्राप्त. प्रवासं कुरुते यदा।
सप्ततिं तु तदाऽहानि गत्वा दृश्येत पृष्ठत: ॥210॥

गोवीथि को प्राप्त होकर शुक्र प्रवास करे तो 70 दिनो के पश्चात् पीछे की ओर दिखलाई पडता है ॥210॥

वृषवीथिमनुप्राप्त. प्रवासं कुरुते यदा।
पञ्चषष्टिं तदाऽहानि गत्वा दृश्येत पृष्ठत: ॥211॥

वृषवीथि को प्राप्त होकर शुक्र प्रवास करे तो 65 दिनो के पश्चात् पीछे की ओर दिखलाई पडता है ॥211॥

एरावणपथ प्राप्त: प्रवासं कुरुते यदा।
षष्टिं तु स तदाऽहानि गत्वा दृश्येत पृष्ठत: ॥212॥

ऐरावणवीथि को प्राप्त होकर शुक्र प्रवास करे तो 60 दिनों के पश्चात् पीछे

---

1 अनुप्राप्त मु०।

की ओर दिखलाई पडता है ।।212।।

गजवीथिमनुप्राप्त. प्रवासं कुरुते यदा।
पंचाशीतिं तदाऽहानि गत्वा दृश्येत पृष्ठत. ।।213।।

गजवीथि को पुन प्राप्त होकर शुक्र प्रवास करे तो 85 दिनो के पश्चात् पीछे की ओर दिखलाई पडता है ।।213।।

नागवीथिमनुप्राप्तः प्रवासं कुरुते यदा।
पंचपंचाशत्तदाऽहानि गत्वा दृश्येत पृष्ठत: ।।214।।

नागवीथि को पुन प्राप्त होकर शुक्र प्रवास करे तो 55 दिनो के पश्चात् पीछे की ओर दिखलाई पडता है ।।214।।

वैश्वानरपथं प्राप्त: प्रवासं कुरुते यदा।
चतुर्विंशत्तदाऽहानि गत्वा दृश्येत पूर्वतः ।।215।।

वैश्वानर पथ को प्राप्त होकर शुक्र प्रवास करे तो 24 दिनो के पश्चात् पूर्व की ओर दिखलाई पडता है ।।215।।

मृगवीथिमनुप्राप्तः प्रवासं कुरुते यदा।
द्वाविंशतिं तदाऽहानि गत्वा दृश्येत पूर्वत. ।।216।।

शुक्र जब मृगवीथि को पुन प्राप्त होकर अस्त हो तो 22 दिनो के पश्चात् पूर्व की ओर दिखलाई पडता है ।।216।।

अजवीथिमनुप्राप्त: प्रवासं कुरुते यदा।
तदा विंशतिरात्रेण पूर्वत: प्रतिदृश्यते ।।217।।

शुक्र जब अजवीथि को पुन. प्राप्त होकर अस्त हो तो 20 रात्रियो के पश्चात् पूर्व की ओर उदय होता है ।।217।।

जरद्गवपथ प्राप्त प्रवासं कुरुते यदा।
तदा सप्तदशाहानि गत्वा दृश्येत पूर्वत: ।।218।।

जब शुक्र जरद्गवपथ को प्राप्त होकर अस्त होता है तो 17 दिनो के पश्चात् पूर्व की ओर उदय होता है ।।218।।

गोवीथीं समनुप्राप्त. प्रवास कुरुते यदा।
चतुर्दशदशाहानि गत्वा दृश्येत पूर्वतः ।।219।।

गोवीथि को प्राप्त होकर जब शुक्र अस्त होता है तो चौदह दिनों के पश्चात् पूर्व की ओर उदय होता है ।।219।।

वृषवीथिमनुप्राप्तः प्रवासं कुरुते यदा।
तदा द्वादशरात्रेण गत्वा दृश्येत पूर्वतः ॥220॥

वृषवीथि को प्राप्त होकर जब शुक्र अस्त होता है तो 12 रात्रियों के पश्चात् पूर्व की ओर उदय होता है ॥220॥

ऐरावणपथं प्राप्तः प्रवासं कुरुते यदा।
तदा स दशरात्रेण पूर्वतः प्रतिदृश्यते ॥221॥

ऐरावणवीथि को प्राप्त होकर जब शुक्र अस्त होता है तो 10 रात्रियों के पश्चात् पूर्व की ओर उदय को प्राप्त होता है ॥221॥

गजवीथिमनुप्राप्तः प्रवासं कुरुते यदा।
अष्टरात्रं तदा गत्वा पूर्वतः प्रतिदृश्यते ॥222॥

गजवीथि को प्राप्त होकर यदि शुक्र अस्त हो तो अष्ट रात्रियो के पश्चात् पूर्व की ओर उदय को प्राप्त होता है ॥222॥

नागवीथिमनुप्राप्त. प्रवासं कुरुते यदा।
षडहं तु तदा गत्वा पूर्वतः प्रतिदृश्यते ॥223॥

जब नागवीथि को पुन. प्राप्त होकर शुक्र अस्त हो तो 6 दिनो के पश्चात् पूर्व की ओर उदय को प्राप्त होता है ॥223॥

एते प्रवासाः शुक्रस्य पूर्वत. पृष्ठतस्तथा।
यथाशास्त्रं समुद्दिष्टा वर्ण-पाकौ निबोधत ॥224॥

शुक्र के ये प्रवास—अस्त पूर्व और पृष्ठ से यथाशास्त्र प्रतिपादित किये गये है। इसके वर्ण का फल निम्न प्रकार ज्ञात करना चाहिए ॥224॥

शुक्रो नीलश्च कृष्णश्च पीतश्च हरितस्तथा।
कपिलश्चाग्निवर्णश्च विज्ञेयः स्यात् कदाचन ॥225॥

शुक्र के नील, कृष्ण, पीत, हरित, कपिल—पिंगल वर्ण और अग्नि वर्ण होते है ॥225॥

हेमन्ते शिशिरे रक्तः शुक्रः सूर्यप्रभानुगः।
पीतो वसन्त-ग्रीष्मे च शुक्लः स्यान्नित्यसूर्यतः ॥226॥

हेमन्त और शिशिर ऋतु मे शुक्र का सम वर्ण सूर्य की कान्ति के अनुसार होता है तथा वसन्त और ग्रीष्म मे पीत वर्ण एव नित्य सूर्य की कान्ति से शुक्र का शुक्ल वर्ण होता है ॥226॥

अतोऽस्य येऽन्यथाभावा विपरीता भयावहाः।
शुक्रस्य भयदो[1] लोके कृष्णे नक्षत्रमण्डले ॥227॥

उपर्युक्त प्रतिपादित वर्णों से यदि विपरीत वर्ण शुक्र का दिखलाई पड़े तो भयप्रद होता है। शुक्र का कृष्णनक्षत्र मण्डल मे प्रवेश करना अत्यन्त भयप्रद है। अर्थात् जिस ऋतु मे शुक्र का जो वर्ण बतलाया गया है, उससे विपरीत वर्ण का दिखलाई पडना अशुभ फल-सूचक होता है ॥227॥

पूर्वोदये फलं यत् तु पच्यतेऽपरतस्तु तत्।
शुक्रस्यापरतो यत्तु पच्यते पूर्वतः फलम् ॥228॥

शुक्र के पूर्वोदय का जो फल है वही पश्चिमोदय में घटित होता है तथा शुक्र के पश्चिमोदय का जो फल है, वही पूर्वोदय मे भी घटित होता है ॥228॥

एवमेव विजानीयात् फल-पाकौ समाहितः।
कालातीतं यदा कुर्यात् तदा घोरं समादिशेत् ॥229॥

इस प्रकार शुक्र के फलादेश को समझ लेना चाहिए। जब शुक्र के उदय में कालातीत हो—विलम्ब हो तो अत्यन्त कष्ट होता है ॥229॥

सवक्रचारं यो वेत्ति शुक्रचारं स बुद्धिमान्।
श्रमण स सुखं याति क्षिप्रं देशमपीडितम् ॥230॥

जो श्रमण—मुनि शुक्र के चार, वक्र, उदय, अतिचार आदि को जानता है, वह बुद्धिमान् अपीडित देश मे विहार कर शीघ्र ही सुख प्राप्त करता है ॥230॥

यदाऽग्निवर्णो रविसंस्थितो वा वैश्वानरं मार्गसमाश्रितश्च[2]।
तदा भयं शंसति[3]सोऽग्नि,जातं तज्जातजं साधयितव्यमन्यतः ॥231॥

जब शुक्र अग्निवर्ण हो अथवा सूर्य के अंश—कला पर स्थित हो अथवा वैश्वानर वीथि मे स्थित हो तो अग्नि का भय रहता है तथा अग्नि से उत्पन्न अन्य प्रकार के उपद्रवो की भी सम्भावना रहती है ॥231॥

इति सकलमुनिजनानन्दकन्दोदयमहामुनिश्रीभद्रबाहुविरचिते महानिमित्त-शास्त्रे भगवत्त्रिलोकपतिदंत्यगुरोः शुक्रस्य चारः समाप्तः ॥15॥

विवेचन—शुक्रोदय विचार—शुक्र का अश्विनी, मृगशिर, रेवती, हस्त, पुष्य, पुनर्वसु, अनुराधा, श्रवण और स्वाति नक्षत्र मे उदय होने से सिन्धु, गुर्जर,

1 चतुरो मु०। 2. -श्रितस्य० मु०। 3. -अपि A।

कर्वट प्रदेशों मे खेती का नाश, महामारी एव राजनीतिक संघर्ष होता है। शुक्र का उक्त नक्षत्रों मे उदय होना नेताओ, महापुरुषो एव राजनीतिक व्यक्तियो के लिए शुभ नही है। पूर्वाफाल्गुनी, पूर्वाषाढा, पूर्वाभाद्रपद, उत्तराफाल्गुनी, उत्तराषाढ़ा, उत्तराभाद्रपद, रोहिणी और भरणी इन नक्षत्रो मे शुक्र का उदय होने से, जालन्धर और सौराष्ट्र मे दुर्भिक्ष, विग्रह-सघर्ष एव कलिग, स्त्रीराज्य और मरुदेश में मध्यम वर्षा और मध्यम फसल उत्पन्न होती है। घी और धान्य का भाव सम्पूर्ण देश में कुछ महँगा होता है। कृत्तिका, मघा, आश्लेषा, विशाखा, शतभिषा, चित्रा, ज्येष्ठा, धनिष्ठा और मूल नक्षत्र मे शुक्र का उदय हो तो गुर्जर देश में पुद्गल का भय, दुर्भिक्ष और द्रव्यहीनता, सिन्धु देश मे उत्पात, मालव मे संघर्ष; आसाम, बिहार और बंग प्रदेश मे भय, उत्पात, वर्षाभाव एव महाराष्ट्र, द्रविड देश मे सुभिक्ष, समय पर वर्षा होती है। शुक्र का उक्त नक्षत्रो मे उदय होना अच्छा माना जाता है। सम्पूर्ण देश के भविष्य की दृष्टि से आश्लेषा, भरणी, विशाखा, पूर्वाभाद्रपद और उत्तराभाद्रपद इन नक्षत्रो का उदय अशुभ, दुर्भिक्ष, हानि एव अशान्ति करने वाला है। अवशेष सभी नक्षत्रों का उदय शुभ एव मगल देने वाला है।

शुक्रास्त विचार—अश्विनी, मृगशिर, हस्त, रेवती, पुष्य, पुनर्वसु, अनुराधा, श्रवण और स्वाति नक्षत्र मे शुक्र का अस्त हो तो इटली, रोम, जापान मे भूकम्प का भय, बर्मा, श्याम, चीन, अमेरिका मे सुख-शान्ति, रूस, भारत मे साधारण शान्ति रहती है। देश के अन्तर्गत कोकण, लाट और सिन्धु प्रदेश मे अल्प वर्षा, सामान्य धान्य की उत्पत्ति, उत्तर प्रदेश मे अत्यल्प वर्षा, अकाल, द्रविड प्रदेश मे विग्रह, गुर्जर देश मे सुभिक्ष, बगाल मे अकाल, बिहार और आसाम मे साधारण वर्षा, मध्यम खेती उपजती है। शुक्रास्त के उपरान्त एक महीना तक अन्न महँगा बिकता है, पश्चात् कुछ सस्ता हो जाता है। घी, तेल, जूट आदि पदार्थ सस्ते होते हैं। प्रजा को सुख की प्राप्ति होती है। सभी लोग अमन-चैन के साथ निवास करते हैं। कृतिका, मघा, आश्लेषा, विशाखा, शतभिषा, चित्रा, ज्येष्ठा, धनिष्ठा और मूल नक्षत्र मे शुक्र अस्त हो तो हिन्दुस्तान मे विग्रह, मुसलिम राष्ट्रो मे शान्ति एव उनकी उन्नति, इंगलैण्ड और अमेरिका मे समता, चीन मे सुभिक्ष, वर्मा मे उत्तम फसल एव हिन्दुस्तान में साधारण फसल होती है। मिश्र देश के लिए इस प्रकार का शुक्रास्त भयोत्पादक होता है, अन्न का अभाव होने से जनता को अत्यधिक कष्ट होता है। मरुस्थल और सिन्धु देश मे सामान्यतया दुर्भिक्ष होता है। मित्र राष्ट्रो के लिए उक्त प्रकार का शुक्रास्त अनिष्टकर है। भारत के लिए सामान्यतया अच्छा है। वर्षाभाव होने के कारण देश मे आन्तरिक अशान्ति रहती है तथा देश मे कल-कारखानो की उन्नति होती है। मघा मे शुक्रास्त होकर विशाखा मे उदय को प्राप्त करे तो देश के लिए सभी तरह से भयोत्पादक होता

है। तीनों पूर्वा—पूर्वाभाद्रपद, पूर्वाफाल्गुनी और पूर्वाषाढ़ा, उत्तरफाल्गुनी, उत्तराषाढ़ा, उत्तराभाद्रपद—रोहिणी और भरणी नक्षत्रों मे शुक्र का अस्त हो तो पंजाब, दिल्ली, राजस्थान, विन्ध्यप्रदेश के लिए सुभिक्षदायक, किन्तु इन प्रदेशों में राजनीतिक संघर्ष, धान्य भाव सस्ता तथा उक्त प्रदेशों में रोग उत्पन्न होते हैं। बगाल, आसाम और बिहार, उडीसा के लिए उक्त प्रकार का शुक्रास्त शुभकारक है। इन प्रदेशो में धान्य की उत्पत्ति अच्छी होती है। धन-धान्य की शक्ति वृद्धिगत होती है। अन्न का भाव सस्ता होता है। शुक्र का भरणी नक्षत्र पर अस्त होना पशुओ के लिए अशुभकारक है। पशुओ मे नाना प्रकार के रोग फैलते हैं तथा धान्य और तृण दोनो का भाव महँगा होता है। जनता को कष्ट होता है, राजनीति में परिवर्तन होता है। शुक्र का मध्यरात्रि में अस्त होना तथा आश्लेषा-विद्ध मघा नक्षत्र मे शुक्र का उदय और अस्त दोनों ही अशुभ होते हैं। इस प्रकार की स्थिति मे जनसाधारण को भी कष्ट होता है।

शुक्र के गमन की नौ वीथियाँ है—नाग, गज, ऐरावत, वृषभ, गो, जरद्गव, मृग, अज और दहन—वैश्वानर, ये वीथियाँ अश्विनी आदि तीन-तीन नक्षत्रो की मानी जाती है। किसी-किसी के मत से स्वाति, भरणी और कात्तिका नक्षत्र मे नागवीथि होती है। गज, ऐरावत और वृषभ नामक वीथियो में रोहिणी से उत्तराफाल्गुनी नक्षत्र तक तीन-तीन वीथियाँ हुआ करती हैं तथा अश्विनी, रेवती, पूर्वाभाद्रपद और उत्तराभाद्रपद नक्षत्र मे गोवीथि है। श्रवण, धनिष्ठा और शतभिषा नक्षत्र मे जरद्गव वीथि, अनुराधा, ज्येष्ठा और मूल नक्षत्र मे मृगवीथि, हस्त, विशाखा और चित्रा नक्षत्र मे अजवीथि एव पूर्वाषाढ़ा और उत्तराषाढ़ा में दहन वीथि होती है। शुक्र का भरणी नक्षत्र से उत्तरमार्ग, पूर्वाफाल्गुनी से मध्यममार्ग और पूर्वाषाढ़ा से दक्षिणमार्ग माना जाता है। जब उत्तरवीथि मे शुक्र अस्त या उदय को प्राप्त होता है, तो प्राणियो के सुख सम्पत्ति और धन-धान्य की वृद्धि करता है। मध्यम वीथि मे रहने से शुक्र मध्यम फल देता है और जघन्य या दक्षिण वीथि मे विद्यमान शुक्र कष्टप्रद होता है। आर्द्रा नक्षत्र मे आरम्भ करके मृगशिर तक जो नौ वीथियाँ है, उनमे शुक्र का उदय या अस्त होने से यथाक्रम से अत्युत्तम, उत्तम, ऊन, सम, मध्यम, न्यून, अधम, कष्ट और कष्टतम फल उत्पन्न होता है। भरणी नक्षत्र से लेकर चार नक्षत्रों में जो मण्डल—वीथि हो, उसकी प्रथम वीथि मे शुक्र का अस्त या उदय होने से सुभिक्ष होता है, किन्तु अग, बंग, कलिंग और बाह्लीक देश मे भय होता है। आर्द्रा से लेकर चार नक्षत्रो—आर्द्रा, पुनर्वसु, पुष्य और आश्लेषा इन चार नक्षत्रो के मण्डल में शुक्र का उदय या अस्त हो तो अधिक जल की वर्षा होती है, धन-धान्य सम्पत्ति वृद्धिगत होती है। प्रत्येक प्रदेश मे शान्ति रहती है, जनता मे सौहार्द्र और प्रेम का सचार होता है। यह द्वितीय मण्डल उत्तम माना गया है। अर्थात् शुक्र का भरणी से मृगशिरा नक्षत्र तक प्रथम

मण्डल, आर्द्रा से आश्लेषा तक द्वितीय मण्डल और मघा से चित्रा नक्षत्र तक तृतीय मण्डल होता है। तृतीय मण्डल मे शुक्र का उदय और अस्त हो तो वृक्षो का विनाश, शबर-शूद्र, पुण्ड्र, द्रविड, शूद्र, वनवासी, शूलिक का विनाश तथा इनको अपार कष्ट होता है। शुक्र का चौथा मण्डल स्वाति, विशाखा और अनुराधा इन नक्षत्रों में होता है। इस चतुर्थ मण्डल मे शुक्र के गमन करने से ब्राह्मणादि वर्गों को विपुल धन लाभ, यश लाभ और धन-जन की प्राप्ति होती है। चौथे मण्डल में शुक्र का अस्त होना या उदय होना सभी प्राणियो के लिए सुखदायक है। यदि चौथे मण्डल में किसी क्रूर ग्रह द्वारा आक्रान्त हो तो इक्ष्वाकुवंशी, आवन्ती के नागरिक, शूरसेन देश के वासी लोगो को अपार कष्ट होता है। यदि इस मण्डल में ग्रहों का युद्ध हो, शुक्र क्रूर ग्रहो द्वारा परास्त हो जाय तो विश्व मे भय और आतंक व्याप्त हो जाता है। अनेक प्रकार की महामारियाँ, जनता मे क्षोभ, असन्तोष एव अनेक प्रकार के संघर्ष होते हैं। ज्येष्ठा, मूल, पूर्वाषाढ़ा उत्तराषाढ़ा और श्रवण इन पाँच नक्षत्रों का पाँचवाँ मण्डल होता है। इस पचम मण्डल मे शुक्र के गमन करने से क्षुधा, चोर, रोग, आदि की बाधाएँ होती हैं। यदि क्रूर ग्रहो द्वारा पचम मण्डल आक्रान्त हो तो काश्मीर, अश्मक, मत्स्य, चारुदेवी और अवन्ती देश वाले व्यक्तियो के साथ आभीर जाति, द्रविड, अम्बष्ठ, त्रिगर्त्त, सौराष्ट्र, सिन्धु और सौवीर देशवासियो का विनाश होता है। क्रूराक्रान्त या क्रूरग्रहाविष्ट शुक्र इस पचम मण्डल मे रहने से जनता मे असन्तोष, घृणा, मात्सर्य और नाना प्रकार के कष्ट उत्पन्न करता है। धनिष्ठा, शतभिषा, पूर्वाभाद्रपद, उत्तराभाद्रपद, रेवती और अश्विनी इन छः नक्षत्रो का छठा मण्डल है। यदि क्रूर ग्रह इस मण्डल मे निवास करता हो और उसके साथ शुक्र भी सगम करे तो प्रजा को आर्थिक कष्ट रहता है। छठे मण्डल मे शुक्र का युद्ध यदि किसी शुभ ग्रह के साथ हो तो धन-धान्य की समृद्धि, क्रूर ग्रह के साथ हो तो धन-धान्य का अभाव तथा एक शुभ ग्रह और एक क्रूर ग्रह हो तो जनता को साधारणतया सुख प्राप्त होता है। वर्षा समयानुसार होती है, जिससे अच्छी फसल उत्पन्न होती है। शस्त्रघात और चौर-घात का कष्ट होता है। छठे मण्डल मे शुक्र शुभ ग्रह का सहयोगी होकर अस्त हो तो प्रजा मे शान्ति और सुख का सचार होता है।

इन छः मण्डलो मे शुक्र-गमन का निरूपण किया गया है। स्वाति और ज्येष्ठा नक्षत्र वाले मण्डल पश्चिम दिशा में होने से शुभफल होता है। मघादि नक्षत्र वाला मण्डल पूर्व दिशा मे हो तो अत्यन्त भय होता है। कृत्तिका नक्षत्र को भेद कर शुक्र गमन करे तो नदियों में बाढ़ आती है, जिससे नदीतटवासियों को महान् कष्ट होता है। रोहिणी नक्षत्र का शुक्र भेदन करे तो महामारी पडती है। मृग-शिरा नक्षत्र का भेदन करे तो जल या धान्य का नाश, आर्द्रा नक्षत्र का भेदन करने से कौशल और कलिंग का विनाश होता है, पर वृष्टि अत्यधिक होती है और

फसल भी उत्तम उत्पन्न होती है। पुनर्वसु नक्षत्र का शुक्र भेदन करे तो अश्मक और विदर्भ प्रदेश के रहने वालो को अनीति से कष्ट होता है, अवशेष प्रदेशों के निवासियो को कष्ट होता है। पुष्य नक्षत्र का भेदन करने से सुभिक्ष और जनता में सुख-शान्ति रहती है। आश्लेषा नक्षत्र मे शुक्र का गमन हो तो सर्पभय रोगों की उत्पत्ति एवं दैन्यभाव की वृद्धि होती है। मघा नक्षत्र का भेदन कर शुक्र गमन करे तो सभी देशो मे शान्ति और सुभिक्ष होते हैं। पूर्वाफाल्गुनी नक्षत्र का शुक्र भेदन कर आगे चले तो शवर और पुलिन्द जाति के लिए सुखकारक होता है तथा कुरुजांगल देश के निवासियो के लिए कष्टप्रद होता है। शुक्र का इस नक्षत्र को भेदन करना बग, आसाम, बिहार, उत्तरप्रदेश के निवासियो के लिए शुभ है। शुक्र की उक्त स्थिति मे धन-धान्य की समृद्धि होती है। यदि हस्त नक्षत्र का शुक्र भेदन करे तो कलाकारों को कष्ट होता है। चित्रा नक्षत्र का भेदन होने से जगत् मे शान्ति, आर्थिक विकास एव पशु-सम्पत्ति की वृद्धि होती है। इस नक्षत्र का शुक्र सहयोगी ग्रहो के साथ भेदन करता हुआ आगे गमन करे तो कलिंग, बग और अग प्रदेश मे जनता को मधुर वस्तुओ का कष्ट होता है। जिन देशो मे गन्ना की खेती अधिक होती है, उन देशो में गन्ना की फसल मारी जाती है। स्वाति नक्षत्र मे शुक्र के आने से वर्षा अच्छी होती है। देश की स्थिति पर-राष्ट्रनीति की दृष्टि से अच्छी नही होती। विदेशो के साथ सघर्ष करना होता है तथा छोटी-छोटी बातों को लेकर आपस मे मतभेद हो जाता है और सन्धि तथा मित्रता की बातें पिछड जाती हैं। व्यापारियो के लिए भी शुक्र की उक्त स्थिति अच्छी नही मानी जाती। लोहा, गुड, अनाज, घी और मशाले के व्यापारियो को शुक्र की उक्त स्थिति मे घाटा उठाना पड़ता है। तैल, तिलहन एव सोना-चाँदी के व्यापारियो को अधिक लाभ होता है। विशाखा नक्षत्र का भेदन कर शुक्र आगे की ओर बढ़े तो सुवृष्टि होती है, पर चोर-डाकुओं का प्रकोप दिनों-दिन बढता जाता है। प्रजा मे अशान्ति रहती है। यद्यपि धन-धान्य की उत्पत्ति अच्छी होती है, फिर भी नागरिकों की शान्ति भग होने की आशंका बनी रह जाती है।

अनुराधा का भेदन कर शुक्र गमन करे तो क्षत्रियों को कष्ट, व्यापारियो को लाभ, कृषको को साधारण कष्ट एव कलाकारों को सम्मान की प्राप्ति होती है। ज्येष्ठा नक्षत्र का भेदन कर शुक्र के गमन करने से सन्ताप, प्रशासकों में मतभेद, धन-धान्य की समृद्धि एवं आर्थिक विकास होता है। मूल नक्षत्र का भेदन कर शुक्र के गमन करने से वैद्यो को पीड़ा, डॉक्टरो को कष्ट एव वैज्ञानिकों को अपने प्रयोगो मे असफलता प्राप्त होती। पूर्वाषाढा का भेदन कर शुक्र के गमन करने से जल-जन्तुओं को कष्ट, नाव और स्टीमरो के डूबने का भय, नदियों में बाढ़ एवं जन-साधारण मे आतक व्याप्त होता है। उत्तराषाढा नक्षत्र का भेदन करने से व्याधि, महामारी, दूषित ज्वर का प्रकोप, हैजा जैसी संक्रामक

व्याधियो का प्रसार, चेचक का प्रकोप एव अन्य सक्रामक दूषित बीमारियो का प्रसार होता है। श्रवण नक्षत्र का भेदन कर शुक्र अपने मार्ग मे गमन करे तो कर्ण सम्बन्धी रोगो का अधिक प्रसार और धनिष्ठा नक्षत्र का भेदन कर आगे चले तो आँख की बीमारियाँ अधिक होती है। शुक्र की उक्त प्रकार की स्थिति मे साधारण जनता को भी कष्ट होता है। व्यापारी वर्ग और कृषक वर्ग को शान्ति और सन्तोष की प्राप्ति होती है। वर्षा समयानुसार होती जाती है, जिससे कृषक वर्ग को परम शान्ति मिलती है। राजनीतिक उथल-पुथल होती है, जिससे साधारण जनता मे भी आतक व्याप्त रहता है। शतभिषा नक्षत्र का भेदन कर शुक्र गमन करे तो क्रूर कर्म करने वाले व्यक्तियो को कष्ट होता है। इस नक्षत्र का भेदन शुभ ग्रह के साथ होने से शुभ फल और क्रूर ग्रह के साथ होने से अशुभ फल होता है। पूर्वाभाद्रपद का भेदन करने मे जुआ खेलने वालो को कष्ट, उत्तराभाद्रपद का भेदन करने से फल-पुष्पो की वृद्धि और रेवती का भेदन करने से सेना का विनाश होता है। अश्विनी नक्षत्र मे भेदन करने से शुक्र क्रूर ग्रह के साथ सयोग करे तो जनता को कष्ट और शुभ ग्रह का सयोग करे तो लाभ, सुभिक्ष और आनन्द की प्राप्ति होती है। भरणी नक्षत्र का भेदन करने से जनता को साधारण कष्ट होता है।

कृष्ण पक्ष की चतुर्दशी, अमावस्या, अष्टमी तिथि को शुक्र का उदय या अस्त हो तो पृथ्वी पर अत्यधिक जल की वर्षा होती है। अनाज की उत्पत्ति खूब होती है। यदि गुरु और शुक्र पूर्व-पश्चिम मे परस्पर सातवी राशि मे स्थित हो तो रोग और भय से प्रजा पीडित रहती है, वृष्टि नही होती। गुरु, बुध, मगल और शनि ये ग्रह यदि शुक्र के आगे के मार्ग मे चलें तो वायु का प्रकोप, मनुष्यो मे सघर्ष, अनीति और दुराचार की प्रवृत्ति, उल्कापात और विद्युत्पात से जनता मे कष्ट तथा अनेक प्रकार के रोगो की वृद्धि होती है। यदि शनि शुक्र से आगे गमन करे तो जनता को कष्ट, वर्षाभाव और दुर्भिक्ष होता है। यदि मगल शुक्र से आगे गमन करता हो तो भी जनता मे विरोध, विवाद, शस्त्रभय, अग्निभय, चोरभय होने से नाना प्रकार के कष्ट सहन करने पडते हैं। जनता मे सभी प्रकार की अशान्ति रहती है। शुक्र के आगे मार्ग मे बृहस्पति गमन करता हो तो समस्त मधुर पदार्थ सस्ते होते हैं। शुक्र के उदय या अस्तकाल मे शुक्र के आगे जब बुध रहता है तब वर्षा और रोग रहते हैं। पित्त से उत्पन्न रोग तथा काच-कामलादि रोग उत्पन्न होते हैं। सन्यासी, अग्निहोत्री, वैद्य, नृत्य से आजीविका करने वाले; अश्व, गौ, वाहन, पीले वर्ण के पदार्थ विनाश को प्राप्त होते है। जिस समय अग्नि के समान शुक्र का वर्ण हो तब अग्निभय, रक्तवर्ण हो तो शस्त्रकोप, काचन के समान वर्ण हो तो गौरव वर्ण के व्यक्तियो को व्याधि उत्पन्न होती है। यदि शुक्र हरित और कपिल वर्ण हो तो दमा और खाँसी का रोग अधिक उत्पन्न होता है।

भस्म के समान रूक्ष वर्ण का शुक्र देश को सभी प्रकार की विपत्ति देने वाला होता है। स्वच्छ, स्निग्ध, मधुर और सुन्दर कान्तिवाला शुक्र सुभिक्ष, शान्ति, नीरोगता आदि फलो को देने वाला है। शुक्र का अस्त रविवार को हो तथा उदय शनिवार को हो तो देश मे विनाश, सघर्ष, चेचक का विशेष प्रकोप, महामारी, धान्य का भाव मॅंहगा, जनता मे क्षोभ, आतक एव घृत और गुड का भाव सस्ता होता है।

शुक्रवार को शुक्र अस्त होकर शनिवार को उदय को प्राप्त हो तो सुभिक्ष, शान्ति, आर्थिक विकास, पशु सम्पत्ति का विकास, समय पर वर्षा, कला-कौशल की वृद्धि एव चैत्र के महीने मे बीमारी पडती है। श्रावण में मंगलवार को शुक्रास्त हो और इसी महीने में शनिवार को उदय हो तो जनता मे परस्पर सघर्ष, नेताओ मे मतभेद, फसल की क्षति, खून-खराबा, जहाँ-तहाँ उपद्रव एव वर्षा भी साधारण होती है। भाद्रपद मास मे गुरुवार को शुक्र अस्त हो और गुरुवार को ही शुक्र का उदय आश्विन मास मे हो तो जनता मे सक्रामक रोग फैलते हैं। आश्विन मास मे शुक्र बुधवार को अस्त होकर सोमवार को उदय को प्राप्त हो तो सुभिक्ष, धन-धान्य की वृद्धि, जनता मे साहस एव कल-कारखानो की वृद्धि होती है। बिहार, बगाल, आसाम, उत्कल आदि पूर्वीय प्रदेशो मे वर्षा यथेष्ट होती है। दक्षिण भारत मे फसल अच्छी नही होती, खेती में अनेक प्रकार के रोग लग जाते हैं, जिससे उत्तम फसल नही होती। कार्त्तिक मास मे शुक्रास्त होकर पौष मे उदय को प्राप्त हो तो जनता को साधारण कष्ट, माघ मे कठोर जाडा तथा पाला पडने के कारण फसल नष्ट हो जाती है। मार्गशीर्ष मे शुक्र का अस्त होना अशुभ सूचक है।

पौष मास मे शुक्रास्त होना अच्छा होता है, धन-धान्य की समृद्धि होती है। माघ मास मे शुक्र अस्त होकर फाल्गुन मे उदय को प्राप्त हो तो फसल आगामी वर्ष अच्छी नही होती। फाल्गुन और चैत्र मास मे शुक्र का अस्त होना मध्यम है। वैशाख मे शुक्रास्त होकर आषाढ मे उदय हो तो दुर्भिक्ष, महामारी एव सारे देश मे उथल-पुथल रहती है। राजनीतिक उलट-फेर भी होते रहते है। ज्येष्ठ और आषाढ के शुक्र का अस्त होना अनाज की कमी का सूचक है।

षोडशोऽध्यायः

अतः परं प्रवक्ष्यामि शुभाशुभविचेष्टितम् ।
यच्छ्रुत्वाऽवहितः प्राज्ञो भवेन्नित्यमतन्द्रितः ॥1॥

अब शुक्रचार के पश्चात् शनि-चार के अन्तर्गत शनि की शुभाशुभ चेष्टाओं का वर्णन किया जाता है, जिसको सुनकर विद्वान् सुखी हो जाते हैं ॥1॥

प्रवासमुदयं वक्रं गतिं वर्णं फलं तथा ।
शनैश्चरस्य वक्ष्यामि [1]शुभाशुभविचेष्टितम् ॥2॥

पूर्वाचार्यों के मतानुसार शनि के अस्त, उदय, वक्र, गति और वर्ण के शुभाशुभ फल का वर्णन करता हूँ ॥2॥

प्रवासं दक्षिणे मार्गे मासिकं मध्यमे पुनः ।
दिवसा पञ्चविंशतिस्त्रयोविंशतिरुत्तरे ॥3॥

दक्षिण मार्ग मे शनि का अस्त एक महीने का उत्कृष्ट और मध्यम पच्चीस दिन का होता है और उत्तर मे तेईस दिन का ॥3॥

चारं गतश्च यो भूयः सन्तिष्ठते महाग्रहः ।
[2]एकान्तरेण वक्रेण भौमवत् कुरुते फलम् ॥4॥

जब शनि पुन: चार—गमन करता हुआ स्थिर होता है और एकान्तर वक्र को प्राप्त करता है तो भौम—मगल के समान फलादेश उत्पन्न होता है ॥4॥

संवत्सरमुपस्थाय नक्षत्रं विप्रमुञ्चति ।
सूर्यपुत्रस्ततश्चैव [3]द्योतमानः शनैश्चरः ॥5॥

शनि प्रजाहित की कामना से सवत्सर की स्थापना के लिए नक्षत्र का त्याग करता है ॥5॥

द्वे नक्षत्रे यदा सौरिर्वर्षेण चरते यदा ।
राज्ञामन्योऽन्यभेदश्च शस्त्रकोपश्च जायते ॥6॥

जब शनि एक वर्ष मे दो नक्षत्र प्रमाण गमन करता है तो राजाओ मे परस्पर मतभेद होता है और शस्त्रकोप होता है ॥6॥

दुर्गे भवति संवासो मर्यादा च विनश्यति ।
वृष्टिश्च विषमा ज्ञेया व्याधिकोपश्च जायते ॥7॥

उपर्युक्त प्रकार के शनि की स्थिति मे शत्रु के भय और आतंक के कारण

1, यथावदनुपूर्वंश मु० । 2 एकोन्तरेण मु० । 3 प्रजानां हितकाम्यया मु० ।

दुर्ग में निवास करना होता है। मर्यादा नष्ट हो जाती है। वर्षा विषमा—हीनाधिक होती है और रोगादि फैलते हैं ॥7॥

यदा तु त्रीणि चत्वारि नक्षत्राणि शनैश्चरः।
मन्दवृष्टिं च दुर्भिक्षं शस्त्रं व्याधिं च निर्दिशेत् ॥8॥

जब शनि एक वर्ष मे तीन या चार नक्षत्र प्रमाण गमन करता है तो मन्दवृष्टि, दुर्भिक्ष, शस्त्रपीडा और रोगादि होते हैं ॥8॥

चत्वारि वा यदा गच्छेन्नक्षत्राणि महाद्युतिः।
तदा युगान्तं जानीयात् यान्ति मृत्युमुखं प्रजाः ॥9॥

यदि शनि एक वर्ष में चार नक्षत्रों का अतिक्रमण करे तो युगान्त समझना चाहिए तथा प्रजा मृत्यु के मुख में चली जाती है ॥9॥

उत्तरे पतितो मार्गे यद्येषो नीलतां व्रजेत्।
स्निग्धं तदा फलं ज्ञेयं नागर जायते तदा ॥10॥

रतिप्रधाना मोदन्ति राजानस्तुष्टभूमयः।
क्षमां मेघवतीं विन्द्यात् सर्वबीजप्ररोहिणीम् ॥11॥

उत्तर मार्ग मे गमन करता हुआ शनि नीलवर्ण और स्निग्ध हो तो उसका फल अच्छा होता है। सरागी व्यक्ति आमोद-प्रमोद करते हैं, राजा सन्तुष्ट होते हैं और पृथ्वी पर सभी प्रकार के बीजो को उत्पन्न करने वाली वर्षा होती है ॥10-11॥

मध्यमे तु यदा मार्गे कुर्यादस्तमनोदयौ।
मध्यमं वर्षणं सस्यं सुभिक्षं क्षेममेव च ॥12॥

यदि शनि मध्यम मार्ग मे अस्त और उदय को प्राप्त हो तो मध्यम वर्षा, सुभिक्ष, धान्य की उत्पत्ति एव कल्याण होता है ॥12॥

दक्षिणे तु यदा मार्गे यदि स नीलतां व्रजेत्।
नागरा यायिनश्चापि पीड्यन्ते च [1]भटागणाः ॥13॥

यदि दक्षिण मार्ग में गमन करता हुआ शनि नीलवर्ण को प्राप्त हो तो नागरिक और यायी अर्थात् आक्रमण करने वाले—दोनों ही योद्धागण पीड़ा को प्राप्त होते हैं ॥13॥

---

1 भटव्रजा मु०।

गोपालं वर्जयेत् तत्र दुर्गाणि च समाश्रयेत्।
कारयेत् सर्वशस्त्राणि बीजानि च न वापयेत् ॥14॥

उक्त प्रकार की शनि की स्थिति मे गोपाल—गोपुर, नगर को छोडकर दुर्ग का आश्रय ग्रहण करना चाहिए, शस्त्रो की संभाल एव नवीन शस्त्रो का निर्माण करना चाहिए और बीज बोने का कार्य नही करना चाहिए ॥14॥

प्रदक्षिणं तु ऋक्षस्य यस्य याति शनैश्चरः।
स च राजा विवर्धेत सुभिक्षं क्षेममेव च ॥15॥

शनि जिस नक्षत्र की प्रदक्षिणा करता है, उस नक्षत्र मे जन्म लेने वाला राजा वृद्धिगत होता है। सुभिक्ष और कल्याण होता है ॥15॥

अपसव्यं नक्षत्रस्य यस्य याति शनैश्चरः।
स च राजा विपद्येत दुर्भिक्ष भयमेव च ॥16॥

शनि जिस नक्षत्र के अपसव्य—दाहिनी ओर गमन करता है, उस नक्षत्र मे उत्पन्न हुआ राजा विपत्ति को प्राप्त होता है तथा दुर्भिक्ष और विनाश भी होता है ॥16॥

चन्द्रः सौरिं यदा प्राप्त. परिवेषेण [1]रुन्द्धति।
अवरोधं विजानीयान्नगरस्य महीपते. ॥17॥

जब चन्द्रमा शनि को प्राप्त हो और परिवेष के द्वारा अवरुद्ध हो तो नगर और राजा का अवरोध होता है अर्थात् किसी अन्य राजा के द्वारा डेरा डाला जाता है ॥17॥

चन्द्रः शनैश्चरं प्राप्तो मण्डलं वाऽनुरोहति।
यवनां सराष्ट्रां [2]सौवीरां [3]दारुणं भजते दिशम् ॥18॥

चन्द्रमा शनि को प्राप्त होकर मण्डल पर आरोहण करे तो यवन, सौराष्ट्र, सौवीर उत्तर दिशा को प्राप्त होते है ॥18॥

आनर्त्ताः सौरसेनाश्च दशार्णा द्वारिकास्तथा।
आवन्त्या अपरान्ताश्च यायिनश्च तदा नृपाः ॥19॥

उपर्युक्त स्थिति में आनर्त्त, सौरसेन, दशार्ण, द्वारिका और अवन्ति के निवासी राजा यायी अर्थात् आक्रमण करने वाले होते है ॥19॥

---

1 रुद्ध्यते मु०। 2 सौरेया मु०। 3 दारुणां च भजेद्दशाम् मु०।

यदा वा युगपद् युक्तः सौरिमध्येन नागरैः ।
[1]तदा भेदं विजानीयान्नागराणां परस्परम् ॥20॥

महात्मानश्च ये सन्तो महायोगापरिग्रहाः ।
उपसर्गं च गच्छन्ति धन-धान्यं च वध्यते ॥21॥

जब चन्द्रमा और शनि दोनो एक साथ हों तो नागरिको मे परस्पर मतभेद होता है। जो महात्मा, मुनि और साधु अपरिग्रही विचरण करते हैं, वे उपसर्ग को प्राप्त होते हैं तथा धन-धान्य की हानि होती है ॥20-21॥

देशा महान्तो योधाश्च तथा नगरवासिनः ।
ते सर्वत्रोपतप्यन्ते वेधे सौरस्य तादृशे ॥22॥

शनि के उक्त प्रकार के वेध होने पर देश, बड़े-बड़े योधा तथा नगरनिवासी सर्वत्र सन्तप्त होते है ॥22॥

ब्राह्मी सौम्या प्रतीची च वायव्या च दिशो यदा ।
वाहिनीं यो जयेत्तासु नृपो दैवहतस्तदा ॥23॥

पूर्व, उत्तर, पश्चिम और वायव्य दिशा की सेना को जो नृप जीतता है, वह भी भाग्य द्वारा आहत होता है ॥23॥

कृत्तिकासु च यद्यार्किर्विशाखासु बृहस्पतिः ।
[2]समस्तं दारुणं विन्द्यात् [3]मेघश्चात्र प्रवर्षति ॥24॥

जब कृत्तिका नक्षत्र पर शनि और विशाखा पर बृहस्पति रहता है तो चारों ओर भीषण भय होता है और वहाँ वर्षा होती है ॥24॥

कीटा पतंगाः शलभा वृश्चिका मूषका शुकाः[4] ।
अग्निश्चौरा बलीयांसस्तस्मिन् वर्षे न संशयः ॥25॥

इस प्रकार की स्थिति वाले वर्ष मे कीट, पतग, शलभ, बिच्छू, चूहे, अग्नि, शुक और चोर निस्सन्देह बलवान होते है अर्थात् इनका प्रकोप बढ़ता है ॥25॥

श्वेते सुभिक्षं जानीयात् पाण्डु-लोहितके भयम् ।
पीतो जनयते व्याधिं शस्त्रकोपञ्च दारुणम् ॥26॥

शनि के श्वेत रग का होने से सुभिक्ष, पाण्डु और लोहित रग का होने पर भय एवं पीतवर्ण होने पर व्याधि और भयंकर शस्त्रकोप होता है ॥26॥

1 अन्योऽन्यमिद जानीयात् मु० । 2 समन्तात् मु० । 3. देव मु० । 4 -स्तथा मु० ।

कृष्णे शुष्यन्ति सरितो वासवश्च न वर्षति।
स्नेहवानत्र गृह्णाति रूक्षः शोषयते प्रजाः ॥27॥

शनि के कृष्णवर्ण होने पर नदियाँ सूख जाती हैं और वर्षा नहीं होती है। स्निग्ध होने पर प्रजा में सहयोग और रूक्ष होने पर प्रजा का शोषण होता है ॥27॥

सिंहलानां किरातानां मद्राणां मालवैः सह।
द्रविडानां च भोजानां कोंकणानां तथैव च ॥28॥
[1]उत्कलानां पुलिन्दानां पल्हवानां शकैः सह।
यवनानां [2]च पौराणां स्थावराणां तथैव च ॥29॥
[3]अंगानां च कुरूणां च दृश्यानां च शनैश्चरः।
एषां विनाश कुरुते यदि युध्येत सयुगे ॥30॥

यदि शनि का युद्ध हो तो सिंहल, किरात, मद्र, मालव, द्रविड, भोज, कोकण उत्कल, पुलिन्द, पल्हव, शक, यवन, अग, कुरु, दृश्यपुर के नागरिको और राजाओ का विनाश करता है ॥28-30॥

यस्मिन् यस्मिस्तु नक्षत्रे कुर्यादस्तमनोदयौ।
तस्मिन् देशान्तर द्रव्यं [4]हन्यात् चाथ विनाशयेत् ॥31॥

जिस-जिस नक्षत्र पर शनि अस्त या उदय को प्राप्त होता है, उस-उस नक्षत्र वाले द्रव्य देश एव देशवासियो का विनाश करता है ॥31॥

शनैश्चरं चारमिदं च भूयो यो वेत्ति विद्वान् निभृतो यथावत्।
स पूजनीयो भुवि लब्धकीर्तिः सदा[5] महात्मेव हि दिव्यचक्षुः ॥32॥

जो विद्वान् यथार्थ रूप से इस शनैश्चर चार (गति) को जानता है, वह अत्यन्त पूजनीय है, ससार मे कीर्ति का धारी होता है और महान् दिव्यदृष्टि को प्राप्त कर सभी प्रकार के फलादेशो मे पारगत होता है ॥32॥

[6]इति सकलमुनिजनानन्दकन्दोदयमहामुनिश्रीभद्रबाहुविरचिते महानैमित्तिकशास्त्रे शनैश्चरचार. षोडशोऽध्याय परिसमाप्त. ॥16॥

विवेचन—शनि के मेषराशि पर होने से धान्यनाश, तैलग, द्राविड और बंग

1 ध्रुवकानां मु०। 2 पुराणाना मु०। 3. अकेधानां सुराणां च दस्यूनां च, मु०। 4. हन्यते वासिनश्च ये मु०। 5 महानेव मु०। 6 इति सकलमुनिजनानन्दकन्दोदय इत्यादि मुद्रित प्रति मे नही है।

देश में विग्रह; पाताल, नागलोक, दिशा-विदिशा में विद्रोह, मनुष्यो मे क्लेश, वैर, धन का नाश, अन्न की महँगाई, पशुओ का नाश, एवं जनता मे भय-आतंक रहता है। मेषराशि का शनि आधि-व्याधि उत्पन्न करता है। पूर्वीय प्रदेशों में वर्षा अधिक और पश्चिम के देशो मे वर्षा कम होती है। उत्तर दिशा मे फसल अच्छी होती है। दक्षिण के प्रदेशो मे आपसी विद्रोह होता है। वृष राशि पर शनि के होने से कपास, लोहा, लवण, तिल, गुड़ महँगे होते हैं तथा हाथी, घोड़ा, सोना, चाँदी सस्ते रहते हैं। पृथ्वी मण्डल पर शान्ति का साम्राज्य छाया रहता है। मिथुन राशि के शनि का फल सभी प्रकार के सुखो की प्राप्ति है। मिथुन के शनि मे वर्षा अधिक होती है। कर्कराशि के शनि मे रोग, तिरस्कार, धननाश, कार्य में हानि, मनुष्यो मे विरोध, प्रशासको मे द्वन्द्व, पशुओ मे महामारी एवं देश के पूर्वोत्तर भाग मे वर्षा की भी कमी रहती है। सिंह राशि के शनि मे चतुष्पद, हाथी घोड़े आदि का विनाश, युद्ध, दुर्भिक्ष, रोगो का आतक, समुद्र के तटवर्ती प्रदेशो मे क्लेश, म्लेच्छो मे सघर्ष, प्रजा को सन्ताप, धान्य का अभाव एवं नाना प्रकार से जनता को अशान्ति रहती है। कन्या के शनि मे काश्मीर देश का नाश, हाथी और घोड़ो मे रोग, सोना-चाँदी-रत्न का भाव सस्ता, अन्न की अच्छी उपज एव घृतादि पदार्थ भी प्रचुर परिमाण मे उत्पन्न होते है। तुला के शनि मे धान्य भाव तेज, पृथ्वी मे व्याकुलता, पश्चिमीय देशो में क्लेश, मुनियो को शारीरिक कष्ट, नगर और ग्रामो मे रोगोत्पत्ति, वनो का विनाश, अल्प वर्षा, पवन का प्रकोप, चोर-डाकुओ का अत्यधिक भय एव धनाभाव होते हैं। तुला का शनि जनता को कष्ट उत्पन्न करता है, इनमे धान्य की उत्पत्ति अच्छी नही होती।

वृश्चिक राशि के शनि मे राजकोप, पक्षियो मे युद्ध, भूकम्प, मेघो का विनाश, मनुष्यों मे कलह, कार्यों का विनाश, शत्रुओ को क्लेश एव नाना प्रकार की व्याधियाँ उत्पन्न होती है। वृश्चिक के शनि मे चेचक, हैजा और क्षय रोग का अधिक प्रसार होता है। कास-श्वास की बीमारी भी वृद्धिगत होती है। धनराशि के शनि में धन-धान्य की समृद्धि समयानुकूल वर्षा, प्रजा मे शान्ति, धर्मवृद्धि, विद्या का प्रचार, कलाकारो का सम्मान, देश में कला-कौशल की उन्नति एव जनता में प्रसन्नता का प्रसार होता है। प्रजा को सभी प्रकार के सुख प्राप्त होते हैं, जनता मे हर्ष और आनन्द की लहर व्याप्त रहती है। मकर के शनि मे सोना, चाँदी, ताँबा, हाथी, घोडा, बैल, सूत, कपास आदि पदार्थों का भाव महँगा होता है। खेती का भी विनाश होता है, जिससे अन्न की उपज भी अच्छी नही होती है। रोग के कारण प्रजा का विनाश होता है तथा जनता मे एक प्रकार की अग्नि का भय व्याप्त रहता है, जिससे अशान्ति दिखलाई पडती है। कुम्भ राशि के शनि मे धन-धान्य की उत्पत्ति खूब होती है। वर्षा प्रचुर परिमाण में और समयानुकूल होती है। विवाहादि उत्तम मागलिक कार्य पृथ्वी पर होते रहते है, जिससे जनता

मे हर्ष छाया रहता है। धर्म का प्रचार और प्रसार सर्वत्र होता है। सभी लोग सन्तुष्ट और प्रसन्न दिखलाई पडते है। मीन के शनि मे खेती का अभाव, नाना प्रकार के भयानक रोगो की उत्पत्ति, वर्षा का अभाव, वृक्षो का भी अभाव, पवन का प्रचण्ड होना, तूफान और भूकम्पो का आना, भयकर महामारियो का पडना, सब प्रकार से जनता का नाश और आतकित होना एव धन का नाश होना आदि फल घटित होते हैं।

सभी राशियो मे तुला और मीन के शनि को अनिष्टकर माना गया है। मीन का शनि धन-जन की हानि करता है और फसल को चौपट करने वाला माना जाता है। यदि मीन के शनि के साथ कर्क राशि का मगल हो तथा इन दोनो के पीछे सूर्य गमन कर रहा हो तो निश्चय ही भयकर अकाल पडता है। इस अकाल मे धन-जन की हानि होती है, देश मे अनेक प्रकार की व्याधियाँ उत्पन्न हो जाने से भी जनता को कष्ट होता है। वस्तुएँ भी महँगी होती है। व्यापारी वर्ग को भी मीन के शनि मे लाभ नही होता। व्यापारी वर्ग भी अनेक प्रकार से कष्ट उठाता है। अन्नाभाव के कारण जनता मे त्राहि-त्राहि उत्पन्न हो जाती है।

शनि का उदय विचार—मेष मे शनि उदय हो तो जलवृष्टि, मनुष्यो मे सुख, प्रजा मे शान्ति, धार्मिक विचार, समर्थता, उत्तम फसल, खनिज पदार्थों की उत्पत्ति अत्यधिक, सेवा की भावना, सहयोग और सहकारिता के आधार पर देश का विकास, विरोधियो की पराजय, एव सर्वसाधारण मे सुख उत्पन्न होता है। वृष राशि मे शनि के उदय होने से तृण-काष्ठ का अभाव, घोडो मे रोग, अन्य पशुओ मे भी अनेक प्रकार के रोग एव साधारण वर्षा होती है। मिथुन मे उदय होने से प्रचुर परिमाण मे वर्षा, उत्तम फसल, धान्य-माल सस्ता एव प्रजा सुखी होती है।

कर्क राशि मे शनि के उदय होने से वर्षा का अभाव, रसो की उत्पत्ति मे कमी, वनो का अभाव, घी-दूध-चीनी की उत्पत्ति मे कमी, अधर्म का विकास एव प्रशासको मे पारस्परिक अशान्ति उत्पन्न होती है। कन्या मे शनि का उदय हो तो धान्य नाश, अल्प वर्षा, व्यापार मे लाभ और उत्तम वर्गों के व्यक्तियो को अनेक प्रकार का कष्ट होता है। तुला और वृश्चिक राशि मे शनि का उदय हो तो महावृष्टि, धन का विनाश, चोरो का उपद्रव, उत्तम खेती, नदियो मे बाढ, नदी या समुद्र के तटवर्ती प्रदेशों के निवासियों को कष्ट एव गेहूँ की फसल का अभाव या कमी रहती है। धनु राशि मे शनि का उदय हो तो मनुष्यो मे अस्वस्थता, रोग, स्त्री और बालको मे नाना प्रकार की बीमारी, धान्य का नाश और जनसाधारण मे अनेक प्रकार के अन्धविश्वासो का विकास होने से सभी को कष्ट उठाना पड़ता है। मकर मे शनि का उदय हो तो प्रशासको मे सघर्ष, राजनीतिक उलट-फेर, चौपायो को कष्ट, तृण की कमी, वर्षा साधारण रूप मे होना एव लोहे का भाव महँगा होता है। कुम्भ राशि मे शनि का उदय हो तो

अच्छी वर्षा, साधारणतया धान्य की उत्पत्ति, व्यापार मे लाभ, कृषक और व्यापारी वर्ग मे सन्तोष रहता है। देश का आर्थिक विकास होता है। नयी-नयी योजनाएँ बनायी जाती हैं और सभी कार्यरूप मे परिणत करायी जाती हैं। मीन राशि मे शनि का उदय होना अल्प वर्षा कारक, अल्प धान्य की उत्पत्ति का सूचक एवं चोर, डाकुओ की वृद्धि की सूचना देता है। शनि का कर्क, तुला, मकर और मीन राशि मे उदय होना अधिक खराब है। अन्य राशि मे शनि के उदय होने से अन्न की उत्पत्ति अच्छी होती है। देश का व्यापार विकसित होता है और देश-वासियो को साधारण कष्ट के सिवा विशेष कष्ट नही होता है। रोग-महामारी का प्रसार होता है, जिससे सर्व साधारण को कष्ट होता है।

शनि अस्त का विचार—मेष मे शनि अस्त हो तो धान्य का भाव तेज, वर्षा साधारण, जनता मे असन्तोष, परस्पर फूट, मुकद्दमो की वृद्धि और व्यापार मे लाभ होता है। वृष राशि मे शनि अस्त हो तो पशुओ को कष्ट, देश के पशुधन का विनाश, पशुओ मे अनेक प्रकार के रोग, मनुष्यो मे सक्रामक रोगो की वृद्धि एव धान्य की उत्पत्ति साधारण होती है। मिथुन राशि मे शनि अस्त हो तो जनता को कष्ट, आपसी विद्वेष, धन-धान्य का विनाश, चैत्र के महीने मे महामारी एव प्रजा मे अशान्ति रहती है। कर्क राशि मे शनि अस्त हो तो कपास, सूत, गुड़, चाँदी, घी अत्यन्त महँगे, वर्षा की कमी, देश मे अशान्ति तथा नाना प्रकार के धान्य की महँगाई और कलिंग, बग, अग, विदर्भ, विदेह, कामरूप, आसाम आदि प्रदेशो मे वर्षा साधारण होती है। कन्या राशि मे शनि के अस्त होने से अच्छी वर्षा, मध्यम फसल, अन्न का भाव महँगा, धातु का भाव भी महँगा और चीनी-गुड की उत्पत्ति मध्यम होती है। तुला राशि मे शनि का उदय हो तो अच्छी वर्षा, उत्तम फसल, जनता मे सन्तोष और सभी प्रदेशो के व्यक्ति सुखी होते हैं। व्यापक रूप से वर्षा होती है। वृश्चिक राशि मे शनि के अस्त होने से अच्छी वर्षा, फसल मे रोग, टिड्डी-शलभादि का विशेष प्रकोप, धन की वृद्धि, जनता मे साधारणतया शान्ति और सुख होता है। धनु राशि मे शनि के अस्त होने से स्त्री-बच्चो को कष्ट, उत्तम वर्षा, उत्तम फसल, उत्तम व्यापार और जनसाधारण मे सब प्रकार से शान्ति व्याप्त रहती है। मकर राशि मे शनि के अस्त होने से सुख, प्रचण्ड पवन, अच्छी वर्षा, अच्छी फसल, व्यापार मे कमी, राजनीतिक स्थिति मे परिवर्तन एव पशुधन की वृद्धि होती है। कुम्भ राशि मे शनि के अस्त होने से शीत प्रकोप, पशुओ की हानि एव मध्यम फसल होती है। मीन राशि मे शनि के उत्पन्न होने से अधर्म का प्रचार, फसल का अभाव एव प्रजा को कष्ट होता है।

नक्षत्रानुसार शनिफल—श्रवण, स्वाति, हस्त, आर्द्रा, भरणी और पूर्वाफाल्गुनी नक्षत्र मे शनि स्थित हो तो पृथ्वी पर जल-वृष्टि होती है, सुभिक्ष,

समर्घता—वस्तुओ के भाव मे समता और प्रजा का विकास होता है। उक्त नक्षत्रों का शनि मनोहर वर्ण का होने से और अधिक शान्ति देता है तथा पूर्वीय प्रदेशो के निवासियो को अर्थलाभ होता है। पश्चिम प्रदेशो के नागरिको के लिए उक्त नक्षत्रों का शनि भयावह होता है। चोर, डाकुओ और गुण्डो का उपद्रव बढ़ जाता है। आश्लेषा, शतभिषा और ज्येष्ठा नक्षत्रो मे स्थित शनि सुभिक्ष, सुमगल और समयानुकूल वर्षा करता है। इन नक्षत्रो मे शनि के स्थित रहने से वर्षा प्रचुर परिमाण में नही होती। समस्त देश में अल्प ही वृष्टि होती है। मूलनक्षत्र मे शनि के विचरण करने से क्षुधाभय, शत्रुभय, अनावृष्टि, परस्पर संघर्ष, मतभेद, राजनीतिक उलट-फेर, नेताओ मे झगडा, व्यापारी वर्ग को कष्ट एव स्त्रियो को व्याधि होती है।

अश्विनी नक्षत्र मे शनि के विचरण करने से अश्व, अश्वारोही, कवि, वैद्य और मन्त्रियो को हानि उठानी पडती है। उक्त नक्षत्र का शनि बगाल मे सुभिक्ष, शान्ति, धन-धान्य की वृद्धि, जनता मे उत्साह, विद्या का प्रचार एव व्यापार की उत्पत्ति, करने वाला है। आसाम और बिहार के लिए साधारणत. सुखदायी, अल्प वृष्टिकारक एव नेताओ मे मतभेद उत्पन्न करने वाला, उत्तर प्रदेश, मध्यप्रदेश और महाराष्ट्र के लिए सुभिक्षकारक, बाढ़ के कारण जनता को साधारण कष्ट, आर्थिक विकास एव धान्य की उत्पत्ति का सूचक है। मद्रास, कोचीन, राजस्थान, हिमाचल, दिल्ली, पंजाब और विन्ध्य प्रदेश के लिए साधारण वृष्टिकारक, सुभिक्षोत्पादक और आर्थिक विकास करने वाला है। अवशेष प्रदेश के लिए सुखोत्पादक और सुभिक्षकारक है। अश्विनी नक्षत्र के शनि मे इंग्लैण्ड, अमेरिका और रूस मे आन्तरिक अशान्ति रहती है। जापान मे अधिक भूकम्प आते हैं तथा अनाज की कमी रहती है। खाद्य पदार्थों का अभाव सुदूर पश्चिम के राष्ट्रो मे रहता है। भरणी नक्षत्र का शनि विशेष रूप से जल-यात्रा करने वालो को हानि पहुँचाता है। नर्तक, गाने-बजाने वाले एव छोटी-छोटी नावो द्वारा आजीविका करने वालो को कष्ट देता है। कृत्तिका नक्षत्र का शनि अग्नि से आजीविका करने वाले, क्षत्रिय, सैनिक और प्रशासक वर्ग के लिए अनिष्टकर होता है।

रोहिणी नक्षत्र मे रहने वाला शनि उत्तरप्रदेश और पजाब के व्यक्तियो को कष्ट देता है। पूर्व और दक्षिण के निवासियो के लिए सुख-शान्ति देता है। जनता मे क्रान्ति उत्पन्न करता है। समस्त देश मे नयी-नयी बातो की माँग की जाती है। शिक्षा और व्यवसाय के क्षेत्र मे उन्नति होती है। मृगशिर नक्षत्र मे शनि के विचरण करने से याजक, यजमान, धर्मात्मा और शान्तिप्रिय लोगो को कष्ट होता है। इस नक्षत्र पर शनि के रहने से रोगो की उत्पत्ति अधिक होती है तथा अग्निभय और शस्त्रभय बराबर बना रहता है। आर्द्रा नक्षत्र पर शनि के रहने से तेली, धोबी, रंगरेज और चोरो को अत्यन्त कष्ट होता है, देश के सभी भागो मे

सुभिक्ष होता है। वर्षा उत्तम होती है, व्यापार भी बढ़ता है, विदेशों से सम्पर्क स्थापित होता है। पुनर्वसु नक्षत्र मे शनि के रहने से पंजाब, सौराष्ट्र, सिन्धु और सौवीर देश मे अत्यन्त पीडा होती है। इन प्रदेशो में वर्षा भी अल्प होती है तथा महामारी के कारण जनता को कष्ट होता है। पुष्य नक्षत्र मे शनि के रहने से देश मे सुकाल, उत्तम वर्षा, आपसी मतभेद, नेताओ में संघर्ष एवं निम्न श्रेणी के व्यक्तियो को कष्ट होता है। पूर्व प्रदेशों के लिए उक्त नक्षत्र का शनि शान्ति देने वाला, दक्षिण प्रदेशो मे सुभिक्ष करने वाला, उत्तर प्रदेशो मे धन-धान्य की वृद्धि करने वाला एव पश्चिम प्रदेशो के व्यक्तियो के लिए अशान्तिकारक होता है। उक्त नक्षत्र का शनि सभी मुस्लिम राष्ट्रो मे अशान्ति उत्पन्न करता है तथा अमेरिका में आन्तरिक कलह होता है। रूस की राजनीतिक स्थिति मे भी परिवर्तन आता है। आश्लेषा नक्षत्र का शनि सर्पो को कष्ट देता है तथा सर्पों द्वारा आजीविका करने वालो को भी कष्ट ही देता है। इस नक्षत्र पर शनि के रहने से जापान, वर्मा, दक्षिण भारत और युगोस्लाविया मे भूकम्प अधिक आते है। इन भूकम्पो द्वारा धन-जन की पर्याप्त हानि होती है। भारत के लिए उक्त नक्षत्र का शनि उत्तम नही है। देश में समयानुकूल वर्षा भी नही होती है, जिससे फसल उत्तम नही होती।

उत्तराफाल्गुनी नक्षत्र का शनि गुड, लवण, जल एव फलो के लिए हानिकारक होता है। उक्त शनि मे महाराष्ट्र, मद्रास, दक्षिणी भारत के प्रदेश और बम्बई क्षेत्र के लिए लाभ होता है। इन राज्यो का आर्थिक विकास होता है, कला-कौशल की वृद्धि होती है। हस्त नक्षत्र मे शनि स्थित हो तो शिल्पियो को कष्ट होता है। कुटीर उद्योगो के विकास मे उक्त नक्षत्र के शनि से अनेक प्रकार की बाधाएँ आती है। चित्रा नक्षत्र मे शनि हो तो स्त्रियो, ललित कला के कलाकारों एवं अन्य कोमल प्रकृति वालो को कष्ट होता है। इस नक्षत्र मे शनि के रहने से समस्त भारत मे वर्षा अच्छी होती है, फसल भी अच्छी उत्पन्न होती है। दक्षिण के प्रदेशो मे आपसी मतभेद होने से कुछ अशान्ति होती है। स्वाति नक्षत्र में शनि हो तो, नर्तक, सारथी, ड्राइवर, जहाज सचालक, दूत एव स्टीमरो के चालको को व्याधियाँ उत्पन्न होती हैं। देश मे शान्ति और सुभिक्ष उत्पन्न होते है। विशाखा नक्षत्र का शनि रंगो के व्यापारियो के लिए उत्तम है। लोहा, अभ्रक तथा अन्य प्रकार के खनिज पदार्थों के व्यापारियों के लिए अच्छा होता है। अनुराधा नक्षत्र का शनि काश्मीर के लिए अरिष्टकारक और शेष भारत के लिए मध्यम है। इस नक्षत्र के शनि मे खेती अच्छी होती है और वर्षा भी अच्छी ही होती है। इस नक्षत्र के शनि में बर्तन बनाने का कार्य करने वाले, कपड़े का कार्य करने वाले यन्त्रों में विघ्न उत्पन्न होता है। जूट और चीनी के व्यापारियो के लिए यह बहुत अच्छा होता है। ज्येष्ठा नक्षत्र का शनि श्रेष्ठि वर्ग और पुरोहित वर्ग के लिए

उत्तम नहीं होता है। अवशेष सभी श्रेणी के व्यक्तियो के लिए उत्तम होता है। मूल नक्षत्र का शनि काशी, अयोध्या और आगरा मे अशान्ति उत्पन्न करता है। यहाँ संघर्ष होते हैं तथा उक्त नगरों मे अग्नि का भी भय रहता है। अवशेष सभी प्रदेशों के लिए उत्तम होता है। पूर्वाषाढा मे शनि के रहने से बिहार, बगाल, उत्तर प्रदेश, हिमाचल प्रदेश, मध्यभारत के लिए भयकारक, अल्प वर्षा सूचक और व्यापार मे हानि पहुँचाने वाला होता है। उत्तराषाढा नक्षत्र मे शनि विचरण करता हो तो यवन, शबर, भिल्ल आदि पहाडी जातियों को हानि करता है। इन जातियो में अनेक प्रकार के रोग फैल जाते हैं तथा आगरा मे भी सघर्ष होता है। श्रवण नक्षत्र मे विचरण करने से शनि राज्यपाल, राष्ट्रपति, मुख्यमन्त्री एव प्रधानमन्त्री के लिए हानिकारक होता है। देश के अन्य वर्गों के व्यक्तियो के लिए कल्याण करने वाला होता है।

धनिष्ठा नक्षत्र मे विचरण करने वाला शनि धनिको, श्रीमन्तो और ऊँचे दर्जे के व्यापारियो के लिए हानि पहुँचाता है। इन लोगो को व्यापार मे घाटा होता है। शतभिषा और पूर्वाभाद्रपद मे शनि के रहने से पण्यजीवी व्यक्तियो को विघ्न होता है। उक्त नक्षत्र के शनि मे बडे-बडे व्यापारियो को अच्छा लाभ होता है। उत्तराभाद्रपद मे शनि के रहने से फसल का नाश, दुर्भिक्ष, जनता को कष्ट, शस्त्रभय, अग्निभय एव देश के सभी प्रदेशो मे अशान्ति होती है। रेवती नक्षत्र मे शनि के विचरण करने से फसल का अभाव, अल्पवर्षा, रोगो की भरमार, जनता में विद्वेष-ईर्ष्या एव नागरिको मे असहयोग की भावना उत्पन्न होती है। राजाओ मे विरोध उत्पन्न होता है।

गुरु के विशाखा नक्षत्र मे रहने पर शनि यदि कृत्तिका नक्षत्र मे स्थित हो तो प्रजा को अत्यन्त पीडा दुर्भिक्ष और नागरिको मे भय पैदा होता है। अनेक वर्ण का शनि देश को कष्ट देता है, देश के विकास मे विघ्न करता है। श्वेत वर्ण का शनि होने पर भारत के सभी प्रदेशो मे शान्ति, धन-धान्य की वृद्धि एव देश का सर्वांगीण विकास होता है।

सप्तदशोऽध्यायः

वर्णं गतिं च संस्थानं मार्गमस्तमनोदयौ।
[1]वक्रं फलं प्रवक्ष्यामि गौतमस्य निबोधत ॥1॥

बृहस्पति के वर्ण, गति, आकार, मार्गी, अस्त, उदय, वक्र आदि का फलादेश भगवान् गौतम स्वामी द्वारा प्रतिपादित आधार पर निरूपित किया जाता है ॥1॥

मेचकः कपिलः श्यामः पीतः [2]मण्डल-नीलवान्।
रक्तश्च धूम्रवर्णश्च न प्रशस्तोऽङ्गिरास्तथा ॥2॥

बृहस्पति का मेचक, कपिल—पिंगल, श्याम, पीत, नील, रक्त और धूम्र वर्ण का मण्डल शुभ नही है ॥2॥

मेचकश्चेन्मृतं सर्वं वसु पाण्डुर्विनाशयेत्।
पीतो व्याधिं भयं शिष्टे धूम्राभः [3]सृजते जलम् ॥3॥

यदि बृहस्पति का मण्डल मेचक वर्ण का हो तो मृत्यु, पाण्डु वर्ण का हो तो धन-नाश, पीतवर्ण का हो तो व्याधि और धूम्र वर्ण का होने पर जल-वृष्टि होती है ॥3॥

उपसर्पति मित्रादि पुरतः स्त्री प्रपद्यते।
त्रि-चतुर्भिश्च नक्षत्रैस्त्रिभिरस्तमनं व्रजेत् ॥4॥

जब बृहस्पति तीन-चार नक्षत्रो के बीच गमन करता है या तीन नक्षत्रो मे अस्त को प्राप्त होता है तो स्त्री-पुत्र और मित्रादि की प्राप्ति होती है ॥4॥

कृत्तिकादि भगान्तश्च मार्गः स्यादुत्तर. स्मृतः ॥
अर्यमादिरपाप्यन्तो मध्यमो मार्ग उच्यते ॥5॥

कृत्तिका से पूर्वाफाल्गुनी तक—कृत्तिका, रोहिणी, मृगशिर, आर्द्रा, पुनर्वसु, पुष्य, आश्लेषा, मघा और पूर्वाफाल्गुनी इन नौ नक्षत्रो मे बृहस्पति का उत्तर मार्ग तथा उत्तराफाल्गुनी, हस्त, चित्रा, स्वाति, विशाखा, अनुराधा, ज्येष्ठा, मूल और पूर्वाषाढ़ा इन नौ नक्षत्रो मे उसका मध्यम मार्ग होता है ॥5॥

विश्वादित्रमयान्तश्च दक्षिणो मार्ग उच्यते।
एते बृहस्पतेर्मार्गा नव नक्षत्रजास्त्रयः ॥6॥

---

1 गौतमस्य प्रवक्ष्यामि यथावदनुपूर्वशः मु०। 2 पाण्डु स मु०। 3. धूम्राभश्च सृजेज्जलम् मु०।

उत्तराषाढ़ा से भरणी तक—उत्तराषाढ़ा, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा, पूर्वाभाद्रपद, उत्तराभाद्रपद, रेवती, अश्विनी और भरणी इन नौ नक्षत्रों मे बृहस्पति का दक्षिण मार्ग होता है। इस प्रकार बृहस्पति के नौ-नौ नक्षत्रों के तीन मार्ग बतलाये गये हैं ।।6।।

मूलमुत्तरतो याति स्वातिं दक्षिणतो व्रजेत् ।
नक्षत्राणि तु शेषाणि समन्ताद्दक्षिणोत्तरे ।।7।।

उत्तर से मूल को और दक्षिण से स्वाति नक्षत्र को प्राप्त करता है तथा दक्षिणोत्तर से शेष नक्षत्रों को प्राप्त करता है ।।7।।

मूषके तु यदा ह्रस्वो मूलं दक्षिणतो व्रजेत् ।
दक्षिणतस्तदा विन्द्यादनयोर्दक्षिणे पथि ।।8।।

जब केतु लघु होकर दक्षिण से मूल नक्षत्र की ओर जाता है तो बृहस्पति और केतु दोनो ही दक्षिण मार्ग वाले कहे जाते हैं ।।8।।

अनावृष्टिहता देशा [1]बुभुक्षाज्वरनाशिताः ।
चक्रारूढा प्रजास्तत्र बध्यन्ते जात[2]तस्कराः ।।9।।

इन दोनो के दक्षिण मार्ग मे रहने से अनावृष्टि—वर्षा का अभाव होता है, जिससे देश पीडित होते हैं। तेज ज्वर से अनेक व्यक्तियो की मृत्यु होती है प्रजा शासन में आरूढ रहती है और वर्णसंकरो का वध होता है ।।9।।

यदा चोत्तरतः स्वातिं दीप्तो [3]याति बृहस्पतिः ।
उत्तरेण तदा विन्द्याद् दारुणं भयमादिशेत् ।।10।।

जब बृहस्पति दीप्त होकर उत्तर की ओर से स्वाति नक्षत्र को प्राप्त करता है तो उस समय उत्तर देश मे दारुण भय होता है ।।10।।

लुप्यन्ते च क्रिया. सर्वा नक्षत्रे गुरुपीडिते ।
दस्यव प्रबला ज्ञेया न च बीजं प्ररोहति ।।11।।

गुरु के द्वारा नक्षत्र के पीडित होने पर सभी क्रियाओ का लोप होता है, चोरो की शक्ति बढती है और बीज उत्पन्न नहीं होता है ।।11।।

दक्षिणेन तु वक्रेण पञ्चमे पञ्च मुच्यते ।
उत्तरे पञ्चके पञ्च मार्गे चरति गौतम: ।।12।।

---

1 क्षुज्ज्वरविनाशिता. मु० । 2 सकरा मु० । 3 यायाद् मु० ।

बृहस्पति के दक्षिण के पाँच मार्गों मे पञ्चम मार्ग वक्र गति द्वारा पूर्ण किया जाता है और उत्तर के पाँच मार्गों मे पञ्चम मार्ग मार्गी गति द्वारा पूर्ण किया तजा है ॥12॥

ह्रस्वे भवति दुर्भिक्षं निष्प्रभे व्याधिजं भयम् ।
विवर्णे पापसंस्थाने मन्दपुष्प-फलं भवेत् ॥13॥

गुरु के ह्रस्व मार्ग मे गमन करने पर दुर्भिक्ष, निष्प्रभ में गमन करने पर व्याधि और भय, तथा विवर्ण और पाप संस्थान मार्ग मे गमन करने पर अल्प फल और पुष्प उत्पन्न होते हैं ॥13॥

प्रतिलोमोऽनुलोमो वा पञ्च संवत्सरो यदा ।
नक्षत्राण्युपसर्पेण तदा सृजति दुस्समाम् ॥14॥

बृहस्पति अपने पाँच सवत्सरों मे नक्षत्रों का प्रतिलोम और अनुलोम रूप से गमन करता है तो दुष्काल की उत्पत्ति होती है अर्थात् प्रजा को कष्ट होता है ॥14॥

सस्य नाशो अनावृष्टिर्मृ[1]त्युस्तीव्राश्च व्याधयः ।
शस्त्रकोपोऽग्नि मूर्च्छा च षड्विधं मूर्च्छने भयम् ॥15॥

बृहस्पति की उक्त प्रकार की स्थिति में धान्य नाश, अनावृष्टि, तीव्र क्रोध, रोग, शस्त्रकोप, अग्निकोप एव मूर्च्छा आदि भय उत्पन्न होते हैं ॥15॥

सप्तार्धं यदि वाऽष्टार्धं षडर्धं निष्प्रभोदित. ।
पञ्चार्धं चाथवाऽर्धं च यदा संवत्सरं चरेत् ॥16॥
सङ्ग्रामा [2]रौरवास्तत्र निर्जलाश्च बलाहकाः ।
श्वेतास्थी पृथिवी [3]सर्वा भ्रान्ताक्षुत्स्नेहवारिभिः ॥17॥

जब बृहस्पति संवत्सर, परिवत्सर, इदावत्सर, अनुवत्सर और इद्वत्सर इन पाँच संवत्सरो मे से संवत्सर नाम के वर्ष मे विचरण कर रहा हो, तथा साढ़े तीन नक्षत्र, चार नक्षत्र, तीन नक्षत्र, ढाई नक्षत्र और आधे नक्षत्र पर निष्प्रभ उदित हो तो सग्राम, निरादर, मेघों का निर्जल होना, पृथ्वी का श्वेत हड्डियो से युक्त होना, क्षुधा, रोग और कुवायु—तूफान के द्वारा त्रस्त होना आदि फल प्राप्त होते हैं ॥16-17॥

---

1 मन्यु० । 2 निरुदाराश्च मेघाश्च स्नेहदुर्बला मु० । 3. भ्रान्ता क्षुधारोगै कुवायुभि., मु० ।

पुष्यो [1]यदि द्विनक्षत्रे सप्रभश्चरते सम: ।
षड् भयानि तदा हत्वा विपरीतं सुखं सृजेत् ॥18॥

नृपाश्च विषमच्छायाश्चतुर्षु वर्तते हितम् ।
सुखं प्रजा. प्रमोदन्ते स्वर्गवत् साधुवत्सला: ॥19॥

जब बृहस्पति पुष्यादि दो नक्षत्रो मे गमन करता है, तब छ. प्रकार के भयो का विनाश कर सुख उत्पन्न करता है। राजा भी आपस मे प्रेम-भाव से निवास करते हैं, प्रजा सुख और आनन्द प्राप्त करती है तथा पृथ्वी स्वर्ग के समान साधु-वत्सल हो जाती है ॥18-19॥

विशाखा कृत्तिका चैव मघा रेवतिरेव च ।
अश्विनी श्रवणश्चैव तथा भाद्रपदा भवेत् ॥20॥

बहूदकानि जानीयात् तिष्ययोगसमप्रभे ।
फाल्गुन्येव च चित्रा च वैश्वदेवश्च मध्यम: ॥21॥

जब बृहस्पति विशाखा, कृत्तिका, मघा, रेवती, अश्विनी, श्रवण, पूर्वाभाद्रपद इन नक्षत्रो से गमन करता है तो गुरु-पुष्य योग के समान ही अत्यधिक जल की वर्षा समझनी चाहिए। पूर्वाफाल्गुनी, चित्रा और उत्तराषाढ़ा इन नक्षत्रो मे बृहस्पति के गमन करने पर मध्यम फल जानना चाहिए ॥20-21॥

ज्येष्ठा मूलं च सौम्यं च जघन्या सोमसम्पदा।
कृत्तिका रोहिणी मूर्तिराश्लेषा हृदयं गुरु: ॥22॥
आप्यं ब्राह्यं च वैश्वं च नाभि· पुष्य-मघा स्मृता. ।
एतेषु च विरुद्धेषु ध्रुवस्य फलमादिशेत् ॥23॥

ज्येष्ठा, मूल और पूर्वाषाढा नक्षत्रो मे बृहस्पति गमन करे तो जघन्य सुख-सम्पत्ति की प्राप्ति होती है। कृत्तिका तथा रोहिणी, मूर्ति और आश्लेषा, बृहस्पति का हृदय है। पूर्वषाढा, अभिजित्, उत्तराषाढा, पुष्य और मघा उसकी नाभि मानी गयी है। इन नक्षत्रो मे तथा इनसे विपरीत नक्षत्रो मे फल का निरूपण करना चाहिए ॥22-23॥

द्विनक्षत्रस्य चारस्य यत् पूर्वं परिकीर्तितम् ।
एवमेवं तु जानीयात् षड् भयानि समादिशेत् ॥24॥

---

1 यदा मु०।

दो-दो नक्षत्रों का गमन जो पहले कहा गया है, उन्हीं के अनुसार छ: प्रकार के भयों का परिज्ञान करना चाहिए ॥24॥

इमानि यानि बीजानि विशेषेण विचक्षण: ।
व्याधयो मूर्तिघातेन हृद्रोगो हृदये [1]महत् ॥25॥

जो बीजभूत नक्षत्र हैं, उनके द्वारा मनीषियों को फलादेश ज्ञात करना चाहिए। यदि बृहस्पति के मूर्त्ति नक्षत्रों—कृत्तिका और रोहिणी—का घात हो तो व्याधियाँ—नाना प्रकार की बीमारियाँ और हृदय नक्षत्र का घात हो तो हृदय रोग उत्पन्न होते हैं ॥25॥

पुष्ये हते हतं पुष्पं फलानि कुसुमानि च ।
आग्नेया मूषका: सर्पा दाघश्च शलभा: शुका: ॥26॥
ईतयश्च महाधान्ये जाते च बहुधा स्मृता: ।
स्वचक्रमोतयश्चैव परचक्रं निरम्बु च ॥27॥

पुष्य नक्षत्र का घात होने पर पुष्प, फल और पल्लवों का विनाश, अग्नि, मूषक—चूहे, सर्प, जलन, शलभ (टिड्डी), शुक का उपद्रव, ईति—महामारी, धान्यघात, स्वशासन मे मित्रता, और परशासन में जलाभाव आदि फल घटित होते है ॥26-27॥

अत्यम्बु च विशाखायां सोमे संवत्सरे विदु: ।
शेषं संवत्सरे ज्ञेयं शारदं तत्र नेतरम् ॥28॥

अगहन या सौम्य नाम के सवत्सर में जब विशाखा नक्षत्र पर बृहस्पति गमन करता है, तो अत्यधिक जल की वर्षा होती है। शेष सवत्सरों मे केवल पौष सवत्सर मे ही अल्प जल की वर्षा समझनी चाहिए, अन्य वर्षों मे वह भी नही ॥28॥

माघमल्पोदकं विन्द्यात् फाल्गुने दुर्भगा: स्त्रिय: ।
चैत्रं चित्रं विजानीयात् सस्यं तोयं सरीसृपा: ॥29॥

बृहस्पति जिस मास के जिस नक्षत्र में उदय हो, उस नक्षत्र के अनुसार ही महीने के नाम के समान वर्ष का भी नाम होता है। माघ नाम के वर्ष मे अल्प वर्षा होती है, फाल्गुन नाम के वर्ष में स्त्रियों का दुर्भाग्य बढ़ता है। चैत नाम के वर्ष में धान्य, जल की वर्षा विचित्र रूप में होती है तथा सरीसृपों की वृद्धि होती है ॥29॥

1. हते मु० ।

वैशाखे नृपभेदश्च पूर्वतोयं विनिर्दिशेत् ।
ज्येष्ठा-मूले जलं पश्चाद् मित्र-भेदश्च जायते ॥30॥

वैशाख नामक वर्ष मे राजाओ मे मतभेद होता है और जल की वर्षा अच्छी होती है । ज्येष्ठ नामक वर्ष मे—जो कि ज्येष्ठा और मूल नक्षत्र के मासिक होने पर आता है, अच्छी वर्षा, मित्रो में मतभेद और धर्म का प्रचार होता है ॥30॥

आषाढे तोयसंकीर्णं सरीसृपसमाकुलम् ।
श्रावणे दंष्ट्रिणश्चौरा व्यालाश्च प्रबलाः स्मृताः ॥31॥

आषाढ़ नामक वर्ष मे जल की कमी होती है पर कही-कही अच्छी वर्षा होती है और सरीसृपो की वृद्धि होती है । श्रावण नामक वर्ष मे दाँत वाले जन्तु, चोर, सर्प आदि प्रबल होते हैं ॥31॥

संवत्सरे भाद्रपदे शस्त्रकोपाग्निमूर्च्छनम् ।
सरीसृपाश्चाश्वयुजि बहुधा वा भयं विदुः ॥32॥

भाद्रपद नामक वर्ष मे शस्त्रकोप, अग्निभय, मूर्च्छा आदि फल होते है और आश्विन नामक सवत्सर मे सरीसृपो का अनेक प्रकार का भय होता है ॥32॥

(कार्त्तिक सवत्सर मे शकट द्वारा आजीविका करने वाले, अस्त्र-शस्त्रो का निर्माण एव क्रय-विक्रय करने वालो को कष्ट होता है ।)

एते संवत्सराश्चोक्ताः पुष्यस्य परतोऽपि वा ।
[1]रोहिण्यार्द्रास्तथाश्लेषा हस्तः स्वातिः पुनर्वसुः ॥33॥

बृहस्पति के इन वर्षों का फल कहा गया है, रोहिणी के अभिघात से प्रजा सभी प्रकार से दु खित होती है ॥33॥

अभिजिच्चानुराधा च मूलो वासववारुणाः ।
रेवती भरणी चैव विज्ञेयानि बृहस्पते ॥34॥

अभिजित्, अनुराधा, मूल, धनिष्ठा, शतभिषा, रेवती और भरणी ये नक्षत्र बृहस्पति के है अर्थात् इन नक्षत्रो मे बृहस्पति के रहने से शुभ फल होता है ॥34॥

कृत्तिकायां गतो नित्यमारोहण-प्रमर्दने ।
रोहिण्यास्त्वभिघातेन प्रजा सर्वाः सुदुःखिताः ॥35॥

कृत्तिका नक्षत्र मे स्थित बृहस्पति जब आरोहण और प्रमर्दन करता है और रोहिणी मे स्थित होकर अभिघात करता है तो प्रजा को अनेक प्रकार का कष्ट

1 रोहिण्यास्त्वभिघातेन प्रजा सर्वा सुदु खिता मु० ।

होता है ॥35॥

शस्त्रघातस्तथाऽऽर्द्रायामाश्लेषायां विषाद्भयम्।
मन्दहस्तपुनर्वसोस्तोयं चौराश्च दारुणाः ॥36॥

आर्द्रा के घातित होने पर बृहस्पति शस्त्रघात, आश्लेषा में स्थित होने पर विषादभय तथा हस्त और पुनर्वसु में घातित होने पर मन्द वर्षा और भीषण चौर्य-भय उत्पन्न करता है ॥36॥

वायव्ये वायवो वृष्टा रोगदं वाजिनां भयम्।
अनुराधानुघाते च [1]स्त्रीसिद्धिश्च प्रहीयते ॥37॥

स्वाति नक्षत्र मे स्थित बृहस्पति के घातित होने पर वायव्य दिशा में रोग उत्पन्न करता है, घोडो को अनेक प्रकार का भय होता है, अनुराधा नक्षत्र के घातित होने पर स्त्री-प्रेम मे कमी आती है ॥37॥

तथा मूलाभिघातेन दुष्यन्ते मण्डलानि च।
वायव्यस्याभिघातेन पीड्यन्ते धनिनो नराः ॥38॥

मूल नक्षत्र के घातित होने पर मण्डल—प्रदेशो को कष्ट होता है, दोष लगता है और विशाखा नक्षत्र के अभिघातित होने पर धनिक व्यक्तियो को पीडा होती है ॥38॥

वारुणे जलजं तोयं फलं पुष्पं च शुष्यति।
अकाराम्नाविकांस्तोयं पीडयेद्रेवती हता ॥39॥

शतभिषा के अभिघातित होने पर कमल, जल, फल, पुष्प इत्यादि सूख जाते हैं। उत्तरा भाद्रपद के अभिघातित होने पर नाविक और जल-जन्तुओ को पीडा तथा जल का अभाव और रेवती नक्षत्र के अभिघातित होने पर पीडा होती है ॥39॥

वामं करोति नक्षत्रं यस्य दीप्तो बृहस्पतिः।
लब्ध्वाऽपि सोऽर्थं विपुलं न भुञ्जीत कदाचन ॥40॥

[2]हिनस्ति बीजं तोयञ्च मृत्युवा भरणी यथा।
अपि हस्तगतं द्रव्यं सर्वथैव विनश्यति ॥41॥

दीप्त बृहस्पति जिस व्यक्ति के बायीं ओर नक्षत्र को अभिघातित करता है, वह व्यक्ति विपुल सम्पत्ति को प्राप्त करके भी उसका भोग नही कर सकता है,

---

1 मैत्री-मु०। 2. यह श्लोक मुद्रित प्रति में नहीं है।

तथा बीज और जल का विनाश करता है और यम के समान मृत्युप्रद होता है। हाथ पर रखा हुआ धन भी विनाश को प्राप्त होता है ॥40-41॥

प्रदक्षिणं तु नक्षत्रं यस्य कुर्यात् बृहस्पतिः।
यायिनां विजयं विन्द्यात् नागराणां पराजयम् ॥42॥

बृहस्पति जिस व्यक्ति के दाहिनी ओर नक्षत्र को अभिघातित करता है, वह व्यक्ति यदि यायी हो तो विजय और नागरिक हो तो पराजय पाता है ॥42॥

प्रदक्षिणं तु कुर्वीत सोमं यदि बृहस्पतिः।
नागराणां जयं विन्द्याद् यायिनां च पराजयम् ॥43॥

यदि बृहस्पति चन्द्रमा की प्रदक्षिणा करे तो नागरिकों की विजय और यायियों की पराजय होती है ॥43॥

उपघातेन चक्रेण मध्यगन्ता बृहस्पतिः।
निहन्याद् यदि नक्षत्रं यस्य तस्य पराजयम् ॥44॥

उपघात चक्र के मध्य में स्थित होकर बृहस्पति जिस व्यक्ति के नक्षत्र का घात करता है, उसी का पराजय होता है ॥44॥

बृहस्पतेर्यदा चन्द्रो रूपं संछादयेत् भृशम्।
स्थावराणां वधं कुर्यात् पुररोधं च दारुणम् ॥45॥

जब बृहस्पति के रूप का चन्द्रमा आच्छादन करे तो स्थावरों का वध होता है और नगर का भयकर अवरोध होता है, जिससे अनेक प्रकार के कष्ट होते हैं ॥45॥

स्निग्धप्रसन्नो विमलोऽभिरूपो महाप्रमाणो द्युतिमान् स पीतः।
गुरुर्यदा चोत्तरमार्गचारी तदा प्रशस्तः [1]प्रतिबद्धहन्ता ॥46॥

यदि बृहस्पति स्निग्ध, प्रसन्न, निर्मल, सुन्दर, कान्तिमान, पीतवर्ण, पूर्ण आकृति वाला और युवावस्था वाला उत्तरमार्ग में विचरण करता है तो शुभ होता है और प्रतिपक्षियों का विनाश करता है ॥46॥

इति श्रीसकलमुनिजनानन्दमहामुनिभद्रबाहुविरचिते परमनैमित्तिकशास्त्रे बृहस्पतिचारः सप्तदशः परिसमाप्तः ॥17॥

1. प्रतिपक्ष- मु०।

विवेचन—मास के अनुसार गुरु के राशि-परिवर्तन का फल—यदि कार्तिक मास मे गुरु राशि परिवर्तन करे तो गायो को कष्ट, शस्त्र-अस्त्रो का अधिक निर्माण, अग्निभय, साधारण वर्षा, समर्घता, मालिको को कष्ट, द्रविड़ देशवासियो को शान्ति, सौराष्ट्र के निवासियो को साधारण कष्ट, उत्तरप्रदेश वासियों को सुख एव धान्य की उत्पत्ति अच्छी होती है। अगहन मे गुरु के राशि परिवर्तन होने से अल्प वर्षा, कृषि की हानि, परस्पर मे युद्ध, आन्तरिक सघर्ष, देश के विकास में अनेक रुकावटे एव नाना प्रकार के सकट आते हैं। बिहार, बगाल, आसाम आदि पूर्वीय प्रदेशो मे वर्षा अच्छी होती है तथा इन प्रदेशो मे कृषि भी अच्छी होती है। उत्तरप्रदेश, पजाब और सिन्ध में वर्षा की कमी रहती है, फसल भी अच्छी नहीं होती है। इन प्रदेशो मे अनेक प्रकार के सघर्ष होते हैं, जनता में अनेक प्रकार की पार्टियाँ तैयार होती है तथा इन प्रदेशो मे महामारी भी फैलती है। चेचक का प्रकोप उत्त रप्रदेश, मध्यप्रदेश, और राजस्थान मे होता है। पौष मास मे बृहस्पति के राशि-परिवर्तन से सुभिक्ष, आवश्यकतानुसार अच्छी वर्षा, धर्म की वृद्धि, क्षेम, आरोग्य और सुख का विकास होता है। भारतवर्ष के सभी राज्यो के लिए यह बृहस्पति उत्तम माना जाता है। पहाड़ी प्रदेशो की उन्नति और अधिक रूप मे होती है। माघ मास मे गुरु के राशि-परिवर्तन से सभी प्राणियो को सुख-शाति, सुभिक्ष, आरोग्य और समयानुकूल यथेष्ट वर्षा एव सभी प्रकार से कृषि का विकास होता है। ऊसर भूमि मे भी अनाज उत्पन्न होता है। पशुओ का विकास और उन्नति होती है। फाल्गुन मास मे गुरु के राशि-परिवर्तन होने से स्त्रियो को भय, विधवाओ की सख्या की वृद्धि, वर्षा का अभाव अथवा अल्प वर्षा, ईति-भीति, फसल की कमी एव हैजे का प्रकोप व्यापक रूप से होता है। बगाल, राजस्थान और गुजरात मे अकाल की स्थिति उत्पन्न हो जाती है। चैत्र मे गुरु का राशि-परिवर्तन होने से नारियो को सन्तान-प्राप्ति, सुभिक्ष, उत्तम वर्षा, नाना व्याधियो की आशका एव ससार मे राजनीतिक परिवर्तन होते हैं। जापान, जर्मन, अमेरिका, इंगलैण्ड, रूस, चीन, श्याम, बर्मा, आस्ट्रेलिया, मलाया आदि मे मनमुटाव होता है। राष्ट्रों में भेदनीति कार्य करती है। गुटबन्दी का कार्य आरम्भ हो जाने से परिवर्तन के चिह्न स्पष्ट दृष्टिगोचर होने लगते हैं। वैशाख मास में गुरु का राशि-परिवर्तन होने से धर्म की वृद्धि, सुभिक्ष, अच्छी वर्षा, व्यापारिक उन्नति, देश का आर्थिक विकास, दुष्ट-गुण्डे-चोर आदि का दमन, सज्जनो को पुरस्कार एवं खाद्यान्न का भाव सस्ता होता है। घी, गुड़, चीनी आदि का भाव भी सस्ता रहता है। उक्त प्रकार के गुरु मे फलो की फसल मे कमी आती है। समयानुकूल यथेष्ट वर्षा होती है। जूट, तम्बाकू और लोहे का उत्पादन अधिक होता है। विदेशों से भारत का मैत्री सम्बन्ध बढ़ता है तथा सभी राष्ट्र मैत्री सम्बन्धो मे आगे बढ़ना चाहते हैं। ज्येष्ठ मास में गुरु के राशि-परिवर्तन होने से धर्मात्माजनो को कष्ट,

धर्मस्थानों पर विपत्ति, सत्क्रिया का अभाव, वर्षा की कमी, धान्य की उत्पत्ति में कमी एवं प्रजा मे अनेक प्रकार की व्याधियाँ उत्पन्न होती हैं। मध्य प्रदेश, राजस्थान, हिमाचल प्रदेश और पंजाब राज्य मे सूखा पडता है, जिससे इन राज्यों की प्रजा को अधिक कष्ट उठाना पडता है। उक्त मास मे गुरु का राशि-परिवर्तन कलाकारो के लिए मध्यम और योद्धाओ के लिए श्रेष्ठ होता है। आषाढ़ मास में बृहस्पति का राशि-परिवर्तन हो तो राज्य वालो को क्लेश, मुख्य मन्त्रियो को शारीरिक कष्ट, ईति-भीति, वर्षा का अवरोध, फसल की क्षति, नये प्रकार की क्रान्ति एवं पूर्वोत्तर प्रदेशो मे उत्तम वर्षा होती है। दक्षिण के प्रदेशों मे भी उत्तम वर्षा होती है। मलवार मे फसल मे कुछ कमी रह जाती है। गेहूँ, धान, जौ और मक्का की उपज सामान्यतया अच्छी होती है। श्रावण मास मे गुरु का राशि-परिवर्तन होने से अच्छी वर्षा, सुभिक्ष, देश का आर्थिक विकास, फल-फूलो की वृद्धि, नागरिको मे उत्तेजना, क्षेम और आरोग्य फैलता है। भाद्रपद और आश्विन मास मे गुरु के राशि-परिवर्तन होने से क्षेम, श्री, आयु, आरोग्य एवं धन-धान्य की वृद्धि होती है। समयानुकूल अच्छी वर्षा होती है। जनता को आर्थिक लाभ होता है तथा सभी मिलकर देश के विकास मे योगदान करते हैं।

द्वादश राशि स्थित गुरुफल—मेष राशि मे बृहस्पति के होने से चैत्र सवत्सर कहलाता है। इसमें खूब वर्षा होती है, सुभिक्ष होता है। वस्त्र, गुड, ताँबा, कपास, मूँगा आदि पदार्थ सस्ते होते हैं। घोडो को पीडा, महामारी, ब्राह्मणो को कष्ट, तीन महीनो तक जनसाधारण को भी कष्ट होता है। भाद्रपद मास मे गेहूँ, चावल, उडद, घी, सस्ते होते हैं, दक्षिण और उत्तर में खण्डवृष्टि होती है। दक्षिणोत्तर प्रदेशों मे दुर्भिक्ष, दो महीने के पश्चात् वर्षा होती है। कार्तिक और मार्गशीर्ष मास मे कपास, अन्न, गुड़ महँगा होता है, घी का भाव सस्ता होता है, जूट, पाट का भाव महँगा होता है। पौष मास मे रसो का भाव महँगा, अन्न का भाव सस्ता, गुड-घी का भाव कुछ महँगा होता है। एक वर्ष मे यदि बृहस्पति तीन राशियो का स्पर्श करे तो अत्यन्त अनिष्ट होता है।

वृष राशि मे गुरु के होने से वैशाख मे वर्ष माना जाता है। इस वर्ष मे वर्षा अच्छी होती है, फसल भी उत्तम होती है। गेहूँ, चावल, मूँग, उड़द, तिल के व्यापार मे अधिक लाभ होता है। श्रावण और ज्येष्ठ इन दो महीनो में सभी वस्तुएँ लाभप्रद होती हैं। इन दोनो महीनो मे वस्तुएँ खरीदकर रखने से अधिक लाभ होता है। कार्तिक, माघ और वैशाख में घी का भाव तेज होता है। आषाढ, श्रावण और आश्विन मे अच्छी वर्षा होती है, भादो के महीने मे वर्षा का अभाव रहता है। रोग उत्पत्ति इस वर्ष मे अधिक होती है। पूर्व प्रदेशो मे मलेरिया, चेचक, निमोनिया, हैजा आदि रोग सामूहिक रूप से फैलते हैं। पश्चिम के प्रदेशो मे सूखा होने से बुखार का अधिक प्रसार होता है। आषाढ मास में बीजवाले अनाज महँगे

और अवशेष सभी अनाज सस्ते होते हैं। गुड का भाव फाल्गुन से महँगा होता है और अगले वर्ष तक चला जाता है। घी का भाव घटता-बढ़ता रहता है। चौपायों को कष्ट अधिक होता है। श्रावण और भाद्रपद दोनो महीनो में पशुओ में महामारी पडती हैं, जिससे मवेशियो का नाश होता है।

मिथुन राशि पर बृहस्पति के आने से ज्येष्ठ नामक संवत्सर होता है। इसमें बालको और घोडो को रोग होता है, वायु-वर्षा होती है। पाप, अत्याचार और अनीति की वृद्धि होती है। चोरभय, शस्त्रभय एवं आतंक व्याप्त रहता है। सोना, चाँदी का बाजार एक वर्ष तक अस्थिर रहता है, व्यापारियो को इन दोनो के व्यापार मे लाभ होता है। अनाज का भाव वर्ष के आरंभ मे महँगा, पश्चात् सस्ता होता है। जूट, सोठ, मिर्चा, पीपल, सरसो का भाव कुछ तेज होता है। कक राशि पर गुरु के रहने से आषाढाख्य सवत्सर होता है। इस वर्ष मे कार्तिक और फाल्गुन मे सभी प्रकार के अनाज तेज होते हैं, अल्प वर्षा, दुर्भिक्ष, अशान्ति और रोग फैलते हैं। सोना, चाँदी, रेशम, ताँबा, मूँगा, मोती, माणिक्य, अन्न आदि का भाव कुछ तेज होता है, पर अनाज, गुड और घी का भाव अधिक तेज होता है। शीतकाल की सचित की गयी वस्तुओ को वर्षा काल मे बेचने से अधिक लाभ होता है। सिंह राशि का बृहस्पति श्रावण संवत्सर होता है। इसमें वर्षा अच्छी होती है, फसल भी उत्तम होती है। धी, दूध और रसो की उत्पत्ति अत्यधिक होती है। फल-पुष्पो की उपज अच्छी होने से विश्व मे शान्ति और सुख दिखलाई पडता है। धान्य की उत्पत्ति अच्छी होती है। नये नेताओ की उत्पत्ति होने से देश का नेतृत्व नये व्यक्तियो के हाथ मे जाता है, जिससे देश की प्रगति ही होती है। व्यापारियो के लिए यह वर्ष उत्तम होता है। सभी वस्तुओ के व्यापार मे लाभ होता है। सिंह के गुरु में होने पर चौपाये महँगे होते हैं। सोना, चाँदी, घी, तेल, गेहूँ, चावल भी महँगा ही रहता है। चातुर्मास मे वर्षा अच्छी होती है। कार्तिक और पौष मे अनाज महँगा होता है, अवशेष महीनो मे अनाज का भाव सस्ता रहता है। सोना-चाँदी आदि धातुएँ कार्तिक से माघ तक महँगी रहती हैं, अवशेष महीनो में कुछ भाव नीचे गिर जाते हैं। यो सोने के व्यापारियो के लिए यह वर्ष बहुत अच्छा है। गुड, चीनी के व्यापार मे घाटा होता है। वैशाख मास से श्रावण मास तक गुड़ का भाव कुछ तेज रहता है, अवशेष महीनो मे समर्घता रहती है। स्त्रियो के लिए यह बृहस्पति अच्छा नही है, स्त्रीधर्म सम्बन्धी अनेक बीमारियाँ उत्पन्न होती हैं तथा कन्याओ को चेचक अधिक निकलती हैं। सर्वसाधारण मे आनन्द, उत्साह और हर्ष की लहर दिखलाई पड़ती है।

कन्या राशि के गुरु मे भाद्रसवत्सर होता है। इसमे कार्तिक से वैशाख तक सुभिक्ष होता है। इस सवत्सर मे संग्रह किया गया अनाज वैशाख मे दूना लाभ देता है। वर्षा साधारण होती है और फसल भी साधारण ही रहती है। तुला राशि

के बृहस्पति में आश्विन वर्ष होता है। इसमें घी, तेल सस्ते होते हैं। मार्गशीर्ष और पौष में धान्य का संग्रह करना उचित है। मार्गशीर्ष से लेकर चैत्र तक पाँचों महीनों में लाभ होता है। विग्रह—लड़ाई और संघर्ष देश मे होने का योग अवगत करना चाहिए। रस संग्रह करने वालों को अधिक लाभ होता है। वृश्चिक राशि का बृहस्पति होने पर कार्तिक संवत्सर होता है। इसमे खण्डवृष्टि, धान्य की फसल अल्प होती है। घरो मे परस्पर वैमनस्य आठ महीनो तक होता है। भाद्रपद, आश्विन और कार्तिक महीनों मे महँगाई हो जाती है। सोना, चाँदी, काँसा, ताँबा, तिल, घी, श्रीफल, कपास, नमक, श्वेत वस्त्र महँगे बिकते हैं। देश के विभिन्न प्रदेशो मे संघर्ष होते है, स्त्रियो को नाना प्रकार के कष्ट होते हैं। धनु राशि के बृहस्पति मे मार्गशीर्ष संवत्सर होता है। इसमे वर्षा अधिक होती है। सोना, चाँदी, अनाज, कपास, लोहा, काँसा आदि सभी पदार्थ सस्ते होते हैं। मार्गशीर्ष से ज्येष्ठ तक घी कुछ महँगा रहता है। चौपायो से अधिक लाभ होता है, इनका मूल्य अधिक बढ़ जाता है। मकर के गुरु मे पौष संवत्सर होता है, इसमे वर्षाभाव और दुर्भिक्ष होता है। उत्तर और पश्चिम मे खण्ड वृष्टि होती है तथा पूर्व और दक्षिण मे दुर्भिक्ष। धान्य का भाव महँगा रहता है। कुम्भ के गुरु मे माघ संवत्सर होता है। इसमे सुभिक्ष, पर्याप्त वर्षा, धार्मिक प्रचार, धातु और अनाज सस्ते होते हैं। माघ-फाल्गुन मे पदार्थ सस्ते रहते हैं। वैशाख मे वस्तुओ के भाव कुछ तेज हो जाते है। मीन के गुरु मे फाल्गुन संवत्सर होता है। इसमे अनेक प्रकार के रोगो का प्रसार, साधारण वर्षा, सुभिक्ष, गेहूँ, चीनी, तिल, तैल और गुड़ का भाव तेज होता है। पौष मास मे कष्ट होता है। फाल्गुन और चैत्र के महीने मे बीमारियाँ फैलती है। दक्षिण भारत और राजस्थान के लिए यह वर्ष मध्यम है। पूर्व के लिए वर्ष उत्तम है, पश्चिम के प्रदेशो के लिए वर्ष साधारण है।

बृहस्पति के वक्री होने का विचार—मेष राशि का बृहस्पति वक्री होकर मीन राशि का हो जाय तो आषाढ़, श्रावण मे गाय, महिष, गधे और ऊँट तेज हो जाते है। चन्दन, सुगन्धित तेल तथा अन्य सुगन्धित वस्तुएँ महँगी होती हैं। वृष राशि का गुरु पाँच महीने वक्री हो जाय तो गाय-बैल आदि चौपाये, बर्तन आदि तेज होते हैं। सभी प्रकार के धान्य का संग्रह करना उचित है। मवेशी मे अधिक लाभ होता है। मिथुन राशि का गुरु वक्री हो तो आठ महीने तक चौपाये तेज रहते हैं। मार्गशीर्ष आदि महीनो में सुभिक्ष, सब लोग स्वस्थ लेकिन उत्तरप्रदेश और पंजाब मे दुष्काल की स्थिति आती है। कर्क राशि का गुरु यदि वक्री हो तो घोर दुर्भिक्ष, गृहयुद्ध, जनता मे संघर्ष, राज्यों की सीमा में परिवर्तन तथा घी, तैल, चीनी, कपास के व्यापार में लाभ एवं धान्य भाव भी महँगा होता है। सिंह राशि के गुरु के वक्री होने से सुभिक्ष, आरोग्य और सब लोगों मे प्रसन्नता होती है। धान्य के संग्रहों मे भी लाभ होता है। कन्या राशि के गुरु के वक्री होने से अल्प लाभ,

सुभिक्ष, अधिक वर्षा और प्रजा आमोद-प्रमोद में लीन रहती है। तुला राशि के गुरु के वक्री होने से बर्तन, सुगन्धित वस्तुएँ, कपास आदि पदार्थ महँगे होते हैं। वृश्चिक राशि का गुरु वक्री हो तो अन्न और धान्य का संग्रह करना उचित होता है। गेहूँ, चना आदि महँगे होते हैं। धनु राशि का गुरु वक्री हो तो सभी प्रकार के अनाज सस्ते होते हैं। मकर राशि के गुरु के वक्री होने से धान्य सस्ता होता है और आरोग्यता की वृद्धि होती है। यदि कुम्भ राशि का गुरु वक्री हो तो सुभिक्ष, कल्याण, उचित वर्षा एव धान्य भाव सम रहता है। वर्षान्त मे वस्तुओ के भाव कुछ महँगे होते है। मीन राशि का गुरु वक्री हो तो धनक्षय, चोरों से भय, प्रशासको मे अनबन, धान्य और रस पदार्थ महंगे होते हैं। लवण, कपास, घी और तेल में चौगुना लाभ होता है। मीन के गुरु का वक्री होना धातुओ के भावो मे भी तेजी लाता है तथा सुवर्णादि सभी धातुएँ महँगी होती हैं।

गुरु का नक्षत्र भोग विचार—जब गुरु कृत्तिका, रोहिणी नक्षत्र मे स्थित हो उस समय मध्यम वृष्टि और मध्यम धान्य उपजता है। मृगशिरा और आर्द्रा मे गुरु के रहने से यथेष्ट वर्षा, सुभिक्ष और धन-धान्य की वृद्धि होती है। पुनर्वसु, पुष्य और आश्लेषा मे गुरु हो तो अनावृष्टि, घोरभय, दुर्भिक्ष, लूट-पाट, सघर्ष और अनेक प्रकार के रोग होते है। मघा और पूर्वाफाल्गुनी मे गुरु के होने से सुभिक्ष, क्षेम और आरोग्य होते हैं। उत्तराफाल्गुनी और हस्त में गुरु स्थित हो तो वर्षा अच्छी, जनता को सुख एव सर्वत्र क्षेम-आरोग्य व्याप्त रहता है। चित्रा और स्वाती नक्षत्र मे गुरु हो तो श्रेष्ठ धान्य, उत्तम वर्षा तथा जनता में आमोद-प्रमोद होते हैं। विशाखा और अनुराधा मे गुरु के होने से मध्यम वर्षा होती है और फसल भी मध्यम ही होती है। ज्येष्ठा और मूल मे गुरु हो तो दो महीने के उपरान्त खण्डवृष्टि होती है। पूर्वाषाढ़ा और उत्तराषाढ़ा में गुरु हो तो तीन महीनों तक लगातार अच्छी वर्षा, क्षेम, आरोग्य और पृथ्वी पर सुभिक्ष होता है। श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा नक्षत्र मे गुरु हो तो सुभिक्ष के साथ धान्य महँगा होता है। पूर्वाभाद्रपद और उत्तराभाद्रपद मे गुरु का होना अनावृष्टि का सूचक है। रेवती, भरणी और अश्विनी नक्षत्र में गुरु के होने से सुभिक्ष, धान्य की अधिक उत्पत्ति एवं शान्ति रहती है। मृगशिरा से पाँच नक्षत्रों में गुरु शुभ होता है। गुरु तीव्र गति हो और शनि वक्री हो तो विश्व में हाहाकार होने लगता है।

गुरु के उदय का फलादेश—मेष राशि मे गुरु का उदय हो तो दुर्भिक्ष, मरण, संकट, आकस्मिक दुर्घटनाएँ होती हैं। वृष मे उदय होने से सुभिक्ष, मणि-रत्न महँगे होते हैं। मिथुन मे उदय होने से वेश्याओ को कष्ट, कलाकार और व्यापारियो को भी पीड़ा होती है। कर्क मे उदय होने से अल्पवृष्टि, मृत्यु एवं धान्य भाव तेज होता है। सिंह मे उदय होने से समयानुकूल यथेष्ट वर्षा, सुभिक्ष एव नदियो की बाढ़ से जन-साधारण में कष्ट होता है। कन्या राशि में गुरु के उदय होने से

बालकों को कष्ट, साधारण वर्षा और फसल भी अच्छी होती है। तुलाराशि में गुरु के उदय होने से काश्मीरी चन्दन, फल-पुष्प एवं सुगन्धित पदार्थ महँगे होते हैं। वृश्चिक राशि मे गुरु के उदय होने से दुर्भिक्ष, धन-विनाश, पीड़ा, एव अल्प वर्षा होती है।

धनु राशि और मकर राशि मे गुरु का उदय होने से रोग, उत्तम धान्य, अच्छी वर्षा एवं द्विजातियो को कष्ट होता है। कुम्भ राशि मे गुरु के उदय होने से अतिवृष्टि, अनाज का भाव महँगा एव मीन राशि मे गुरु के उदय होने से युद्ध, संघर्ष और अशान्ति होती है। कार्तिक मास मे गुरु के उदय होने से थोडी वर्षा, रोग, पीड़ा, मार्गशीर्ष मे उदय होने से सुभिक्ष, उत्तम वर्षा; पौष मे उदय होने से नीरोगता और धान्य की प्राप्ति, माघ-फाल्गुन मे उदय होने से खण्डवृष्टि, चैत्र मे उदय होने से विचित्र स्थिति, वैशाख-ज्येष्ठ मे उदय होने से वर्षा का निरोध, आषाढ़ मे उदय हो तो आपस मे मतभेद, अन्न का भाव तेज; श्रावण मे उदय हो तो आरोग्य, सुख-शान्ति, वर्षा, भाद्रपद मास मे उदय होने से धान्यनाश एव आश्विन मे उदय होने से सभी प्रकार से सुख की प्राप्ति होती है।

गुरु के अस्त का विचार—मेष मे गुरु अस्त हो तो थोडी वर्षा, बिहार, बंगाल, आसाम मे सुभिक्ष, राजस्थान, पजाब मे दुष्काल, वृष मे अस्त हो तो दुर्भिक्ष, दक्षिण भारत मे अच्छी फसल, उत्तर भारत मे खण्डवृष्टि, मिथुन मे अस्त हो तो घृत, तेल, लवण आदि पदार्थ महँगे, महामारी के कारण सामूहिक मृत्यु, अल्प वृष्टि, कर्क मे हो तो सुभिक्ष, कुशल, कल्याण, क्षेम, सिंह मे अस्त हो तो युद्ध, सघर्ष, राजनीतिक उलट-फेर, धन का नाश, कन्या मे अस्त हो तो क्षेम, सुभिक्ष, आरोग्य; तुला मे पीडा, द्विजो को विशेष कष्ट, धान्य महँगा, वृश्चिक मे अस्त हो तो नेत्ररोग, धनहानि, आरोग्य, शस्त्रभय, धनु राशि मे अस्त हो तो भय, आतंक, रोगादि, मकर राशि मे अस्त हो तो उडद, तिल, मूँग आदि धान्य महँगे; कुम्भ मे अस्त हो तो प्रजा को कष्ट, गर्भवती नारियो को रोग एवं मीन राशि मे अस्त हो तो सुभिक्ष, साधारण वर्षा, धान्य भाव सस्ता होता है।

गुरु का क्रूर ग्रहो के साथ अस्त या उदय होना अशुभ होता है। शुभ ग्रहो के साथ अस्त या उदय होने से गुरु का शुभ फल प्राप्त होता है। गुरु के साथ शान्ति और मगल के रहने से प्राय सभी वस्तुओ की कमी होती है और भाव भी उनके महंगे होते हैं। जब गुरु के साथ शनि की दृष्टि गुरु पर रहती है, तब वर्षा कम होती है और फसल भी अल्प परिमाण मे उपजती है।

अष्टादशोऽध्यायः

गतिं प्रवासमुदयं वर्णं ग्रहसमागमम् ।
बुधस्य सम्प्रवक्ष्यामि फलानि च निबोधत ॥1॥

बुध के प्रवास—अस्त, उदय, वर्ण, ग्रहयोग का वर्णन करता हूँ, उनका फल निम्न प्रकार अवगत करना चाहिए ॥1॥

सौम्या विमिश्रा. संक्षिप्तास्तीव्रा घोरास्तथैव च ।
दुर्गाथगतयो ज्ञेया बुधस्य च विचक्षणैः ॥2॥

सौम्या, विमिश्रा, सक्षिप्ता, तीव्रा, घोरा, दुर्गा और पापा ये सात प्रकार की बुध की गतियाँ विद्वानो ने बतलायी हैं ॥2॥

सौम्यां गतिं समुत्थाय [1]त्रिपक्षाद् दृश्यते बुधः ।
विमिश्रायां गतौ पक्षे संक्षिप्तायां षडूनके ॥3॥
तीक्ष्णायां दशरात्रेण घोरायां तु षडाह्निके ।
पापिकायां त्रिरात्रेण दुर्गायां सम्यगक्षये ॥4॥

सौम्या गति मे बुध तीन पक्ष अर्थात् 45 दिन तक देखा जाता है । विमिश्रा गति मे दो पक्ष अर्थात् तीस दिन, सक्षिप्ता गति मे चौबीस दिन, तीक्ष्णा गति मे दस रात, घोरा मे छ दिन, पापा गति मे तीन रात और दुर्गा मे नौ दिन तक बुध दिखलाई पडता है । तात्पर्य यह है कि बुध की सौम्यगति 45 दिन, विमिश्रा 30 दिन, सक्षिप्ता 24 दिन, तीक्ष्णा या तीव्रा 10 दिन, घोरा 6 दिन, पापा 3 दिन और दुर्गा 9 दिन तक रहती है ॥3-4॥

सौम्याः विमिश्राः सक्षिप्ता बुधस्य गतयो हिताः ।
शेषाः पापाः समाख्याता विशेषेणोत्तरोत्तरा. ॥5॥

बुध की सौम्या, विमिश्रा और सक्षिप्ता गतियाँ हितकारी हैं, शेष सभी गतियाँ पाप गति कहलाती हैं तथा विशेष रूप से उत्तर-उत्तर की गतियाँ पाप हैं ॥5॥

नक्षत्र शकवाहेन जहाति समचारताम्[2] ।
एषोऽपि नियतश्चारो भय कुर्यादितोऽन्यथा ॥6॥

यदि बुध समान रूप से गमन करता हुआ शक वाहन के द्वारा स्वाभाविक गति से नक्षत्र का त्याग करे तो यह बुध का नियतचार कहलाता है, इसके विपरीत गमन करने से भय होता है ॥6॥

---

1 त्रिपक्षे मु० । 2 समाचारत मु० ।

नक्षत्राणि चरेत्पञ्च पुरस्तादुदितो बुधः ।
ततश्चास्तमितः षष्ठे सप्तमे दृश्यते परः ॥7॥

सम्मुख उदय होकर बुध पाँच नक्षत्र प्रमाण गमन करता है, छठे नक्षत्र पर अस्त होता है और सातवें पर पुनः दिखलाई पड़ता है ॥7॥

उदितः पृष्ठतः सौम्यश्चत्वारि चरति ध्रुवम् ।
पञ्चमेऽस्तमितः षष्ठे दृश्यते पूर्वतः पुनः ॥8॥

पृष्ठत उदित होकर बुध चार नक्षत्र प्रमाण गमन करता है, पाँचवें नक्षत्र पर अस्त होता है और छठे पर पुन. दिखलाई पड़ता है ॥8॥

चत्वारि षट् तथाऽष्टौ च कुर्यादस्तमनोदयौ ।
सौम्यायां तु विमिश्रायां संक्षिप्तायां यथाक्रमम् ॥9॥

सौम्या, विमिश्रा और सक्षिप्ता गति मे क्रमश चार, छ. और आठ नक्षत्रो पर अस्त और उदय को बुध प्राप्त होता है ॥9॥

[1]नक्षत्रमस्य चिह्नानि गतिभिस्तिसृभिर्यदा ।
पूर्वाभिः पूर्णसस्यानां तदा सम्पत्तिरुत्तमा ॥10॥

उक्त तीनो गतियो मे जब बुध नक्षत्रों को पुन. ग्रहण करता है तो पूर्ण रूप से धान्य की उत्पत्ति होती है और उत्तम सम्पत्ति रहती है ॥10॥

बुधो यदोत्तरे मार्गे सुवर्ण. पूजितस्तदा ।
मध्यमे मध्यमो ज्ञेया जघन्यो दक्षिणे पथि ॥11॥

पूर्वोत्तर मार्ग मे बुध अच्छे वर्ण वालो द्वारा पूजित होता है अर्थात् उत्तम फलदायक होता है। मध्य मे मध्यम और दक्षिण मार्ग मे जघन्य माना जाता है ॥11॥

वसु कुर्यादतिस्थूलो ताम्रः शस्त्रप्रकोपनः ।
[2]अतश्चारुणवर्णश्च बुधः सर्वत्र पूजितः ॥12॥

अति स्थूल बुध धन की वृद्धि करता है, ताम्रवर्ण का बुध शस्त्र कोप करता है, सूक्ष्म और अरुण वर्ण का बुध सर्वत्र पूजित—उत्तम होता है ॥12॥

पृष्ठतः पुरलम्भाय पुरस्तादर्थवृद्धये ।
स्निग्धो रूक्षो बुधो ज्ञेय. सदा सर्वत्रगो बुधः ॥13॥

बुध का पीछे रहना नगर-प्राप्ति के लिए, सामने रहना अर्थ-वृद्धि के लिए और स्निग्ध और रूक्ष बुध सदा सर्वत्र गमन करने वाला होता है ॥13॥

---

1 नक्षत्रमनुगृह्णाति मु० । 2. अणु- मु० ।

गुरोः शुक्रस्य भौमस्य वीथीं विन्द्याद् यदा बुधः।
दीप्तोऽतिरूक्षः सङ्ग्रामं तदा घोरं निवेदयेत् ॥14॥

जब बुध ग्रह गुरु, शुक्र और मंगल की वीथि को प्राप्त होता है तब अत्यन्त रूक्ष और दीप्त होता है, अतः घोर सग्राम होता है ॥14॥

मार्गवस्योत्तरां[1] वीथीं चन्द्रश्रृङ्गं च दक्षिणम्।
बुधो यदा निहन्यात्तानुभयोर्दक्षिणापथे ॥15॥

राज्ञां चक्रधराणां च सेनानां शस्त्रजीविनाम्।
पौर-[2]जनपदानां च क्रिया काचिन्न सिध्यति ॥16॥

यदि शुक्र उत्तरा-वीथि में हो और चन्द्रशृंग दक्षिण की ओर हों तथा उनको दक्षिण मार्ग मे बुध घातित करे तो राजा, चक्रधर—शासक, सेना, शस्त्र से आजीविका करने वाले, पुरवासी और नागरिको की कोई भी क्रिया सिद्ध नही होती है ॥15-16॥

[3]शुक्रस्य दक्षिणां वीथीं चन्द्रशृंगमथोत्तरम्।
भिन्द्यात्लिखेत् तदा सौम्यस्ततो [4]राज्याग्निजं भयम् ॥17॥

शुक्र यदि दक्षिण वीथि में हो और चन्द्रशृंग नीचे की ओर उत्तर तरफ हो तथा बुध इनका भेदन कर स्पर्श करे तो उस समय राज्य और अग्नि का भय होता है ॥17॥

यदा बुधोऽरुणाभः [5]स्यादवुर्भगो वा निरीक्ष्यते।
तदा स स्थावरान् हन्ति ब्रह्म-क्षत्रं च पीडयेत् ॥18॥

जब बुध अरुण कान्ति वाला हो अथवा दुर्भग—कुरूप दिखलाई पडता हो तो स्थावर—नागरिको का विनाश करता है और ब्राह्मण और क्षत्रियो को पीडित करता है ॥18॥

चान्द्रस्य दक्षिणां वीथीं भित्त्वा तिष्ठेद् यो ग्रहः।
रूक्षः स कालसंकाशस्तदा चित्रविनाशनम् ॥19॥

चित्रमूर्तिश्च चित्रांश्च शिल्पिनः कुशलांस्तथा।
तेषां च बन्धनं कुर्यात् मरणाय समीहते ॥20॥

जब कोई ग्रह बुध की दक्षिण वीथि का भेदन करे तथा वह रूक्ष दिखलाई

1. यथोत्तरां मु०। 2. -आन० मु०। 3 शुक्रस्तु मु०। 4. रोगाग्निज भयम् मु०। 5. स्यादुच्चगो वा मु०।

पड़े तो शिल्पकला एवं चित्रकला का विनाश होता है। चित्र, मूर्ति, कुशल मूर्तिकार और चित्रकारो का बन्धन और बिनाश होता है। अर्थात् उक्त प्रकार की स्थिति में ललित कलाओ और ललितकलाओ के निर्माताओ का विनाश एवं मरण होता है ॥19-20॥

भित्त्वा यदोत्तरां वीथीं दारुकाशोऽवलोकयेत् ।
सोमस्य चोत्तरं शृंगं लिखेद् भद्रपदां वधेत् ॥21॥
शिल्पिनां दारुजीवीनां तदा षाण्मासिको [1]भयः ।
अकर्मसिद्धिः कलहो मित्रभेदः पराजयः ॥22॥

यदि बुध उत्तरा वीथि का भेदन कर काष्ठ-तृण का अवलोकन करे एव चन्द्रमा के उत्तर शृंग का स्पर्श करे तथा पूर्वा भाद्रपद का वेध करे तो काष्ठजीवी शिल्पियों को छः महीने मे भय होता है। अकार्य की सिद्धि होती है। कलह, मित्र-भेद और पराजय आदि फल घटित होते हैं ॥21-22॥

पीतो यदोत्तरां वीथीं गुरुं भित्त्वा प्रलीयते ।
तदा चतुष्पदं गर्भं कोशधान्यं बुधो वधेत् ॥23॥
वैश्यश्च [2]शिल्पिनश्चापि गर्भं मासञ्च सारथि ।
सो नयेद्भजते मासं भाद्रबाहुवचो यथा ॥24॥

पीत वर्ण का बुध उत्तरा वीथि मे बृहस्पति का भेदन कर अस्त हो जाय तो चौपाये, गर्भ, खजाना, धान्य आदि का विनाश करता है। उक्त प्रकार की बुध की स्थिति से वैश्य और शिल्पियो को दारुण भय होता है। यह भय एक महीने तक रहता है, ऐसा भद्रबाहु स्वामी का वचन है ॥23-24॥

विभ्राजमानो रक्तो वा बुधो दृश्येत कश्चन ।
नागराणां स्थिराणां च दीक्षितानां च तद्भयम् ॥25॥

यदि कभी शोभित होने वाला रक्त वर्ण का बुध दिखलाई पड़े तो नागरिक, स्थिर और दीक्षित—साधु-मुनियो को भय होता है ॥25॥

कृत्तिकास्वग्निदो रक्तो रोहिण्यां स क्षयंकरः ।
सौम्ये रौद्रे तथाऽऽदित्ये पुष्ये सर्वे बुधः स्मृतः ॥26॥
पितृदैवं तथाऽऽश्लेषां कलुषो यदि [3]दृश्यते ।
पितृंस्तान् विहंगांश्च सस्यं स भजते नयः ॥27॥

---

1 वध मु०। 2 शिल्पिनां चापि भय भवति दारुणम् मु०। 3 सेवते मु०।

कृत्तिका मे लाल वर्ण का बुध हो तो अग्नि प्रकोप करने वाला, रोहिणी में हो तो क्षय करने वाला होता है। और यदि मृगशिरा, आर्द्रा, पुनर्वसु, पुष्य, आश्लेषा, मघा इन नक्षत्रो में कलुषित बुध हो तो पितर और विहगमों तथा धान्य को लाभ होता है ॥26-27॥

बुधो विवर्णो मध्येन विशाखां यदि गच्छति।
ब्रह्म-क्षत्रविनाशाय तदा ज्ञेयो न संशयः ॥28॥

यदि विवर्ण बुध विशाखा के मध्य से गमन करे तो ब्राह्मण और क्षत्रियो का विनाश होता है, इसमे सन्देह नही है ॥28॥

मासोदितोऽनुराधायां यदा सौम्यो निषेवते।
[1]पशुधनचरान् धान्यं तदा पीड्यते भृशम् ॥29॥

जब मासोदित बुध अनुराधा मे रहता है तो पशुधन को अत्यधिक कष्ट देता है और धान्य की हानि होती है ॥29॥

श्रवणे राज्यविभ्रंशो ब्राह्मे ब्राह्मणपीडनम्।
धनिष्ठायां च वैवर्ण्यं धनं हन्ति धनेश्वरम् ॥30॥

विकृत वर्ण वाला बुध यदि श्रवण नक्षत्र मे हो तो राज्य भ्रष्ट होता है, अभिजित् मे हो तो ब्राह्मणो को पीडा होती है और धनिष्ठा में हो तो धनिको का और धन का विनाशक होता है ॥30॥

उत्तराणि च पूर्वाणि याम्यायां [2]दिशि हिंसति।
धातुवादविदो हन्यात्तज्ज्ञांश्च परिपीडयेत् ॥31॥

यदि बुध दक्षिण मार्ग में तीनो उत्तरा—उत्तरा फाल्गुनी, उत्तराषाढा और उत्तराभाद्रपद तथा तीनो पूर्वा—पूर्वा फाल्गुनी, पूर्वाषाढा और पूर्वाभाद्रपद का घात करे तो धातुवाद के ज्ञाताओ को पीडा होती है ॥31॥

ज्येष्ठायामनुपूर्वेण स्वातौ च यदि तिष्ठति।
बुधस्य चरितं घोरं [3]महादुःखमुच्यते ॥32॥

यदि ज्येष्ठा और स्वाति मे बुध रहे तो उसका यह घोर चरित अत्यन्त कष्ट देने वाला होता है ॥32॥

उत्तरे त्वनयोः सौम्यो यदा दृश्येत पृष्ठतः।
पितृदैवमनुप्राप्तस्तदा मासमुपग्रहः ॥33॥

1. मूकान्धबधिरांश्चैव मु०। 2. यदि मु०। 3 महाजनिक मु०।

अब सौम्य बुध उत्तर में इन दोनों नक्षत्रों में— ज्येष्ठा और स्वाति में पृष्ठतः —पीछे से दिखलाई पड़े तथा मघा को प्राप्त हो तो एक महीने के लिए उपग्रह अर्थात् कष्ट होता है ॥33॥

पुरस्तात् सह शुक्रेण यदि तिष्ठति सुप्रभः ।
बुधो [1]मध्यगतो चापि तदा मेघा बहूदकाः ॥34॥

सम्मुख शुक्र के साथ श्रेष्ठ कान्ति वाला बुध रहे तो उस समय अधिक जल की वर्षा होती है ॥34॥

दक्षिणेन तु पार्श्वेण यदा गच्छति कुप्रभः ।
तदा सृजति लोकस्य महाशोकं[2] महद्भयम् ॥35॥

यदि बुरी कान्ति वाला बुध दक्षिण की ओर से गमन करे तो लोक के लिए अत्यन्त भय और शोक उत्पन्न होता है ॥35॥

धनिष्ठायां जलं हन्ति वारुणे जलदं वधेत् ।
वर्णहीनो यदा याति बुधो दक्षिणतस्तदा ॥36॥

यदि वर्णहीन बुध दक्षिण की ओर से धनिष्ठा नक्षत्र मे गमन करे तो जल का विनाश और पूर्वाषाढा मे गमन करे तो मेघ को रोकता है ॥36॥

तनुः समार्गो यदि सुप्रभोऽजित. समप्रसन्नो गतिमागतोन्नतिम् ।
यदा न रूक्षो न च दूरगो बुधस्तदा प्रजानां सुखमूर्जितं सृजेत् ॥37॥

ह्रस्व, मार्गी, सुकान्ति वाला, समाकार, प्रसन्न गति को प्राप्त बुध जब न रूक्ष होता है और न दूर रहता है, उस समय प्रजा को सुख-शान्ति देता है ॥37॥

इति नैर्ग्रन्थे भद्रबाहुके निमित्ते बुधचारो नाम अष्टादशोऽध्यायः ॥18॥

विवेचन – बुध का उदय होने से अन्न का भाव महँगा होता है । जब बुध उदित होता है उस समय अतिवृष्टि, अग्नि प्रकोप एवं तूफान आदि आते हैं । श्रवण, धनिष्ठा, रोहिणी, मृगशिरा, उत्तराषाढ़ा नक्षत्र को मर्दित करके बुध के विचरण करने से रोग, भय, अनावृष्टि होती है । आर्द्रा से लेकर मघा तक जिस किसी नक्षत्र मे बुध रहता है, उसमें ही शस्त्रपात, भूख, भय, रोग, अनावृष्टि और सन्ताप से जनता को पीड़ित करता है । हस्त से लेकर ज्येष्ठा तक छः नक्षत्रो मे बुध विचरण करे तो मवेशी को कष्ट, सुभिक्ष, पूर्ण वर्षा, तेल और तिलहन का भाव महँगा

1. विसृजते काले मु० । 2 शोक महद्भयंकर मु० ।

होता है। बंगाल, आसाम, बिहार, बम्बई, सौराष्ट्र, महाराष्ट्र, मध्यप्रदेश, में सुभिक्ष, काश्मीर में अन्न कष्ट, राजस्थान में दुष्काल, वर्षा का अभाव एव राजनीतिक उथल-पुथल समस्त देश मे होती है। जापान में चावल की कमी हो जाती है। रूस और अमेरिका मे खाद्यान्न की प्रचुरता रहने पर भी अनेक प्रकार के कष्ट होते हैं। उत्तर फाल्गुनी, कृत्तिका, उत्तराभाद्रपद और भरणी नक्षत्र में बुध का उदय हो या बुध विचरण कर रहा हो तो प्राणियो को अनेक प्रकार की सुख-सुविधाओ की प्राप्ति के साथ, धान्य भाव सस्ता, उचित परिमाण में वर्षा, सुभिक्ष, व्यापारियो को लाभ, चोरो का अधिक उपद्रव एवं विदेशो के साथ सहानुभूति-पूर्ण सम्पर्क स्थापित होता है। पजाब, दिल्ली और राजस्थान राज्यो की सरकारों मे परिवर्तन भी उक्त बुध की स्थिति मे होता है। घी, गुड़, सुवर्ण, चाँदी तथा अन्य खनिज पदार्थों का मूल्य बढ़ जाता है। उत्तराभाद्रपद नक्षत्र में बुध का विचरण करना देश के सभी वर्गों और हिस्सो के लिए सुभिक्षप्रद होता है। द्विजो को अनेक प्रकार के लाभ और सम्मान प्राप्त होते हैं। निम्न श्रेणी के व्यक्तियों को भी अधिकार मिलते हैं तथा सारी जनता सुख-शान्ति के साथ निवास करती है। यदि बुध अश्विनी, शतभिषा, मूल और रेवती नक्षत्र का भेदन करे तो जल-जन्तु, जल से आजीविका करने वाले, वैद्य-डॉक्टर एवं जल से उत्पन्न पदार्थों मे नाना प्रकार के उपद्रव होते हैं। पूर्वाषाढा और पूर्वाभाद्रपद इन तीन नक्षत्रो मे मे किसी एक मे शुक्र विचरण करे तो संसार को अन्न की कमी होती है। रोग, तस्कर, शस्त्र, अग्नि आदि का भय और आतंक व्याप्त रहता है। विज्ञान नये-नये पदार्थों की शोध और खोज करता है, जिससे अनेक प्रकार की नयी बातों पर प्रकाश पडता है। पूर्वाषाढा नक्षत्र मे बुध का उदय होने से अनेक राष्ट्रों में संघर्ष होता है तथा वैमनस्य उत्पन्न हो जाने से अन्तर्राष्ट्रीय स्थिति परिवर्तित हो जाती है। उक्त नक्षत्र मे बुध का उदय और विचरण करना दोनो ही राजस्थान, मध्य-भारत और सौराष्ट्र के लिए हानिकारक है। इन प्रदेशो मे वृष्टि का अवरोध होता है। भाद्रपद और आश्विन मास मे साधारण वर्षा होती है। कार्तिक मास के आरम्भ मे गुजरात और बम्बई क्षेत्र मे वर्षा अच्छी होती है। राजस्थान के मन्त्रिमण्डल मे परिवर्तन भी उक्त ग्रह स्थिति के कारण होता है।

पराशर के मतानुसार बुध का फलादेश—पराशर ने बुध की सात प्रकार की गतियाँ बतलाई हैं—प्राकृत, विमिश्र, संक्षिप्त, तीक्ष्ण, योगान्त, घोर और पाप। स्वाति, भरणी, रोहिणी और कृत्तिका नक्षत्र में बुध स्थित हो तो इस गति को प्राकृत कहते हैं। बुध की यह गति 40 दिन तक रहती है, इसमे आरोग्य, वृष्टि, धान्य की वृद्धि और मंगल होता है। प्राकृत गति भारत के पूर्व प्रदेशों के लिए उत्तम होती है। इस गति में गमन करने पर बुध बुद्धिजीवियो के लिए उत्तम होता है। कला-कौशल की भी वृद्धि होती है। देश में नवीन कल-कारखाने

स्थापित किये जाते हैं। अनाज अच्छा उत्पन्न होता है, वर्षा भी अच्छी होती है। कलिंग—उडीसा, विदेह – मिथिला, काशी, विदर्भ देश के निवासियो को सभी प्रकार के लाभ होते हैं। मरुभूमि—राजस्थान मे सुभिक्ष रहता है, वर्षा भी अच्छी होती है। फसल उत्तम होने के साथ मवेशियो को कष्ट होता है। मथुरा और शूरसेन देशवासियो का आर्थिक विकास होता है। व्यापारी वर्ग को साधारण लाभ होता है। सोना और चाँदी के सट्टे मे हानि उठानी पडती है। जूट का भाव बहुत ऊँचा चढ़ जाता है, जिससे व्यापारियो को हानि होती है।

मृगशिरा, आर्द्रा, मघा और आश्लेषा नक्षत्र मे बुध के विचरण करने को मिश्रा गति कहते है। यह गति 30 दिनो तक रहती है। इस गति का फल मध्यम है। देश के सभी राज्यो और प्रदेशो मे सामान्य वर्षा, उत्तम फसल, रस पदार्थों की कमी, धातुओ के मूल्य मे वृद्धि एवं उच्च वर्ग के व्यक्तियो को सभी प्रकार से सुख प्राप्त होता है। बुध की मिश्रा गति मध्यप्रदेश एव आसपास के निवासियो के लिए अधिक शुभ होती है। उक्त राज्यो मे उत्तम वृष्टि होती है और फसल भी अच्छी ही होती है। पुष्य, पुनर्वसु, पूर्वा फाल्गुनी और उत्तरा फाल्गुनी नक्षत्र मे संक्षिप्त गति होती है। यह गति 22 दिनो तक रहती है। इस गति का फल भी मध्यम ही है पर विशेषता यह है कि इस गति के होने पर घी, तैल पदार्थों का भाव महँगा होता है। देश के दक्षिण भाग के निवासियो को साधारण कष्ट होता है। दक्षिण मे अन्न की फसल अच्छी होती है। उत्तर मे गुड, चीनी और अन्य मधुर पदार्थों की उत्पत्ति अच्छी होती है। कोयला, लोहा, अभ्रक, ताँबा, सीसा भूमि से अधिक निकलता है। देश का आर्थिक विकास होता है। जिस दिन से बुध उक्त गति आरम्भ करता है, उसी दिन से लेकर जिस दिन यह गति समाप्त होती है, उस दिन तक देश मे सुभिक्ष रहता है। देश के सभी राज्यो मे अन्न और वस्त्र की कमी नही होती। आसाम मे बाढ आ जाने से फसल नष्ट होती है। बिहार के वे प्रदेश भी कष्ट उठाते हैं, जो नदियो के तटवर्ती है। उत्तर प्रदेश मे सब प्रकार से शान्ति व्याप्त रहती है। पूर्वा भाद्रपद, उत्तरा भाद्रपद, ज्येष्ठा, अश्विनी और रेवती नक्षत्र मे बुध की गति तीक्ष्ण कहलाती है। यह गति 18 दिन की होती है। इस गति के होने से वर्षा का अभाव, दुष्काल, महामारी, अग्निप्रकोप और शस्त्रप्रकोप होता है। मूल, पूर्वाषाढा और उत्तराषाढा नक्षत्र मे बुध के विचरण करने से बुध की योगान्तिका गति कहलाती है। यह गति 9 दिन तक रहती है। इस गति का फल अत्यन्त अनिष्टकर है। देश मे रोग, शोक, झगडे आदि के साथ वर्षा का भी अभाव रहता है। श्रावण मास मे साधारण वर्षा होती है, इसके पश्चात् अन्य महीनो मे वर्षा नही होती है। जब तक बुध इस गति मे रहता है, तब तक अधिक लोगो की मृत्यु होती है। आकस्मिक दुर्घटनाएँ अधिक घटती हैं। श्रवण, चित्रा, धनिष्ठा और शतभिषा नक्षत्र मे शुक्र के रहने से उसकी

घोर गति कहलाती है। यह गति 15 दिन तक रहती है। जब बुध इस गति में गमन करता है, उस समय देश मे अत्याचार, अनीति, चोरी आदि का व्यापक रूप से प्रचार होता है। उत्तर प्रदेश, पंजाब, बगाल और दिल्ली राज्य के लिए यह गति अत्यधिक अनिष्ट करने वाली है। बुध के इस गति मे विचरण करने से आर्थिक क्षति, किसी बडे नेता की मृत्यु, देश मे अर्थ-सकट, अन्नाभाव आदि फल घटित होते है। हस्त, अनुराधा या ज्येष्ठा नक्षत्र मे बुध के विचरण करने से पापा गति होती है। इस गति के दिनो की सख्या 11 है। इस गति में बुध के रहने से अनेक प्रकार की हानियाँ उठानी पडती हैं। देश मे राजनीतिक उलट-फेर होते हैं। बिहार, आसाम और मध्यप्रदेश के मन्त्रिमण्डल मे परिवर्तन होता है।

देवल के मत से फलादेश—देवल ने बुध की चार गतियाँ बतलाई हैं—ऋज्वी, वक्रा, अतिवक्रा और विकला। ये गतियाँ क्रमश· 30, 24, 12 और 6 दिन तक रहती हैं। ऋज्वी गति प्रजा के लिए हितकारी, वक्रा मे शस्त्रभय, अतिवक्रा मे धन का नाश, और विकला मे भय तथा रोग होते हैं। पौष, आषाढ़, श्रावण, वैशाख और माघ मे बुध दिखलाई दे तो संसार को भय, अनेक प्रकार के उत्पात एव धन-जन की हानि होती है। यदि उक्त मासो मे बुध अस्त हो तो शुभ होता है। आश्विन या कार्तिक मास मे बुध दिखलाई दे तो शस्त्र, रोग, अग्नि, जल और क्षुधा का भय होता है। पश्चिम दिशा मे बुध का उदय अधिक शुभ फल करता है तथा पूरे देश को शुभकारक होता है। स्वर्ण, हरित या सस्यक मणि के समान रग वाला बुध निर्मल और स्वच्छ होकर उदित होता है, तो सभी राज्यो और देशो के लिए मंगल करने वाला होता है।

एकोनविंशतितमोऽध्यायः

चारं प्रवासं वर्णं च दीप्तिं [1]काष्ठांगतिं फलम्।
वक्रानुवक्रनामानि लोहितस्य निबोधत ॥1॥

मगल के चार, प्रवास, वर्ण, दीप्ति, काष्ठ, गति, फल, वक्र और अनुवक्र आदि का विवेचन किया जाता है ॥1॥

---

1 काष्ठ गति मु०।

चारेण विंशतिं मासानष्टौ वक्रेण लोहितः।
चतुरस्तु प्रवासेन समाचारेण गच्छति ॥2॥

मंगल का चार बीस महीने, वक्र आठ महीने और प्रवास चार महीने का होता है ॥2॥

अनृजुः परुषः श्यामो ज्वलितो धूमवान् शिखी।
विवर्णो वामगो व्यस्तः क्रुद्धो ज्ञेयस्[1]तदाऽशुभः ॥3॥

वक्र, कठोर, श्याम, ज्वलित, धूमवान, विवर्ण, क्रुद्ध और बायी ओर गमन करने वाला मंगल (सदा) अशुभ होता है ॥3॥

यदाऽष्टौ सप्त मासान् वा दीप्तः पुष्ट. प्रजापतिः।
तदा सृजति कल्याणं शस्त्रमूर्च्छां तु निर्दिशेत् ॥4॥

यदि प्रजापति—मंगल आठ या सात महीने तक दीप्त और पुष्ट होकर निवास करे तो कल्याण होता है तथा शस्त्रमोह उत्पन्न होता है ॥4॥

मन्ददीप्तश्च दृश्येत् यदा भौमो चलेत्तदा।
तदा नानाविधं दुःख प्रजानामहित सृजेत् ॥5॥

जब मंगल मन्द और दीप्त दिखलाई पड़े, चचल हो, उस समय प्रजा के लिए नाना प्रकार के दुःख और अहित करता है ॥5॥

ताम्रो दक्षिणकाष्ठस्थः प्रशस्तो दस्युनाशनः।
ताम्रो यदोत्तरे काष्ठे तस्य दस्योस्तदा हितम् ॥6॥

यदि ताम्र वर्ण का मगल दक्षिण दिशा मे हो तो शुभ होता है, और चोरो का नाश करनेवाला होता है। यदि ताम्र वर्ण का मगल उत्तर दिशा मे हो तो चोरो का हित करनेवाले होता है ॥6॥

रोहिणीं स्यात् परिक्रम्य लोहितो दक्षिणं व्रजेत्।
सुरासुराणां [3]जानानां सर्वेषामभयं वदेत् ॥7॥

यदि रोहिणी की परिक्रमा करके मगल दक्षिण दिशा की ओर चला जाय तो देव-दानव, मनुष्य सभी को अभय की प्राप्ति होती है ॥7॥

क्षत्रियाणां विवादश्च दस्यूनां शस्त्रविभ्रमः।
गावो गोष्ठ-समुद्राश्च विनश्यन्ति विचेतसः ॥8॥

---

1. सदा मु०। 2 न तेजवान् मु०। 3 मार्गाणा मु०।

यदि रोहिणी नक्षत्र पर मगल की कुचेष्टा दिखलाई पड़े तो गाय, गोशाला और समुद्र का विनाश होता है ॥8॥

स्पृशेल्लिखेत् प्रमर्दद् वा रोहिणीं यदि लोहितः।
तिष्ठते दक्षिणो वाऽपि तदा शोक-भयंकर. ॥9॥

यदि मगल रोहिणी नक्षत्र का स्पर्श करे, भेदन करे और प्रमर्दन करे अथवा दक्षिण में निवास करे तो भयकर शोक की प्राप्ति होती है ॥9॥

सर्वद्वाराणि दृष्ट्वाऽसौ विलम्बं यदि गच्छति।
[1]सर्वलोकहितो ज्ञेयो दक्षिणोऽसृग् लोहितः ॥10॥

यदि दक्षिण मगल सभी द्वारो को देखता हुआ विलम्ब से गमन करे तो समस्त लोक का हितकारी होता है ॥10॥

पञ्च वक्राणि भौमस्य तानि भेदेन द्वादश।
उष्णं शोषमुखं व्यालं लोहित लोहमुद्गरम् ॥11॥

मगल के पाँच वक्र होते है और भेद की अपेक्षा बारह वक्र कहे गये है। उष्ण, शोषमुख, व्याल, लोहित और लोहमुद्गर-- ये पाँच प्रधान वक्र हैं ॥11॥

उदयात् सप्तमे ऋक्षे नवमे वाऽष्टमेऽपि वा।
यदा भौमो निवर्तेत तदुष्णं वक्रमुच्यते ॥12॥

जब मगल का उदय सातवें, आठवें या नवें नक्षत्र पर हुआ हो और वह लौट कर गमन करने लगे तो उसे उष्ण वक्र कहते है ॥12॥

सुवृष्टिः प्रबला ज्ञेया विष-कीटाग्निमूर्च्छनम्।
ज्वरो जनक्षयो वाऽपि तज्जातानां च विनाशनम् ॥13॥

इस उष्ण वक्र मे वर्षा अच्छी होती है। विष, कीट और अग्नि की वृद्धि होती है। ज्वर फैलता है। जनक्षय भी होता है तथा जनता को कष्ट होता है ॥13॥

एकादशे यदा भौमो द्वादशे दशमेऽपि वा।
निवर्तेत तदा वक्र तच्छोषमुखमुच्यते ॥14॥

अधोऽन्तरिक्षात् पतितं दूषयति तदा रसान्।
ते सृजन्ति रसान् दुष्टान् नानाव्याधींस्तु भूतजान् ॥15॥

---

1. स च मु०।

शुष्यन्ति वै तडागानि सरांसि सरितस्तथा।
बीजं न रोहिते तत्र जलमध्येऽपि वापितम् ॥16॥

जब मंगल दशवें, ग्यारहवें और बारहवें नक्षत्र से लौटता है तो यह शोष-मुख वक्र कहलाता है। इस प्रकार के वक्र मे आकाश से जल की वर्षा होती है, रस दूषित हो जाते है तथा रसो के दूषित होने से प्राणियो को नाना प्रकार की व्याधियाँ उत्पन्न होती हैं। जल-वृष्टि भी उक्त प्रकार के वक्र मे उत्तम नही होती है, जिससे तालाब सूख जाते हैं तथा जल मे भी बोने पर बीज नही उगते हैं, अर्थात् फसल की कमी रहती है ॥14-16॥

त्रयोदशेऽपि नक्षत्रे यदि वाऽपि चतुर्दशे।
निवर्तेत यदा भौमस्तद् वक्रं व्यालमुच्यते ॥17॥

पतंगाः सविषाः कीटाः सर्पा जायन्ति तामसा।
फलं न बध्यते पुष्पे बीजमुप्तं न रोहति ॥18॥

यदि मगल चौदहवे अथवा तेरहवें नक्षत्र से लौट आये तो यह उसका व्याल-वक्र कहलाता है। पतग—टीड़ी, विषैले जन्तु, कीट, सर्प आदि तामस प्रकृति के जन्तु उत्पन्न होते हैं, पुष्प मे फल नही लगता और बोया गया बीज अकुरित नही होता है ॥17-18॥

यदा पञ्चदशे ऋक्षे षोडशे वा निवर्तते।
लोहितो लोहितं वक्रं कुरुते गुणज तदा ॥19॥

देश-स्नेहाम्भसां लोपो राज्यभेदश्च जायते।
संग्रामाश्चात्र वर्तन्ते मांस-शोणित-कर्दमाः ॥20॥

जब मंगल पन्द्रहवें या सोलहवे नक्षत्र से लौटता है, तब यह लोहित वक्र कहा जाता है। यह गुण उत्पन्न करने वाला है। इस वक्र के फलस्वरूप देश, स्नेह, जल का लोप हो जाता है, राज्य मे मतभेद उत्पन्न हो जाता है तथा युद्ध होते हैं, जिससे रक्त और मास की कीचड हो जाती है ॥19-20॥

यदा सप्तदशे ऋक्षे पुनरष्टादशेऽपि वा।
प्रजापतेर्निवर्तेत तद् वक्रं लोहमुद्गरम् ॥21॥

निर्दया निरनुक्रोशा लोहमुद्गरसन्निभा.।
प्रणयन्ति नृपा दण्डं क्षीयन्ते येन तत्प्रजाः ॥22॥

जब मगल सत्रहवें या अठारहवें नक्षत्र मे लौटता है तो लोहमुद्गर वक्र कहलाता है। इस प्रकार के वक्र मे जीवधारियो की प्रवृत्ति निर्दय और निरकुश

हो जाती है तथा राजा लोग प्रजा को दण्डित करते हैं, जिससे प्रजा का क्षय होता है ॥21-22॥

धर्मार्थकामा हीयन्ते विलीयन्ते च दस्यवः ।
तोय-धान्यानि शुष्यन्ति रोगमारी बलीयसी ॥23॥

उक्त प्रकार के वक्र मे धर्म, अर्थ और काम नष्ट हो जाते हैं और चोरो का लोप हो जाता है। जल और धान्य सूख जाते हैं तथा रोग और महामारी बढती है ॥23॥

वक्रं कृत्वा यदा भौमो विलम्बेन गतिं प्रति ।
वक्रानुवक्रघोर्घोरं मरणाय समीहते[1] ॥24॥

यदि मगल वक्र गति को प्राप्त कर विलम्बित गति हो तो यह वक्रानुवक्र कहलाता है। वक्र और अनुवक्र का फल मरणप्रद होता है ॥24॥

कृत्तिकादीनि सप्तेह वक्रेणांगाकश्चरेत् ।
हत्वा वा दक्षिणस्तिष्ठेत् तत्र वक्ष्यामि यत् फलम् ॥25॥

यदि मगल वक्र गति द्वारा कृत्तिकादि सात नक्षत्रो पर गमन करे अथवा घात कर दक्षिण की ओर स्थित रहे तो उसका फल निम्न प्रकार होता है ॥25॥

साल्वांश्च सारदण्डांश्च विप्रान् क्षत्रांश्च पीडयेत् ।
मेखलांश्चानयोर्घोरं [2]मरणाय समीहते ॥26॥

उक्त प्रकार का मगल साल्वदेश, सारदण्ड, ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य इन तीनो वर्णों को निस्सन्देह घोर कष्ट देता है ॥26॥

मघादीनि च सप्तैव यदा वक्रेण लोहितः ।
चरेद् विवर्णस्तिष्ठेद् वा तदा विन्द्यान्महद्भयम् ॥27॥

यदि मघादि सात नक्षत्रो मे वक्र मगल विचरण करे अथवा विकृत वर्ण होकर निवास करे तो महान् भय होता है ॥27॥

सौराष्ट्र-सिन्धु-सौवीरान् प्रासीलान् द्राविडांगनाम् ।
पाञ्चालान् सौरसेनान् वा बाह्लीकान् नकुलान् वधेत् ॥28॥

मेखलान् वाऽप्यवन्त्यांश्च पार्वतांश्च नृपैः सह ।
जिघांसति तदा भौमो ब्रह्म-क्षत्र विरोधयेत् ॥29॥

1 समीहति मु० । 2 तदा प्राप्नोत्यसशयम् मु० ।

उक्त प्रकार के मंगल के फलस्वरूप सौराष्ट्र, सिन्धु, सौवीर, द्राविड, पांचाल, सौरसेन, बाह्लीक, नकुल, मेखला, आवन्ति, पहाडीप्रदेशवासियों और राजाओं का विनाश होता है और ब्राह्मण-क्षत्रियों का विरोध होता है ।।28-29।।

मैत्रादीनि च सप्तैव यदा सेवेत लोहितः ।
वक्रेण [1]पापगत्या वा महतामनयं वदेत् ।।30।।
राजानश्च विरुध्यन्ते [2]चातुर्विश्यो विलुप्यते ।
कुरु-पाञ्चालदेशानां [3]मूर्च्छते तद् भयानि च ।।31।।

यदि मगल अनुराधा आदि सात नक्षत्रो का भोग करे अथवा वक्रगति हो पापगति से विचरण करे तो अत्यन्त अनीति होती है। राजाओ मे युद्ध होता है, चारों वर्ण लुप्त हो जाते हैं, कुरु-पचाल देशो मे भय और मूर्च्छा रहती है ।।30-31।।

धनिष्ठादीनि सप्तैव यदा वक्रेण लोहितः ।
सेवेत [4]ऋजुगत्या वा तदाऽपि स जुगुप्सित ।।32।।
धनिनो जलविप्रांश्च[5] तथा चैव हयान् गजान् ।
उदीच्यान् नाविकांश्चापि पीडयेल्लोहितस्तदा ।।33।।

यदि मंगल वक्र गति से धनिष्ठा आदि सात नक्षत्रो का भोग करे अथवा ऋजुगति से गमन करे तो वह निन्दित होता है। धनिक, जलजन्तु, घोडा, हाथी, उत्तर के निवासी और नाविको को पीड़ा देता है ।।32-33।।

भौमो वक्रेण युद्धे [6]वामवीथीं चरते हि [7]त ।
तेषां भयं विजानीयाद् येषां ते प्रतिपुद्गलाः ।।34।।

जब मंगल वक्र होकर युद्ध मे वाम वीथि मे गमन करता है तो जनता के लिए भय होता है ।।34।।

क्रूरः क्रुद्धश्च ब्रह्मघ्नो यदि तिष्ठेद् ग्रहैः सह ।
परचक्रागमं विन्द्यात् तासु नक्षत्रवीथिषु ।।35।।
धान्यं तथा न विक्रेयं संश्रयेच्च बलीयसम् ।
चिनुयात्तुषधान्यानि दुर्गाणि च समाश्रयेत् ।।36।।

क्रूर, क्रुद्ध और ब्रह्मघाती होकर मगल यदि अन्य ग्रहो के साथ उन नक्षत्र

---

1 वाऽपगत्या मु० । 2 चातुर्वर्णो मु० । 3 मूर्च्छति च मु० । 4. ऋजुगत्या मु० । 5 -जीवांश्च मु० । 6 वा या मु० । 7 स मु० ।

वीथियों में रहे तो परशासन का आगमन होता है। इस प्रकार की स्थिति में धान्य-अनाज नहीं बेचना चाहिए, बलवान् का आश्रय लेना तथा धान्य और भूसा का संग्रह करके दुर्ग का आश्रय लेना चाहिए ॥35-36॥

उत्तराफाल्गुनीं भौमो यदा लिखति वामतः।
यदि वा दक्षिणं गच्छेत् धान्यस्यार्घो महा भवेत् ॥37॥

जब मगल उत्तरा फाल्गुनी नक्षत्र को वाम भाग से स्पर्श करता है अथवा दक्षिण की ओर गमन करता है तो धान्य—अनाज बहुत महँगा होता है ॥37॥

यदाऽनुराधां प्रविशेन्मध्ये न च लिखेत्तथा।
मध्यम तं विजानीयात् तदा भौमविपर्यये ॥38॥

यदि मगल अनुराधा में मध्य से प्रवेश करे, स्पर्श न करे तो मध्यम होता है और विपर्यय प्रवेश करने पर विपरीत फल होता है ॥38॥

स्थूलः सुवर्णो द्युतिमांश्च पीतो रक्तः [1]सुमार्गो रिपुनाशनाय।
[2]भौमः प्रसन्न सुमनः प्रशस्तो भवेत् प्रजानां सुखदस्तदानीम् ॥39॥

स्थूल, सुवर्ण, कान्तिमान्, सुकर, पीत, रक्त, सुमार्गगामी, कान्त, प्रसन्न, समगामी, विलम्बी मगल प्रजा को सुख-शान्ति और धन-धान्य देने वाला है ॥39॥

इति निर्ग्रन्थभद्रबाहु के निमित्ते अंगारकचारो नाम
एकोनविंशतितमोऽध्यायः ॥19॥

विवेचन—भौम का द्वादश राशियों में स्थित होने का फल—मेष राशि मे मगल स्थित हो तो सभी प्रकार के अनाज महँगे होते है। वर्षा अल्प होती है तथा धान्य की उत्पत्ति भी अल्प होती है। पूर्वीय प्रदेशो मे वर्षा साधारणतया अच्छी होती है, उत्तरीय प्रदेशो मे खण्डवृष्टि, पश्चिमीय प्रदेशो मे वर्षा का अभाव या अत्यल्प तथा दक्षिणीय प्रदेशो मे साधारण वृष्टि होती है। मेष राशि का मगल जनता मे भय और आतक भी उत्पन्न करता है। वृष राशि मे मगल के स्थित होने से साधारण वृष्टि देश के सभी भागो मे होती है। चना, चीनी और गुड़ का भाव कुछ महँगा होता है। महामारी के कारण मनुष्यो की मृत्यु होती है। बगाल के लिए मगल की उक्त स्थिति अधिक भयावह होती है। मगल की उक्त स्थिति बर्मा, श्याम, चीन और जापान के लिए राजनीतिक दृष्टि से उथल-पुथल करने

1. सुमार्गश्च सुखी प्रजानाम् मु०। 2. कान्त प्रसन्न समगो विलम्बी भौम प्रशस्त सुखद. प्रजानाम् मु०।

वाली होती है । नेताओ मे मतभेद, फूट और कलह रहने से जनसाधारण को भी कष्ट होता है । बाग्लादेश के लिए वृष का मगल अनिष्टप्रद होता है। खाद्यान्न का अभाव होने के साथ भयकर बीमारियाँ भी उत्पन्न होती है । मिथुन राशि मे मगल के स्थित होने से अच्छी वर्षा होती है । देश के सभी राज्यो और प्रदेशो मे सुभिक्ष, शान्ति, धर्माचरण, न्याय, नीति और सच्चाई का प्रसार होता है । अहिंसा और सत्य का व्यवहार बढने से देश मे शान्ति बढ़ती है । सभी प्रकार के अनाज समर्घ रहते है । सोना, चाँदी, लोहा, ताँबा, काँसा, पीतल आदि खनिज धातुओ के व्यापार मे साधारण लाभ होता है । पजाब मे फसल बहुत अच्छी उपजती है । फल और तरकारियाँ भी अच्छी उपजती है । कर्क राशि मे मगल हो तो भी सुभिक्ष और उत्तम वर्षा होती है । उत्तर प्रदेश मे काशी, कन्नौज, मथुरा मे उत्तम फसल नही होती है, अवशेष स्थानो मे उत्तम फसल उपजती है । सिंह राशि मे मगल के रहने से सभी प्रकार के धान्य महँगे होते है । वर्षा भी अच्छी नही होती । राजस्थान, गुजरात, मध्यभारत मे साधारण वर्षा होती है । भाद्रपद मास मे वर्षा का योग अत्यल्प रहता है । आश्विन मास वर्षा और फसल के लिए उत्तम माने जाते हैं । सिंह राशि के मगल मे क्रूर कार्य अधिक होते है, युद्ध और सघर्ष अधिक होते है । राजनीति मे परिवर्तन होता है। साधारण जनता को भी कष्ट होता है । आजीविका साधनो मे कमी आ जाती है । कन्या राशि के मगल मे खण्डवृष्टि, धान्य सस्ते, थोडी वर्षा, देश मे उपद्रव, क्रूर कार्यों मे प्रवृत्ति, अनीति और अत्याचार का व्यापक रूप से प्रचार होता है । बगाल और पजाब मे नाना प्रकार के उपद्रव होते है । महामारी का प्रकोप आसाम और बगाल मे होता है । उत्तरप्रदेश और मध्यप्रदेश के लिए कन्या राशि का मगल अच्छा होता है । तुला राशि के मगल मे किसी बड़े नेता या व्यक्ति की मृत्यु, अस्त्र-शस्त्र की वृद्धि, मार्ग मे भय, चोरो का विशेष उपद्रव, अराजकता, धान्य का भाव महँगा, रसो का भाव सस्ता और सोना-चाँदी का भाव कुछ महँगा होता है । व्यापारियो को हानि उठानी पडती है । वृश्चिक राशि के मगल मे साधारण वर्षा, मध्यम फसल, देश का आर्थिक विकास, ग्रामो मे अनेक प्रकार की बीमारियो का प्रकोप, पहाडी प्रदेशो मे दुष्काल, नदी के तट-वर्ती प्रदेशो मे सुभिक्ष, नेताओ मे सघटन की भावना, विदेशो से व्यापारिक सम्बन्ध का विकास, राजनीति मे उथल-पुथल एव पूर्वीय देशो मे महामारी फैलती है । धनु राशि के मगल मे समयानुकूल यथेष्ट वर्षा, सुभिक्ष, अनाज का भाव सस्ता, दुग्ध-घी आदि पदार्थों की कमी, चीनी-गुड आदि मिष्ट पदर्थो की बहुलता एव दक्षिण के प्रदेशो मे उत्पात होता है । मकर राशि के मगल मे धान्य पीडा, फसल मे अनेक रोगो की उत्पत्ति, मवेशी को कष्ट, चारे का अभाव, व्यापारियो को अल्प लाभ, पश्चिम के व्यापारियो को हानि, गेहूँ, गुड और मशाले के मूल्य

मे दुगुनी वृद्धि एव उत्तर भारत के निवासियो को आर्थिक सकट का सामना करना पडता है। कुम्भ के मगल मे खण्डवृष्टि, मध्यम फसल, खनिज पदार्थों की उत्पत्ति अत्यल्प, देश का आर्थिक विकास, धार्मिक वातावरण की वृद्धि, जनता में सन्तोष और शान्ति रहती है। मीन राशि के मगल मे एक महीने तक समस्त भारत मे सुख-शान्ति रहती है। जापान के लिए मीन राशि का मगल अनिष्टप्रद है, वहाँ मन्त्रिमण्डल मे परिवर्तन, नागरिको मे सन्तोष, खाद्यान्नो की कमी एव अर्थ-संकट भी उपस्थित होता है। जर्मन के लिए मीन राशि का मगल शुभ होता है। रूस और अमेरिका मे परस्पर महानुभाव इसी मंगल मे होता है। मीन राशि का मगल धान्यो की उत्पत्ति के लिए उत्तम होता है। खनिज पदार्थों की कमी इसी मगल मे होती है। कोयला का भाव ऊँचा उठ जाता है। पत्थर, सीमेण्ट, चूना आदि के मूल्य मे भी वृद्धि होती है। मीन राशि का मगल जनता के स्वास्थ्य के लिए उत्तम नही होता।

नक्षत्रों के अनुसार मगल का फल—अश्विनी नक्षत्र मे मगल हो तो क्षति, पीडा, तृण और अनाज का भाव तेज होता है। समस्त भारत मे एक महीने के लिए अशान्ति उत्पन्न हो जाती है। चौपायो मे रोग उत्पन्न होता है। देश मे हलचल होती रहती है। सभी लोगो को किसी-न-किसी प्रकार का कष्ट होता है। भरणी नक्षत्र मे मगल हो तो ब्राह्मणो को पीडा, गावो मे अनेक प्रकार के कष्ट, नगरो मे महामारी का प्रकोप, अन्न का भाव तेज और रस पदार्थों का भाव सस्ता होता है। मवेशी के मूल्य मे वृद्धि हो जाती है तथा चारे के अभाव मे मवेशी को कष्ट भी होता है। कृत्तिका नक्षत्र मे मगल के होने से तपस्वियो को पीड़ा, देश मे उपद्रव, अराजकता, चोरियो की वृद्धि, अनैतिकता एव भ्रष्टाचार का प्रसार होता है। रोहिणी नक्षत्र मे मगल के रहने से वृक्ष और मवेशी को कष्ट, कपास और सूत के व्यापार मे लाभ, धान्य का भाव सस्ता होता है। मृगशिर नक्षत्र मे मगल हो तो कपास का नाश, शेष वस्तुओ की अच्छी उत्पत्ति होती है। इस नक्षत्र पर मगल के रहने से देश का आर्थिक विकास होता है। उन्नति के लिए किये गये सभी प्रयास सफल होते है। तिल, तिलहन की कमी रहती है तथा भैसो के लिए यह मगल विनाशकारक है। आर्द्रा नक्षत्र मे मगल के रहने से जल की वर्षा, सुभिक्ष और धान्य का भाव सस्ता होता है। पुनर्वसु नक्षत्र मे मंगल का रहना देश के लिए मध्यम फलदायक है। बुद्धिजीवियो के लिए यह मगल उत्तम होता है। शारीरिक श्रम करनेवालो को मध्यम रहता है। सेना मे प्रविष्ट हुए व्यक्तियो के लिए अनिष्टकर होता है। पुष्य नक्षत्र मे स्थित मंगल से चोरभय, शस्त्रभय, अग्नि-भय, राज्य को शक्ति का ह्रास, रोगो का विकास, धान्य का अभाव, मधुर पदार्थों की कमी एव चोर-गुण्डो का उत्पात अधिक होने लगता है। आश्लेषा नक्षत्र मे मगल के स्थित रहने से शस्त्रघात, धान्य का नाश, वर्षा का अभाव, विषैले जन्तुओ का

प्रकोप, नाना प्रकार की व्याधियो का विकास एवं हर तरह से जनता को कष्ट होता है। मघा मे मंगल के रहने से तिल, उड़द, मूँग का विनाश, मवेशी को कष्ट, जनता में असन्तोष, रोग की वृद्धि, वर्षा की कमी, मोटे अनाजों की अच्छी उत्पत्ति तथा देश के पूर्वीय प्रदेशो में सुभिक्ष होता है। पूर्वाफाल्गुनी और उत्तराफाल्गुनी नक्षत्रों में मंगल के रहने से खण्डवृष्टि, प्रजा को पीडा, तेल, घी के मूल्यो मे वृद्धि, थोड़ा जल एवं मवेशी के लिए कष्टप्रद होता है। हस्त नक्षत्र मे तृणाभाव होने से चारे की कमी बराबर बनी रह जाती है, जिससे मवेशी को कष्ट होता है। चित्रा में मगल हो तो रोग और पीड़ा, गेहूँ का भाव तेज; चना, जौ और ज्वार का भाव कुछ सस्ता होता है। धर्मात्मा व्यक्तियो को सम्मान और शक्ति की प्राप्ति होती है। विश्व मे नाना प्रकार के सकट बढते हैं। स्वाति नक्षत्र मे मंगल के रहने से अनावृष्टि, विशाखा मे कपास और गेहूँ की उत्पत्ति कम तथा इन वस्तुओ का भाव महँगा होता है। अनुराधा मे सुभिक्ष और पशुओ को पीड़ा, ज्येष्ठा मे मंगल हो तो थोडा जल और रोगो की वृद्धि, मूल नक्षत्र मे मगल हो तो ब्राह्मण और क्षत्रियो को पीड़ा, तृण और धान्य का भाव तेज, पूर्वाषाढा या उत्तराषाढा मे मगल हो तो अच्छी वर्षा, पृथ्वी धन-धान्य से परिपूर्ण, दूध की वृद्धि, मधुर पदार्थों की उन्नति; श्रवण मे धान्य की साधारण उत्पत्ति, जल की वर्षा, उडद, मूँग आदि दाल वाले अनाजो की कमी तथा इनके भाव मे तेजी, धनिष्ठा मे मगल के होने से देश की खूब समृद्धि, सभी पदार्थों का भाव सस्ता, देश का आर्थिक विकास, धन-जन की वृद्धि, पूर्व और पश्चिम के सभी राज्यो मे सुभिक्ष, उत्तर के राज्यो मे एक महीने के लिए अर्थसकट, दक्षिण मे सुख-शान्ति, कला-कौशल का विकास, मवेशियो की वृद्धि और सभी प्रकार से जनता को सुख, शतभिषा में, मंगल के होने से कीट, पतग, टीडी, मूषक आदि का अधिक प्रकोप, धान्य की अच्छी उत्पत्ति, पूर्वाभाद्रपद मे मगल के होने से तिल, वस्त्र, सुपारी और नारियल के भाव तेज होते है। दक्षिण भारत मे अनाज का भाव महँगा होता है। उत्तराभाद्रपद मे मगल के होने से सुभिक्ष, वर्षा की कमी और नाना प्रकार के देशवासियो को कष्ट एवं रेवती नक्षत्र मे मंगल के होने से धान्य की अच्छी उत्पत्ति, सुख, सुभिक्ष, यथेष्ट वर्षा, ऊन और कपास की अच्छी उपज होती है। रेवती नक्षत्र का मगल काश्मीर, हिमाचल एव अन्य पहाडी प्रदेशो के निवासियो के लिए उत्तम होता है।

मंगल का किसी भी राशि पर वक्री होना तथा शनि और मंगल का एक ही राशि पर वक्री होना अत्यन्त अशुभकारक होता है। जिस राशि पर उक्त ग्रह वक्री होते हैं उस राशि वाले पदार्थों का भाव महँगा होता है तथा उन वस्तुओ की कमी भी हो जाती है।

विंशतितमोऽध्यायः

राहुचारं प्रवक्ष्यामि क्षेमाय च सुखाय च।
द्वादशाङ्गविद्भिः प्रोक्तं निर्ग्रन्थैस्तत्त्ववेदिभिः ॥1॥

द्वादशांग के वेत्ता निर्ग्रन्थ मुनियों के द्वारा प्रतिपादित राहुचार को कल्याण और सुख के लिए निरूपण करता हूँ ॥1॥

श्वेतो रक्तश्च पीतश्च विवर्णः कृष्ण एव च।
ब्राह्मण-क्षत्र-वैश्यानां विजाति-शूद्रयोर्मतः ॥2॥

राहु का श्वेत, रक्त, पीत और कृष्ण वर्ण क्रमशः ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्रों के लिए शुभाशुभ निमित्तक माने गये हैं ॥2॥

षण्मासान् प्रकृतिर्ज्ञेया ग्रहणं वार्षिकं भयम्।
त्रयोदशानां मासानां पुररोधं समादिशेत् ॥3॥

चतुर्दशानां मासानां विन्द्याद् वाहनजं भयम्।
अथ पञ्चदशे मासे बालानां भयमादिशेत् ॥4॥

षोडशानां तु मासानां महामन्त्रिभयं वदेत्।
अष्टादशानां मासानां विन्द्याद् राज्ञस्ततो भयम् ॥5॥

एकोनविंशकं पर्वविंशं कृत्वा नृपं वधेत्।
अतः परं च यत् सर्वं विन्द्यात् तत्र कलिं भुवि ॥6॥

राहु की प्रकृति छ महीने तक, ग्रहण एक वर्ष तक भय उत्पन्न करता है। विकृत ग्रहण से तेरह महीने तक नगर का अवरोध होता है, चौदह महीने तक वाहन का भय और पन्द्रह महीने तक स्त्रियों को भय होता है। सोलह महीने तक महा-मन्त्रियों को भय, अठारह महीने तक राजाओं को भय होता है। उन्नीस महीने या बीस महीने तक राजाओं के वध की संभावना रहती है। इससे अधिक समय तक फल प्राप्त हो तो पृथ्वी पर कलियुग का ही प्रभाव जानना चाहिए ॥3-6॥

पञ्चसंवत्सरं घोरं चन्द्रस्य ग्रहणं परम्।
विग्रहं तु परं विन्द्यात् सूर्यद्वादशवार्षिकम् ॥7॥

चन्द्रग्रहण के पश्चात् पाँच वर्ष संकट के और सूर्यग्रहण के बाद बारह वर्ष सकट के होते हैं ॥7॥

यदा प्रतिपदि चन्द्रः प्रकृत्या विकृतो भवेत्।
अथ भिन्नो विवर्णो वा तदा ज्ञेयो ग्रहागमः ॥8॥

जब प्रतिपदा तिथि को चन्द्रमा प्रकृति से विकृत हो और भिन्न वर्ण का हो तो ग्रहागम जानना चाहिए ॥8॥

लिखेद् रश्मिभिर्भूयो वा यदाऽऽच्छाद्येत भास्करः।
पूर्वकाले च सन्ध्यायां ज्ञेयो राहोस्तदाऽऽगमः ॥9॥

यदि सूर्य किरणो के द्वारा स्पर्श करे अथवा पूर्वकाल की सन्ध्या मे सूर्य के द्वारा आच्छादन हो तो राहु का आगम समझना चाहिए ॥9॥

पशु-व्याल-पिशाचानां सर्वतोऽपरदक्षिणम्।
तुल्यान्यभ्राणि वातोल्के यदा राहोस्तदाऽऽगमः ॥10॥

राहु के आगमन होने पर पशु, सर्प, पिशाच आदि दक्षिण से चारो ओर दिखलाई पडते है तथा समान मेघ, वायु और उल्कापात भी होता है ॥10॥

सन्ध्यायां तु यदा शीत अपरेसासनं ततः।
सूर्यः पाण्डुश्चला भूमिस्तदा ज्ञेयो ग्रहागमः ॥11॥

जब सन्ध्या मे शीत हो, अन्य समय मे उष्णता हो, सूर्य पाण्डुवर्ण हो, भूमि चल हो तो ग्रहागम समझना चाहिए ॥11॥

सरांसि सरितो वृक्षा वल्ल्यो गुल्म लतावनम्।
[1]सौम्यभ्रांश्चवले वृक्षा राहोर्ज्ञेयस्तदाऽऽगमः ॥12॥

तालाब, नदी, वृक्ष, लता, वन, सौम्य कान्तिवाले हो और वृक्ष चचल हो तो राहु का आगम समझना चाहिए ॥12॥

छादयेच्चन्द्र-सूर्यौ च यदा मेघा सिताम्बरा[2]।
सन्ध्यायां च तदा ज्ञेयं राहोरागमनं ध्रुवम् ॥13॥

जब सन्ध्याकाल मे आकाश मे मेघ चन्द्र और सूर्य को आच्छादित कर दें, तब राहु का आगमन समझना चाहिए ॥13॥

एतान्येव तु लिङ्गानि भयं कुर्युरपर्वणि।
वर्षासु वर्षदानि स्युर्भद्रबाहुवचो यथा ॥14॥

उक्त चिह्न अपर्व—पूर्णिमा और अमावास्या से भिन्न काल मे भय उत्पन्न करते है। वर्षा मे ऋतु वर्षा करनेवाले होते हैं, ऐसा भद्रबाहु स्वामी का वचन है ॥14॥

---

1 सौम्यभ्राश्चवले मु०। 2. सिताम्बरे मु०।

शुक्लपक्षे द्वितीयायां सोमशृंगं [1]तदा प्रभम्।
स्फुटिताग्रं द्विधा वाऽपि विन्द्याद् राहोस्तदाऽऽगमम् ॥15॥

जब शुक्ल पक्ष की द्वितीया मे चन्द्रशृ ग प्रभावान् हो अथवा उस शृंग के टूटकर दो हिस्से दिखलाई पडते हो, तब राहु का आगमन समझना चाहिए ॥15॥

चन्द्रस्य चोत्तरा कोटी [2]द्वे शृंगे दृश्यते यदा।
धूम्रो विवर्णो ज्वलितस्तदा राहोध्रुवागम: ॥16॥

जब चन्द्रमा की उत्तर कोटि मे दो शृ ग दिखलाई पडें और चन्द्र धूम्र, विकृत वर्ण और ज्वलित दिखलाई पडे उस समय निश्चय से राहु का आगम जानना चाहिए ॥16॥

उदयास्तमने भूयो यदा यश्चोदयो रवौ।
इन्द्रो वा यदि दृश्येत तदा ज्ञेयो ग्रहागम: ॥17॥

जब उदय या अस्तकाल मे पुन-पुन सूर्य और चन्द्रमा दिखलाई पडे तब ग्रहागम समझना चाहिए ॥17॥

कबन्धा-परिघा मेघा धूम-रक्तपट-ध्वजा।
उद्गच्छमाने दृश्यन्ते सूर्ये राहोस्तदाऽऽगम: ॥18॥

जब मेघ कबन्ध, परिघ के आकार के हो तथा सूर्य मे ध्वजा, धूम और रक्त वर्ण की उच्छिद्यमान दिखलाई पडे तब राहु का आगमन समझना चाहिए ॥18॥

[3]मार्गवान् महिषाकार: शकटस्थो यदा शशी।
उद्गच्छन् दृश्यतेऽष्टम्यां तदा ज्ञेयो ग्रहागम: ॥19॥

जब अष्टमी को चन्द्रमा मार्गी, महिषाकार, रोहिणी नक्षत्र मे फटा-टूटा-सा दिखलाई पडे तब ग्रहागम समझना चाहिए ॥19॥

सिंह-मेषोष्ट्र-संकाश. परिवेषो यदा शशी।
अष्टम्यां शुक्लपक्षस्य तदा ज्ञेयो ग्रहागम ॥20॥

जब शुक्ल पक्ष की अष्टमी को चन्द्रमा का परिवेष सिंह, मेष और ऊँट के समान मालूम पडे, तब ग्रहागम समझना चाहिए ॥20॥

श्वेतके सरसङ्काशे रक्त-पीतोऽष्टमो यदा।
यदा चन्द्र: प्रदृश्येत तदा ब्रूयाद् ग्रहागम: ॥21॥

---

1 यदा शुभम् मु०। 2 द्विशृग मु०। 3 कबन्धो मु०।

यदि अष्टमी मे चन्द्रमा श्वेतवर्ण, केसररंग या रक्त-पीत दिखलाई पड़े तो ग्रहागम कहना चाहिए ॥21॥

उत्तरतो दिश: श्वेत: पूर्वतो रक्तकेसर: ।
दक्षिणतोऽथ पीताभ: प्रतीच्यां कृष्णकेसर: ॥22॥
तदा गच्छन् गृहीतोऽपि क्षिप्रं चन्द्र: प्रमुच्यते ।
[1]परिवेषो दिनं चन्द्रे विमर्देत विमुञ्चति ॥23॥

जब दिशा उत्तर से श्वेत, पूर्व से रक्त-केसर, दक्षिण से पीतवर्ण और पश्चिम से कृष्ण-पीत हो तो राहु के द्वारा चन्द्र का ग्रहण किये जाने पर भी शीघ्र ही छोड़ दिया जाता है। चन्द्रमा मे दिन का परिवेष होने पर राहु द्वारा विमर्दित होने पर भी चन्द्रमा शीघ्र ही छोडा जाता है ॥22-23॥

द्वितीयायां यदा चन्द्र: श्वेतवर्ण: प्रकाशते ।
उद्गच्छमान: सोमो वा तदा गृह्येत राहुणा ॥24॥

यदि चन्द्रमा द्वितीया मे श्वेतवर्ण का शोभित हो अथवा उखडता हुआ चन्द्रमा हो तो वह राहु के द्वारा ग्रहण किया जाता है ॥24॥

तृतीयायां यदा सोमो विवर्णो दृश्यते यदि ।
पूर्वरात्रे तदा राहु: पौर्णमास्यामुपक्रमेत् ॥25॥

यदि तृतीया मे चन्द्रमा विवर्ण—विकृतवर्ण दिखलाई पडे तो पूर्णमासी की पूर्ण रात्रि मे राहु द्वारा ग्रस्त होता है अर्थात् ग्रहण होता है ॥25॥

अष्टम्यां तु यदा चन्द्रो दृश्यते रुधिरप्रभ: ।
पौर्णमास्यां तदा राहुरर्धरात्रमुपक्रमेत् ॥26॥

यदि अष्टमी को चन्द्रमा रुधिर के समान लाल प्रभा का दिखलाई पडे तो पूर्णमासी की अर्धरात्रि मे राहु द्वारा ग्रस्त होता है—ग्राह्य होता है ॥26॥

नवम्यां तु यदा चन्द्र: परिवेश्य तु सुप्रभ: ।
अर्धरात्रमुपक्रम्य तदा राहुरुपक्रमेत् ॥27॥

यदि नवमी तिथि को सुप्रभा वाले चन्द्रमा का परिवेष दिखलाई पडे तो पूर्णमासी मे अर्धरात्रि के अनन्तर राहु द्वारा चन्द्र ग्रस्त होता है अर्थात् अर्धरात्रि के पश्चात् ग्राह्य होता है ॥27॥

1 परिविष्टो मु० ।

कृष्णप्रभो यदा सोमो दशम्यां परिविष्यते।
पश्चाद् रात्रं तदा राहुः सोमं गृह्णात्यसंशयः ॥28॥

यदि दशमी तिथि को कृष्णवर्ण की प्रभा वाले चन्द्रमा का परिवेष दिखलाई पड़े तो पूर्णमासी को चन्द्रमा राहु द्वारा निस्सन्देह आधीरात के पश्चात् ग्रहण किया जाता है ॥28॥

अष्टम्यां तु यदा सोमं श्वेताभ्रं परिवेषते।
तदा परिघं वै राहुर्विमुञ्चति न संशयः ॥29॥

अष्टमी तिथि को श्वेतवर्ण की आभा का चन्द्रमा का परिवेष दिखलाई पडे तो राहु परिघ को छोडता है, इसमे सन्देह नही है ॥29॥

कनकाभो यदाऽष्टम्यां परिवेषेण चन्द्रमा।
अर्धग्रासं तदा कृत्वा राहुरुद्गिरते पुनः ॥30॥

यदि अष्टमी तिथि को स्वर्ण के समान कान्ति वाले चन्द्रमा का परिवेष दिखलाई पडे तो पूर्णमासी को राहु उसका अर्धग्रास करके छोड देता है ॥30॥

परिवेषोदयोऽष्टम्यां चन्द्रमा रुधिरप्रभः।
सर्वग्रास तदा कृत्वा [1]राहुस्तञ्च विमुञ्चति ॥31॥

अष्टमी तिथि को परिवेष मे ही चन्द्रमा का उदय हो और चन्द्रमा रुधिर के समान कान्तिवाला हो तो राहु पूर्णमासी तिथि को चन्द्रमा का सर्वग्रास करके छोडता है ॥31॥

[2]कृष्णपीता यदा कोटिर्दक्षिणा स्याद्ग्रह सितः।
पीतो यदाऽष्टम्यां कोटी तदा श्वेतं ग्रहं वदेत् ॥32॥

जब अष्टमी तिथि को चन्द्र की दक्षिणकोटि कृष्ण-पीत होती है तो ग्रहण श्वेत होता है तथा पीली कोटि—शृ ग होने पर भी श्वेत ग्रहण होता है ॥32॥

दक्षिणा मेचकाभा तु कपोतग्रहमादिशेत्।
कपोतमेचकाभा तु कोटी ग्रहमुपानयेत् ॥33॥

यदि चन्द्रमा की दक्षिण कोटि—दक्षिण शृंग मेचक आभा वाला हो तो कपोत रग का ग्रहण होता है और कपोत-मेचक आभा होने पर ग्रहण का भी वैसा रग होता है ॥33॥

---

1 -श्चन्द्र मु० । 2 रक्त मु० ।

[1]पीतोत्तरा यदा कोटिर्दक्षिण· रुधिरप्रभः।
कपोतग्रहणं विन्द्यात् पूर्वं पश्चात् सितप्रभम् ॥34॥

यदि अष्टमी तिथि को चन्द्रमा की उत्तर की कोटि—किनारा लाल हो और दक्षिण का किनारा रुधिर जैसा हो तो कपोत रग के ग्रहण की सूचना समझनी चाहिए तथा अन्त मे श्वेत प्रभा समझनी चाहिए ॥34॥

पीतोत्तरा यदा कोटिर्दक्षिणा रुधिरप्रभा।
कपोतग्रहणं विन्द्याद् ग्रहं पश्चात् सितप्रभम् ॥35॥

यदि चन्द्रमा का उत्तरी किनारा पीला और दक्षिणी रुधिर के समान कान्ति वाला हो तो कपोत रग का ग्रहण समझना चाहिए तथा अन्तिम समय मे श्वेत प्रभा समझनी चाहिए ॥35॥

यतोऽभ्रस्तनितं विन्द्यात् मारुतं करकाशनी।
रुतं वा श्रूयते किञ्चित् तदा विन्द्याद् ग्रहागमम् ॥36॥

जब बादल गर्जना करे, वायु, ओले और बिजली गिरे तथा किसी प्रकार का शब्द सुनाई पडे तो ग्रहागम होता है ॥36॥

मन्दक्षीरा यदा वृक्षाः सर्वदिक् कलुषायते[2]।
क्रीडते च [3]यदा बालस्ततो विन्द्याद् ग्रहागमम् ॥37॥

जब वृक्ष अल्प क्षीर वाले हो, सभी दिशाएँ कलुषित दिखलाई पड़ें, और ऐसे समय मे बालक खेलते हो तो उस समय ग्रहागम जानना चाहिए। यहाँ सर्वत्र ग्रह से तात्पर्य 'ग्रहण' से है ॥37॥

ऊर्ध्वं प्रस्पन्दते चन्द्रश्चित्र· संपरिवेष्यते।
कुरुते मण्डलं स्पष्टस्तदा विन्द्याद् ग्रहागमम् ॥38॥

यदि चन्द्रमा ऊपर की ओर स्पन्दित होता हो, विचित्र प्रकार के परिवेष से वेष्टित, स्पष्ट मडलाकार हो तो ग्रहण का आगमन समझना चाहिए ॥38॥

यतो विषयघातश्च[4] यतश्च पशु-पक्षिणः।
तिष्ठन्ति मण्डलायन्ते ततो विन्द्याद् ग्रहागमम् ॥39॥

यदि देश का आघात हो और पशु-पक्षी मण्डलाकार होकर स्थित हो तो ग्रहण का आगमन समझना चाहिए ॥39॥

---

1 रक्तोत्तरा सितकोटिर्दक्षिणा स्याद् यदाष्टमी। कपोत ग्रहमाख्याति पूर्वं पश्चात् सितप्रभम् ॥ मु०। 2 कलुषा भवेत् मु०। 3 यतो मु०। 4. -श्चायतय मु०।

पाण्डुर्वा द्विवलीढो वा चन्द्रमा यदि दृश्यते।
[1]व्याधितो हीनरश्मिश्च यदा तस्वे निवेशनम् ॥40॥

यदि चन्द्रमा पाण्डु या द्विगुणित निगला हुआ दिखलाई पड़े, व्यथित और हीन किरण मालूम पड़े तो चन्द्रग्रहण होता है ॥40॥

[2]ततः प्रबाध्यते वेषस्ततो विन्द्याद् ग्रहागमम्।
यतो वा मुच्यते वेषस्ततश्चन्द्रो विमुच्यते ॥41॥

जिस परिवेष से चन्द्रमा प्रवाहित हो, उससे ग्रहण होता है और जिससे चन्द्रमा छोडा जाय उससे चन्द्रमा मुक्त होता है ॥41॥

गृहीतो विध्यते चन्द्रो वेषमावेव विध्यते।
यदा तदा विजानीयात् षण्मासाद् ग्रहणं पुनः ॥42॥

जब चन्द्रग्रहण के समय चन्द्रमा अपना फटा-टूटा वेष प्रकट करे तो छः महीने पश्चात् पुन चन्द्रग्रहण समझना चाहिए ॥42॥

[3]प्रत्युद्गच्छति आदित्यं यदा गृह्येत चन्द्रमाः।
भय तदा विजानीयात् ब्राह्मणानां [4]विशेषतः ॥43॥

सूर्य की ओर जाते हुए चन्द्रमा का ग्रहण हो तो ब्राह्मणो के लिए विशेष भय समझना चाहिए ॥43॥

[5]प्रातरासेविते चन्द्रो दृश्यते कनकप्रभः।
भय तदा विजानीयादमात्यानां विशेषतः ॥44॥

जब प्रात काल मे चन्द्रमा स्वर्ण की आभा वाला मालूम हो तो भय होता है और विशेष रूप से अमात्यो के लिए भय—आतक होता है ॥44॥

मध्याह्ने तु यदा चन्द्रो गृह्यते कनकप्रभः।
क्षत्रियाणां नृपाणां च तदा भयमुपस्थितम् ॥45॥

मध्याह्न मे यदि चन्द्रमा कनकप्रभ मालूम हो तो क्षत्रिय और राजाओ के लिए भय होता है ॥45॥

[6]यदा मध्यनिशायां तु राहुणा गृह्यते शशी।
भयं तदा विजानीयात् वैश्यानां समुपस्थितम् ॥46॥

---

1 व्यथितो मु०। 2 यत मु०। 3 प्रत्युतमुत्तम् मु०। 4 उपस्थितम् मु०।
5 प्रातर।शे यदा सोमो गृह्यते राहुणाऽऽवृत मु०। 6 व्यावृते यदि मध्याह्ने मु०।

जब मध्य रात्रि में राहु चन्द्रमा को ग्रस्त करता है तब वैश्यों के लिए भय होता है ॥46॥

नीचावलम्बी सोमस्तु यदा गृह्येत राहुणा।
सूर्पाकारं तदाऽऽनर्त्तं मरुकच्छं च पीडयेत् ॥47॥

नीच राशिस्थ चन्द्रमा—वृश्चिक राशिस्थ चन्द्रमा को जब राहु ग्रस्त करता है तो सूर्पाकार, आनर्त्त, मरु और कच्छ देशों को पीडित करता है ॥47॥

अल्पचन्द्रं च द्वीपाश्च म्लेच्छा पूर्वापरा द्विजाः।
दीक्षिताः क्षत्रियामात्या शूद्राः पीडामवाप्नुयु. ॥48॥

यदि अल्पचन्द्र का ग्रहण हो तो म्लेच्छ आदि द्वीप, पूर्व-पश्चिम निवासी द्विज, मुनि-साधु, क्षत्रिय, अमात्य और शूद्र पीडा को प्राप्त होते हैं ॥48॥

यतो राहुर्ग्रसेच्चन्द्रं ततो यात्रां निवेशयेत्।
वृत्ते निवर्तते यात्रा यतो तस्मान्महद् भयम् ॥49॥

जब राहु द्वारा चन्द्रग्रहण होता है तो यात्रा में रुकावट समझना चाहिए। चन्द्रग्रहण के दिन यात्रा करने वाला व्यक्ति यो ही वापस लौट आता है, अतः यात्रा में भय है ॥49॥

गृहणीयादेकमासेन चन्द्र-सूर्यौ यदा तदा।
रुधिरवर्णसंसक्ता सङ्ग्रामे जायते मही ॥50॥

जब एक ही महीने मे चन्द्रग्रहण और सूर्यग्रहण दोनो हो तो पृथ्वी पर युद्ध होता है और पृथ्वी रक्तरंजित हो जाती है ॥50॥

चौराश्च यायिनो म्लेच्छा घ्नन्ति साधूननायकान्।
विरुध्यन्ते गणाश्चापि नृपाश्च विषये चराः ॥51॥

उक्त दोनो ग्रहणो के होने पर वे चोर, यायी, म्लेच्छ, नेतृत्वविहीन साधुओ का घात करते है तथा देश-विशेष मे दूत, राजा और गणो को रोक लिया जाता है ॥51॥

[1]यतोत्साहं तु हत्वा तु राजानं निष्क्रमते शशी।
तदा क्षेमं सुभिक्षञ्च मन्दरोगांश्च निर्दिशेत् ॥52॥

चन्द्रमा पहले राहु को परास्त कर निकल आये तो क्षेम, सुभिक्ष तथा रोगो की मन्दता होती है ॥52॥

1 यह श्लोक मुद्रित प्रति में नहीं है।

पूर्वं दिशि तु यदा हत्वा राहुः निष्क्रमते शशी।
रूक्षो वा हीनरश्मिर्वा पूर्वो राजा विनश्यति ॥53॥

जब राहु पूर्व दिशा में चन्द्रमा का भेदन कर निकले और चन्द्रमा रूक्ष तथा हीन किरण मालूम पड़े तो पूर्व देश के राजा का विनाश होता है ॥53॥

दक्षिणाभेदने गर्भं दाक्षिणात्यांश्च पीडयेत्।
उत्तराभेदने चैव नाविकांश्च जिघांसति ॥54॥

दक्षिण दिशा मे गर्भ के भेदन होने से दाक्षिणात्य—दक्षिण निवासियो को कष्ट और उत्तर गर्भ का भेदन होने से नाविको का घात होता है ॥54॥

निश्चलः सुप्रभः कान्तो यदा निर्याति चन्द्रमाः।
राज्ञां विजय-लाभाय तदा ज्ञेयः शिवशंकरः ॥55॥

निश्चल और सुन्दर कान्ति वाला चन्द्रमा जब चन्द्रग्रहण से निकलता है तो राजाओ को जयलाभ और राष्ट्र मे सर्वशान्ति होती है ॥55॥

एतान्येव तु लिंगानि चन्द्रे[1] ज्ञेयानि धीमता।
कृष्णपक्षे यदा चन्द्रः शुभो वा यदि वाऽशुभः ॥56॥

उपर्युक्त चिह्नो को चन्द्रमा मे अवगत कर बुद्धिमान् व्यक्तियो को शुभाशुभ जानना चाहिए। जब चन्द्रमा कृष्ण पक्ष मे शुभ या अशुभ होता है तो उसके अनु-सार फल घटित होता है ॥56॥

उत्पाताश्च निमित्तानि शकुनं लक्षणानि च।
पर्वकाले यदा सन्ति तदा राहोर्ध्रुवागमः ॥57॥

जब पूर्व काल में उत्पात, निमित्त, शकुन और लक्षण घटित होते हैं, तब निश्चय से राहु का आगमन—राहु द्वारा ग्रहण होता है ॥57॥

रक्तो राहुः शशी सूर्यो हन्युः क्षत्रान् सितो द्विजान्।
पीतो वैश्यान् कृष्णः[2] शूद्रान् द्विवर्णास्तु जिघांसति ॥58॥

जब लाल रंग के राहु, सूर्य और चन्द्रमा हो तो क्षत्रियो का हनन, श्वेत वर्ण के होने पर द्विजो का हनन, पीत वर्ण के होने पर वैश्यो का हनन और कृष्ण वर्ण के होन पर शूद्र और वर्णसकरो का हनन होता है ॥58॥

चन्द्रमाः पीडितो हन्ति नक्षत्रं यस्य यद्यतः।
रूक्षः पापनिमित्तश्च विकृतश्च विनिर्गतः ॥59॥

---

1. सूर्ये मु०। 2 तम मु०।

रूक्ष, पाप निमित्तक, विकृत और पीडित चन्द्रमा निकल कर जिस नक्षत्र का घात करता है, उस नक्षत्र वालों का अशुभ होता है ॥59॥

प्रसन्नः साधुकान्तश्च दृश्यते सुप्रभः शशी।
यदा तदा नृपान् हन्ति प्रजां पीतः सुवर्चसा ॥60॥

जब ग्रहण से छूटा हुआ चद्रमा प्रसन्न, सुन्दर कान्ति और सुप्रभा वाला दिखलाई पड़े तो राजाओ का घात करता है। पीत और तेजस्वी दिखलाई पड़े तो प्रजा का घात करता है ॥60॥

राज्ञो राहुः प्रवासे यानि लिंगान्यस्य पर्वणि।
यदा गच्छेत् प्रशस्तो वा राजराष्ट्रविनाशनः ॥61॥

पर्व काल मे—पूर्णिमा के अस्त होने पर राहु के जो चिह्न प्रकट हो, उनमे वह प्रशस्त दिखलाई पडे तो राजा और राष्ट्र का विनाश होता है ॥61॥

यतो राहुप्रमथने ततो यात्रा न सिध्यति।
प्रशस्ताः शकुना यत्र सुनिमित्ता सुयोषितः[1] ॥62॥

शुभ शकुन और श्रेष्ठ निमित्तो के होने पर भी राहु के प्रमथन—अस्थिर अवस्था मे रहने पर यात्रा सफल नही होती है ॥62॥

राहुश्च चन्द्रश्च तथैव सूर्यो यदा सवर्णा न परस्परघ्नाः।
काले च राहुर्भजते रवीन्दू तदा सुभिक्षं विजयश्च राज्ञः ॥63॥

राहु, सूर्य और चन्द्र जब सवर्ण हो और परस्पर घात न करें तथा समय पर सूर्य और चन्द्रमा का राहु योग करे तो राजाओ की विजय होती है और राष्ट्र मे सुभिक्ष होता है ॥63॥

इति नैर्ग्रन्थे भद्रबाहुके निमित्ते संहिते राहुचारो नाम विंशतितमोऽध्याय ॥20॥

विवेचन—द्वादश राशियों के भ्रमणानुसार राहुफल—जिस वर्ष राहु मीन राशि मे रहता है, उस वर्ष बिजली का भय रहता है। सैकडो व्यक्तियो की मृत्यु बिजली के गिरने से होती है। अन्न की कमी रहने से प्रजा को कष्ट होता है। अन्न मे दूना-तिगुना लाभ होता है। एक वर्ष तक दुर्भिक्ष रहता है, तेरहवें महीने मे सुभिक्ष होता है। देश मे गृहकलह तथा प्रत्येक परिवार मे अशान्ति बनी रहती है। यह मीन राशि का राहु बगाल, उडीसा, उत्तरी बिहार, आसाम को छोड

1. -योजिता मु०।

अवशेष सभी प्रदेशों के लिए दुर्भिक्षकारक होता है। अन्न की कमी अधिक रहती है, जिससे प्रजा को भुखमरी का कष्ट तो सहन करना ही पडता है साथ ही आपस में सघर्ष और लूट-पाट होने के कारण अशान्ति रहती है। मीन राशि के राहु के साथ शनि भी हो तो निश्चयत भारत को दुर्भिक्ष का सामना करना पड़ता है। दाने-दाने के लिए मुँहताज होना पडता है। जो अन्न का संग्रह करके रखते हैं, उन्हे भी कष्ट उठाना पडता है। कुम्भ राशि मे राहु हो तो सन, सूत, कपास, जूट आदि के सचय मे लाभ रहता है। राहु के साथ मगल हो तो फिर जूट के व्यापार मे तिगुना-चौगुना लाभ होता है। व्यापारिक सम्बन्ध भी सभी लोगों के बढ़ते जाते हैं। कपास, रूई, सूत, वस्त्र, जूट, सन, पाटादि से बनी वस्तुओ के मूल्य मे महँगी आती है। कुम्भ राशि मे राहु और मंगल के आरम्भ होते ही छ· महीनो तक उक्त वस्तुओ का सग्रह करना चाहिए। सातवें महीने में बेच देने से लाभ रहता है।

कुम्भ राशि के राहु मे वर्षा साधारण होती है, फसल भी मध्यम होती है तथा धान्य के व्यापार मे भी लाभ होता है। खाद्यान्नो की कमी राजस्थान, बम्बई, गुजरात, मध्य प्रदेश एव उडीसा मे होती है। बगाल मे भी खाद्यान्नो की कमी आती है, पर दुष्काल की स्थिति नही आने पाती। पजाब, बिहार और मध्य भारत मे उत्तम फसल उपजती है। भारत मे कुम्भ राशि का राहु खण्डवृष्टि भी करता है। शनि के साथ राहु कुम्भ राशि मे स्थित रहे तो प्रजा के लिए अत्यन्त कष्ट कारक हो जाता है। दुर्भिक्ष के साथ खून-खराबियाँ भी कराता है। यह सघर्ष और युद्ध का कारण होता है। विदेशो से सम्पर्क भी बिगड जाता है, सन्धियो का महत्त्व समाप्त हो जाता है। जापान और बर्मा मे खाद्यान्न की कमी नहीं रहती है। चीन के साथ उक्त राहु की स्थिति मे भारत का मैत्री सम्बन्ध दृढ होता है। मकर राशि मे राहु के रहने से सूत, कपास, रूई, वस्त्र, जूट, सन, पाट आदि का सग्रह तीन महीनो तक करना चाहिए। चौथे महीने मे उक्त वस्तुओ के बेचने से तिगुना लाभ होता है। ऊनी, रेशमी और सूती वस्त्रो मे पूरा लाभ होता है। मकर का राहु गुड मे हानि कराता है तथा चीनी और चीनी से निर्मित वस्तुओ के व्यापार मे भी पर्याप्त हानि होती है। खाद्यान्न की स्थिति कुछ सुधर जाती है, पर कुम्भ और मकर राशि के राहु मे खाद्यान्नो की कमी रहती है। मकर राशि के राहु के साथ शनि, मगल या सूर्य के रहने से वस्त्र, जूट और कपास या सूत मे पचगुना लाभ होता है। वर्षा भी साधारण ही हो पाती है, फसल साधारण रह जाती है, जिससे देश मे अन्न का सकट बना रहता है। मध्यभारत और राजस्थान मे अन्न की कमी रहती है, जिससे वहाँ के निवासियो के लिए कष्ट होता है। धनु राशि के राहु मे मवेशी के व्यापार मे अधिक लाभ होता है। घोडा, खच्चर, हाथी एव सवारी के सामान—मोटर, साईकिल, रिक्शा आदि मे भी अधिक लाभ होता है। जो व्यक्ति मवेशी का सचय तीन महीनो तक करके चौथे महीने मे मवेशी को

बेचता है, उसे चौगुना तक लाभ होता है। मशीन के वे पार्ट्स जिनसे मशीन का सीधा सम्बन्ध रहता है, जिनके बिना मशीन का चलना कठिन ही नही, असंभव है, ऐसे पार्ट्स के व्यापार मे लाभ होता है। जनसाधारण मे ईर्ष्या, उद्वेग और वैमनस्य का प्रसार होता है।

वृश्चिक राशि में राहु मगल के साथ स्थित हो तो जूट और वस्त्र के व्यवसाय मे अधिक लाभ होता है। वृश्चिक राशि मे राहु के आरम्भ होने के पाँच महीनों तक वस्तुओ का सग्रह करके छठे महीने मे वस्तुओ के बेचने से दुगुना-तिगुना लाभ होता है। खाद्यान्नो का उत्पादन अच्छा होता है तथा वर्षा भी उत्तम होती है। आसाम, बगाल, बिहार, पजाब, पाकिस्तान, जापान, अमेरिका, चीन मे उत्तम फसल उत्पन्न होती है। अनाज के व्यापार मे साधारण लाभ होता है। नारियल, सुपाडी और आम, इमली आदि की फसल साधारण होती है। वस्त्र-व्यवसाय के लिए उक्त प्रकार का राहु अच्छा होता है। तुला राशि मे राहु स्थित हो तो दुर्भिक्ष पड़ता है, खण्डवृष्टि होती है। अन्न, घी, तैल, गुड, चीनी आदि समस्त खाद्य पदार्थों की कमी रहती है। मवेशी को भी कष्ट होता है तथा मवेशी का मूल्य घट जाता है। यदि तुला राशि मे राहु उसी दिन आये, जिस दिन तुला की सक्रान्ति हुई हो, तो भयकर दुष्काल पडता है। देश के सभी राज्यो और प्रदेशो मे खाद्यान्नो की कमी पड जाती है। तुला राशि के राहु के साथ शनि, मगल का रहना और अनिष्टकर होता है। पजाब, बगाल और आसाम मे अन्न की कमी रहती है, दुष्काल के कारण सहस्रो व्यक्ति भूख से छटपटा कर अपने प्राण गँवा बैठते है। कन्या राशि का राहु होने से विश्व मे शान्ति होती है। अन्न और वस्त्र का अभाव दूर हो जाता है। लौंग, पीपल, इलायची और काली मिर्च के व्यवसाय मे मनमाना लाभ होता है। जब कन्या राशि का राहु आरम्भ हो उस समय से लेकर पाँच महीनो तक उक्त पदार्थों का सग्रह करना चाहिए, पश्चात् छठे महीने मे उन पदार्थों को बेच देने से अधिक लाभ होता है। चीनी, गुड, घी और नमक के व्यवसाय मे भी साधारण लाभ होता है। सोना, चाँदी के व्यापार मे कन्या के राहु के छः महीने के पश्चात् लाभ होता है। जापान, जर्मनी, अमेरिका, इंग्लैण्ड, चीन, रूस, मिस्र, इटली आदि देशो में खाद्यान्नो की साधारण कमी होती है। वर्मा मे भी अन्न की कमी हो जाती है। सिंह राशि का राहु होने से सुभिक्ष होता है। सोठ, धनिया, हल्दी, काली मिर्च, सेंधा नमक, पीपल आदि वस्तुओ के व्यापार मे लाभ होता है, अन्न के व्यवसाय मे हानि होती है। गुड, चीनी और घी के व्यवसाय मे समर्घता रहती है। तेल का भाव तेज हो जाता है। सिंह का राहु राजनीतिक स्थिति को सुदृढ़ करता है। देश मे नये भाव और नये विचारो की प्रगति होती है। कलाकारो को सम्मान प्राप्त होता है तथा कला का सर्वांगीण विकास होता है। साहित्य की उन्नति होती है। सभी देश शिक्षा और सस्कृति में

प्रगति करते हैं। कर्क राशि के राहु मे सोना, चाँदी, ताँबा, लोहा, गेहूँ, चना, जौ, ज्वार, बाजरा आदि पदार्थ सस्ते होते हैं तथा सुभिक्ष और सुवृष्टि होती है। जनता में सुख-शान्ति रहती है। यदि कर्क राशि के राहु के साथ गुरु हो तो राजनीतिक प्रगति होती है। देश का स्थान अन्य देशो के बीच श्रेष्ठ माना जाता है। पंजाब, बंगाल, बिहार, महाराष्ट्र, मध्य प्रदेश, उत्तर प्रदेश, दिल्ली और हिमाचल प्रदेश के लिए यह राहु बहुत अच्छा है। इन स्थानो मे वर्षा और फसल दोनो ही उत्तम होती हैं। आसाम मे बाढ़ आने के कारण अनेक प्रकार की कठिनाइयाँ उत्पन्न होती हैं। जूट के व्यापार मे साधारण लाभ होता है। जापान में फसल बहुत अच्छी होती है; किन्तु भूकम्प आने का भय सर्वदा बना रहता है। कर्क राशि का राहु चीन और रूस के लिए उत्तम नही है, अवशेष सभी राष्ट्रो के लिए उत्तम है। मिथुन राशि के राहु में भी सभी पदार्थ सस्ते होते हैं। अन्नादि पदार्थों की उत्पत्ति भी अच्छी होती है। तथा सभी देशो मे सुकाल रहता है। वृष राशि के राहु मे अन्न की कुछ कमी पडती है। घी, तेल, तिलहन, चन्दन, केशर कस्तूरी, गेहूँ, जौ, चना, चावल, ज्वार, मक्का, बाजरा, उडद, अरहर, मूँग, गुड, चीनी आदि पदार्थों के सचय मे लाभ होता है। मेष राशि के राहु मे यदि एक ही मास मे सूर्य और चन्द्रग्रहण हो तो निश्चयत दुर्भिक्ष पडता है। बगाल, बिहार, आसाम और उत्तर प्रदेश मे उत्तम वर्षा होती है, दक्षिण भारत मे मध्यम वर्षा तथा अवशेष प्रदेशो मे वर्षा का अभाव या अल्प वर्षा होती है। यदि राहु के साथ शनि और मंगल हो तो वर्षा का अभाव रहता है। अनाज की उत्पत्ति भी साधारण ही होती है। देश मे खाद्यान्न सकट होने से कुछ अशान्ति रहती है। निम्न श्रेणी के व्यक्तियो को अनेक प्रकार के कष्ट होते हैं।

राहु द्वारा होने वाले चन्द्रग्रहण का फल—मेष राशि मे चन्द्र ग्रहण हो तो मनुष्यो को पीडा होती है। पहाड़ी प्रदेश, पजाब, दिल्ली, दक्षिण भारत, महाराष्ट्र आन्ध्र, वर्मा आदि प्रदेशो के निवासियों को अनेक प्रकार की बीमारियों का सामना करना पड़ता है। मेष राशि के ग्रहण में शूद्र और वर्णसकरो को अधिक कष्ट होता है। लाल रंग के पदार्थों में लाभ होता है। वृष राशि के ग्रहण में गोप, मवेशी, पथिक, श्रीमन्त, धनिक और श्रेष्ठ व्यक्तियो को कष्ट होता है। इस ग्रहण से फसल साधारण होती है, वर्षा भी मध्यम ही होती है। खनिज पदार्थ और मशालो की उत्पत्ति अधिक होती है। गायो की संख्या घटती है, जिससे घी, दूध की कमी होने लगती है। राजनीतिक दृष्टि से उथल-पुथल होती है। ग्रहण पड़ने के एक महीने के उपरान्त नेताओ में मनमुटाव आरम्भ होता है तथा सभी प्रदेशो के मन्त्रि मण्डलों में परिवर्तन होता है। मिथुन राशि पर चन्द्रग्रहण के साथ यदि सूर्य ग्रहण भी हो तो कलाकारों, शिल्पियों, वेश्याओ, ज्योतिषियो एवं इसी प्रकार के अन्य व्यवसायियों को शारीरिक कष्ट होता है। इटली, मिस्र, ईरान आदि देशो मे,

विशेषत. मुस्लिम राष्ट्रो मे अनेक प्रकार से अशान्ति रहती है। वहाँ अन्न और वस्त्र की कमी रहती है तथा गृह-कलह भी उत्पन्न होती है। उद्योग-धन्धो मे रुकावट उत्पन्न होती है। बर्मा, चीन, जापान, जर्मन, अमेरिका, इगलैण्ड और रूस में शान्ति रहती है। यद्यपि इन देशो मे भी अर्थसकट बढता हुआ दिखलाई पडता है, फिर भी शान्ति रहती है। भारत के लिए भी उक्त राशि पर दोनो ग्रहणो का होना अहितकारक होता है। कर्क राशि पर चन्द्रग्रहण हो तो गर्दभ और अहीरो को कष्ट होता है। कबाली, नागा तथा अन्य पहाडी जाति के व्यक्तियो के लिए भी पर्याप्त कष्ट होता है। नाना प्रकार के रोग उत्पन्न होते हैं तथा आर्थिक सकट भी उनके सामने प्रस्तुत रहता है। यदि इसी राशि पर सूर्यग्रहण भी हो तो क्षत्रियो को कष्ट होता है। सैनिक तथा अस्त्र से व्यवसाय करने वाले व्यक्तियो को पीडा होती है। चोर और डाकुओ के लिए अत्यन्त भय होता है। सिंह राशि के ग्रहण मे वनवासी दुखी होते है, राजा और साहूकारो का धन क्षय होता है। कृषको को भी मानसिक चिन्ताएँ रहती हैं। फसल अच्छी नही होती तथा फसल में नाना प्रकार के रोग लग जाते है। टिड्डी, मूसो का भय अधिक रहता है। कठोर कार्यों से आजीविका अर्जन करने वालो को लाभ होता है। व्यवसायियो को हानि उठानी पडती है। कन्या राशि के ग्रहण मे शिल्पियो, कवियो, साहित्यकारो, गायको एव अन्य ललित कलाकारो को पर्याप्त कष्ट रहता है। आर्थिक सकट रहने से उक्त प्रकार के व्यवसायियो को कष्ट होता है। छोटे-छोटे दुकानदारो को भी अनेक प्रकार के कष्ट होते है। बगाल, आसाम, बिहार, पजाब, उत्तर प्रदेश, बम्बई, दिल्ली, मद्रास और मध्य प्रदेश मे फसल साधारण होती है। आसाम मे अन्न की कमी रहती है तथा पजाब मे भी अन्न का भाव महँगा रहता है। यदि कन्या राशि पर चन्द्रग्रहण के साथ सूर्यग्रहण भी हो तो बर्मा, लका, श्याम, चीन और जापान मे भी अन्न की कमी पड जाती है। वस्त्र के व्यापार मे अधिक लाभ होता है। जूट, सन, रेशम, कपास, रूई और पाट के भाव ग्रहणो के दो महीने के पश्चात् अधिक बढ जाते है। मिट्टी का तेल, पेट्रोल, कोयला आदि पदार्थों की कमी पड जाती है। यदि कन्या राशि के चन्द्र ग्रहण पर मगल या शनि की दृष्टि हो तो अनाजो की और अधिक कमी पड जाती है। तुला राशि पर चन्द्र ग्रहण हो तो साधारण जनता मे असन्तोष होता है। गेहूँ, गुड, चीनी, घी और तेल का भाव तेज होता है। व्यापारियो के लिए यह ग्रहण अच्छा होता है, उन्हे व्यापार मे अच्छा लाभ होता है। पजाब, त्रावणकोर, कोचीन, मलाबार को छोड अवशेष भारत मे अच्छी वर्षा होती है। इन प्रदेशो मे फसल भी अच्छी नही होती है। पशुओ को कष्ट होना है तथा बिहार और उत्तर प्रदेश के निवासियो को अनेक प्रकार की बीमारियो का सामना करना पडता है। घी, गुड, चीनी, काली मिर्च, पीपल, सोठ, धनिया, हल्दी आदि पदार्थों का भाव भी महँगा होता है। लोहे के

व्यवसायियों को दूना लाभ होता है। सोना और चाँदी के व्यापार मे साधारण लाभ होता है। ताँबा और पीपल के भाव अधिक तेज होते हैं। अस्त्र-शस्त्र तथा मशीनों का मूल्य भी बढ़ता है। वृश्चिक राशि पर चन्द्रग्रहण हो तो सभी वर्ण के व्यक्तियो को कष्ट होता है। पंजाब निवासियो को हैजा और चेचक का प्रकोप अधिक होता है। बगाल, बिहार और आसाम मे विषैले ज्वर के कारण सहस्रो व्यक्तियो की मृत्यु होती है। सोना, चाँदी, मोती, माणिक्य, हीरा, गोमेद, नीलम आदि रत्नो के सिवा साधारण पाषाण, सीमेण्ट और चूना के भाव भी तेज होते हैं। घी, गुड और चीनी का भाव सस्ता होता है। यदि वृश्चिक राशि पर चन्द्र-ग्रहण और सूर्यग्रहण दोनों हो तो वर्षा की कमी रहती है। फसल भी सम्यक् रूप से नही होती है, जिससे अन्न की कमी पडती है। धनु राशि पर चन्द्रग्रहण हो तो वैद्य, डॉक्टर, व्यापारी, घोडो एव यवनो को शारीरिक कष्ट होता है। धनु राशि के ग्रहण मे देश मे अर्थसकट व्याप्त होता है, फसल उत्तम नही होती है। खनिज पदार्थ, वन और अन्न सभी की कमी रहती है। फल और तरकारियो की भी क्षति होती है। यदि इसी राशि पर सूर्यग्रहण हो और शनि से दृष्ट हो तो अटक से कटक तक तथा हिमालय से कन्याकुमारी तक के देशो मे आर्थिक सकट रहता है। राजनीति मे भी उथल-पुथल होती है। कई राज्यो के मन्त्रिमण्डलो मे परिवर्तन होता है। मकर राशि पर चन्द्रग्रहण हो तो नट, मन्त्रवादी, कवि, लेखक और छोटे-छोटे व्यापारियो को शारीरिक कष्ट होते हैं। कुम्भ राशि पर ग्रहण होने से अमीरो को कष्ट तथा पहाडी व्यक्तियो को अनेक प्रकार के कष्ट होते हैं। आसाम मे भूकम्प भी होता है। अग्निभय, शस्त्रभय और चोरभय समस्त देश को विपन्न रखता है। मीन राशि पर चन्द्रग्रहण होने से जलजन्तु, जल से आजीविका करने वाले, नाविक एव अन्य इसी प्रकार के व्यक्तियो को पीडा होती है।

नक्षत्रानुसार चन्द्रग्रहण का फल—अश्विनी नक्षत्र मे चन्द्रग्रहण हो तो दाल वाले अनाज मूँग, उड़द, चना अरहर आदि महँगे, भरणी मे ग्रहण हो तो श्वेतवस्त्रो के व्यवसाय मे तीन मास मे लाभ, कपास, रूई, सूत, जूट, आदि मे चार महीनो मे लाभ और कृत्तिका मे हो तो सुवर्ण, चाँदी, प्रवाल, मुक्ता, माणिक्य मे लाभ होता है। उक्त दिनो के नक्षत्रो मे ग्रहण होने से वर्षा साधारणत: अच्छी होती है। खण्डवृष्टि के कारण किसी प्रदेश मे वर्षा अच्छी और किसी मे कम होती है। रोहिणी नक्षत्र मे ग्रहण होने पर कपास, रूई, जूट और पाट के सग्रह में लाभ, मृगशिर नक्षत्र मे ग्रहण हो तो लाख, रग एव क्षार पदार्थों मे लाभ, आर्द्रा मे ग्रहण हो तो घी, गुड और चीनी आदि पदार्थ महँगे, पुनर्वसु नक्षत्र मे ग्रहण हो तो तेल, तिलहन, मूँगफली और चना मे लाभ; पुष्य नक्षत्र मे ग्रहण हो तो गेहूँ, चावल जौ और ज्वार आदि अनाजो मे लाभ, मघा, पूर्वाफाल्गुनी, उत्तराफाल्गुनी और हस्त, इन चार नक्षत्रो मे ग्रहण हो तो चना, गेहूँ, गुड़ और जौ मे लाभ, चित्रा मे

ग्रहण होने से सभी प्रकार के धान्यों में लाभ, स्वाति मे ग्रहण होने से तीसरे, पाँचवें और नौवें महीने में अन्न के व्यापार में लाभ; विशाखा नक्षत्र में ग्रहण होने से छठे महीने में कुलथी, काली मिर्च, चीनी, जीरा, धनिया आदि पदार्थों मे लाभ; अनुराधा में नौवें महीने मे बाजरा, सरसों आदि मे लाभ, ज्येष्ठा नक्षत्र में ग्रहण होने से पाँचवें महीने में गुड, चीनी, मिश्री आदि पदार्थों मे लाभ, मूल नक्षत्र में ग्रहण होने से चावलो मे लाभ, पूर्वाषाढ़ा नक्षत्र मे ग्रहण होने से वस्त्र व्यवसाय में लाभ; उत्तराषाढ़ा नक्षत्र मे ग्रहण होने से पाँचवें मास मे नारियल, सुपाडी, काजू, किसमिस आदि फलो मे लाभ, श्रवण नक्षत्र मे ग्रहण होने से मवेशियों के व्यापार में लाभ, धनिष्ठा नक्षत्र मे ग्रहण होने से उड़द, मूँग, मोठ आदि पदार्थों के व्यापार मे लाभ, शतभिषा नक्षत्र मे ग्रहण होने चना में लाभ, पूर्वाभाद्र पद में ग्रहण होने से पीडा, उत्तराभाद्रपद मे ग्रहण होने से तीन महीनो में नमक, चीनी, गुड आदि पदार्थों के व्यापार मे विशेष लाभ होता है।

विद्ध फल—राहु का शनि से विद्ध होना भय, रोग, मृत्यु, चिन्ता, अन्नाभाव एव अशान्ति सूचक है। मगल मे विद्ध होने पर राहु जनक्रान्ति, राजनीति मे उथल-पुथल एवं युद्ध होते हैं। बुध या शुक्र से विद्ध होने पर राहु जनता को सुख-शान्ति, आनन्द, आमोद-प्रमोद, अभय और आरोग्य प्रदान करता है। चन्द्रमा से राहु विद्ध होने पर जनता को महान् कष्ट होता है। प्रत्येक ग्रह का विद्ध रूप सप्तशलाका या पंचशलाका चक्र से जानना चाहिए।

एकविंशतितमोऽध्याय:

कोणजान् पापसम्भूतान् केतून् वक्ष्यामि ज्योतिषा।
मृदवो दारुणाश्चैव तेषामासं निबोधत ॥1॥

पाप के कारण कोण में उत्पन्न हुए केतुओ का ज्योतिष के अनुसार वर्णन करूँगा। मृदु और दारुण होने के अनुसार उनका फल समझना चाहिए ॥ 1 ॥

एकादिषु शतान्तेषु वर्षेषु च विशेषत: ।
केतव: सम्भवन्त्येवं विषमा: पूर्वपापजा: ॥2॥

एकादि सौ वर्षों मे पूर्व पाप के उदय से विषम केतु उत्पन्न होते हैं। इन

विषम केतुओं का फल विषम ही होता है ॥ 2 ॥

पूर्वलिङ्गानि केतूनामुत्पाता: सदृशा: पुन:।
ग्रहा[1] अस्तमनाश्चापि दृश्यन्ते चापि लक्षयेत् ॥3॥

केतुओ के पूर्व चिह्न उत्पात के समान ही हैं, अत: ग्रहो के अस्तोदय को देख कर और लक्ष्यकर फल कहना चाहिए ॥ 3 ॥

शतानि चैव केतूनां प्रवक्ष्यामि पृथक् पृथक्।
उत्पाता यादृशा उक्ता ग्रहास्तमनान्यपि ॥4॥

सैकडो केतुओ का वर्णन पृथक्-पृथक् किया जायगा। ग्रहो के अस्तोदय तथा जिस प्रकार के उत्पात कहे गये हैं, उनका वर्णन भी वैसा ही किया जाएगा ॥ 4 ॥

अन्यस्मिन् केतुभवने यदा केतुश्च दृश्यते।
तदा जनपदव्यूह प्रोक्तान् देशान् स हिंसति ॥5॥

यदि अन्य केतुभवन मे केतु दिखलाई पडे तो जनता प्रतिपादित देशों का घात करती है ॥ 5 ॥

एवं दक्षिणतो विन्द्यादपरेणोत्तरेण च।
[2]कृत्तिकादियमान्तेषु नक्षत्रेषु यथाक्रमम् ॥6॥

इस प्रकार कृत्तिका नक्षत्र से भरणी तक दक्षिण, पश्चिम और उत्तर इन दिशाओं मे नक्षत्रो मे क्रमश: समझ लेना चाहिए ॥ 6 ॥

धूम्र: क्षुद्रश्च यो ज्ञेय: केतुरंगारकोऽग्निप:।
प्राणसंत्रासयत्राणो स प्राणी सशयो तथा ॥7॥

केतु, अंगारक और राहु धूम्र वर्ण और क्षुद्र दिखलाई पड़ें तो प्राणो का संकट और अनेक प्रकार के सशय उत्पन्न होते हैं ॥ 7 ॥

त्रिशिरस्के द्विजभयम् अरुणे युद्धमुच्यते।
अरश्मिके नृपापायो विरुध्यन्ते परस्परम् ॥8॥

यदि तीन सिर वाला केतु दिखलाई पड़े तो द्विजों को भय, अरुण केतु दिखलाई पड़े तो युद्ध और किरण रहित केतु दिखलाई पडे तो राजा और प्रजा में परस्पर विरोध पैदा करता है ॥8॥

विकृते[3] विकृतं सर्वं क्षीणे सर्वपराजय:।
भृंगे भृंगिवध: पाप: कबन्धे जनमृत्युव: ॥9॥

1 गृहास्तमनान्ताश्च मु०। 2. कृत्तकादियं - मु०। 3. विक्षिले विक्षिन सर्वं क्षिनी सर्व पराजयम् मु०।

रोगं सस्यविनाशञ्च[1] दुस्कालो[2] मृत्युविद्रवः ।
मांसं लोहितकं ज्ञेयं फलमेवं च पञ्चधा ॥10॥

विशिल—यदि विकृत केतु दिखलाई पड़े तो प्रजा में फूट और क्षीण केतु दिखलाई पड़े तो पराजय, सपूर्ण शृंगाकार दिखलाई पड़े तो सीगवाले पशुओं का वध और कबन्ध—धड-आकार दिखलाई पड़े तो मनुष्यों की मृत्यु होती है। इस प्रकार के केतु में रोग उत्पन्न होते हैं, धान्य—फसल का विनाश होता है, अकाल पडता है मृत्यु-उपद्रव होते हैं एवं पृथ्वी मांस और खून से भर जाती है, इस प्रकार पाँच प्रकार का फल होता है ॥9-10॥

मानुषः पशु-पक्षीणां समयस्तापसक्षये ।
विषाणी दंष्ट्रिघाताय सस्यघाताय शंकरः ॥11॥

उपर्युक्त प्रकार का केतु पशु-पक्षियों के लिए मनुष्यों के समान दु खोत्पादक, तपस्वियों को क्षय करने के लिए समय के समान, दष्ट्री—दाँत से काटने वाले व्याघ्रादि के लिए विषयुक्त सर्पादि के समान और फसल का विनाश करने के लिए रुद्र के समान है ॥11॥

अंगारकोऽग्निसंकाशो धूमकेतुस्तु धूमवान् ।
नीलसंस्थानसंस्थानो वैडूर्यसदृशप्रभः ॥12॥

अग्नि के तुल्य केतु अगारक, धूम्रवर्ण का केतु धूमकेतु और वैडूर्यमणि के समान नीलवर्ण का केतु नीलसस्थान है ॥12॥

कनकाभा शिखा यस्य स केतुः कनकः स्मृतः ।
यस्योर्ध्वगा शिखा शुक्ला स केतुः श्वेत[4] उच्यते ॥13॥

जिस केतुकी शिखा कनक के समान कान्ति वाली है वह केतु कनकप्रभ और जिस केतु के ऊपर की शिखा शुक्ल है वह केतु श्वेत कहा जाता है ॥13॥

त्रिवर्णश्चन्द्रवद् वृत्तः समसर्पवदंकुरः[5] ।
त्रिभिः शिरोभिः शिशिरो गुल्मकेतुः स[6] उच्यते ॥14॥

तीनवर्ण वाला एव चन्द्रमा के समान गोलकेतु समसर्पवदकुर नाम का होता है, तीन सिर वाला केतु शिशिर कहलाता है और गुल्म के समान केतु गुल्मकेतु कहलाता है ॥14॥

---

1 विनाशश्च मु० । 2 दु कालो मु० । 3 नाली—मु० । 4 शुक्ल मु० । 5. समसस्य च दकुर मु० । 6 -केतुश्च गुल्मवत् मु० ।

विक्रान्तस्य शिखे दीप्ते ऊर्ध्वगे च प्रकीर्तिते ।
ऊर्ध्वमुण्डा शिखा यस्य स खिली केतुरुच्यते ॥15॥

जिस केतुकी शिखा दीप्त हो वह विक्रान्त सज्ञक, जिसकी शिखा ऊपर हो वह ऊर्ध्वमुण्डा शिखा वाला केतु खिली कहा जाता है ॥15॥

शिखे विषाणवद् यस्य स विषाणी प्रकीर्तित ।
व्युच्छिद्यमानो भीतेन रूक्षा च क्षिलिका शिखा ॥16॥

जिसकी शिखा विषाण के समान हो वह विषाणी तथा भय से रूक्ष और फैली हुई शिखा वाला केतु व्युच्छिद्यमान कहा जाता है ॥16॥

शिखाश्चतस्रो ग्रीवार्धं कबन्धस्य विधीयते ।
एकरश्मि प्रदीप्तस्तु स केतुर्दीप्त उच्यते ॥17॥

जिसकी आधी गर्दन हो और शिखा चारो ओर व्याप्त हो वह कबन्ध नाम का केतु और एक किरण वाला प्रदीप्त केतु दीप्त कहा जाता है ॥17॥

शिखा मण्डलवद् यस्य स केतुर्मण्डली स्मृत ।
मयूरपक्षी विज्ञेयो हसन प्रभयाऽल्पया ॥18॥

जिस केतुकी शिखा मण्डल के समान हो वह मण्डली और अल्प कान्ति से प्रकाशित होने वाला केतु मयूरपक्षी कहा जाता है ॥18॥

श्वेत सुभिक्षदो ज्ञेय सौम्य शुक्ल शुभार्थिषु ।
कृष्णादिषु च वर्णेषु चातुर्वर्ण्यं विभावयेत् ॥19॥

श्वेतवर्ण का केतु सुभिक्ष करने वाला सुन्दर और शुक्लवर्ण का केतु शुभ फल देने वाला और कृष्ण पीत, रक्त और शुक्लवर्ण के केतु मे चारो वर्णों का शुभा शुभ जानना चाहिए ॥19॥

केतो समुत्थित केतुरन्यो यदि च दृश्यते ।
क्षुच्छस्त्र-रोग-विघ्नस्था प्रजा गच्छति सक्षयम् ॥20॥

केतु मे से उत्पन्न अन्य केतु दिखलाई पडे तो क्षुधा शस्त्र, रोग, विघ्न आदि से पीडित प्रजा क्षय को प्राप्त होती है ॥20॥

एते च केतव सर्वे धूमकेतुसम फलम् ।
विचार्य वीथिभिश्चापि प्रभाभिश्च विशेषत ॥21॥

उपर्युक्त सभी केतु धूमकेतु के समान फल देने वाले है तथापि इनका विशेष

विचार वीथि, प्रभा और वर्ण आदि के अनुसार करना चाहिए ॥21॥

यां दिशं केतवोऽचिभिर्धूमयन्ति दहन्ति च।
तां दिशं पीडयन्त्येते क्षुधाद्यैः पीडनैर्भृशम् ॥22॥

जिस दिशा को केतु अग्निमयी किरणो के द्वारा धूमित करते हैं और जलाते हैं, वह दिशा क्षुधा, रोगादि के द्वारा अत्यन्त पीडित होती है ॥22॥

नक्षत्रं यदि वा केतुर्ग्रहं वाऽप्यथ धूमयेत्।
ततः शस्त्रोपजीवीनां[1] स्थावरं हिंसते ग्रह. ॥23॥

यदि केतु किसी नक्षत्र या ग्रह को अभिधूमित करे तो शस्त्र से आजीविका करने वाले एव स्थावरो की हिंसा होती है ॥23॥

स्थावरे धूमिते तज्ज्ञा यायिनो यात्रिधूपने[2]।
[3]शवरां भिल्लजातीनां पारसीकांस्तथैव च ॥24॥

स्थावर और यात्रियों के धूमित होने पर शवर, भिल्ल और पारसियो को पीडित होना पडता है ॥24॥

शुक्रं दीप्त्या यदि हन्याद्धूमकेतुरुपागतः।
तदा सस्यं नृपान् नागान् दैत्यान् शूरांश्च पीडयेत् ॥25॥

यदि धूमकेतु अपनी दीप्ति से शुक्र को घातित करे तो धान्य, राजा, नाग, दैत्य और शूरवीरो को पीड़ा होती है ॥25॥

शुकानां शकुनानां च वृक्षाणां चिरजीविनाम्।
शकुनि-ग्रहपीडायां फलमेतत् समादिशेत् ॥26॥

शुकुनि-ग्रह की पीड़ा मे शुक, पक्षी चिर और वृक्षो का पीड़ा कारक फल कहना चाहिए ॥26॥

शिशुमारं यदा केतुरुपागत्य प्रधूमयेत्।
तदा जलचरं तोयं वृद्धवृक्षांश्च हिंसति ॥27॥

जब केतु शिशुमार—सूंस नामक जलजन्तु को धूमित करता है तब जलचर, जल और वृद्ध वृक्षो का घात होता है ॥27॥

सप्तर्षीणामन्यतमं यदा केतुः प्रधूमयेत्।
तदा सर्वभयं विन्द्यात् ब्राह्मणानां न संशय. ॥28॥

1 जीवाश्च स्थावरांश्च स हिंसति, मु०। 2 ध्यापिनस्तथा मु०। 3. प्राप्नुवन्त्यनयान् घोरान् भयैरुग्रै प्रपीडिता मु०।

यदि केतु सप्त ऋषियों में से किसी एक को प्रधूमित करे तो ब्राह्मणों को सभी प्रकार का भय निस्सन्देह होता है ॥28॥

बृहस्पतिं यदा हन्याद् धूमकेतुरर्चार्चिभिः ।
वेदविद्याविदो वृद्धान् नृपांस्तज्ज्ञांश्च हिंसति ॥29॥

जब धूम्रकेतु अपनी तेजस्वी किरणों द्वारा बृहस्पति का घात करता है, तब वेदविद्या के पारगत वृद्ध विद्वान् और राजाओं का विनाश होता है ॥29॥

एवं शेषान् ग्रहान् केतुर्यदा हन्यात् स्वरश्मिभिः ।
ग्रहयुद्धे यदा[1] प्रोक्तं फलं तत्तु समादिशेत् ॥30॥

इस प्रकार अन्य शेष ग्रहों को अपनी किरणों द्वारा केतु घातित करे तो जो फल गृहयुद्ध का बतलाया गया है, वही कहना चाहिए ॥30॥

नक्षत्रे पूर्वदिग्भागे यदा केतु. प्रदृश्यते ।
तदा देशान् दिशाग्रामं भञ्जन्ते पापदा नृपाः ॥31॥

यदि पूर्व दिग्भागवाले नक्षत्र मे केतु का उदय दिखलायी पडे तो पापी राजा देश, दिशा और ग्राम का विनाश करता है ॥31॥

बंगानंगान् कलिंगांश्च मगधान् काशनन्दनान् ।
पट्टचावांश्च कौशाम्बीं धेणुसारं सदाहवम् ॥32॥
तोसलिंगान् सुलान् नेद्रान् माकन्दामलदांस्तथा ।
कुनटान् सियलान् महिषान् माहेन्द्रं पूर्वदक्षिण: ॥33॥
वेणान् विदर्भमालांश्च अश्मकांश्चैव छर्वणान् ।
द्रविडान् वैदिकान् दाद्रेकलांश्च दक्षिणापथे ॥34॥
कोंकणान् दण्डकान् भोजान् गोमान् [2]सूर्यारकाञ्चनम् ।
किष्किन्धान् वनवासांश्च लंकां हन्यात् स नैर्ऋतः ॥35॥

बग, अग, कलिंग, मगध, काश, नन्द, पट्ट, कौशाम्बी, घेणुसार, तोस, लिंग, सुल, नेद्र, माकन्द, मालद, कुनट, सियल, महिष, माहेन्द्र, वेण, विदर्भ, माल और दक्षिणापथ के अश्मक, छर्वण, द्रविड, वैदिक, दाद्रेकल, कोकण, दडक, भोज, गोमा, सूर्पारि, कंचन, किष्किन्धा, वनवास और लका इन देशों का विनाश उपर्युक्त प्रकार का केतु करता है ॥32-35॥

1. तदा मु० । 2 सूर्परिकंचनम् मु० ।

अंगान् सौराष्ट्रान्[1] समुद्रान् भरुकच्छावसेरकान् ।
शूद्रान् हृषिजलरुहान् केतुर्हन्याद्विपथग ॥36॥

यदि विपथग—कुमार्ग स्थित केतु हो तो अग, सौराष्ट्र, समुद्र, भरुकच्छ, असेरक, शूद्र, हृषिकेश आदि देशो का विनाश करता है ॥36॥

काम्बोजान् रामगान्धारान् आभीरान् यवरच्छकान् ।
चैत्रसोत्रेयकान् सिन्धुमहामन्ययुवायुजः ॥37॥
बाह्लीकान् वीनविषयान् पर्वतांश्चाप्यदुस्वरान् ।
सौधेयं कुरुवैदेहान् केतुर्हन्याद्युत्तरान् ॥38॥

केतु उत्तर दिशा मे स्थित कम्बोज, रामगान्धार, आभीर, यवरच्छक, चैत्र-सौत्रेय, सिन्धु, बाह्लीक, वीनविषय, पहाडी प्रदेश, सौन्धेय, कुरु, विदेह आदि देशो का घात करता है ॥37-38॥

चर्म्मासुवर्णकलिगान् किरातान् बर्बरान् द्विजान् ।
वैविस्तमिपुलिन्दांश्च हन्ति स्वात्यां[2] समुच्छ्रित ॥39॥

स्वाती नक्षत्र मे उदित केतु चर्मकार, स्वर्णकार, कलिग देशवासी, किरात, बर्बर जातियाँ, द्विज, वैदिक, भील, पुलिन्द आदि जातियो का वध होता है ॥39॥

सदृशाः केतवो हन्युस्तासु मध्ये वधं वदेत् ।
व्याधिं शस्त्रं क्षुधां मृत्युं परचक्रं च निर्दिशेत् ॥40॥

सदृश केतु घात करते है तथा व्याधि, शस्त्र, क्षुधा, मृत्यु और परशासन की सूचना देते है ॥40॥

न काले नियता [3]केतु. न नक्षत्रादिकस्तथा ।
आकस्मिको भवत्येव कदाचिदुदितो ग्रह. ॥41॥

केतु के उदयास्त का समय निश्चित नही है और नक्षत्र, दिशा आदि भी अनिश्चित ही हैं । अकस्मात् कदाचित् ग्रह का उदय हो जाता है ॥41॥

षट्त्रिंशत् तस्य वर्षाणि प्रवासः परम स्मृतः ।
मध्यम सप्तविंशं तु जघन्यस्तु त्रयोदश ॥42॥

केतु का 36 वर्ष का उत्कृष्ट प्रवास, 27 वर्ष का मध्यम प्रवास और तेरह वर्ष का जघन्य प्रवास होता है ॥42॥

1 सुराष्ट्रान् मु० । 2 सात्या मु० । 3. वेणु मु० ।

एते प्रयाणा[1] दृश्यन्ते येऽन्ये तीव्रभयावृते ।
प्रवासं शुक्रवच्चास्य विन्द्यादुत्पातिकं महत् ॥43॥

उक्त प्रयाण या भय के अतिरिक्त अन्य प्रयाण केतु के दिखलायी पडते हैं। शुक्र के समान केतु का प्रवास भी अत्यन्त उत्पात कारक होता है ॥43॥

धूमध्वजो धूमशिखो धूमार्चिर्धूमतारक. ।
विकेशी विशिखश्चैव मयूरो विद्रुमस्तकः ॥44॥

महाकेतुश्च श्वेतश्च केतुमान् केतुवाहन ।
उल्काशिखश्च जाज्वल्य· प्रज्वाली चाम्बरीषक.[2] ॥45॥

हेन्द्रस्वरो हेन्द्रकेतु शुक्लवासोऽन्यदन्तकः ।
विद्युत्समो विद्युल्लतो विद्युद्विद्युत्स्फुलिंगकः ॥46॥

चिक्षणो ह्यरुणो गुल्म. कबन्धो ज्वलितांकुरः ।
तालीश. कनकश्चैव विक्रान्तो मांसरोहित· ॥47॥

वैवस्वतो धूममाली महार्चिश्च विधूमित ।
दारुणाः केतवो ह्येते भयमिच्छन्ति दारुणम् ॥48॥

धूमध्वज, धूमशिख, धूमार्चि, धूमतारक, विकेशी, विशिख, मयूर, विद्रुमस्तक, महाकेतु, श्वेत, केतुमान्, केतुवाहन, उल्काशिख, जाज्वल्य, प्रज्वाली, अम्बरीषक, हेन्द्रस्वर, हेन्द्रकेतु, शुक्लवास, अन्यदन्तक, विद्युत्सम, विद्युल्लत, विद्युत्, विद्युत्स्फुलिंगक, चिक्षण, अरुण, गुल्म, कबन्ध, ज्वलिताकुर, तालीश, कनक, विक्रान्त, मासरोहित, वैवस्वत, धूममाली, महार्चि, विधूमित और दारुण ये केतु दारुण भय उत्पन्न करने वाले है ॥44-48॥

जलदो जलकेतुश्च जलरेणुसमप्रभः ।
रूक्षो वा जलवान् शीघ्रं विप्राणां भयमाविशेत् ॥49॥

जलद, जलकेतु, जलरेणु, रूक्ष, जलवान् केतु शीघ्र ही ब्राह्मणो को भय का निर्देश करता है ॥49॥

शिखी शिखण्डी विमलो विनाशी धूमशासन. ।
विशिखानः शतार्चिश्च शालकेतुरलक्तकः ॥50॥
घृतो[3] घृतार्चिश्च्यवनश्चित्रपुष्पविदूषणः ।
विलम्बी विषमोऽग्निश्च वातको हसनः शिखी ॥51॥

---

1 प्रायेण मु० । 2 वाम्बरीषक मु० । 3 घृणो मु० ।

कुटिल: कड्बखिलंग: कुचित्रगोऽथ निश्चयी।
नामानि लिखितानि[1] च येषां नोक्तं तु लक्षणम् ॥52॥

शिखी, शिखण्डी, विमल, विनाशी, धूमशासन, विशिखान, शतार्चि, शालकेतु अलक्तक, घृत, घृतार्चि, च्यवन, चित्रपुष्प, विदूषण, विलम्बी, विषम, अग्नि, वातकी हसन, शिखी, कुटिल, कड्बखिलंग, कुचित्रग इत्यादि केतुओं के नाम लिखे गये हैं, जिनके लक्षण का निरूपण नहीं किया गया है ॥50-52॥

येऽन्तरिक्षे जले भूमौ गोपुरेऽट्टालके गृहे।
वस्त्राभरण-शस्त्रेषु ते उत्पाता न केतव: ॥53॥

जो केतु आकाश, जल, भूमि, गोपुर, अट्टारी, घर, वस्त्र, आभरण और शस्त्र मे दिखलायी पडते हैं, वे उत्पात नही करते ॥53॥

दीक्षितान् [2]अर्हद्देवांश्च आचार्यांश्च तथा गुरून्।
पूजयेच्छान्तिपुष्ट्यर्थं पापकेतुसमुत्थिते ॥54॥

पाप केतुओ की शान्ति के लिए मुनि—आचार्य, गुरु, दीक्षित साधु और तीर्थंकरो की पूजा करनी चाहिए ॥54॥

पौरा जानपदा राजा श्रेणीनां[3] प्रवरा: नरा:।
[4]पूजयेत् सर्वदानेन पापकेतु: समुत्थिते ॥55॥

पुरवासी, नागरिक, राजा, ब्राह्मण, श्रेष्ठ व्यापारी आदि व्यक्तियों को दान-पूजा का कार्य अवश्य करना चाहिए। अशुभ केतु दान-पूजा द्वारा प्रीति को प्राप्त होता है ॥55॥

यथा हि बलवान् राजा सामन्तै: सारपूजित:।
नात्यर्थं बाध्यते तत्तु तथा केतु: सुपूजित: ॥56॥

जिस प्रकार बलवान् राजा सामन्तो के द्वारा सेवित होने पर शान्त रहता है किसी भी प्रकार की बाधा नही पहुँचाता, उसी प्रकार दुष्ट केतु भी जिस पाप के उदय से कष्ट पहुँचाता है, उस पाप की शान्ति भगवान् की पूजा से हो जाती है, वह पाप कष्ट नही पहुंचाता है ॥56॥

सर्पदष्टो[5] यथा मन्त्रैरगदैश्च चिकित्स्यते।
केतुदष्टस्तथा लोकैर्दान[6]जापैश्चिकित्स्यते ॥57॥

1 रक्तैश्च मु०। 2 पितृदेवांश्च विप्रान् भूतान् वनीपकान् मु०। 3 विप्राश्च वणिजो नरा.। 4 दान-पूजां ध्रुव कुर्युः केतो प्रीतिकरोऽन्यत मु०। 5 सर्पो दष्टो यदा मु०। 6 -जपै मु०।

जिस प्रकार सर्प के द्वारा काटा गया व्यक्ति मन्त्र और औषधि से स्वास्थ्य लाभ करता है, उसकी चिकित्सा मन्त्र और औषधि है, उसी प्रकार दुष्ट केतु की चिकित्सा दान-पूजा है। तात्पर्य यह है कि अशुभ केतु पापोदय से प्रकट होता है, पाप शान्त होने पर अशुभ केतु स्वयमेव शान्त हो जाता है। गृहस्थ के लिए पाप शान्ति का उपाय जप-तप के अलावा दान-पूजन ही है ॥57॥

यः केतुचारमखिलं[1] यथावत् पठन्ति[2] युक्तं श्रमणः समेत्य।
स केतुदग्धांस्त्यजते हि देशान् प्राप्नोति पूजां च नरेन्द्रमूलात्॥58॥

जो बुद्धिमान् श्रमण—मुनि समस्त केतुचार को यथावत् अध्ययन करता है वह केतु के द्वारा पीड़ित प्रदेशो का त्यागकर अन्यत्र गमन करता है, और राजाओं से पूजा प्रतिष्ठा प्राप्त करता है ॥58॥

इति नैर्ग्रन्थे भद्रबाहुके निमित्ते एकविंशतितमोऽध्यायः ॥21॥

विवेचन—केतुओं के भेद और स्वरूप—केतु मूलतः तीन प्रकार के हैं—दिव्य, अन्तरिक्ष और भौम। ध्वज, शस्त्र, गृह, वृक्ष, अश्व और हस्ती आदि मे जो केतुरूप दर्शन होता है, वह अन्तरिक्ष केतु; नक्षत्रों में जो दिखलायी देता है उसे दिव्यकेतु है और इन दोनो के अतिरिक्त अन्य रूक्ष भौमकेतु हैं। केतुओ की कुल सख्या एक हजार या एक सौ एक है। केतु का फलादेश, उसके उदय, अस्त, अवस्थान, स्पर्श और धूम्रता आदि के द्वारा अवगत किया जाता है। केतु जितने दिन तक दिखलायी देता है, उतने मास तक उसके फल का परिपाक होता है। जो केतु निर्मल, चिकना, सरल, रुचिर और शुक्लवर्ण होकर उदित होता है, वह सुभिक्ष और सुखदायक होता है। इसके विपरीत रूपवाले केतु शुभदायक नही होते, परन्तु उनका नाम धूमकेतु होता है। विशेषतः इन्द्रधनुष के समान अनेक रंगवाले अथवा दो या तीन चोटी वाले केतु अत्यन्त अशुभकारक होते हैं। हार, मणि या सुवर्ण के समान रूप धारण करने वाले और चोटीदार केतु यदि पूर्व या पश्चिम मे दिखलायी दें तो सूर्य से उत्पन्न कहलाते हैं और इनकी संख्या पच्चीस है। तोता, अग्नि, दुपहरिया का फूल, लाख या रक्त के समान जो केतु अग्निकोण में दिखलायी दें, तो वे अग्नि से उत्पन्न हुए माने जाते हैं और इनकी संख्या पच्चीस है। पच्चीस केतु टेढ़ी चोटी वाले, रूखे और कृष्णवर्ण होकर दक्षिण में दिखलाई पड़ते हैं, ये यम से उत्पन्न हुए माने गये हैं। इनके उदय होने से मारी पड़ती है। दर्पण के समान गोल आकार वाले, शिखा रहित, किरण युक्त और सजल तेल के समान कान्ति वाले जो बाईस केतु ईशान दिशा में दिखलायी पड़ते हैं, वे पृथ्वी

1 निखिल मु०। 2 पठेत् सुयुक्त मु०।

से उत्पन्न हुए हैं। इनके उदय से दुर्भिक्ष और भय होता है। चन्द्रकिरण, चाँदी, हिम, कुमुद या कुन्दपुष्प के समान जो तीन केतु हैं, ये चन्द्रमा के पुत्र हैं और उत्तर दिशा मे दिखलाई देते हैं। इनके उदय होने से सुभिक्ष होता है। ब्रह्मदण्ड नामक युगान्तकारी एक केतु ब्रह्मा मे उत्पन्न हुआ है। यह तीन चोटी वाला और तीन रग का है, इसके उदय होने की दिशा का कोई नियम नही है। इस प्रकार कुल एक सौ एक केतु का वर्णन किया गया है। अवशेष 899 केतुओ का वर्णन निम्न प्रकार है—

शुक्रतनय नामक जो चौरासी केतु है, वे उत्तर और ईशान दिशा मे दिखलायी पडते हैं, ये बृहत्—शुक्लवर्ण, तारकाकार, चिकने और तीव्र फल युक्त होते है। शनि के पुत्र साठ केतु है, ये कान्तिमान्, दो शिखा वाले और कनक सज्ञक हैं, इनके उदय होने से अतिकष्ट होता है। चोटीहीन, चिकने, शुक्लवर्ण, एक तारे के समान दक्षिण दिशा के आश्रित पैंसठ विकच नामक केतु, बृहस्पति के पुत्र है। इनका उदय होने स पृथ्वी म लोग पापी हो जाते हैं। जो केतु साफ दिखलायी नही देते –सूक्ष्म, दीर्घ, शुक्लवर्ण, अनिश्चित दिशावाले तस्कर सज्ञक है। ये बुध क पुत्र कहलाते है। इनकी सख्या 51 है और ये पाप फल वाले है। रक्त या अग्नि क समान जिनका रग है, जिनकी तीन शिखाएँ है, तारे के समान है, इनकी गिनती साठ है। ये उत्तर दिशा मे स्थित है तथा कौकुम नामक मगल के पुत्र है, ये सभी पाप फल देने वाले है। तामसधीस नामक तैंतीस केतु, जो राहु के पुत्र है तथा चन्द्रसूर्य गत होकर दिखलायी देते हैं। इनका फल अत्यन्त शुभ होता है। जिनका शरीर ज्वाला की माला से युक्त हो रहा है, ऐम एक सौ बीस केतु अग्नि विश्वरूप होते हैं। इनका फल बनत हुए कार्यो को बिगाडना, कष्ट पहुँचाना आदि है। श्यामवर्ण, चमर के समान व्याप्त चिराग वाल और पवन से उत्पन्न केतुओ की सख्या सतहत्तर है। इनके उदय होने से भय आतक और पाप का प्रसार होता है। तारापुज के समान आकार वाले प्रजापति युक्त आठ केतु है, इनका नाम गयक है। इनके उदय होने से क्रान्ति का प्रसार होता है। विश्व मे एक नया परिवर्तन दिखलायी पडता है। चौकोर आकार वाले ब्रह्म सन्तान नामक जो केतु है, उनकी सख्या दो सौ चार है। इन केतुओ का फल वर्षाभाव और अन्नाभाव उत्पन्न करना है। लता के गुच्छे के समान जिनका आकार है, ऐसे बत्तीस केक नामक जो केतु हैं, वे वरुण के पुत्र है। इनके उदय होने से जलाभाव, जलजन्तुओ को कष्ट एव जल से आजीविका करने वाले कष्ट प्राप्त करत है। कबन्ध के समान आकार वाले छियानबे कबन्ध नामक केतु हैं, जो कालयुक्त कहे गये है। ये अत्यन्त भयक र दु खदायी और कुरूप है। बडे-बडे एक तारेदार नौ केतु है, ये विदिश समुत्पन्न है। इनका उदय भी कष्टकर होता है। मथुरा, सूरसेन और विदर्भ नगरी के लिए उक्त केतु अशुभाकरक होता है।

केतुओ की संख्या का योग निम्न प्रकार है—

25 + 25 + 25 + 22 + 3 + 1 = 101, 84 + 60 + 65 + 51 + 60 + 33 + 120 + 77 + 8 + 204 + 32 + 96 + 9 = 899; इस प्रकार कुल 899 + 101 = 1000

जो केतु पश्चिम दिशा मे उदय होते हैं, उत्तर दिशा मे फैलते हैं, बडे-बडे स्निग्धमूर्ति हैं उनको वसाकेतु कहते हैं, इनके उदय होने से मारी पडती है और सुभिक्ष होता है। सूक्ष्म, या चिकने वर्ण के केतु उत्तर दिशा से आरम्भ होकर पश्चिम तक फैलते है, उनके उदय से क्षुधाभय, उलट-पुलट और मारी फैलती है। अमावस्या के दिन आकाश के पूर्वार्द्ध मे सहस्ररश्मि केतु दिखलायी देता है, उसका नाम कपाल केतु है। इसके उदय होने से क्षुधा, मारी, अनावृष्टि और रोगभय होता है। आकाश के पूर्व दक्षिण भाग मे शूल के अग्रभाग के समान कपिश, रूक्ष, ताम्रवर्ण की किरणो से क्षुब्ध जो केतु आकाश के तीन भाग तक गमन करता है, उसको रौद्र केतु कहते है, इसका फल कपाल केतु के समान है। जो धूम्रकेतु पश्चिम दिशा मे उदय होता है, दक्षिण की ओर एक अगुल ऊँची शिखा करके युक्त होता है और उत्तर दिशा की तरफ क्रमानुसार बढता है, उसको चलकेतु कहते है। यह चलकेतु क्रमश· दीर्घ होकर यदि उत्तर ध्रुव, सप्तर्षि मडल या अभिजित् नक्षत्र को स्पर्श करता हुआ आकाश के एक भाग में जाकर दक्षिण दिशा मे अस्त हो जाय, तो प्रयाग से लेकर अवन्ती तक के प्रदेश में दुर्भिक्ष, रोग एव नाना प्रकार के उपद्रव होते है। मध्यरात्रि में आकाश के पूर्वभाग मे दक्षिण के आगे जो केतु दिखलायी दे, उसको धूमकेतु कहते है। जिस केतु का आकार गाडी के जुए के समान है, वह युग परिवर्तन के समय सात दिन तक दिखलायी पडता है। धूमकेतु यदि अधिक दिनो तक दिखलायी दे तो दश वर्ष तक शस्त्र-प्रकोप लगातार बना रहता है और नाना प्रकार के संताप प्रजा को देता रहता है। श्वेत नामक केतु यदि जटा के समान आकार वाला, रूखा, कपिशवर्ण और आकाश के तीन भाग तक जाकर लौट आवे तो प्रजा का नाश होता है। जो केतु धूम्रवर्ण की चोटी से युक्त होकर कृत्तिका नक्षत्र को स्पर्श करे, उसको रश्मि-केतु कहते हैं। इसका फल श्वेत नामक केतु के समान है। ध्रुव नामक एक प्रकार का केतु है इसका आकार, वर्ण, प्रमाण स्थिर नही है। यह दिव्य, अन्तरिक्ष और भौम तीन प्रकार का होता है। यह स्निग्ध और अनियत फल देता है। जिस केतु की कान्ति कुमुद के समान हो, चोटी पूर्व की ओर फैल रही हो, उसे कुमुद केतु कहते है। यह बराबर दस वर्ष तक सुभिक्ष देने वाला है। जो केतु सूक्ष्म तारे के समान आकार वाला हो और पश्चिम दिशा से तीन घटो तक लगातार दिखलायी दे उसका नाम मणिकेतु है। स्तन पर दबाव देने से जिस प्रकार दूध की धारा निकलती है, उसी प्रकार जिसकी किरणें छिटकती हैं, यह केतु उसी प्रकार

का है। इस केतु के उदय से साढ़े चार मास तक सुभिक्ष होता है तथा छोटे-बड़े सभी प्राणियों को कष्ट होता है। जिस केतु की अन्य दिशाओं में ऊँची शिखा हो तथा पिछले भाग मे चिकना हो, वह जलकेतु कहलाता है। इसके उदय होने से नौ महीने तक शान्ति और सुभिक्ष रहता है। सिंह की पूँछ के समान दक्षिणावर्त शिखा-वाला, स्निग्ध, सूक्ष्मतारा युक्त पूर्व दिशा मे रात मे दिखलायी देने वाला भवकेतु है। यह भवकेतु जितने मुहूर्त तक दिखलायी देता है, उतने मास तक सुभिक्ष होता है। यदि रूक्ष होता है, तब मरणान्त कराने वाला माना जाता है। फुब्वारे के समान किरण वाला, मृणाल के समान गौरवर्ण केतु पश्चिम दिशा मे रात भर दिखलायी दे तो सात वर्ष तक हर्ष सहित सुभिक्ष होता है। जो केतु आधी रात के समय तक शिखासव्य, अरुण की-सी कान्तिवाला, चिकना दिखलायी देता है, उसे आवर्त कहते है। यह केतु जितने क्षण तक दिखलायी देता है उतने मास तक सुभिक्ष रहता है। जो धूम्र या ताम्रवर्ण की शिखा वाला भयकर है और आकाश के तीन भाग तक को आक्रमण करता हुआ शूल के अग्र भाग के समान आकार वाला होकर सन्ध्याकाल मे पश्चिम की ओर दिखलायी दे उसे सवर्त केतु कहते है। यह केतु जितने मुहूर्त तक दिखलायी देता है, उतने वर्ष तक शस्त्राघात से जनता को कष्ट होता है। इस केतु के उदय काल मे जिसका जन्म-नक्षत्र आक्रान्त रहता है, उसे भी कष्ट होता है। जिस-जिस नक्षत्र को केतु आधूमित करे या स्पर्श करे, उस-उस नक्षत्र वाले देश और व्यक्तियो को पीडा होती है। यदि केतु की शिखा उल्का से भेदित हो तो शुभफल, सुवृष्टि एव सुभिक्ष होता है।

केतुओं का विशेष फल

जलकेतु पश्चिमाग्र शिखा वाला होता है। स्निग्ध केतु के अस्त होने मे जब नौ महीने समय शेष रह जाता है, तब यह पश्चिम मे उदय होता है। यह नौ महीने तक सुभिक्ष, क्षेम और आरोग्य करता है तथा अन्य ग्रहो के सब दोषो को नष्ट करता है।

ऊर्मिशीतकेतु—जलकेतु के कर्मान्त गति मे आगे 18 वर्ष और 14 वर्ष के अन्तर पर ये केतु उदय होते हैं। ऊर्मि, शंख, हिम, रक्त, कुक्षि, काम, विसर्पण और शीत ये आठ अमृत से पैदा हुए सहज केतु हैं। इनके उदय होने से सुभिक्ष और क्षेम होता है।

भटकेतु और भवकेतु—ऊर्मि आदि शीत पर्यन्त के आठ केतुओ के चार के समाप्त हो जाने पर तारा के रूप एक रात मे भटकेतु दिखायी देता है। यह भटकेतु पूर्व दिशा मे दाहिनी ओर घूमी हुई बन्दर की पूँछ की तरह शिखा वाला, स्निग्ध और कृत्तिका के गुच्छे की तरह मुख्य तारा के प्रमाण का होता है। यह जितने मुहूर्त्त तक स्निग्ध दीखता रहता है उतने महीनो तक सुभिक्ष करता है। रूक्ष होगा

तो प्राणों का अन्त करने वाला और रोग पैदा करने वाला होगा।

औद्दालक केतु, श्वेत केतु, ककेतु—औद्दालक और श्वेत केतु इन दोनों का अग्रभाग दक्षिण की ओर होता है और अर्द्धरात्रि में इनका उदय होता है। ककेतु प्राची-प्रतीची दिशा में एक साथ युगाकार से उदय होता है। औद्दालक और श्वेतकेतु सात रात तक स्निग्ध दिखायी देते हैं। ककेतु कभी अधिक भी दिखता रहता है। वे दोनों स्निग्ध होने पर 10 वर्ष तक शुभ फल देते हैं और रूक्ष होने पर शस्त्र आदि से दु ख देते है। उद्दालक केतु एक सौ दस वर्ष तक प्रवास में रहकर भटकेतु की गति के अन्त में पूर्व दिशा में दिखायी देता है।

पद्मकेतु—श्वेत केतु के फल के अन्त में श्वेत पद्मकेतु का उदय होता है। पश्चिम मे एक रात दिखायी देने पर यह सात वर्ष तक आनन्द देता रहता है।

काश्यप श्वेत केतु—काश्यप श्वेतकेतु तो रूक्ष, श्याव और जटा की-सी आकृति का होता है। यह आकाश के तीन भाग को आक्रमण करके बायी ओर लौट जाता है। यह इन्द्राश शिखी 115 वर्ष तक प्रवासित रहकर सहज पद्मकेतु की गति के अन्त मे दिखायी देता है। यह जितने महीने दिखायी दे उतने ही वर्ष सुभिक्ष करता है। किन्तु मध्य देश के आर्यों का और औदीच्यो का नाश करता है।

आवर्त्त केतु—श्वेतकेतु के समाप्त होने पर पश्चिम मे अर्द्धरात्रि के समय शंख की आभावाला आवर्त्तकेतु उदित होता है। यह केतु जितने मुहूर्त्त तक दिखायी दे, उतने ही महीने सुभिक्ष करता है। यह सदा ससार में यज्ञोत्सव करता है।

रश्मि केतु—काश्यप श्वेतकेतु के समान यह रश्मि केतु फल देता है। यह कुछ धूम्रवर्ण की शिखा के साथ कृत्तिका के पीछे दिखायी देता है। विभावसु से पैदा हुआ यह रश्मि केतु सौ वर्ष प्रोषित रहकर आवर्त्त केतु की गति के अन्त में कृत्तिका नक्षत्र के समीप दिखायी देता है।

वसाकेतु, अस्थिकेतु, शस्त्रकेतु—वसाकेतु अत्यन्त स्निग्ध, सुभिक्ष और महामारीप्रद होता है। यह 130 वर्ष प्रवासित रहकर उत्तर की ओर लम्बा होता हुआ उदित होता है। वसाकेतु के समान अस्थिकेतु रूक्ष हो तो क्षुद् भयावह होती है (भुखमरी पड़ती है)। पश्चिम मे वसाकेतु की समानता का दीखा हुआ शस्त्रकेतु महामारी करता है।

कुमुदकेतु—कुमुद की आभावाला, पूर्व की तरफ शिखा वाला, स्निग्ध और दुग्ध की तरह स्वच्छ कुमुदकेतु पश्चिम मे वसाकेतु की गति के अन्त में दिखायी देता है। एक ही रात मे दिखायी दिया हुआ यह सुभिक्ष और दस वर्ष तक सुहृद्भाव पैदा करता है, किन्तु पाश्चात्य देशों मे कुछ रोग उत्पन्न करता है।

कपाल किरण—कपाल केतु प्राची दिशा मे अमावस्या के दिन उदय हुआ आकाश के मध्य मे धूम्र किरणो की शिखावाला होकर रोग, वृष्टि, भूख और

मृत्यु को देता है। यह 125 वर्ष प्रवास में रहकर अमृतोत्पन्न कुमुद केतु के अन्त मे तीन पक्ष से अधिक उदय मे रहता है। जितने दिन तक यह दीखता रहता है उतने ही महीनो तक इसका फल मिलता है। जितने मास और वर्ष तक दीखता है, उससे तीन पक्ष अधिक फल रहता है।

मणिकेतु—यह मणिकेतु दूध की धारा के समान स्निग्ध शिखावाला श्वेत रग का होता है। यह रात्रि भर एक प्रहर तक सूक्ष्म तारा के रूप मे दिखायी देता है। कपाल केतु की गति के अन्त मे यह मणिकेतु पश्चिम दिशा मे उदित होता है और उस दिन से साढ़े चार महीने तक सुभिक्ष करता है।

कलिकिरण रौद्र केतु—(किरण)—कलिकिरण रौद्रकेतु वैश्वानर बीथी के पूर्व की ओर उदित होकर 30 अश ऊपर चढकर फिर अस्त हो जाता है। यह 300 वर्ष 9 महीने तक प्रवास मे रहकर अमृतोत्पन्न मणिकेतु की गति के अन्त मे उदित होता है। इसकी शिखा तीक्ष्ण, रूखी, धूमिल, ताँबे की तरह लाल, शूल की आकृति वाली और दक्षिण की ओर झुकी हुई होती है। इसका फल तेरहवे महीने होता है। जितने महीने यह दिखायी देता है उतने ही वर्ष तक इसका भय समझना चाहिए। उतने वर्षों तक भूख, अनावृष्टि, महामारी आदि रोगो से प्रजा को दु:ख होता है।

संवर्त्तकेतु—यह सवर्त्तकेतु 1008 वर्ष तक प्रवास मे रहकर पश्चिम मे सायकाल के समय आकाश के तीन अशो का आक्रमण करके दिखायी देता है। धूम्र वर्ण के शूल की-सी कान्ति वाला, रूखी शिखावाला यह भी रात्रि मे जितने मुहूर्त तक दिखायी दे उतने ही वर्ष तक अनिष्ट करता है। इसके उदय होने से अवृष्टि, दुर्भिक्ष, रोग, शस्त्रो का कोप होता है और राजा लोग स्वचक्र और पर-चक्र से दुःखी होते हैं। यह सवर्त केतु जिस नक्षत्र मे उदित होता है और जिस नक्षत्र मे अस्त होता है तथा जिसे छोडता है अथवा जिसे स्पर्श करता है उसके आश्रित देशो का नाश हो जाता है।

ध्रुवकेतु—यह ध्रुवकेतु अनियत गति और वर्ण का होता है। सभी दिशाओ मे जहाँ-तहाँ नाना आकृति का दीख पडता है। द्यु, अन्तरिक्ष का भूमि पर स्निग्ध दिखायी दे तो शुभ और गृहस्थो के गृहांगण में तथा राजाओ के, सेना के किसी भाग में दिखायी देने से विनाशकारी होता है।

अमृतकेतु—जल, भट, पद्म, आवर्त्त, कुमुद, मणि और संवर्त्त—ये सात केतु प्रकृति से ही अमृतोत्पन्न माने जाते हैं।

दुष्टकेतु फल—जो दुष्ट केतु हैं वे क्रम से अश्विनी आदि 27 नक्षत्रो मे गये हुए देशो के नरेशो का नाश करते है। विवरण अगले पृष्ठ पर देखें।

27 नक्षत्रों के अनुसार दुष्ट केतुओं का घातक फल

नक्षत्र	देश	नक्षत्र	देश
अश्विनी	अश्मक देश घातक	स्वाती	कम्बोज (कश्मीर) का घातक
भरणी	किरात—भीलो का घातक	विशाखा	अवध का घातक
कृत्तिका	उडीसा प्रदेश का घातक	अनुराधा	पुण्ड्र (मिथिला का क्षेत्र) का घातक
रोहिणी	शूरसेन का घातक	ज्येष्ठा	कान्यकुब्ज (कन्नौज) का घातक
मृगसिर	उशीनर (गन्धार) का घातक	मूल	मद्रक तथा आन्ध्र का घातक
आर्द्रा	जलजा जीव (तिरहुत प्रान्त) घातक	पूर्वाषाढ	काशी का घातक
पुनर्वसु	अश्मक का घातक	उत्तराषाढ	अर्जुनायक, यौधेय, शिवि एव चेदि घातक
पुष्य	मगध ,, ,,	श्रवण	कैकेय (सतलज के पीछे और व्यास के आगे का प्रान्त) का घातक
आश्लेषा	असिक ,, ,,		
मघा	अग (वैद्यनाथ से भुवनेश्वर तक) का घातक	धनिष्ठा	पचनद (पजाब) ,,
		शतभिषा	सिंहल (सीलोन) ,,
पूर्वाफाल्गुनी	पाण्ड्य (दिल्ली प्रदेश) का घातक	पूर्वा भा०	बग (बंगाल प्रान्त) ,,
उत्तरा फा०	अवन्ति (उज्जैन प्रान्त) ,,	उत्तरा भा०	नैमिष ,,
हस्त	दण्डक (नासिक पचवटी) ,,	रेवती	किरात (भूटान और आसाम के क्षेत्र का घातक
चित्रा	कुरुक्षेत्र का घातक		

जितने दिनों तक ये दीखते हैं, उतने ही महीनों तक और जितने महीनों तक दीखें उतने ही वर्षों तक इनका फल मिलता है। जब ये दीखें तो उसके तीन पक्ष आगे फल देते हैं। जिन केतुओं की शिखा उल्का से ताडित हो रही हो वे केतु हूण, अफगान, चीन और चोल से अन्यत्र देशों में श्रेयस्कर होते हैं। जो केतु शुक्ल, स्निग्धतनु, ह्रस्व, प्रसन्न, थोड़े समय ही दीखने वाला सीधा हो और जिसके उदित होने से वृष्टि हुई हो वह शुभ फलदायी होता है।

चार प्रकार के भूकम्प ऐन्द्र, वारुण, वायव्य और आग्नेय होते हैं, इनका कारण भी राहु और केतु का विशेष योग ही है। जब राहु से सातवें मंगल, मंगल से पाँचवें बुध और बुध से चौथे चन्द्रमा होता है, उस समय भूकम्प होता है।

स्वाती, चित्रा, उत्तराफाल्गुनी, हस्त, मृगशिरा, अश्विनी, पुनर्वसु—इन नक्षत्रो में अग्नि केतु या संवर्त केतु दिखलायी पडे तो भूकम्प होता है। पुष्य, कृत्तिका, विशाखा, पूर्वाभाद्रपद, भरणी, पूर्वाफाल्गुनी और मघा इन नक्षत्रो का आग्नेय मण्डल कहलाता है। जब कीलक या आग्नेय केतु इस मण्डल मे दिखलायी देत हैं तो भूकम्प होने का योग आता है। चल, जल, ऊर्मि, औद्दालक, पद्म और रविरश्मि केतु जब प्रकाशमान होकर किसी भी मध्यरात्रि में उदित होते हैं, तो उसके तीन सप्ताह मे भयकर भूकम्प पूर्व के देशों मे तथा हल्का भूकम्प पश्चिम के देशो में आता है। वसाकेतु और कपालकेतु यदि प्रतिपदा तिथि को रात्रि के प्रथम प्रहर में दिखलायी पडे तो भी भूकम्प आता है। भूकम्पो के प्रधान निमित्त केतुओं का उदय है। यो तो ग्रहयोग से गणित द्वारा भूकम्प का समय निकाला जाता है, किन्तु सर्वसाधारण जब भी केतुओ के उदय के निरीक्षण मात्र से, आकाशदर्शन से ही, भूकम्प का परिज्ञान कर सकता है।

द्वाविंशतितमोऽध्यायः

सर्वग्रहेश्वरः सूर्यः प्रवासमुदयं प्रति।
तस्य चारं प्रवक्ष्यामि तन्निबोधत तत्त्वतः ॥1॥

सभी ग्रहो का स्वामी सूर्य है। इसके प्रवास, उदय और चार का वर्णन करता हूँ, इन्हें यथार्थ समझना चाहिए ॥1॥

सुरश्मी रजतप्रख्य स्फटिकाभो महाद्युति ।
उदये दृश्यते सूर्यः सुभिक्षं नृपतेर्हितम् ॥2॥

यदि अच्छी किरणो वाला, रजत के समान कान्तिवाला, स्फटिक के समान निर्मल, महान् कान्तिवाला सूर्य उदय मे दिखलाई पडे तो राजा का कल्याण और सुभिक्ष होता है ॥2॥

रक्तः शस्त्रप्रकोपाय भयाय च महार्घदः ।
नृपाणामहितश्चापि स्थावराणां च कीर्तितः ॥3॥

लाल वर्ण का सूर्य शस्त्रकोप करता है, भय उत्पन्न करता है, वस्तुओ की महँगाई कराता है और स्थावर—तद्देश निवासी राजाओ का अहित कराने वाला होता है ॥3॥

पीतो लोहितरश्मिश्च व्याधि-मृत्युकरो रवि.।
विरश्मिर्धूमकृष्णाभ. क्षुधार्त्तसृष्टिरोगद ॥4॥

पीत और लोहित—पीली और लाल किरणवाला सूर्य व्याधि और मृत्यु करने वाला होता है। धूम और कृष्ण वर्ण वाला सूर्य क्षुधा-पीडा—भुखमरी और रोग उत्पन्न करने वाला होता है। (यहाँ सूर्य के उक्त प्रकार के वर्णों का प्रात काल सूर्योदय समय मे ही निरीक्षण करना चाहिए उसी का उपर्युक्त फल बताया गया है) ॥4॥

कबन्धेनाऽऽवृत. सूर्यो यदि दृश्येत प्राग् दिशि।
वंगानंगान् कलिंगांश्च काशी-कर्णाट-मेखलान् ॥5॥

मागधान् कटकालांश्च कालवक्रोष्ट्रकर्णिकान्।
माहेन्द्रसंवृतोचान्ध्रास्तथा[1] हन्याच्च भास्कर ॥6॥

यदि उदयकाल में पूर्व दिशा मे कबन्ध—धड से ढका हुआ सूर्य दिखलायी पडे तो बग, अग, कलिंग, काशी, कर्नाटक, मेखल, मगध, कटक, कालवक्रोष्ट्र, कर्णिक, माहेन्द्र, आन्ध्र आदि देशों का घात करता है ॥5-6॥

कबन्धो ताम्रपीतो वा दक्षिणेन यदा रविः।
चविलान् मलयानुड्रान् स्त्रीराज्य वनवासिकान् ॥7॥

किष्किन्धांश्च कुनाटांश्च ताम्रकर्णांस्तथैव च।
स बक-बक-कूरांश्च कुणपांश्च स हिंसति ॥8॥

---

1 महेन्द्रसंश्रितानुड्रां मु०।

जब सूर्य से दक्षिण या बायीं ओर पीतवर्ण का कबन्ध दिखलायी पड़े तो चविल मलय, उड्र, स्त्रीराज्य और वनवासी, किष्किन्धा, कुनाट, ताम्रकर्ण, वक्र-चक्र, क्रूर और कुणपों का घात करता है ॥7-8॥

अपरेण च कबन्धस्तु दृश्यते द्युतितो यदा।
युगन्धरायणं मरुत्-सौराष्ट्रान् कच्छगैरिजान् ॥9॥
कोंकणानपरान्तांश्च भोजांश्च कालजीविनः।
अपरांस्तांश्च सर्वान् वै निहन्यात् तादृशो रविः ॥10॥

यदि पश्चिम की ओर द्युतिमान् कबन्ध दिखलायी पड़े तो युगन्धरायण, मरुत्, सौराष्ट्र, कच्छ, गैरिक, कोकण, अपरान्त राष्ट्र, भोज, कालजीवी इत्यादि राष्ट्रों का घात करता है ॥9-10॥

उत्तरे उदयोऽर्कस्य कबन्धसदृशस्तदा।
[1]क्षुद्रकामालवाह्लीकान् सिन्धु-सौवीरदर्दुरान् ॥11॥
काश्मीरान् दरदांश्चैव पह्लवान् मागधांस्तथा।
साकेतान् कोशलान् काञ्चीमहिच्छत्रं च हिंसति ॥12॥

यदि कबन्ध के समान उत्तर में सूर्य का उदय हो तो वह क्षुद्रक, मालव, सिन्धु, सौवीर, दर्दुर, काश्मीर, दरद, पह्लव, मगध, साकेत, कोशल, काञ्ची और अहिच्छत्र का घात करता है ॥11-12॥

कबन्धमुदये भानोर्यदा मध्ये प्रदृश्यते।
मध्यमा मध्यसाराश्च पीड्यन्ते मध्यदेशजाः ॥13॥

यदि सूर्य के मध्य में कबन्ध का उदय दिखलायी पड़े तो मध्य देश में उत्पन्न व्यक्तियों का घात होता है ॥13॥

नक्षत्रमादित्यवर्णो यस्य दृश्येत भास्करः।
तस्य पीडा भवेत् पुंसः प्रयत्नेन शिवः स्मृतः ॥14॥

जिस व्यक्ति के नक्षत्र पर रक्तवर्ण सूर्य दिखलायी पड़ता है, उस व्यक्ति को पीडा होती है और बड़े यत्न के पश्चात् कल्याण होता है ॥14॥

स्थालीपिठरसंस्थाने सुभिक्षं विलयं[2] नृणाम्[3]।
विलतासस्तु राज्यस्य मृत्युः पिठरसंस्थिते ॥15॥

---

1 क्षुद्रकान् मालवान् हन्ति सिन्धु-सौवीर-दर्दुरान् मु०। 2. क्षुद्भय मु०। 3 नृणी मु०

यदि थाली-पिठर—गोल थाली और मूढ़े के आकार मे सूर्य उदयकाल मे दिखलायी पडे तो मनुष्यों को सुभिक्ष और धन-लाभ करानेवाला है। राज्य के लिए भी धनलाभ करानेवाला होता है। पीढा के समान सूर्य दिखलायी पडे तो मृत्युप्रद होता है ॥15॥

सुवर्णवर्णो वर्षं वा मासं वा रजतप्रभ।
शस्त्रं शोणितवत् सूर्यो दाघो वैश्वानरप्रभे ॥16॥

स्वर्ण के समान रंग का सूर्य उदयकाल मे दिखलायी पड़े या रजत के समान वर्ण का सूर्य दिखलायी पडे तो वर्ष या मास सुखमय व्यतीत होते हैं। रक्त वर्ण के समान सूर्य दिखलायी पडे तो शस्त्र पीडा और अग्नि के समान दिखलायी पडे तो दग्ध करनेवाला होता है ॥16॥

भृंगी राज्ञां विजयदः कोश-वाहनवृद्धये।
चित्रः सस्यविनाशाय भयाय च रविः स्मृतः ॥17॥

भृंगी वर्ण का रवि राजाओ के लिए विजय देने वाला, कोश और वाहन की वृद्धि करने वाला होता है। चित्रवर्ण का रवि धान्य का विनाश करता है और भयोत्पादक होता है ॥17॥

अस्तंगते यदा सूर्ये चिरं रक्ता वसुन्धरा।
सर्वलोकभयं विन्द्यात् तदा वृद्धानुशासने ॥18॥

जब सूर्य के अस्त होने पर पृथ्वी बहुत समय तक रक्तवर्ण की दिखलायी पडे तो सर्वलोक को भय होता है ॥18॥

उदयास्तमने ध्वस्ते[1] यदा वै कुरुते रविः।
महाभय तदानीके सुभिक्ष क्षेममेव च ॥19॥

उदय और अस्तकाल को जब सूर्य ध्वस्त करे तो सेना मे महान् भय होता है तथा सुभिक्ष और कल्याण होता है ॥19॥

एतान्येव तु लिंगानि पर्वण्यां चन्द्र-सूर्ययोः।
तदा राहुरिति ज्ञेयो विकारश्च न विद्यते ॥20॥

यदि चन्द्रमा और सूर्य के पूर्वकाल—पूर्णमासी या अमावस्या मे उक्त चिह्न दिखलायी पडे तो राहु समझना चाहिए, इसमे विकार नही होता है ॥20॥

---

1. ध्वस्तो मु०।

शेषमौत्पातिकं प्रोक्तं विधानं भास्करं प्रति।
ग्रहयुद्धे [1]प्रवक्ष्यामि सर्वगत्या च साधयेत् ॥21॥

अवशेष सूर्य का औत्पातिक विधान समझना चाहिए। ग्रहयुद्ध का वर्णन करूँगा, उसकी सिद्धि गति आदि से कर लेनी चाहिए ॥21॥

इति भद्रबाहुविरचिते निमित्तशास्त्र आदित्याचारो नाम
द्वाविंशतितमोऽध्यायः ॥22॥

विवेचन—पूर्वाषाढा, उत्तराषाढ़ा, श्रवण, धनिष्ठा, उत्तराभाद्रपद, रेवती, अश्विनी, भरणी, कृत्तिका, आर्द्रा, पुनर्वसु, पुष्य, आश्लेषा और मघा ये 14 नक्षत्र 'चन्द्र नक्षत्र' एव पूर्वाभाद्रपद, शतभिषा, मृगशिरा, रोहिणी, पूर्वाफाल्गुनी, उत्तराफाल्गुनी, हस्त, चित्रा, स्वाती, विशाखा, अनुराधा, ज्येष्ठा और मूल मे 13 नक्षत्र 'सूर्य नक्षत्र' कहलाते हैं। यदि सूर्य नक्षत्रों मे चन्द्रमा और चन्द्रनक्षत्रों मे सूर्य हो तो वर्षा होती है। चन्द्र नक्षत्रो में यदि सूर्य और चन्द्रमा दोनो हो तो अल्पवृष्टि होती है, किन्तु यदि सूर्य नक्षत्र पर सूर्य-चन्द्रमा दोनो हो तो वृष्टि नही होती। सूर्य नक्षत्र पर सूर्य के आने से वायु चलती है, जिससे वायु-दोष के कारण वर्षा नहीं होती। चन्द्रमा चन्द्र नक्षत्रो पर रहे तो केवल बादल आच्छादित रहते हैं, वर्षा नही होती। कर्क संक्रान्ति के दिन रविवार होने से 10 विश्वा, सोमवार होने से 20 विश्वा, मंगलवार होने से 8 विश्वा, बुधवार होने से 12 विश्वा, गुरुवार होने से 18 विश्वा, शुक्रवार होने से भी 18 विश्वा और शनिवार होने से 5 विश्वा वर्षा होती है। कर्क संक्रान्ति के दिन शनि, रवि, बुध और मंगलवार होने से अधिक वृष्टि नही होती, शेष वारो मे सुवृष्टि होती है। चन्द्रमा के जलराशि पर स्थित होने पर सूर्य कर्क राशि में आये तो अच्छी वर्षा होती है। मेष, वृष, मिथुन और मीन राशि पर चन्द्रमा के रहते हुए यदि सूर्य कर्क राशि में प्रविष्ट हो तो 100 आढक वर्षा होती है। कर्क संक्रान्ति के समय धनुष और सिंह राशि पर चन्द्रमा के होने से 50 आढक वर्षा होती है। मकर और कन्या राशि पर चन्द्रमा के रहने से 25 आढक वर्षा एवं तुला, वृश्चिक, कुम्भ और कर्कराशि पर चन्द्रमा के होने से साढ़े 12 आढक प्रमाण वर्षा होती है। कर्कराशि मे प्रविष्ट होते हुए सूर्य को यदि बृहस्पति पूर्ण दृष्टि से देखे अथवा तीन चरण दृष्टि से देखे तो अच्छी वर्षा होती है। श्रावण के महीने मे यदि कर्क संक्रान्ति के समय मेघ खूब छाये हों तो सात महीने तक सुभिक्ष होता है और अच्छी वर्षा होती है। मगल के दिन सूर्य की कर्क संक्रान्ति और शनिवार को मकर संक्रान्ति

1. च वक्ष्यामि मु०।

और शनिवार को मकर संक्रान्ति का होना शुभ नहीं है। स्वाति, ज्येष्ठा, भरणी, आर्द्रा, आश्लेषा इन नक्षत्रों के पन्द्रहवें मुहूर्त में मकर राशि या सूर्य के प्रविष्ट होने से अशुभ फल होता है। पुनर्वसु, विशाखा, रोहिणी और तीनों उत्तरा नक्षत्रों के चौथे या पाँचवें मुहूर्त्त मे सूर्य प्रवेश करे तो शुभ फल होता है। सूर्य की संक्रान्ति के दिन से ग्यारहवें, पच्चीसवें, चौथे या अठारहवें दिन अमावस्या का होना सुभिक्ष सूचक है। यदि पहली संक्रान्ति का नक्षत्र दूसरी संक्रान्ति में आवे तो शुभ फल होता है, किन्तु उस नक्षत्र से दूसरे, तीसरे, चौथे और पाँचवें नक्षत्र शुभ नहीं होते।

सूर्य की संक्रान्तियों के अनुसार फलादेश - मेष की सक्रान्ति के दिन तुला राशि का चन्द्रमा हो तो छ. महीने मे धान्य की अधिकता करता है। सभी प्रदेशों मे सुभिक्ष होता है। बंगाल और पजाब मे चावल, गेहूँ की उपज अधिक होती है। देश के अन्य सभी भागो मे भी मोटे धान्यो की उत्पत्ति अधिक होती है। मेष संक्रान्ति प्रातःकाल होने पर शुभ, मध्याह्न में होने से निकृष्ट और सन्ध्याकाल मे होने से अतिनिकृष्ट फल होता है। मेष सक्रान्ति रात्रि मे प्रविष्ट हो तो साधारणतः अशुभ फल होता है। यदि सक्रान्ति काल मे अश्विनी नक्षत्र क्रूर ग्रहों द्वारा विद्ध हो तो अशुभ फल होता है। राष्ट्र में अनेक प्रकार के उपद्रव होते हैं। वर्षा की भी कमी रहती है। मेष सक्रान्ति, कर्क सक्रान्ति और मकर सक्रान्ति का फल एक वर्ष तक रहता है। यदि ये तीनो सक्रान्तियाँ अशुभ वार, अशुभ घटियों मे आती हैं, तो देश मे नाना प्रकार के उपद्रव होते है। शनिवार को मेष संक्रान्ति पडने से जगत् मे अशान्ति रहती है। चीन और रूस मे अन्न आदि पदार्थों की बहुलता होती है। पर आन्तरिक अशान्ति इन राष्ट्रो में भी बनी रहती है।

वृष की सक्रान्ति मे वृश्चिक राशि चन्द्रमा के रहने से चार महीने तक अन्न लाभ होता है। सुभिक्ष और शान्ति रहती है। खाद्यान्नों की बहुलता सभी देशो और राष्ट्रो में रहती है। काशी, कन्नौज और विदर्भ मे राजनीतिक सघर्ष होता है। वृष की सक्रान्ति बुधवार को होने से घी के व्यापार मे लाभ होता है। शुक्रवार को वृष की सक्रान्ति हो तो रसपदार्थों की महँगी होती है। शनिवार को इस सक्रान्ति के होने से अन्न का भाव तेज होता है। मिथुन की संक्रान्ति को धनु का चन्द्रमा हो तो तिल, तैल, अन्न सग्रह करने से चौथे महीने में लाभ होता है। यदि चन्द्रमा क्रूर ग्रह सहित हो तो लाभ के स्थान में हानि होती है। कर्क की सक्रान्ति मे मकर का चन्द्रमा हो तो दुर्भिक्ष होता है। इस योग के चार महीने के उपरान्त धनिक भी निर्धन हो जाता है। सभी की आर्थिक स्थिति बिगड़ती जाती है। देश के कोने-कोने मे अन्न की आवश्यकता प्रतीत होती है। जिन राज्यो, प्रदेशो और देशो मे अच्छा अनाज उपजता है, उनमे भी अन्न की कमी हो जाने से अनेक प्रकार के कष्ट होते हैं। कन्या की संक्रान्ति होने पर मीन

के चन्द्रमा मे छत्रभग होता है। उत्तर प्रदेश, बगाल, बिहार और दिल्ली राज्य मे अनेक प्रकार के उपद्रव होते है। बम्बई और मद्रास मे अनेक प्रकार की कठिनाइयो का सामना करना पडता है। तुला की सक्रान्ति मे मेष का चन्द्रमा हो तो पाँच महीने मे व्यापार में लाभ होता है। अन्न की उपज साधारण होती है। जूट, सूत, कपास और सन की फसल साधारण होती है। अत इन वस्तुओ के व्यापार मे अधिक लाभ होता है। वृश्चिक की सक्रान्ति मे वृषराशि का चन्द्रमा हो तो तिल, तेल तथा अन्न का सग्रह करना उचित है। इन वस्तुओ के व्यापार मे अधिक लाभ होता है। धनु की सक्रान्ति और मिथुन के चन्द्रमा मे पाँच महीने तक अन्न मे लाभ होता है। मकर की सक्रान्ति मे कर्क का चन्द्रमा हो तो कुलटाओ का विनाश होता है। कपास घी, सूत मे पाँचवें मास मे भी लाभ होता है। कुम्भ की सक्रान्ति मे सिंह का चन्द्रमा हो तो चौथे महीने मे अन्न लाभ होता है। मीन की सक्रान्ति मे कन्या का चन्द्रमा होने पर प्रत्येक प्रकार के अनाज मे लाभ होता है। अनाज की कमी भी साधारणत दिखलायी पडती है किन्तु उस कमी को किसी प्रकार पूरा किया जा सकता है। जिस वार की सक्रान्ति हो, यदि उसी वार मे अमावस्या भी पडती हो तो यह खर्पर योग कहलाता है। यह योग सभी प्रकार के धान्यो को नष्ट करनेवाला है। यदि प्रथम सक्रान्ति को शनिवार हो, दूसरी को रविवार तीसरी को सोमवार चौथी को मगलवार, पाँचवी को बुध, छठी को गुरुवार, सातवी को शुक्रवार आठवी को शनिवार, नौवी को रविवार, दसवी को सोमवार, ग्यारहवी को मगलवार और बारहवी सक्रान्ति को बुधवार हो तो खर्पर योग होता है। इस योग के होने से भी धन-धान्य और जीव-जन्तुओ का विनाश होता है। यदि कार्तिक मे वृश्चिक की सक्रान्ति रविवारी हो तो श्वेत रग के पदार्थ महँगे म्लेच्छो मे रोग-विपत्ति एव व्यापारी वर्ग के व्यक्तियो को भी कष्ट होता है। चैत्र मास मे मेष की सक्रान्ति मगल या शनिवार की हो तो अन्न का भाव तज गहूँ, चने, जौ आदि समस्त धान्यो का भाव तेज होता है। सूर्य का क्रूर ग्रहो के साथ रहना या क्रूर ग्रहो से विद्ध रहना अथवा क्रूर ग्रहो के साथ सूर्य का वेध होना, वर्षा, फसल, धान्योत्पत्ति आदि के लिए अशुभ है। सूर्य यदि मृदु सज्ञक नक्षत्रो का भोग कर रहा हो, उस समय किसी शुभ ग्रह की दृष्टि सूर्य पर हो तो, इस प्रकार की सक्रान्ति जगत् मे उथल-पुथल करती है। सुभिक्ष और वर्षा के लिए यह योग उत्तम है। यद्यपि सक्रान्ति मात्र के विचार से उत्तम फल नही घटता है, अत ग्रहो का सभी दृष्टियो से विचार करना आवश्यक है।

त्रयोविंशतितमोऽध्यायः

मासे-मासे समुत्थानं चन्द्रं यो[1] पश्येत् बुद्धिमान्।
वर्ण-संस्थानं रात्रौ तु ततो ब्रूयात् शुभाशुभम्॥1॥

जो बुद्धिमान् व्यक्ति रात्रि मे प्रत्येक महीने मे चन्द्रमा के वर्ण, संस्थान, प्रमाण आदि का दर्शन करता है, उसके लिए शुभाशुभ का निरूपण करता हूँ ॥1॥

स्निग्धः श्वेतो विशालश्च पवित्रश्चन्द्रः शस्यते।
किञ्चिदुत्तरशृङ्गश्च दस्यून् हन्यात् प्रदक्षिणम् ॥2॥

स्निग्ध, श्वेतवर्ण, विशालाकार और पवित्र चन्द्रमा प्रशंसित—अच्छा माना जाता है। यदि चन्द्रमा का शृंग -किनारा कुछ उत्तर की ओर उठा हुआ हो तो दस्युओ का घात करता है ॥2॥

अश्मकान् भरतानुड्रान् काशि-कलिंगमालवान्।
दक्षिणद्वीपवासांश्च हन्यादुत्तरशृङ्गवान् ॥3॥

उत्तर शृंगवाला चन्द्रमा अश्मक, भरत, उड्र, काशी, कलिंग, मालव और दक्षिणद्वीपवासियो का घात करता है ॥3॥

क्षत्रियान् यवनान् बाह्लीन् हिमवच्छृङ्गमास्थितान्।
युगन्धर-कुरून् हन्याद् ब्राह्मणान् दक्षिणोन्नतः ॥4॥

दक्षिणोन्नतशृंग चन्द्र क्षत्रिय, यवन, बाह्लीक, हिमाचल के निवासी, युगन्धर और कुरु निवासियो तथा ब्राह्मणो का घात करता है ॥4॥

भस्माभो निष्प्रभो रूक्षः श्वेतशृङ्गोऽतिसंस्थितः।
चन्द्रमा न प्रशस्येत सर्ववर्णभयंकरः ॥5॥

भस्म के समान आभा वाला, निष्प्रभ, रूक्ष, श्वेत और अतिउन्नत शृंगवाला चन्द्रमा प्रशस्य नही है, क्योकि यह सभी वर्ण वालो को भय उत्पन्न करता है ॥5॥

शबरान् दण्डकानुड्रान् मद्रांश्च द्रविडांस्तथा।
शूद्रान् महासनान् वृत्यान् समस्तान् सिन्धुसागरान् ॥6॥
आनर्त्तान्मलकीरांश्च कोंकणान् प्रलयम्बिनः।
[2]रोमवृत्तान् पुलिन्द्रांश्च मारुश्वभ्रं च कच्छजान् ॥7॥

---

1 पश्यति मु०। 2. रामा मु०।

प्रायेण हिंसते देशानेतान् स्थूलस्तु चन्द्रमाः ।
समे श्रृंगे च विद्वेष्टी तथा यात्रां न योजयेत् ॥8॥

स्थूल चन्द्रमा शबर, दण्डक, उड्र, मन्द्र, द्रविड, शूद्र, महासन, वृत्य, सभी समुद्र, आनर्त, मलकीर, कोकण, प्रलयम्बिन, रोमवृत्त, पुलिन्द, मरुभूमि और कच्छ आदि देशो का घात करता है। यदि चन्द्रमा का समान शृंग हो तो यात्रा नही करनी चाहिए ॥6-8॥

चतुर्थी पञ्चमी षष्ठी विवर्णो विकृतः शशी।
यदा मध्येन वा याति पार्थिवं हन्ति मालवम् ॥9॥

जब चतुर्थी, पञ्चमी और षष्ठी तिथि को चन्द्रमा विकृत, बदरंग दिखलाई पड़े अथवा वह मध्य से गमन करता हो तो मालव नृप का विनाश करता है ॥9॥

काञ्चीं किरातान् द्रमिलान् शाक्यान् लुब्धांस्तु सप्तमी।
कुमारं युवराजञ्च चन्द्रो हन्यात् तथाऽष्टमी ॥10॥

सप्तमी और अष्टमी का विकृत चन्द्रमा काची, किरात, द्रमिल, शाक्य, लुब्धक एवं कुमार और युवराजो का विनाश करता है ॥10॥

नवमी मन्त्रिणश्चौरान् अध्वगान् वरसन्निभान् ।
दशमी स्थविरान् हन्यात् तथा वै पार्थिवान् प्रियान् ॥11॥

नवमी का विकृत चन्द्रमा मन्त्री, चोर, पथिक और अन्य श्रेष्ठ लोगो का तथा दशमी का विकृत चन्द्र स्थविर राजा और उनके प्रियो का विनाश करता है ॥11॥

एकादशी भय कुर्यात् ग्रामीणांश्च तथा गवाम् ।
द्वादशी राजपुरुषांश्च वस्त्रं सस्यं च पीडयेत् ॥12॥

एकादशी का विकृत चन्द्रमा ग्रामीण और गायो को भय करता है तथा द्वादशी का चन्द्रमा राजपुरुष—राजकर्मचारी, वस्त्र और अनाज का घात करता है ॥12॥

त्रयोदशी-चतुर्दश्योर्भयं शस्त्रं च मूर्च्छति।
संग्रामः संभ्रमश्चैव जायते वर्णसंकरः ॥13॥

त्रयोदशी और चतुर्दशी का विकृत चन्द्रमा भयोत्पादक, शस्त्रकोप और मूर्च्छा करता है। संग्राम—युद्ध और आकुलता व्याप्त होती है और वर्णसंकर पैदा होते हैं ॥13॥

नृपा भृत्यैर्विरुध्यन्ते राष्ट्रं चौरैर्विलुप्यते।
पूर्णिमायां हते चन्द्रे ऋक्षे वा विकृतप्रभे ॥14॥

पूर्णिमा में चन्द्रमा द्वारा घात नक्षत्र पर चन्द्रमा के स्थित होने पर अथवा विकृत प्रभा वाले चन्द्रमा के होने पर राजा और सेवकों में विरोध होता है तथा चोरों के द्वारा राष्ट्र लूटा जाता है ॥14॥

ह्रस्वो रूक्षश्च चन्द्रश्च श्यामश्चापि भयावहः।
स्निग्धः शुक्लो महान्[1] श्रीमांश्चन्द्रो नक्षत्रवृद्धये ॥15॥

ह्रस्व, रूक्ष और काला चन्द्र भयोत्पादक है तथा स्निग्ध, शुक्ल और सुन्दर चन्द्र सुखोत्पादक तथा समृद्धिकारक होता है ॥15॥

श्वेतः पीतश्च रक्तश्च कृष्णश्चापि यथाक्रमम्।
सुवर्णसुखदश्चन्द्रो विपरीतो भयावहः ॥16॥

श्वेत, पीत, रक्त और कृष्ण ब्राह्मणादि चारों वर्णों के लिए सुखद यथाक्रम होता है और सुवर्ण —सुन्दर चन्द्र सभी के लिए सुखप्रद है। इसके विपरीत चन्द्र भयावह होता है ॥16॥

चन्द्रे प्रतिपदि योऽन्यो ग्रहः प्रविशतेऽशुभः।
संग्रामो जायते तत्र सप्तराष्ट्रविनाशनः ॥17॥

यदि प्रतिपदा तिथि को चन्द्रमा मे अन्य अशुभ ग्रह प्रविष्ट हो तो भयंकर सग्राम होता है तथा सात राष्ट्रो का विनाश होता है ॥17॥

द्वितीयायां तृतीयायां गर्भनाशाय कल्पते।
चतुर्थ्यां च सुघाती च मन्दवृष्टिञ्च निर्दिशेत् ॥18॥

यदि द्वितीया, तृतीया तिथि को चन्द्रमा मे अन्य अशुभ ग्रह प्रविष्ट हो तो गर्भनाश करने वाला होता है। चतुर्थी तिथि में प्रवेश करे तो घात और मन्दवृष्टि करने वाला होता है ॥18॥

पञ्चम्यां ब्राह्मणान्[2] सिद्धान् दीक्षितांश्चापि पीडयेत्।
यवनाय धर्मभ्रष्टाय षष्ठ्यां पीडां समन्यतः ॥19॥

पञ्चमी तिथि में चन्द्रमा मे कोई अशुभ ग्रह प्रवेश करे तो ब्राह्मण, सिद्ध और दीक्षितो को पीडा तथा षष्ठी तिथि मे कोई अशुभ ग्रह प्रवेश करे तो धर्म-रहित, यवन आदि को कष्ट होता है ॥19॥

1. मही श्रीमान् मु०। 2 ब्राह्मण मु०।

[1]महाजनाश्च पीड्यन्ते क्षिप्रमेक्षुरकास्तथा।
ईतयश्चापि जायन्ते सप्तम्यां सोमपीडने ॥20॥

सप्तमी तिथि को चन्द्रमा के घातित होने पर महाधनिक, नाई, धोबी, कृषक आदि को पीडा होती है और ईतियाँ—बीमारियाँ उत्पन्न होती है ॥20॥

विवर्णपरुषश्चन्द्र स्त्रीणा राजा निषेवते।
कपिलोऽपि दक्षिणे मार्गे विन्द्यादग्निभय तथा[2] ॥21॥

किसी अन्य अशुभ ग्रह द्वारा विवर्ण और परुष स्त्रियो—रोहिणी आदि का राजा पति—चन्द्रमा सेवन किया जाय तथा कपिल—पिंगलवर्ण का चन्द्रमा दक्षिण मार्ग मे भी दिखलायी पडे तो अग्निभय होता है ॥21॥

सन्ध्याया कृत्तिका ज्येष्ठा रोहिणीं पितृदेवताम्।
चित्रा विशाखा मैत्र च चरेद् दक्षिणत शशी ॥22॥

सन्ध्या मे कृत्तिका, ज्येष्ठा, रोहिणी, मघा, चित्रा, विशाखा और अनुराधा का चन्द्रमा दक्षिण माग से विचरण करता है ॥22॥

सर्वभूतभय विन्द्यात् तथा[3] घोर तु मासिकम्।
सस्य वर्षं वर्धयते चन्द्रस्तद्वद् विपर्ययात् ॥23॥

चन्द्रमा के विपर्यय होने पर समस्त प्राणियो को भय होता है तथा धान्य और वर्षा की वृद्धि होती है ॥23॥

रेवती-पुष्ययो सोम श्रीमानुत्तरगो यदा।
महावर्षाणि कल्पन्ते तदा कृतयुगे यथा ॥24॥

जब चन्द्रमा रेवती और पुष्य नक्षत्र मे उत्तर दिशा मे गमन करता है, उस समय कृतयुग के समान महावर्ष होते हैं ॥24॥

गोवीथीमजवीथीं वा वैश्वानरपथ तथा।
विवर्ण सेवते चन्द्रस् [1]तदाऽल्पमुदक भवेत् ॥25॥

जब विवर्ण चन्द्रमा गोवीथि अजवीथि या वैश्वानर पक्ष मे गमन करता है, तब अल्प जल-वृष्टि होती है ॥25॥

गजवीथ्या नागवीथ्या सुभिक्ष क्षेममेव च।
सुप्रभे प्रकृतिस्थे च महावर्ष च निर्दिशेत ॥26॥

---

1 महाधनाश्च मु०। 2 तदा मु०। 3 तदा मु०। 4 सदा मु०।

जब सुप्रभ प्रकृतिस्थ चन्द्रमा गजवीथि, नागवीथि मे गमन करता है, तब सुभिक्ष, कल्याण और महावर्षा होती है ॥26॥

वैश्वानरपथं प्राप्ते चतुरङ्गस्तु दृश्यते।
सोमो विनाशकृल्लोके तदा वाऽग्निभयङ्करः ॥27॥

जब चतुरंग चन्द्रमा वैश्वानर पथ मे गमन करता हुआ दिखलायी पडता है तब लोक का विनाश होता है अथवा भयंकर अग्नि का प्रकोप होता है ॥27॥

अजवीथीमागते चन्द्रे क्षुत्तृषाग्निभय नृणाम्।
विवर्णो हीनरश्मिर्वा भद्रबाहुवचो यथा ॥28॥

विवर्ण या हीन रश्मिवाला चन्द्रमा अजवीथि मे गमन करता हुआ दिखलायी पडे तो मनुष्यो को क्षुधा, तृषा और अग्नि का भय रहता है, ऐसा भद्रबाहु स्वामी का वचन है ॥28॥

गोवीथ्यां नागवीथ्यां च चतुर्थ्यां दृश्यते शशी।
रोगशस्त्राणि वैराणि वर्षस्य च विवर्धयेत् ॥29॥

जब चन्द्रमा चतुर्थी तिथि मे गोवीथि या नागवीथि मे गमन करता हुआ दिखलायी पडे तब उस वर्ष रोग, शस्त्र और शत्रुता वृद्धिगत होती है ॥29॥

एरावणे चतुष्प्रस्थो महावर्ष स उच्यते।
चन्द्रः प्रकृतिसम्पन्नः सुरश्मिः श्रीरिवोज्ज्वलः ॥30॥

यदि चन्द्रमा प्रकृति सम्पन्न, सुन्दर किरण वाला, सुन्दर श्री के समान उज्ज्वल चतुष्पथ ऐरावत मार्ग मे दिखलाई पडे तो वह महावर्ष होता है ॥30॥

श्यामच्छिद्रश्च पक्षादौ यदा दृश्यते य. सितः।
चन्द्रमा रौरवं[1] घोरं नृपाणां कुरुते तदा ॥31॥

जब चन्द्रमा काला और छिद्र युक्त प्रथम पक्ष—कृष्ण पक्ष मे दिखलायी पडे तो उस समय मनुष्यो मे घोर सघर्ष होता है ॥31॥

धनुषा यदि तुल्य' स्यात् पक्षादौ दृश्यते शशी।
ब्रूयात् पराजयं पृष्ठे युद्धं[2] चैव विनिर्दिशेत् ॥32॥

यदि प्रथम पक्ष मे चन्द्रमा धनुष के तुल्य दिखलायी पडे तो पराजय होती है और पीछे युद्ध होता है ॥32॥

---

1 शैशव मु०। 2 पश्चो प्रति मु०।

वैश्वानरपथेऽष्टम्यां तिर्यक्स्थो वा भयं वदेत्[1]।
परस्परं विरुध्यन्ते नृपाः प्रायः सुवर्चसः ॥33॥

यदि अष्टमी तिथि को वैश्वानर मार्ग मे तिर्यक् चन्द्रमा हो तो शक्तिशाली, तेजस्वी राजाओ मे युद्ध होता है ॥33॥

दक्षिणं मार्गमाश्रित्य वध्यन्ते प्रवरा नराः।
चन्द्रस्तूत्तरमार्गस्थः क्षेम-सौभिक्षकारकः ॥34॥

यदि चन्द्रमा दक्षिण मार्ग मे हो तो बडे-बड़े व्यक्तियो का वध होता है, और उत्तर मार्ग मे स्थित रहने वाला चन्द्रमा क्षेम और सुभिक्ष करने वाला होता है ॥34॥

चन्द्रसूर्यौ विशृङ्गौ तु मध्यच्छिद्रौ हतप्रभौ।
युगान्तमिव कुर्वन्तौ तदा यात्रा न सिद्ध्यति[2] ॥35॥

चन्द्रमा और सूर्य विगत शृ ग, मध्य छिद्र, कान्ति रहित हो तो युगान्त—प्रलय के समान—कार्य करते हैं, उस समय यात्रा अच्छी नही मानी जाती है ॥35॥

यद्येकनक्षत्र-गतौ कुर्यात् तद्वर्णसंकरम्।
विनाशं तत्र जानीयाद् विपरीते जयं वदेत् ॥36॥

एक नक्षत्र पर स्थित होकर जहाँ सूर्य और चन्द्र वर्णसकर—वर्णमिश्रण करें, वहाँ विनाश समझना चाहिए। विपरीत होने पर जय होती है ॥36॥

बहुशोदयको वाऽथ ततो भयप्रदो भवेत्।
मन्दघाते फल मन्दं मध्यमं मध्यमेन तु ॥37॥

शीघ्र उदय को प्राप्त होने वाला चन्द्रमा भयप्रद होता है। मन्दघात होने पर मन्दफल और मध्यम मे मध्यमफल होता है ॥37॥

चन्द्रमाः सर्वघातेन राष्ट्रराज्य[4]भयंकरः।
तथापि नागरान् हन्यात् यदा ग्रहसमागमे ॥38॥

सर्वघात के द्वारा चन्द्रमा सम्पूर्ण राष्ट्र और राज्यो के लिए भयंकर होता है। जब चन्द्रमा अन्य ग्रह के साथ समागम करता है तो नागरिको का विनाश करता है ॥38॥

नागराणां तदा भेदो विज्ञेयस्तु पराजयः।
यायिनामपि विज्ञेयं यदा युद्धं परस्परम् ॥39॥

1 भवेत् मु०। 2 शस्यते मु०। 3 यस्य मु०। 4 सौष्ट्राज्यस्य मु०।

जब चन्द्रमा का अन्य किसी ग्रह के साथ युद्ध होता है, तब नागरिको में परस्पर फूट रहती है और यायियों—आक्रमिको की पराजय होती है ।।39।।

सार्गव:[1] गुरवः प्राप्तो पुष्यश्चित्रया सह।
शकस्य चापरूपं च [2]ब्राह्मणसदृशं फलम् ।।40।।

यदि इन्द्रधनुष के समान सुन्दर चन्द्रमा पुष्य और चित्रा नक्षत्र के साथ शुक्र और गुरु—बृहस्पति को प्राप्त करे तो ब्राह्मण सदृश फल होता है ।।40।।

क्षत्रियाश्च भुवि ख्याता: कौशाम्बी दैवतान्यपि[3]।
पीड्यन्ते तद्भक्ताश्च सङ्ग्रामाश्च गुरोर्वधः ।।41।।

उक्त प्रकार की चन्द्रमा की स्थिति में भूमि मे प्रसिद्ध कौशाम्बी आदि क्षत्रिय तथा उनके भक्त पीडित होते हैं और युद्ध होते हैं जिससे गुरुजनों की हिंसा होती है ।।41।।

पशवः पक्षिणो वैद्या महिषा: शबराः शकाः।
सिंहला द्रामिला: काचा बन्धुका पह्लवा नृपाः ।।42।।
पुलिन्द्राः कोंकणा भोजाः कुरवो दस्यवः क्षमाः।
शनैश्चरस्य घातेन पीड्यन्ते यवनैः सह ।।43।।

चन्द्रमा के द्वारा शनि के घातित होने से पशु, पक्षी, वैद्य, महिष—भैंस, शबर, शक, सिंहल, द्रामिल, काच, बन्धुक, पह्लव नृप, पुलिन्द्र, कोकण, भोज, कुरु दस्यु, क्षमा आदि प्रदेशवासी यवनों के साथ पीडित होते हैं ।।42-43।।

यस्य यस्य च नक्षत्रमेकशो द्वन्द्वशोऽपि वा।
ग्रहा वामं प्रकुर्वन्ति तं तं हिंसन्ति सर्वशः ।।44।।

जिस-जिस नक्षत्र को अकेला ग्रह या दो-दो ग्रह वाम—बायी ओर करे, उस-उस नक्षत्र का घात सभी ओर से करते है ।।44।।

जन्मनक्षत्रघातेऽथ राज्ञो यात्रा न सिद्ध्यति।
नागरेण हतश्चाल्पः स्वपक्षाय न यो भवेत् ।।45।।

यदि कोई राजा जन्मनक्षत्र के घातित होने पर यात्रा करे तो उसकी यात्रा सफल नही होती है। जो नगरवासी स्वपक्ष मे नहीं होते हैं, उनके द्वारा अल्पघात होता है ।।45।।

---

1 स्थावरा मु०। 2. ब्राह्मणी गुदमधुषाम् मु०। 3 देवता अपि मु०।

राजा [1]वावनिजा गर्भा नागरा दारुजीविनः।
गोपा गोजीविनश्चापि धनुस्सङ्ग्रामजीविनः ॥46॥
तिलाः कुलस्था माषाश्च माषा मुद्गाश्चतुष्पदाः।
पीड्यन्ते बुधघातेन स्थावरं यच्च किञ्चन ॥47॥

चन्द्रमा के द्वारा बुध के घातित होने से राजा, खान से आजीविका करने वाले, नागरिक, काष्ठ से आजीविका करने वाले, गोप, गायो से आजीविका करने वाले, धनुष और सेना से आजीविका करने वाले, तिल, कुलथी, उड़द, मूँग, चतुष्पद और स्थावर पीड़ित होते हैं ॥46-47॥

कनकं मणयो रत्नं शकाश्च यवनास्तथा।
गुर्जरा[2] पह्लवा मुख्याः क्षत्रिया मन्त्रिणो बलम् ॥48॥
स्थावरस्य वनीकाकुनये सिंहला नृपाः।
वणिजां वनशख्यं च पीड्यन्ते सूर्यघातने ॥49॥

सूर्य के घात से कनक—सोना, मणि, रत्न, शक, यवन, गुहार, पह्लव आदि मुख्य क्षत्रिय, मन्त्री, सेना, स्थावरो के अन्तर्गत सिंहल, वणिज और वनशाखा वाले पीडित होते है ॥48-49॥

पौरेयाः शूरसेनाश्च शका बाह्लीकदेशजाः।
मत्स्याः कच्छाश्च वस्याश्च सौवीरा गन्धिजास्तथा[3] ॥50॥
पीड्यन्ते केतुघातेन ये च सरवास्तथाश्रया।
निर्घाता पापवर्षं वा विज्ञेय बहुशस्तथा ॥51॥

केतु घात द्वारा पुरवासी, शूरसेन, शक, बाह्लीक, मत्स्य, कच्छ, वत्स्य, सौवीर गन्धिज आदि देश वाले पीडित होते हैं तथा यह अनेक प्रकार से सघर्षमय पाप वर्ष रहता है ॥50-51॥

पाण्ड्या केरलाश्चोलाः सिंहला साविकास्तथा।
[4]कुनपास्ते तथार्थाश्च मूलका बनबासकाः ॥52॥
किष्किन्धाश्च कुनाटाश्च प्रत्यग्राश्च वनेचरा।
रक्तपुष्पफलांश्चैव रोहिण्यां सूर्य-चन्द्रयोः ॥53॥

पाण्ड्य, केरल, चोल, सिंहल, साविक, कुनप, विदर्भ, वनवासी, किष्किन्धा, कुनाट, वनचर, रक्तपुष्प और फल आदि विकृत सूर्य और चन्द्र के सयुक्त होने से

1 या वावनिजा मु०। 2 गुहारा मु०। 3 सौधिकास्तथा मु०। 4 कृपनास्ते मु०।

पीड़ित होते हैं ॥52-53॥

एवं च जायते सर्वं करोति विकृतिं यदा।
तदा प्रजा विनश्यन्ति दुर्भिक्षेण भयेन च ॥54॥

इस प्रकार चन्द्रमा के विकृत होने से दुर्भिक्ष और भय द्वारा प्रजा का विनाश होता है ॥54॥

अर्धमासं यदा चन्द्रे[1] ग्रहा यान्ति विदक्षिणम्।
तदा चन्द्रो जयं कुर्यान्नागरस्य महीपतेः ॥55॥

जब चन्द्रमा आधे महीने—पन्द्रह दिन का हो और उस समय अन्य ग्रह दक्षिण की ओर गमन करे तो चन्द्रमा नागरिक और राजा को विजय देता है ॥55॥

हीयमानं यदा चन्द्रं ग्रहा कुर्वन्ति वामतः।
तदा विजयमाख्यान्ति नागरस्य महीपतेः ॥56॥

जब चन्द्रमा क्षीण हो रहा हो—कृष्ण पक्ष मे ग्रह चन्द्रमा को बायी ओर करते हो तो नागरिक और राजा की विजय होती है ॥56॥

गति-मार्गाकृति-वर्णमण्डलान्यपि वीथयः।
चारं नक्षत्रचारांश्च ग्रहाणां शुक्रवद् विदुः ॥57॥

ग्रहो की गति, मार्ग, आकृति, वर्ण, मण्डल, वीथि, चार और नक्षत्र चार आदि शुक्र के समान समझना चाहिए ॥57॥

चन्द्रस्य चारं चरतोऽन्तरिक्षे सुचारदुश्चारसमं प्रचारम्।
चर्यायुत. खेचरसुप्रणीतं यो वेद भिक्षु स चरेन्नृपाणाम् ॥58॥

चन्द्रमा के आकाश मे विचरण करने पर सुचार और दुश्चार दोनो होते हैं। जो भिक्षु प्रसन्नतायुक्त चन्द्रमा की चर्या को जानता है, वह भिक्षु राजाओं के मध्य मे विहार करता है ॥58॥

इति नैर्ग्रन्थे भद्रबाहुके निमित्ते चन्द्रचार सज्ञो नाम त्रयोविंशोऽध्यायः ॥23॥

विवेचन—ज्येष्ठा, मूल, पूर्वाषाढ़ा और उत्तराषाढ़ा नक्षत्र के दाहिने भाग में चन्द्रमा हो तो बीज, जल और वन की हानि होती है। अग्निभय विशेष उत्पन्न होता है। जब विशाखा और अनुराधा नक्षत्र के दायें भाग मे चन्द्रमा रहता

---

1. चन्द्र मु०।

है तब पाप चन्द्रमा कहलाता है। पाप चन्द्रमा जगत् में भय उत्पन्न करता है, परन्तु विशाखा, अनुराधा और मघा नक्षत्र के मध्य भाग में चन्द्रमा के रहने से शुभ फल होता है। रेवती से लेकर मृगशिरा तक छ नक्षत्र अनागत होकर मिलते हैं, आर्द्रा से लेकर अनुराधा तक बारह नक्षत्र मध्य भाग मे चन्द्रमा के साथ मिलते हैं तथा ज्येष्ठा से लेकर उत्तराभाद्रपद तक नौ नक्षत्र अतिक्रान्त होकर चन्द्रमा के साथ मिलते हैं। यदि चन्द्रमा का शृंग कुछ ऊँचा होकर नाव के समान विशालता को प्राप्त करे तो नाविको को कष्ट होता है। आधे उठे हुए चन्द्रमा शृंग को लांगल कहते हैं, उससे हलजीवी मनुष्यों को पीडा होती है। प्रबन्धको, शासको और नेताओ मे परस्पर मैत्री सम्बन्ध बढ़ता है तथा देश में सुभिक्ष होता है। चन्द्रमा का दक्षिण शृंग आधा उठा हुआ हो तो उसे दुष्ट लागल शृंग कहते हैं, इसका फल पाण्ड्य, चेर, चोल आदि राज्यो मे पारस्परिक अनैक्य होता है। इस प्रकार के शृंग के दर्शन से वर्षा ऋतु मे जलाभाव होता है तथा ग्रीष्म ऋतु मे सन्ताप होता है।

यदि समान भाव से चन्द्रमा का उदय हो तो पहले दिन की तरह सर्वत्र सुभिक्ष, आनन्द, आमोद-प्रमोद, वर्षा, हर्ष आदि होते हैं। दण्ड के समान चन्द्रमा के उदय होने पर गाय, बैलो को पीड़ा होती है और राजा लोग उग्र दण्डधारी होते हैं। यदि धनुष के आकार का चन्द्रमा उदय हो तो युद्ध होता है, परन्तु जिस ओर उस धनुष की मौर्वी रहती है, उस देश की जय होती है। यदि पदशृंग दक्षिण और उत्तर मे फैला हुआ हो तो भूकम्प, महामारी आदि फल उत्पन्न होते हैं। कृषि के लिए उक्त प्रकार का चन्द्रमा अच्छा नही माना गया है। जिस चन्द्रमा का शृंग नीचे को मुख किये हुए हो उसे आवर्तित शृंग कहते है, इससे मवेशी को कष्ट होता है। घास की उत्पत्ति कम होती है तथा हरे चारे का भी अभाव रहता है। यदि चन्द्रमण्डल के चारो ओर अखण्डित गोलाकार रेखा दिखलायी दे तो 'कुण्ड' नामक शृंग होता है। इस प्रकार के शृंग से देश मे अशान्ति फैलती है तथा नाना प्रकार के उपद्रव होते हैं। यदि चन्द्रमा का शृंग उत्तर दिशा की ओर कुछ ऊँचा हो तो धान्य की वृद्धि होती है, वर्षा भी उत्तम होती है। दक्षिण की ओर शृंग के कुछ ऊँचे रहने से वर्षा का अभाव, धान्य की कमी एव नाना तरह की बीमारियाँ फैलती हैं।

एक शृंग वाला, नीचे की ओर मुख वाला, शृंगहीन अथवा सम्पूर्ण नये प्रकार का चन्द्रमा देखने से देखने वालो मे से किसी की मृत्यु होती है। वैयक्तिक दृष्टि से भी उक्त प्रकार के चक्रशृंगों का देखना अनिष्टकर माना जाता है। यदि आकार से छोटा चन्द्रमा दिखलाई पड़े तो दुर्भिक्ष, मृत्यु, रोग आदि अनिष्ट फल घटते हैं तथा बड़ा चन्द्रमा दिखलाई पडे तो सुभिक्ष होता है। मध्यम आकार के चन्द्रमा के उदय होने से प्राणियो को क्षुधा की वेदना सहन करनी पड़ती है। राजाओ,

प्रशासकों एवं अन्य अधिकारियों में अनेक प्रकार के उपद्रव होने से संघर्ष होता रहता है। देश में अशान्ति होती है तथा नये-नये प्रकार के झगड़े उत्पन्न होते हैं। चन्द्रमा की आकृति विशाल हो तो धनिकों के यहाँ लक्ष्मी की वृद्धि, स्थूल हो तो सुभिक्ष, रमणीय हो तो उत्तम धान्य उपजते हैं। यदि चन्द्रमा के शृंग को मंगल ग्रह ताडित करता हो तो कुत्सित राजनीतिज्ञों का विनाश, यथेष्ट वर्षा, पर फसल की उत्पत्ति का अभाव और शनि ग्रह के द्वारा चन्द्रशृंग आहत हो तो शस्त्रभय और क्षुधा का भय होता है। बुध द्वारा चन्द्रमा के शृंग को आहत होने पर अना-वृष्टि, दुर्भिक्ष एवं अनेक प्रकार के संकट आते हैं। शुक्र द्वारा चन्द्रशृंग का भेदन होने से छोटे दर्जे के शासन अधिकारियों मे वैमनस्य, भ्रष्टाचार और अनीति का सामना करना पडता है। जब गुरु द्वारा चन्द्रशृंग छिन्न होता है, तब किसी महान् नेता की मृत्यु या विश्व के किसी बडे राजनीतिज्ञ की मृत्यु होती है।

कृष्ण पक्ष में चन्द्रशृंग का ग्रहो द्वारा पीडन हो तो मगध, यवन, पुलिन्द, नेपाल, मरु, कच्छ, सूरत, मद्रास, पंजाब, काश्मीर, कुलूत, पुरुषानन्द और उशी-नर प्रदेश मे सात महीनो तक रोग व्याप्त रहता है। शुक्ल पक्ष में ग्रहो द्वारा चन्द्रशृंग का छिन्न होना अधिक अशुभ नही होता है।

यदि बुध द्वारा चन्द्रमा का भेदन होता हो तो मगध, मथुरा और वेणा नदी के किनारे बसे हुए देशो को पीड़ा होती है। केतु द्वारा चन्द्रमा पीड़ित होता हो तो अमंगल, व्याधि, दुर्भिक्ष और शस्त्र से आजीविका करनेवालो का विनाश होता है। चोरो को अनेक प्रकार के कष्ट सहन करने पड़ते हैं। राहु या केतु से ग्रस्त चन्द्रमा के ऊपर उल्का गिरे तो अशान्ति रहती है। यदि भस्मतुल्य रूखा, अरुणवर्ण, किरणहीन, श्यामवर्ण, कम्पायमान चन्द्रमा दिखलाई दे तो क्षुधा, संग्राम, रोगोत्पत्ति, चोरभय और शस्त्रभय आदि होते हैं। कुमुद, मृणाल और हार के समान शुभ्रवर्ण होकर चन्द्रमा नियमानुसार प्रतिदिन घटता-बढ़ता है तो सुभिक्ष, शान्ति और सुवृष्टि होती है। प्रजा आनन्द के साथ रहती है तथा सन्तापो का विनाश होकर पूर्णतया शान्ति छा जाती है।

द्वादश राशियों के अनुसार चन्द्रफल—मेष राशि में चन्द्रमा के रहने से सभी धान्य महँगे; वृष मे चन्द्रमा के होने से चना तेज, मनुष्यों की मृत्यु और चोरभय; मिथुन में चन्द्रमा के रहने से बीज बोने में सफलता, उत्तम धान्य की उत्पत्ति; कर्क में चन्द्रमा के रहने से वर्षा, सिंह मे रहने से धान्य का भाव महँगा, कन्या मे रहने से खण्डवृष्टि, सभी धान्य सस्ते; तुला में चन्द्रमा के रहने से थोड़ी वर्षा, देशभंग और मार्गभय; वृश्चिक मे चन्द्रमा के रहने से मध्यम वर्षा, ग्रामनाश, उपद्रव, उत्तम धान्य की उत्पत्ति; धनु राशि में चन्द्रमा के रहने से उत्तम वर्षा, सुभिक्ष और शान्ति, मकर राशि मे चन्द्रमा के रहने से धान्यनाश, फसल में नाना प्रकार के रोग, मूसों-टिड्डी आदि का भय, कुम्भ राशि मे चन्द्रमा के रहने से अल्प

वर्षा, धान्य का भाव तेज, प्रजा मे भय एव मीन राशि मे चन्द्रमा के रहने से सुख-सम्पत्ति और सभी प्रकार के अनाज सस्ते होते हैं। वैशाख या ज्येष्ठ मे चन्द्रमा का उदय उत्तर की ओर हो तो सभी प्रकार के धान्य सस्ते होते है। मेघ का उदय एवं वर्षण उत्तम होता है।

ज्येष्ठ मास की शुक्ल पक्ष की प्रतिपदा को सूर्यास्त के समय ही चन्द्रमा दिखलाई पड़े तो वर्ष पर्यन्त सुभिक्ष रहता है। चन्द्रमा का शृ ग उत्तर की ओर हो तो सुभिक्ष और दक्षिण की ओर होने से दुर्भिक्ष तथा मध्य का रहने से मध्यम फल देनेवाला होता है। कृत्तिका, अनुराधा, ज्येष्ठा, चित्रा, रोहिणी, मघा, मृगशिर, मूल, पूर्वाषाढा, विशाखा ये नक्षत्र चन्द्रमा के उत्तर मार्ग वाले कहलाते हैं। जब चन्द्रमा अपने उत्तर मार्ग मे गमन करता है तो सुभिक्ष, सुवर्षा, शान्ति, प्रेम, और सौन्दर्य का प्रसार होता है। जनता मे धर्माचरण का भी प्रसार होता है। दक्षिण मार्ग मे चन्द्रमा का विचरण करना अशुभ माना जाता है। शुक्ल पक्ष की द्वितीया के दिन मेष राशि मे चन्द्रमा का उदय हो तो ग्रीष्म मे धान्य भाव तेज होता है।

वृष मे उदय होने से उडद, तिल, मूंग, अगुरु आदि का भाव तेज होता है। मिथुन मे कपास, सूत, जूट आदि का भाव महँगा होता है। कर्क राशि के होने से अनावृष्टि, तथा कहीं-कहीं खण्डवृष्टि, सिंह राशि मे चन्द्रमा के उदय होने से धान्य भाव तेज होता है। सोना-चाँदी आदि का भाव भी महँगा होता है। कन्या मे चन्द्रमा का उदय होने से पशुओ का विनाश, राजनीतिक पार्टियो मे मतभेद, सघर्ष होता है। तुला राशि के चन्द्रमा मे उदय होने से व्याधि, व्यापारियो मे विरोध वृश्चिक राशि के चन्द्रमा मे धान्य की उत्पत्ति, धनु और मकर मे चन्द्रमा का उदय होने से दाल वाले अनाज का भाव महँगा कुम्भ राशि मे चन्द्रमा का उदय होने से तिल, तेल, तिलहन, उडद, मूंग, मटर आदि पदार्थों का भाव तेज और मीन राशि मे चन्द्रमा के उदय होने से सुभिक्ष, आरोग्य, क्षेम और समृद्धि होती है।

उदय काल मे प्रकाशमान, उज्ज्वल चन्द्रमा दर्शक और राष्ट्र की शक्ति का विकास करता है। यदि उदयकाल मे चन्द्रमा रक्तवर्ण का मन्द प्रकाश युक्त मालूम पड़े तो धन-धान्य का अभाव होता है।

चतुर्विंशतितमोऽध्यायः

अथातः संप्रवक्ष्यामि ग्रहयुद्धं यथा तथा।
जन्तूनां जायते[1] येन श्तूर्णं जय-पराजयौ ॥1॥

अब ग्रहयुद्ध का वर्णन करता हूँ। इसके द्वारा प्राणियों की जय-पराजय का ज्ञान होता है ॥1॥

गुरुः सौरश्च नक्षत्रं बुधार्कश्चैव नागराः।
केतुरंगारकः सोमो राहुः शुक्रश्च यायिनः ॥2॥

गुरु, शनि, बुध और सूर्य नागर सज्ञक एव केतु, अगारक, चन्द्र, राहु और शुक्र यायी संज्ञक हैं ॥2॥

श्वेत. पाण्डुश्च पीतश्च कपिलः पद्मलोहितः।
वर्णास्तु नागरा ज्ञेया ग्रहयुद्धे विपश्चितैः ॥3॥

ग्रहयुद्ध मे श्वेत, पाण्डु, पीत, कपिल, लोहितवर्ण मनीषियो द्वारा नागरिक संज्ञक जानना चाहिए ॥3॥

कृष्णो नीलश्च श्यामश्च कपोतो भस्मसन्निभः।
वर्णास्तु यायिनो[3] ज्ञेया ग्रहयुद्धे[4] विपश्चितैः ॥4॥

कृष्ण, नील, श्याम, कपोत और भस्म के समान वर्ण ग्रहयुद्ध में विद्वानो द्वारा यायी कहे गये हैं ॥4॥

उल्का ताराऽशनिश्चैव[5] विद्युतोऽभ्राणि मारुतः।
विमिश्रको[6] गणो ज्ञेयो वधायैव[7] शुभाशुभे ॥5॥

गृहयुद्ध द्वारा शुभाशुभ अवगत करने में उल्का, तारा, अशनि, धिष्ण्य, विद्युत्, अभ्र और मारुत को मिश्रकोणक जानना चाहिए। उल्का, तारा, अशनि, विद्युत्, अभ्र तथा मारुत ये विमिश्र सज्ञक हैं और युद्ध के शुभाशुभ फल मे ये बधकारक होते हैं ॥5॥

नागरस्यापि[8] यः शीघ्रः [9]स यायीत्यभिधीयते।
मन्दगो यायिनोऽधस्तान्नागरः संयुगे भवेत् ॥6॥

नगर मे जो शीघ्रगामी है, उसे यायी कहते हैं, इस प्रकार यायी की अपेक्षा युद्ध में मन्द-गति होने से नागर नीच कोटि का कहलाता है ॥6॥

---

1 ज्ञायते मु०। 2. ,जयस्तूर्णं पराजय मु०। 3. वाजिनो मु०। 4 स्वर मु०। 5. ० ऽनिर्धिष्ण्य मु०। 6 समस्त्रिको गणो मु०। 7. वधस्यापि मु०। 8 नातुरेऽस्य पि यः मु०। 9. सयायीत्य० मु०।

नागरे तु हते विन्द्यान्नागराणां महद्भयम् ।
एवं यायिवधे ज्ञेयं यायिनां तन्महद्भयम् ॥7॥

नगर संज्ञक ग्रहों के युद्ध होने या घातित होने से नागरिकों को महान् भय होता है एवं यायी ग्रहों के युद्ध होने पर यायियों—आक्रमकों के लिए महान् भय होता है ॥7॥

ह्रस्वो विवर्णो रूक्षश्च श्यामः कान्तोऽपसव्यगः ।
विरश्मिश्चाप्यरश्मिश्च हतो ज्ञेयो ग्रहो युधि ॥8॥

युद्ध मे विकृत रश्मि या अल्प रश्मि वाला ग्रह ह्रस्व, विवर्ण, रूक्ष, श्याम, कान्त, अपसव्य दिशा मे रहने पर हत—घातित माना जाता है । अर्थात् पराजय और हानि करने वाला होता है ॥8॥

स्थूलः स्निग्धः सुवर्णश्च सुरश्मिश्च प्रदक्षिणः ।
उपरिष्टात् प्रकृतिमान् ग्रहो जयति तादृशः ॥9॥

स्थूल, स्निग्ध, सुन्दर, अच्छी रश्मियो वाला, प्रदक्षिण, ऊपर रहने वाला और कान्तिमान् ग्रह जय को प्राप्त होता है ॥9॥

उल्काद्यो [1]हतान् हन्युर्नागरान् संयुगे ग्रहान् ।
नागराणां तदा विन्द्याद्भयं घोरमुपस्थितम् ॥10॥

जब युद्ध में नागर ग्रह उल्कादि के द्वारा घातित हो तो नागरिको को अत्यन्त भय होता है ॥10॥

यायिनो वामतो हन्युर्ग्रहयुद्धे विमिश्रकाः ।
पीड्यन्ते भौमपीडायां भयं सर्वत्र संयुगे ॥11॥

युद्ध में यदि विमिश्रक—उल्का, तारा, अशनि आदि के द्वारा यायी संज्ञक ग्रह बायी ओर से पीडित किये जायं तो भौम पीडा द्वारा पीडित होते हैं ॥11॥

सौम्यजातं तथा विप्रा सोम-नक्षत्र-राशयः ।
उदीच्याः पार्वतीयाश्च पाञ्चलाश्चास्तथैव च ॥12॥

पीड्यन्ते सोमघातेन नभो धूमाकुलं भवेत् ।
तन्नामधेयास्तद्भक्ताः सर्वे पीड्यन्ते तान्समाम् ॥13॥

यदि चन्द्रमा के द्वारा ग्रह पीडित हो और आकाश धूम से व्याप्त हो तो

1. हरा मु० ।

चन्द्रनामधारी, चन्द्रभक्त तथा इन्हीं के समान अन्य व्यक्ति पीड़ित भी होते हैं तथा ब्राह्मण, चन्द्रनक्षत्र और चन्द्र राशि वाले, उदीच्य और पांचाल भी पीड़ित होते हैं ।।12-13।।

बर्बराश्च किराताश्च पुलिन्दा द्रमिलास्तथा ।
मालवा मलया बंगाः कलिंगाः पार्वतास्तथा ।।14।।

[1]सूर्यकाश्च सुराः क्षुद्राः पिशाचा वनवासिनः ।
तन्नामधेयास्तद्भक्ताः पीड्यन्ते राहुघातने ।।15।।

राहु के घात में बर्बर, किरात, पुलिन्द, द्रमिल, मालव, मलय, बंग, कलिंग, पार्वत, सूर्यक, देव, क्षुद्र, पिशाच, वनवासी, राहु नामधारी और राहु भक्त व्यक्ति पीडित होते हैं ।।14-15।।

यायिनः ख्यातयाः सत्यः सोरठा[2] द्रविडास्तथा ।
अंगा बंगाः कलिंगाश्च सौरसेनाश्च क्षत्रियाः ।।16।।

वीराश्चोग्राश्च भोजाश्च यज्ञे चन्द्रश्च साधवः ।
पीड्यन्ते शुक्रघातेन संग्रामश्चाकुलो भवेत् ।।17।।

शुक्र घात—युद्ध से यायी, यशस्वी, शाल्व, द्रविड, अग, बंग, कलिंग, सौरसेन क्षत्रिय, वीर, उग्र, भोज, साधु, चन्द्रवशी पीडित होते हैं तथा युद्ध और व्याकुलता व्याप्त होती है ।।16-17।।

श्वेत. श्वेतं ग्रहं यत्र हन्यात् सुवर्चसा[3] यदा ।
नागराणां[4] मिथो भेदो विप्राणां[5] तु भयं भवेत् ।।18।।

जब श्वेत ग्रह श्वेत ग्रह को अपनी शक्ति द्वारा घातित करे तब नागरिकों मे परस्पर भेद एव ब्राह्मणो को भय होता है ।।18।।

लोहितो लोहित हन्यात् यदा ग्रहसमागमे ।
नागराणां[6] मिथो भेदः क्षत्रियाणां[7] भयं भवेत् ।।19।।

ग्रहयुद्ध मे यदि लोहितग्रह लोहित ग्रह का घात करे तो नागरिकों में परस्पर भेद एव क्षत्रियों को भय होता है ।।19।।

पीतः पीतं यदा हन्याद् ग्रहं ग्रहसमागमे ।
वैश्यानां नागराणां च मिथो भेदं तदाऽऽदिशेत् ।।20।।

---

1 सूर्यकाश्च मु० । 2 सोलषा द्रमिलास्तथा मु० । 3. सुप्रतिसो मु० । 4. ब्राह्मणानां मु० । 5 नागराणा तु निर्दिशेत् मु० । 6. क्षत्रियाणां मु० । 7. नागराणां तु निर्दिशेत् मु० ।

ग्रहयुद्ध में यदि पीतवर्ण का ग्रह पीतवर्ण के ग्रह का घात करे तो वैश्य और नागरिको मे आपस में मतभेद होता है ॥20॥

कृष्णः कृष्ण यदा हन्यात् ग्रहं ग्रहसमागमे।
शूद्राणां नागराणाञ्च[1] मिथो भेद तदाविशेत् ॥21॥

ग्रहयुद्ध में कृष्णवर्ण का ग्रह कृष्णवर्ण के ग्रह का घात करे तो शूद्र और नागरिको में परस्पर मतभेद होता है ॥21॥

श्वेतो नीलश्च पीतश्च कपिलः पद्मलोहित।
विपद्यते यदा वर्णो नागराणां तदा भयम् ॥22॥

श्वेत, नील, पीत, कपिल और पद्म-लोहित वर्ण के ग्रह जब युद्ध करते हैं तो नागरिको को भय होता है ॥22॥

श्वेतो वाऽत्र यदा पाण्डुग्रहं सम्पद्यते स्वयम्।
यायिनां विजयं ब्रूयाद् भद्रबाहुवचो यथा ॥23॥

श्वेत वर्ण का ग्रह जब पाण्डुवर्ण के ग्रह के साथ युद्ध करता है, तब यायियो की विजय होती है, ऐसा भद्रबाहु स्वामी का वचन है ॥23॥

कृष्णो नीलस्तथा श्यामः कापोतो भस्मसन्निभः।
विपद्यते यदा वर्णो न तदा यायिनां भयम् ॥24॥

कृष्ण, नील, श्याम, कापोत और भस्म के तुल्य आभा वाला ग्रह जब युद्ध करता है तब यायियो को भय नही होता है ॥24॥

एवं शिष्टेषु वर्णेषु नागरेषु विचारतः।
उत्तरमुत्तरा वर्णा यायिनामपि निर्विशेत् ॥25॥

अविशिष्ट वर्ण के नागरिक ग्रहो मे विचार करने से उत्तर वर्ण के ग्रह यायियो की उत्तर विजय प्रकट करते है ॥25॥

रक्तो वा यदि वा नीलो ग्रहः सम्पद्यते स्वयम्।
नागराणां तदा विन्द्यात् जयं वर्णमुपस्थितम् ॥26॥

रक्त या नील ग्रह जब स्वय विपत्ति को प्राप्त हो—युद्ध करे तो नागरिको की विजय होती है ॥26॥

---

1 अनय घोर यायिनां चैवमादिशत् मु० ।

नीलाद्यास्तु यदा[1] वर्णा उत्तरा उत्तरं पुनः।
नागराणां विजानीयात् निर्ग्रन्थे ग्रहसंयुगे ॥27॥
ग्रहो ग्रहं यदा हन्यात् प्रविशेद् वा भयं तदा।
दक्षिणः सर्वभूतानामुत्तरोऽण्डजपक्षिणाम् ॥28॥

ग्रहयुद्ध में यदि नीलादि वर्ण वाले ग्रह उत्तर दिशा मे युद्ध करें तो नागरिकों का अहित होता है, ऐसा निर्ग्रन्थ आचार्यों का वचन है। यदि दक्षिण से ग्रह ग्रह का घात करे अथवा ग्रह ग्रह मे प्रवेश करे तो समस्त प्राणी, अण्डज और पक्षियो को अहितकर होता है ॥27-28॥

ग्रहौ गुरु-बुधौ विन्द्यावुत्तरद्वारमाश्रितौ।
शुक्र-सूर्यौ तथा पूर्वां राहु-भौमौ च दक्षिणाम् ॥29॥
अपरां चन्द्र-सूर्यौ तु मध्ये केतुमसंशयम्।
क्षेमंकरो ध्रुवाणां च यायिनां च भयंकरः ॥30॥

उत्तर द्वार मे स्थित होकर गुरु और बुध युद्ध करें, पूर्व मे स्थित होकर शुक्र और सूर्य, दक्षिण मे स्थित होकर राहु और मंगल, पश्चिम मे चन्द्र और सूर्य एव मध्य मे केतु युद्ध करे तो निवासियो के लिए कल्याणप्रद और यायियो के लिए भयंकर होता है ॥29-30॥

अहश्च पूर्वसन्ध्या च स्थावरप्रतिपुद्गलाः।
रात्रिश्चापरसन्ध्या च यायिनां प्रतिपुद्गलाः ॥31॥

दिन और पूर्व सन्ध्या स्थाविरो—निवासियो के लिए प्रतिपुद्गल तथा रात्रि और अपर सन्ध्या यायियो के लिए प्रतिपुद्गल है ॥31॥

रोहिणीं च ग्रहो हन्यात् द्वौ वाऽथ बहवोऽपि वा।
अपग्रहं तदा विन्द्याद् भय वाऽपि न संशय ॥32॥

यदि रोहिणी नक्षत्र को एक ग्रह, दो ग्रह या बहुत ग्रह हनन करें—घात करें तो अपग्रह होता है और भय एव आतक भी व्याप्त रहता है, इसमे सन्देह नही है ॥32॥

शुक्रः शंखनिकाशः स्यादीषत्पीतो बृहस्पतिः।
प्रवालसदृशो भौमो बुधस्त्वरुणसन्निभः ॥33॥

1 ये वर्णा मु०।

शनैश्चरश्च नीलाभ. स्रोम: पाण्डुर उच्यते।
बहुवर्णो रवि: केतू राहुर्नक्षत्र एव च ॥34॥

शुक्र शंख वर्ण के समान, बृहस्पति कुछ पीला, मगल प्रवाल के समान और बुध वरुण के समान, शनैश्चर नील, चन्द्रमा पाण्डु, रवि-केतू अनेक वर्ण एवं राहु नक्षत्र के समान वर्ण वाला होता है ॥33-34॥

उदकस्य प्रभु: शुक्रः सस्यस्य च बृहस्पतिः।
लोहित: सुख-दु:खस्य केतु: पुष्प-फलस्य च ॥35॥
बुधस्तु बल-वित्तानां सर्वस्य च रविः स्मृतः।
उदकानां[1] च वल्लीनां शशांकः प्रभुरुच्यते ॥36॥

जल का स्वामी शुक्र, धान्य का स्वामी बृहस्पति, सुख-दुख का स्वामी मंगल, फल-पुष्प का स्वामी केतु, बल-धन का स्वामी बुध, सभी वस्तुओ का स्वामी सूर्य एव लताओ और वृक्षों का स्वामी चन्द्रमा है ॥35-36॥

धान्यस्यार्थं तु नक्षत्रं तथाऽऽर: शनि: सर्वश:।
प्रभुर्वा[2] सुख-दु:खस्य सर्वे ह्येते त्रिदण्डवत् ॥37॥

धान्य के लिए जो नक्षत्र होता है, उसका सभी तरह से स्वामी राहु है, और सुख-दुख का स्वामी शनि है। ये ग्रह त्रिदण्डवत् होते हैं ॥37॥

वर्णानां संकरो विन्द्याद् द्विजातीनां भयंकरम्।
स्वपक्षे परपक्षे च चातुर्वर्ण्यं विभावयेत्[3] ॥38॥

जब ग्रहो का युद्ध होता है तो वर्णों का सम्मिश्रण, द्विजातियों को भय तथा स्वपक्ष और परपक्ष मे चातुर्वर्ण्य दिखलायी पडता है ॥38॥

वात: श्लेष्मा गुरुर्ज्ञेयश्चन्द्रः शुक्रस्तथैव च।
[4]वातिकौ केतु-सौरौ तु पैत्तिको भौम उच्यते ॥39॥

चन्द्र, शुक्र और गुरु वात और कफ प्रकृति वाले है, केतु और शनि भी वात प्रकृति वाले हैं तथा मंगल पित्त प्रकृति वाला है ॥39॥

पित्तश्लेष्मान्तिक: सूर्यो नक्षत्रं देवता भवेत्।
राहुस्तु भौमो विज्ञेयौ प्रकृतौ च शुभाशुभौ ॥40॥

सूर्य पित्त श्लेष्मा—पित्त-कफ प्रकृति वाला है। यह नक्षत्रों का देवता होता है। राहु और मंगल शुभाशुभ प्रकृति वाले हैं ॥40॥

1. वोकान्दनां मु०। 2 शनिश्च मु०। 3. विभाव्यते मु०। 4 वातिको बुध - मु०।

आर्यम्णमादितं पुष्यो धनिष्ठा पौष्णवो च भूत्[1]।
केतु-सूर्यौ तु वैशाखौ राहुर्वरुणसम्भवः ॥41॥

उत्तरा फाल्गुनी, पुनर्वसु, पुष्य, धनिष्ठा, हस्त ये चन्द्रादि ग्रहों के नक्षत्र हैं, केतु और सूर्य के विशाखा नक्षत्र और राहु का शतभिषा नक्षत्र है ॥41॥

शुक्रः सोमश्च स्त्रीसंज्ञौ शेषास्तु पुरुषा ग्रहाः।
नक्षत्राणि विजानीयान्नामभिर्दैवतैस्तथा ॥42॥

शुक्र और चन्द्रमा स्त्री सज्ञक हैं, शेष ग्रह पुरुष संज्ञक हैं। नक्षत्रों का लिंग उनके स्वामियो के लिंग के अनुसार अवगत करना चाहिए ॥42॥

ग्रहयुद्धमिदं सर्वं[2] य. सम्यगवधारयेत्।
स विजानाति निर्ग्रन्थो लोकस्य तु शुभाशुभम् ॥43॥

जो निर्ग्रन्थ भलीभाँति पूर्ण ग्रहयुद्ध को जानता है, वह लोक के शुभाशुभत्व को जानता है ॥43॥

इति नैर्ग्रन्थे भद्रबाहुके निमित्ते ग्रहयुद्धो नाम चतुर्विंशतितमोऽध्यायः ॥24॥

विवेचन—ग्रहयुद्ध के चार भेद है—भेद, उल्लेख, अंशुमर्दन और अपसव्य। भेदयुद्ध मे वर्षा का नाश, सुहृद् और कुलीनो में भेद होता है। उल्लेख युद्ध मे शस्त्रभय, मन्त्रिविरोध और दुर्भिक्ष होता है। अंशुमर्दन युद्ध में राजाओं में युद्ध, शस्त्र, रोग, भूख से पीडा और अवमर्दन होता है तथा अपसव्य युद्ध मे राजा गण युद्ध करते हैं। सूर्य दोपहर मे आक्रन्द होता है, पूर्वाह्ण मे पौर ग्रह तथा अपराह्ण मे यायी ग्रह आक्रन्द सज्ञक होते हैं। बुध, गुरु और शनि ये सदा पौर हैं। चन्द्रमा नित्य आक्रन्द है। केतु, मंगल, राहु और शुक्र यायी है। इन ग्रहों के हत होने से आक्रन्द, यायी और पौर क्रमानुसार नाश को प्राप्त होते है, जयी होने पर स्ववर्ग को जय प्राप्त होती है। पौरग्रह से पौरग्रह के टकराने पर पुरवासी गण और पौर राजाओं का नाश होता है। इस प्रकार यायी और आक्रन्द ग्रह या पौर और यायी ग्रह परस्पर हत होने पर अपने-अपने अधिकारियो को कष्ट कर देते है। जो ग्रह दक्षिण दिशा में रूखा, कम्पायमान, टेढा, क्षुद्र और किसी ग्रह से ढँका हुआ, विकराल, प्रभाहीन और विवर्ण दिखलायी पडता है, वह पराजित कहलाता है। इससे विपरीत लक्षण वाला ग्रह जयी कहलाता है। वर्षा काल में सूर्य से आगे मंगल के रहने से अनावृष्टि, शुक्र के आगे रहने से वर्षा, गुरु के आगे रहने से गर्मी और बुध के आगे रहने से वायु चलती है। सूर्य-मंगल, शनि-मंगल और गुरु-मंगल

1. च भूत् मु०। 2. कृत्स्न मु०।

के संयोग से अवर्षा होती है। बुध-शुक्र और गुरु-बुध का योग अवश्य वर्षा करता है। क्रूर ग्रहो से अदृष्ट और अयुत बुध और शुक्र एक राशि मे स्थित हो और यदि उन्हे बृहस्पति भी देखता हो तो वे अधिक महावृष्टि के देने वाले होते है। क्रूर ग्रहो से अदृष्ट और अयुत (भिन्न) बुध और बृहस्पति एक राशि मे स्थित हो और यदि शुक्र उन्हे देखता हो तो वे अधिक अच्छी वर्षा करते हैं। क्रूर ग्रहो से अदृष्ट और अयुत (भिन्न) गुरु और शुक्र एकत्र स्थित हो और यदि बुध उन्हे देखता हो तो वे उत्तम वर्षा करते हैं। शुक्र और चन्द्रमा या मगल और चन्द्रमा यदि एक राशि पर स्थित हो तो सर्वत्र वर्षा होती है और फसल भी उत्तम होती है। सूर्य के सहित बृहस्पति यदि एक राशि पर स्थित हो तो जब तक वह अस्त न हो जाय, तब तक वर्षा का योग समझना चाहिए। शनि और मगल का एक राशि पर होना महावृष्टि का कारण होता है। इस योग के होने से दो महीने तक वर्षा होती है, पश्चात् वर्षा मे रुकावट उत्पन्न होती है। सौम्य ग्रहो से अदृष्ट और अयुत शनि और मगल यदि एक स्थान पर स्थित हो तो वायु का प्रकोप और अग्नि का भय होता है।

एक राशि या एक ही नक्षत्र पर राहु और मगल आ जाये तो दोनो वर्षा का नाश करते हैं। गुरु और शुक्र यदि एकत्र स्थित हो तो असमय मे वर्षा होती है। सूर्य से आगे शुक्र या बुध जायें तो वर्षा काल मे निरन्तर वर्षा होती रहती है। मगल के आगे सूर्य की गति हो तो वह वर्षा को नही रोकता है। किन्तु सूर्य के आगे मगल हो तो वर्षा को तत्काल रोक देता है। बृहस्पति के आगे शुक्र हो तो वह अवश्य वृष्टि करता है, किन्तु शुक्र के आगे बृहस्पति हो तो वर्षा का अवरोध होता है। बुध के आगे शुक्र के होने से महावृष्टि और शुक्र के आगे बुध के होने पर अल्प वृष्टि होती है। यदि दोनो के मध्य मे सूर्य या अन्य ग्रह आ जाये तो वर्षा नही होती। अनिश्चित मार्ग से गमन करता हुआ बुध यदि शुक्र को छोड दे तो सात दिन या पाँच दिन तक लगातार वर्षा होती है। उदय या अस्त होता हुआ बुध यदि शुक्र से आगे रहे तो शीघ्र ही वर्षा पैदा करता है। जल नाडियो मे आने पर यह अधिक फल देता है। बुध, बृहस्पति और शुक्र ये तीनो ग्रह एक ही राशि पर स्थित हो और क्रूर ग्रहो से अदृष्ट और अयुत हो तो इन्हे महावृष्टि करने वाले समझने चाहिए। शनि, मगल और शुक्र तीनो एक राशि पर स्थित हो और गुरु इन्हे देखता हो तो निस्सन्देह वर्षा होती है। सूर्य, शुक्र और बुध इनके एक राशि पर होने से अल्पवृष्टि होती है। सूर्य, शुक्र और बृहस्पति के एक राशि पर रहने से अतिवृष्टि होती है। शनि, शुक्र और मगल के एकत्र होते हुए गुरु से देखे जाने पर साधारण वर्षा होती है। शनि, राहु और मगल ये तीनो एक राशि पर स्थित हो तो ओले के साथ वर्षा होती है। सभी ग्रह एक ही राशि पर आ जाये तो दर्भिक्ष, अवर्षा और रोग द्वारा कष्ट होता है। शुक्र, मगल, शनि और बृहस्पति ये ग्रह

एक स्थान पर स्थित हो, तो वर्षा रोक देते हैं। उक्त ग्रह स्थिति मे देश में अन्न का भी अभाव हो जाता है। धान्य भाव महँगा बिकता है। रूई, कपास, जूट, सन आदि का भाव भी तेज होता है। बिहार में भूकम्प होने की स्थिति आती है। जापान और वर्मा मे भूकम्प होते हैं। मगल, बुध, गुरु और शुक्र के एक स्थान पर स्थित होने से रजो वृष्टि होती है। दुर्भिक्ष, अन्न, घी, गुड, चीनी, सोना, चाँदी, माणिक्य, मूँगा आदि पदार्थों का भाव भी तेज ही होता है। नगर और गाँवों मे अशान्ति दिखलायी पडती है। बिहार, आसाम, उडीसा, बागलादेश, प० बगाल आदि पूर्वी क्षेत्रो में साधारण वर्षा और साधारण ही फसल होती है। पंजाब, दिल्ली, अजमेर, राजस्थान और हिमालय प्रदेश की सरकारो के मन्त्रिमण्डल मे परिवर्तन होता है। इटली ईरान, अरब, मिस्र इत्यादि मुस्लिम राष्ट्रो मे भी खाद्यान्न की कमी होती है। उक्त राष्ट्रो की राजनीतिक और आर्थिक स्थिति बिगडती जाती है। मगल, शुक्र, शनि और राहु ये ग्रह यदि एक राशि पर आ जायें तो मेघ कभी वर्षा नही करते, दुर्भिक्ष होता है, धान्य और सस्य दोनो ही प्रकार के अनाजो की कमी होती है तथा इनके सग्रह से अनेक प्रकार का लाभ होता है। मगल, बृहस्पति, शुक्र और शनि ये ग्रह एक साथ बैठे हो तो वर्षा का अभाव होता है। इन ग्रहो के युद्ध मे व्यापारियो को भी कष्ट होता है। कागज, कपड़ा, रेशम, चीनी के व्यापार मे घाटा होता है। मोटे अनाजो के भाव बहुत उँचे बढते है, जिससे खरीदने वालो की सख्या घट जाती है, फिर भी देश मे शान्ति रहती है। सूर्य, गुरु, शनि, शुक्र और राहु इन ग्रहो के एक साथ रहने से मेघ वर्षा नही करते है और सब धान्यो का भाव महँगा रहता है। चार या पाँच ग्रहो के एक साथ रहने से अधिक जल की वर्षा या मही रुधिर प्लावित हो जाती है। बुध, गुरु, शुक्र, सूर्य और चन्द्रमा इन ग्रहो के एक स्थान पर होने से नैर्ऋत्य दिशा मे जनता का विनाश होता है। दुर्भिक्ष, अन्न और मवेशी का अभाव होता है। उक्त ग्रह स्थिति वर्मा, लंका, दक्षिण भारत, मद्रास, महाराष्ट्र इन प्रदेशो के लिए अत्यन्त अशुभकारक है। उक्त प्रदेशो मे अन्न का अभाव बडे उग्र और व्यापक रूप में होता है।

पूर्वीय प्रदेशो—बिहार, बगाल, आसाम मे वर्षा की कमी तो नही रहती किन्तु फसल अच्छी नही होती है। उक्त प्रदेशो मे राजनीतिक उलट-फेर भी होते हैं। हैजा, प्लेग जैसी संक्रामक बीमारियाँ फैलती है। घरेलू युद्ध देश के प्रत्येक भाग मे आरम्भ हो जाते है। पजाब की स्थिति बिगड जाती है, जिससे वहाँ शान्ति स्थापित होने मे कठिनाई रहती है। विदेशो के साथ भारत का सम्पर्क बढ़ता है। नये-नये व्यापारिक सम्बन्ध स्थापित होते है। देश के व्यापारियो की स्थिति अच्छी नही रहती है। छोटे-छोटे दुकानदारो को लाभ होता है। बड़े-बड़े व्यापारियों की स्थिति बहुत खराब हो जाती है। खनिज पदार्थों की उत्पत्ति बढती है। कला-कौशल का विकास होता है। देश के कलाकारो को सम्मान प्राप्त होता है। साहित्य

की उन्नति होती है। नवीन साहित्य के सृजन के लिए यह उत्तम अवसर है। यदि परम्परानुसार ग्रहों के आगे सौम्य ग्रह स्थित हो तो वर्षा अच्छी होती है, साथ ही देश का आर्थिक विकास होता है और देश के नये मन्त्रिमण्डल का निर्वाचन भी होता है। धारा सभाओ और विधान सभा के सदस्यों मे मतभेद होता है। विश्व मे नवीन वस्तुओ का अन्वेषण होता है, जिससे देश की सांस्कृतिक परम्परा का पूरा विकास होता है। नृत्य, गान और इसी प्रकार के अन्य कलाकारों को साधारण सम्मान प्राप्त होता है। यदि शुक्र, शनि, मंगल और बुध ये ग्रह बृहस्पति से युत या दृष्ट हो तो सुभिक्ष होता है, वर्षा साधारणतः अच्छी होती है। दक्षिण भारत में फसल उत्तम उपजती है। सुपाडी, नारियल, चावल, एव गुड़ का भाव तेज होता है। जब क्रूर ग्रह आपस मे युद्ध करते है तो जन-साधारण में भय, आतंक और हिंसा का प्रभाव अंकित हो जाता है। शुभ ग्रहो का युद्ध शुभ फल देता है।

पंचविंशतितमोऽध्याय:

नक्षत्रं ग्रहसम्पत्त्या कृत्स्नस्यार्घं शुभाशुभम्।
तस्मात् कुर्यात् सदोत्थाय नक्षत्रग्रहदर्शनम् ॥1॥

समस्त तेजी-मन्दी नक्षत्र और ग्रहो के शुभाशुभ पर निर्भर करती है, अतः सर्वदा प्रातः उठकर नक्षत्रो और ग्रहों का दर्शन करना चाहिए ॥1॥

सर्वे यदुत्तरे काष्ठे ग्रहाः स्युः स्निग्धवर्चसः।
तदा वस्त्रं च न ग्राह्यं सुसमासाम्यमर्घताम् ॥2॥

यदि स्निग्ध, तेजस्वी ग्रह उत्तर दिशा मे हों तो वस्त्र नहीं लेना चाहिए; क्यो कि वस्त्रों के मूल्य में समता रहती है, मूल्य में घटा-बढ़ी नहीं होती ॥2॥

क्षीरं क्षौद्रं यवाः कंगुरुवाराः सस्यमेव च।
दौर्लभ्यं चाधिगच्छन्ति नैवानिचया यद्बुधः ॥3॥

दूध, मधु, जौ, कंगुरु, धान्य आदि पदार्थ बुध की स्थिति के अनुसार तेज और

मन्दे होते हैं। अर्थात् उक्त पदार्थों की स्थिति बुध पर आश्रित है ॥3॥

षष्टिकानां विरागाणां द्रव्याणां[1] पाण्डुरस्य[2] च।
सन-कोद्रव-कंगूनां नीलाभानां शनैश्चरः ॥4॥

साठिका चावल, श्वेतरंग से भिन्न अन्य रंग के पदार्थ, सन, कोद्रव, कंगून और समस्त नील पदार्थ शनैश्चर के प्रतिपुद्‍गल हैं ॥4॥

यव-गोधूम-व्रीहीणां शुक्लधान्य-मसूरयोः।
शूलीनां चैव द्रव्याणां शुक्रस्य प्रतिपुद्‍गलाः ॥5॥

जौ, गेहूँ, चावल, श्वेत रंग के अनाज, मसूर, गूलर आदि पदार्थ शुक्र के प्रतिपुद्‍गल हैं ॥5॥

मधु-सर्पिः-तिलानाञ्च[3] क्षीराणां च तथैव च।
कुसुम्भस्यातसीनां च गर्भाणां च बुधः स्मृतः ॥6॥

मधु, घी, तिल, दूध, पुष्प, केसर, तीसी, गर्भ आदि बुध के प्रतिपुद्‍गल है ॥6॥

कोशधान्यं सर्षपाश्च पीतं रक्तं तथाग्निजम्[4]।
अंगारकं विजानीयात् सर्वेषां प्रतिपुद्‍गलाः ॥7॥

कोश, धान्य, सर्षप, पीत-रक्त वर्ण के पदार्थ, अग्नि से उत्पन्न पदार्थ मंगल के प्रतिपुद्‍गल हैं ॥7॥

महाधान्यस्य महतामिक्षूणां शर-वंशयो।
गुरूणां मन्दपीतानामथो ज्ञेयो बृहस्पतिः ॥8॥

मोटे धान्य, इक्षु, वंश तथा बड़े-बड़े मन्द पीले पदार्थ बृहस्पति के प्रतिपुद्‍गल है ॥8॥

मुक्तामणि-जलेजानां सूर-सौवीर-सोमिनाम्।
भृंगिणाम्बुदकानां च सौम्यस्य प्रतिपुद्‍गलाः ॥9॥

मुक्ता-मणि, जल से उत्पन्न पदार्थ, सोमलता, बेर या अन्य खट्टे पदार्थ, कांजी, भृंगी पदार्थ और समस्त जलीय पदार्थ चन्द्रमा के प्रतिपुद्‍गल हैं ॥9॥

उद्भिजानां च जन्तूनां कन्द-मूल-फलस्य च।
उष्णवीर्यविपाकस्य रवेस्तु प्रतिपुद्‍गलाः ॥10॥

1 द्रव्यस्य च मु०। 2 प्रणस्य मु०। 3. भृगालानां मु०। 4 -मथाग्निजम् मु०।

पृथ्वी के उत्पन्न हुए पदार्थ, कन्दमूल, फल और उष्ण पदार्थ सूर्य के प्रति पुद्गल हैं। यहाँ प्रतिपुद्गल शब्द का अर्थ उस ग्रह की स्थिति द्वारा उक्त पदार्थों की तेजी-मन्दी जानने का रूप है ॥10॥

नक्षत्रे भार्गवः सोमः शोभेते सर्वशो यथा।
यथा द्वार तथा विन्द्यात् सर्ववस्तु यथाविधि ॥11॥

किसी भी नक्षत्र मे शुक्र और चन्द्र सर्वांग रूप से शोभित हो तो उस नक्षत्र के द्वार, दिशा और स्वरूप आदि के द्वारा वस्तुओ की तेजी-मन्दी कही जाती है ॥11॥

विवर्णा यदि सेवन्ते ग्रहा वै राहुणा समम्।
दक्षिणां दक्षिणे मार्गे वैश्वानरपथं प्रति ॥12॥

गिरिनिम्ने च निम्नेषु नदी-पल्वलवारिषु।
एतेषु वापयेद् बीज स्थलवर्ज्जं यथा भवेत् ॥13॥

मल्लजा मालवे देशे[1] सौराष्ट्रे सिन्धुसागरे।
एतेष्वपि तथा मन्दं[2] प्रियमन्यत् प्रसूयते ॥14॥

यदि भरणी नक्षत्र मे राहु के साथ अन्य ग्रह विकृत वर्ण के होकर स्थित हो तथा दक्षिण मार्ग मे वैश्वानर पथ के प्रति गमनशील हो तो स्थल—चौरस भूमि को छोडकर पर्वत की ऊँची-नीची तलहटी, नदियो के तट एव पोखरो मे बीज बोना चाहिए। काली मिरच मालव देश, गुजरात, समुद्र के तटवर्ती प्रदेशो मे मन्दी होती है, इसके अतिरिक्त अन्य वस्तुएँ महँगी होती है ॥12-14॥

कृत्तिका-रोहिणीयुक्ता बुध-चन्द्र-शनैश्चराः।
यदा सेवन्ते सहितास्तदा विन्द्यादिदं फलम् ॥15॥

आज्यविकं गुडं तैलं कार्पासो मधु-सर्पिषी।
सुवर्ण-रजते मुद्गाः शालयस्तिलमेव च ॥16॥

स्निग्धे याम्योत्तरे मार्गे पञ्चद्रोणेन शालयः।
दशाढकं पश्चिमे[3] स्यात् दक्षिणे तु षडाढकम् ॥17॥

जब बुध, चन्द्र और शनैश्चर ये तीनो एक साथ कृत्तिका विद्ध रोहिणी का भोग करे तब घृत, गुड, तैल, कपास, मधु, स्वर्ण, चाँदी, मूंग, शाली चावल, तिल आदि पदार्थ महँगे होते हैं। यदि उक्त ग्रह स्निग्ध दक्षिणोत्तर मार्ग मे गमन करते

1 मल्लदा मलवदेषु राष्ट्राणां मु०। 2. मूष्ण मु०। 3. प्रसक्त मु०।

हो तो धान्य का भाव पाँच द्रोण प्रमाण होता है। पश्चिम में दश आढक और दक्षिण मे छः आढक प्रमाण होता है ॥15-17॥

उत्तरेण तु रोहिण्यां चतुष्कं कुम्भमुच्यते।
दशकं प्रसंगतो विन्द्यात् दक्षिणेन चतुर्दशम् ॥18॥

यदि उत्तर मे रोहिणी हो तो चतुष्क कुम्भ कहा जाता है। इससे दश आढक और दक्षिण मे होने से चौदह आढक प्रमाण शाली का भाव कहा गया है ॥18॥

नक्षत्रस्य यदा गच्छेद् दक्षिणं शुक्र-चन्द्रमाः।
सुवर्णं रजतं रत्नं कल्याणं प्रियतां मिथः[1] ॥19॥

जब शुक्र और चन्द्रमा कृत्तिका विद्ध रोहिणी नक्षत्र के दक्षिण में जायें तब स्वर्ण, चाँदी, रत्न और धान्य महँगे होते है ॥19॥

धान्यं यत्र प्रियं विन्द्याद्गावो नात्यर्थदोहिनः॥
उत्तरेण यदा यान्ति नैतानि चिनुयात् तदा ॥20॥

जब उक्त ग्रह कृत्तिका विद्ध रोहिणी नक्षत्र के उत्तर मे जायें तो धान्य महँगा होता है, गायें दोहने के लिए प्राप्त नही होती है अर्थात् महँगी हो जाती हैं ॥20॥

उत्तरेण तु पुष्यस्य यदा पुष्यति[2] चन्द्रमाः।
भौमस्य दक्षिणे पार्श्वे मघासु यदि तिष्ठति ॥21॥

मालवा मालं वैदेहा यौधेयाः संज्ञनायका।
सुवर्णं रजतं वस्त्रं मणिर्मुक्ता तथा प्रियम् ॥22॥

जब चन्द्रमा उत्तर से पुष्य नक्षत्र का भोग करता है तथा मघा मे रहकर मगल का दक्षिण से भोग करता है, तब काली मिर्च, नमक, सोना, चाँदी, वस्त्र, मणि, मुक्ता एव मशाले के पदार्थ महँगे होते है ॥21-22॥

चन्द्रः शुक्रो गुरुर्भौमो[3] मघानां यदि दक्षिणे।
वस्त्रं च द्रोणमेघं च निर्दिशेन्नात्र संशयः ॥23॥

चन्द्र, शुक्र, गुरु और मगल यदि मघा के दक्षिण मे हो तो वस्त्र महँगे होते हैं और मेघ द्रोण प्रमाण वर्षा करते है, इसमे सन्देह नही है ॥23॥

आरुहेद् वालिखेद्वापि[4] चन्द्रश्चैव यथोत्तरम्।
ग्रहैर्युक्तस्तु (वर्धति) तदा कुम्भं तु पञ्चकम् ॥24॥

1 मिथु। 2 युज्यति मु०। 3 स्सोमो मु०। 4 आहट्टालिश्च वापी च भद्र चैव यथोत्तरे मु०।

यदि ग्रहयुक्त चन्द्रमा उत्तर दिशा मे आरोहण करे या उत्तर का स्पर्श करे तो पाँच कुम्भ प्रमाण जल की वर्षा होती है अर्थात् खूब जल बरसता है ॥24॥

राहुः केतुः शशी शुक्रो भौमश्चोत्तरतो यदा ।
सेवन्ते चोत्तरं द्वारं यान्त्यस्तं वा कदाचन ॥25॥
निर्वात्ति वापि कुर्वन्ति भयं देशेषु[1] सर्वशः ।
बहुतोयान् समान् विन्द्यान् महाशालींश्च वापयेत् ॥26॥
कार्पासास्तिल-माषाश्च सर्पिश्चात्र प्रियं तथा ।
आशु धान्यानि[2] वर्धन्ते योगक्षेमं च हीयते ॥27॥

जब राहु, केतु, चन्द्रमा, शुक्र और मंगल उत्तर से उत्तर द्वार का सेवन करें अथवा अस्त को प्राप्त हो अथवा वक्री हो तो सभी देशो मे भय होता है । अधिक जल की वर्षा होती है और चावल भी खूब बोया जाता है । कपास, तिल, उड़द, घी महँगा होता है । वर्षा की अधिकता के कारण बावड़ी—तालाबो का जल शीघ्र ही बढ़ता है, जिससे योग-क्षेम—गुजर-बसर मे कमी आती है ॥25-27॥

चन्द्रस्य दक्षिणे पार्श्वे भार्गवो वा विशेषतः ।
उत्तरांस्तारकान् प्राप्य तदा विन्द्याविदं फलम् ॥28॥
महाधान्यानि पुष्पाणि हीयन्ते चामरस्तदा[3] ।
कार्पास-तिल-माषाश्च सर्पिश्चैवार्घते तथा ॥29॥

यदि शुक्र चन्द्रमा के दक्षिण भाग मे हो अथवा विशेष रूप से उत्तर के नक्षत्रो को प्राप्त हुआ हो तो महाधान्य—गेहूँ, जौ, धान, चना आदि और पुष्पो—केसर, लवंगआदि की कमी होती है अर्थात् उक्त पदार्थ महँगे होते हैं । कपास, तिल, उड़द और घी की वृद्धि होती है, अत· ये पदार्थ सस्ते होते हैं ॥28-29॥

चित्राया दक्षिणे पार्श्वे शिखरी नाम तारका ।
तयेन्दुर्यदि दृश्येत तदा बीजं न वापयेत् ॥30॥

चित्रा नक्षत्र के दक्षिण पार्श्व में शिखरी नाम की तारिका है । यदि चन्द्रमा का उदय इस तारिका में दिखलाई पड़े तो बीज नही बोना चाहिए ॥30॥

गवास्त्रेण हिरण्येन सुवर्ण-मणि-मौक्तिकैः ।
महिष्यजाविभिर्वस्त्रैर्धान्यं क्रीत्वा निवापयेत् ॥31॥

चन्द्रमा की उक्त स्थिति में गाय, अस्त्र, चाँदी, सोना, मणि, मुक्ता, महिष—

1 देवेषु मु० । 2 बान्यानि मु० । 3. चाशुभास्तथा मु० ।

भैंस, अजा—बकरी और वस्त्र आदि से धान्य खरीद कर भी बोना नहीं चाहिए। तात्पर्य यह है कि चन्द्रमा की उपर्युक्त स्थिति में अन्न उत्पन्न नहीं होता है; अतः सभी वस्तुओं से अनाज खरीद कर उसका संकलन करना चाहिए ॥31॥

चित्रायां तु यदा [1]शुक्रश्चन्द्रो भवति दक्षिणः।
षड्गुणं जायते धान्यं योगक्षेमं च जायते ॥32॥

जब चित्रा नक्षत्र में दक्षिण की ओर शुक्र युक्त चन्द्रमा हो तो छः गुना अनाज उत्पन्न होता है और योगक्षेम—गुजर-बसर अच्छी तरह से होती है ॥32॥

इन्द्राग्निदैवसंयुक्ता यदि सर्वे ग्रहाः कृशाः।
अभ्यन्तरेण मार्गस्थास्तारका यास्तु वाग्वलः[2] ॥33॥

कंगु-दार-तिला मुद्गाश्चणकाः षष्टिकाः शुकाः।
चित्रायोगं न सर्वेत चन्द्रमा उत्तरो भवेत् ॥34॥

संग्राह्यं च तदा धान्यं योगक्षेमं न[3] जायते।
अल्पसारा भवन्त्येते चित्रा वर्षा[4] न संशय ॥35॥

यदि सभी कमजोर ग्रह विशाखा नक्षत्र मे युक्त होकर अभ्यन्तर मार्ग से बादल की ओर की ताराओ मे स्थित हो और चन्द्रमा उत्तर होकर चित्रा मे स्थित हो, तो कंगु, तिल, मूँग, चना, साठी का चावल आदि धान्यो का संग्रह करना चाहिए। उक्त प्रकार के योग में योगक्षेम मे—भोजन-छाजन में भी कमी रहती है। वर्षा अल्प होती है, इसमे सन्देह नही है ॥33-35॥

विशाखामध्यगः शुक्रस्तोयदो धान्यवर्धनः।
समर्घं यदि विज्ञेयं दशद्रोणक्रयं वदेत् ॥36॥

यदि विशाखा नक्षत्र के मध्य मे शुक्र का अस्त हो तो धान्य की उपज अच्छी होती है, अनाज का भाव सम रहता है। दस द्रोण प्रमाण खरीदा जाता है ॥36॥

याम्यिनौ चन्द्र-शुक्रौ तु दक्षिणामुत्तरो तदा।
तारा-विशाखयोर्घातस्तदाऽर्घन्ति चतुष्पदाः ॥37॥

जब यायी चन्द्र और शुक्र दक्षिण और उत्तर मे हों और विशाखा की ताराओं का घात हुआ हो तो चौपायों की वृद्धि होती है ॥37॥

दक्षिणेनानुराधायां यदा च व्रजते शशी।
अप्रजस्य ग्रहीणस्य वस्त्रं द्रोणाय कल्पयेत् ॥38॥

---

1 युक्त मु०। 2 वाद्यत मु०। 3. च मु०। 4. वर्षा मु०।

निष्प्रभ और हीन चन्द्रमा दक्षिण मार्ग से अनुराधा मे गमन करता है तो वस्त्र महँगे होते हैं ॥38॥

ज्येष्ठा-मूलौ यदा चन्द्रो दक्षिणे व्रजतेऽप्रभः ।
तदा सस्यं च वस्त्रं च अर्थश्चापि[1] विनश्यति ॥39॥

प्रजानामनयो घोरस्तदा जायन्ति[2] तामस ।
प्रस्तक्रयस्य वस्त्रस्य तेन क्षीयन्ति तां प्रजाम् ॥40॥

जब प्रभार हित चन्द्रमा दक्षिण मे ज्येष्ठा और मूल नक्षत्र मे आता है, तब धान्य, वस्त्र और अर्थ का विनाश होता है। उक्त प्रकार की चन्द्रमा की स्थिति मे प्रजा में अन्न और वस्त्र के लिए हाहाकार हो जाता है तथा वस्त्र खरीदने मे प्रजा की हानि भी होती है ॥39-40॥

मूलं मन्देव सेवन्ते यदा दक्षिणतः शशी।
प्रजार्तिः सर्वधान्यानां आढका नु तदा भवेत् ॥41॥

जब चन्द्रमा दक्षिण से मन्द होता हुआ मूल नक्षत्र का सेवन करता है तब सभी प्रकार के धान्यो की उपज खूब होती है और वर्षा आढक प्रमाण होती है ॥41॥

कृत्तिकां रोहिणीं चित्रा[3] पुष्या-श्लेषा-पुनर्वसून् ।
व्रजति दक्षिणश्चन्द्रो दशप्रस्थं तदा भवेत् ॥42॥

जब दक्षिण चन्द्रमा कृत्तिका, रोहिणी, पुष्य, आश्लेषा, पुनर्वसु मे गमन करता है, तब दश प्रस्थ प्रमाण धान्य की बिक्री होती है अर्थात् फसल भी उत्तम होती है ॥42॥

मघां विशाखां च ज्येष्ठाऽनुराधे मूलमेव च ।
दक्षिणे व्रजते शुक्रश्चन्द्रे तदाऽऽढकमेव च ॥43॥

शुक्र और चन्द्र के दक्षिण मे मघा, विशाखा, ज्येष्ठा, अनुराधा और मूल मे गमन करने पर आढ़क प्रमाण धान्य की बिक्री होती है अर्थात् फसल कम होती है ॥43॥

कृत्तिकां रोहिणीं चित्रां विशाखां च मघां यदा।
दक्षिणेन ग्रहा यान्ति चन्द्रस्त्वाढकविक्रयः ॥44॥

जब ग्रह दक्षिण से कृत्तिका, रोहिणी, चित्रा, विशाखा और मघा नक्षत्र मे

1 शरीरी वार्थं मु० । 2 जायति मु० । 3. चैव मु० ।

गमन करते हैं तो आढ़क प्रमाण वस्तुओ की बिक्री होती है ॥44॥

गुरुः शुक्रश्च भौमश्च दक्षिणाः सहिता यदा ।
प्रस्थत्रयं[1] तदा वस्त्रैर्यान्ति मृत्युमुखं प्रजाः ॥45॥

जब गुरु, शुक्र और मगल दक्षिण मे स्थित हो तब धान्य की बिक्री तीन प्रस्थ की होती है और वस्त्र के लिए प्रजा मृत्यु के मुख मे जाती है अर्थात् अन्न और वस्त्र का अभाव होता है ॥45॥

उत्तरं भजते मार्गं शुक्रपृष्ठं तु चन्द्रमाः ।
महाधान्यानि वर्धन्ते कृष्णधान्यानि दक्षिणे ॥46॥

जब शुक्र उत्तर मार्ग मे आगे हो और चन्द्रमा के पीछे हो तब महाधान्यो की वृद्धि होती है। यदि यही स्थिति दक्षिण मार्ग मे हो तो काले रग के धान्य वृद्धिगत होते हैं ॥46॥

दक्षिणं चन्द्रभृंगं च यदा वृद्धतरं भवेत् ।
महाधान्यं तदा वृद्धिं कृष्णधान्यमथोत्तरम् ॥47॥

यदि चन्द्रमा का शृग दक्षिण की ओर बढता दिखलायी पडे तो महाधान्य गेहूँ, चना, जौ, चावल आदि की वृद्धि होती है तथा उत्तर शृग की वृद्धि होने पर काले रग के धान्य बढते है ॥47॥

कृत्तिकानां मघानां च रोहिणीनां विशाखयोः ।
उत्तरेण महाधान्यं कृष्ण [2]धान्यञ्च दक्षिणे ॥48॥

कृत्तिका, मघा, रोहिणी और विशाखा के उत्तर होने से महाधान्य और दक्षिण होने से कृष्ण धान्य की वृद्धि होती है ॥48॥

यस्य देशस्य नक्षत्रं न पीड्यते यदा यदा ।
तं देशं भिक्षवः स्फीताः संश्रयेयुस्तदा तदा ॥49॥

जिन-जिन देशो के नक्षत्र ग्रहो के द्वारा जब-जब पीडित —घातित न हो तब-तब भिक्षुओं को उन देशो मे प्रसन्न चित्त होकर आना चाहिए और वहाँ शान्ति-पूर्वक विहार करना चाहिए ॥ 49॥

धान्यं वस्त्रमिति ज्ञेयं तस्यार्थं च शुभाशुभम् ।
ग्रहनक्षत्रान् सम्प्रत्य कथितं भद्रबाहुना ॥50॥

1. प्रस्थत्रयं तदा वस्त्रैर्यान्ति मु० । 2. धान्न तु मु० ।

ग्रह और नक्षत्रों के शुभाशुभ योग से धान्य और वस्त्रों के भावों की तेजी-मन्दी को भद्रबाहु स्वामी ने कहा है ॥50॥

इति नैर्ग्रन्थे भद्रबाहुनिमित्ते संग्रहयोगार्धकाण्डो नाम पंचविंशतितमोऽध्यायः ॥25॥

विवेचन—तेजी-मन्दी जानने के अनेक नियम हैं। ग्रहों की स्थिति, उनका मार्गी होना या वक्री होना तथा उनकी ध्रुवाओं पर से तेजी-मन्दी का ज्ञान करना, आदि प्रक्रियाएँ प्रचलित हैं। इस संहिताग्रन्थ मे ग्रहो की स्थिति पर से वस्तुओं की तेजी-मन्दी का साधारण विचार किया गया है। बारह महीनो की तिथि, वार, नक्षत्र के सम्बन्ध से भी तेजी-मन्दी का विचार 'वर्ष प्रबोध' नामक ग्रन्थ में विस्तार से किया गया है। यहाँ सक्षेप मे कुछ प्रमुख योगो का निरूपण किया जायगा।

द्वादश पूर्णमासियों का विचार—चैत्र की पूर्णमासी को निर्मल आकाश हो तो किसी भी वस्तु से लाभ की सम्भावना नही रहती है। यदि इस दिन ग्रहण, भूकम्प, विद्युत्पात, उल्कापात, केतूदय और वृष्टि हो तो धान्य का सग्रह करना चाहिए। गेहूँ, जौ, चना, उडद, मूँग, सोना, चाँदी आदि पदार्थों मे इस पूर्णिमा के सातवें महीने के उपरान्त लाभ होता है। वैशाखी पूर्णिमा को आकाश के स्वच्छ रहने पर सभी वस्तुएँ तीन महीनों तक सस्ती होती हैं। गेहूँ, चना, वस्त्र, सोना आदि का भाव प्राय सम रहता है। बाजार में अधिक घटा-बढ़ी नही होती। यदि इस पूर्णिमा को चन्द्र परिवेष, उल्कापात, विद्युत्पात, भूकम्प, वृष्टि, केतूदय या अन्य किसी भी प्रकार का उत्पात दिखलाई पड़े तो धान्य के साथ कपास, वस्त्र, रूई आदि पदार्थ तेज होते हैं। जूट का भाव भी ऊँचा उठता है। गेहूँ, मूँग, उड़द, चना का संग्रह भाद्रपद मास मे ही लाभ देता है। सभी प्रकार के अन्नों का संग्रह लाभ देता है। चावल, जौ, अरहर, कांगुनी, कोदो, मक्का आदि अनाजों में दुगुना लाभ होता है। सोने, चाँदी, माणिक्य, मोती इन पदार्थों का मूल्य कुछ नीचे गिर जाता है। वैशाखी पूर्णिमा की मध्यरात्रि मे जोर से बिजली चमके और थोड़ी-सी वर्षा होकर बन्द हो जाय तो आगामी माघ मास मे गुड के व्यापार में अच्छा लाभ होता है। अनाज के सग्रह मे भी लाभ होता है। इस पूर्णिमा के प्रातःकाल सूर्योदय के समय बादल दिखलायी पड़ें तथा आकाश में अन्धकार दिखलायी पड़े तो अगहन महीने मे घी और अनाज मे अच्छा लाभ होता है। यों तो सभी महीनों में उक्त पदार्थों मे लाभ होता है, किन्तु घी, अनाज और गुड-चीनी मे अच्छा लाभ होता है। वैशाखी पूर्णिमा को स्वाति नक्षत्र का चतुर्थ चरण हो तथा शनिवार या रविवार हो तो उस वर्ष व्यापारियो को लाभ के साथ हानि भी होती है। बाजार में अनेक प्रकार की घटा-बढ़ी चलती है। ज्येष्ठ

पूर्णिमा को आकाश स्वच्छ हो, बादलों का अभाव रहे, निर्मल चाँदनी वर्तमान रहे तो सुभिक्ष होता है, साथ ही अनाज मे साधारण लाभ होता है। बाजार सन्तुलित रहता है, न अधिक ऊँचा ही जाता है और न नीचा ही। जो व्यक्ति ज्येष्ठ पूर्णिमा की उक्त स्थिति मे धान्य, गुड का संग्रह करता है, वह भाद्रपद और आश्विन में लाभ उठाता है। गेहूँ, चना, जौ, तिलहन में पौष के महीने में अधिक लाभ होता है। यदि इस पूर्णिमा को दिन मे मेघ, वर्षा हो और रात मे आकाश स्वच्छ रहे तो व्यापारियो को साधारण लाभ होता है तथा मार्गशीर्ष, माघ और फाल्गुन में वस्तुओं मे हानि होने की सम्भावना है। रात मे इस तिथि को बिजली गिरे, उल्कापात हो, भूकम्प हो, चन्द्र का परिवेष दिखलाई पडे, इन्द्रधनुष लाल या काले रंग का दिखलाई पडे तो अनाज का सग्रह करना चाहिए। इस प्रकार की स्थिति मे अनाज मे कई गुना लाभ होता है। सोना, चाँदी के मूल्य मे साधारण तेजी आती है। ज्येष्ठी पूर्णिमा को मध्य रात्रि मे चन्द्र परिवेष उदास-सा दिखलाई पडे और स्यार रह-रहकर बोलें तो अन्नसग्रह की सूचना समझना चाहिए। चारे का भाव भी तेज हो जाता है और प्रत्येक वस्तु मे लाभ होता है। घी का भाव कुछ सस्ता होता है तथा तेल की कीमत भी सस्ती होती है। अगहन और पौष मास मे सभी पदार्थों मे लाभ होता है। फाल्गुन का महीना भी लाभ के लिए उत्तम है। यदि ज्येष्ठी पूर्णिमा को चन्द्रोदय या चन्द्रास्त के समय उल्कापात हो और आकाश मे अनेक रग-बिरगी ताराएँ चमकती हुई भूमि पर गिरें तो सभी प्रकार के अनाजो मे तीन महीने के उपरान्त लाभ होता है। ताँबा, पीतल, काँसा आदि धातुओ मे और मशाले मे कुछ घाटा भी होता है।

आषाढी पूर्णिमा को आकाश निर्मल और उज्ज्वल चाँदनी दिखलायी पडे तो सभी प्रकार के अनाज पाँच महीने के भीतर तेज होते हैं। कार्त्तिक महीने से ही अनाज मे लाभ होना प्रारम्भ हो जाता है। सोने का भाव माघ के महीने से महँगा होता है। सट्टे के व्यापारियो को साधारण लाभ होता है। सूत, कपडा और जूट के व्यापार मे लाभ होता है, किन्तु इन वस्तुओ का व्यापार अस्थिर रहता है, जिससे हानि होने की भी सम्भावना रहती है। यदि आषाढी पूर्णिमा को मध्य रात्रि के पश्चात् आकाश लगातार निर्मल रहे तथा मध्य रात्रि के पहले आकाश मेघाच्छन्न रहे तो चैती फसल के अनाज मे लाभ होता है। अगहनी और भदई फसल के अनाज मे लाभ नही होता। साधारणतया वस्तुओ के भाव ऊँचे आते है। घी, गुड, तेल, चाँदी, बारदाना, गुवार, मटर आदि वस्तुओ का रुख भी तेजी की ओर रहता है। शेयर के बाजार मे भी हीनाधिक—घटा-बढी होती है। लोहा, रबर एवं इन पदार्थों से बनी वस्तुओ के व्यापार मे लाभ होने की सम्भावना अधिक रहती है। यदि आषाढ़ी पूर्णिमा को दिन भर वर्षा हो और रात में चाँदनी न निकले, बूँदा-बूँदी होती हो तो अनाज मे लाभ होने की सम्भावना नही

है। केवल सोना, चाँदी और गुड के व्यापार में अच्छा लाभ होता है। गुड, चीनी में कई गुना लाभ होता है। यदि इसी पूर्णिमा को बुध वक्री हुआ हो तो छः महीने तक सभी पदार्थों मे तेजी रहती है। जो पदार्थ विदेशो से आते हैं, उनका भाव अधिक तेज होता है। स्थानीय उत्पन्न पदार्थों का भाव अधिक तेज होता है। श्रावणी पूर्णिमा को आकाश निर्मल हो तो सभी वस्तुओ मे अच्छा लाभ होता है। यदि इस दिन स्वच्छ चाँदनी आकाश मे व्याप्त दिखलाई पडे तो नाना प्रकार के रोग फैलते है तथा लाल रंग की सभी वस्तुओ में तेजी आती है। गेहूँ और चावल की कमी रहती है। जिस स्थान पर श्रावणी के दिन चन्द्रमा स्वच्छ तथा काले छेदवाला दिखलाई पडे, उस स्थान मे दुर्भिक्ष के साथ खाद्यान्न की बडी भारी कमी हो जाती है, जिससे सभी व्यक्तियो को कष्ट होता है। लोहा, चाँदी, नीलम आदि बहुमूल्य पदार्थों का भाव भी तेज होता है। भाद्रपद मास की पूर्णिमा निर्मल होने पर धान्य का संग्रह नही करना चाहिए। यदि यह पूर्णिमा चन्द्रोदय से लेकर चन्द्रास्त तक निर्मल रहे तो धान्य मे लाभ नही होता है तथा खाद्यान्नो की कमी भी नही रहती है। सोना, चाँदी, शेयर, चीनी, गुड, घी, किराना, वस्त्र, जूट, कपास आदि पदार्थ समर्घ रहते हैं। इन पदार्थों के भावो मे अधिक ऊँच-नीच नही होती है। घटा-बढी का कारण शनि, शुक्र और मंगल है। यदि इस पूर्णिमा के नक्षत्र को इन तीनो ग्रहो द्वारा वेधा जाता हो, या दो ग्रहो द्वारा वेधा जाता हो तो सभी पदार्थ महँगे होते हैं। और तो और मिट्टी का भाव भी महँगा होता है। जिन पदार्थों की उत्पत्ति मशीनो के द्वारा होती है, उन पदार्थों मे कार्तिक मास से महँगाई होना आरम्भ होता है। आश्विन पूर्णिमा के दिन आकाश स्वच्छ, निर्मल हो तो धान्य का सग्रह करना अनुचित है, क्योंकि वस्तुओ मे लाभ होने की सम्भावना ही नही होती है। आकाश में मेघ आच्छादित हो तो अवश्य सग्रह करना चाहिए, क्योंकि इस खरीद मे चैत्र के महीने मे लाभ होता है।

कार्तिक पूर्णिमा को मेघाच्छन्न होने पर अनाज मे लाभ होता है। चीनी, गुड और घी मे हानि होती है। यदि यह पूर्णिमा निर्मल हो तो सामान्य तथा सभी वस्तुओ का भाव स्थिर रहता है। व्यापारियो को न अधिक लाभ ही होता है और न अधिक घाटा ही। मार्गशीर्ष और पौष की पूर्णिमा का फलादेश भी उपर्युक्त कार्तिक पूर्णिमा के तुल्य है। माघी पूर्णिमा को बादल हो तो धान्य खरीदने से सातवें महीने में लाभ होता है और फाल्गुनी पूर्णिमा को बादल हो, उल्कापात या विद्युत्पात हो तो धान्य मे सातवें महीने मे अच्छा लाभ होता है। घी, चीनी, गुड, कपास, रूई, जूट, सन और पाट के व्यापार मे लाभ होता है। माघी और फाल्गुनी इन दोनो पूर्णिमाओ के स्वच्छ होने पर सोने के व्यापार में लाभ होता है।

भौम ग्रह की स्थिति के अनुसार तेजी-मन्दी का विचार—जब मंगल मार्गी होता है, तब रूई मन्दी होती है। मेष राशि का मगल मार्गी हो तो मवेशी सस्ते होते हैं। वृष का मंगल मार्गी हो तो रूई तेज होकर मन्दी होती है तथा चाँदी मे घटा-बढ़ी होती है। मिथुन और कर्क राशि के मार्गी मंगल का फल तेजी-मन्दी के लिए नही है। सिंह का मंगल मार्गी होने पर एक मास तक अलसी और गेहूँ मे तेजी रहती है। कन्या का मंगल मार्गी हो तो रूई, अलसी, गेहूं, तेल, तिलहन आदि पदार्थ तेज होकर मन्दे होते है। तुला का मगल मार्गी होने पर गुजरात और कच्छ मे धान्य भाव को महँगा करता है, वृश्चिक का मगल मार्गी होने पर चौपायो मे लाभ करता है। धनु का मंगल मार्गी होने पर धान्य सस्ता करता है। मकर का मगल मार्गी हो तो पंजाब तथा बगाल में धान्य का भाव तेज होता है। कुम्भ का मगल मार्गी होने पर सभी प्रकार के धान्य सस्ते होते हैं और मीन के मगल मे भी धान्य का भाव सस्ता ही रहता है। मेष और वृश्चिक के बीच राशियो मे मगल के रहने पर दो मास तक धान्य भाव तेज रहता है। जिस महीने मे सभी ग्रह वक्री हो जाये, उस मास मे अधिक महँगाई होती है। मीन मे मंगल के वक्री होने पर धान्य और घी तेज, कुम्भ मे वक्री होने पर धान्य सस्ते और घी, तेल आदि तेज, मकर मे मंगल के वक्री होने से लोहा, मशीनरी, विद्युद्यन्त्र, गेहूँ, अलसी आदि पदार्थ तेज होते हैं। कर्क राशि मे मगल के वक्री होने से गेहूँ और अलसी मे घटा-बढी होती रहती है। जिस राशि मे मंगल वक्री होता है, उस राशि के धान्यादि अवश्य तेज होते हैं। माघ अथवा फाल्गुन मे कृष्ण पक्ष की 1, 2, 3 तिथि को मगल के वक्री होने पर अन्न का संग्रह करना चाहिए। इस संग्रह मे 15 दिनो के बाद ही चौगुना लाभ हो जाता है। जिस मास मे पूर्णिमा के दिन वर्षा होती है, उस मास मे गेहूँ, घी और धान्य तेज होते हैं।

बुध ग्रह की स्थिति से तेजी-मन्दी विचार - मेष राशि मे बुध के रहने से सोना महँगा होता है। 17 दिन मे गाय, बैल आदि पशुओ की हानि होती है। मोती, जवाहरात भी तेज होते हैं। वृष राशि के बुध मे सभी वस्तुओं मे साधारण घटा-बढ़ी, मिथुन राशि के बुध मे सभी प्रकार के अनाज सस्ते, कर्क के बुध मे अफीम का भाव तेज होता है। सिंह राशि के बुध में धान्य का भाव सम रहता है, खट्टे पदार्थ, देवदारु तेज होते हैं और 18 दिन मे सूत, वस्त्र, रेलवे के स्लीपर, साधारण लकड़ी का भाव तेज होता है। कन्या राशि मे बुध के रहने से छः महीने तक सोना, चीनी तेज होते हैं, पश्चात् मन्दे हो जाते हैं। तुला राशि के बुध मे धान्य मँहगे, वृश्चिक राशि के बुध मे चौपाये और अफीम महँगी, धनु के बुध मे अफीम महँगी, मकर के बुध मे समभाव, कुम्भ के बुध मे धान्य मे घटा-बढ़ी और मीन के बुध में रूई, अलसी मेथी, लौंग भी तेज होती हैं। फाल्गुन और आषाढ़ महीनो में बुध का उदय होने से धान्य, घी और लाल पदार्थ मँहगे होते हैं। पूर्व में

बुधोदय होने पर 25 दिन के बाद रुई मे 10 प्रतिशत तेजी आती है और पश्चिम मे बुधोदय होने पर रूई, कपास, सूत आदि मे सस्ती आती है। मार्गशीर्ष में बुधोदय हो तो रूई तेज होती है। पूर्व दिशा मे बुध का अस्त होने से 33 दिनो मे धान्य, घृतादि मन्दे होते हैं किन्तु रुई मे 15 प्रतिशत की तेजी आती है। पश्चिम मे बुध के अस्त होने से 15 दिन मे रुई 10 प्रतिशत तक सस्ती होती है। मेष *राशि से लेकर सिंह राशि तक बुध के मार्गी होने से कपडा*, चावल, हाथी, घोडा आदि पदार्थ सस्ते होते हैं। कन्या और तुला मे बुध के मार्गी होने से चन्दन, सूत, घृत, चीनी, अलसी आदि पदार्थ महँगे होते है। वृश्चिक मे बुध के मार्गी होने से एरण्ड, बिनौला और मूँगफली तेज हो जायगी। कुम्भ और मीन मे बुध के मार्गी होने से सोना, सुपारी, सरसो, सोठ, लाख, कपडा, गुड, खांड, तेल और मूँगफली आदि पदार्थ तेज होते हैं।

गुरु की स्थिति का फलादेश—वृष राशि मे गुरु के रहने से घी और धान्य का भाव अत्यन्त तेज होता है। मिथुन राशि मे गुरु के रहने से रूई, ताँबा, चाँदी, नारियल, तेल, घृत, अफीम पदार्थ पहले तेज, पश्चात् मन्दे होते हैं। कर्क राशि मे गुरु के रहने से सभी पदार्थ महँगे होते हैं। सिंह मे बृहस्पति के रहने से गेहूँ, घी तेज और कन्या मे रहने से ज्वार, मूँग, मोठ, चावल, घृत, तैल, सिंघाडा छ. महीने के बाद तेज, रूई तीन-चार महीने मे तेज तथा चाँदी मन्दी होती है। वृश्चिक राशि के गुरु मे सभी वस्तुएँ तेज होती है। धनु राशि के गुरु मे गेहूँ, चावल, जौ आदि अन्न महँगे, तैल, गुड, मद्य सस्ते होते है। मकर राशि मे गुरु के रहने से तीन महीने महँगी पश्चात् मन्दी आती है। मीन राशि के गुरु मे सभी वस्तुएँ तेज होती हैं। गुरु के अस्त होने के 31 दिन बाद रूई मे 10-20 रुपये की मन्दी आती है। फाल्गुन मास मे गुरु अस्त हो तो धान्य तेज और रूई मे 10-20 रुपये की मन्दी आती है। गुरु के वक्री होने पर सुभिक्ष, धान्य भाव सस्ता, धातु, रूई, केसर, कपूर आदि पदार्थ सस्ते होते है। गुरु के मार्गी होने से चाँदी, सरसो, रूई, चावल, घी मे निरन्तर घटा-बढी होती रहती है।

शुक्र की स्थिति का फलादेश—मेष के शुक्र मे सभी धान्य महँगे, वृष के शुक्र मे अनाज महँगा, रूई, मन्दी और अफीम तेज, मिथुन के शुक्र मे रूई मन्दी, अफीम तेज, कर्क के शुक्र मे सभी वस्तुएँ महँगी, रूई का भाव विशेष तेज, सिंह के शुक्र मे लाल रग के पदार्थ महँगे, कन्या मे सभी धान्य महँगे, तुला के शुक्र मे अफीम तेज, वृश्चिक के शुक्र मे अनाज सस्ता, धनु के शुक्र मे धान्य महँगे, मकर के शुक्र मे 20 दिन मे सभी अन्न महँगे, कुम्भ एव मीन के शुक्र मे अनाज सस्ते होते हैं। सिंह का शुक्र, तुला का मगल, कर्क का गुरु जब आता है, अब अन्न महँगा होता है।

शुक्र-उदय के दिन नक्षत्रानुसार फल

अश्विनी मे शुक्र के उदय होने पर जौ, तिल, उड़द का भाव तेज होता है। भरणी में शुक्र का उदय होने से तृण, धान्य, तिल, उडद, चावल, गेहूँ का भाव तेज होता है। कृत्तिका मे शुक्र उदय होने से सभी प्रकार के अन्न सस्ते होते हैं। रोहिणी मे समर्घता, मृगशिरा मे धान्य महँगे, आर्द्रा मे अल्पवृष्टि होने से महँगाई, पुनर्वसु मे अन्न का भाव महँगा, पुष्य मे धान्य भाव अत्यन्त महँगा तथा आश्लेषा से अनुराधा नक्षत्र तक शुक्र के उदय होने से तृण, अन्न, काष्ठ, चतुष्पद आदि सभी पदार्थ महँगे होते हैं।

शुक्र और शनि जब दोनो एक राशि पर अस्त हो तो सब अनाज तेज होते है। शुक्र वक्री हो तो सभी अनाज मन्दे तथा, घृत, तेल तेज होते है। शुक्र के मार्गी होने पर 5 दिनो के उपरान्त सोना, चाँदी, मोती, जवाहरात आदि महँगे होते हैं।

शनि का फलादेश—शनि के उदय के तीन दिन बाद रूई तेज होती है। मूँग मशाले, चावल, गेहूँ के भावो मे घटा-बढी होती रहती है। अश्विनी और भरणी नक्षत्र मे शनि वक्री हो तो एक वर्ष तक पीडा, धान्य और चौपायो का मूल्य बढ़ जाता है। मघा पर वक्री होकर आश्लेषा पर जब गुरु आता है तो गेहूँ, घृत, शाल, प्रबाल तेज होते हैं। ज्येष्ठा पर वक्री होकर अनुराधा पर शनि आता है तो सभी वस्तुएँ तेज होती है। उत्तराषाढ़ा पर वक्री होकर पूर्वाषाढा पर आता है तो सभी वस्तुओ मे अत्यधिक घटा-बढी होती है। गुरु और शनि दोनो एक साथ वक्री हो और शनि 10/11 राशि का हो तो गेहूँ, तिल, तेल आदि पदार्थ 9 महीने तक तेज होते है। शनि के वक्री होने के तीन महीने उपरान्त गेहूँ, चावल, मूँग, ज्वार, धान्य, खजूर, जायफल, घी, हल्दी, नील, धनियाँ, जीरा, मेथी, अफीम, घोडा आदि पदार्थ तेज और सोना, चाँदी, मणि, माणिक्य आदि पदार्थ मन्दे एवं नारियल, सुपाडी, लवग, तिल, तेल आदि पदार्थों मे घटा-बढी होती रहती है। शनि मार्गी हो तो दो मास मे तेल, हींग, मिर्च मशाले को तेज और अफीम, रूई, सूत, वस्त्र आदि पदार्थों को मन्दा करता है। यदि शनि कृत्तिका, रोहिणी, मृगशिरा, आर्द्रा, पुनर्वसु, पुष्य और आश्लेषा नक्षत्र मे वक्री हो तो सभी वस्तुएँ महँगी होती हैं।

तेजी-मन्दी के लिए उपयोगी पंचवार का फल—जिस महीने मे पाँच रविवार हो उस महीने मे राज्यभय, महामारी, सोना आदि पदार्थों मे तेजी होती है। किसी भी महीने मे पाँच सोमवार होने से सम्पूर्ण पदार्थ मन्दे, घृत-तेल-धान्य के भाव मन्दे रहते है। पाँच मंगलवार होने से अग्नि-भय, वर्षा का निरोध, अफीम मन्दी तथा धान्यभाव घटता-बढता रहता है। पाँच बुधवार होने से घी, गुड, खाँड आदि रस तेज होते है, रूई, चाँदी घट-बढ़कर अन्त मे तेज होती है। पाँच गुरुवार होने से सोना, पीतल, सूत, कपडा, चावल, चीनी आदि पदार्थ मन्दे होते है। पाँच

शुक्रवार होने से प्रजा की वृद्धि, धान्य मन्दा, लोग सुखी तथा अन्य भोग्य पदार्थ सस्ते होते है, पाँच शनिवार होने से उपद्रव, अग्निभय, नशीले पदार्थों में मन्दी, धान्यभाव अस्थिर और तेल महँगा होता है। लोहे का भाव पाँच शनिवार होने से महँगा तथा अस्त्र-शस्त्र, मशीन के कल-पुर्जों का भाव पाँच मगल और पाँच गुरु होने से महँगा होता है।

संक्रान्ति के वारों का फल—रविवार को संक्रान्ति का प्रवेश हो तो राज-विग्रह, अनाज मँहगा, तेल, घी, तिल आदि पदार्थों का सग्रह करने से लाभ होता है। सोमवार को संक्रान्ति का प्रवेश हो तो अनाज महँगा, प्रजा को सुख; घृत, तेल, गुड, चीनी आदि के सग्रह मे तीसरे महीने लाभ होता है। मगलवार को संक्रान्ति प्रवेश करे तो घी, तेल, धान्य आदि पदार्थ तेज होते है। लाल वस्तुओ मे अधिक तेजी आदि आती है तथा सभी वस्तुओ के सग्रह मे दूसरे महीने मे लाभ होता है। बुधवार को सक्रान्ति का प्रवेश होने पर श्वेत वस्त्र, श्वेत रग के अन्य पदार्थ महँगे तथा नील, लाल और श्याम रग के पदार्थ दूसरे महीने मे लाभप्रद होते हैं। गुरुवार को सक्रान्ति का प्रवेश हो तो प्रजा सुखी, धान्य सस्ते; गुड, खाँड आदि मधुर पदार्थों मे दो महीने के उपरान्त लाभ होता है। शुक्रवार को सक्रान्ति प्रविष्ट हो तो सभी वस्तुएँ सस्ती, लोग सुखी-सम्पन्न, अन्न की अत्यधिक उत्पत्ति, पीली वस्तुएँ, श्वेत वस्त्र तेज होते है और तेल, गुड के सग्रह मे चौथे मास में लाभ होता है। शनिवार को सक्रान्ति के प्रविष्ट होने से धान्य तेज, प्रजा दुखी राजविरोध, पशुओ को पीडा, अन्न नाश तथा अन्न का भाव भी तेज होता है।

जिस वार के दिन सक्रान्ति का प्रवेश हो, उसी वार को उस मास में अमा-वास्या हो, तो खर्प्पर योग होता है। यह जीवो का और धान्य का नाश करने वाला होता है। इस योग मे अनाजो मे घटा-बढी चलती रहती है।

पहली सक्रान्ति शनिवार को प्रविष्ट हुई हो, इससे आगे वाली दूसरी सक्रान्ति रविवार को प्रविष्ट हुई हो और तीसरी आगे वाली मगलवार को प्रविष्ट हो तो खर्पर योग होता है। यह योग अत्यन्त कष्ट देने वाला है।

मकर सक्रान्ति का फल—पौष महीने मे मकर सक्रान्ति रविवार को प्रविष्ट हो तो धान्य का मूल्य दुगुना होता है। शनिवार को हो तो तिगुना, मगल के दिन प्रविष्ट हो तो चौगुना धान्य का मूल्य होता है। बुध और शुक्रवार को प्रविष्ट होसे से समान भाव और गुरु तथा सोमवार को हो तो आधा भाव होता है।

शनि, रवि और मगल के दिन मकर सक्रान्ति का प्रवेश हो तो अनाज का भाव तेज होता है। यदि मेष और कर्क सक्रान्ति का रवि, मगल और शनिवार को प्रवेश हो तो अनाज महँगा, ईति-भीति आदि का आतक रहता है। कार्तिक तथा मार्गशीर्ष की संक्रान्ति के दिन जलवृष्टि हो तो पौष में अनाज सस्ता होता

है तथा फसल मध्यम होती है। कर्क अथवा मकर संक्रान्ति शनि, रवि या मंगल वार की हो तो भूकम्प का योग होता है। प्रथम संक्रान्ति प्रवेश के नक्षत्र में दूसरी सक्रान्ति प्रवेश का नक्षत्र दूसरा या तीसरा हो तो अनाज सस्ता होता है। चौथे या पाँचवें पर प्रवेश हो तो धान्य तेज एवं छठे नक्षत्र मे प्रवेश हो तो दुष्काल होता है।

सक्रान्ति से गणित द्वारा तेजी-मन्दी का परिज्ञान—संक्रान्ति का जिस दिन प्रवेश हो उस दिन जो नक्षत्र हो उसकी सख्या मे तिथि और बार की सख्या जो उस दिन की हो, उसे मिला देना चाहिए। इसमे जिस अनाज की तेजी-मन्दी जानना हो उसके नाम के अक्षरों की सख्या मिला देना। जो योगफल हो उसमे तीन का भाग देने से एक शेष बचे तो वह अनाज उस सक्रान्ति के मास मे मन्दा बिकेगा, दो शेष बचे तो समान भाव रहेगा और शून्य शेष बचे तो वह अनाज महँगा होगा।

सक्रान्ति जिस प्रहर मे जैसी हो, उसक अनुसार सुख-दु.ख, लाभालाभ आदि की जानकारी निम्न चक्र द्वारा करनी चाहिए।

वारानुसार संक्रान्ति फलावबोधक चक्र

वार	नक्षत्र	नाम	फल	काल	फल	दिशा
रवि	उग्र	घोरा	शूद्रोंको सुख	पूर्वाह्न	विप्रोंको सुख	पूर्व
सोम	क्षिप्र	ध्वांक्षी	वैश्योंको सुख	मध्याह्न	वैश्योंको सुख	दक्षिण कोण
मगल	चर	महोदरी	चोरोंको सुख	अपराह्न	शूद्रोंको सुख	पश्चिम कोण
बुध	मैत्र	मंदाकिनी	राजाओंको सुख	प्रदोष	पिशाचोंको सुख	दक्षिण
गुरु	ध्रुव	मन्दा	द्विजगणोंको सुख	अर्द्धरात्रि	राक्षसोंको सुख	उत्तर कोण
शुक	मिश्र	मिश्रा	पशुओंको सुख	अपररात्रि	नटादिको सुख	पूर्व कोण
शनि	दारुण	राक्षसी	चाण्डालोंको सुख	प्रत्यूषकाल	पशुपालकोंको सुख	उत्तर

ध्रुव-चर-उग्र-मिश्र-लघु-मृदु-तीक्ष्ण सज्ञक नक्षत्र—उत्तरा फाल्गुनी, उत्तराषाढ़ा, उत्तराभाद्रपद और रोहिणी ध्रुव संज्ञक, स्वाति, पुनर्वसु, श्रवण, धनिष्ठा और शतभिषा चर या चल संज्ञक, विशाखा और कृत्तिका मिश्र सज्ञक, हस्त, अश्विनी, पुष्य और अभिजित् क्षिप्र या लघु सज्ञक, मृगशिर, रेवती, चित्रा और अनुराधा मृदु या मैत्र सज्ञक एवं मूल, ज्येष्ठा, आर्द्रा और आश्लेषा तीक्ष्ण या दारुण संज्ञक हैं।

अधोमुख संज्ञक—मूल, आश्लेषा, विशाखा, कृत्तिका, पूर्वाफाल्गुनी, पूर्वाषाढ़ा पूर्वाभाद्रपद, भरणी और मघा अधोमुख सज्ञक हैं।

ऊर्ध्वमुख सज्ञक—आर्द्रा, पुष्य, श्रवण, धनिष्ठा और शतभिषा ऊर्ध्वमुख संज्ञक हैं।

तिर्यड् मुख संज्ञक—अनुराधा, हस्त, स्वाति, पुनर्वसु, ज्येष्ठा और अश्विनी तिर्यङ् मुख सज्ञक हैं।

दग्धसज्ञक नक्षत्र—रविवार को भरणी, सोमवार को चित्रा, मंगलवार को उत्तराषाढ़ा, बुधवार को धनिष्ठा, बृहस्पतिवार को उत्तराफाल्गुनी, शुक्रवार को ज्येष्ठा और शनिवार को रेवती दग्धसज्ञक है।

मास शून्य नक्षत्र— चैत मे रोहिणी और अश्विनी, वैशाख मे चित्रा और स्वाति, ज्येष्ठ मे उत्तराषाढा और पुष्य, आषाढ मे पूर्वाफाल्गुनी और धनिष्ठा, श्रावण मे उत्तराषाढ़ा और श्रवण, भाद्रपद मे शतभिषा और रेवती, आश्विन मे पूर्वाभाद्रपद, कार्तिक मे कृत्तिका और मघा, मार्गशीर्ष मे चित्रा और विशाखा, पौष मे आर्द्रा, अश्विनी और हस्त, माघ मे श्रवण और मूल एव फाल्गुन मे भरणी और ज्येष्ठा शून्य नक्षत्र है।

सक्रान्ति प्रवेश के दिन नक्षत्र का स्वभाव और सज्ञा अवगत करके वस्तु की तेजी-मन्दी जाननी चाहिए। यदि सक्रान्ति का प्रवेश तीक्ष्ण, दग्ध या उग्र सज्ञक नक्षत्र मे होता है, तो सभी वस्तुओ की तेजी समझनी चाहिए। मृदु और ध्रुव सज्ञक नक्षत्रो मे सक्रान्ति का प्रवेश होने से समान भाव रहता है। दारुण सज्ञक नक्षत्र मे सक्रान्ति का प्रवेश होने से खाद्यान्नो का अभाव रहता है, सभी अन्य उपभोग की वस्तुएँ भी उपलब्ध नही हो पाती।

संक्रान्ति जिस वाहन पर रहती है, जो वस्तु धारण करती है, जिस वस्तु का भक्षण करती है, उस वस्तु की कमी होती है तथा वह वस्तु महँगी भी होती है। अत सक्रान्ति के वाहनचक्र से भी वस्तुओ की नेजी-मन्दी जानी जा सकेगी।

रवि नक्षत्र फल—अश्विनी मे सूर्य के रहने से सभी अनाज, सभी रस, वस्त्र, अलसी, एरण्ड, तिल, मेथी, लालचन्दन, इलायची, लौग, सुपारी, नारियल, कपूर, हीग, हिंगलु आदि तेज होते है। भरणी मे सूर्य के रहने से चावल, जौ, चना, मोठ, अरहर, अलसी, गुड, घी, अफीम, मँग आदि पदार्थ तेज होते है। कृत्तिका मे श्वेत पुष्प, जौ, चावल, गेहूँ, मूँग, भोठ, राई और सरसो तेज होते है। रोहिणी मे चावल आदि सभी धान्य, अलसी, सरसो, राई, तैल, दाख, गुड, खाँड, सुपारी, रुई, सूत-जूट आदि पदार्थ तेज होते हैं। मृगशिरा मे सूर्य के रहने से जलोत्पन्न पदार्थ नारियल, सर्वफल, रुई, सूत, रेशम, वस्त्र, कपूर, चन्दन, चना आदि पदार्थ तेज होते हैं। आर्द्रा मे रवि के रहने से घी, गुड़, चीनी, चावल, चन्दन, लाल नमक, कपास, रूई, हल्दी, सोठ, लोहा, चाँदी आदि पदार्थ तेज होते है। पुनर्वसु नक्षत्र मे रहने से उडद, मूँग, मोठ, चावल, मसूर, नमक, सज्जी, लाख, नील, सिल, एरण्ड, माँजुफल, केशर, कपूर, देवदारु, लौग, नारियल, श्वेत वस्तु आदि पदार्थ महँगे होते है। पुष्य नक्षत्र मे रवि के रहने से तिल, तैल, मद्य, गुड, ज्वार, गुग्गुल, सुपाड़ी, सोठ, मोम, हीग, हल्दी, जूट, ऊनी वस्त्र, शीशा, चाँदी आदि वस्तुएँ तेज होती है।

संक्रान्तिवाहनफलबोधक चक्र

करण	बव	बालव	कौलव	तैतिल	गर	वणिज	विष्टि	शकुनि	चतुष्पद	नाग	किंस्तुघ्न
स्थिति	बैठी	बैठी	खड़ी	सोती	बैठी	खड़ी	बैठी	सोती	खड़ी	सोती	खड़ी
फल	मध्यम	मध्यम	महर्घ	समर्घ	मध्यम	महर्घ	महर्घ	महर्घ	समर्घ	समर्घ	महर्घ
वाहन	सिंह	व्याघ्र	वराह	गर्दभ	हस्ती	महिषी	घोडा	कुत्ता	मेंढा	बैल	कुक्कुट
उपवाहन	गज	अश्व	बैल	मेंढा	गर्दभ	ऊँट	सिंह	शार्दूल	महिष	व्याघ्र	वानर
फल	भय	भय	पीडा	सुभिक्ष	लक्ष्मी	क्लेश	स्थैर्य	सुभिक्ष	क्लेश	स्थैर्य	मृत्यु
वस्त्र	श्वेत	पीत	हरित	पाण्डु	रक्त	श्याम	काला	चित्र	कम्बल	नग्न	घनवर्ण
आयुध	भुशुंडी	गदा	खड्ग	दण्ड	धनुष	तोमर	कुन्त	पाश	अकुश	तल-वार	वाण
पात्र	सुवर्ण	रूपा	ताम्र	कांस्य	लोह	तीकर	पत्र	वस्त्र	कर	भूमि	काष्ठ
भक्ष्य	अन्न	पायस	भक्ष्य	पक्वान्न	पय	दधि	चित्रान्न	गुड	मधुर	घृत	शर्करा
लेपन	कस्तूरी	कुङ्कुम	चन्दन	माटी	गोरो-चन	आँवला	हल्दी	सुरमा	सिन्दूर	अगर	कपूर
वर्ण	देव	भूत	सर्प	पशु	मृग	विप्र	क्षत्री	वैश्य	शूद्र	मिश्र	अन्त्यज
पुष्प	पुन्नाग	जाती	बकुल	केतकी	बेल	अर्क	कमल	दूर्वा	मल्लिका	पाटल	जपा
भूषण	नूपुर	कंकण	मोती	मूँगा	मुकुट	मणि	गुंजा	कौड़ी	कीलक	पुन्नाग	सुवर्ण
कंचुकी	विचित्र	पर्ण	हरित	भूर्जपत्र	पीत	रा.श्वेत	नील	कृष्ण	अञ्जन	वल्कल	पाण्डुर
वय	बाला	कुमारी	गता-लका-	युवा	प्रौढा	प्रग-ल्भा	वृद्धा	वन्ध्या	अति-वन्ध्या	पुत्र-वती	सेव्या

शकाब्द पर से चैत्रादि मासों में समस्त वस्तुओं की तेजी-मन्दी अवगत करने के लिए ध्रुवांक

मास १२	चैत्र	वैशाख	ज्येष्ठ	आषाढ़	श्रावण	भा. प.	आश्वि.	कार्तिक	मा.शी.	पौष	माघ	फाल्गु.
जव-जौ	०	२	१	०	२	२	२	१	०	२	१	०
चना	०	२	१	०	२	२	२	१	०	२	१	०
गेहूँ	०	२	१	०	२	२	२	१	०	२	१	०
चावल	०	२	१	०	२	२	२	१	०	२	१	०
तिल	०	२	१	०	२	२	२	१	०	२	१	०
चीनी	०	२	१	०	२	२	२	१	०	२	१	०
गुड़	०	२	१	०	२	२	२	१	०	२	१	०
घी	१	०	२	१	०	०	०	२	१	०	२	१
नमक	१	०	२	१	०	०	०	२	१	१	२	१
उड़द	२	१	०	२	१	१	१	०	२	१	०	२
अरहर	०	२	१	०	२	२	२	१	०	२	१	०
मूँग	२	१	०	२	१	१	१	०	२	१	०	२
रूई	१	०	२	१	०	०	०	२	१	०	२	१
रेंडी	१	०	२	१	०	०	०	२	१	०	२	१
सूत	२	१	०	२	१	१	१	०	२	१	०	२
वस्त्र	२	१	०	२	१	१	१	०	२	१	०	२
कम्बल	०	२	१	०	२	२	२	१	०	२	१	०
पाट	०	२	१	०	२	२	२	१	०	२	१	०
सुपारी	१	०	२	१	०	०	०	२	१	०	२	१
सोंठ	०	२	१	०	२	२	२	१	०	२	१	०
तेल	२	१	०	२	१	१	१	०	२	१	०	२
फिटकिरी	१	०	२	१	०	०	०	२	१	०	२	१
हींग	२	१	०	२	१	१	१	०	२	१	०	२
हल्दी	२	१	०	२	१	१	१	०	२	१	०	२
लौंग	०	२	१	०	२	२	२	१	०	२	१	०
जीरा	२	१	०	२	१	१	१	०	२	१	०	२
अजवाइन	२	१	०	२	१	१	१	०	२	१	०	२
कपूर	२	१	०	२	१	१	१	०	२	१	०	२
कस्तूरी	०	२	१	०	२	२	२	१	०	२	१	०
धनिया	१	१	२	१	०	०	०	२	१	०	२	१

आश्लेषा में रवि के रहने से अलसी, तिल, तैल, गुड, शेमर, नील और अफीम महँगे होते हैं। मघा मे रवि के रहने से ज्वार, एरण्ड बीज, दाख, मिरच, तैल और अफीम महँगे होते हैं। पूर्वा फाल्गुनी मे रहने से सोना, चाँदी, लोहा, घृत, तैल, सरसो, एरण्ड, सुपाड़ी, नील, बाँस, अफीम, जूट आदि तेज होते है। उत्तरा फाल्गुनी में रवि के रहने से ज्वार, जौ, गुड, चीनी, जूट, कपास, हल्दी, हरड, हींग, क्षार और कत्था आदि तेज होते हैं। हस्त मे रवि के रहने से कपडा, गेहूँ, सरसो आदि तेज होते हैं। चित्रा मे रहने से गेहूँ, चना, कपास, अरहर, सूत, केशर, लाल कपड़ा तेज होते है। स्वाति मे रहने से धातु, गुड, खाँड, तेल, हिंगुर, कपूर, लाख, हल्दी, रूई, जूट आदि तेज होते हैं। अनुराधा और विशाखा में रहने से चाँदी, चावल, सूत, अफीम आदि महँगे होते है। ज्येष्ठा और मूल में रहने से चावल, सरसो, वस्त्र, अफीम आदि पदार्थ तेज होते है। पूर्वाषाढा मे रहने से तिल, तैल, गुड़, गुग्गुल, हल्दी, कपूर, ऊनी वस्त्र, जूट, चाँदी आदि पदार्थ तेज होते हैं। उत्तराषाढा और श्रवण मे रवि के होने से उडद, मूँग, जूट, सूत, गुड, कपास, चावल, चाँदी, बाँस, सरसो आदि पदार्थ तेज होते है। धनिष्ठा मे रहने से मूँग, मसूर और नील तेज होते हैं। शतभिषा मे रवि के रहने से सरसो, चना, जूट, कपड़ा, तैल, नील, हीग, जायफल, दाख, छुहारा, सोठ आदि तेज होते हैं। पूर्वा भाद्रपद मे सूर्य के रहने से सोना चाँदी, गेहूँ, चना, उडद, घी, रुई, रेशम, गुग्गुल, पीपरा मूल आदि पदार्थ तेज होते है। उत्तराभाद्रपद मे रवि के होने से सभी रस, धान्य और तेल एव रेवती में रहने से मोती, रत्न, फल-फूल, नमक, सुगन्धित पदार्थ, अरहर, मूँग, उडद, चावल, लहसुन, लाख, रूई, सज्जी आदि पदार्थ तेज होते हैं।

उक्त चक्र द्वारा तेजी-मन्दी निकालने की विधि

शाक खगाब्धिभूपोन 1649 शालिवाहनभूपते ।
अनेन युक्तो ध्रुव्यांकश्चैत्रादि प्रतिमासके ।।
रुद्रनेत्रै हृते शेषे फलं चन्द्रेण मध्यमम् ।
नेत्रेण रसहानिश्च शून्येनार्घं स्मृतं बुधैः ।।

अर्थात् शक वर्ष की सख्या मे से 1649 घटा कर, शेष जिस मास मे जिस पदार्थ का भाव जानना हो उसके ध्रुवांक जोड़कर योगफल मे 3 का भाग देने से एक शेष समता, दो शेष मन्दा और शून्य शेष में तेजी कहना चाहिए। विक्रम सवत् मे से 135 घटाने पर शक सवत् हो जाता है। उदाहरण—विक्रम संवत् 2013 के ज्येष्ठ मास मे चावल की तेजी-मन्दी जाननी है। अतः सर्वप्रथम विक्रम सवत्—बनाया—2013-135=1878 शक संवत्। सूत्र-नियम के अनुसार 18 /8—1649=229 और ज्येष्ठ मास मे चावल का ध्रुवाक 1 है, इसे जोड़ा

तो = 229 + 1 = 230; इसमे 3 से भाग दिया = 230 ÷ 3 = 76, शेष 2 रहा। अत चावल का भाव मन्दा आया। इसी प्रकार समझ लेना चाहिए।

दैनिक तेजी-मन्दी जानने का नियम—जिस देश मे, जिस वस्तु की, जिस दिन तेजी-मन्दी जाननी हो उस देश, वस्तु, वार, नक्षत्र, मास, राशि इन सबके ध्रुवाको को जोडकर 9 का भाग देने से शेष के अनुसार तेजी-मन्दी का ज्ञान 'तेजी-मन्दी के चक्र' के अनुसार देखनी चाहिए।

देश तथा नगरों की ध्रुवा—बिहार 166, बगाल 247, आसाम 791, मध्य-प्रदेश 108, उत्तर प्रदेश 890, बम्बई 198, पजाब 419, रगून 167, नेपाल 154, चीन 642, अजमेर 167, हरिद्वार 272, बीकानेर 213, सूरत 128, अमेरिका 322, योरोप 976।

मास ध्रुवा—चैत्र 61, वैशाख 63, ज्येष्ठ 65, आषाढ 67, श्रावण 69, भाद्रपद 71, आश्विन 73, कार्तिक 51, मार्गशीर्ष 53, पौष 55, माघ 57, फाल्गुन 59।

सूर्य राशि ध्रुवा—मेष 520, वृष 762, मिथुन 510, कर्क 218, सिंह 830, कन्या 260, तुला 503, वृश्चिक 711, धनु 524, मकर 554, कुम्भ 270, मीन 586।

तिथि ध्रुवा—प्रतिपदा 610, द्वितीया 710, तृतीया 481, चतुर्थी 357, पचमी 634, षष्ठी 304, सप्तमी 812, अष्टमी 111, नवमी 565, दशमी 305, एकादशी 233, द्वादशी 261, त्रयोदशी 524, चतुर्दशी 552, पूर्णिमा 630, अमावस्या 166।

वार ध्रुवा—रविवार 137, सोमवार 94, मगल 809, बुध 702, गुरु 713, शुक्र 808, शनि 85।

ससार का कुल ध्रुवा—2085।

नक्षत्र ध्रुवा अश्विनी 176, भरणी 783, कृत्तिका 370, रोहिणी 775, मृगशिरा 682, आर्द्रा 146, पुनर्वसु 540, पुष्य 634, आश्लेषा 170, मघा 73, पूर्वाफाल्गुनी 85, उत्तराफाल्गुनी 148, हस्त 810, चित्रा 305, स्वाती 861, विशाखा 734, अनुराधा 712, ज्येष्ठा 716, मूल 743, पूर्वाषाढ़ा 614, उत्तराषाढा 623, अभिजित् 683, श्रवण 657, धनिष्ठा 500, शतभिषा 564, पूर्वाभाद्रपद 336, उत्तराभाद्रपद 183, रेवती 720।

पदार्थों की ध्रुवा—सोना 253, चाँदी 760, ताँबा 563, पीतल 258, लोहा 915, काँसा 249, पत्थर 163, मोती 142, रूई 717, कपडा 127, पाट 476, सुर्ती 103, तम्बाकू 240, सुपाड़ी 252, लाह 88, मिरच 268, घी 464, इत्र 75, गुड, 256, चीनी 328, ऊन 112, शाल 811, धान 712, गेहूँ 232, तेल 801, चावल 774, मूँग 801, तीसी 386, सरसो

858, अरहर 333, नमक 317, जीरा, 156, अफीम 263, सोडा 156, गाय 132, बैल 162, भैंस 612, भेड 618, हाथी 830, घोडा 835।

तेजी-मन्दी जानने का चक्र—सूर्य 1 तेज, चन्द्र 2 अतिमन्द, भौम 3 तेज, राहु 4 अति तेज, बृहस्पति 5 मन्द, शनि 6 तेज, राहु 7 सम, केतु 8 तेज, शुक्र 0 तेज।

उदाहरण—बम्बई मे चैत्र सुदि सप्तमी रविवार को गेहूँ का भाव जानना है। अत सभी ध्रुवाओ का जोड किया। बम्बई की ध्रुवा 198, सूर्य मेष राशि का होने से 520, मास ध्रुवा 61, वार ध्रुवा 137, तिथि ध्रुवा 812, इस दिन कृत्ति का नक्षत्र ध्रुवा 370, गेहूँ ध्रुवा 232 इन सबका योग किया। 198+520+61+137+812+370+232=2330। इसमे 9 का भाग दिया= 2330 -9=258 लब्धि, 8 शेष। तेजी-मन्दी जानने के चक्र मे देखने के 8 शेष मे केतु तेज करने वाला हुआ अर्थात् तेजी होगी।

दैनिक तेजी-मन्दी निकालने की अन्य रीति

वस्तु विंशोपक धातु—सोना 96, चाँदी 71, पीतल 59, मूँगा 51, लोहा 54, सीसा 90, काँसा 127, मोती 95, राँगा 67, ताँबा 10, कुकुम 25।

अनाज और किराना—कर्पूर 102, हर्रे 73, जीरा 70, चीनी 102, मिश्री 103, ज्वार 100, घी 50, तेल 10, नमक 59, हीग 62, सुपारी 204, अरहर 72, मिर्च 83, सूत 94, सरसो 808, कपडा 100, चपडा 87, मूँग 15, सोठ 100, गुड 40, बिनोला 88, मजीठ 144, नारियल 78, छुहारा 144, चावल 17, जौ 57, साठी 165, गेहूँ 14, उडद 80, तिल 53, चना 56, कपास 127, अफीम 192, रूई 77।

पशु—घोडा 770, हाथी 64, भैंस 92, गाय 77, बैल 87, बकरी 60, साँड 94, भेड 85।

नक्षत्र विंशोपक—अश्विनी 10, भरणी 10, कृत्तिका 96, रोहिणी 20, मृगशिरा 56, आर्द्रा 86, पुनर्वसु 21, पुष्य 64, आश्लेषा 135, मघा 150, पूर्वाफाल्गुनी 220, उ० फा० 72, हस्त 334, चित्रा 21, स्वाति 210, विशाखा 320, अनुराधा 493, ज्येष्ठा 559, मूल 552, पू० फा० 142, उ० फा० 420, श्रवण 450, धनिष्ठा 736, शतभिषा 576, पूर्वाभाद्रपद 775, उत्तरा भाद्रपद 126, रेवती 256।

सक्रान्ति राशि विंशोपक—मेष 37, वृष 84, मिथुन 86, कर्क 109, सिंह 125, कन्या 102, तुला 104, वृश्चिक 144, धनु 144, मकर 198, कुम्भ 190, मीन 180।

तिथि विशोपक—प्रतिपदा 18, द्वितीया 20, तृतीया 22, चतुर्थी 24, पंचमी 26, षष्ठी 25, सप्तमी 23, अष्टमी 21, नवमी 19, दशमी 17, एकादशी 15, द्वादशी 13, त्रयोदशी 11, चतुर्दशी 9, अमावस्या 9, पूर्णिमा 16।

वार—रविवार 40, सोम 50, मगल 50, बुध 72, गुरु 65, शुक्र 24, शनि 14।

तेजी-मन्दी निकालने की तिथि—जिस मास की या जिस दिन की तेजी-मन्दी निकालनी हो, उस महीने की संक्रान्ति का विशोपक ध्रुवा, तिथि, वार और नक्षत्र के विशोपक ध्रुवाओ को जोड 3 का भाग देने से एक शेष रहने से मन्दी, दो शेष मे समान और शून्य शेष मे तेजी होती है।

तेजी-मन्दी निकालने का अन्य नियम—गेहूँ की अधिकारिणी राशि कुम्भ, सोना की मेष, मोती की मीन, चीनी की कुम्भ, चावल की मेष, ज्वार की वृश्चिक, रूई की मिथुन और चाँदी की कर्क है। जिस वस्तु की अधिकारिणी राशि से चन्द्रमा चौथा, आठवाँ तथा बारहवाँ हो तो वह वस्तु तेज होती है, अन्य राशि पडने से सस्ती होती है।

सूर्य, मगल, शनि, राहु, केतु ये क्रूर ग्रह हैं। ये क्रूर ग्रह जिस वस्तु की अधिकारिणी राशि से पहले, दूसरे, चौथे पाँचवें, सातवें, आठवें, नौवें, और बारहवे जा रहे हो, वह वस्तु तेज होती है। जितने क्रूर ग्रह उपर्युक्त स्थानो मे जाते है, उतनी ही वस्तु अधिक तेज होती है।

षड्विंशतितमोऽध्यायः

नमस्कृत्य महावीरं सुरासुर[1]जनैर्नतम्।
स्वप्नाध्यायं प्रवक्ष्यामि शुभाशुभसमीरितम्॥1॥

देव और दानवो के द्वारा नमस्कार किये गये भगवान् महावीर स्वामी को नमस्कार कर शुभाशुभ मे युक्त स्वप्नाध्याय का वर्णन करता हूँ॥1॥

1 नमस्कृताम् मु०।

स्वप्नमाला दिवास्वप्नोऽनष्टचिन्ता भयःफलम् ।
प्रकृता-कृतस्वप्नेश्च नैते ग्राह्या निमित्ततः ॥2॥

स्वप्नमाला, दिवास्वप्न, चिन्ताओ से उत्पन्न, रोग से उत्पन्न और प्रकृति के विकार के उत्पन्न स्वप्नफल के लिए नही ग्रहण करना चाहिए ॥2॥

कर्मजा द्विविधा यत्र शुभाश्चात्राशुभास्तथा ।
त्रिविधाः संग्रहाः स्वप्नाः कर्मजाः पूर्वसञ्चिताः ॥3॥

कर्मोदय से उत्पन्न स्वप्न दो प्रकार के होते हैं—शुभ और अशुभ तथा पूर्व संचित कर्मोदय से उत्पन्न स्वप्न तीन प्रकार के होते हैं ॥3॥

भवान्तरेषु चाभ्यस्ता भावाः सफल-निष्फलाः ।
तान् प्रवक्ष्यामि तत्त्वेन शुभाशुभफलानिमान् ॥4॥

जो सफल या निष्फल भाव भवान्तरो मे अभ्यस्त हैं, उनके शुभाशुभ फलदायक भावो को यथार्थ रूप से निरूपण करता हूँ ॥4॥

जलं जलरुहं धान्यं सदलाम्भोजभाजनम् ।
मणि-मुक्ता-प्रवालांश्च स्वप्ने पश्यन्ति श्लेष्मिकाः ॥5॥

जल, जल से उत्पन्न पदार्थ, धान्य, पत्र सहित कमल, मणि, मोती, प्रवाल आदि को स्वप्न मे कफ प्रकृति वाला व्यक्ति देखता है ॥5॥

रक्त-पीतानि द्रव्याणि यानि पुष्टान्यग्निसम्भवान् ।
तस्योपकरणं विन्द्यात् स्वप्ने पश्यन्ति पैत्तिकाः ॥6॥

रक्त-पीत पदार्थ, अग्नि सस्कार से उत्पन्न पदार्थ, स्वर्ण के आभूषण-उपकरण आदि को पित्त प्रकृति वाला व्यक्ति स्वप्न मे देखता है ॥6॥

च्यवनं प्लवनं यानं पर्वताऽग्र द्रुमं गृहम् ।
आरोहन्ति नराः स्वप्ने वातिकाः पक्षगामिनः ॥7॥

वायु प्रकृति वाला व्यक्ति गिरना, तैरना, सवारी पर चढ़ना, पर्वत के ऊपर चढना, वृक्ष और प्रासाद पर चढना आदि वस्तुओं को स्वप्न मे देखता है ॥7॥

सिंह-व्याघ्र-गजैर्युक्तो गो-वृषाश्वैर्नरैर्युतः ।
रथमारुह्य यो याति पृथिव्यां स नृपो भवेत् ॥8॥

जो सिंह, व्याघ्र, गज, गाय, बैल, घोडा और मनुष्यो से युक्त होकर रथ पर चढ़कर गमन करते हुए स्वप्न मे देखता है वह राजा होता है ॥8॥

प्रासादं कुञ्जरवरानारुह्य सागरं विशेत्।
तथैव च विकथ्येत[1] तस्य नीचो नृपो भवेत् ॥9॥

श्रेष्ठ हाथी पर चढकर जो महल या समुद्र मे प्रवेश करता है या स्वप्न मे देखता है वह नीच नृप होता है ॥9॥

पुष्करिण्यां तु यस्तीरे भुञ्जीत शालिभोजनम्।
श्वेतं गजं समारूढ. स राजा अचिराद् भवेत् ॥10॥

जो स्वप्न मे श्वेत हाथी पर चढकर नदी या नदी के तटपर भात का भोजन करता हुआ देखता है, वह शीघ्र ही राजा होता है ॥10॥

सुवर्ण-रूप्यभाण्डे वा यः पूर्वनवरा स्नुयात्।
प्रासादे वाऽथ भूमौ वा याने वा राज्यमाप्नुयात् ॥11॥

जो व्यक्ति स्वप्न मे प्रासाद, भूमि या सवारी पर आरूढ हो सोने या चाँदी के बर्तनो मे स्नान, भोजन-पान आदि की क्रियाएँ करता हुआ देखे उसे राज्य की प्राप्ति होती है ॥11॥

[2]श्लेष्ममूत्रपुरीषाणि यः स्वप्ने च विकृष्यति।
राज्यं राज्यफलं वाऽपि सोऽचिरात् प्राप्नुयान्नरः ॥12॥

जो राजा स्वप्न मे श्वेत वर्ण के मल, मूत्र आदि को इधर-उधर खीचता है, वह राज्य और राज्य फल को शीघ्र ही प्राप्त करता है ॥12॥

यत्र वा तत्र वा स्थित्वा जिह्वायां लिखते नख ।
दीर्घया रक्तया स्थित्वा स नीचोऽपि नृपो भवेत् ॥13॥

जो व्यक्ति स्वप्न मे जहाँ-तहाँ स्थित होकर जिह्वा — जीभ को नख से खुरचता हुआ देखे अथवा रक्त की —लाल वर्ण की दीर्घा—झील मे स्थित होता हुआ देखे तो वह व्यक्ति नीच होने पर भी राजा होता है ॥13॥

भूमिं ससागरजलां सशैल-वन-काननाम्।
बाहुभ्यामुद्धरेद्यस्तु स राज्यं प्राप्नुयान्नर. ॥14॥

जो व्यक्ति स्वप्न मे वन-पर्वत-अरण्य युक्त पृथ्वी सहित समुद्र के जल को भुजाओ द्वारा पार करता हुआ देखता है, वह राज्य प्राप्त करता है ॥14॥

आदित्यं वाऽथ चन्द्रं वा यः स्वप्ने स्पृशते नरः।
श्मशानमध्ये निर्भीकः परं हत्वा चमूपतिम् ॥15॥

1. विकथेत् मु० । 2 श्वेते पुरीषे मूत्रेथ मु० ।

सौभाग्यमर्थं लभते लिंगच्छेदात् स्त्रियं नरः ।
भगच्छेदे तथा नारी पुरुषं प्राप्नुयात् फलम् ॥16॥

जो व्यक्ति स्वप्न मे सूर्य या चन्द्रमा का स्पर्श करता हुआ देखता है अथवा शत्रु सेनापति को मारकर श्मशान भूमि मे निर्भीक घूमता हुआ देखता है वह व्यक्ति सौभाग्य और धन प्राप्त करता है। लिंगच्छेद होना देखने से पुरुष को स्त्री की प्राप्ति तथा भगच्छेद होना देखने से स्त्री को पुरुष की प्राप्ति होती है ॥15-16॥

शिरो वा छिद्यते यस्तु सोऽसिना छिद्यतेऽपि वा ।
सहस्रलाभं जानीयाद् भोगांश्च विपुलान् नृपः ॥17॥

जो राजा स्वप्न मे शिर कटा हुआ देखता है अथवा तलवार के द्वारा छेदित होता हुआ देखता है, वह सहस्रो का लाभ तथा प्रचुर भोग प्राप्त करता है ।।17॥

धनुरारोहते यस्तु विस्फारण-समार्जने ।
अर्थलाभं विजानीयात् जयं युधि रिपोर्वधम् ॥18॥

जो राजा स्वप्न मे धनुष पर बाण चढना, धनुष का स्फालन करना, प्रत्यचा को समेटना आदि देखता है, वह अर्थलाभ करता है, युद्ध मे जय और शत्रु का बध होता है ॥18॥

द्विगाढं हस्तिनारूढः शुक्लो [1]वाससलंकृत ।
य स्वप्ने जायते भीतः समृद्धिं लभते सतीम् ॥19॥

जो स्वप्न मे शुक्ल वस्त्र और श्रेष्ठ आभूषणो से अलकृत होकर हाथी पर चढा हुआ भीत—भयभीत देखता है, वह समृद्धि को प्राप्त होता है ॥19॥

देवान् साधु-द्विजान् प्रेतान् स्वप्ने पश्यन्ति [2]तुष्टिभिः ।
[3]सर्वे ते सुखमिच्छन्ति विपरीते विपर्ययः ॥20॥

जो स्वप्न मे सन्तोष के साथ देव, साधु, ब्राह्मणो को और प्रेतो को देखते हैं, वे सब सुख चाहते है—सुख प्राप्त करते हैं और विपरीत देखने पर विपरीत फल होता है अर्थात् स्वप्न मे उक्त देव-साधु आदि का क्रोधित होना देखने से उल्टा फल होता है ॥20॥

गृहद्वारं विवर्णमभिज्ञाद्वा यो गृहं नरः ।
व्यसनान्मुच्यते शीघ्रं स्वप्नं दृष्ट्वा हि तादृशम् ॥21॥

जो व्यक्ति स्वप्न में गृहद्वार या गृह को विवर्ण देखे या पहिचाने वह शीघ्र

1 समलकृत मु० । 2 पुष्टिभि. मु० । 3 रोहिता मु० ।

ही विपत्ति से छुटकारा प्राप्त करता है ।।21।।

प्रपानं यः पिबेत् पानं बद्धो वा योऽभिमुच्यते ।
विप्रस्य सोमपानाय शिष्याणामर्थवृद्धये ।।22।।

यदि स्वप्न मे शर्बत या जल को पीता हुआ देखे अथवा किसी बँधे हुए व्यक्ति को छोडता हुआ देखे तो इस स्वप्न का फल ब्राह्मण के लिए सोमपान और शिष्यो के लिए धनवृद्धिकर होता है ।।22।।

निम्नं कूपजलं छिद्रान् यो भीतः स्थलमारुहेत् ।
स्वप्ने स वर्धते सत्य-धन-धान्येन मेधसा ।।23।।

जो व्यक्ति स्वप्न मे नीचे कुएं के जल को, छिद्र को और भयभीत होकर स्थल पर चढता हुआ देखता है वह धन-धान्य और बुद्धि के द्वारा वृद्धि को प्राप्त होता है ।।23।।

श्मशाने शुष्कदारुं वा वल्लिं शुष्कद्रुमं तथा ।
[1]यूप च मारुहेश्वऽस्तु स्वप्ने व्यसनमाप्नुयात् ।।24।।

जो व्यक्ति स्वप्न मे श्मशान मे सूखे वृक्ष, लता एव सूखी लकडी को देखता है अथवा यज्ञ के खूंटे पर जो अपने को चढता हुआ देखता है, वह विपत्ति को प्राप्त होता है ।।24।।

त्रपु-सीसायसं रज्जुं नाणकं मक्षिका [2]मधुः ।
यस्मिन् स्वप्ने प्रयच्छन्ति [3]मरणं तस्य ध्रुवं भवेत् ।।25।।

जो व्यक्ति स्वप्न मे शीशा, रांगा, जस्ता, पीतल, रज्जु, सिक्का तथा मधु का दान करता हुआ देखता है, उसका मरण निश्चय होता है ।।25।।

अकालजं फल पुष्पं काले वा यच्च [4]गर्भितम् ।
यस्मै स्वप्ने प्रदीयेते [5]तादृशायासलक्षणम् ।।26।।

जिस स्वप्न मे असमय के फल-फूल या समय पर होने वाले निन्दित फल-फूलो को जिसको देते हुए देखा जाय वह स्वप्न आयास लक्षण माना जाता है ।।26।।

अलक्तकं वाऽथ रोगो वा निवातं यस्य वेश्मनि ।
गृहदाघमवाप्नोति चौरैर्वा शस्त्रघातनम् ।।27।।

---

1 यूपे वा योऽधिरूढ स्यात् मु० । 2 -युनम् मु० । 3 तस्यासौ ध्रुवो मु०
4 गर्हितम् मु० । 5 तदस्यायामलक्षणम् मु० ।

स्वप्न मे जिस घर मे लाक्षारस या रोग अथवा वायु का अभाव देखा जाय उस घर मे या तो आग लगती है या चोरो द्वारा शस्त्रघात होता है ॥27॥

अगम्यागमनं चैव सौभाग्यस्याभिवृद्धये।
अलं कृत्वा [1]रसं पीत्वा यस्य वस्त्रयाश्च यद्भवेत् ॥28॥

जो स्वप्न मे अलकार करके, रस पीकर अगम्या गमन — जो स्त्री पूज्य है उसके साथ रमण करना—देखता है, उसके सौभाग्य की वृद्धि होती है ॥28॥

[2]शून्यं चतुष्पथं स्वप्ने यो भयं विश्य बुध्यते।
[3]पुत्रं न लभते भार्या सुरूपं सुपरिच्छदम् ॥29॥

स्वप्न मे जो व्यक्ति निर्जन चौराहे मार्ग मे प्रविष्ट होना देखे, पश्चात् जाग्रत हो जाय तो उसकी स्त्री को सुन्दर, गुणयुक्त पुत्र की प्राप्ति नही होती है ॥29॥

वीणां विषं च वल्लकीं स्वप्ने गृह्य विबुध्यते।
कन्यां तु लभते भार्या कुलरूपविभूषिताम् ॥30॥

स्वप्न मे वीणा, वल्लकी और विष को ग्रहण करे, पश्चात् जाग्रत हो जाय तो उसकी स्त्री को सुन्दर रूप गुण युक्त कन्या की प्राप्ति होती है ॥30॥

विषेण म्रियते यस्तु विषं वाऽपि पिबेन्नर।
[4]स युक्तो धन-धान्येन बध्यते न चिराद्धि सः ॥31॥

जो व्यक्ति स्वप्न मे विष भक्षण द्वारा मृत्यु को प्राप्त हो अथवा विष भक्षण करना देखे वह धन-धान्य से युक्त होता है तथा चिरकाल तक—अधिक समय तक वह किसी प्रकार के बन्धन मे बँधा नही रहता है ॥31॥

[5]उपाचरन्नासवाज्ये [6]मृतिं गत्वाप्यकिञ्चनः।
ब्रूयाद् वै सद्वचः किञ्चिन्नासत्यं वृद्धये हितम् ॥32॥

यदि स्वप्न मे कोई व्यक्ति आसव और घृत का पान करता हुआ देखे अथवा अकिंचन —निस्सहाय होकर अपने को मरता हुआ देखे तो इस अशुभ स्वप्न की शान्ति के लिए सत्य वचन बोलना चाहिए, क्योकि थोडा भी असत्य भाषण विकास के लिए हितकारी नही होता ॥32॥

[7]प्रेतयुक्तं समारूढो वंष्ट्रियुक्त च यो रथम्।
दक्षिणाभिमुखो याति म्रियते सोऽचिरान्नर ॥33॥

---

1 यया मु० । 2 सूनि । 3 पुनर्न भवनि मु० । 4 न भीतो मु० । 5 उपाचरेदास- मु० । 6 मृतो मु० । 7 -युद्ध मु० ।

जो स्वप्न में प्रेतयुद्ध, गर्दभयुक्त रथ मे आरूढ़ दक्षिण दिशा की ओर जाता हुआ देखता है, वह मनुष्य शीघ्र ही मरण को प्राप्त हो जाता है ॥33॥

वराहयुक्ता या नारी ग्रीवाबद्धं प्रकर्षति।
सा तस्याः पश्चिमा रात्री [1]मृत्युः भवति पर्वते ॥34॥

यदि रात्रि के उत्तरार्द्ध में स्वप्न मे कोई शूकर युक्त नारी किसी की बँधी हुई गर्दन को खीचे तो उसकी किसी पहाड पर मृत्यु होती है ॥34॥

खर-शूकरयुक्तेन खरोष्ट्रेण वृकेण वा।
रथेन दक्षिणा याति दिशं स म्रियते नरः ॥35॥

स्वप्न मे कोई व्यक्ति खर—गर्दभ, शूकर, ऊँट, भेडिया सहित रथ से दक्षिण दिशा को जाय तो शीघ्र उस व्यक्ति का मरण होता है ॥35॥

कृष्णवासा [2]यदा भूत्वा प्रवास नावगच्छति।
मार्गे सभयमाप्नोति [3]याति दक्षिणगो वधम् ॥36॥

स्वप्न मे यदि कृष्णवास होने पर भी प्रवास को प्राप्त न हो तो मार्ग मे भय प्राप्त होता है तथा दक्षिण दिशा की ओर गमन दिखलाई पडे तो मृत्यु भी हो जाती है ॥36॥

यूपमेकखरं शूलं यः स्वप्नेष्वभिरोहति।
सा तस्य पश्चिमा रात्री यदि साधु न पश्यति ॥37॥

जो व्यक्ति रात्रि के पिछले भाग मे स्वप्न मे यज्ञ स्तम्भ, गर्दभ, शूल पर आरोहित होता देखता है वह कल्याण नहीं देख पाता है ॥37॥

दुर्वास. कृष्णभस्मश्च वामतैलविपक्षितम्।
सा तस्य पश्चिमा रात्री यदि साधु न पश्यति ॥38॥

यदि कोई व्यक्ति रात्रि के पिछले प्रहर मे स्वप्न में दुर्वासा, कृष्ण भस्म, तैल पान करना आदि देखे तो उसका कल्याण नही होता है ॥38॥

अभक्ष्यभक्षणं चैव पूजितानां च दर्शनम्।
कालपुष्पफल चैव लभ्यतेऽर्थस्य सिद्धये ॥39॥

स्वप्न मे अभक्ष्य-भक्षण करना, पूज्य व्यक्तियों का दर्शन करना, सामयिक पुष्प और फलो का दर्शन करना धन प्राप्ति के लिए होता है ॥39॥

---

1 नगे मु०। 2 यदि मु०। 3 नारी मु०।

[1]गागाग्रे वेश्मनः सालो यः स्वप्ने [2]चरते नरः।
सोऽचिराद् वमते लक्ष्मीं क्लेशं चाप्नोति दारुणम् ॥40॥

जो व्यक्ति श्रेष्ठ महल के परकोटे पर चढ़ता हुआ देखे वह श्रेष्ठ लक्ष्मी का त्याग करता है, भयंकर कष्ट उठाता है ॥40॥

दर्शनं ग्रहणं भग्नं शयनासनमेव च।
प्रशस्तमाममांसं च स्वप्ने वृद्धिकरं हितम् ॥41॥

स्वप्न में कच्चा मांस का दर्शन, ग्रहण, भग्न तथा शयन, आसन करना हितकर और प्रशस्त माना गया है ॥41॥

पक्वमांसस्य घासाय भक्षणं ग्रहणं तथा।
स्वप्ने व्याधिभयं विन्द्याद् भद्रबाहुवचो यथा ॥42॥

स्वप्न मे पक्व मास का दर्शन, ग्रहण और भक्षण व्याधि, भय और कष्टोत्पादक माना गया है, ऐसा भद्रबाहु स्वामी का वचन है ॥42॥

छर्दने मरण विन्द्याद्वर्थनाशो विरेचने।
क्षत्रो यानाद्यधान्यानां ग्रहणे मार्गमादिशेत् ॥43॥

स्वप्न मे वमन करना देखने से मरण, विरेचन—दस्त लगना देखने से धन नाश, यान आदि के छत्र को ग्रहण करने से धन-धान्य का अभाव होता है ॥43॥

मधुरे निवेशस्वप्ने दिवा च यस्य वेश्मनि।
तस्यार्थनाशं नियत मृतिं वाऽभिनिर्दिशेत् ॥44॥

दिन के स्वप्न मे जिसके घर मे प्रवेश करता हुआ देखे, उसका धन नाश निश्चित होता है अथवा वह मृत्यु का निर्देश करता है ॥44॥

यः स्वप्ने गायते हसते नृत्यते पठते नरः।
गायने रोदनं विन्द्यात् [3]नर्तने वध-बन्धनम् ॥45॥

जो व्यक्ति स्वप्न मे गाना, हँसना, नाचना और पढना देखता है उसे गाना देखने में रोना पड़ता है और नाचना देखने से वध-बन्धन होता है ॥45॥

हसने शोचनं ब्रूयात् कलहं पठने तथा।
बन्धने स्थानमेव स्यात् [4]मुक्तो देशान्तरं [5]व्रजेत् ॥46॥

---

1. वराग्र (वराग्र) मु०। 2. वदते मु०। 3. नृत्यते मु० 4. मुक्तो मु०। 5. वदेत् मु०।

हँसना देखने से शोक, पढ़ना देखने से कलह, बन्धन देखने से स्थान प्राप्ति और छूटना देखने से देशान्तर गमन होता है ।।46।।

सरांसि सरितो वृक्षान् पर्वतान् कलशान् गृहान् ।
शोकार्त्तः पश्यति स्वप्ने [1]तस्य शोकोऽभिवर्धते ।।47।।

जो व्यक्ति स्वप्न मे तालाब, नदी, वृक्ष पर्वत, कलश और गृहों को शोकार्त्त देखता है उसका शोक बढता है ।।47।।

[2]मरुस्थलीं तथा भ्रष्टं कान्तारं वृक्षवर्जितम् ।
सरितो नीरहीनाश्च शोकार्तस्य शुभावहाः ।।48।।

शोकयुक्त व्यक्ति यदि स्वप्न मे मरुस्थल, वृक्षरहित वन एव जलरहित नदी को देखता है तो उसके लिए ये स्वप्न शुभ फलप्रद होते है ।।48।।

आसनं शयनं यानं गृहं वस्त्रं च भूषणम् ।
स्वप्ने [3]कस्मै प्रदीयन्ते सुखिनः श्रियमाप्नुयात् ।।49।।

स्वप्न मे जो कोई किसी को आसन, शय्या, सवारी, घर, वस्त्र, आभूषण दान करता हुआ देखता है, वह सुखी होता है तथा लक्ष्मी की प्राप्ति होती है ।।49।।

अलकृतानां द्रव्याणां वाजि-वारणयोस्तथा ।
वृषभस्य च शुक्लस्य दर्शने प्राप्नुयाद् यशः ।।50।।

अलंकृत पदार्थ, श्वेत हाथी, घोडे, बैल आदि का स्वप्न मे दर्शन करने से यश की प्राप्ति होती है ।।50।।

पताकामसियष्टिं वा शुक्ति[4]-मुक्तान् सकाञ्चनान् ।
दीपिकां लभते स्वप्ने योऽपि स लभते धनम् ।।51।।

पताका, तलवार, लाठी, अथवा, सीप, मोती, सोना, दीपक आदि को जो भी स्वप्न मे प्राप्त करना देखता है, वह धन प्राप्त करता है ।।51।।

मूत्रं वा कुरुते स्वप्ने पुरीषं वा सलोहितम् ।
प्रतिबुध्येत्तथा यश्च लभते सोऽर्थनाशनम् ।।52।।

जो स्वप्न मे पेशाब या खून सहित टट्टी करना देखता है, और स्वप्न देखने के बाद ही जग जाता है, वह धननाश को प्राप्त होता है ।।52।।

---

1 स च मु० । 2 मुद्रित प्रति में यह श्लोक नही है । 3 यस्याभि-दीयन्ते मु० । 4 शक्ति मु० । मुक्तान् मु० ।

अहिर्वा वृश्चिकः कीटो यं स्वप्ने दशते नरम्।
प्राप्नुयात् सोऽर्थवान् यः स यदि भीतो न शोचति ॥53॥

जो व्यक्ति स्वप्न मे साँप, बिच्छू या अन्य कीडो द्वारा काटे जाने पर भयभीत नही होता और शोक नही करता हुआ देखता है, वह धन प्राप्त करता है ॥53॥

पुरीषं [1]छर्दनं यस्तु भक्षयेन्न च [2]शंकयेत्।
मूत्रं रेतश्च रक्तं च स शोकात् परिमुच्यते ॥54॥

जो व्यक्ति स्वप्न मे बिना घृणा के टट्टी, वमन, मूत्र, वीर्य, रक्त आदि का भक्षण करता हुआ देखता है, वह शोक से छूट जाता है ॥54॥

कालेयं चन्दनं रोध्रं घर्षणे च प्रशस्यते।
अत्र लेपानि पिष्टानि तान्येव धनवृद्धये ॥55॥

जो व्यक्ति स्वप्न मे कालागुरु, चन्दन, रोध्र—तगरकी घिसने से सुगन्धि के कारण प्रशसा करता है तथा उनका लेप करना और पीसना देखता है, उसके धन की वृद्धि होती है ॥55॥

रक्तानां करवीराणामुत्पलानामुपानयेत्।
लम्भो वा दर्शने स्वप्ने प्रयाणो वा विधीयते ॥56॥

स्वप्न मे रक्तकमल और नीलकमलो का दर्शन, ग्रहण और त्रोटन—तोडना देखने से प्रयाण होता है ॥56॥

कृष्णं वासो हयं कृष्णं योऽभिरूढः प्रयाति च।
दक्षिणां दिशमुद्विग्नः [3]सोऽभि[4]प्रेतो यतस्ततः ॥57॥

जो व्यक्ति स्वप्न मे काले वस्त्र धारण कर काले घोडे पर सवार होकर खिन्न हो दक्षिण दिशा की ओर गमन करता है, वह निश्चय मे मृत्यु को प्राप्त होता है ॥57॥

आसनं शाल्मलीं वापि कदलीं [5]पालिभद्रिकाम्।
पुष्पितां यः समारूढः सवितमधि रोहति ॥58॥

जो व्यक्ति स्वप्न मे पुष्पित शाल्मली, केला और देवदारु या नीम के वृक्ष पर बैठना या चढ़ना देखता है, उसे सम्पत्ति प्राप्त होती है ॥58॥

---

1 छर्दितं मु० । 2 कुत्सते मु० । 3 सोऽपि मु० । 4 -प्रेताय तस्वन मु० । 5. पारिभद्रकम् मु० ।

रुद्राक्षी विकृता काली नारी स्वप्ने च कर्षति ।
उत्तरां दक्षिणां दिशं मृत्युः शीघ्रं समीहते ॥59॥

भयंकर, विकृत रूपवाली, काली स्त्री यदि स्वप्न मे उत्तर या दक्षिण दिशा की ओर खींचे तो शीघ्र ही मृत्यु को प्राप्त होता है ॥59॥

जटीं मुण्डीं विरूपाक्षां मलिनां मलिनवाससाम् ।
स्वप्ने यः पश्यति ग्लानिं समूहे भयमादिशेत् ॥60॥

जटाधारी, सिरमुण्डित, विरूपाकृति वाली, मलिन एव मलिन वस्त्र वाली स्त्री को स्वप्न मे ग्लानिपूर्वक देखना सामूहिक भय का सूचक है ॥60॥

[1]तापसं पुण्डरीकं वा [2]भिक्षुं विकलमेव च ।
दृष्ट्वा स्वप्ने विबुध्येत ग्लानिं तस्य समादिशेत् ॥61॥

तपस्वी पुण्डरीक तथा विकल भिक्षु को स्वप्न मे देखकर जो जाग जाता है, उसे ग्लानि फल की प्राप्ति होती है ॥61॥

स्थले वाऽपि विकीर्येत जले वा नाशमाप्नुयात् ।
यस्य स्वप्ने नरस्यास्य तस्य विद्यान्महद् भयम् ॥62॥

जो व्यक्ति भूमि पर विकीर्ण—फैल जाना और जल मे नाश को प्राप्त हो जाना देखता है, उस व्यक्ति को महान् भय होता है ॥62॥

वल्ली-गुल्मसमो वृक्षो वल्मीको यस्य जायते ।
शरीरे तस्य विज्ञेय [3]तदंगस्य विनाशनम् ॥63॥

जो व्यक्ति स्वप्न मे अपने शरीर पर लता, गुल्म, वृक्ष, वाल्मीक—बाँबी आदि का होना देखता है उसके शरीर का विनाश होता है ॥63॥

मालो वा वेणुगुल्मो वा खर्जूरो हरितो द्रुमः ।
मस्तके जायते स्वप्ने तस्य साप्ताहिकः स्मृतः ॥64॥

स्वप्न मे जो व्यक्ति अपने मस्तक पर माला, बाँस, गुल्म, खजूर अथवा हरे वृक्षो को उपजते देखता है, उसकी एक सप्ताह मे मृत्यु होती है ॥64॥

हृदये यस्य जायन्ते तद्रोगेण विनश्यति ।
अनंगजायमानेषु तदंगस्य विनिर्दिशेत् ॥65॥

यदि हृदय मे उक्त वृक्षादिको का उत्पन्न होना स्वप्न मे देखे तो हृदय रोग से

1 द्वादश मु० । 2 सभ्य कमलमेव च मु० । 3 तदा गसू विरेचनम् मु० ।

उसका विनाश होता है । जिस अंग मे उक्त वृक्षादिको का उत्पन्न होना स्वप्न मे दिखलाई पडता है, उसी अंग की बीमारी द्वारा विनष्टि होती है ।।65।।

रक्तमाला तथा माला रक्तं वा सूत्रमेव च ।
यस्मिन्नेवाबबन्ध्येत् तदंगेन [1]विक्लिश्यति ।।66।।

स्वप्न मे लाल माला या लाल सूत्र के द्वारा जो अंग बाँधा जाय, उसी अंग मे क्लेश होता है ।।66।।

ग्राहो नरं नगं कञ्चित् यदा स्वप्ने च कर्षति ।
बद्धस्य मोक्षमाचष्टे मुक्ति बद्धस्य निर्दिशेत् ।।67।।

जब स्वप्न मे कोई मकर या घडियाल मनुष्य को खीचता हुआ-सा दिखलाई पडे तो, जो व्यक्ति बद्ध है—कारागार आदि में बद्ध है या मुकदमे मे फँसा है, उसकी मुक्ति होती है—छूट जाता है ।।67।।

पीतं पुष्पं फलं यस्मै रक्तं वा सम्प्रदीयते ।
कृताकृतसुवर्णं वा तस्य [2]लाभो न संशय: ।।68।।

स्वप्न मे यदि किसी व्यक्ति को पीले या लाल फल-फूलो को देता दिखलाई पडे तो उसे सोना, चाँदी का लाभ नि सन्देह होता है ।।68।।

श्वेतमांसासनं यानं सितमाल्यस्य धारणम् ।
श्वेतानां वाऽपि द्रव्याणां स्वप्ने दर्शनमुत्तमम् ।।69।।

श्वेत मास, श्वेत आसन, श्वेत सवारी, श्वेत माला का धारण करना तथा अन्य श्वेत द्रव्यो का दर्शन स्वप्न मे शुभ होता है ।।69।।

बलीवर्दयुत यानं योऽभिरूढ: प्रधावति ।
प्राचीं दिशमुदीचीं वा सोऽर्थलाभमवाप्नुयात् ।।70।।

जो व्यक्ति स्वप्न में श्रेष्ठ बैलो के रथ पर चढ़कर पूर्व या उत्तर की ओर गमन करता हुआ देखता है, वह धन प्राप्त करता है ।।70।।

नग-वेश्म-पुराणं तु दीप्तानां तु शिरस्थित: ।
य: स्वप्ने मानव. सोऽपि महीं भोक्तुं[3] निरामय: ।।71।।

जो व्यक्ति स्वप्न मे सिर पर पर्वत, घर, खण्डहर तथा दीप्तिमान् पदार्थों को देखता है, वह स्वस्थ होकर पृथ्वी का उपभोग करता है ।।71।।

1 विकृश्यति मु० । 2. सौमस्य वर्णभाक् मु० । 3. विरामयेत् मु० ।

मृण्मयं नागमारूढः सागरे प्लवते हितः ।
तथैव च विबुध्येत सोऽचिराद् वसुधाधिपः ॥72॥

जो स्वप्न मे मृत्तिका के हाथी पर सवार होकर सुख से समुद्र को पार करता हुआ देखे तथा उसी स्थिति मे जाग जाय तो वह शीघ्र ही पृथ्वी का स्वामी होता है ॥72॥

पाण्डुराणि च वेश्मानि पुष्प-शाखा-फलान्वितान् ।
यो वृक्षान् [1]पश्यति स्वप्ने सफलं चेष्टते तदा ॥73॥

जो व्यक्ति स्वप्न मे श्वेत भवनो को तथा पुष्प, फल और शाखाओ से युक्त वृक्षो को देखता है, तो उसकी चेष्टाएँ सफल होती हैं ॥73॥

वासोभिर्हरितैः शुक्लैर्वेष्टितः प्रतिबुध्यते ।
दह्यते योऽग्निना वाऽपि बध्यमानो विमुच्यते ॥74॥

जो स्वप्न मे शुक्ल और हरे वृक्षो से वेष्टित होकर अपने को देखता है, तथा उसी समय जाग जाता है अथवा अग्नि द्वारा जलता हुआ अपने को देखता है, वह बध्यमान होते हुए भी छोड दिया जाता है ॥74॥

दुग्ध-तैल-घृतानां वा क्षीरस्य च विशेषतः ।
प्रशस्तं दर्शनं स्वप्ने भोजन न प्रशस्यते ॥75॥

स्वप्न मे दूध, तेल, घी का दर्शन शुभ है, भोजन नही । विशेष रूप से दूध का दर्शन शुभ माना गया है ॥75॥

अंग प्रत्यंगयुक्तस्य शरीरस्य विवर्धनम् ।
प्रशस्तं दर्शनं स्वप्ने नख-रोमविवर्धनम् ॥76॥

स्वप्न मे शरीर के अग-प्रत्यग का बढना तथा नख और रोम का बढना शुभ माना गया है ॥76॥

उत्संगः पूर्यते स्वप्ने यस्य धान्यैरनिन्दितैः ।
फल-पुष्पैश्च सम्प्राप्तः प्राप्नोति महतीं श्रियम् ॥77॥

स्वप्न मे जिस व्यक्ति की गोद सुन्दर धान्य, फल, पुष्प से भर दी जाय, वह बहुत धन प्राप्त करता है ॥77॥

---

1 पतति मु० ।

[1]कन्या वाऽऽर्यापि वा कन्या रूपमेव विभूषिता।
प्रकृष्टा दृश्यते स्वप्ने लभते योषितः श्रियम् ॥78॥

यदि स्वप्न मे सुन्दर रूपयुक्त कन्या या आर्या दिखलाई पड़े तो सुन्दर स्त्री की प्राप्ति होती है ॥78॥

प्रक्षिप्यति य शस्त्रै पृथिवीं पर्वतान् प्रति।
शुभमारोहते यस्य सोऽभिषेकमवाप्नुयात् ॥79॥

जो व्यक्ति स्वप्न मे शस्त्रो द्वारा शत्रुओ को परास्त कर पृथ्वी और पर्वतो को अपने अधीन कर लेना देखता है अथवा जो शुभ पर्वतो पर अपने को आरोहण करता हुआ देखता है, वह राज्याभिषेक को प्राप्त होता है ॥79॥

नारी पुंस्त्वं नर स्त्रीत्वं लभते स्वप्नदर्शने।
बध्येते तावुभो शीघ्रं कुटुम्बपरिवृद्धये ॥80॥

यदि स्वप्न मे स्त्री अपने को पुरुष होना और पुरुष स्त्री होना देखे तो वे शीघ्र कुटुम्ब के बन्धन मे बँधते है ॥80॥

राजा राजसुतश्चोरो यो सह्याधन-धान्यत ।
स्वप्ने सजायते कश्चित् स राज्ञामभिवृद्धये ॥81॥

यदि स्वप्न मे कोई धन-धान्य से युक्त हो राजा, राजपुत्र या चोर होना अपने को देखे वह राजाओ की अभिवृद्धि को पाता है ॥81॥

रुधिराभिषिक्तां कृत्वा य. स्वप्ने परिणीयते।
धन्य-धान्य-श्रिया युक्तो न चिरात् जायते नर ॥82॥

जो व्यक्ति स्वप्न मे रुधिर से अभिषिक्त होकर विवाह करता हुआ देखता है, वह व्यक्ति चिरकाल तक धन-धान्य सम्पदा से युक्त नही होता ॥82॥

शस्त्रेण छिद्यते जिह्वा स्वप्ने यस्य कथञ्चन।
क्षत्रियो राज्यमाप्नोति शेषा वृद्धिमवाप्नुयुः ॥83॥

यदि स्वप्न मे जिह्वा को शस्त्र से छेदन करता हुआ दिखलाई पड़े तो क्षत्रियो को राज्य की प्राप्ति और अन्य वर्ण वालो का अभ्युदय होता है ॥83॥

देव-साधु-द्विजातीनां पूजनं शान्तये हितम्।
पापस्वप्नेषु कार्यस्य शोधनं चोपवासनम् ॥84॥

---

1 कुमन्या मु०।

पाप-स्वप्नो की शान्ति के लिए देव, साधुजन बन्धु और द्विजातियों का पूजन और सत्कर्म तथा उपवास करना चाहिए ।।84।।

एते स्वप्ना यथोद्दिष्टा: प्रायशः फलदा नृणाम् ।
प्रकृत्या कृपया चैव शेषा: साध्या निमित्तत: ।।85।।

उपर्युक्त यथा अनुसार प्रतिपादित स्वप्न मनुष्यों को प्राय. फल देने वाले हैं, अवशेष स्वप्नो को निमित्त और स्वभावानुसार समझ लेना चाहिए ।।85।।

स्वप्नाध्यायममुं मुख्यं योऽधीयेत शुचि: स्वयम् ।
स पूज्यो लभते राज्ञो नानापुण्यश्च साधव: ।।86।।

जो पवित्रात्मा स्वय इस स्वप्नाध्याय का अध्ययन करता है, वह राजाओ के द्वारा पूज्य होता है तथा पुण्य प्राप्त करता है ।।86।।

इति नैर्ग्रन्थे भद्रबाहुके निमित्ते स्वप्नाध्याय षड्विंशोऽध्याय समाप्त. ।।26।।

विवेचन—स्वप्नशास्त्र मे प्रधानतया निम्नलिखित सात प्रकार के स्वप्न बताये गये है .

दृष्ट—जो कुछ जागृत अवस्था मे देखा हो उसी को स्वप्नावस्था मे देखा जाय ।

श्रुत—सोने के पहले कभी किसी से सुना हो उसी को स्वप्नावस्था मे देखे ।

अनुभूत—जो जागृत अवस्था मे किसी भाँति अनुभव किया हो, उसी को स्वप्न मे देखे ।

प्रार्थित—जिसकी जागृतावस्था मे प्रार्थना—इच्छा की हो उसी को स्वप्न मे देखे ।

कल्पित—जिसकी जागृतावस्था मे कभी भी कल्पना की गयी हो उसी को स्वप्न मे देखे ।

भाविक—जो कभी न तो देखा गया हो और न सुना गया हो, पर जो भविष्य मे घटित होने वाला हो उसे स्वप्न मे देखा जाय ।

दोषज—वात, पित्त और कफ के विकृत हो जाने से जो स्वप्न देखा जाय ।

इन सात प्रकार के स्वप्नो मे से पहले पाँच प्रकार के स्वप्न प्राय: निष्फल होते है, वस्तुत भाविक स्वप्न का फल ही सत्य होता है ।

रात्रि के प्रहर के अनुसार स्वप्न का फल—रात्रि के पहले प्रहर मे देखे गये स्वप्न एक वर्ष मे, दूसरे प्रहर मे देखे गये स्वप्न आठ महीने मे (चन्द्रसेन मुनि

के मत से 7 महीने मे), तीसरे प्रहर में देखे गये स्वप्न तीन महीने मे, चौथे प्रहर में देखे गये स्वप्न एक महीने मे (वराहमिहिर के मत से 16 दिन में), ब्राह्म मुहूर्त (उषाकाल) में देखे गये स्वप्न दस दिन में और प्रात काल सूर्योदय से कुछ पूर्व देखे गये स्वप्न अतिशीघ्र फल देते हैं। अब जैनाजैन ज्योतिषशास्त्र के आधार पर कुछ स्वप्नो का फल उद्धृत किया जाता है—

अगुरु—जैनाचार्य भद्रबाहु के मत से— काले रंग का अगुरुदेखने से नि सन्देह अर्थ लाभ होता है। जैनाचार्य सेन मुनि के मत से, सुख मिलता है। वराहमिहिर के मत से, धनलाभ के साथ स्त्रीलाभ भी होता है। बृहस्पति के मत से—इष्ट मित्रो के दर्शन और आचार्य मयूख एव दैवज्ञवर्य गणपति के मत से अर्थलाभ के लिए विदेश-गमन होता है।

अग्नि—जैनाचार्य चन्द्रसेन मुनि के मत से धूमयुक्त अग्नि देखने से उत्तम कान्ति, वराहमिहिर और मार्कण्डेय के मत से प्रज्वलित अग्नि देखने से कार्यसिद्धि, दैवज्ञ गणपति के मत मे अग्निभक्षण करना देखने मे भूमिलाभ के साथ स्त्री रत्न की प्राप्ति और बृहस्पति के मत से जाज्वल्यमान अग्नि देखने से कल्याण होता है।

अग्नि-दग्ध—जो मनुष्य आसन, शय्या, यान और वाहन पर स्वय स्थित हो कर अपने शरीर को अग्नि दग्ध होते हुए देखे तो, मतान्तर से अन्य को जलता हुआ देखे और तत्क्षण जाग उठे, तो उसे धन-धान्य की प्राप्ति होती है। अग्नि में जल कर मृत्यु देखने से रोगी पुरुष की मृत्यु और स्वस्थ पुरुष बीमार पडता है। गृह अथवा दूसरी वस्तु को जलते हुए देखना शुभ है। वराहमिहिर के मत से अग्नि-लाभ भी शुभ है।

अन्न—अन्न देखने से अर्थ-लाभ और सन्तान की प्राप्ति होती है। आचार्य चन्द्रसेन के मत से श्वेत अन्न देखने से इष्ट मित्रो की प्राप्ति, लाल अन्न देखने से रोग, पीला अनाज देखने से हर्ष और कृष्ण अन्न देखने से मृत्यु होती है।

अलंकार—अलकार देखना शुभ है, परन्तु पहनना कष्टप्रद होता है।

अस्त्र—अस्त्र देखना शुभ फलप्रद, अस्त्र द्वारा शरीर मे साधारण चोट लगना तथा अस्त्र लेकर दूसरे का सामना करना विजयप्रद होता है।

अनुलेपन—श्वेत रंग की वस्तुओ का अनुलेपन शुभ फल देने वाला होता है। वराहमिहिर के मत से लाल रंग के गन्ध, चन्दन तथा पुष्पमाला आदि के द्वारा अपने को शोभायमान देखे तो शीघ्र मृत्यु होती है।

अन्धकार—अन्धकारमय स्थानो मे अर्थात् वन, भूमि, गुफा, सुरग आदि स्थानो में प्रवेश होते हुए देखना रोगसूचक है।

आकाश—भद्रबाहु के मत से निर्मल आकाश देखना शुभ फलप्रद, लाल वर्ण की आभा वाला आकाश देखना कष्टप्रद और नील वर्ण का आकाश देखना

मनोरथ सिद्ध करने वाला होता है।

आरोहण—वृष, गाय, हाथी, मन्दिर, वृक्ष, प्रासाद और पर्वत पर स्वय आरोहण करते हुए देखना या दूसरे को आरोहित देखना अर्थ-लाभ सूचक है।

कपास—कपास देखने मे स्वस्थ व्यक्ति रुग्ण होता है और रोगी की मृत्यु होती है। दूसरे को देते हुए कपास देखना शुभप्रद है।

कबन्ध—नाचते हुए छीन कबन्ध देखने से आधि, व्याधि और धन का नाश होता है। वराहमिहिर के मत से मृत्यु होती है।

कलश—कलश देखने से धन, आरोग्य और पुत्र की प्राप्ति होती है। कलशी देखने से गृह मे कन्या उत्पन्न होती है।

कलह—कलह एव लडाई-झगडे देखने से स्वस्थ व्यक्ति रुग्ण होता है और रोगी की मृत्यु होती है।

काक—स्वप्न मे काक, गिद्ध, उल्लू और कुकुर जिसे चारो ओर से घेर कर त्रास उत्पन्न करें तो मृत्यु और अन्य को त्रास उत्पन्न करते हुए देखे तो अन्य की मृत्यु होती है।

कुमारी कुमारी कन्या को देखने मे अर्थलाभ एव सन्तान की प्राप्ति होती है। वराहमिहिर के मत मे कुमारी कन्या के साथ आलिंगन करना देखने से कष्ट एव धनक्षय होता है।

कूप—गन्दे जल या पक वाले कूप के अन्दर गिरना या डूबना देखने से स्वस्थ व्यक्ति रोगी और रोगी की मृत्यु होती है। तालाब या नदी मे प्रवेश करना देखने से रोगी को मरण तुल्य कष्ट होता है।

क्षौर—नाई के द्वारा स्वय अपनी या दूसरे की हजामत करना देखने से कष्ट के साथ-साथ धन और पुत्र का नाश होता है। गणपति दैवज्ञ के मत से माता-पिता की मृत्यु, मार्कण्डेय के मत से भार्यामरण के साथ माता-पिता की मृत्यु और बृहस्पति के मत से पुत्र मरण होता है।

खेल—अत्यन्त आनन्द के साथ खेल खेलते हुए देखना दु स्वप्न है। इसका फल बृहस्पति के मत मे रोना, शोक करना एव पश्चात्ताप करना ब्रह्मवैवर्त पुराण के मत से—धन-नाश, ज्येष्ठ पुत्र या कन्या का मरण और भार्या को कष्ट होता है। नारद के मत से सन्तान-नाश और पाराशर के मत से—धन-क्षय के साथ अपकीर्ति होती है।

गमन—दक्षिण दिशा की ओर गमन करना देखने से धन-नाश के साथ कष्ट, पश्चिम दिशा की ओर गमन करना देखने मे अपमान, उत्तर दिशा की ओर गमन करना देखने से स्वास्थ्य-लाभ और पूर्व दिशा की ओर गमन करना देखने से धन-प्राप्ति होती है।

गर्त—उच्च स्थान से अन्धकारमय गर्त मे गिर जाना देखने से रोगी की

मृत्यु और स्वस्थ पुरुष रुग्ण होता है । यदि स्वप्न मे गर्त्त मे गिर जाय और उठने का प्रयत्न करने पर भी बाहर न आ सके तो उसकी दस दिन के भीतर मृत्यु होती है ।

गाडी— गाय या बैलो के द्वारा खीची जाने वाली गाडी पर बैठे हुए देखने से पृथ्वी के नीचे से चिर संचित धन की प्राप्ति होती है । वराहमिहिर के मत से— पीताम्बर धारण किये स्त्री को एक ही स्थान पर कई दिनो तक देखने से उस स्थान पर धन मिलता है । बृहस्पति के मत से स्वप्न मे दाहिने हाथ मे साँप को काटता हुआ देखने से लक्ष रुपये की प्राप्ति अति शीघ्र होती है ।

गाना—स्वय को गाता हुआ देखने से कष्ट होता है । भद्रबाहु स्वामी के मत से स्वय या दूसरे को मधुर गाना गाते हुए देखने से मुकदमा मे विजय, व्यापार मे लाभ और यश-प्राप्ति, बृहस्पति के मत से अर्थ-लाभ के साथ भयानक रोगो का शिकार और नारद के मत से सन्तान-कष्ट और अर्थ-लाभ एवं मार्कण्डेय के मत से अपार कष्ट होता है ।

गाय—दुहने वाले के साथ गाय को देखने से कीर्ति और पुण्य लाभ होता है । गणपति दैवज्ञ के मत से—जल पीती गाय देखने से लक्ष्मी के तुल्य गुण वाली कन्या का जन्म और वराहमिहिर के मत मे—स्वप्न मे गाय का दर्शन मात्र ही सन्तानोत्पादक है ।

गिरना—स्वप्न मे लडखडाते हुए गिरना देखने से दु ख, चिन्ता एवं मृत्यु होती है ।

गृह—गृह मे प्रवेश करना, ऊपर चढ़ना एव किसी से प्राप्त करना देखने से भूमि-लाभ और धन-धान्य की प्राप्ति एव गृह का गिरना देखने से मृत्यु होती है ।

घास—कच्चा घास, शस्य (धान), कच्चे गेहूँ एव चने के पौधे देखने से भार्या को गर्भ रहता है । परन्तु इनके काटने या खाने से गर्भपात होता है ।

घृत—घृत देखने से मन्दाग्नि, अन्य से लेना देखने से यश-प्राप्ति, घृत-पान करना देखने स प्रमेह और शरीर मे लगाना देखने से मानसिक चिन्ताओ के साथ शारीरिक कष्ट होता है ।

घोटक—घोडा देखने से अर्थ-लाभ, घोड़ा पर चढना देखने से कुटुम्ब-वृद्धि और घोड़ी का प्रसव करना देखने से सन्तान-लाभ होता है ।

चक्षु— स्वप्न मे अकस्मात् चक्षुद्वय का नष्ट होना देखने से मृत्यु और आँख का फूट जाना देखने से कुटुम्ब मे किसी की मृत्यु होती है ।

चादर— स्वप्न मे शरीर की चादर, चोगा या कमीज आदि को श्वेत और लाल रग की देखने से सन्तान-हानि होती है ।

चिता —अपने को चिता पर आरूढ़ देखने से बीमार व्यक्ति की मृत्यु होती हैं और स्वस्थ व्यक्ति बीमार होता है ।

जल—स्वप्न मे निर्मल जल देखने से कल्याण, जल द्वारा अभिषेक देखने से भूमि की प्राप्ति, जल मे डूबकर बिलग होना देखने से मृत्यु, जल को तैरकर पार करना देखने से सुख और जल पीना देखने से कष्ट होता है ।

जूता—स्वप्न मे जूता देखने से विदेश-यात्रा, जूता प्राप्त कर उपभोग करना देखने से ज्वर, एव जूता से मार-पीट करना देखने से छ महीने मे मृत्यु होती है ।

तिल-तेल—तिल तेल और खली की प्राप्ति होना देखने से कष्ट, पीना और भक्षण करना देखने से मृत्यु, मालिश करना देखने से मृत्यु तुल्य कष्ट होता है ।

दधि—स्वप्न मे दही देखने मे प्रीति, भक्षण करना देखने से यश-प्राप्ति, भात के साथ भक्षण करना देखने से सन्तान-लाभ और दूसरो को देना-लेना देखने से अर्थलाभ होना है ।

दाँत—दाँत कमजोर हो गये है और गिरने के लिए तैयार हैं, या गिर रहे हैं ऐसा देखने से धन का नाश और शारीरिक कष्ट होता है । वराहमिहिर के मत से स्वप्न मे नख, दाँत और केशो का गिरना देखना मृत्युसूचक है ।

दीपक—स्वप्न मे दीपक जला हुआ देखने से अर्थलाभ, अकस्मात् निर्वाण प्राप्त हुआ देखने से मृत्यु और ऊर्ध्व लौ देखने से यश-प्राप्ति होती है ।

देव-प्रतिमा—स्वप्न मे इष्ट देव का दर्शन पूजन और आह्वान करना देखने से विपुल धन की प्राप्ति के साथ परम्परा से मोक्ष मिलता है । स्वप्न मे प्रतिमा का कम्पित होना, गिरना, हिलना, चलना, नाचना और गाते हुए देखने से आधि-व्याधि और मृत्यु होती है ।

नग्न—स्वप्न मे नग्न होकर मस्तक पर लाल रग की पुष्पमाला धारण करना देखने से मृत्यु होती है ।

नृत्य—स्वप्न मे स्वय का नृत्य करना देखने से रोग और दूसरो को नृत्य करता हुआ देखने से अपमान होता है । वराहमिहिर के मत से—नृत्य का किसी भी रूप मे देखना अशुभसूचक है ।

पक्वान्न—स्वप्न मे पक्वान्न कही से प्राप्त कर भक्षण करता हुआ देखे तो रोगी की मृत्यु होती है । और स्वस्थ व्यक्ति बीमार होता है । स्वप्न मे पूरी, कचौरी, मालपूआ और मिष्टान्न खाना देखने से शीघ्र मृत्यु होती है ।

फल—स्वप्न मे फल देखने से धन की प्राप्ति, फल खाना देखने से रोग एव सन्तान-नाश, और फल का अपहरण करना देखने से चोरी एवं मृत्यु आदि अनिष्ट फलो की प्राप्ति होती है ।

फूल—स्वप्न मे श्वेत पुष्पो का प्राप्त होना देखने से धन-लाभ, रक्तवर्ण के पुष्पो का प्राप्त होना देखने से रोग, पीतवर्ण के पुष्पों का प्राप्त होना देखने से यश एवं धन-लाभ, हरितवर्ण के पुष्पो का प्राप्त होना देखने से इष्ट-मित्रों का मिलना और कृष्ण वर्ण के पुष्प देखने से मृत्यु होती है ।

भूकम्प—भूकम्प होना देखने से रोगी की मृत्यु और स्वस्थ व्यक्ति रुग्ण होता है। चन्द्रसेन मुनि के मत से, स्वप्न मे भूकम्प देखने से राजा का मरण होता है। भद्रबाहु स्वामी के मत से, स्वप्न मे भूकम्प होना देखने से राज्य विनाश के साथ-साथ देश मे बडा भारी उपद्रव होता है।

मल-मूत्र— स्वप्न मे मल-मूत्र का शरीर में लग जाना देखने से धनप्राप्ति; भक्षण करना देखने से सुख और स्पर्श करना देखने से सम्मान मिलता है।

मृत्यु—स्वप्न मे किसी की मृत्यु देखने से शुभ होता है और जिसकी मृत्यु देखते है वह दीर्घजीवी होता है। परन्तु अन्य दु खद घटनाएँ सुनने को मिलती हैं।

यव—स्वप्न में जौ देखने से घर मे पूजा, होम और अन्य मांगलिक कार्य होते है।

युद्ध—स्वप्न मे युद्ध विजय देखने से शुभ, पराजय देखने से अशुभ और युद्ध सम्बन्धी वस्तुओ को देखने से चिन्ता होती है।

रुधिर—स्वप्न मे शरीर मे से रुधिर निकलना देखने से धन-धान्य की प्राप्ति, रुधिर से अभिषेक करता हुआ देखने से सुख, स्नान देखने से अर्थ-लाभ और रुधिर पान करना देखने से विद्या-लाभ एव अर्थलाभ होता है।

लता—स्वप्न मे कण्टकवाली लता देखने से गुल्म रोग, साधारण फल-फूल सहित लता देखने से नृपदर्शन और लता के क्रीडा करने से रोग होता है।

लोहा—स्वप्न मे लोहा देखने से अनिष्ट और लोहा या लोहे से निर्मित वस्तुओं के प्राप्त करने से आधि-व्याधि और मृत्यु होती है।

वमन—स्वप्न मे वमन और दस्त होना देखने से रोगी की मृत्यु, मल-मूत्र और सोना-चाँदी का वमन करना देखने से निकट मृत्यु, रुधिर वमन करना देखने से छ मास आयु शेष और दूध वमन करना देखने से पुत्र-प्राप्ति होती है।

विवाह—स्वप्न मे अन्य के विवाह या विवाहोत्सव में योग देना देखने से पीडा, दु ख या किसी आत्मीय जन की मृत्यु और अपना विवाह देखने से मृत्यु या मृत्यु-तुल्य पीडा होती है।

वीणा—स्वप्न मे अपने द्वारा वीणा बजाना देखने से पुत्र-प्राप्ति, दूसरो के द्वारा वीणा बजाना देखने से मृत्यु या मृत्यु तुल्य पीडा होती है।

शृंग—स्वप्न में शृंग और नखवाले पशुओं को मारने के लिए दौड़ना देखने से राज्य भय और मारते हुए देखने से रोगी होता है।

स्त्री—स्वप्न मे श्वेत वस्त्र परिहिता, हाथो मे श्वेत पुष्प या माला धारण करने वाली एवं सुन्दर आभूषणो से सुशोभित स्त्री के देखने तथा आलिंगन करने से धन प्राप्ति; रोग मुक्ति होती है। परस्त्रियो का लाभ होना अथवा आलिंगन करना देखने से शुभ फल होता है। पीतवस्त्र परिहिता, पीत पुष्प या पीत माला धारण करने वाली स्त्री को स्वप्न में देखने से कल्याण, समवस्त्र परिहिता, मुक्त-

केशी और कृष्ण वर्ण के दाँत वाली स्त्री का दर्शन या आलिंगन करना देखने से छ मास के भीतर मृत्यु और कृष्ण वर्ण वाली पापिनी आचारविहीना लम्बकेशी लम्बे स्तन वाली और मैले वस्त्र परिहिता स्त्री का दर्शन और आलिंगन करना देखने से शीघ्र मृत्यु होती है।

तिथियों क अनुसार स्वप्न का फल—

शुक्लपक्ष की प्रतिपदा · इस तिथि मे स्वप्न देखने पर विलम्ब से फल मिलता है।

शुक्लपक्ष की द्वितीया—इस तिथि मे स्वप्न देखने पर विपरीत फल होता है। अपने लिए देखने से दूसरो को और दूसरो के लिए देखने से अपने को फल मिलता है।

शुक्लपक्ष की तृतीया —इस तिथि मे भी स्वप्न देखने से विपरीत फल मिलता है। पर फल की प्राप्ति बिलम्ब से होती है।

शुक्ल पक्ष की चतुर्थी और पचमी—इन तिथियो मे स्वप्न देखने से दो महीने से लेकर दो वर्ष तक के भीतर फल मिलता है।

शुक्लपक्ष की षष्ठी, सप्तमी. अष्टमी, नवमी और दशमी—इन तिथियो मे स्वप्न देखने से शीघ्र फल की प्राप्ति होती है तथा स्वप्न सत्य निकलता है।

शुक्लपक्ष की एकादशी और द्वादशी—इन तिथियो मे स्वप्न देखने से विलम्ब से फल होता है।

शुक्लपक्ष की त्रयोदशी और चतुर्दशी—इन तिथियो मे स्वप्न देखने से स्वप्न का फल नही मिलता है तथा स्वप्न मिथ्या होते है।

पूर्णिमा—इस तिथि के स्वप्न का फल अवश्य मिलता है।

कृष्णपक्ष की प्रतिपदा—इस तिथि के स्वप्न का फल नही होता है।

कृष्णपक्ष की द्वितीया—इस तिथि के स्वप्न का फल विलम्ब से मिलता है। मतान्तर से, इसका स्वप्न सार्थक होता है।

कृष्णपक्ष की तृतीया और चतुर्थी—इन तिथियो के स्वप्न मिथ्या होते हैं।

कृष्णपक्ष की पंचमी और षष्ठी—इन तिथियो के स्वप्न दो महीने बाद और तीन वर्ष के भीतर फल देने वाले होते है।

कृष्णपक्ष की सप्तमी—इस तिथि का स्वप्न अवश्य शीघ्र ही फल देता है।

कृष्णपक्ष की अष्टमी और नवमी—इन तिथियो के स्वप्न विपरीत फल देने वाले होते हैं।

कृष्णपक्ष की दशमी, एकादशी, द्वादशी और त्रयोदशी—इन तिथियो के स्वप्न मिथ्या होते है।

कृष्णपक्ष की चतुर्दशी—इस तिथि का स्वप्न सत्य होता है तथा शीघ्र ही फल देता है।

अमावस्या—इस तिथि का स्वप्न मिथ्या होता है।

धनप्राप्ति सूचक फल—स्वप्न मे हाथी, घोडा, बैल, सिंह के ऊपर बैठकर गमन करता हुआ देखे तो शीघ्र धन मिलता है। पहाड़, नगर, ग्राम, नदी और समुद्र के देखने से भी अतुल लक्ष्मी की प्राप्ति होती है। तलवार, धनुष और बन्दूक आदि से शत्रुओ को ध्वस करता हुआ देखने से अपार धन मिलता है। स्वप्न मे हाथी, घोडा, बैल, पहाड, वृक्ष और गृह इन पर आरोहण करता हुआ देखने से भूमि के नीचे से धन मिलता है। स्वप्न मे नख और रोम से रहित शरीर के देखने से लक्ष्मी की प्राप्ति होती है। स्वप्न मे दही, छत्र, फूल, चमर, अन्न, वस्त्र, दीपक, ताम्बूल, सूर्य, चन्द्रमा, पुष्प, कमल, चन्दन, देव-पूजा, वीणा और अस्त्र देखने से शीघ्र ही अर्थ-लाभ होता है। यदि स्वप्न मे चिडियो के पर पकड कर उडता हुआ देखे तथा आकाशमार्ग मे देवताओ की दुन्दुभि की आवाज सुने तो पृथ्वी के नीचे से शीघ्र धन मिलता है।

सन्तानोत्पादक स्वप्न—स्वप्न मे वृषभ, कलश, माला, गन्ध, चन्दन, श्वेत पुष्प, आम, अमरूद, केला, सन्तरा, नीबू और नारियल इनकी प्राप्ति होने से तथा देवमूर्ति, हाथी, सत्पुरुष, सिद्ध, गन्धर्व, गुरु, स्वर्ण, रत्न, जौ, गेहूँ, सरसो, कन्या, रक्तपान करना, अपनी मृत्यु देखना, केला, कल्पवृक्ष, तीर्थ, तोरण, भूषण, राज्यमार्ग, और मट्ठा देखने से शीघ्र ही सन्तान की प्राप्ति होती है। किन्तु फल और पुष्पो का भक्षण करना देखने से सन्तान मरण अथवा गर्भपात होता है।

मरण सूचक स्वप्न—स्वप्न मे तैल मले हुए, नग्न होकर भैस, गधे, ऊँट, कृष्ण बैल और काले घोडे पर चढकर दक्षिण दिशा की ओर गमन करना देखने से, रसोईगृह मे, लाल पुष्पो से परिपूर्ण वन मे और सूतिका गृह मे अग-भग पुरुष का प्रवेश करना देखने से, झूलना, गाना, खेलना, फोडना, हँसना, नदी के जल मे नीचे चले जाना तथा सूर्य, चन्द्रमा, ध्वजा और ताराओ का गिरना देखने से, भस्म, घी, लोह, लाख, गीदड, मुर्गा, बिलाव, गोह, न्योला, बिच्छू, मक्खी, सर्प और विवाह आदि उत्सव देखने से एव स्वप्न मे दाढी, मूँछ और सिर के बाल मुंडवाना देखने से मृत्यु होती है।

पाश्चात्य विद्वानों के मतानुसार स्वप्नों के फल—यो तो पाश्चात्य विद्वानो ने अधिकाश रूप से स्वप्नो को निस्सार बताया है, पर कुछ ऐसे भी दार्शनिक हैं जो स्वप्नो को सार्थक बतलाते हैं। उनका मत है कि स्वप्न मे हमारी कई अतृप्त इच्छाएँ भी चरितार्थ होती हैं। जैसे हमारे मन मे कही भ्रमण करने की इच्छा होने पर स्वप्न मे यह देखना कोई आश्चर्य की बात नही है कि हम कही भ्रमण कर रहे हैं। सम्भव है कि जिस इच्छा ने हमे भ्रमण का स्वप्न दिखाया है वही कालान्तर मे हमे भ्रमण कराये। इसलिए स्वप्न मे भावी घटनाओ का आभास मिलना साधारण बात है। कुछ विद्वानो ने इस थ्योरी का नाम सम्भाव्य गणित रक्खा

है। इस सिद्धान्त के अनुसार स्वप्न मे देखी गई कुछ अतृप्त इच्छाएँ सत्य रूप मे चरितार्थ होती हैं, क्योकि बहुत समय से कई इच्छाएँ अज्ञात होने के कारण स्वप्न मे प्रकाशित रहती हैं और ये ही इच्छाएँ किसी कारण से मन मे उदित होकर हमारे तदनुरूप कार्य करा सकती हैं। मानव अपनी इच्छाओ के बल से ही सांसारिक क्षेत्र मे उन्नति या अवनति करता है, उसके जीवन मे उत्पन्न इच्छाओ में कुछ इच्छाएँ अप्रस्फुटित अवस्था मे ही विलीन हो जाती हैं, लेकिन कुछ इच्छाएँ परिपक्वावस्था तक चलती रहती हैं। इन इच्छाओ मे इतनी विशेषता होती है कि ये बिना तृप्त हुए लुप्त नही हो सकती। सम्भाव्य गणित के सिद्धान्तानुसार जब स्वप्न मे परिपक्वावस्था वाली अतृप्त इच्छाएँ प्रतीकाधार को लिये हुए देखी जाती हैं, उस समय स्वप्न का भावी फल सत्य निकलता है। अबाधभावानुसंग से हमारे मन के अनेक गुप्त भाव प्रतीको से ही प्रकट हो जाते है, मन की स्वाभाविक धारा स्वप्न मे प्रवाहित होती है, जिससे स्वप्न मे मन की अनेक चिन्ताएं गुंथी हुई प्रतीत होती है। स्वप्न के साथ सश्लिष्ट मन की जिन चिन्ताओ और गुप्त भावो का प्रतीको मे आभास मिलता है, वही स्वप्न का अव्यक्त अश भावी फल के रूप मे प्रकट होता है। अस्तु, उपलब्ध सामग्री के आधार पर कुछ स्वप्नो के फल नीचे दिये जाते है।

अस्वस्थ—अपने सिवाय अन्य किसी को अस्वस्थ देखने से कष्ट होता है और स्वय अपने को अस्वस्थ देखने से प्रसन्नता होती है। जी० एच० मिलर के मत से, स्वप्न मे स्वय अपने को अस्वस्थ देखने से कुटुम्बियो के साथ मेलमिलाप बढ़ता है एव एक मास के बाद स्वप्नद्रष्टा को कुछ शारीरिक कष्ट भी होता है तथा अन्य को अस्वस्थ देखने से द्रष्टा शीघ्र रोगी होता है। डॉक्टर सी० जे० ह्विटवे के मतानुसार, अपने को अस्वस्थ देखने से सुख-शान्ति और दूसरे को अस्वस्थ देखने से विपत्ति होती है। शुकरात के सिद्धान्तानुसार, अपने और दूसरे को अस्वस्थ देखना रोगसूचक है। विवलोनियन और पृथगबोरियन के सिद्धान्तानुसार, अपने को अस्वस्थ देखना नीरोग सूचक और दूसरे को अस्वस्थ देखना पुत्र-मित्रादि के रोग को प्रकट करने वाला होता है।

आवाज—स्वप्न मे किसी विचित्र आवाज को स्वयं सुनने से अशुभ सन्देश सुनने को मिलता है। यदि स्वप्न की आवाज सुनकर निद्रा भग हो जाती है तो सारे कार्यों मे परिवर्तन होने की सम्भावना होती है। अन्य किसी की आवाज सुनते हुए देखने से पुत्र और स्त्री को कष्ट होता है तथा अपने अति निकट कुटुम्बियो की आवाज सुनते हुए देखने से किसी आत्मीय की मृत्यु प्रकट होती है। डॉ० जी० एच० मिलर के मत से आवाज सुनना भ्रम का द्योतक है।

ऊपर यदि स्वप्न मे कोई चीज अपने ऊपर लटकती हुई दिखाई पड़े और उसके गिरने का सन्देह हो तो शत्रुओं के द्वारा धोखा होता है। ऊपर गिर जाने

से धन-नाश होता है, यदि ऊपर न गिरकर पास मे गिरती है तो धन-हानि के साथ स्त्री-पुत्र एवं अन्य कुटुम्बियो को कष्ट होता है। जी० एच० मिलर के मत से, किसी भी वस्तु का ऊपर गिरना धननाश कारक है। डॉ० सी० जे० ह्विटवे के मत से किसी वस्तु के ऊपर गिरने से तथा गिरकर चोट लगने से मृत्यु तुल्य कष्ट होता है।

कटार—स्वप्न मे कटार के देखने से कष्ट और कटार चलाते हुए देखने से धनहानि तथा निकट कुटुम्बी के दर्शन, मांस भोजन एव पत्नी से प्रेम होता है। किसी-किसी के मत से अपने में स्वय कटार भोंकते हुए देखने से किसी के रोगी होने के समाचार सुनाई पडते है।

कनेर—स्वप्न मे कनेर के फूल वृक्ष का दर्शन करने से मान-प्रतिष्ठा मिलती है। कनेर के वृक्ष से फूल और पत्तों को गिरना देखने से किसी निकट आत्मीय की मृत्यु होती है। कनेर का फल भक्षण करना रोगसूचक है, तथा एक सप्ताह के भीतर अत्यन्त अशान्ति देने वाला होता है। कनेर के वृक्ष के नीचे बैठकर पुस्तक पढता हुआ अपने को देखने से दो वर्ष के बाद साहित्यिक क्षेत्र मे यश की प्राप्ति होती है, एव नये-नये प्रयोग का आविष्कर्त्ता होता है।

किला—किले की रक्षा के लिए लडाई करते हुए देखने से मानहानि एव चिन्ताएँ, किले मे भ्रमण करने से शारीरिक कष्ट; किले के दरवाजे पर पहरा लगाने से प्रेमिका से मिलन एव मित्रो की प्राप्ति और किले के देखने मात्र से परदेशी बन्धु से मिलन होता है तथा सुन्दर स्वादिष्ट मास भक्षण को मिलता है।

केला—स्वप्न मे केला का दर्शन शुभफल दायक होता है और केले का भक्षण अनिष्ट फल देने वाला होता है। किसी के हाथ से जबरदस्ती केला लेकर खाने से मृत्यु और केले के पत्तो पर रखकर भोजन करने से कष्ट एव केले के थम्भे लगाने से घर मे मागलिक कार्य होते है।

केश—किसी सुन्दरी के केशपाश का स्वप्न मे चुम्बन करने से प्रेमिका-मिलन और केश के दर्शन से मुकदमे मे पराजय एवं दैनिक कार्यों मे असफलता मिलती है।

खल—स्वप्न मे किसी दुष्ट के दर्शन करने से मित्रो से अनबन और लडाई करने से मित्रो से प्रेम होता है। खल के साथ मित्रता करने से नाना भय और चिन्ताएँ उत्पन्न होती हैं। खल के साथ भोजन-पान करने से शारीरिक कष्ट, बातचीत करने से रोग और उसके हाथ से दूध लेने से सैकड़ो रुपयों की प्राप्ति होती है। किसी-किसी के मत से खल का दर्शन शुभ माना गया है।

खेल—स्वप्न मे खेलते हुए देखने से स्वास्थ्य वृद्धि और दूसरो को खेलते हुए देखने से ख्याति-लाभ होता है। खेल मे अपने को पराजित देखने से कार्य साफल्य और जय देखने से कार्य-हानि होती है। खेल का मैदान देखने से युद्ध में भाग

लेने का सकेत होता है। खिलाडियो का आपस मे मल्लयुद्ध करते हुए देखना बड़े भारी रोग का सूचक है।

गाय—यदि स्वप्न मे कोई गाय दुहने की इन्तजारी मे बैठी हुई दिखाई पडे तो सभी इच्छाओ की पूर्ति होती है। गाय का दर्शन, जी० एच० मिलर के मत से, प्रेमिका-मिलन सूचक बताया गया है। चारा खाते हुए गाय को देखने से अन्न प्राप्ति, बछड़े को पिलाते हुए देखने से पुत्रप्राप्ति, गोबर करते हुए गाय को देखने से धनप्राप्ति और पागुर करते हुए देखने से कार्य मे सफलता मिलती है।

घड़ी—स्वप्न मे घडी देखने से शत्रुभय होता है। घडी के घण्टो की आवाज सुनने से दु खद सवाद सुनते हैं, या किसी मित्र की मृत्यु का समाचार सुनाई पड़ता है। किसी के हाथ से घडी गिरते हुए देखने से मृत्युतुल्य कष्ट होता है। अपने हाथ की घड़ी का गिरना देखने से छ महीने के भीतर मृत्यु होती है।

चाय—स्वप्न मे चाय का पीना देखने से शारीरिक कष्ट, प्रेमिका वियोग एव व्यापार मे हानि होती है। मतान्तर से चाय पीना शुभकारक भी है।

जन्म— यदि स्वप्न मे कोई स्त्री बच्चे का जन्म देखे तो उसकी किसी सखी, सहेली को पुत्र-प्राप्ति होती है तथा उसे उपहार मिलते है। यदि पुरुष यही स्वप्न देखे तो यश-प्राप्ति होती है।

झाड़ू—यदि स्वप्न मे नया झाड़ू दिखाई पडे तो शीघ्र ही भाग्योदय होता है। पुराने झाड़ू का दर्शन करने से सट्टे मे धन-हानि होती है। यदि स्त्री इसी स्वप्न को देखे तो उसे भविष्य मे नाना कष्टो का सामना करना पड़ता है।

मृत्यु—मृत्यु देखने से किसी आत्मीय की मृत्यु होती है, किन्तु जिस व्यक्ति की मृत्यु देखी गयी है, उसका कल्याण होता है। मृत्यु का दृश्य देखना, मरते हुए व्यक्ति की छटपटाहट देखना अशुभसूचक है। किसी सवारी से नीचे उतरते ही मृत्यु देखना राजनीति मे पराजय का सूचक है। सवारी के ऊपर चढकर ऊँचा उठना तथा किसी पहाड़ पर ऊँचा चढना शुभफल सूचक होता है।

युद्ध—स्वप्न मे युद्ध का दृश्य देखना, युद्ध से भयभीत होना, मारकाट मे भाग लेना तथा अपने को युद्ध मे मृत देखना जीवन मे पराजय का सूचक है। इस प्रकार का स्वप्न देखने से सभी क्षेत्रो मे असफलता मिलती है। जो व्यक्ति युद्ध मे अपनी मृत्यु देखता है, उसे कष्ट सहन करने पड़ते है तथा वह प्रेम मे असफल होता है। जिससे वह प्रेम करता है, उसकी ओर से ठुकराया जाता है। युद्ध मे विजय देखना सफल प्रेम का सूचक है। जिस प्रेमिका या प्रेमी को व्यक्ति चाहता है वह सरलतापूर्वक प्राप्त हो जाता है। नग्न होकर युद्ध करत हुए देखने से नृत्य मे सफलता मिलती है तथा अनेक स्थानो पर भोजन करने का निमन्त्रण मिलता है। यदि कोई व्यक्ति किसी सवारी पर आरूढ़ होकर रणभूमि मे जाता

हुआ दृष्टिगोचर हो तो इस प्रकार के स्वप्न के देखने से जीवन मे अनेक तरह की सफलता मिलती है।

सप्तविंशतितमोऽध्यायः

यदा स्थितौ जीवबुधौ ससूर्यौ राशिस्थितानाञ्च तथानुवर्तिनौ।
नृनागबद्धावरसंगरस्तदा भवन्ति वाताः समुपस्थितान्ताः ॥1॥

जब बृहस्पति और बुध सूर्य के साथ स्थित होकर स्वराशियो मे स्थित ग्रहो के अनुवर्ती हो और मनुष्य, सर्प तथा अन्य छोटे जन्तु युद्ध करते दिखलायी पडे तब भयकर तूफान आता है ॥1॥

न मित्रभावे सुहृदो समेता न चाल्पतरमम्बु ददाति वासवः।
भिनत्ति वज्रेण तदा शिरांसि महीभृतां चाप्यपवर्षणं च ॥2॥

यदि शुभ ग्रह मित्रभाव मे स्थित न हो तो वर्षा का अभाव रहता है तथा इन्द्र पर्वतो के मस्तक को वज्र से चूर करता है—पर्वतो पर विद्युत्पात होता है और अवर्षण रहता है ॥2॥

सोमग्रहे निवृत्तेषु पक्षान्ते चेद् भवेद्ग्रहः।
तत्रानयः प्रजानां च दम्पत्योर्वैरमाविशेत् ॥3॥

चन्द्रमा की निवृत्ति होने पर पक्षान्त मे यदि कोई अशुभ ग्रह हो तो प्रजा मे अनीति—अन्याय और दम्पति वैर होता है ॥3॥

कृत्तिकायां दहत्यग्नी रोहिण्यामर्थसम्पद.।
दंशन्ति मूषिकाः सौम्ये चार्द्रायां प्राणसंशयः ॥4॥

कृत्तिका नक्षत्र मे नवीन वस्त्र या नवीन वस्तु धारण करने से अग्नि जलाती है, रोहिणी मे धन-सम्पत्ति की प्राप्ति होती है, मृगशिर मे मूषक काटते है और आर्द्रा मे प्राणो का सशय उत्पन्न हो जाता है ॥4॥

धान्यं पुनर्वसौ वस्त्रं पुष्य: सर्वार्थसाधक: ।
आश्लेषासु भवेद्रोग: श्मशानं स्यान्मघासु च ॥5॥

पुनर्वसु में नवीन वस्त्र या नवीन वस्तु धारण करने से धान्य की प्राप्ति होती है, पुष्य नक्षत्र में धारण करने से सभी अभिलाषाओ की पूर्ति होती है, आश्लेषा मे रोग होता है और मघा नक्षत्र मे श्मशान —मरण प्राप्त होता है ॥5॥

पूर्वाफाल्गुनी शुभदा [1]राज्यदोत्तरफाल्गुनी ।
वस्त्रदा सस्मृता लोके तूत्तरभाद्रपदा शुभा ॥6॥

पूर्वा फाल्गुनी में नवीन वस्त्र धारण करने से शुभ होता है, उत्तरा फाल्गुनी मे राज्य की प्राप्ति होती है, और उत्तराभाद्रपद शुभ और वस्त्र देने वाली कही गयी है ॥6॥

हस्ते च ध्रुवकर्माणि चित्रास्वाभरण शुभम् ।
मिष्टान्नं लभ्यते स्वातौ विशाखा प्रियदर्शिका ॥7॥

हस्त नक्षत्र मे ध्रुव कार्य—स्थिर कार्य करना शुभ होता है, चित्रा नक्षत्र मे आभरण धारण करना शुभ होता है, स्वाति नक्षत्र मे वस्त्र, आभरण धारण करने से मिष्टान्न की प्राप्ति होती है और विशाखा नक्षत्र में धारण करने से प्रिय का दर्शन होता है ॥7॥

अनुराधा वस्त्रदात्री ज्येष्ठा वस्त्रविनाशिनी ।
मरणाय तथैवोक्ता हानिकारणलक्षणा ॥8॥

नये वस्त्रावरण धारण करने वालो को अनुराधा नक्षत्र वस्त्र देने वाला, ज्येष्ठा वस्त्र का विनाश करने वाला, मरण देने वाला और हानि करने वाला होता है ॥8॥

मूलेन क्लिश्यते वस्त्रं [2]पूषायां रोगसम्भव: ।
उत्तरा वस्त्रदा ख्याता श्रवणो नेत्ररोगद: ॥9॥

मूल नक्षत्र में वस्त्र धारण करने वाले को क्लेश, पूर्वाषाढ़ा मे रोग, उत्तरा भाद्रपद में वस्त्र-प्राप्ति और श्रवण नक्षत्र मे नवीन वस्त्राभरण धारण करने से नेत्र रोग होता है ॥9॥

धनिष्ठा धनलाभाय शतभिषा विषाद्भयम् ।
पूर्वभाद्रपदात्तोयमुत्तरा बहुवस्त्रदा ॥10॥

---

1 राजश्चोत्तर । 2. पूभायां ।

धनिष्ठा नक्षत्र में नवीन वस्त्राभरण धारण करने से धनलाभ, शतभिषा में धारण करने से विष का भय तथा पूर्वाभाद्रपद में और उत्तराभाद्रपद नक्षत्रों में धारण करने से बहुत वस्त्रों की प्राप्ति होती है ॥10॥

रेवती लोहिताय स्याद् बहुवस्त्रा तथाश्विनी।
भरणी यमलोकार्थमेवमेव तु कष्टदा ॥11॥

रेवती नक्षत्र में नवीन वस्त्राभरण धारण करने से लोहित-जंग लगना, अश्विनी मे धारण करने से बहुत से वस्त्रो की प्राप्ति होना और भरणी नक्षत्र में नवीन वस्त्राभरण धारण करने से मरण या तत्तुल्य कष्ट होता है ॥11॥

शुभग्रहाः फलं दद्युः पञ्चाशद्दिवसेषु तु।
षष्ठ्यह्नःस्वथवा सर्वे पापा नवदिनान्तरम् ॥12॥

शुभग्रह पचास या साठ दिनो के उपरान्त तथा पापग्रह नौ दिनो के उपरान्त फल देते है ॥12॥

शुभाशुभे वीक्ष्यतु यो ग्रहाणां गृही सुवस्त्रव्यवहारकारी।
समोदयेऽवाप्य समस्तभोगं निरस्तरोगो व्यसनैर्विमुक्तः ॥13॥

जो गृहस्थ ग्रहो के शुभाशुभत्व को देखकर वस्त्रो का व्यवहार करता है, वह समस्त भोगो को प्राप्त कर आनन्दित होता है तथा रोग और व्यसनो से छुटकारा प्राप्त करता है ॥13॥

इति श्रीभद्रबाहुविरचिते महानिमित्तशास्त्रे सप्तविंशतितमो

वस्त्रव्यवहारनिमित्तकोऽध्यायः ॥27॥

॥ निमित्त परिसमाप्तम् ॥

विवेचन—ग्रह और नक्षत्र शुभाशुभ, क्रूर-सौम्य आदि अनेक प्रकार के होते है। शुभ ग्रह और शुभ नक्षत्रो का फल शुभ और अशुभ ग्रह और अशुभ नक्षत्रो का फल अशुभ मिलता है। इस अध्याय मे साधारणतया नवीन वस्त्राभरणादि धारण करने के लिए कौन कौन नक्षत्र शुभ हैं और कौन अशुभ हैं, इसका निरूपण किया गया है। नक्षत्रों में विधेय कार्यों के साथ उनकी सज्ञाओ का निरूपण किया जायेगा।

शान्ति, गृह, वाटिका विधायक नक्षत्र

उत्तरात्रयरोहिण्यो भास्करश्च ध्रुवं स्थिरम् ।
तत्र स्थिर बीजगेहशान्त्यारामादिसिद्धये ।।

उत्तराफाल्गुनी, उत्तराषाढा, उत्तराभाद्रपद और रोहिणी ये चार नक्षत्र और रविवार, इनकी ध्रुव और स्थिर संज्ञा है। इनमे स्थिर कार्य करना, बीज बोना, घर बनवाना, शान्ति कार्य करना, गाँव के समीप बगीचा लगाना आदि कार्यों के साथ मृदु कार्य करना भी शुभ होता है।

हाथी-घोड़े की सवारी विधायक नक्षत्र

स्वात्यादित्ये श्रुतेस्त्रीणि चन्द्रश्चापि चर चलम् ।
तस्मिन् गजादिमारोहो वाटिकागमनादिकम् ।।

स्वाति, पुनर्वसु, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा ये पाँच नक्षत्र और सोमवार इनकी चर और चल सज्ञा है। इनमे हाथी-घोडे आदि पर चढना, बगीचे आदि मे जाना, यात्रा करना आदि शुभ होता है।

विषशस्त्रादि विधायक नक्षत्र

पूर्वत्रय याम्यमघे उग्र क्रूर कुजस्तथा ।
तस्मिन् घाताग्निशाठ्यानि विषशस्त्रादि सिद्ध्यति ।
विशाखाग्नेयभे सौम्यो मिश्र साधारण स्मृतम् ।
तत्राग्निकार्य मिश्र च वृषोत्सर्गादि सिद्ध्यति ।।

पूर्वाफाल्गुनी, पूर्वाषाढा, पूर्वाभाद्रपद, भरणी, मघा ये पाँच नक्षत्र और मगल दिन की क्रूर और उग्र सज्ञा है। इनमे मारण, अग्नि-कार्य, धूर्ततापूर्ण कार्य, विष-कार्य, अस्त्र-शस्त्र निर्माण एव उनके व्यवहार करने का कार्य सिद्ध होता है।

विशाखा, कृत्तिका ये दो नक्षत्र और बुध दिन इनकी मिश्र और साधारण सज्ञा है। इसमे अग्निहोत्र, साधारण कार्य, वृषोत्सर्ग आदि कार्य सिद्ध होते है।

आभूषणादि विधायक नक्षत्र

हस्ताश्विपुष्याभिजित: क्षिप्र लघुगुरुस्तदा ।
तस्मिन्पण्यरतिज्ञानभूषाशिल्पकलादिकम् ।।

हस्त, अश्विनी, पुष्य, अभिजित् ये चार नक्षत्र और बृहस्पति दिन, इनकी क्षिप्र और लघु और गुरु संज्ञा है। इनमे बाजार का कार्य, स्त्री-सम्भोग, शस्त्रादि का ज्ञान, आभूषणो का बनवाना और पहिनना, चित्रकारी, गाना-बजाना आदि कार्य सफल होते हैं।

मित्रकार्यादि विधायक नक्षत्र

मृगान्त्यचित्रामित्रक्षं मृदुमैत्रं भृगुस्तथा।
तत्र गीताम्बरक्रीडामित्रकार्यं विभूषणम्॥

मृगशिरा, रेवती, चित्रा, अनुराधा ये चार नक्षत्र और शुक्रवार इनकी मृदु और मैत्र संज्ञा है। इनमें गाना, वस्त्र पहनना, स्त्री के साथ रति करना, मित्र का कार्य और आभूषण पहनना शुभ होता है।

पशुओं को शिक्षित करना तथा दारु-तीक्ष्ण कार्य विधायक नक्षत्र

मूलेन्द्रार्द्राहिभं सौरिस्तीक्ष्णं दारुसंज्ञकम्।
तत्राभिचारघातोग्रभेदा पशुदमादिकम्॥

मूल, ज्येष्ठा, आर्द्रा, आश्लेषा ये चार नक्षत्र और शनि तीक्ष्ण और दारुसंज्ञक हैं। इनमें भयानक कार्य करना, मारना पीटना, हाथी-घोडे आदि को सिखलाना ये कार्य सिद्ध होते है।

ग्रहों का स्वरूप

ग्रहों का स्वरूप जान लेना भी आवश्यक है।

सूर्य—यह पूर्व दिशा का स्वामी, पुरुष ग्रह, सम वर्ण, पित्त प्रकृति और पाप ग्रह है। यह सिंह राशि का स्वामी है। सूर्य आत्मा, स्वभाव, आरोग्यता, राज्य और देवालय का सूचक है। पिता के सम्बन्ध मे सूर्य मे विचार किया जाता है। नेत्र, कलजा, मेरुदण्ड और स्नायु आदि अवयवो पर इसका विशेष प्रभाव पडता है। यह लग्न से सप्तम स्थान मे बली माना गया है। मकर से छ: राशि पर्यन्त चेष्टाबली है। इससे शारीरिक रोग, सिरदर्द, अपच, क्षय, महाज्वर, अतिसार, मन्दाग्नि, नेत्रविकार, मानसिक रोग, उदासीनता, खेद, अपमान एव कलह आदि का विचार किया जाता है।

चन्द्रमा—पश्चिमोत्तर दिशा का स्वामी, स्त्री, श्वेतवर्ण और गलग्रह है। यह कर्कराशि का स्वामी है। वातश्लेष्मा इसकी धातु है। माता-पिता, चित्तवृत्ति, शारीरिक पुष्टि, राजानुग्रह, सम्पत्ति और चतुर्थ स्थान का कारक है। चतुर्थ स्थान मे चन्द्रमा बली और मकर से राशियो मे इसका चेष्टाबल है। कृष्ण पक्ष की षष्ठी से शुक्ल पक्ष की दशमी तक क्षीण चन्द्रमा रहने के कारण पापग्रह और शुक्ल पक्ष की दशमी से कृष्ण पक्ष की पचमी तक पूर्ण ज्योति रहने से शुभग्रह और बली माना गया है। इससे पाण्डुरोग, जलज तथा कफज रोग, मूत्रकृच्छ्र, स्त्रीजन्य रोग, मानसिक रोग, उदर और मस्तिष्क सम्बन्धी रोगो का विचार किया जाता है।

मगल—दक्षिण दिशा का स्वामी, पुरुष जाति, पित्तप्रकृति, रक्तवर्ण और

अग्नि तत्त्व है। यह स्वभावत: पाप ग्रह है, धैर्य तथा पराक्रम का स्वामी है। यह मेष और वृश्चिक राशियों का स्वामी है। यह तीसरे और छठे स्थान में बली और द्वितीय स्थान में निष्फल होता है।

बुध—उत्तर दिशा का स्वामी, नपुंसक, त्रिदोष प्रकृति, श्यामवर्ण और पृथ्वी तत्त्व है। यह पापग्रह सू०, म०, रा०, के०, श० के साथ रहने से अशुभ और चन्द्रमा, गुरु और शुक्र के साथ रहने से शुभ फलदायक होता है। इससे वाणी का विचार किया जाता है। मिथुन और कन्या राशि का स्वामी है।

गुरु—पूर्वोत्तर दिशा का स्वामी, पुरुष जाति, पीतवर्ण और आकाश तत्त्व है। यह चर्बी और कफ की वृद्धि करने वाला है। यह धनु और मीन का स्वामी है।

शुक्र—दक्षिण-पूर्व का स्वामी, स्त्री, श्याम-गौर वर्ण एवं कार्य कुशल है। छठे स्थान में यह निष्फल और सातवें में अनिष्टकर होता है। यह जलग्रह है, इसलिए कफ, वीर्य आदि धातुओं का कारक माना गया है। वृष और तुला राशि का स्वामी है।

शनि—पश्चिम दिशा का स्वामी, नपुसक, वातश्लेष्मिक, कृष्णवर्ण और वायुतत्त्व है। यह सप्तम स्थान में बली, वक्री या चन्द्रमा के साथ रहने से चेष्टाबली होता है। यह मकर और कुम्भ राशियों का अधिपति है।

राहु—दक्षिण दिशा का स्वामी, कृष्णवर्ण और क्रूर ग्रह है। जिस स्थान पर यह रहता है, उस स्थान की उन्नति को रोकता है।

केतु—कृष्ण वर्ण और क्रूर ग्रह है।

जिस देश या राज्य में क्रूर-ग्रहों का प्रभाव रहता है या क्रूर ग्रह वक्री, मार्गी होते हैं, उस देश या राज्य में दुष्काल, अवर्षा तथा नाना प्रकार के अन्य उपद्रव होते हैं। शुभग्रहों के उदय और प्रभाव में राज्य या देश में शान्ति रहती है। नवीन वस्त्रों का बुध, गुरु और शुक्र को, द्वितीया, पंचमी, सप्तमी, एकादशी, त्रयोदशी और पूर्णिमा तिथि को तथा अश्विनी, रोहिणी, मृगशिर, आर्द्रा, पुनर्वसु, पुष्य, उत्तरा तीनों, स्वाति, अनुराधा, श्रवण, धनिष्ठा और रेवती नक्षत्र में व्यवहार करना चाहिए। नवीन वस्त्र सर्वदा पूर्वाह्न में धारण करना चाहिए।

परिशिष्टाध्यायः

अथ वक्ष्यामि केषाञ्चिन्निमित्तानां प्ररूपणम् ।
कालज्ञानादिभेदेन यदुक्तं पूर्वसूरिभिः ॥1॥

अब मैं कतिपय निमित्तो का स्वरूप कथन करता हूँ । इन निमित्तो का प्रतिपादन पूर्वाचार्यों ने कालज्ञान आदि के निमित्तो द्वारा किया है ॥1॥

श्रीमद्वीरजिनं नत्वा भारतीञ्च पुलिन्दिनीम् ।
स्मृत्वा निमित्तानि वक्ष्ये स्वात्मनः कार्यसिद्धये ॥2॥

भगवान महावीर और जिनवाणी को नमस्कार कर तथा निमित्तो की अधिकारिणी पुलिन्दिनी देवी का स्मरण कर स्वात्मा के कार्य की सिद्धि के लिए— समाधिमरण प्राप्ति के लिए मैं निमित्तों का वर्णन करता हूँ ॥2॥

भौमान्तरिक्षादिभेदा अष्टौ तस्य बुधैर्मताः ।
ते सर्वेऽप्यत्र विज्ञेयाः प्रज्ञावद्भिर्विशेषतः ॥3॥

भौम, अन्तरिक्ष आदि के भेद से आठ प्रकार के निमित्त विद्वानो ने बतलाये हैं । इन सभी प्रकार के निमित्तो का उपयोग आयुर्ज्ञान के लिए करना चाहिए ॥3॥

व्याधेः कोटय पञ्च भवन्त्यष्टाधिकषष्टिलक्षाणि ।
नवनवति-सहस्राणि पञ्चशती चतुरशीत्यधिकाः ॥4॥

रोगो की सख्या पाँच करोड अडसठ लाख निन्यानवे हजार पाँच सौ चौरासी बताई गई है ॥4॥

एतत्संख्यान् महारोगान् पश्यन्नपि न पश्यति ।
इन्द्रियैर्मोहितो मूढः परलोकपराङ् मुखः ॥5॥

इन्द्रियासक्त, परलोक की चिन्ता से रहित व्यक्ति उपर्युक्त संख्यक रोगों को देखते हुए भी नही देखता है अर्थात् विषयासक्त प्राणी संसार के विषयो मे इतना रत रहता है जिससे वह उपर्युक्त रोगों की परवाह नहीं करता ॥5॥

नरत्वे दुर्लभे प्राप्ते जिनधर्मे महोन्नते ।
द्विधा सल्लेखनां कर्तुं कोऽपि भव्यः प्रवर्तते ॥6॥

दुर्लभ मनुष्य पर्याय के प्राप्त होने पर भी आत्मा का उन्नतिकारक जैनधर्म बड़े सौभाग्य से प्राप्त होता है । इस महान धर्म के प्राप्त होने पर भी कोई एकाध भव्य ही दोनों प्रकार की सल्लेखनाएं करने के लिए प्रवृत्त होते हैं ॥6॥

कृशत्वं नीयते कायः कषायोऽप्यतिसूक्ष्मताम् ।
उपवासादिभिः पूर्वो ज्ञानध्यानादिभिः परः ॥7॥

उपवास इत्यादि के द्वारा शरीर और कषायो को कृश कर आत्मशोधन मे लगना सल्लेखना है, इस क्रिया को करने वाला व्यक्ति ज्ञान, ध्यान मे सलग्न रहता है ॥7॥

शास्त्राभ्यासं सदा कृत्वा सङ्ग्रामे यस्तु मुह्यति ।
द्विपोस्तस्य कृतस्स्नानो मुनेर्व्यर्थं तथा व्रतम् ॥8॥

शास्त्र-स्वाध्याय करने पर भी जिसकी बुद्धि इन्द्रियो मे आसक्त रहती है उस मुनि के व्रत हाथी के स्नान की तरह व्यर्थ है अर्थात् जिस प्रकार हाथी स्नान करने के अनन्तर पुन धूलि अपने शरीर पर बिखेर लेता है, उसी प्रकार जो मुनि या आत्मसाधक शास्त्राभ्यास करने पर भी सल्लेखना नही धारण करता है और इन्द्रियो मे आसक्त रहता है उसके व्रत व्यर्थ है, अत जीवन का वास्तविक उद्देश्य सल्लेखना धारण करना है ॥8॥

विरत' कोऽपि संसारी संसारभयभीरुक: ।
विन्द्यादिमान्यरिष्टानि भाव्यभावान्यनुक्रमात् ॥9॥

जो कोई ससार से विरत तथा समार भय से युक्त व्यक्ति आत्म-कल्याण करना चाहता है उसके लिए शरीर मे उत्पन्न होने वाले नाना प्रकार के अरिष्टो का मैं निरूपण करता हूँ ॥9॥

पूर्वाचार्यैस्तथा प्रोक्त दुर्गाद्यैलादिभिः यथा ।
गृहीत्वा तदभिप्रायं तथारिष्टं वदाम्यहम् ॥10॥

दुर्गाचार्य, ऐलाचार्य आदि पूर्वाचार्यों के कथन अभिप्राय को लेकर ही मैं अरिष्टो का कथन करता हूँ ॥10॥

पिण्डस्थञ्च पदस्थञ्च रूपस्थञ्च त्रिभेदत ।
आसन्नमरणे प्राप्ते जायतेऽरिष्टसन्तति: ॥11॥

जिस व्यक्ति का शीघ्र ही मरण होने वाला है उसके शरीर मे पिण्डस्थ, पदस्थ और रूपस्थ ये तीन प्रकार के अरिष्ट उत्पन्न होते है ॥11॥

विकृतिर्दृश्यते कायेऽरिष्टं पिण्डस्थमुच्यते ।
अनेकधा तत्पिण्डस्थं ज्ञातव्यं शास्त्रवेदिभि: ॥12॥

शरीर मे अप्राकृतिक रूप से अनेक प्रकार की विकृति होने को शास्त्र के जानने वालो ने पिण्डस्थ अरिष्ट कहा है ॥12॥

सुकुमारं करयुगलं कृष्णं कठिनमवेद्यदायस्य ।
न स्फुटन्ति वाङ्गुलयस्तस्यारिष्टं विजानीहि ॥13॥

यदि किसी के दोनो सुकुमार हाथ अकारण ही कठोर और कृष्ण हो जायं तथा अंगुलियाँ सीधी न हो तो उसे अरिष्ट समझना चाहिए अर्थात् उक्त लक्षण वाले व्यक्ति का मरण सात दिन मे ही होता है ॥13॥

स्तब्ध लोचनयोर्युग्म विवर्णा काष्ठवत्तनुः।
प्रस्वेदो यस्य भालस्थः विकृतं वदनं तथा ॥14॥

जिसके दोनो नेत्र स्तब्ध अर्थात् विकृत हो जायँ तथा शरीर विकृत वर्ण और काठ के समान कठोर हो जाय और मस्तक पर अधिक पसीना आये तथा मुख विकृत हो जाय तो अरिष्ट समझना चाहिए अर्थात् सात दिनो मे मृत्यु होती है ॥14॥

निर्निमित्तो मुखे हासश्चक्षुर्भ्यां जलबिन्दव ।
अहोरात्रं स्रवन्त्येव नखरोमाणि यान्ति च ॥15॥

बिना किसी कारण के अधिक हँसी आये, आँखो मे आँसू व्याप्त रहे और नख तथा रोम के छिद्रो से पसीना निकलता हो तो सात दिन मे मृत्यु समझनी चाहिए ॥15॥

सुकृष्णा दशना यस्य न घोषाकर्णनं पुन ।
एतैश्चिह्नैस्तु प्रत्येक तस्यायुर्दिनसप्तकम् ॥16॥

जिसके दाँत काले हो जायँ तथा कर्णछिद्रो को बन्द करने पर भीतर से होने वाली आवाज सुनाई न पडे तो सात दिन की आयु समझनी चाहिए ॥16॥

निर्गच्छस्तुट्यते वायुस्तस्य पक्षैकजीवनम् ।
नेत्रयोर्मीलनाज्ज्योतिरदृष्टौ दिनसप्तकम् ॥17॥

यदि शरीर से निकलती हुई वायु बीच मे टूट-सी जाय तो पन्द्रह दिन की आयु शेष समझनी चाहिए अथवा बाहर निकलने मे श्वास तेज हो तो पन्द्रह दिन की आयु समझनी चाहिए। दोनो नेत्रो के अग्रभाग को थोडा-सा बन्द करने पर उनमे से जो ज्योति निकलती है यदि वह ज्योति निकलती हुई दिखलाई न पडे तो सात दिन की आयु समझनी चाहिए ॥17॥

भ्रूमध्ये नासिका जिह्वादर्शने च यथाक्रमम् ।
नवत्र्येकदिनान्येव सरोगी जीवति ध्रुवम् ॥18॥

यदि भौंह के मध्य भाग को न देख सके तो नौ दिन, नासिका न दिखलाई पडे तो तीन दिन और जिह्वा न दिखलाई पडे तो एक दिन की आयु होती है, अर्थात् उस रोगी की पूर्वोक्त दिनो मे मृत्यु हो जाती है ॥18॥

पाणिपादोपरि क्षिप्तं तोयं शीघ्रं विशुष्यति ।
दिनत्रयं च तस्यायुः कथितं पूर्वसूरिभिः ॥19॥

हाथ-पैरो पर डाला गया जल यदि शीघ्र ही सूख जाय तो उसकी तीन दिन की आयु समझनी चाहिए, ऐसा पूर्वाचार्यों ने कहा है ॥19॥

निर्विश्रामो मुखाच्छ्वासो मुखाद्रक्तं पतेद्यदा ।
यद्दृष्टिः स्तब्धा निष्पन्दा वर्णचैतन्यहीनता ॥20॥

जिसके मुख से अधिक श्वास निकलती हो, मुख से रक्त गिरता हो, दृष्टि स्तब्ध और निस्पन्द हो तथा मुख विवर्ण और चैतन्यहीन दिखलाई पड़े तो उसकी निकट मृत्यु समझनी चाहिए ॥20॥

स्थिरा ग्रीवा न यस्यास्ति सोच्छ्वासो हृदि रुध्यते ।
नासावदनगुह्येभ्यः शीतलः पवनो वहेत् ॥21॥

जिसकी गर्दन स्थिर न रहे, टेढी हो जाय या श्वास हृदय मे रुक जाय तथा मुख, नाक और गुप्तेन्द्रिय से शीतल वायु निकलने लगे तो शीघ्र मरण होता है ॥21॥

न जानाति निजं कार्यं पाणिपादौ च पीडितौ ।
प्रत्येकमेभिस्त्वरिष्टैस्तस्य मृत्युर्भवेल्लघुः ॥22॥

हाथ, पैर आदि के पीडित करने पर भी जिसे पीडा का अनुभव न हो उसकी शीघ्र मृत्यु होती है ॥22॥

स्थूलो याति कृशत्वं कृशोऽप्यकस्माच्च जायते स्थूलः ।
स्थगस्थगतिर्यस्य कायः कृतशीर्षहस्तो निरन्तरं शेते ॥23॥

अकस्मात् स्थूल शरीर का कृश हो जाना तथा कृश शरीर का स्थूल हो जाना और शरीर का काँपने लगना एव अपने सिर पर हाथ रखकर निरन्तर सोना एक मास की आयु का द्योतक है ॥23॥

ग्रीवोपरि करबन्ध्यो गच्छत्यङ्गुलीभिर्दृढबन्धं च ।
क्रमेणोद्यमहीनस्तस्यायुर्मासपर्यन्तम् ॥24॥

गाढ बन्धन करने के लिए जिसकी अँगुलियाँ गले मे डाली जायँ पर अंगुलियो से दृढ बन्धन न हो सके तथा धीरे-धीरे जिसकी कार्य-क्षमता घटती जाये तो ऐसे व्यक्ति की आयु एक महीना अवशेष रहती है ॥24॥

अधरनखदशनरसना कृष्णा भवन्ति विना निमित्तेन ।
षड्रसमेवमवेताः तस्यायुर्मासपरिमाणम् ॥25॥

बिना किसी निमित्त के ओठ, नख, दन्त और जिह्वा यदि काली हो जाय तथा षड् रस का अनुभव न हो तो उसकी आयु एक महीना शेष होती है ।।25।।

ललाटे तिलकं यस्य विद्यमानं न दृश्यते ।
जिह्वा यस्यातिकृष्णत्वं मासमेकं स जीवति ।।26।।

जिसके मस्तक पर लगा हुआ तिलक किसी को दिखलाई न पड़े तथा जिह्वा अत्यन्त काली हो जाय तो उसकी आयु एक महीने की होती है ।।26।।

धृतिमदनविनाशो निद्रानाशोऽपि यस्य जायेत ।
भवति निरन्तरं निद्रा मासचतुष्कन्तु तस्यायुः ।।27।।

धैर्य, कामशक्ति और निद्रा के नाश होने से चार महीने की आयु शेष समझनी चाहिए । अधिक निद्रा का आना, दिन-रात सोते रहना भी चार मास की आयु का सूचक है ।।27।।

इत्यवोचमरिष्टानि पिण्डस्थानि समासतः ।
इतः परं प्रवक्ष्यामि पदार्थस्थान्यनुक्रमात् ।।28।।

इस प्रकार पिण्डस्थ अरिष्टो का वर्णन किया । अब पदार्थ अरिष्टो का वर्णन करता हूँ ।।28।।

चन्द्रसूर्यप्रदीपादीन् विपरीतेन पश्यति ।
पदार्थस्थमरिष्टं तत्कथयन्ति मनीषिणः ।।29।।

चन्द्रमा, सूर्य, दीपक या अन्य किसी वस्तु का विपरीत रूप से देखना पदस्थ या पदार्थ स्थित अरिष्ट विद्वानों ने कहा है ।।29।।

स्नात्वा देहमलंकृत्य गन्धमाल्यादिभूषणैः ।
शुभ्रं स्ततो जिनं पूज्य चेदं मन्त्रं पठेत् सुधीः ।।30।।

ॐ ह्रीं णमो अरहताण कमले-कमले-विमलेविमले उदरदवदेवी इटि मिटि पुलिन्दिनी स्वाहा ।

एकविंशतिवेलाभिः पठित्वा मन्त्रमुत्तमम् ।
गुरूपदेशमाश्रित्य ततोऽरिष्टं निरीक्षयेत् ।।31।।

पदस्थ अरिष्ट को जानने की विधि का निरूपण करते हुए बताया गया है कि स्नान कर, श्वेत वस्त्र धारण कर, सुगन्धित द्रव्य तथा आभूषणों से अपने को सजाकर एवं जिनेन्द्र भगवान की पूजा कर "ॐ ह्रीं णमो अरिहंताणं कमले-कमले विमले-विमले उदरदव देवि इटि मिटि पुलिन्दिनी स्वाहा" इस मंत्र का इक्कीस बार उच्चारण कर,गुरु-उपदेश के अनुसार अरिष्टो का निरीक्षण करें ।।30-31।।

चन्द्रभास्करयोर्बिम्बं नानारूपेण पश्यति ।
सच्छिद्रं यदि वा खण्डं तस्यायुर्वर्षमात्रतः ॥32॥

जो कोई ससार मे चन्द्रमा और सूर्य को नाना रूपो में तथा छिद्रों से परिपूर्ण देखता है उसकी आयु एक वर्ष की होती है ॥32॥

दीपशिखां बहुरूपां हिमदवदग्धां यथा दिशा सर्वांगम् ।
य पश्यति रोगस्थो लघुमरण तस्य निर्दिष्टम् ॥33॥

जो रोगी व्यक्ति दीपक के प्रकाश की लौ को अनेक रूप मे देखता है तथा दिशाओ को अग्नि या शीत मे जलते हुए देखे तो उसकी मृत्यु निकट समय मे होती है ॥33॥

बहुच्छिद्रान्वितं बिम्बं सूर्यचन्द्रमसोर्भुवि ।
पतन्निरीक्ष्यते यस्तु तस्यायुर्दशवासरम् ॥34॥

जो रोगी पृथ्वी पर सूर्य और चन्द्रमा के बिम्ब को अनेक छिद्रो से युक्त भूमि पर गिरते हुए देखता है उसकी आयु दस दिन की होती है ॥34॥

चतुर्दिक्षु रवीन्दूनां पश्येद् बिम्बं चतुष्टयम् ।
छिद्रं वा तद्दिनान्येव चत्वारश्च मुहूर्तका: ॥35॥

जो सूर्य या चन्द्रमा के चारो बिम्बो को चारो दिशाओ मे देखे वह चार घटिका अर्थात् एक घण्टा छत्तीस मिनट जीवित रहता है ॥35॥

तयोर्बिम्बं यदा नीलं पश्येदायुश्चतुर्दिनम् ।
तयोश्छिद्रे विशन्तं भ्रमरोच्चयं...... .. ...॥36॥

यदि रोगी सूर्य और चन्द्रमा के बिम्ब को नील वर्ण का देखता है तो उसकी आयु चार दिन की होती है। सछिद्र सूर्यबिम्ब और चन्द्रबिम्ब मे भौंरो के समूह को प्रवेश करते हुए देखने मे भी चार दिन की आयु होती है ॥36॥

प्रज्वलद्वासधूमं वा मुञ्चद्वा रुधिरं जलम् ।
य पश्येद् बिम्बमाकाशे तस्यायुः स्याद्दिनानि षट् ॥37॥

जो कोई रोगी सूर्य और चन्द्र बिम्ब मे से धुआँ निकलता हुआ देखे, सूर्य और चन्द्रबिम्ब जलते हुए देखे अथवा सूर्य चन्द्र बिम्ब मे से रुधिर निकलते हुए देखे तो वह छह दिन जीवित रहता है ॥37॥

बाणैर्भिन्नमिवालीढं बिम्बं कज्जलरेखया ।
यो वा पश्यति खण्डानि षण्मासं तस्य जीवितम् ॥38॥

जो रोगी सूर्य और चन्द्र-बिम्ब को बाणो से छिन्न-भिन्न या दोनो के बिम्ब के मध्य काली रेखा देखता है अथवा दोनो के बिम्ब के टुकडे होते हुए देखता है, उसकी आयु छह महीने की होती है ।।38।।

रात्रौ दिनं दिने रात्रिं य: पश्येदातुरस्तथा ।
शीतलां वा शिखां दीपे शीघ्रं मृत्युं समाविशेत् ।।39।।

जो रोगी रात्रि मे दिन का अनुभव करता है और दिन मे रात्रि का तथा दीपक की लौ को शीतल अनुभव करता है, उस रोगी की शीघ्र मृत्यु होती है ।।39।।

तन्दुलैर्म्रियते यस्याञ्जलिस्तेषां भक्त च पच्यते ।
जहीत्यधिकं तदा चूर्ण भक्तं स्याल्लघुमृत्यव: ।।40।।

एक अञ्जलि चावल लेकर भात बनाया जाय, यदि पक जाने के अनन्तर भात उस अञ्जलि परिमाण से अधिक या कम हो तो उसकी निकट मृत्यु समझनी चाहिए ।।40।।

अभिमन्त्र्यस्तत्र तनु. तच्चरणंमर्पियेच्च सन्ध्यायाम् ।
अपि ते पुन: प्रभाते सूत्रे न्यूने हि मासमायुष्कम् ।।41।।

"ॐ ह्री णमो अरिहन्ताण कमले-कमले बिमले-विमले उदरदवदेवि इटि मिटि पुलिन्दिनी स्वाहा" इस मन्त्र से सूत को मन्त्रित कर उससे सायकाल मे रोगी के सिर से लेकर पैर तक नापा जाय और प्रात काल पुन उसी सूत से सिर से पैर तक नापा जाय, यदि प्रात काल नापने पर सूत छोटा हो तो वह व्यक्ति अधिक से अधिक एक मास जीवित रहता है ।।41।।

श्वेता कृष्णा: पीता: रक्ताश्च येन दृश्यन्ते बन्ता. ।
स्वस्य परस्य च मुकुरे लघुमृत्युस्तस्य निर्दिष्ट: ।।42।।

यदि कोई व्यक्ति दर्पण मे अपने या अन्य व्यक्ति के दाँतो को काला, सफेद, लाल या पीले रंग का देखे तो उसकी निकट मृत्यु समझनी चाहिए ।।42।।

द्वितीयाया: शशिबिम्ब पश्येत् त्रिभृंगपरिहीनम् ।
उपरि सधूमच्छायं खण्डं वा तस्य गतमायु: ।।43।।

शुक्ल पक्ष की द्वितीया को यदि कोई चन्द्रमा के बिम्ब को तीन कोण के या बिना कोण के देखे या धूमिल रूप मे देखे तो उस व्यबित का शीघ्र मरण होता है ।।43।।

अथवा मृगांकहीन मलिनं चन्द्रञ्च पुरुषसादृश्यम् ।
प्राणी पश्यति नूनं मासादूर्ध्वं भवान्तरं याति ॥44॥

यदि कोई चन्द्रमा को मृगचिह्न से रहित धूमिल, और पुरुषाकार में देखे तो वह एक मास जीवित रहता है ॥44॥

इति प्रोक्तं पदार्थस्थमरिष्टं शास्त्रदृष्टितः ।
इतः परं प्रवक्ष्यामि रूपस्थञ्च यथागमम् ॥45॥

इस प्रकार पदार्थ अरिष्टो का शास्त्रानुसार निरूपण किया, अब रूपस्थ अरिष्टो का आगमानुसार निरूपण करता हूँ ॥45॥

स्वरूपं दृश्यते यत्र रूपस्थं तन्निरूप्यते ।
बहुभेदं भवेत्तत्र क्रमेणैव निगद्यते ॥46॥

जहाँ रूप दिखलाया जाय वहाँ रूपस्थ अरिष्ट कहा जाता है। यह रूपस्थ अरिष्ट अनेक प्रकार का होता है। इसका अब क्रमश कथन किया जायेगा ॥46॥

छायापुरुषं स्वप्नं प्रत्यक्षतया च लिङ्गनिर्दिष्टम् ।
प्रश्नगतं प्रभणन्ति तद्रूपस्थ निमित्तज्ञाः ॥47॥

छायापुरुष, स्वप्नदर्शन, प्रत्यक्ष, अनुमानजन्य और प्रश्न द्वार निरूपित को अरिष्टवेत्ताओ ने रूपस्थ अरिष्ट कहा है ॥47॥

प्रक्षालितनिजदेहः सितवस्त्राद्यैर्विभूषितः ।
सम्यक् स्वच्छायामेकान्ते पश्यतु मन्त्रेण मन्त्रित्वा ॥48॥

ॐ ह्री रक्ते रक्ते रक्तप्रिये सिंहमस्तकसमारूढे कूष्माण्डिनी देवि ! मम शरीरे अवतर अवतर छाया सत्या कुरु कुरु ह्री स्वाहा।

इति मन्त्रितसर्वांगो मन्त्री पश्येन्नरस्य वरछायाम् ।
शुभदिवसे परिहीने जलधरपवनेन परिहीने ॥49॥
समशुभतलेऽस्मिन् तोयतुषांगारचर्मपरिहीने ।
इतरच्छायारहिते त्रिकरणशुद्धया प्रपश्यन्तु ॥50॥

स्नान कर, श्वेत और स्वच्छ वस्त्रों से सुसज्जित हो एकान्त मे "ॐ ह्रीं रक्ते रक्ते रक्तप्रिये सिंहमस्तकसमारूढे कूष्माण्डिनी देवि ! मम शरीरे अवतर अवतर छाया सत्या कुरु कुरु ह्री स्वाहा" इस मन्त्र से शरीर को मन्त्रित कर शुभ वारो में —अर्थात् सोम, बुध, गुरु और शुक्रवार के पूर्वाह्न में वायु और मेघरहित आकाश के होने पर मन-वचन और काय की शुद्धता के साथ समतल और जल, भूसा,

कोयला, चमड़ा या अन्य किसी प्रकार की छाया से रहित भू-पृष्ठ पर छाया का दर्शन करें ॥48-50॥

न पश्यति आतुरश्छायां निजां तत्रैव संस्थितः ।
दशदिनान्तरं याति धर्मराजस्य मन्दिरम् ॥51॥

जो रोगी उक्त प्रकार के भू-पृष्ठ पर स्थित हो अपनी छाया को न देखे निश्चय से वह दश दिन मे मरण को प्राप्त हो जाता है ॥51॥

अधोमुखीं निजच्छायां छायायुग्मञ्च पश्यति ।
दिनद्वयञ्च तस्यायुर्भाषितं मुनिपुंगवैः ॥52॥

जो रोगी व्यक्ति अपनी छाया को अधोमुखी रूप मे देखे तथा छाया को दो हिस्सो मे विभक्त देखे उसकी दो दिन मे मृत्यु हो जाती है, ऐसा श्रेष्ठ मुनियो ने कहा है ॥52॥

मन्त्री न पश्यति छायामातुरस्य निमित्तिकाम् ।
सम्यक् निरीक्ष्यमाणोऽपि दिनमेकं स जीवति ॥53॥

यदि रोगी व्यक्ति उपर्युक्त मन्त्र का जापकर छाया पर दृष्टि रखते हुए भी उसे न देख सके, उसका जीवन एक दिन का समझना चाहिए ॥53॥

वृषभकरिमहिषरासभमेषाश्वादिकविविधरूपाकारैः ।
पश्येत् स्वच्छायां लघु चेत् मरणं तस्य सम्भवति ॥54॥

यदि कोई व्यक्ति अपनी छाया को बैल, हाथी, महिष, गधा, भेडा और घोड़ा इत्यादि अनेक रूपो मे देखता है तो उसका तत्काल मरण जानना चाहिए ॥54॥

छायाबिम्बं ज्वलत्प्रान्तं सधूमं वीक्ष्यते निजम् ।
नीयमानं नरैः कृष्णैस्तस्य मृत्युर्लघु मतः ॥55॥

यदि कोई व्यक्ति अपनी छाया को अग्नि से प्रज्वलित, धूम से आच्छादित और कृष्ण वर्ण के व्यक्तियो के द्वारा ले जाते हुए देखता है उसकी शीघ्र मृत्यु होती है ॥55॥

नीलां पीतां तथा कृष्णां छायां रक्तां च पश्यति ।
त्रिचतुःपञ्चषड्रात्रं क्रमेणैव स जीवति ॥56॥

यदि कोई व्यक्ति अपनी छाया को नीली, पीली, काली और लाल देखता है वह क्रमशः तीन, चार, पाँच और छह दिन रात तक जीवित रहता है ॥56॥

मुद्गरसबलछुरिकानाराचखड्गादिशस्त्रघातेन ।
चूर्णीकृतनिजबिम्बं पश्यति दिनसप्तकं चायुः ॥57॥

जो व्यक्ति अपनी छाया को मुद्गर, छुरी, बर्छी, भाला, बाण आदि से टुकड़े किये जाते हुए देखता है उसकी आयु सात दिन की होती है ॥57॥

निजच्छाया तथा प्रोक्ता परच्छायापि तादृशी ।
विशेषोऽप्युच्यते कश्चिद्यो दृष्टः शास्त्रवेदिभिः ॥58॥

इस प्रकार निजच्छाया दर्शन और उसके फलाफल का वर्णन किया है। परच्छाया दर्शन का फल भी निजच्छाया दर्शन के समान ही समझना चाहिए। किन्तु शास्त्रों के मर्मज्ञों ने जो प्रधान विशेषताएँ बतलायी है उनका वर्णन किया जाता है ॥58॥

रूपी तरुण. पुरुषो न्यूनाधिकमानवर्जितो नूनम् ।
प्रक्षालितसर्वांगो विलिप्यते स्वेन गन्धेन ॥59॥

एक अत्यन्त सुन्दर युवक को जो न नाटा हो न लम्बा हो, स्नान कराके उज्ज्वल सुगन्धित गन्ध लेपन से युक्त करे ॥59॥

अभिमन्त्र्य तस्य कायं पश्चादुक्ते महीतले विमले।
छायां पश्यतु स नरो धृत्वा तं रोगिणं हृदये ॥60॥

उस उत्तम पुरुष के शरीर को पूर्वोक्त—"ॐ ह्रीं रक्ते रक्तप्रिये सिंहमस्तकसमारूढे कूष्माण्डिनीदेवि अस्य शरीरे अवतर अवतर छायासत्या कुरु कुरु ह्रीं स्वाहा" मन्त्र से मन्त्रित कर स्वच्छ भूमि पर स्थित हो उस व्यक्ति से रोगी का ध्यान कराते हुए छाया का दर्शन करे ॥60॥

या वक्रा प्राङ्मुखीच्छायाऽर्द्धा वाधोमुखवर्तिनी ।
दृश्यते रोगिणो यस्य स जीवति दिनद्वयम् ॥61॥

जिस रोगी का ध्यान कर छाया का दर्शन किया जाय, यदि छाया टेढ़ी, अधोमुखी, पराङ् मुखी दिखाई पड़े तो वह रोगी दो दिन जीवित रहता है ॥61॥

हसन्ती कथयेन्मास रुदन्ती च दिनद्वयम् ।
धावन्ती त्रिदिन छाया पादैका च चतुर्दिनम् ॥26॥

हँसती हुई छाया दखने से एक महीने की आयु, रोती हुई छाया देखने से दो दिन की आयु, दौड़ती हुई छाया देखने से तीन दिन की आयु और एक पैर की छाया देखने से चार दिन की आयु समझनी चाहिए ॥62॥

वर्षद्वयं तु हस्तैका कर्णहीनैकवत्सरम् ।
केशहीनैकषण्मासं जानुहीना दिनैककम् ।।63।।

एक हाथ से हीन छाया दिखलायी पडने पर दो वर्ष की आयु, एक कान से रहित छाया दिखलायी पड़ने पर एक वर्ष की आयु, केश से रहित छाया दिखलायी पडने पर छह महीना और जानु से रहित दिखलायी पडने पर एक दिन की आयु होती है ।।63।।

बाहुसितासमायुक्तं कटिहीना दिनद्वयम् ।
दिनार्धं शिरसा हीना सा षण्मासमनासिका ।।64।।

श्वेत बाहु से युक्त तथा कमर से रहित छाया दिखलाई पडे तो दो दिन की आयु होती है। सिर से रहित छाया दिखलाई पडे तो आधे दिन की आयु एव नासिका रहित छाया दिखलाई पडे तो छह महीने की आयु होती है ।।64।।

हस्तपादाग्रहीना वा त्रिपक्षं सार्द्धमासकम् ।
अग्निस्फुलिंगान् मुञ्चन्ती लघुमृत्युं समादिशेत् ।।65।।

हाथ और पाँव से रहित छाया दिखलाई पडे तो तीन पक्ष या डेढ़ महीने की आयु समझनी चाहिए। यदि छाया अग्नि स्फुलिंगो को उगलती हुई दिखलाई पडे तो शीघ्र मृत्यु समझनी चाहिए ।।65।।

रक्तं मज्जाञ्च मुञ्चन्ती पूतितैलं तथा जलम् ।
एकद्वित्रिदिनान्येव दिनार्द्धं दिनपञ्चकम् ।।66।।

रक्त, चर्बी, पीप जल और तेल को उगलती हुई छाया दिखलाई पडे तो क्रमश एक, दो, तीन, डेढ दिन और पाँच दिन की आयु समझनी चाहिए ।।66।।

परछायाविशेषोऽयं निर्दिष्टः पूर्वसूरिभिः ।
निजच्छायाफलं चोक्तं सर्वं बोद्धव्यमत्र च ।।67।।

उक्ता निजपरच्छाया शास्त्रदृष्ट्या समासतः ।
इतः परं ब्रुवे छायापुरुषं लोकसम्मतम् ।।68।।

पूर्वाचार्यों ने परछाया के सम्बन्ध मे ये विशेष बातें बतलायी है। अवशेष अन्य बातो को निजच्छाया के समान समझ लेना चाहिए। सक्षेप मे शास्त्रानुसार निज-पर छाया का यह वर्णन किया गया है। इसके अनन्तर लोकसम्मत छायापुरुष का वर्णन करते हैं ।।67-68।।

मदमदनविकृतिहीनः पूर्वविधानेन वीक्ष्यते ।
सम्यक् मन्त्री स्वपरच्छायां छायापुरुष. कथ्यते सद्भिः ॥69॥

वह मन्त्रित व्यक्ति निश्चय से छायापुरुष है जो अभिमान, विषय-वासना और छल-कपट से रहित होकर पूर्वोक्त कूष्माण्डिनी देवी के मन्त्र के जाप द्वारा पवित्र होकर अपनी छाया को देखता है ॥69॥

समभूमितले स्थित्वा समचरणयुगप्रलम्बभुजयुगलः ।
बाधारहिते धर्मे विवर्जिते क्षुद्रजन्तुगणैः ॥70॥

जो समतल—बराबर चौरस भूमि मे खडा होकर पैरों को समानान्तर करके हाथो को लटकाकर, बाधा रहित और छोटे जीवो से रहित (सूर्य की धूप मे छाया का दर्शन करता है) वह छायापुरुष कहलाता है ॥70॥

नासाग्रे स्तनमध्ये गुह्ये चरणान्तदेशे ।
गगनतलेऽपि छायापुरुषो दृश्यते निमित्तज्ञैः ॥71॥

निमित्तज्ञो ने उसे छायापुरुष कहा है जिसका सम्बन्ध नाक के अग्रभाग से, दोनों स्तनो के मध्य भाग से, गुप्तागो से, पैर के कोने से, आकाश से अथवा ललाट से हो ॥71॥

विशेष—छाया पुरुष की व्युत्पत्ति कोष मे 'छायाया पुरुष दृष्टः पुरुषाकृति-विशेष.' की गयी है अर्थात् आकाश मे अपनी छाया की भाँति दिखाई देने वाला पुरुष छायापुरुष कहलाता है । तन्त्र मे बताया गया है—पार्वती जी ने शिवजी से भावी घटनाओ को अवगत करने के लिए उपाय पूछा, उसी के उत्तर मे शिव ने छायापुरुष के स्वरूप का वर्णन किया है। बताया गया है कि मनुष्य शुद्धचित्त होकर अपनी छाया आकाश मे देख सकता है। उसके दर्शन से पापो का नाश और छह मास के भीतर होने वाली घटनाओ का ज्ञान किया जा सकता है। पर्वती ने पुन. पूछा—मनुष्य कैसे अपनी भूमि की छाया को आकाश में देख सकता है ? और कैसे छह माह आगे की बात मालूम हो सकती है? महादेवजी ने बताया कि आकाश के मेघशून्य और निर्मल होने पर निश्चल चित्त से अपनी छाया की ओर मुँह कर खडा हो गुरु के उपदेशानुसार अपनी छाया मे कण्ठ देखकर निर्निमेष नयनो से सम्मुखस्थ गगनतल को देखने पर स्फटिक मणिवत् स्वच्छ पुरुष खड़ा दिखलाई देता है। इस छायापुरुष के दर्शन विशुद्ध चरित्र वाले व्यक्तियो को पुण्योदय के होने पर ही होते है। अत गुरु के वचनो का विश्वास कर उनकी सेवा-शुश्रूषा द्वारा छायापुरुष सम्बन्धी ज्ञान प्राप्त कर उसका दर्शन करना चाहिए। छाया-

पुरुष के देखने से छह मास तक मृत्यु नहीं होती, लेकिन छायापुरुष के मस्तक शून्य देखने से छह मास के भीतर ही मृत्यु अवश्यम्भावी है ॥71॥

छायाबिम्बं स्फुटं पश्येद्यावत्तावत् स जीवति।
व्याधिविघ्नादिभिस्त्यक्त: सर्वसौख्याद्यधिष्ठित: ॥72॥

छायापुरुष को स्पष्ट रूप से देखने पर व्यक्ति दीर्घजीवी होता है तथा व्याधि विघ्न इत्यादि से रहित हो सुखी रूप मे निवास करता है ॥72॥

आकाशे विमले छायापुरुषं हीनमस्तकम्।
यस्यार्थं वीक्ष्यते मन्त्री षण्मासं सोऽपि जीवति ॥73॥

मन्त्रित व्यक्ति यदि निर्मल आकाश मे छायापुरुष को बिना मस्तक के देखे तो जिस रोगी के लिए छायापुरुष का दर्शन किया जा रहा है वह छह मास जीवित रहता है ॥73॥

पादहीने नरे दृष्टे जीवितं वत्सरत्रयम्।
जंघाहीने समायुक्तं जानुहीने च वत्सरम् ॥74॥

मन्त्रित पुरुष को छायापुरुष बिना पैर के दिखलाई पडे तो जिसके लिए देखा जा रहा है वह व्यक्ति तीन वर्ष तक जीवित रहता है, जघाहीन और घुटने-हीन छायापुरुष दिखलाई पडे तो एक वर्ष तक जीवित रहता है ॥74॥

उरोहीने तथाष्टादशमासा अपि जीवति।
पञ्चदश कटिहीनेऽष्टौ मासान् हृदयं विना ॥75॥

यदि छायापुरुष हृदय रहित दिखलाई पडे तो आठ महीने की आयु, वक्ष-स्थल रहित दिखलाई पडे तो अठारह महीने की आयु और कटिहीन दिखलाई पडे तो पन्द्रह महीने की आयु समझनी चाहिए ॥75॥

षड्दिनं गुह्यहीनेऽपि करहीने चतुर्दिनम्।
बाहुहीने त्वहर्युग्मं स्कन्धहीने दिनैककम् ॥76॥

यदि छाया पुरुष गुप्तांगों से रहित दिखलाई पडे तो छह दिन की आयु, हाथ से रहित दिखलाई पड़े तो चार दिन की आयु, बाहुहीन दिखलाई पड़े तो दो दिन की आयु और स्कन्धहीन दिखलाई पड़े तो एक दिन की आयु समझनी चाहिए ॥76॥

यो नरोऽत्रैव सम्पूर्ण: सांगोपांगैर्विलोक्यते।
स जीवति चिरं काल न कर्तव्योऽत्र संशय: ॥77॥

जो मनुष्य सम्पूर्ण अगोपागों से सहित छाया पुरुष का दर्शन करता है वह चिरकाल तक जीवित रहता है, इसमे सन्देह नही है ॥77॥

आस्तां तु जीवितं मरणं लाभालाभं शुभाशुभम् ।
यच्चिन्तितमनेकार्थं छायामात्रेण वीक्ष्यते ॥78॥

जीवन, मरण, लाभ, अलाभ, शुभ, अशुभ इत्यादि अनेक बातें छाया पुरुष के दर्शन से जानी जा सकती हैं ॥78॥

स्वप्नफलं पूर्वगतं त्वध्याये चाधुना पर. ।
निमित्त शेषमपि तत्र प्रकथ्यते सूत्रत: क्रमश: ॥79॥

यद्यपि स्वप्नफल का निरूपण पूर्व अध्याय मे हो चुका है फिर भी सूत्र क्रमानुसार फल ज्ञात करने के लिए स्वप्न का निरूपण किया जा रहा है ॥79॥

दशपञ्चवर्षैस्तथा पञ्चदशदिनैः क्रमशः ।
रजनीनां प्रतियामं स्वप्न: फलत्येवायुषः प्रश्ने ॥80॥

आयु के विचार-क्रम मे रात्रि के विभिन्न प्रहरो मे देखे गये स्वप्नो का फल क्रमश दस वर्ष, पाँच वर्ष, पाँच दिन तथा दस दिन मे प्राप्त होता है ॥80॥

शेषप्रश्नविशेषे द्वादशषट्त्र्येकमासकैरेव ।
स्वप्न: क्रमेण फलति प्रतियामं शर्वरी दृष्ट: ॥81॥

आयु के अतिरिक्त शेष प्रकार के प्रश्नो का फल रात्रि के विभिन्न प्रहरो के अनुसार क्रमश बारह, छह, तीन और एक महीने मे प्राप्त होता है ॥81॥

करचरणजानुमस्तकजंघांसोदरविभंगिते दृष्टे ।
जिनबिम्बस्य च स्वप्ने तस्य फल कथ्यते क्रमशः ॥82॥

हाथ, पैर घुटने, मस्तक, जघा, कन्धा तथा उदर के स्वप्न मे भंगित होने का फल तथा स्वप्न मे जिन बिम्ब के दर्शन का फल क्रमश वर्णन करेंगे ॥82॥

करभंगे चतुर्मासैः त्रिमासैः पदभंगत: ।
जानुभंगे तु वर्षेण मस्तके दिनपञ्चभिः ॥83॥

स्वप्न मे करभग (हाथ का टूटना) देखने से चार महीने में मृत्यु, पदभग देखने से तीन महीने मे, जानुभग देखने से एक वर्ष मे और मस्तक भंग देखने से पाँच दिन मे मृत्यु होती है ॥83॥

वर्षयुग्मेन जंघायामंसहीने द्विपक्षत. ।
ब्रूयात् प्रात: फलं मन्त्री पक्षेणोदरभंगतः ॥84॥

स्वप्न मे समस्त जंघा का टूटना देखने से दो वर्ष मे मृत्यु, और कन्धे का भग होना देखने से दो पक्ष मे मृत्यु एव उदर भंग देखने से एक पक्ष मे मृत्यु होती है। स्वप्नदर्शक मन्त्र का प्रयोग कर तथा स्वच्छ और शुद्धतापूर्वक जब रात्रि मे शयन करता है तभी स्वप्न का उक्त फल घटित होता है ॥84॥

छत्रस्य परिवारस्य भंगे दृष्टे निमित्तवित्।
नृपस्य परिवारस्य ध्रुव मृत्युं समादिशेत् ॥85॥

स्वप्न मे राजा के छत्र का भग देखने मे राजा के परिवार के किसी व्यक्ति की मृत्यु होती है ॥85॥

विलयं याति यः स्वप्ने भक्ष्यते ग्रहवायसैः।
अथ करोति यश्छर्दि मासयुग्मं स जीवति ॥86॥

जो व्यक्ति स्वप्न मे अपना विलयन तथा गृद्ध और कौओ द्वारा अपना मास भक्षण देखता है एव चर्बी का वमन करते हुए देखता है उसकी दो महीने की आयु होती है ॥86॥

महिषोष्ट्रखरारूढो नीयते दक्षिणं दिशम्।
घृततैलादिभिर्लिप्तो मासमेकं स जीवति ॥87॥

स्वप्न मे घृत और तेल से स्नात व्यक्ति महिष (भैंसा), ऊँट और गधे के ऊपर सवार हो दक्षिण दिशा की ओर जाता हुआ दिखलाई पडे तो एक महीने की आयु समझनी चाहिए ॥87॥

ग्रहणं रविचन्द्राणां नाशं वा पतनं भुवि।
रात्रौ पश्यति यः स्वप्ने त्रिपक्षं तस्य जीवनम् ॥88॥

यदि रात्रि के समय स्वप्न मे सूर्य, चन्द्र आदि ग्रहो का विनाश अथवा पृथ्वी पर पतन दिखलाई पडे, तो तीन पक्ष की आयु समझनी चाहिए ॥88॥

गृहादाकृष्य नीयेत कृष्णैर्मर्त्यैर्भयप्रदैः।
काष्ठायां यमराजस्य शीघ्र तस्य भवान्तरम् ॥89॥

यदि स्वप्न मे कृष्ण वर्ण के भयकर व्यक्ति घर से खीचकर दक्षिण दिशा की ओर ले जाते हुए दिखलाई पडें तो शीघ्र ही मरण होता ॥89॥

भिद्यते यस्तु शस्त्रेण स्वयं बुद्ध्यति कोपतः।
अथवा हन्ति तान् स्वप्ने तस्यायुर्विनविंशतिः ॥90॥

जो स्वप्न मे अपने को किसी अस्त्र से कटा हुआ देखता है अथवा अस्त्र द्वारा

अपनी मृत्यु के दर्शन करता है अथवा अस्त्रों को ही तोड़ देता है उसकी मृत्यु बीस दिन में ही हो जाती है ॥90॥

यो नृत्यन् नीयते बद्ध्वा रक्तपुष्पैरलङ्कृतः ।
सन्निवेशं कृतान्तस्य मासादूर्ध्वं स नश्यति ॥91॥

जो स्वप्न मे मृतक के समान लाल फूलो से सजाया हुआ नृत्य करते हुए दक्षिण दिशा की ओर अपने को बाँधकर ले जाते हुए देखता है वह एक मास से कुछ अधिक जीवित रहता है ॥91॥

तैलपूरितगर्तायां रक्तकीकसपूरिभिः ।
स्वं मग्नं वीक्ष्यते स्वप्ने मासार्द्धं म्रियते स वै ॥92॥

जो स्वप्न मे रुधिर, चर्बी, पीप (पीब), चमड़ा, घी और तेल से भरे गड्ढे मे गिरकर डूबता हुआ देखता है उसकी निश्चित 15 दिनो मे मृत्यु हो जाती है ॥92॥

बन्धनेऽथ वरस्थाने मोक्षे प्रयाणके ध्रुवम् ।
सौरभेये सिते दृष्टे यशोलाभं निरन्तरम् ॥93॥

स्वप्न मे श्वेत गाय बँधी हुई, तथा खूँटे से खुली हुई एवं चलती हुई दिखलाई पड़े तो हमेशा यश प्राप्ति होती है ॥93॥

नदीवृक्षसरोभूभृत् गृहकुम्भान् मनोहरान् ।
स्वप्ने पश्यति शोकार्त्तः सोऽपि शोकेन मुच्यते ॥94॥

स्वप्न मे नदी, वृक्ष, तालाब, पर्वत, घर तथा सुन्दर मनोहर कलश दिखलाई पडे तो दुःखी व्यक्ति भी दुःख से मुक्त हो जाता है ॥94॥

शयनाशनजं पानं गृहं वस्त्रं सभूषणम् ।
सालंकारं द्विपं वाहं पश्यन् शर्मकदम्बभाक् ॥95॥

जो स्वप्न मे सोना, भोजन-पान, घर, वस्त्र-भूषण, अलकार, हाथी तथा अन्य वाहन आदि का दर्शन करता है उसे सभी प्रकार के सुख उपलब्ध होते है ॥95॥

पताकामसियष्टिं च पुष्पमालां सशक्तिकाम् ।
काञ्चनं दीपसंयुक्तं लात्वा बुद्धो धनं भजेत् ॥96॥

यदि स्वप्न में पताका, तलवार, लाठी, पुष्पमाला आदि को स्वर्णदीपक के द्वारा देखता हुआ दिखलाई पड़े तो धन की प्राप्ति होती है ॥96॥

वृश्चिकं दन्दशूकं वा कीटकं वा भयप्रदम् ।
निर्भयं लभते यस्तु धनलाभो भविष्यति ॥97॥

जो स्वप्न में बिच्छू, साँप तथा अन्य भयकारक जन्तुओं से निर्भय अवस्था को प्राप्त होते हुए देखे उसे धनलाभ होता है ॥97॥

पुरीषं छर्दितं मूत्रं रक्त रेतो वसान्वितम् ।
भक्षयेत् घृणया हीनस्तस्य शोकविमोचनम् ॥98॥

जो स्वप्न में टट्टी, वमन, मूत्र, रक्त, वीर्य, चर्बी इत्यादिक घृणित वस्तुओं को घृणा रहित भक्षण करते हुए देखे उसका शोक नष्ट होता है ॥98॥

वृषकुञ्जरप्रासादक्षीरवृक्षशिलोच्चये ।
अश्वारोहणं शुभस्थाने वृष्टमुन्नतिकारणम् ॥99॥

जो स्वप्न मे बैल, हाथी, महल, पीपल, बड, पर्वत एव घोडे के ऊपर चढता हुआ देखे उसकी उन्नति होती है ॥99॥

भूपकुञ्जरगोवाहधनलक्ष्मीमनोभुवः ।
भूषितानामलंकारैर्दर्शनं विधिकारणम् ॥100॥

जो स्वप्न मे राजा, हाथी, गाय, सवारी, धन, लक्ष्मी, कामदेव तथा अलकार और आभूषणों से युक्त पुरुष का दर्शन करता है उसकी भाग्य की वृद्धि होती है ॥100॥

पयोधिं तरति स्वप्ने भुङ्क्ते प्रासादमस्तके ।
दैवतः लभते मन्त्रं तस्य वैश्वर्यमद्भुतम् ॥101॥

जो स्वप्न मे अपने को समुद्र पार करते हुए, महल के ऊपर भोजन करते हुए तथा किसी अभीष्ट देवता से मन्त्र प्राप्त करते हुए देखता है, उसे अद्भुत ऐश्वर्य की प्राप्ति होती है ॥101॥

शुभ्रालंकारवस्त्राढ्या प्रमदा च प्रियदर्शना ।
दिलष्यति यं नरं स्वप्ने तस्य सम्पत्समागमः ॥102॥

जिसे स्वप्न में स्वच्छ वस्त्रों और अलंकारो से युक्त सुन्दर स्त्री आलिगन करती हुई दिखलाई पडे, उसे सम्पत्ति प्राप्ति होती है ॥102॥

सूर्यचन्द्रमसौ पश्येदुदयाचलमस्तके ।
स लाभमभ्युदयं मर्त्यो दुःखं तस्य च नश्यति ॥103॥

जो स्वप्न में उदयाचल पर सूर्य और चन्द्रमा को उदित होते हुए देखे उस

मनुष्य को धन की प्राप्ति होती है तथा उसका दुःख नष्ट हो जाता है ॥103॥

बन्धनं बाहुपाशेन निगडं पादबन्धनम् ।
स्वस्य पश्यति यः स्वप्ने लाति मान्यं सुपुत्रकम् ॥104॥

जो स्वप्न मे अपने हाथ और पाँव को बँधा हुआ देखता है उसे पुत्र की प्राप्ति होता है ॥104॥

दृश्यते श्वेतसर्पेण दक्षिणांगं पुमान् भुवि ।
महान् लाभो भवेत्तस्य बुद्ध्यते यदि शीघ्रतः ॥105॥

जो व्यक्ति स्वप्न मे अपनी दाहिनी ओर श्वेत साँप को देखता है और स्वप्न दर्शन के पश्चात् तत्काल उठ जाता है, उसे अत्यन्त लाभ होता है ॥105॥

अगम्यागमन पश्येदपेयं पानकं नरः ।
विद्यार्थकामलाभस्तु जायते तस्य निश्चितम् ॥106॥

जो व्यक्ति स्वप्न मे अगम्या स्त्री के साथ समागम करते हुए देखता है तथा अपेय वस्तुओ को पीते हुए देखता है, उसे विद्या, विषयसुख और अर्थलाभ होता है ॥106॥

सफेन पिबति क्षीरं रौप्यभाजनसंस्थितम् ।
धनधान्यादिसम्पत्तिर्विद्यालाभस्तु तस्य वै ॥107॥

जो व्यक्ति स्वप्न मे चाँदी के बर्तन मे स्थित फेन सहित दूध को पीते हुए देखता है, उसे निश्चय से धन-धान्य आदि सम्पत्ति की प्राप्ति तथा विद्या का लाभ होता है ॥107॥

घटिताघटितं हेमं पीतं पुष्प फलं तथा ।
तस्मै दत्ते जनः कोऽपि लाभस्तस्य सुवर्णजः ॥108॥

जो व्यक्ति स्वप्न मे स्वर्ण अथवा स्वर्ण के आभूषण तथा पीत पुष्प या फल को अन्य किसी व्यक्ति द्वारा ग्रहण करते हुए देखता है, उसे स्वर्ण की, स्वर्णाभूषणो की प्राप्ति होती है ॥108॥

शुभं वृषेभवाहानां कृष्णानामपि दर्शनम् ।
शेषाणां कृष्णद्रव्याणामालोको निन्दितो बुधैः ॥109॥

स्वप्न मे कृष्ण वर्ण के बैल, हाथी आदि वाहनो का दर्शन शुभकारक होता है तथा अन्य कृष्ण वर्ण की वस्तुओ का दर्शन विद्वानो द्वारा निन्दित कहा गया है ॥109॥

वह्नेष्टसज्जनप्रेम गोधूमं सौख्यसंगमः।
जिनपूजा यवैर्दृष्टः सिद्धार्थैर्लभते शुभम् ॥110॥

स्वप्न मे दही के दर्शन से सज्जन-प्रेम की प्राप्ति, गेहूँ के दर्शन से सुख की प्राप्ति, जौ के दर्शन से जिन-पूजा की प्राप्ति एव पीली सरसो के देखने से शुभ फल की प्राप्ति होती है ॥110॥

शयनासनयानानां स्वांगवाहनवेश्मनाम्।
दाहं दृष्ट्वा ततो बुद्धो लभते कामितां श्रियम् ॥111॥

स्वप्न में शयन, आसन, सवारी स्वांगवाहन और मकान का जलना देखने के उपरान्त शीघ्र ही जाग जाने से अभीष्ट वस्तु की प्राप्ति होती है ॥111॥

निजांत्रैर्वेष्टयेद् ग्रामं स भवेन् मण्डलाधिपः।
नगर वेष्टयेद्यस्तु स पुनः पृथिवीपति. ॥112॥

जो स्वप्न मे अपने शरीर की नसों मे गाँव को वेष्टित करते हुए देखे वह मण्डलाधिप तथा जो नगर को वेष्टित करते हुए देखे वह पृथ्वीपति— राजा होता है ॥112॥

सरोमध्ये स्थितः पात्रे पायसं यो हि भक्ष्यति।
आसनस्थस्तु निश्चिन्तः स महाभूमिपो भवेत् ॥113॥

जो स्वप्न मे तालाब मे स्थित हो, बर्तन मे रखी हुई खीर को निश्चिन्त होकर खाते हुए देखता है, वह चक्रवर्ती राजा होता है ॥113॥

देवेष्टा पितरो गात्रो लिंगिनो मुखस्थस्त्रिय.।
वरं ददाति यं स्वप्ने स तथैव भविष्यति ॥114॥

स्वप्न मे देवपूजिका, पितर—व्यन्तर आदि की भक्ता, या देव का आलिंगन करने वाली नारियाँ जिस प्रकार का वरदान देती हुई दिखलाई पडे, उसी प्रकार का फल समझना चाहिए ॥114॥

सितं छत्रं सितं वस्त्रं सित कर्पूरचन्दनम्।
लभते पश्यति स्वप्ने तस्य श्रीः सर्वतोमुखी ॥115॥

जो स्वप्न मे श्वेत छत्र, श्वेत वस्त्र, श्वेत चन्दन एव कपूर आदि वस्तुओ को प्राप्त करते हुए देखता है, उसे सभी प्रकार के अभ्युदय प्राप्त होते है ॥115॥

पतन्ति दशना यस्य निजकेशाश्चमस्तकात्।
स्वधनमित्रयोर्नाशो बाधा भवति शरीरके ॥116॥

जो स्वप्न मे अपने दाँतो को गिरते हुए तथा अपने सिर से बालों को गिरते या झगड़ते हुए देखता है, उसके धन और बान्धव नाश को प्राप्त होते हैं और शारीरिक कष्ट भी उसे होता है ।।116।।

दंष्ट्री शृंगी वराहो वा वानरो मृगनायकः।
अभिद्रवन्ति यं स्वप्ने भवेत्तस्य महद्भयम् ।।117।।

जो स्वप्न मे अपने पीछे दाँत वाले और सींग वाले शूकर, बन्दर एव सिंह आदि प्राणियो को दौड़ते हुए देखता है, उसे महान् भय प्राप्त होता है ।।117।।

घृततैलादिभिः स्वांगं वाभ्यंगं निशि पश्यति।
यस्ततो बुद्ध्यते स्वप्ने व्याधिस्तस्य प्रजायते ।।118।।

जो स्वप्न मे अपने शरीर में घी या तेल की मालिश करते हुए देखता है तथा स्वप्न दर्शन के पश्चात् उसकी निद्रा खुल जाती है, उसे रोगोत्पत्ति होती है ।।118।।

रक्तवस्त्राद्यलंकारैर्भूषिता प्रमदा निशि।
यमालिंगति सस्नेहा विपत्तस्य महत्यपि ।।119।।

जो स्वप्न मे रात्रि के समय लाल वर्ण के वस्त्रालकारों से युक्त नारी का सस्नेह आलिंगन करते हुए देखता है, उसे महती विपत्ति का सामना करना पडता है ।।119।।

पीतवर्णप्रसूनैर्वालङ्कृता पीतवाससा।
स्वप्ने गूहति यं नारी रोगस्तस्य भविष्यति ।।120।।

जो स्वप्न में पीत वर्ण के पुष्पो द्वारा अलकृत तथा पीत वर्ण के वस्त्रो से सज्जित नारी द्वारा अपने को छिपाया हुआ देखे वह शीघ्र ही रोगी होता है ।।120।।

पुरीषं लोहितं स्वप्ने मूत्रं वा कुरुते तथा।
तदा जागर्ति यो मर्त्यो द्रव्यं तस्य विनश्यति ।।121।।

जो स्वप्न में लाल वर्ण की टट्टी करते हुए या लाल वर्ण का मूत्र करते हुए देखे तथा स्वप्न दर्शन के पश्चात् जाग जाय तो उसका धन नाश होता है ।।121।।

विष्टां लोमानि रौद्रं वा कुंकुमं रक्तचन्दनम्।
दृष्ट्वा यो बुद्ध्यते सुप्तो यस्तस्यार्थो विलीयते ।।122।।

जिसे स्वप्न मे विष्टा—टट्टी, रोम, अग्नि, कुंकुम—रोरी एवं लालचन्दन

दिखलाई पडे और स्वप्न दर्शन के अनन्तर निद्रा टूट जाय, उसके धन का विनाश होता है ॥122॥

रत्नानां करवीराणामुत्पन्नानामुपानहम् ।
लाभे वा दर्शनं स्वप्ने प्रयातस्य विनिर्दिशेत् ॥123॥

यदि स्वप्न में लाल-लाल तलवार धारण किये हुए वीरपुरुषों के जूते का दर्शन या लाभ हो तो यात्रा की सफलता समझनी चाहिए ॥123॥

कृष्णवाहाधिरूढो यः कृष्णवासो विभूषितः ।
उद्विग्नश्च विशो याति दक्षिणां गत एव सः ॥124॥

स्वप्न में कृष्ण सवारी पर आरूढ, कृष्ण वस्त्रों से विभूषित एवं उद्विग्न होता हुआ दक्षिण दिशा की ओर जाते हुए देखे तो मृत्यु समझनी चाहिए ॥124॥

कृष्णा च विकृता नारी रौद्राक्षी च भयप्रदा ।
कर्षति दक्षिणाशायां यं ज्ञेयो मृत एव सः ॥125॥

स्वप्न मे जिस व्यक्ति को काली कलूटी विकृत वर्ण की भयानक नारी दक्षिण दिशा की ओर खींचती हुई दिखलायी पडे उसकी निश्चित रूप से मृत्यु समझनी चाहिए ॥125॥

मुण्डितं जटिलं रूक्षं मलिनं नीलवाससम् ।
रुष्टं पश्यति यः स्वप्ने भयं तस्य प्रजायते ॥126॥

जो स्वप्न में मुण्डित, जटिल, रूक्ष, मलिन और नील वस्त्र धारण किये हुए रुष्ट रूप में अपने को देखता है उसे भय की प्राप्ति होती है ॥126॥

दुर्गन्धं पाण्डुरं भीमं तापसं व्याधिविकृतिम् ।
पश्यति स्वप्ने (···) ग्लानिं तस्य निरूपयेत् ॥127॥

स्वप्न में जो दुर्गन्धयुक्त, पीले एवं भयंकर व्याधिकयुक्त तपस्वी को देखता है उसे ग्लानि होती है ॥127॥

वृक्षं वल्लीं चक्षुपगुल्मं वल्मीकिं निजांकगाम् ।
दृष्ट्वा जागर्ति यः स्वप्ने क्षेयस्तस्य धनक्षयः ॥128॥

जो स्वप्न में वृक्ष, लता, छोटे-छोटे गुल्म या वल्मीकि—बाँबी को अपनी गोदी मे देखता है और स्वप्न दर्शन के पश्चात् जाग जाता है उसके धन का विनाश होता है ॥128॥

खर्जूरोऽप्यनलो वेणुगुल्मो वाप्यहितो द्रुमः ।
मस्तके तस्य जायेत गत एव स निश्चितम् ॥129॥

स्वप्न में जिसके मस्तक पर खजूर, अग्नि संयुक्त बाँस लता एवं वृक्ष पैदा हुए दिखलायी पड़ें उसकी शीघ्र मृत्यु होती है ॥129॥

हृदये वा समुत्पन्नात् हृद्रोगेण स नश्यति ।
शेषांगेषु प्ररूढास्ते तत्तदंगविनाशका ॥130॥

जो स्वप्न मे वक्षस्थल पर उपर्युक्त खजूर, बाँस आदि को उत्पन्न हुआ देखता है उसकी हृदयरोग से मृत्यु होती है तथा शरीर के शेषांगो मे से जिस अग पर उक्त पदार्थों को उत्पन्न होते हुए देखता है उस-उस अग का विनाश होता है ॥130॥

रक्तसूत्रसूत्रैर्वा रक्तपुष्पैर्विशेषतः ।
यदंग वेष्ट्यते स्वप्ने तदेवांगं विनश्यति ॥131॥

जो स्वप्न मे अपने जिस अग को लालसूत, लालपुष्प, या रक्त लता-तन्तुओ मे वेष्टित देखता है उसके उस अंग का विनाश होता है ॥131॥

द्विपो ग्रहो मनुष्यो वा स्वप्ने कर्षति य नरम् ।
मोक्ष बद्धस्य बन्धे वा मुक्ति च समादिशेत् ॥132॥

स्वप्न मे जिस मनुष्य को जो हाथी, मगर या मनुष्य द्वारा खीचते हुए देखता है उसकी कारागार से मुक्ति होती है ॥132॥

मधु छत्र विशेत् स्वप्ने दिवा वा यस्य वेश्मनि ।
अर्थनाशो भवेत्तस्य मरणं वा विनिर्दिशेत् ॥133॥

स्वप्न मे जिसके घर मे दिन मे मधु-मक्खी का छत्ता प्रवेश होते हुए दिखलाई पडे, उसका धन-नाश अथवा मरण होता है ॥133॥

विरेचनेऽर्थनाशः स्यात् छर्दने मरणं ध्रुवम् ।
वाहे पादपछत्राणां गृहाणां ध्वंसमादिशेत् ॥134॥

जो स्वप्न मे विरेचन अर्थात् दस्त लगते हुए देखता है उसके धन का नाश होता है। वमन करते हुए देखने से मरण होता है। वृक्ष की चोटी पर चढ़ते हुए देखने से घर का नाश होता है ॥134॥

स्वगाने रोदनं विद्यात् नर्तने बधबन्धनम् ।
हसने शोकसन्तापं गमने कलहं तथा ॥135॥

स्वप्न मे को गाना गाते हुए देखने से रोना, नाचना देखने से वधबन्धन, हँसना देखने से शोक-सन्ताप एवं गमन देखने से कलह आदि फल प्राप्त होते हैं ॥135॥

सर्वेषां शुभ्रवस्त्राणां स्वप्ने दर्शनमुत्तमम् ।
भस्मास्थितक्रकार्पासदर्शनं न शुभप्रदम् ॥136॥

स्वप्न मे शुभ्र—श्वेत वस्त्र का देखना उत्तम फलदायक है किन्तु भस्म, हड्डी, मट्ठा और कपास का देखना अशुभ होता है ॥136॥

शुक्लमाल्यां शुक्लालङ्कारादीनां धारणं शुभम् ।
रक्तपीतादिवस्त्राणं धारणं न शुभं मतम् ॥137॥

स्वप्न मे शुक्ल माल्य और अलकार आदि का धारण करना शुभ है । रक्त-पीत एव नीलादि वस्त्रो का धारण करना शुभ नही है ॥137॥

मन्त्रज्ञः पापदूरस्थो वातादिदोषजस्तथा ।
दृष्टः श्रुतोऽनुभूतश्च चिन्तोत्पन्नः स्वभावजः ॥138॥
पुण्यं पापं भवेद्दैवं मन्त्रज्ञो वरदो मतः ।
तस्मात्तौ सत्यभूतौ च शेषा. षट्निष्फलाः स्मृताः ॥139॥

स्वप्न आठ प्रकार के होते हैं—पाप रहित मंत्र-साधना द्वारा सम्पन्न मंत्रज्ञ स्वप्न, वातादि दोषो मे उत्पन्न दोषज, दृष्ट, श्रुत, अनुभूत, चिन्तोत्पन्न, स्वभावज, पुण्य-पाप के ज्ञापक दैव । इन आठ प्रकार के स्वप्नो मे मत्रज्ञ और दैव स्वप्न सत्य होते हैं । शेष छह प्रकार के स्वप्न प्राय निष्फल होते हैं ॥138-139॥

मलमूत्रादिबाधोत्थ आधि-व्याधिसमुद्भवः ।
मालास्वभावदिवास्वप्नः पूर्वदृष्टश्च निष्फलः ॥140॥

मल-मूत्र आदि की बाधा मे उत्पन्न होने वाले स्वप्न, आधि-व्याधि अर्थात् रोगादि से उत्पन्न स्वप्न, आलस्य इत्यादि से उत्पन्न स्वप्न, दिवा एवं स्वप्न जागृत अवस्था मे देखे गये पदार्थों के सस्कार से उत्पन्न स्वप्न प्रायः निष्फल होते है ॥140॥

शुभः प्रागशुभ पश्चादशुभः प्राक् शुभस्ततः ।
पाश्चात्यः फलदः स्वप्नः पूर्वदृष्टश्च निष्फलः ॥141॥

यदि स्वप्न पूर्व मे शुभ पश्चात् अशुभ होते हैं, अथवा पूर्व में अशुभ और बाद मे शुभ होते हैं तो बाद पश्चाद् अवस्था मे देखा गया स्वप्न फलदायक तथा पूर्ववर्ती

अवस्था का स्वप्न निष्फल होता है ।।141।।

प्रस्वपेदशुभे स्वप्ने पूर्वदृष्टश्च निष्फलः ।
शुभे जाते पुन स्वप्ने सफलः स तु तुष्टिकृत् ।।142।।

अशुभ स्वप्न के आने पर व्यक्ति स्वप्न के पश्चात् जगकर पुन सो जाय तो अशुभ स्वप्न का फल नष्ट हो जाता है। यदि अशुभ स्वप्न के अनन्तर पुन शुभ स्वप्न दिखलायी पडे तो अशुभ फल नष्ट होकर शुभ फल की प्राप्ति होती है ।।142।।

प्रस्वपेदशुभे स्वप्ने जप्त्वा पञ्चनमस्क्रियाम् ।
दृष्टे स्वप्ने शुभेनैव दु स्वप्ने शान्तिमाचरेत् ।।143।।

अशुभ स्वप्न के दिखलायी पडने पर जगकर णमोकार मत्र का पाठ करना चाहिए। यदि अशुभ स्वप्न के पश्चात् शुभ स्वप्न आये तो दुष्ट स्वप्न की शान्ति का उपाय करने की आवश्यकता नही ।।143।।

स्व प्रकाश्य गुरोरग्रे सुधीः स्वप्नं शुभाशुभम् ।
परेषामशुभं स्वप्न पुरो नैव प्रकाशयेत् ।।144।।

बुद्धिमान् व्यक्ति को अपने गुरु के समक्ष शुभ और अशुभ स्वप्नो का कथन करना चाहिए, किन्तु अशुभ स्वप्न को गुरु के अतिरिक्त अन्य व्यक्ति के समक्ष कभी भी नही प्रकाशित करना चाहिए ।।144।।

निमित्त स्वप्नज चोक्त्वा पूर्वशास्त्रानुसारतः ।
लिङ्गेन तं ब्रुवे इष्टं निर्दिष्ट च यथागमम् ।।145।।

पूर्व शास्त्रो के अनुसार स्वप्न निमित्त का वर्णन किया गया है, अब लिंग के अनुसार इसके इष्टानिष्ट का आगमानुकूल वर्णन करते हैं ।।145।।

शरीरं प्रथमं लिङ्गं द्वितीयं जलमध्यगम् ।
यथोक्तं गौतमेनैव तथैवं प्रोच्यते मया ।।146।।

प्रथम लिंग शरीर है और द्वितीय लिंग जलमध्यग है, इनका जिस प्रकार से पहले गौतम स्वामी ने वर्णन किया है वैसा ही मैं वर्णन करता हूँ ।।146।।

स्नातं लिप्तं सुगन्धेन वरमन्त्रेण मन्त्रितम् ।
अष्टोत्तरशतेनापि यन्त्री पश्येत्तवङ्कम् ।।147।।

ॐ ह्रीं लाः ह्व प लक्ष्मीं भवी कुरु कुरु स्वाहा ।

स्नान कर सुगन्धित लेप लगाकर 108 बार इस मत्र से मंत्रित होकर स्वप्न

का दर्शन करें। इस प्रकार स्वप्न का देखना ही मन्त्रज कहलाता है। "ॐ ह्री ला ह्वः प लक्ष्मी भवी कुरु कुरु स्वाहा" इस मंत्र का 108 बार जाप करना चाहिए ॥147॥

सर्वांगेषु यदा तस्य लीयते मक्षिकागणः।
षण्मास जीवितं तस्य कथितं ज्ञानदृष्टिभिः ॥148॥

जिस व्यक्ति के समस्त शरीर पर अकारण ही अधिक मक्खियाँ लगती हो उसकी आयु ज्ञानियो ने छह महीने बतलायी है। यहाँ से प्रत्यक्ष अरिष्टो का वर्णन आचार्य करते है ॥148॥

दिग्भागं हरित पश्येत् पीतरूपेण शुभ्रकम्।
गन्धं किञ्चिन्न यो वेत्ति मृत्युस्तस्य विनिश्चितम् ॥149॥

जिसको अकारण ही दिशाएँ हरी, पीली और शुभ रूप मे दिखलायी पड़ें तथा गन्ध का ज्ञान भी जिसे न हो उसकी मृत्यु निश्चित है ॥149॥

शशिसूर्यौ गतौ यस्य मुखस्वात्योपशीतलौ।
मरणं तस्य निर्दिष्टं शीघ्रतोऽरिष्टवेदिभिः ॥150॥

जिसे सूर्य और चन्द्रमा दिखलायी न पड़ें तथा जिसके मुख से श्वास अधिक और तेजी से निकलता हो उसका शीघ्र मरण विद्वानो ने कहा है ॥150॥

जिह्वा मल न मुञ्चति न वेत्ति रसना रसम्।
निरीक्षते न रूपञ्च सप्तदिन स जीवति ॥151॥

जिसकी जिह्वा पर सर्वदा अधिक मैल रहता हो तथा जिसे किसी भी रस का स्वाद न आता हो और न वस्तुओ के रूप को देख पाता हो उसकी आयु सात दिन की होती है ॥151॥

वह्निचन्द्रौ न पश्येच्च शुभ्रं वदति कृष्णकम्।
तुङ्गच्छायां न जानाति मृत्युस्तस्य समागतः ॥152॥

जिसे अग्नि और चन्द्रमा दिखलायी न पडते हो और काली वस्तु श्वेत मालूम पड़ती हो, उन्नत छाया परिज्ञात न हो उसकी आसन्न मृत्यु रहती है ॥152॥

मन्त्रित्वा स्वमुखं रोगी जानुदघ्ने जले स्थितः।
न पश्येत् स्वमुखच्छायां षण्मास तस्य जीवितम् ॥153॥

जो रोगी मंत्रित होकर घुटने पर्यन्त जल मे खडा हो अपने मुख की छाया—प्रतिबिम्ब न देख सके उसकी आयु छह महीने की होती है ॥153॥

ॐ ह्रीं ला ह्वः प. लक्ष्मीं क्ष्वीं कुरु कुरु स्वाहा।

मृतं मन्त्रिततैलेन मार्जितं ताम्रभाजनम्।
पिहितं शुक्लवस्त्रेण सन्ध्यायां स्थापयेत् सुधीः ॥154॥
तस्योपरि पुनर्दत्वा नूतनां कुण्डिकां ततः।
जातिपुष्पैर्जपेदेवं स्वष्टाधिकशतं ततः ॥155॥
क्षीरान्नभोजनं कृत्वा भूमौ सुप्येत मन्त्रिणा।
प्रातः पश्येत्स तत्रैव तैलमध्ये निजं मुखम् ॥156॥
निजास्यं चेन्न पश्येच्च षण्मासं च जीवति।
इत्येवं च समासेन द्विधा लिंगं प्रभाषितम् ॥157॥

अब आचार्य तेल मे मुखदर्शन की विधि द्वारा आयु का निश्चय करने की प्रक्रिया बतलाते हैं कि "ॐ ह्री ला ह्व प लक्ष्मी क्ष्वी कुरु कुरु स्वाहा" इस मत्र द्वारा मत्रित तेल से भरे हुए एक सुन्दर साफ या स्वच्छ तावे के बर्तन को सन्ध्या समय शुक्ल वस्त्र से ढककर रखे, पुन उस पर एक नवीन कुण्डिका स्थापित कर उपर्युक्त मंत्र का जुही के पुष्पो से 108 बार जाप करे, तत्पश्चात् खीर का भोजन कर मत्रित व्यक्ति भूमि पर शयन करे और प्रात.काल उठकर उस तेल मे अपने मुख को देखे। यदि अपना मुख इस तेल मे न दिखलाई पडे तो छह मास की आयु समझनी चाहिए। इस प्रकार सक्षेप से आचार्य ने दोनो प्रकार के लिंगो का वर्णन किया है ॥154-157॥

शब्दनिमित्तं पूर्वं स्नात्वा निमित्तत. शुचिवासा विशुद्धधीः।
अम्बिकाप्रतिमां शुद्धां स्नापयित्वा रसादिकैः ॥158॥
अर्चित्वा चन्दनै. पुष्पैः श्वेतवस्त्रसुवेष्टिताम्।
प्रक्षिप्य वामकक्षायां गृहीत्वा पुरुषस्ततः ॥159॥

शब्द निमित्त का वर्णन करते हुए आचार्यों ने बतलाया है कि शब्द दो प्रकार के होते हैं—दैवी और प्राकृतिक। यहाँ दैवी शब्द का कथन किया जा रहा है। स्नानकर स्वच्छ और शुभ्र वस्त्र धारण करे। अनन्तर अम्बिका की मूर्ति का जल, दुग्धादि से अभिषेक कर श्वेत वस्त्रो से उसे आच्छादित करे। पश्चात् चन्दन, पुष्प, नैवेद्य आदि से उसकी पूजा करे। अनन्तर बायें हाथ के नीचे रखकर (शब्द सुनने के लिए निम्न विधि का प्रयोग करे) ॥158-159॥

निशायाः प्रथमे यामे प्रभाते यदि वा व्रजेत्।
इमं मन्त्रं पठन् व्यक्तं श्रोतुं शब्दं शुभाशुभम् ॥160॥

ॐ ह्रीं अम्बे कूष्माण्डिनी (नि) ब्राह्मणि वद वद वागीश्वरी (रि) स्वाहा ।

पुरवीथ्यां व्रजन् शब्दमाद्यं श्रुत्वा शुभाशुभम् ।
स्मरन् व्यावर्तते तस्मादागत्य प्रविचारयेत् ॥161॥

रात्रि मे प्रथम प्रहर मे या प्रात काल मे "ॐ ह्री अम्बे कूष्माण्डिनि ब्राह्मणि देवि वद वद वागीश्वरि स्वाहा" इस मत्र का जापकर शुभाशुभ शब्द सुनने के निमित्त नगर मे भ्रमण करे। इस प्रकार नगर की सडको और गलियो मे भ्रमण करते समय जो भी शुभ या अशुभ शब्द पहले सुनाई पडे, उसे सुनकर वापस लौट आवे और उसी शब्द के अनुसार शुभाशुभ फल अवगत करे। अर्थात् अशुभ शब्द सुनने से मृत्यु, वेदना, पीडा आदि फल तथा शुभ शब्द सुनने से नीरोगता, स्वास्थ्य-लाभ एवं कार्य-सिद्धि आदि शुभ फल प्राप्त होते है ॥160-161॥

अर्हदादिस्तवो राजा सिद्धिर्बुद्धिस्तु मंगलम् ।
वृद्धिश्री जयऋद्धिश्च धनधान्यादिसम्पद ॥162॥
जन्मोत्सवप्रतिष्ठाद्याः देवेष्ट्यादिशुभक्रियाः ।
द्रव्यादिनामश्रवणाः शुभाः शब्दाः प्रकीर्तिताः ॥163॥

नगर मे भ्रमण करते समय प्रथम शब्द अर्हन्त भगवान् का नाम, उनका स्तवन, राजा, सिद्धि, बुद्धि, वृद्धि, जय, चन्द्रमा, श्री ऋद्धि, धन-धान्य, सम्पत्ति, जन्मोत्सव, प्रतिष्ठोत्सव, देवपूजन, द्रव्यादिका नाम आदि शब्दो का सुनना शुभ बतलाया गया है ॥162-163॥

अम्बिकाशब्दनिमित्त छत्रमालाध्वजागन्धपूर्णकुम्भादिसंयुतः ।
वृषाश्च गृहिणः पुंसः सपुत्राः भूषितास्त्रियः ॥164॥

अम्बिका देवी, छत्र, माला, ध्वज, गन्ध युक्त कलश, बैल, गृहस्थ, पुत्र सहित अलंकृत स्त्री आदि का दर्शन सभी कार्यों मे शुभ होता है। शब्द प्रकरण होने से उक्त वस्तुओं के नामो का श्रवण भी शुभ माना जाता है ॥163-164॥

इत्यादिदर्शनं श्रेष्ठं सर्वकार्येषु सिद्धिदम् ।
छत्रादिपातभंगादि दर्शनं शोभनं न हि ॥165॥

किसी भी कार्य के आरम्भ मे छत्रभग, छत्रपात आदि का दर्शन और शब्द-श्रवण अशुभ समझा जाता है। अर्थात् उक्त वस्तुओ के दर्शन या उक्त वस्तुओ के नामों को सुनने से कार्यसिद्धि मे नाना प्रकार की बाधाएं आती हैं ॥165॥

विशेष--वसन्तराज शकुन मे शुभ-शकुनो का वर्णन करते हुए बताया है कि दधि, घृत, दूर्वा, तण्डुल-चावल, जल पूर्ण कुम्भ, श्वेत सर्षप, चन्दन, दर्पण, शंख,

मत्स्य, मृत्तिका, गोरोचन, गोधूलि, देवमूर्ति, फल, पुष्प, अजन, अलंकार, ताम्बूल, भात, आसन, मद्य, ध्वज, छत्र, माला, व्यजन, वस्त्र, पद्म—कमल, भृंगार, प्रज्वलित अग्नि, हाथी, बकरी, कुश, चामर रत्न, सुवर्ण, रूप्य, ताम्र, औषधि, पल्लव, एव हरित वृक्ष का दर्शन किसी भी कार्य के आरम्भ मे सिद्धिदायक बताया गया है।

अंगार, भस्म, काष्ठ, रज्जु—रस्सी, कीचड़, कार्पास—कपास, दाल या फलो के छिलके, अस्थि, मूत्र, मल, मलिन व्यक्ति, अपाग या विकृत व्यक्ति, लोहा, काले वर्ण का अनाज, पत्थर, केश, साँप, तेल, गुड, चमडा, खाली घडा, लवण, तक्र, शृ खला, रजस्वला स्त्री, विधवा स्त्री एव दीना, मलिन-बदन, मुक्तकेशा स्त्री का दर्शन किसी भी कार्य मे अशुभ होता है।

नष्टो भग्नश्च शोकस्थः पतितो लुञ्चितो गतः।
शान्तित पातितो बद्धो भीतो दष्टश्च चूर्णितः ॥166॥

चोरो बद्धो हतः काल प्रदग्ध खण्डितो मृतः।
उद्वासितः पुनर्ग्राम इत्याद्याः दु.खदाः स्मृताः ॥167॥

नष्ट, भग्न, दु खी, मुण्डित शिर, गिरता-पडता, बद्ध, भयभीत, काटा हुआ, चोर, रस्सी या शृ खला से जकडा, वेदनाग्रस्त, जला हुआ, खण्डित, मुर्दा, गाँव से निष्कासित होने के पश्चात् पुन. गाँव मे निवास करने वाला इत्यादि प्रकार के व्यक्तियों का दर्शन दु खप्रद होता है ॥166-167॥

इत्येवं निमित्तकं सर्वं कार्यं निवेदनम्।
मन्त्रोऽय जपितः सिद्ध्येद्वीरस्य प्रतिमाग्रतः ॥168॥

इस प्रकार कार्यसिद्धि के लिए निमित्तो का परिज्ञान करना चाहिए। निम्न मन्त्र की भगवान् महावीर की प्रतिमा के सम्मुख साधना करनी चाहिए। मन्त्र-जाप करने से ही सिद्ध हो जाता है ॥168॥

अष्टोत्तरशतैर्पुष्पैः मालतीनां मनोहरैः।
ॐ ह्री णमो अरिहन्ताणं ह्री अवतर अवतर स्वाहा।
मन्त्रेणानेन हस्तस्य दक्षिणस्य च तर्जनी।
अष्टाधिकशतं वारमभिमन्त्र्य मषीकृतम् ॥169॥

भगवान् महावीर स्वामी की प्रतिमा के समक्ष उत्तम मालती के पुष्पो से 'ॐ ह्रीं अर्हं णमो अरिहन्ताण ह्री अवतर अवतर स्वाहा' इस मन्त्र का 108 बार जाप करने से मन्त्र सिद्ध हो जायगा। पश्चात् मन्त्रसाधक अपने दाहिने हाथ की तर्जनी

को एक सौ आठ बार मन्त्रित कर रोगी की आँखों पर रखे ॥169॥

तर्जन्यां स्थापयेद्भूमौ रविबिम्बं सुवर्तुलम् ।
रोगी पश्यति चेद्बिम्बमायु:षण्मासमध्यगम् ॥170॥

उपर्युक्त क्रिया के अनन्तर रोगी को भूमि की ओर देखने को कहे। यदि रोगी भूमि पर सूर्य के गोलाकार बिम्ब का दर्शन करे तो छः महीने की आयु समझनी चाहिए ॥170॥

इत्यंगुलिप्रश्ननिमित्त शतवारं सुधीमन्त्र्यपावनम् ।
कांस्यभाजने तेन प्रक्षाल्य हस्तयुगलं रोगिण: पुन: ॥171॥

एकवर्णाब्जहिक्षीराष्टाधिकं. शतबिन्दुभि: ।
प्रक्षाल्य दीयते लेपो गोमूत्रक्षीरयोः क्रमात् ॥172॥

प्रक्षालितकरयुगलश्चिन्तय दिनमासक्रमशः ।
पञ्चदशवामहस्ते पञ्चदशतिथिश्च दक्षिणे पाणौ ॥173॥

इस प्रकार अँगुली प्रश्न का वर्णन किया। अब अलक्त और गोरोचन प्रश्न-विधि का निरूपण करते है। विद्वान् व्यक्ति 'ॐ ह्रीं अर्हं णमो अरिहन्ताण ह्रीं अवतर अवतर स्वाहा' मन्त्र का जाप कर किसी काँसे के बर्तन मे अलक्त—लाक्षा को भरकर मन्त्रित करे। अनन्तर रोगी के हाथ, पैर आदि अगो को धोकर शुद्ध करे। पश्चात् गोमूत्र और सुगन्धित जल से रोगी के हाथो का प्रक्षालन करे। अनन्तर दिन, महीना और वर्ष का चिन्तन करे। पन्द्रह की सख्या की बाँयें हाथ में और पन्द्रह की संख्या की दाहिने हाथ मे कल्पना करे ॥171-173॥

शुक्लं पक्षं वामे दक्षिणहस्ते च चिन्तयेत् कृष्णम् ।
प्रतिपत्प्रमुखास्तिथय उभकरयोः पर्वरेखासु ॥174॥

बाँयें हाथ मे शुक्लपक्ष की और दाहिने हाथ मे कृष्णपक्ष की कल्पना करे। प्रतिपदादि तिथियो की दोनो हाथ की पर्वरेखाओ—गाँठ स्थानो पर कल्पना करे ॥174॥

एकद्वित्रिचतु:संख्यमरिष्ट तत्र चिन्तयेत् ।

यदि उक्त क्रिया के अनन्तर पर्वरेखाओं मे एक, दो, तीन और चार संख्या मे कृष्णरेखाएँ दिखलायी पड़ें तो अरिष्ट समझना चाहिए।

हस्तयुगलं तथोद्वर्त्य प्रातः गोरोचनरसैः ॥175॥
अभिमन्त्रितशतवार पश्येच्च करयुगलम् ।
करे करपर्वणि यावन्मात्राश्च बिन्दवः कृष्णा. ॥176॥

दिनानि तावन्मात्राणि मासान् वा वत्सराणि वा।
स्वस्थितो जीवति प्राणी वीक्षितं ज्ञानदृष्टिभिः ॥177॥

प्रात.काल लाक्षा प्रश्न के समान स्नानादि क्रियाओ से निवृत्त होकर उपर्युक्त मन्त्र से मन्त्रित हो सौ बार मन्त्रित गोरोचन से हाथो का प्रक्षालन कर दोनों हाथों का दर्शन करे। उक्त क्रिया करने वाला रोगी व्यक्ति उतने ही दिन, मास और वर्ष तक जीवित रहता है, जितने कृष्णबिन्दु उसके हाथ के पर्वों मे लगे रहते हैं, इस प्रकार का कथन ज्ञानियों का है ॥174 1/2-177॥

विशेष अलक्त प्रश्न की विधि यह है कि किसी चौरस भूमि को एक वर्ण की गाय के गोबर से लीपकर उस स्थान पर 'ॐ ह्रीं अर्हं णमो अरिहन्ताण ह्रीं अवतर अवतर स्वाहा' इस मन्त्र को 108 बार जपना चाहिए। फिर काँसे के बर्तन में अलक्त को भरकर सौ बार मन्त्र से मन्त्रित कर उक्त भूमि पर उस बर्तन को रख देना चाहिए, पश्चात् रोगी के हाथो को गोमूत्र और दूध से धोकर दोनो हाथो पर मन्त्र पढ़ते हुए दिन, मास और वर्ष की कल्पना करनी चाहिए। अनन्तर पुन सौ बार उक्त मन्त्र को पढ़कर उक्त अलक्त से रोगी के हाथ धोने चाहिए। इस क्रिया के पश्चात् रोगी के हाथ धोना चाहिए। उसके हाथो के सन्धि स्थानो मे जितने बिन्दु काले रग के दिखलायी पडें, उतने ही दिन, मास और वर्ष की आयु समझनी चाहिए।

गोरोचन प्रश्न की विधि यह है कि अलक्त प्रश्न के समान एक वर्ण की गाय के गोबर से भूमि को लीपकर उपर्युक्त मन्त्र से 108 बार मन्त्रित कर काँसे के बर्तन मे गोरोचन को सौ बार मन्त्र से मन्त्रित करना चाहिए। पश्चात् रोगी के हाथ गोमूत्र और दूध से धोकर मन्त्र पढ़ते हुए हाथो पर वर्ष, मास और दिन की कल्पना करनी चाहिए। पुन सौ बार मन्त्रित गोरोचन से रोगी के हाथ धुलाकर उन हाथो से रोगी के मरण-समय की परीक्षा करनी चाहिए। रोगी के सन्धि स्थानो मे जितने काले रंग के बिन्दु दिखलायी पड़ें, उतने ही संख्यक दिन, मास और वर्ष में उसकी मृत्यु समझनी चाहिए।

रोचनाकुंकुमैर्लाक्षानामिकारक्तसंयुता।
षोडशाक्षरं लिखेत्पद्म तद्बहिश्चैव तत्समम् ॥178॥

षोडशाक्षरतो बाह्ये मूलबीजं दले दले।
प्रथमे च दले वर्षान्मासांश्चैव बहिर्दले ॥179॥

दिवसान् षोडशीरेव साध्यनामसुकर्णिके।
सप्ताहं पूजयेच्चक्रं तदा तं च निरीक्षयेत् ॥180॥

लाक्षा, कुंकुम, गोरोचना इत्यादि विधियों से आयु की परीक्षा करने के उपरान्त चक्र द्वारा आयु परीक्षा की विधि का निरूपण करते हैं।

सोलह दल का एक कमल भीतर तथा इस कमल के बाहर भी सोलह दल का एक दूसरा कमल बनाना चाहिए। बाह्य कमल के पत्तो पर अ आ आदि मूल स्वरो की स्थापना करनी चाहिए। भीतर वाले कमल के पत्तो पर वर्षों की तथा बाहर वाले कमल के पत्तो पर महीनो की स्थापना करनी चाहिए। कर्णिकाओ में दिवसो की स्थापना करनी चाहिए। इस प्रकार निर्मित चक्र की एक सप्ताह तक पूजा करनी चाहिए, पश्चात् उसका निरीक्षण कर शुभाशुभ फल की जानकारी प्राप्त करने की चेष्टा करनी चाहिए ॥178-180॥

यद्दले चाक्षर लुप्तं तद्दिने म्रियते ध्रुवम्।
वर्षं मासं दिन पश्येत् स्वस्य नाम परस्य वा ॥181॥

निरीक्षण करने पर जिस तिथि, मास या वर्ष की स्थापना वाले दल का स्वर लुप्त हो, उसी तिथि, मास और वर्ष मे अपनी या अन्य व्यक्ति की—जिसके लिए परीक्षा की जा रही है, मृत्यु समझनी चाहिए ॥181॥

यदा वर्णं न लुप्तं स्यात्तदा मृत्युर्न विद्यते।
वर्षं द्वादशपर्यन्तं कालज्ञानं विनोदितम् ॥182॥

यदि कोई भी स्वर लुप्त न हो तो जिसके सम्बन्ध मे विचार किया जा रहा है, उसकी मृत्यु नही होती। इस चक्र द्वारा बारह वर्ष की आयु का ही ज्ञान किया जाता है ॥182॥

प्रभूतवस्त्रदाश्विनी भरण्यर्थापहारिणी।
प्रदह्याग्निदैवते प्रजेश्वरेऽर्थसिद्धये ॥18 ॥

अश्विनी नक्षत्र मे नवीन वस्त्र धारण करने से बहुत वस्त्र मिलते हैं, भरणी मे नवीन वस्त्र धारण करने से अर्थ की हानि होती है, कृत्तिका मे नवीन वस्त्र धारण करने से वस्त्र दग्ध होता है, रोहिणी मे नवीन वस्त्र धारण करने से धन प्राप्ति होती है ॥183॥

मृगे तु मूषकाद्भय व्यसुत्वमेव शांकरे।
पुनर्वसौ शुभागमस्तदग्रमे धनैर्युतिः ॥184॥

मृगशिरा में नवीन वस्त्र धारण करने से वस्त्रो को चूहो के काटने का भय, आर्द्रा मे नवीन वस्त्र धारण करने से मृत्यु, पुनर्वसु में वस्त्र धारण करने से शुभ की प्राप्ति और पुष्य में वस्त्र धारण करने से धनलाभ होता है ॥18 ॥

भुजंगमे विलुप्यते मघासु मृत्युमाविशेत् ।
भगाह्वये नृपाद्भयं धनागमाय चोत्तरा ॥185॥

आश्लेषा में पहनने से वस्त्र का नष्ट हो जाना, मघा नक्षत्र में मृत्यु, पूर्वाफाल्गुनी मे राजा से भय एव उत्तराफाल्गुनी मे वस्त्र धारण करने से धन की प्राप्ति होती है ॥185॥

करेण धर्मसिद्धय: शुभागमस्तु चित्रया ।
शुभं च भोज्यमानिले द्विदैवते जनप्रिय ॥186॥

हस्त नक्षत्र मे वस्त्र धारण करने से कार्यसिद्धि होती है, चित्रा मे शुभ की प्राप्ति, स्वाति मे उत्तम भोजन का मिलना एव विशाखा मे जनप्रिय होता है ॥186॥

सुहृद्युतिश्च मित्रभे पुरन्दरेऽम्बरक्षय. ।
जलाप्लुतिश्च नैऋते रुजो जलाधिदैवते ॥187॥

अनुराधा मे वस्त्र धारण करने से मित्र समागम, ज्येष्ठा मे वस्त्र का क्षय, मूल मे नवीन वस्त्र धारण करने से जल मे डूबना और पूर्वाषाढा मे रोग होता है ॥187॥

मिष्टमन्नमथ विश्वदैवते
वैष्णवे भवति नेत्ररोगता ।
धान्यलब्धिमपि वासवे विदु-
र्वारुणे विषकृतं महद्भयम् ।188॥

उत्तराषाढा मे मिष्ठान्न की प्राप्ति, श्रवण मे नवीन वस्त्र धारण करने से नेत्ररोग, धनिष्ठा मे नवीन वस्त्र धारण करने से अन्नलाभ एव शतभिषा मे विष का बहुत भय होता है ॥188॥

भद्रपदासु भयं सलिलोत्थं
तत्परतश्च भवेत्सुतलब्धिः ।
रत्नयुतिं कथयन्ति च पौष्णे
योऽभि नवाम्बरमिच्छति भोक्तुम् ॥189॥

पूर्वाभाद्रपदा मे जलभय, उत्तराभाद्रपदा मे पुत्रलाभ और रेवती नक्षत्र मे नवीन वस्त्र धारण करने से रत्न लाभ होता है ॥189॥

वस्त्रस्य कोणे निवसन्ति देवा
नराश्च पाशान्तशान्तमध्ये।
शेषास्त्रयश्चात्र निशाचरांशा-
स्तथैव शयनासनपादुकासु ॥190॥

नवीन वस्त्र धारण करते समय उसके शुभाशुभत्व का विचार निम्न प्रकार से करना चाहिए। नये वस्त्र के नौ भाग करके विचार करना चाहिए। वस्त्र के कोणों के चार भागो मे देवता, पाशान्त के दो भागो मे मनुष्य और मध्य के तीन भागो मे राक्षस निवास करते हैं। इसी प्रकार शय्या, आसन और खडाऊँ के नौ भाग करके फल का विचार करना चाहिए ॥190॥

लिप्ते मषी कर्दमगोमयाद्यै-
श्छिन्ने प्रदग्धे स्फुटिते च विन्द्यात्।
पुष्टे नवेऽल्पाल्पतरं च भुङ्क्ते
पापे शुभ वाधिकमुत्तरीये ॥191॥

यदि धारण करते ही नये वस्त्र मे स्याही, गोबर, कीचड आदि लग जाय, फट जाय, जल जाय तो अशुभ फल होता है। यह फल उत्तरीय वस्त्र मे विशेष रूप से घटित होता है ॥191॥

रुग्राक्षसांशेष्वथ वापि मृत्युः
पुंजन्मतेजश्च मनुष्यभागे।
भागेऽमराणामथभोगवृद्धिः
प्रान्तेषु सर्वत्र वदन्त्यनिष्टम् ॥192॥

राक्षसो के भागो मे वस्त्र मे छेद हो तो वस्त्र के स्वामी को रोग या मृत्यु हो, मनुष्य भागो मे छेद हो तो पुत्रजन्म और कान्ति-लाभ, देवताओ के भागो मे छेद आदि हो तो भोगो मे वृद्धि एव सभी भागो मे छेद हो तो अनिष्ट फल होता है। समस्त नवीन वस्त्र मे छिद्र होना अशुभ है ॥192॥

कंकल्लवंालूककपोतकाक-
क्रव्यादगोमायुखरोष्ट्रसर्पाः।
छेदाकृतिर्दैवतभागगापि,
पुंसां भय मृत्युसम करोति ॥193॥

कक पक्षी, मेढ़क, उल्लू, कपोत, मांसभक्षी गृध्रादि, जम्बुक, गधा, ऊँट और सर्प के आकार का छेद देवताओ के भाग मे भी हो तो भी मृत्यु के समान व्यक्तियो

को पीड़ा कारक एव भयप्रद होता है। वस्त्र के छिद्र के आकार पर ही फल निर्भर करता है ॥193॥

छत्रध्वजस्वस्तिकवर्धमान-
श्रीवृक्षकुम्भाम्बुजतोरणाद्या: ।
छेदाकृतिर्नैऋतभागगापि,
पुंसां विधत्ते न चिरेण लक्ष्मीम् ॥194॥

छत्र, ध्वज, स्वस्तिक, वर्धमान—मिट्टी का सकोरा, बेल, कलश, कमल, तोरणादि के आकार का छिद्र राक्षस भाग मे हो तो मनुष्यो को लक्ष्मी की प्राप्ति होती है। अन्य भागो मे होने पर तो अत्यन्त शुभफल प्राप्त होता है ॥154॥

भोक्तुं नवाम्बरं शस्तमृक्षेऽपि गुणवर्जिते ।
विवाहे राजसम्माने प्रतिष्ठा-मुनिदर्शने ॥195॥

विवाह मे, राज्योत्सव मे या राजसम्मान के समय, प्रतिष्ठोत्सव में, मुनियो के दर्शन के समय निन्द्य नक्षत्र मे भी वस्त्र धारण करना शुभ है ॥195॥

इति वस्त्रविच्छेदननिमित्तम् ।

इति श्रीभद्रबाहुसंहितायां निमित्तनामाध्यायो त्रिंशत्तमोऽध्याय: 30 सम्पूर्ण: ॥

श्लोकानामकाराद्यनुक्रमः

अ

अंग-प्रत्यंगयुक्तस्य 442
अगाना च कुरूणा च 310
अंगान् सौराष्ट्रान् 370
अगारकान् नखान् 164
अंगारकोऽग्निसकाशो 366
अकालजल फलपुष्प 434
अकाले उदित शुक्र 264
अगम्यागमन चैव 435
अगम्यागमनं पश्येत् 478
अग्निमग्निप्रभा 23
अग्रतस्तु सपाषाणं 187
अग्रतो या पतेदुल्का 30
अचिरेणैव कालेन 192
अजवीथीमनुप्राप्त. 296, 297
अजवीथीमागते चन्द्रे 391
अजवीथी विशाखा च 270
अत ऊर्ध्वं प्रवक्ष्यामि 292
अत पर प्रवक्ष्यामि 94
अतीत वर्तमानं च 181
अतोऽस्य येऽन्यथाभावा 299
अत्यम्बु च विशाखायां 321
अथ गोमूत्रगतिमान् 265
अथ चन्द्राद् विनिष्क्रम्य 66
अथ यद्यभयां सेना 29
अथ वक्ष्यामि केषांचिन् 461
अथवा मृगाकहीनं 468
अथ रश्मिगतोऽस्निग्धा 64
अथ सूर्याद् विनिष्क्रम्य 66
अथात सम्प्रवक्ष्यामि 44, 63, 84, 94, 104, 121, 141, 162, 175, 222, 263, 399
अद्वारे द्वारकरण 243
अधरनखदशनरसना 464
अधोमुखी निजच्छाया 469
अनन्तरा दिश दीप्ता 24
अनार्या कच्छ-यौधेया 269
अनावृष्टिभय घोरं 97
अनावृष्टिभय रोग 88
अनावृष्टिहता देशा 318
अनुगच्छन्ति याश्चोल्का 24
अनुराधा वक्त्रदात्री 456
अनुराधास्थितो शुक्रो 283
अनुलोमो यदाऽस्नीके 113
अनुलोमो यदा स्निग्ध: 113
अनुलोमो विजयं ब्रूते 290
अनृजु. परुष: श्यामो 340
अनेकवर्णनक्षत्र- 21
अनेकवर्णसंस्थानं 145
अन्त.पुरविनाशाय 200

अन्त पुरेषु द्वारेषु	242	अमनोज्ञै: फलै: पुष्पै	203
अन्तवश्चादवन्तश्च	268	अम्बरेषूदकं विन्द्यात्	146
अन्धकारसमुत्पन्ना	167	अम्बिकाशब्दनिमित्त	487
अन्यस्मिन् केतुभवने	365	अम्ला सलवणा स्निग्धा	227
अपग्रहं विजानीयात्	128	अरण्यानि तु सर्वाणि	146
अपरस्तु तथा न्यून.	109	अर्चित्वा चन्दनै पुष्पै	486
अपरा चन्द्रसूर्यौ तु	403	अर्द्धचन्द्र निकाशस्तु	49
अपरेण च कबन्धस्तु	382	अर्द्धवृत्ता प्रधावन्ति	199
अपरेण तु या विद्युत्	64	अर्धमास यदा चन्द्रे	395
अपरोत्तरा तु या विद्युन्	64	अर्हत्सु वरुणे रुद्रे	236
अपसव्य नक्षत्रस्य	308	अर्हदादिस्तवो राजा	487
अपि लक्षणवान् मुख्य	179	अलकारोपघाताय	279
अपोन्तरिक्षात् पतितं	340	अलकृताना द्रव्याणा	438
अप्रशस्तो यदा वायु-	114	अलक्तक वाथ रोगो वा	434
अप्सराणा च सस्थाना	74	अल्पचन्द्र च द्वीपाश्च	356
अप्सराणा तु सदृशा	166	अल्पेनापि तु ज्ञानेन	179
अभक्ष्यभक्षण चैव	436	अवृष्टिश्च भय घोर	277
अभिजिच्चानुराधा च	322	अशनिश्चक्रसस्थाना	17
अभिजिच्छ्रवण चापि	273	अश्मकान् भरतानुड्रान्	387
अभिजित्स्थ कुरून्	284	अश्रुपूर्णमुखादीना	197
अभिजिद द्वे तथाषाढे	270	अश्वपण्योपजीविनो	287
अभिद्रवन्ति घोषेण	77	अष्टम्या तु यदा चन्द्रो	352
अभिद्रवन्ति या सेना	289	अष्टम्या तु यदा सोम	353
अभिमन्त्रितशतवार	489	अष्टादशषु मासेषु	223
अभिमन्त्र्य तस्य काय	470	अष्टोत्तरशतैं पुष्पै	488
अभिमन्त्र्यस्तत्र तनु	467	अपमव्य विशीर्णं तु	144
अभीक्ष्णं चापि सुप्तस्य	246	असारवृक्षभूयिष्ठे	203
अभ्युत्थिताया च सेनाया	198	असिशक्तितोमराणां	76
अभ्युन्नतो यदा श्वेतो	46	अस्तंगते यदा सूर्ये	383
अभ्रवृक्ष समुच्छाद्य	76	अस्त यातमथादित्यं	28
अभ्रशक्तिर्यतो गच्छेत	78	अस्तमायाति दीप्ता	142
अभ्राणा यानि रूपाणि	86, 98	अस्तिकाय विनीताय	175
अभ्राणा लक्षण कृत्स्न	73	अस्थिमासै पशूनां च	241
अभ्रेषु च त्रिवर्णेषु	194	अहं कृत नृप क्रूरं	175

अहश्च पूर्वसन्ध्या च	403	आस्ता तु जीवितं मरण	474
अहिच्छत्रं च कच्छं च	266	आस्तिकाय विनीताय	137
अहिर्वा वृश्चिक कीटो	439	आहारस्थितय सर्वे	111
अंशुमाली यदा तु	48	**इ**	
आ		इतरेतरयोगास्तु	229
आकाशे विमले छाया-	473	इतरेतरयोगेन	178
आग्नेयी अग्निमाख्याति	86	इति प्रोक्तं पदार्थस्तम्-	468
आज्यविकं गुड तैल	410	इति मन्त्रितसर्वांगो	468
आढकानि तु द्वात्रिंशद्	126	इत्यंगुलिप्रश्ननिमित्तं	489
आढकानि घनिष्ठाया	123	इत्यवोचमरिष्टानि	465
आढकान्येक नवति-	125	इत्यादिदर्शनं श्रेष्ठ	487
आढकान्येकपचाशत्	125	इत्येतावत्समासेन	17
आढकान्येकविंशच्च	125	इत्येन निमित्तक सर्वं	488
आदानाच्चैव पाताच्च	105	इन्द्रस्य प्रतिमाया तु	234
आदित्य परिवेषस्तु	46	इन्द्राणि देवसयुक्ता	413
आदित्य वाथ चन्द्र वा	432	इन्द्राण्या समुत्पात	235
आदित्ये विचरेद रोग	274	इन्द्रायुध निशिश्वेत	232
आनर्त्तान् मलकीराश्च	387	इन्द्रायुधसवर्ण च	143
आनर्त्ता शौरसेनाश्च	308	इन्द्रायुधसवर्णस्तु	112
आपो होतु. पतेद्	185	इम यात्राविध कृत्स्नां	206
आप्य ब्राह्म च वैश्वं च	320	इमानि यानि बीजानि	321
आरण्या ग्राममायान्ति	223	**ई**	
आरुहेद् वा लिखेद्वापि	411	ईतयश्च महाधान्ये	321
आरोग्य जीवित लाभ	181	ईति व्याधिभय चौरान्	274
आर्द्रां हत्वा निवर्तेत	279	ईशाने वर्षणं ज्ञेय	115
आर्द्राश्लेषासु ज्येष्ठासु	165	**उ**	
आर्यस्तमादितं पुष्यो	405	उच्छ्रित चापि वैशाखात्	165
आषाढा श्रवण चैव	277	उत्तर भजते मार्ग	415
आषाढी पूर्णिमाया तु 107, 108, 109	105, 106	उत्तरतो दिश. श्वेत	352
		उत्तरां तु यदा सेवेत्	286
आषाढे तोयसंकीर्ण	322	उत्तराणि च पूर्वाणि	335
आषाढे शुक्लपूर्वासु	122	उत्तराभ्यामाषाढाभ्याम्	122
आसन शयन यान	438	उत्तरायां तु फाल्गुन्यां	127
आसन शाल्मली वापि	439	उत्तरे उदयोऽर्कस्य	382

उत्तरेण तु पुष्पस्य	411	उल्का नीचै समा स्निग्धा	23
उत्तरेण तु रोहिण्या	411	उल्कापात सनिर्घात्	251
उत्तरेणोत्तरं विद्यात्	2 4	उल्कापातोऽथ निर्घाता	184
उत्तरे त्वनयो सौम्यो	335	उल्का रूक्षेण वर्णेन	29
उत्पद्यन्ते च राजान	124	उल्कावत् साधन चाभ्रे	130
उत्पाता विकृताश्चापि	194	उल्कावत साधन ज्ञेय	51, 67, 99
उत्पाता विविधा ये तु	240	उल्कावत् साधन दिक्षु	146
उत्पाताश्च निमित्तानि	357	उल्कावत् साधन सर्वं	89
उत्पाताश्चापि जायन्ते	195	उल्काव्यूहव्वनीकेषु	29
उत्सग पूर्यने स्वप्ने	442	उल्काऽशनिश्च धिष्ण्यं	21
उदकस्य प्रभ शुक्र	404	उल्काऽशनिश्च विद्युच्च	22
उदयात् सप्तमे ऋक्षे	34	उल्का समाना हेषन्ते	250
उदयास्तमने भयो	351	उल्का समासतो व्यासात्	3
उदयास्तमने छवस्ने	383	उल्कास्ता न प्रशस्यन्ते	25
उदयास्मनेऽर्कस्य	86	उल्कास्तु बहव पीता	29
उदये च प्रवासे च	287	उल्कास्तु लोहिता सूक्ष्मा	29
उदये भास्करस्योल्का	28	**ऊ**	
उदीच्या ब्राह्मणान् हन्ति	24	ऊर्ध्वं प्रस्पन्दन्ते चन्द्र	354
उदीच्यान्यथ पूर्वाणि	73	ऊर्ध्वं वृषो यदा नर्दत	245
उदगच्छत् सोममर्क	27	ऊर्ध्वस्थित नृणा पाप	245
उदगच्छमान सविता	237	**ऋ**	
उदगच्छमाने ञ्चादित्ये	85	ऋक्षवानरसस्थाना	22
उदगच्छेत् सोममर्क	28	**ए**	
उद्भिजाना च जन्तूना	409	एकद्वित्रिचतु सख्य-	489
उद्विजन्ति च राजानो	107	एकपादस्त्रिपादो	197
उपघातन चक्रेण	324	एकवर्णाजिह क्षीर-	489
उपसर्पति मित्रादि	317	एकविंश यदा गत्वा	292
उपाचरन्त्यासवाज्ये	435	एकविंशति यदा गत्वा	294
उरोहीने तथाष्टादश	473	एकविंशति वेलाभि	465
उलूका वा विडाला वा	196	एकादशी भयं कुर्यात्	388
उल्का ताराऽशनिश्चैव	399	एकादशे यदा भौमो	341
उल्कादयो हतान् हन्यु-	400	एकादिशु शतान्तेषु	364
उल्काना पुलिन्दाना	310	एकोनविंशक पर्व	351
उल्काना प्रभव रूप	16		

एकोनविंशतिर्विन्द्यात् 124
एकोनविंशदृक्षाणि 291
एकोनानि तु पचाशत् 341
एतत्सख्यान् महारोगान् 461
एतद् व्यासेन कथित 130
एतानि त्रीणि वक्राणि 293
एतानि पंच वक्राणि 294
एतान्येव तु लिंगानि 350,357,383
एतावदुक्तमुल्काना 33
एताषा नामभिवर्ष 63
एते च केतव सर्वे 367
एते प्रयाणा दृश्यन्ते 371
एते प्रवासा शुक्रस्य 298
एतेषा तु यदा शुक्रो 271
एतेषामेव मध्येन 271, 272, 273, 276
एतेषामेव यदा शुक्रो 272
एते सवत्सराश्चोक्ता 322
एते स्वप्ना यथोद्दिष्टा 444
एव च जायते सर्व 395
एव दक्षिणतो विन्द्यात् 365
एव देशे च जातौ च 237
एव नक्षत्र शेषेषु 251
एवं लक्षणसयुक्ता 25, 97
एव विज्ञाय वाताना 111
एव शिष्टेषु वर्णेषु 402
एव शेषान् ग्रहान् 369
एव शेषेषु वर्णेषु 239
एव सम्पत्काराद्येषु 86
एव हयवृषाश्चापि 183
एवमस्तमने काले 8?
एवमेतत्फलं कुर्यात् 287
एवमेवं विजानीयात् 299
एवमेव यदा शुक्रो 274
एषा यदा दक्षिणतो 273
एषामन्यतर हित्वा 251
एषैवास्तगते उल्का 28

ऐ

ऐरावण पथ प्राप्त 296, 298
ऐरावण पथ विन्द्यात् 270, 234, 235, 289
ऐरावणे चतुष्प्रस्थो 391

क

ककल्लवोलूक कपोत 493
कगुदारतिलामुद्गा 413
कट्कण्टकिनो रुक्षा 227
कनक मणयो रत्न 394
कनकाभा शिखा यस्य 366
कनकाभो यदाऽष्टम्या 353
कन्याऽप्यपि या कन्या 443
कपिल सस्य घाताय 143
कपिले रक्त पीते वा 196
कबन्धमुदये भानो- 482
कबन्धा परिघा मेघा 351
कबन्धेनावृत सूर्य 481
कबन्धो वामपीतो वा 481
करकशोणित मास 240
करचरणजानुमस्तक 474
करभगे चतुर्मासैं 474
करेण धर्मसिद्धय 492
कर्मजा द्विविधा 431
कषायमधुरास्तिक्ता 277
काका गृध्रा शृगालाश्च 196
काञ्ची किरातान् द्रमिलान् 388
कामजस्य यदा भार्या 231
काम्बोजान् रामगान्धारान् 370
कार्तिक चाश्व पौष 165
कार्पासास्तिलमाषाश्च 412

कार्याणि धर्मतः कुर्यात्	205	कृष्णे शुष्यन्ति सरितो	310
कालेय चन्दनं रोध्रं	439	कृष्णो नीलश्च श्यामश्च	399
काशाश्च रेवतीहस्ते	281	कृष्णो नीलस्तथा श्यामः	402
काश्मीरान् दरदांश्च	382	कृष्णो नीलाश्च रक्ताश्च	166
काश्मीरा वर्बरा पौण्ड्रा	270	कृष्णो वा विकृतो रूक्षो	184
किष्किधाश्च कुनाटाश्च	381	केतो समुत्थितः केतु-	367
कीटदष्टस्य वृक्षस्य	228	कोकणानपरास्ताश्च	382
कीटा पतगा शलभा-	309	कोकणान् दण्डकान् भोजान्	369
कुञ्जरस्तु तदा नर्दन	183	कोणजान् पापसम्भूतान्	364
कुटिल कड्वखिलग	370	कोद्रवाणा बीजाना	272
कृत्तिका रोहिणी चित्रा	276, 414	कोविदार समाकीर्णे	203
कृत्तिकादि भगान्तश्च	317	कोशधान्य सर्षपाश्च	409
कृत्तिकादीनि सप्तेह	343	कौण्डजा पुरुपादाश्च	267
कृत्तिकाना मघाना च	415	क्रव्यादा पक्षिणो यत्र	189
कृत्तिकाया गतो नित्य	322	क्रव्यादा शकुना यत्र	246
कृत्तिकाया दहत्यग्नी	455	क्रूरं नदन्ति विषम	201
कृत्तिकाया यदा शुक्र	278	क्रूर क्रुद्धश्च ब्रह्मघ्न-	344
कृत्तिका रोहिणी चार्द्रा-	272	क्रूरग्रहयुतश्च चन्द्रो	238
कृत्तिकारोहिणीयुक्ता	410	क्रौंचस्वरेण स्निग्धेन	198
कृत्तिकासु च यद्यार्कि-	309	क्वचिन्निष्पद्यते सस्य	108
कृत्तिकास्तु यदोत्पातो	250	क्षत्रस्य परिवारस्य	475
कृत्तिकास्वग्निदो रक्तो	334	क्षत्रियाणा विषादश्च	340
कृशत्व नीयते काय	461	क्षत्रियान् यवनान् बाल्हीन्	387
कृष्ण वासो हय कृष्ण-	439	क्षत्रिया पुष्पितेऽश्वत्थे	232
कृष्ण कृष्ण यदा हन्यात	401	क्षत्रियाश्च भविष्यात	393
कृष्णवासा यदा भूत्वा	436	क्षार वा कटुक वाऽथ	98
कृष्णपीता यदा कोटि-	353	क्षिप्रगानि विलोमानि	78
कृष्णप्रभो यदा सोमो	353	क्षिप्रमोद च वस्त्र च	293
कृष्णवाहाधिरूढो य	481	क्षीयते वा म्रियते वा	247
कृष्णा च विकृता नारी	481	क्षीर शंखनिभश्चन्द्रे	45
कृष्णानि पीत-ताम्राणि	74	क्षीरान्नभोजन कृत्वा	486
कृष्णा नीला च रूक्षाश्च	24	क्षीरो क्षौद्र यवा कगु-	408
कृष्णा रूक्षा सुखण्डा-	167	क्षुधामरणरोगेभ्य-	269
कृष्णे नीले ध्रुव वर्षं	45	क्षेपाण्यत्र प्ररोहन्ति	123

क्षेम सुभिक्षमारोग्यं	107, 123, 124

ख

खण्डं विशीर्णं सच्छिद्र	143
खरवद्भीमनादेन	248
खर-शूकरयुक्तेन	436
खर्जूरो ऽप्यनलो वेणु-	482
खारी द्वात्रिंशिका ज्ञेया	271
खारीस्तु वारिणो विन्द्यात्	123

ग

गजवीथीमनुप्राप्त	297, 298
गजवीथ्या नागवीथ्या	390
गति प्रवासमुदय	331
गतिमार्गाकृतिवर्ण-	395
गन्धर्वनगर क्षिप्र	144
गन्धर्वनगर गर्भान्	3
गन्धर्वनगर व्योम्नि	143
गन्धर्वनगर स्निग्ध	143
गर्भाधानादयो मासा-	164
गर्भा यत्र न दृश्यन्ते	168
गर्भास्तु विविधा ज्ञेया	164
गवास्त्रेण हिरण्येन	412
गिरि निम्ने च निम्नेषु	410
गुरुणा प्रहत मार्गं	242
गुरुभार्गवचन्द्राणा	264
गुरु शुक्रश्च भौमश्च	415
गुरु सौरश्च नक्षत्र	399
गुरोः शुक्रस्य भौमस्य	333
गृहद्वार विवर्णम-	433
गृहयुद्धमिद सर्वं	405
गृहाणा चरित चक्र-	164
गृहादाकृष्य नीयेत्	475
गृहांश्च वनखण्डांश्च	293
गृहीतो विध्यते चन्द्रो	355
गृह्णीयादेकमासेन	356
गोनागवाजिनां	201
गोपाल वर्जयेत् तत्र	308
गोवीथीमजवीथी वा	390
गोवीथी रेवती चैव	270
गोवीथी समनुप्राप्त.	296, 297
गोवीथ्या नागवीथ्या	391
ग्रहण रविचन्द्राणा	475
ग्रहनक्षत्रचन्द्राणा	48
ग्रहनक्षत्रतिथयो	175
ग्रहानादित्यचन्द्रौ	25
ग्रहा परस्पर यत्र	339
ग्रहो ग्रह यदा हन्यात्	403
ग्रहौ गुरुबुधौ विन्द्यात्	403
ग्रामाणा नगराणा च	294
ग्राम्या वा यदि वाऽरण्या	197
ग्राहो नरं नग कश्चित्	441
ग्रीवोपरकरबन्ध्यो	464

घ

घटिताघटित हेय	478
घृततैलादिभिस्त्यागे	480
घृतो घृतार्चिश्च्यवन-	381

च

चतुरगबलोपेत-	180
चतुरगान्वितो युद्ध	180
चतुरस्रो यदा चापि	49
चतुर्थ चैत षष्ठ च	265
चतुर्थी पचमी षष्ठि	387
चतुर्थे मण्डले शुक्रो	268
चतुर्थे विचरन् शुक्रो	275
चतुर्दशाना मासाना	349
चतुर्दिक्षु यदा पृतना	30
चतुर्दिक्षु रवीन्दूना	466
चतुर्भागफला तारा	17

चतुर्विंशत्यहानि	288
चतुर्विधोऽय विष्कम्भ	177
चतुष्क च चतुष्क च	65
चतुष्पदाना पक्षिणा	75
चतुष्पदाना मनुजा-	197
चतुष्पदाना सर्वेषा	231
चतुष्षष्टिमाढकानि	122, 124, 126
चत्वारिंशच्च द्वे वापि	126
चत्वारिंशत् पचाशत्	289
चत्वारि वा यदा गच्छेत्	307
चत्वारि षट् तथाष्टौ	332
चन्द्रभास्करयोर्बिम्ब	466
चन्द्रमा पीडितो हन्ति	357
चन्द्रमा सर्वघातेन	292
चन्द्र शनैश्चर प्राप्तो	308
चन्द्र शुक्रो गुरु भौमो	411
चन्द्रसूर्य प्रदीपादीन्	465
चन्द्रसूर्यौ विशृगौ तु	392
चन्द्रः सौरि यदा प्राप्त	308
चन्द्रस्य चारं चरतो	395
चन्द्रस्य चोत्तरा कोटी	351
चन्द्रस्य दक्षिणे पार्श्वे	412
चन्द्रस्य परिवेशस्तु	46
चन्द्रस्य वरुणस्यापि	237
चन्द्रे प्रतिपदि योन्यो	389
चर्मासुवर्णकलिगान्	370
चान्द्रस्य दक्षिणो वीथी	333
चार गतो या भूय	306
चार प्रवास वर्ण च	339
चिकित्सानिपुण कार्य	177
चिक्षिणो ह्यरुणो गुल्म.	371
चित्रमूर्तिश्च चित्राश्च	333
चित्रमूलाश्च त्रिपुरा	282
चित्रस्य पीडयेत् मर्व	282
चित्रामेव विशाखा च	277
चित्राया तु यदा शुक्र-	413
चित्राया दक्षिणे पार्श्वे	412
चित्राश्चर्यसुलिगानि	229
चिरस्थायीनि तोयानि	230
चिह्न कुर्यात् क्वचित्	193
चैत्यवृक्षा रसान् यद्वत्	225
चोरो बद्धो हत काल	488
चौराश्च यायिनो म्लेच्छा	356
च्यवन प्लवन यान	431
छ	
छत्रध्वजस्वस्तिक-	493
छर्दने मरण विन्द्यात्	437
छादयेच्चन्द्रसूर्यौ	350
छायापुरुष स्वप्न	468
छायाबिम्ब ज्वलत् प्रान्त	469
छायाबिम्ब स्फुट पश्येत्	473
छायालक्षणपुष्टश्च	177
छिन्ना भिन्ना प्रदृश्येत्	186
ज	
जटी मुण्डी विरूपाक्ष	440
जन्मनक्षत्रघातेऽथ	393
जन्मोत्सव प्रतिष्ठाद्या	487
जरद्गवपथप्राप्त	297
जरद्गवपथ प्राप्त	296
जल जलरुह धान्य	431
जलजानि तु सेवन्ते	273
जलदो जलकेतुश्च	371
जानीयादनुराधाया	129
जामदग्ने यदा रामे	236
जायते चक्षुषो व्याधि	193
जिह्वामल न मुञ्चन्ति	485
जुह्वतो दक्षिण देश	186
जुह्वत्यनुपसर्पण स्थान	186

ज्ञानविज्ञानयुक्तोऽपि 179
ज्येष्ठानुराधयोश्चैव 288
ज्येष्ठामूल च सौम्य च 320
ज्येष्ठामूलभमावस्या 163
ज्येष्ठामूलौ यदा चन्द्रो 414
ज्येष्ठायामनुपूर्वेण 335
ज्येष्ठायामाढकानि 129
ज्येष्ठास्थ पीडयेत् 283
ज्येष्ठे मूलमतिक्रम्य 122
ज्योतिष केवल काल 4
ज्वलन्ति यस्य शस्त्राणि 195

ड

डिम्भरूपा नृपतये 30

त

तज्जातप्रतिरूपेण 270
तत पचदशर्क्षाणि 291
तत प्रबाध्यते वेश- 355
तत प्रोवाच भगवान् 16
तत श्मशानभूतास्थि 295
तत्र तारा तथा धिष्ण्य 17
तत्रासीन महात्मान 2
तत्रास्ति सेनजिद् राजा 1
तथा मूलाभिघातेन 323
तथैवोर्ध्वमधो वाऽपि 65
तदा गच्छन् गृहीतोऽपि 352
तदा ग्राम नगर धान्य 293
तदा निम्नानि वातानि 122
तदाऽन्योन्य तु राजानो 294
तनु समार्गौ यदि 336
तन्दुलैर्मियते यस्या 467
तयोर्बिम्बं यदा नील 466
तर्जन्या स्थापयेद् भूमौ 489
तस्मात् स्वर्गास्पद 1×2
तस्माद् देशे च काले 181
तस्माद्राजा निमित्तज्ञ 180
तस्य व्याधिमय चापि 192
तस्यैव तु यदा धूमो 200
तस्योपरि पुनर्दत्वा 486
तापस पुण्डरीक वा 440
ताम्रो दक्षिणकाष्ठस्थ 340
ताराणा च प्रमाण च 16
तिथिश्च करण चैव 32
तिथीना करणाना च 115
तिथौ मुहूर्तकरणे 97
तिर्यक्षु यानि गच्छन्ति 76
तिला कुलस्था मापाश्च 394
तिष्यो ज्येष्ठा तथाऽश्लेषा 271
तीक्ष्णाया दशरात्रेण 331
तृतीयाया यदा सोमो 352
तृतीये चिरगो व्याधि 275
तृतीये मण्डले शुक्रो 267
तेन सञ्जनित गर्भ 105
तैलपूरितगर्ताया 476
तैलिका सारिकाश्चान्त 279
तोयावहानि सर्वाणि 229
तोसलिंगान् सुलान् 369
त्रपुसीमायत रज्जु 434
त्रयोदशी-चतुर्दश्यो- 388
त्रयोदशोऽपि नक्षत्रे 342
त्रासयन्तो विभेपन्तो 248
त्रिकोटि यदि दृश्येत् 49
त्रिमण्डलपरिक्षिप्तो 87
त्रिवर्णश्चन्द्रवत् वृत्त 366
त्रिंविशति यदा गत्वा 293
त्रिशिरस्के द्विजभयं 365
त्रीणि याऽत्रावरुद्ध्यन्ते 50
त्रैमासिक प्रवास. स्यात् 288

द		दिवा हस्ते तु रेवत्या	191
दंष्ट्री शृ ंगी वराहो वा	479	दिवि मध्ये यदा दृश्येत्	264
दक्षिण चन्द्रशृ ग च	415	दीक्षितानर्हद्देवांश्च	372
दक्षिणं मार्गमाश्रित्य	392	दीपशिखा बहुरूपा	466
दक्षिण क्षेमकृज्ज्ञेयो	283	दीप्यन्ते यत्र शस्त्राणि	225
दक्षिणस्तु मृगान् हन्ति	282	दुग्धतैलघृतानां च	442
दक्षिण स्थविरान् हन्ति	286	दुर्गन्ध पाण्डुरं भीमं	481
दक्षिणस्या दिशि यदा	105	दुर्गे भवति संवासो	306
दक्षिणात्परतो दृष्ट	245	दुर्भिक्ष चाप्यवृष्टि च	110
दक्षिणा भेदने गर्भं	357	दुर्वर्णाश्च दुर्गन्धा-	204
दक्षिणा मेचकाभा तु	353	दुर्वासा कृष्णभस्मश्च	436
दक्षिणे चन्द्रशृ गे च	238	दूतोपजीवनो वैद्यान्	286
दक्षिणे तु यदा मार्गे	307	दूर प्रवासिका यान्ति	129
दक्षिणे धनिनो हन्ति	285	दृश्यते श्वेतसर्पेण	478
दक्षिणेन तु पार्श्वेण	336	देवत तु यदा बाह्य	188
दक्षिणेन तु वक्रेण	318	देवताऽतिथिभृत्येभ्यो	195
दक्षिणेन यदा गच्छेत्	279	देवतान् दीक्षितान् वृद्धान्	194
दक्षिणेन यदा शुक्रो	272	देवतान् पूजयेत् वृद्धान्	205
दक्षिणेनानुराधाया	413	देव-साधु-द्विजातीना	443
दक्षिणे नीचकर्माणि	285	देवान् प्रव्रजितान्	252
दक्षिणे राजपीडा स्यात्	247	देवान् साधु-द्विजान् प्रेतान्	433
दक्षिणे श्रवण गच्छेत्	285	देवेष्टा पितरो गात्रो	479
दक्षिणे स्थविरान् हन्ति	284	देवो वा यत्र नो वर्षेत्	194
दधि क्षौद्र घृत तोय	225	देशस्नेहाम्भसा लोपो	342
दध्नेष्टसज्जनप्रेम	479	देशा महान्तो योधाश्च	309
दर्शन ग्रहण भग्नं	437	दैवज्ञा भिक्षव प्राज्ञा	243
दशपञ्चवर्षैस्तथा	474	द्योतयन्ती दिशा सर्वा-	88
दशाह द्वादशाह वा	113	द्वात्रिंशदाढकानि स्यु-	128, 130
दिग्भाग हरित पश्येत्	485	द्वादशागस्य वेत्तारं	2
दिनानि तावन्मात्राणि	490	द्वादशाह च विंशाहं	292
दिवसान् षोडशीरेव	490	द्वादशैकोनविंशद्वा	291
दिवसार्धं यदा वाति	106	द्वार शस्त्रग्रह वेश्म	241
दिवाकर बहुविध	47	द्वाविंशतिं यदा गत्वा	293
दिवा समुत्थितो गर्भो	163	द्वाशीतिं चतुरासीतिं	291

द्विगाढ हस्तिनारूढः	433	धूमं रज' पिशाचाश्च	164
द्विगुण धान्यमर्घेण	269	धूम. कुणिपगन्धी	185
द्वितीयमण्डले शुक्रो	266, 275	धूमकेतु च सोम च	50
द्वितीयाया तृतीयाया	389	धूमकेतुहत मार्ग	242
द्वितीयाया यदा चन्द्र-	352	धूमज्वाला रजो भस्म	241
द्वितीयाया' शशिबिम्ब	467	धूमध्वजो धूमशिखो	371
द्विनक्षत्रस्य चारस्य	320	धूम्रक्षुद्रश्च यो ज्ञेय'	365
द्विपदश्चतुष्पदो	193	धूम्रवर्णा बहुच्छिद्रा	88
द्विपदाश्चतुष्पदा.	88, 195	धृतिमदनविनाशो	465
द्विपो ग्रहो मनुष्यो वा	482	ध्वजाना च पताकाना	75
द्विमासिकास्तदा	125	**न**	
द्वे नक्षत्रे यदा सौरि	306	न काले नियता केतु	370
ध		नक्षत्र ग्रहसम्पत्या	408
धनधान्य न विक्रेय	106	नक्षत्र यदि वा केतु	368
धनिनो जल-विप्राश्च	344	नक्षत्र यस्य यत्पुसः	21
धनिष्ठादीनि सप्तैव	344	नक्षत्र शाकवाहेन	331
धनिष्ठाधनलाभाय	436	नक्षत्रमादित्यवर्णो	382
धनिष्ठाया जल हन्ति	336	नक्षत्रस्य चिह्नानि	332
धनिष्ठास्थो धन हन्ति	285	नक्षत्रस्य यदा गच्छेत	411
धनुरारोहते यस्तु	433	नक्षत्राणि चरेत्पच	332
धनुषा कवचाना च	76	नक्षत्राणि मुहूर्तांश्च	163
धन्वन्तरे समुत्पातो	236	नक्षत्राणि विमुञ्चन्त्य.	26
धनुषा यदि तुल्य	391	नक्षत्रे पूर्वदिग्भागे	369
धर्मकार्यार्थ वर्तन्ते	122	नक्षत्रे भार्गव. सोम	410
धर्मार्थकामा लुप्यन्ते	277, 295	नक्षत्रेषु तिथौ चापि	167
धर्मार्थकामा हीयन्ते	343	नगरेषूपसृष्टेषु	27
धर्मोत्सवान् विवाहाश्च	205	नगवेश्मपुराण तु	441
धान्य तदा न विक्रेय	344	नग्न प्रव्रजित दृष्ट्वा	188
धान्य पुनर्वसौ वस्रे	456	न चरन्ति यदा ग्रास	197
धान्यं यत्र प्रिय विन्द्यात्	411	न जानाति निज कार्य	464
धान्य वस्त्रमिति ज्ञेयं	415	नदीवृक्षसरोभूभृत्	476
धान्यस्यार्थं तु नक्षत्र	404	न पश्यति स्वकार्याणि	246
धारित याचित गर्भ	105	न पश्यन्ति आतुरच्छाया	469
धार्मिकाः शुरसेनाश्च	266	नभस्तृतीयभाग च	291

नमस्कृत्य जिन वीर	1	निम्न कूपजल छिद्रान्	434
नमस्कृत्य महावीर	430	निम्नेषु वापयेद् बीज	128
न मित्रचित्तो भूतेषु	246	निरिन्धनो यदा चाग्नि-	225
न मित्रभावे सुहृदो	455	निर्गच्छस्तुद्यते वायु-	463
नरत्वे दुर्लभे प्राप्ते	461	निर्ग्रन्था यत्र गर्भाश्च	168
नरा यस्य विपद्यन्ते	202	निर्घाते कम्पने भूमौ	231
नवतिराढकानि स्यु-	124	निर्दया निरनुक्रोशा-	342
नवमी मन्त्रिणश्चौरान्	388	निर्निमित्तोमुखे हास	4 3
नवम्या तु यदा चन्द्र	352	निर्विश्रामो मुखान् श्वासो	464
नव वस्त्र प्रसगेन	246	निवर्तते यदि छाया	243
न वेदा नापि चागानि	181	निविष्टो यदि मनाग्नि	194
नष्टो भग्न शोकस्थ	488	निवृति चापि कुर्वन्ति	412
नागरस्यापि य शीघ्र-	399	निशाया प्रथम यामे	186
नागराणा तदा भेदो	392	निश्चयाश्तदा विपद्यन्ते	273
नागरे तु हते विन्द्यात्	400	निश्चल सुप्रभ कान्तो	357
नागवीथिमनुप्राप्त	297, 298	निष्कुट्यन्ति पादैर्वा	197
नागवीथीति विज्ञेया	270	निष्पत्ति सर्वधान्याना	273
नागाग्रे वेश्मन सालो	437	निष्पद्यते च शम्यानि	272
नानारूपप्रहरणै	76	नीचावलम्बी सोमस्तु	356
नानारूपो यदा	49	नीचैर्निविष्टभूपस्य	204
नानावस्त्रै समाच्छन्ना	226	नीलवस्त्रैस्तथाश्रेणीन्	226
नानावृक्षसमाकीर्णो	1	नीला पीता तथा कृष्णा	469
नारी पुस्त्व नर स्त्रीत्व	443	नीला ताम्रा च गौरा	67
नाशाग्रे स्तनमध्ये	472	नीलाद्यास्तु यदा वर्णा	403
निचयाश्च विनश्यन्ति	274	नृपा भृत्यैर्विरुद्ध्यन्ते	389
निजछाया तथा प्रोक्ता	470	नृपाश्च विषमच्छाया	320
निजात्रैर्वेष्टयेद् ग्राम	479	नैमित्त साधुसम्पन्नो	177
निजास्य चेन्न पश्येच्च	486	**प**	
नित्योद्विग्नो नृपहिते	178	पक्वमासस्य घासाय	437
निपतति द्रुमच्छिन्नो	246	पक्षिण पशवो मर्त्या	224
निपतन्त्यग्रतो यद्वै	201	पक्षिणश्च यदा मत्ता	223
निमित्त स्वप्नज चोक्त्वा	484	पक्षिणश्चापि क्रव्यादा-	97
निमित्तादनुपूर्वाच्च	32	पक्षिणां द्विपदाना च	74
निमित्ते लक्ष्येदेता	177	पक्ष्मश्वयुजे चापि	126

पञ्चप्रकारा विज्ञेया.	44	पापमुत्पातिकं दृष्ट्वा	2
पञ्चमे विचरन् शुक्रो	275	पापा घोरफलं दद्यु	17
पञ्चम्या ब्राह्मणान् सिद्धान्	389	पापासूल्कासु यद्यस्तु	31
पञ्चयोजनिका सन्ध्या	89	पार्थिवाना हितार्थाय	2
पञ्चवक्राणि भौमस्य	341	पार्श्वे तदा भय ब्रूयात्	247
पञ्चविंशतिरात्रेण	236	पाशवज्रामिसदृशा	22
पञ्चसवत्सर घोर	349	पिण्डस्थ च पदस्थ च	462
पञ्चाशिति विजानीयात	127	पितामहर्षय सर्वे	233
पतगा सविषा कीटा	342	पितृदेव तथाऽश्लेषा	334
पतन्ति दशना यस्य	479	पित्तश्लेष्मान्तिक सूर्यो	404
पताकामसियष्टि	438	पिशाचा यत्र दृश्यन्ते	240
पतन्निम्ने यथाप्यम्भो	183	पीडितोऽपचय कुर्यात्	188
पयोधि तरति स्वप्ने	477	पीड्यन्ते केतुघातेन	394
परचक्र नृपभय	228	पीड्यन्ते पूर्ववत् सर्वे	266
परछायाविशेषोऽय	471	पीड्यन्ते भयेनाथ	267
परस्य विपय लब्ध्वा	204	पीड्यन्ते सोमघातेन	400
परिघाऽर्गला कपाट	242	पीत गन्धर्वनगर	142
परिवर्तेद् यदा वात	190	पीत पुष्प फल यस्मै	441
परिवेषोदयोऽष्टम्या	353	पीत पीत यदा हन्यान्	401
परिवेषो विरुद्धेषु	48	पीतपुष्पनिभो यस्तु	94
पशव पक्षिणो वैद्या	393	पीतवर्णप्रसूनैर्वा	480
पशुव्यालपिशाचाना	350	पीतोत्तरा यदा कोटि-	354
पाशुवात रजो धूप	292	पीतो यदोत्तरा वीथी	334
पाशुवृष्टिस्तथोल्का	244	तितो लोहितरश्मिश्च	481
पाञ्चाला कुरवश्चैव	207	पुच्छेन पृष्ठतो देश	22
पाणिपादौ हरिक्षिप्त	464	पुण्य पापं भवेद्दैव	483
पाण्डुराणि च वेश्मानि	442	पुण्यशीलो जयो राजा	268
पाण्डुर्वा द्वावलीढो वा	355	पुनर्वसु यदा रोहेत्	279
पाण्ड्यकेरलचोलाश्च	278	पुनर्वसुमाषाढा	276
पाण्ड्या. केरलाश्चोला	394	पुरवीथ्या व्रजन् शब्द-	487
पाद पादेन मुक्तानि	199	पुरस्तात् सह शुक्रेण	336
पादहीने नरे दृष्टे	473	पुरीष छर्दन यस्तु	439
पादै· पादान् विकर्षन्ति	202	पुरीष छर्दित मूत्र	477
पापघाते तु वालानां	110	पुरीष लोहित स्वप्ने	480

पुलिन्द्रा कोकणा भोजा	393	प्रकृतेर्यो विपर्यास:	222
पुष्करिण्या तु यस्तीरे	432	प्रक्षालितकरयुगल-	489
पुष्पं पुष्पे निबध्येत्	2:0	प्रक्षालितनिजदेह	468
पुष्पाणि पीतरक्तानि	202	प्रक्षिप्यति य शस्त्रै:	443
पुष्य प्राप्तो द्विजान्	286	प्रजानामनयोर्घोर-	414
पुष्येण मैत्रयोगेन	191	प्रजापत्यमाषाढा	277
पुष्ये हते हत पुष्प	321	प्रज्वलद्वासधूम वा	466
पुष्यो यदि द्विनक्षत्रे	320	प्रतिलोमोऽनुलोमो-	319
पूजित· सानुरागेण	188	प्रतिलोमो यदाऽनीके	113
पूर्वं दिशि तु यदा हत्वा	357	प्रतिसूर्यागमस्तत्र	87
पूर्वत· क्षीर-कलिंगान्	266	प्रत्युद्गच्छति आदित्यं	355
पूर्वत: समचारेण	291	प्रत्यूषे पूर्वत शुक्र·	277
पूर्वरात्रपरिवेषा-	87	प्रथम च द्वितीय च	265
पूर्वलिगानि केतूना	365	प्रथमे मण्डले शुक्रो	266, 275
पूर्ववात यदा हन्यात्	109	प्रदक्षिण तु ऋक्षस्य	308
पूर्ववातो यदा तूर्ण-	111	प्रदक्षिणं तु कुर्वीत्	324
पूर्वसन्ध्या नागराणा	50	प्रदक्षिण तु नक्षत्र	324
पूर्वसन्ध्यां यदा वायु	112	प्रदक्षिण प्रयातस्य	287
पूर्वसन्ध्यासमुत्पन्न	163	प्रदक्षिण यदा याति	278
पूर्वसूरे यदा घोर	142	प्रदक्षिणं यदा वान्ति	110
पूर्वाचार्यैस्तथा प्रोक्त	462	प्रदक्षिणे प्रयाणे तु	280
पूर्वाफाल्गुनी सेवेत्	281	प्रद्युम्ने वाऽथ उत्पातो	234
पूर्वा फाल्गुनी शुभदा	456	प्रपान य पिवेत् पान	434
पूर्वाभाद्रपदाया तु	123	प्रभूतवस्त्रदाश्विनी	49
पूर्वामुदीचीमैशानी	165	प्रयाणे निपतेदुल्का	186
पूर्वार्धदिवसे ज्ञेयौ	106	प्रयाणे पुरुषा वापि	190
पूर्वेण विशऋक्षाणि	292	प्रयात पार्थिव यत्र	98
पूर्वोदये फल यत्तु	299	प्रयातास्तु सेनाया-	189
पूर्वोवात स्मृत·	109	प्रयातो यदि वा राजा	189
पृष्ठत. पुरलम्भाय	332	प्रवर घातयेद् भृत्य	190
पृष्ठतो वर्षत श्रेष्ठ	96	प्रवान्ति सर्वतो वाता-	111
पौरा जानपदा राजा	372	प्रवास दक्षिणे मार्गे	306
पौरेया शूरसेनाश्च	394	प्रवासमुदय वक्र	306
प्रकृतेर्योन्यथाभावो	16	प्रवासा. पंचशुक्रस्य	288

प्रशस्तु यदा वात	114	बुधस्तु बलवित्ताना	404
प्रसन्ना साधुकान्तश्च	358	बुधवीथिमनु प्राप्त:	296, 297
प्रसारयित्वा ग्रीवा	250	बृहस्पति यदा हन्यात्	369
प्रस्वपेदशुभे स्वप्ने	484	बृहस्पतेर्यदा चन्द्रो	324
प्रहेषन्ते प्रयातेषु	198	ब्राह्मी सौम्या प्रतीची च	309
प्राकारपरिखाणा च	111	**भ**	
प्राकाराट्टालिका	49	भक्षितसचित्त यच्च	247
प्रायेण हिंसते देशान्	388	भग्न दग्ध च शकट	189
प्रासाद कुजरवरान्	432	भज्यते नश्यते तत्त्	233
प्रेतयुक्त समारूढो	435	भद्रकाली विकुर्वन्ति	235
फ		भद्रपदासु भय सलिल	492
फलं वा यदि वा पुष्प	192	भयान्तिक नागराणा	286
फले फल यदा किंचित	240	भरण्यादीनि चत्वारि	264
फल्गुन्यथ भरण्या च	217	भवद्भिर्यदहं पृष्ठो	16
फाल्गुनीषु च पूर्वासु	127	भवने यदि श्रूयन्ते	230
ब		भवान्तरेषु चाभ्यस्ता	431
बगानगान् कलिगाश्च	369	भवेनामुभये मस्ये	124
बन्धन बाहुपाशेन	478	भस्मपाशुरजस्कीर्णा	108
बन्धनेऽथ वरस्थाने	476	भस्माभो नि प्रभो रूक्ष	387
बर्बराश्च किराताश्च	401	भार्गव गुरव प्राप्तो	393
बलक्षोभो भवेच्छ्यामे	290	भार्गवस्योत्तरा वीथी	333
बलाबल च सर्वेषा	4	भास्कर तु यदा रूक्ष	46
बलीवर्दयुत यान	441	भित्वा यदोत्तरा वीथीं	334
बहुच्छिद्रान्वित बिम्ब	466	भिद्यते यस्तु शस्त्रेण	475
बहिरगाश्च जायन्ते	183	भिनत्ति सोम मध्येन	238
बहुजा दीना शीलाश्च	127	भीमान्तरिक्षादिभेदा	461
बहु चोदयको वाऽथ	392	भुजगमे विलुप्यते	492
बहूदकानि जानीयात	320	भूत द्रव्य भवद् वृष्टि	264
बहूदका सस्यवती	109	भूतेषु य समुत्पात	236
बालाऽम्रवृक्षमरण	76	भूपकुजरगोवाह-	477
बाहुसितासमायुक्त	471	भूमि ससागरजलां	432
बाह्लीकान् चीनविषयान्	370	भूमिर्यत्र नभो याति	241
बुधो यदोत्तरे मार्गे	332	भूम्या ग्रसित्वा ग्रास	249
बुधो विवर्णो मध्येन	335	भृत मन्त्रिततैलेन	486

भृत्यकरान् यवनाश्च	287	मध्याह्ने वार्धरात्रे	112
भृत्यामात्या स्त्रिय	181	मध्येन प्रज्वलन् गच्छन्	283
भेरीशखमृदागाश्च	194	मन्त्रज्ञ पापदूरस्थो	483
भेषाजमहिषाकारा.	22	मन्त्रित्वा स्वमुखं रोगी	485
भोक्तु नवाम्बर शस्त-	493	मन्त्री न पश्यति छायाम्	469
भोजनेषु भयं विन्द्यात्	233	मन्त्रेणानेन हस्तस्य	488
भोजान् कलिगानुगाश्च	266	मन्दक्षीरा यदा वृक्षा	354
भौतिकाना शरीराणा	16	मन्ददीप्तश्च दृश्येत	340
भौमान्तिरिक्षादिभेदा	309	मन्दवृष्टिमनावृष्टि	167
भौमेनापि हत मार्ग	242	मन्दोदा प्रथमे मासे	108
भौमो वक्रेण युद्धे	344	मरुस्थली तथा भ्रष्ट	438
भ्रू मध्ये नासिका जिह्वा-	463	मर्दनारोहणे हन्ति	286
म		मलमूत्रादिबाधोत्थ	483
मक्षिका वा पतगो वा	185	मलिनानि विवर्णानि	77
मघा विशाखा च ज्येष्ठा	414	मल्लजा मालवे देशे	410
मघादीनि च सप्तैव	343	महतोऽपि समुद्भूतान्	115
मघाना दक्षिण पार्श्वं	280	महाकेतुश्च श्वेतश्च	371
मघानामुत्तर पार्श्व	281	महाजनाश्च पीड्यन्त	390
मघाया च विशाखाया	276	महात्मानश्च ये सन्तो	309
मघासु खारी विज्ञेया	127	महाधान्यस्य महता	409
मत्ता यत्र विपद्यन्ते	203	महाधान्यानि पुष्पाणि	412
मत्स्यभागीरथीना	280	महान्तश्चतुरस्राश्च	227
मदमदनविकृतिहीन	472	महापिपीलिकाराशि	232
मद्यानि रुधिरास्थीनि	224	महापिपीलिकावृन्द	231
मधुछत्र विशेत् स्वप्ने	482	महामात्याश्च पीड्यन्ते	125
मधुरा क्षीरवृक्षाश्च	227	महावृक्षो यदा शाखा	244
मधुरे निवेशस्वप्ने	437	महिषोष्ट्रखरारूढो	475
मधुसर्पिस्तिलाना च	409	मागधान् कटकालाश्च	481
मध्यदेशे तु दुर्भिक्ष	283	मागधेषु पुर स्यात	1
मध्यम क्वचिदुत्कृष्ट	108	माघजात् श्रवणे विन्द्यात्	167
मध्यमसे गजाध्यक्ष-	247	माघमल्पोदक विन्द्यात्	321
मध्यमे तु यदा मार्गे	307	मानुष पशुपक्षीणां	366
मध्यमे मध्यम वर्षं	67	मानोन्मानप्रभायुक्तो	177
मध्याह्ने तु यदा चन्द्र	355	मारुत तत्प्रभवा गर्भा	166

मारुतो दक्षिणे वापि 187
मार्गमेक समाश्रित्य 170
मार्गवान् महिषाकार 351
मार्गशीर्षे तु गर्भा 167
मालदा माल वैदेहा 411
मालो वा वेणुगुल्मो वा 440
मासे मासे समुत्थान 387
मासोदितोऽनुराधाया 335
मित्राणि स्वजना पुत्रा 295
मिष्टमन्यमथ विश्व 492
मण्डित जटिल रूक्ष 481
मुक्तामणिजलेशाना 409
मुद्गर-सबल-छ्रिका 470
मुहूर्ते शकुने वापि 77
मुहुर्मुहुर्यदा राजा 189
मूत्र पुरीषं बहुषो 249
मूल मन्देव सेवन्ते 414
मूलं वा कुरुते स्वप्ने 438
मूलमुत्तरतो याति 318
मूलादिदक्षिणो मार्ग 288
मूलेन क्लिश्यते वक्त्र 456
मूलेन खारी विज्ञेया 129
मूषको नकुलस्थाने 185
मूषके तु यदा ह्रस्वो 318
मृगवीथि पुन. प्राप्त 296
मृगवीथिमनुप्राप्त 297
मृण्मयं नागमारूढः 442
मृगे तु मूषकात्भय 491
मेखलान् वाप्यवन्याश्च 343
मेघशखस्वराभास्तु 176
मेघशब्देन महता 96
मेघा यत्राभिवर्षन्ति 96
मेघा यदाऽभिवर्षन्ति 96
मेघा सविद्यु्तश्चैव 98
मेचक कपिल श्याम 317
मेचकश्चेनमृत सर्वं 217
मेषाजमहिषाकारा 22
मैत्रादीनि च सप्तैव 344
मैथुनेन विपर्यासं 197

य

य केतुचारमखिल 373
यजनोच्छेदन यस्य 243
यत खण्डस्तु दृश्येत् 47
यत मेनाभिवतत् तस्य 30
यतोत्साह तु हत्वा 356
यतोऽभ्रम्तनित विन्द्यान् 354
यतो राहुर्ग्रसेच्चन्द्र 356
यतो राहुप्रमथने 358
यतो विषयघातश्च 354
यत्किचित् परिहीन 204
यत्र देश समुत्पाता 252
यत्रोत्पात न दृश्यन्ते 251
यत्रोदितश्च विचेरन् 274
यत्र वा तत्र वा स्थित्वा 532
यथान्तरिक्षात् पतित 182
यथा गृह तथा ऋक्ष 27
यथाज्ञानप्ररूपेण 204
यथान्ध पथिको भ्रष्ट 180
यथाऽभिवृष्या. स्निग्धा 31
यथा मार्गं यथा वृद्धि 31
यथा वक्रो रथो गन्ता 180
यथावदनुपूर्वेण 22
यथा वृद्धो नरो कश्चित् 228
यथास्थित शुभ मेघं 95
यथा हि बलवान् राजा 372
यथोचितानि सर्वाणि 205
यदा गन्धर्वनगर 143, 144
यदा गुह्मवच्छाद्य 50

यद्याग्निवर्णो रवि-	299	यदा भाद्रपदा सेवेत्	286
यदा चन्द्रे वरुणे	323	यदा भूधरभृंगाणि	231
यदा च पृष्ठत शुक्र	278	यदाऽभ्रवर्जितो वाति	113
यदा चान्ये ग्रहा यान्ति	268	यदाऽभ्रशबितद्ं श्येत्	48
यदा चान्ये तिरोहन्ति	266	यदा मधुरशब्देन	198
यदा चान्येऽभिगच्छन्ति	269, 270	यदा मध्यनिशाया तु	355
यदाञ्जननिभो मेघ	94	यदा मुचन्ति शुण्डाभि	202
यदा चार्ध्र धनैर्मिश्र	145	यदा राजा निवेशेत	203
यदा चोत्तरत स्वाति	318	यदा राज्ञ प्रयाणे	75
यदा तमसि सम्पन्न	180	यदा राज्ञ प्रयातस्य	112, 190, 199
यदा तु ग्रहनक्षत्रे	50	यदा वर्णं न लुप्त स्यात्	491
यदा तु तत्परा सेना	187	यदा वाऽन्येति रोहन्ति	267
यदा तु त्रीणि चत्वारि	307	यदाऽऽरुहेत् प्रमर्दैत	284
यदा तु धान्यसधाना	78	यदार्यप्रतिमाया तु	235
यदा तु पचमे शुक्र	268	यदा वान्ये तिरोहन्ति	267
यदा तु मण्डले षष्ठे	269, 275	यदा वा युगपद् युक्त	309
यदा तु वाताश्चत्वारो	110	यदा विरुद्ध हेषन्ते	249
यदा तु सोममुदित	46	यदा शैवालजलं वापि	250
यदाऽति क्रमते चारम्	294	यदा श्वेताऽभ्रवृक्षस्य	66
यदाऽति मुच्यते शीघ्र	47	यदाऽष्टौ सप्तमासान्	340
यदात्युष्ण भवेच्छीते	223	यदा सपरिघा सन्ध्या	114
यदा त्रिवर्गपर्यन्त	47	यदा सप्तदशे ऋक्षे	342
यदा द्वारेण नगर	242	यदा स्थितौ जीवबुधौ	455
यदा धुनन्ति सीदन्ति	202	यदि धूमाभिभूता स्यात्	184
यदानुराधाया प्रविशेत्	345	यदि राहुमपि प्राप्त	50
यदान्न पादवारि वा	201	यदि वैश्रवणे कश्चित्	233
यदा पचदेशे ऋक्षे	342	यदि होता तु सेनाया	185
यदा प्रतिपदि चन्द्र.	349	यदि होतु पथे शीघ्रं	184
यदाप्युक्तो मात्र	191	यदोत्पातोऽयमेक-	233
यदा बाला प्ररक्षन्ते	249	यद्दैकनक्षत्रगतौ कुर्यात्	392
यदा बुधोऽरुणाभ	333	यद्दले चाक्षर लुप्त	491
यदा बृहस्पति शुक्र	239	यद्देवाऽसुरयुद्धे	179
यदा प्रदक्षिण गच्छेत्	284	यद्यग्रतस्तु प्रयातेन	195
यदा भग्नो भवत्येषा	247	यद्याज्यभाजने केशा	185

यद्युत्तरासु तिष्ठेत् 284
यद्युत्पात श्रिया कश्चित् 235
यद्युत्पाताः प्रदृश्यन्ते 235
यद्युत्पातो बलन्देवे 234
य. प्रकृतेर्विपर्यास. 16
यवगोधूमव्रीहाणा- 409
यस्तु लक्षणसम्पन्नो 179
यस्माद्देवासुरे युद्धे 176
यस्मिन् यस्मिन्स्तु नक्षत्रे 310
यस्य देशस्य नक्षत्र 290, 415
यस्य यस्य च नक्षत्र 393
यस्य वा सम्प्रयातस्य 186
यस्यापि जन्मनक्षत्र 31
यस्या प्रयाणे सेनाया- 187
य. स्वप्ने गायते हसते 437
या दिश केतवोऽर्चिभि- 368
या वादित्यात् पतेदुल्का 24
या तु पूर्वोत्तरा विद्युत् 65
यात्रामुपस्थितोपकरण 192
यानानि वृक्ष-वेश्मानि 230
यानि रूपाणि दृश्यन्ते 168
यायिन ख्यातया सस्यः 401
यायिनो वामतो हन्यु- 400
यायिनौ चन्द्र-शुक्रौ तौ 413
या वक्रा प्राङ्मुखो छाया 470
यावच्छायाकृति रवे- 176
युगान्त इति विख्यात 25
युद्धप्रियेषु हृष्टेषु 196
युद्धानि कलहा बाधा 244
यूपमेकखरं शूल य. 436
ये केचिद् विपरीतानि 168
ये तु पुष्येण दृश्यन्ते 165
येऽन्तरिक्षे जले भूमौ 372
ये विदिक्षु विमिश्राश्च 228
येषा निदर्शने किंचित् 192
येषा वर्णेन सयुक्ता 21
येषा मेनाषु निपतते 29
यो नरोऽत्रैव सम्पूर्णे 473
यो नृत्यन् नीयते बद्ध्वा 476

र

रक्तं गन्धर्वनगरं 142, 146
रक्तपीतानि द्रव्याणि 431
रक्तं मज्जां च मुचन्ती 471
रक्तमाला तथा माला 441
रक्तवर्णो यदा मेघ- 95
रक्तवस्त्राद्यलकारैः 480
रक्त शास्त्रप्रकोपश्च 381
रक्तसूत्रसूत्रैर्वा 482
रक्ताना करवीणाना 439, 481
रक्ता पीता नभस्- 25
रक्ता रक्तेषु चाभ्रेषु 66
रक्ते पाशु सधूम 96
रक्ते पुत्रभय विन्द्यात् 226
रक्तो वा यथाम्यु- 47
रक्तो वा यदि वा नीलो 402
रक्तो राहुः शशि सूर्यो 357
रतिप्रधाना मोदन्ति 307
रथायुधानामश्वाना 75
रश्मिवती मेदिनी भाति 64
रसा पाचाल-वाह्लीका. 269
रसाश्च विरसा यत्र 244
रागद्वेषौ च मोहं च 182
राजदीपो निपतते 243
राजवशं न वोच्छिद्यात् 205
राजा चावनिजा गर्भा 394
राजानश्च विरुध्यन्ते 344
राजा तत्प्रतिरूपैस्तु 97

राजा परिजनो वापि	184
राजाभि. पूजिता. सर्वे	2
राजा राजसुतश्चोरो	443
राजोपकरणे भग्ने	232
राज्ञां चक्रधराणां च	333
राज्ञा बहुश्रुतेनापि	175
राज्ञो यदि प्रयातस्य	195
राज्ञो राहुः प्रवासे	358
रात्रौ तु सम्प्रवक्ष्यामि	44
रात्रौ दिनं दिने रात्रि	467
राहु केतु-शशी शुक्रो	412
राहुचार प्रवक्ष्यामि	349
राहुणा गृह्यते चन्द्रो	238
राहुणा संवृत चन्द्र-	97
राहुश्च चन्द्रश्च तथैव	358
रुग्राक्षसाशेष्वथ	493
रुद्राक्षी विकृता काली	440
रुद्रे च वरुणे कश्चिद्	234
रुधिराभिषिक्ता कृत्वा	443
रुधिरोदकवर्णानि	77
रूक्षा. खण्डाश्च वामाश्च	44
रूक्षा वाताश्च प्रकुर्वन्ति	97
रूक्षा विवर्णा विकृता	233
रूपी तरुणः पुरुषो	470
रूप्यपारावताभश्च	45
रेवती-पुष्ययो सोम	390
रेवती लोहताय स्याद्	457
रोगं शस्य विनाश च	366
रोगार्ता इव हेषन्ते	248
रोचनाकुकुमैर्लाक्षा-	490
रोहिणी च ग्रहो हन्यात्	403
रोहिणीं शकट शुक्रो	278
रोहिणी स्यात् परिक्रम्य	340
रोहिण्या तु यदा घोषो	251

ल

ललाटे तिलकं यस्य	465
लिखेत् सोम· शृ ङ्गेण	239
लिखेद् रश्मिभिर्भूयो	350
लिप्ते मषी कर्दमगो-	493
लुप्यन्ते च क्रिया सर्वा	318
लोहितो लोहित हन्यात्	401

व

वगा उत्कल-चाण्डाला	280
वक्र कृत्वा यदा भौमो	343
वक्र याते द्वादशाहं	291
वक्राण्युक्तानि सर्वाणि	295
वत्सा विदेह-जिह्याश्च	279
वध सेनापतेश्चापि	241
वराहयुक्ता या नारी	436
वर्णं गतिं च सस्थान	317
वर्णाना सकरो विन्द्यात्	404
वर्द्धमानध्वजाकारा·	26
वर्धन्ते चापि शीर्यन्ते	230
वर्षं भय तथा क्षेमं	104
वर्षद्वयं तु हस्तैका	471
वर्षयुग्मेन जघाया	474
वल्मीकस्याशु जनने	231
वल्लीगुल्मसमो वृक्षो	440
वशीकृतेषु मध्येषु	204
वसु कुर्यादतिस्थूलो	332
वसुधा वारि वा यस्य	192
वस्त्रस्य कोणे निवसन्ति	492
वह्निरंगाश्च जायन्ते	183
वह्निचन्द्रौ न पश्येच्च	485
वाजिवारणयानां	232
वाटधानाः कुलाटाश्च	267
वार्णभिन्नमिवालीढं	466

वाणिजश्चैव कालज्ञ	267
वातः श्लेष्मा गुरुज्ञेय	404
वाताक्षिरोगो-माञ्जिष्ठे	290
वातिकं चाथ स्वप्नाश्च	3
वातेऽग्नौ वासुभद्रे च	236
वादित्रशब्दा. श्रूयन्ते	229
वापि-कूप-तडागाश्च	166
वाप्यानि सर्वबीजानि	105
वामं न करोति नक्षत्र	323
वामभूमिजले चार	284
वामशृ ग यदा वा स्यात्	245
वामार्धशायिनश्चैव	201
वामो वदेद् यदा खारी	288
वायमानेऽनिले पूर्वे	115
वायव्य वैष्णव पुष्य	27
वायव्यामथ वारुण्या	166
वायव्ये वायवो दृष्टा	323
वायुवेगसमा विन्द्यात्	294
वारुणे जलजं तोय	323
वासुदेवे यद्युत्पात	234
वासोभिर्हरितै. शुक्लै.	442
वाहकस्य वध विन्द्यात्	200
वाहन महिषीपुत्र	251
विंशका त्रिंशका खारी	289
विंशतियोजनानि स्यु.	88
विंशत्यशीतिकां खारी	289
विंशति तु यदा गत्वा	294
विकीर्यमाणा कपिला	21
विकृताकृति सस्थाना	241
विकृतिर्दृश्यते काये	462
विकृते विकृत सर्वं	365
विकृतै. पाणिपादाद्यै.	224
विक्रान्तस्य शिखे दीप्ते	367
विच्छिन्नविषमृणालं	289
विदिक्षु चापि सर्वासु	145
विद्युत तु यदा विद्युत्	67
विद्रवन्ति च राष्ट्राणि	108
विपरीत यदा कुर्यात्	190
विपरीता यदा छाया	244
विभ्राजमानो रक्तो वा	334
विरतः कोऽपि ससारी	462
विरागान्यनुलोमानि	78
विरेचने अर्थलाभ	482
विलम्बेन यदा तिष्ठेत्	281
विलय याति यः स्वप्ने	475
विलोमेषु च वातेषु	196
विलीयन्ते च राष्ट्रा-	295
विवदत्सु च लिंगेषु	245
विवर्णपरुषचन्द्र·	390
विवर्णा यदि सेवन्ते	410
विशाखा कृत्तिका चैव	320
विशाखा मध्यग शुक्र-	413
विशाखाया समारूढो	282
विशाखा रोहिणी भानु-	191
विशाखामु विजानीयात्	128
विशेषतामपसव्य	144
विश्वादिसमयान्तश्च	317
विषेण म्रियते यस्तु	435
विष्टा लोभानि रौद्र वा	480
विस्तीर्णं द्वादशाग तु	3
विस्वर रवमाणाश्च	77
विस्वरं रवमानस्तु	226
विहारानुत्सवाश्चापि	191
वीणा विष च वल्लकी	435
वीथ्यन्तरेषु या विद्युत्	67
वीरस्थाने श्मशाने च	255
वीराश्चोग्राश्च भोजाश्च	401

वृक्षं वल्लीं च्छुपगुल्म	481	शम्बरान् पुलिंदकाश्च	280
वृद्धा द्रुमा स्रवन्ति	228	शयनासनज पान	476
वृद्धान् साधून् समागम्य	175	शयनाशनयानानां	479
वृश्चिकं दन्दशूक वा	477	शयनासने परीक्षा	248
वृषकुजरप्रासाद-	477	शय्यासन यानयुग्म	181
वृषभ-करि-महिष-	469	शरीर केसरं पुच्छ	249
वृषवीथिमनुप्राप्त.	296, 297	शरीर प्रथम लिंग	484
वेणान् विदर्भमालाश्च	369	शलाकिन शिलाकृतान्	285
वैजयन्तो विवर्णास्तु	188	शशिसूर्यौ गतौ यस्य	485
वैवस्वतो धूममाली	369	शस्त्रं रक्ते भय पीते	245
वैश्यश्च शिल्पिनश्चापि	334	शस्त्रकोपात् प्रधावन्ते	230
वैश्वानरपथ प्राप्तः	296, 297	शस्त्रघातास्तयार्द्रायां	323
वैश्वानरपथं प्राप्ते	391	शस्त्रेण छिद्यते जिह्वा	443
वैश्वानरपथे विद्युत्	66	शान्ताप्रहृष्टा धर्मार्ता	248
वैश्वानरपथेऽष्टम्या	392	शारदो नाभिवर्षन्ति	65
वैश्वानरपथो नामा	271	शास्त्राभ्यास सदा कृत्वा	462
व्याधय. प्रबला यत्र	246	शिशुमारो यदा केतु	368
व्याधयश्च प्रयाताना	193	शिबामण्डलवत् यस्य	367
व्याधिश्चेतिश्च दुर्वृष्टि	276	शिखी शिखण्डी विमलो	371
व्याघ्रे. कोटय पच	461	शिरस्यास्ये च दृष्यन्ते	199
व्याला सरीसृपाश्चैव	125	शिरो वा छिद्यते यस्तु	433
श		शिखे विषाणवद् यस्य	367
शकुनै कारणैश्चापि	74	शिल्पिना दारुजीवानो	334
शक्तिलांगूलसस्थाना-	22	शिशिरे चापि वर्षन्ति	65
शतानि चैव केतूना	365	शिष्ट मुभिक्ष विज्ञेय	166
शनैश्चर चारमिद	310	शीतवातश्च विद्युच्च	164
शनैश्चरगता एव	176	शुकाना शकुनाना च	368
शनैश्चरो यदा सौम्य-	238	शुक्रं दीप्त्या यदि हन्यात्	368
शनैश्चरश्च नीलाभ	404	शुक्र. शखनिकाश. स्याद्	403
शबरान् दण्डकानुड्रान्	387	शुक्र सोमश्च स्त्रीसंज्ञ.	405
शबरान् प्रतिलिंगानि	281	शुक्रस्य दक्षिणा वीथी	333
शब्दनिमित्त पूर्वं	486	शुक्रोदये ग्रहो याति	290
शब्दान् मुचन्ति दीप्तासु	25	शुक्रो नीलश्च कृष्णश्च	298
शब्देन महता भूमि	240	शुक्लं पक्षं वामे दक्षिण-	489

शुक्लं प्रतिपदि चन्द्रे	244	श्रेष्ठे चतुर्थ-षष्ठे च	285
शुक्लपक्षे द्वितीयाया	351	श्वश्वपिपीलिकावृन्द	232
शुक्लमाल्या शुक्लालकार-	483	श्लेषमूत्रपुरीषाणि	432
शुक्लवर्णो यदा मेघः	95	श्वेत गन्धर्वनगर	142
शुक्लवस्त्रो द्विजान्	225	श्वेतकेशरसकाशे	351
शुक्ला रक्ता च पीता	23	श्वेत. पाण्डुश्च पीतश्च	399
शुभ वृषेभवाहाना	478	श्वेत पीतश्च रक्तश्च	389
शुभग्रहा. फल दद्यु	457	श्वेतमासासन यान	441
शुभ प्रागशुभा पश्चाद्	483	श्वेत श्वेत ग्रह यत्र	401
शुभाशुभ विजानीयात्	146	श्वेत. सुभिक्षदो ज्ञेय	367
शुभाशुभ समुद्भूत	2	श्वेतस्य कृष्ण दृश्येत्	200
शुभाशुभ वीक्ष्यतु यो	457	श्वेता कृष्णा पीता	467
शुभ्रालकारवस्त्राढ्या	477	श्वेते सुभिक्षं जानीयात्	309
शुष्क काष्ठ तृण वापि	250	श्वेतो ग्रहो यदा पीतो	239
शुष्क प्रदह्यते यदा	185	श्वेतो नीलश्च पीतश्च	402
शुष्यन्ति वै तडागानि	342	श्वेतो वाऽत्र यदा पाण्डु	402
शुष्यन्ते तोयधान्यानि	271	श्वेतो रक्तश्च पीतश्च	349
शून्यं चतुष्पथ स्वप्ने	435	श्वेतो रसो द्विजान्	228
शृंगी राज्ञा विजयद	383	**ष**	
शेरते दक्षिणे पार्श्वे	200	षट्त्रिंशत् तस्य वर्षाणि	370
शेषप्रश्नविशेषे द्वा-	474	षड्दिन गुह्यहीनेऽपि	473
शेषमौत्पादिक प्रोक्त	384	षण्मास द्विगुण चापि	224
शौर्यशस्त्रबलोपेतः	177	षण्मासा प्रकृतिर्ज्ञेया	349
श्मशानास्थिर रज -	203	षष्टिकानां विरागाणा	409
श्मशाने शुष्क दारु	434	षोडशाक्षरतो बाह्ये	490
श्यामछिद्रश्च पक्षादौ	391	षोडशाना तु मासाना	349
श्यामलोहितवर्णा	323	**स**	
श्रमणा ब्राह्मणा वृद्धाः	250	संख्यानमुपसेवानो	278
श्रवणेन वारि विज्ञेय	123	सग्रहे चापि नक्षत्रे	77
श्रवणे राज्यविभ्र शो	335	संग्रामा रोरवास्तत्र	319
श्रावकाः स्थिरसकल्पा	2	संग्रामाश्चापि जायन्ते	145
श्रावणे प्रथमे मासे	126	सग्रामाश्चानुवर्धन्ते	128
श्रीमद्वीरजिनं नत्वा	461	सग्राह्य च तदा धान्य	413

संघशास्त्रानुपर्व्य त्	29	सर्वं निष्पद्यते धान्य	272
सवत्समुपस्थाप्य	309	सर्वकालं प्रवक्ष्यामि	111
सवत्सरे भाद्रपदे	322	सर्वग्रहेश्वर. सूर्य:	380
सचित्ते सुभिक्षे देशे	252	सर्वत्रैव प्रयाणेन	98
सदृशा: केतवो हन्यु-	370	सर्वथा बलवान् वायु	113
सघूम्रा या सनिर्घाता	25	सर्वद्वाराणि दृष्ट्वासौ	341
सध्वज सपताकं वा	144, 145	सर्वधान्यानि जायन्ते	123
सन्ध्याना रोहिणी पौष्य	27	सर्वभूतभय विन्द्यात्	390
सन्ध्यायां कृत्तिका ज्येष्ठा	390	सर्वभूतहित रक्त	264
सन्ध्याया तु यदा शीते	350	सर्वलक्षणसम्पन्ना	115
सन्ध्यायामेकरश्मिस्तु	87	सर्वश्वेतं तदा धान्य	268
सन्ध्याया यानि रूपाणि	168	सर्वांगेषु तदा तस्य	485
सन्ध्याया सुप्रदीपाया	248	सर्वाण्यपि निमित्तानि	182
सन्ध्योत्तरा जय राज्ञ	85	सर्वार्थेषु प्रमत्तश्च	188
सन्नाहिको यदा युक्ता	198	सर्वानेतान् यथोद्दिष्टान्	4
सफेन पिवति क्षीर	478	सर्वास्वापि यदा दिक्षु	143
समन्ततो यदा वान्ति	110	सर्वे यदुत्तरे काष्ठे	408
समन्ताद् बध्यते यस्तु	49	सर्वेषामेव सत्त्वाना	3
समभूमितले स्थित्वा	472	सर्वेषां शकुनाना च	192
समभूमितलेऽस्मिन्	468	सर्वेषा शुभ्रवस्त्राणा	483
सप्तति चाथ वाऽशीति	289	सवक्रचार यो वेत्ति	299
सप्तमे सप्तमे मासे	163	सविद्युत्सरजो वायु	113
सप्तरात्र दिनार्धं च	111	सस्यघातं विजानीयात्	127
सप्तर्षीणामन्यतम	368	सस्यनाशोऽनावृष्टि.	319
सप्तार्धं यदि वाष्टार्धं	319	सस्यानि फलवन्ति	127
सप्ताहमष्टरात्र वा	223	साल्वाश्च सारदण्डाश्च	343
समाभ्या यदि शृगाभ्या	244	सिंहमेषोष्ट्रसकाश:	351
सरस्तडागप्रतिमा	88	सिंहलाना किराताना	310
सरासि सरितो वृक्षन्	438	सिंहव्याघ्रगजैर्युक्तो	431
सरीसृपा जलचरा-	225	सिंहव्याघ्रवराहोष्ट्र	22
सरोमध्ये स्थित. पात्रे	479	सिंहा शृगाल-मार्जारा-	97
सर्पदष्टो यथा मन्त्रै	370	सिंहासनरथाकारा	26
सर्पणे हसने चापि	224	सितं छत्र सित वस्त्र	479
सर्पिस्तैलनिकाशस्तु	34	सितकुसुमनिभस्तु	292

सुकुमारं करयुगलं	462	स्कन्धावारनिवेशेषु	175
सुकृष्णा दशना यस्य	463	स्तब्धं लोचनयोर्युग्म	463
सुखग्राह्यं लघुग्रन्थं	3	स्तम्भयन्तोऽथ लागूलं	249
सुगन्धगन्धा ये मेघा	95	स्त्रीराज्य ताम्रकर्णाश्च	268
सुगन्धेषु प्रशान्तेषु	115	स्थले वापि विकीर्येत्	440
सुनिमित्तेन संयुक्त-	183	स्थलेष्वपि च यद्बीज	109
सुभिक्षं क्षेममारोग्यं	125	स्थालीपिठरसंस्थाने	382
सुरश्मी रजतप्रख्य.	381	स्थावरस्य वनीका	394
सुलसाया यदोत्पात:	236	स्थावराणां जय विन्द्यात्	78
सुवर्णरूप्यभाण्डे	432	स्थावरे घूमिते तज्ज्ञा	368
सुवर्णवर्णो वर्षं वा	383	स्थिरा ग्रीवा न यस्य	464
सुवृष्टि. प्रबला ज्ञेया	341	स्थिराणां कम्पसरणे	224
सुसस्थाना सुवर्णाश्च	167	स्थूलसुवर्णो द्युतिमाश्च	345
सुहृद्युतिश्च मित्रभे	492	स्थूल स्निग्ध सुवर्णश्च	400
सूर्यकाश्च सुराऽक्षुद्राः	401	स्थूलो याति कृशित्व	464
सूर्यचन्द्रमसौ पश्येद्	477	स्नातं लिप्त सुगन्धेन	404
सेना यान्ति प्रयाता	186	स्नात्वा देहमलंकृत्य	465
सेनाग्रे हूयमानस्य	184	स्निग्ध प्रसन्नो विमले	324
सेनापतिवध विन्द्यात्	200	स्निग्धवर्णमती सन्ध्या	87
सेनामभिमुखी भूत्वा	28	स्निग्धवर्णाश्च ते मेघा-	95
सेनायास्तु प्रयाताया	193	स्निग्ध श्वेतो विशालश्च	387
सेनायास्तु समुद्योगे	27	स्निग्धान्यभ्राणि यावन्ति	73
सोमगृहे निवृत्तेषु	455	स्निग्धा सर्वेषु वर्णेषु	95
सोमो राहुश्च शुक्रश्च	26	स्निग्धास्निग्धेषु चाभ्रेषु	64
सौदामिनी च पूर्वा च	63	स्निग्धे याम्योत्तरे मार्गे	410
सौभाग्यमर्थं लभते	433	स्निग्धोऽल्पघोषो धूमो	184
सौम्यं बाह्यं नरेन्द्रस्य	198	स्नेहवत्योऽन्यगामिन्यो	23
सौम्यजातं तथा विप्राः	400	स्पृशेल्लिखेत् प्रमर्दद्	341
सौम्यां गतिं समुत्थाय	331	स्फीताश्च रामदेशाश्च	268
सौम्या विमिश्रा संक्षिप्ता	331	स्वं प्रकाश्य गुरोरग्रे	484
सौरसेनांश्च मत्स्यांश्च	285	स्वगाने रोदनं विद्यात्	482
सौराष्ट्र-सिन्धु-सौवीरान्	343	स्वतो गृहमन्यं श्वेतं	239
सौरेण तु हतं मार्गं	242	स्वप्नफलं पूर्वगतं	474
सौसुप्यते यदा नागः	201	स्वप्नमाला दिवास्वप्नो	431

स्वर्गप्रीतिफलं प्राहु	182	हस्त्यश्वरथपादातं	175
स्वप्नाध्यायमम् मुख्य-	444	हिस्रो त्रिवर्ण. पिंगो	178
स्वर्गेण तादृशा प्रीतिः	182	हित्वा पूर्वं तु दिवसं	106
स्वरूप दृश्यते यत्र	468	हिनस्ति बीज तोय च	323
स्वातौ च दशार्णाश्चेति	282	हीनांगा जटिला बद्धा	187
स्वातौ च मैत्रदेवे च	165	हीने चारे जनपदान्	276
ह		हीने मुहूर्ते नक्षत्रे	191
हन्ति मूलफल मूले	283	हीयमान यदा चन्द्र	395
हन्यादश्विनीप्राप्त	287	हृदये यस्य जायन्ते	440
हन्युर्मध्येन या उल्का	26	हृदये वा समुत्पन्नात्	482
हया तत्र तदोत्पात	248	हेन्द्रस्वरो हेन्द्रकेतु	371
हयाना ज्वलिते चाग्नि	199	हेमन्ते शिशिरे रक्त.	236, 298
हरिता मधुवर्णाश्च	65	हेमवर्ण सुतोयाय	237
हरिते सर्वसमस्यानां	46	हेषन्ते तु यदा राज्ञः	249
हरितो नीलपर्यन्त	47	हेषन्त्यभीक्ष्णमश्वा	202
हसने रोदने नृत्ये	229	हेषमानस्य दीप्तासु	199
हसने शोचन ब्रूयात्	437	ह्रस्वाश्च तरवो येऽन्ये	227
हसन्ति कथयेन्मास	470	ह्रस्वे भवति दुर्भिक्ष	319
हसन्ति यत्र निर्जीवा	243	ह्रस्वो रूक्षश्च चन्द्रश्च	389
हस्तपादाग्रहीना वा	471	ह्रस्वो विवर्णो रूक्षश्च	400
हस्ते च ध्रुवकर्माणि	456		

□